बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर

सम्पूर्ण वाङ्मय

खंड–40

डॉ. भीमराव अम्बेडकर : लेख तथा वक्तव्य

भाग–3, (वर्ष 1946 – 1956)

हिन्दी

40

बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर सम्पूर्ण वाङ्मय

बाबासाहेब डॉ. बी. आर. अम्बेडकर

जन्म : 14 अप्रैल, 1891 परिनिर्वाण 6 दिसंबर, 1956

बाबासाहेब

डॉ. अम्बेडकर

सम्पूर्ण वाङ्मय

खंड 40

डॉ. भीमराव अम्बेडकर : लेख तथा वक्तव्य

(वर्ष 1946–1956)

भाग–3

डॉ. अम्बेडकर सम्पूर्ण वाङ्मय

खंड : 40

डॉ. भीमराव अम्बेडकर : लेख तथा वक्तव्य भाग–3 (वर्ष 1946–1956)

पहला संस्करण : 2019 (जून)
दूसरा संस्करण : 2020 (अगस्त)

ISBN : 978-93-5109-148-6

आवरण परिकल्पना : डॉ. देबेन्द्र प्रसाद माझी, पी.एच.डी.

पुस्तक के आवरण पर उपयोग किया गया मोनोग्राम बाबासाहेब डॉ. बी. आर. अम्बेडकर के लेटरहेड से साभार

ISBN (सेट) : **978-93-5109-129-5**

रियायत के अनुसार सामान्य (पेपरबैक) 1 सेट (खंड 1–40) का मूल्य : रू 1073/-
रियायत नीति (Discount Policy) संलग्न है,

प्रकाशकः
डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान
सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय,
भारत सरकार
15 जनपथ, नई दिल्ली – 110 001
फोन : 011–23320571
जनसंपर्क अधिकारी फोन : 011–23320588
वेबसाइट :http://drambedkarwritings.gov.in
Email-Id :cwbadaf17@gmail.com

मुद्रक : अरावली प्रिंटर्स एंड पब्लिशर्स प्रा.लि., W-30 ओखला, फेज–2, नई दिल्ली–110020

परामर्श सहयोग

डॉ. थावरचन्द गेहलोत

सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्री, भारत सरकार

एवं

अध्यक्ष, डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान

श्री रामदास अठावले

सामाजिक न्याय और अधिकारिता राज्य मंत्री

श्री कृष्णपाल गुर्जर

सामाजिक न्याय और अधिकारिता राज्य मंत्री

श्री रतनलाल कटारिया

सामाजिक न्याय और अधिकारिता राज्य मंत्री

श्री आर. सुबह्मण्यम

सचिव

सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय भारत सरकार

सुश्री उपमा श्रीवास्तव

अतिरिक्त सचिव एवं सदस्य सचिव, डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान

सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय, भारत सरकार

डॉ. देबेन्द्र प्रसाद माझी, पी.एच.डी.

निदेशक

डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान

डॉ. बृजेश कुमार

संयोजक, सी.डब्ल्यू.बी.ए.

डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान

सकंलन (अंग्रेजी)

श्री वसंत मून

सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्री
भारत सरकार
MINISTER OF SOCIAL JUSTICE & EMPOWERMENT
GOVERNMENT OF INDIA
तथा
अध्यक्ष, डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान
CHAIRPERSON, DR. AMBEDKAR FOUNDATION

संदेश

स्वतंत्र भारत के संविधान के निर्माता डॉ. अम्बेडकर, बहुआयामी प्रतिभा के धनी थे। डॉ. अम्बेडकर एक उत्कृष्ट बुद्धिजीवी, प्रकाण्ड विद्वान, सफल राजनीतिज्ञ, कानूनविद्, अर्थशास्त्री और जनप्रिय नायक थे। वे शोषितों, महिलाओं और गरीबों के मुक्तिदाता थे। डॉ. अम्बेडकर सामाजिक न्याय के लिए संघर्ष के प्रतीक है। डॉ. अम्बेडकर ने सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक सभी क्षेत्रों में लोकतंत्र की वकालत की। एक मजबूत राष्ट्र के निर्माण में डॉ. अम्बेडकर का योगदान अतुलनीय है।

डॉ. अम्बेडकर के लेख एवं भाषण क्रांतिकारी वैचारिकता एवं नैतिकता के दर्शन–सूत्र है। भारतीय समाज के साथ–साथ संपूर्ण विश्व में जहां कहीं भी विषमतावादी भेदभाव या छुआछूत मौजूद है, ऐसे समस्त समाज को दमन, शोषण तथा अन्याय से मुक्त करने के लिए डॉ. अम्बेडकर का दृष्टिकोण और जीवन–संघर्ष एक उज्ज्वल पथ प्रशस्त करता है। समतामूलक, स्वतंत्रता की गरिमा से पूर्ण, बंधुता वाले एक समाज के निर्माण के लिए डॉ. अम्बेडकर ने देश की जनता का आह्वान किया था।

डॉ. अम्बेडकर ने शोषितों, श्रमिकों, महिलाओं और युवाओं को जो महत्त्वपूर्ण संदेश दिए, वे एक प्रगतिशील राष्ट्र के निर्माण के लिए अनिवार्य दस्तावेज है। तत्कालीन विभिन्न विषयों पर डॉ. अम्बेडकर का चिंतन–मनन और निष्कर्ष जितना उस समय महत्त्वपूर्ण था, उससे कहीं अधिक आज प्रासंगिक हो गया है। बाबासाहेब की महत्तर मेधा के आलोक में हम अपने जीवन, समाज राष्ट्र और विश्व को प्रगति की राह पर आगे बढ़ा सकते हैं। समता, बंधुता और न्याय पर आधारित डॉ. अम्बेडकर के स्वप्न का समाज–"सबका साथ सबका विकास" की अवधारणा को स्वीकार करके ही प्राप्त किया जा सकता है।

मुझे यह जानकर अत्यंत प्रसन्न्ता हो रही है, कि सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय का स्वायत्तशासी संस्थान, डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान, "बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर : संपूर्ण वांग्मय" के अन्य अप्रकाशित खण्ड 22 से 40 तक की पुस्तकों को, बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर के अनुयायियों और देश के आम जन–मानस की मांग को देखते हुए मुद्रत किया जा रहा है।

विद्वान, पाठकगण इन खंडों के बारे में हमें अपने अमूल्य सुझाव से अवगत कराएंगे तो हिंदी में अनुदित इन खंडों के आगामी संस्करणों को और बेहतर बनाने में सहयोग प्राप्त हो सकेगा।

(डॉ. थावरचंद गेहलोत)

बाबासाहेब अम्बेडकर के सम्पूर्ण वाड्मय (Complete CWBA Vols.) का विमोचन
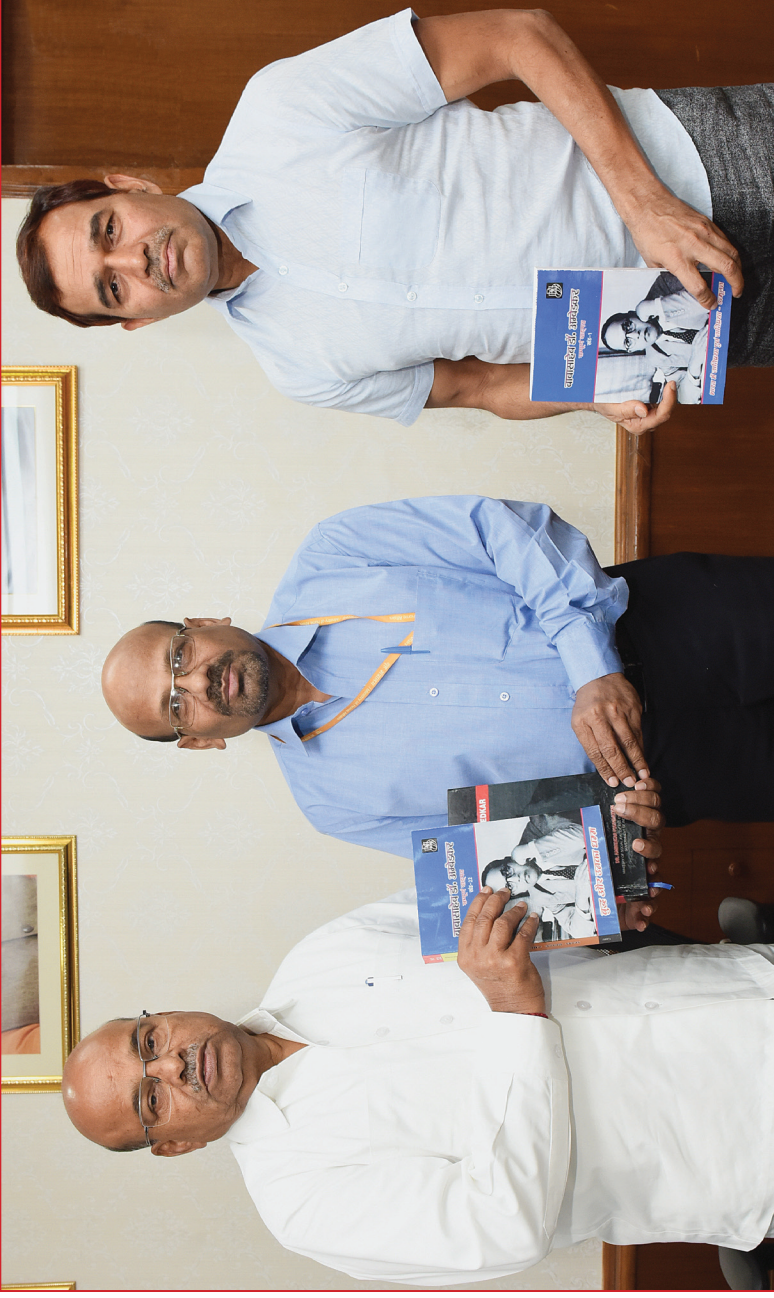
हिंदी और अंग्रेजी में CWBA / सम्पूर्ण वाड्मय, (Complete Volumes) बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर के संग्रहित कार्यों के संपूर्ण खण्ड, डॉ. थावरचंद गेहलोत, सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्री, और अध्यक्ष, डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान, भारत सरकार, नई दिल्ली द्वारा जारी किया गया है। साथ ही डॉ. देबेन्द्र प्रसाद माझी, निदेशक, डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान और श्री सुरेन्द्र सिंह, सदस्य सचिव भी इस अवसर पर उपस्थित थे। हिंदी के खंड 22 से खंड 40 तक 2019 में पहली बार प्रकाशित हुए है।

उपमा श्रीवास्तव, आई.ए.एस.
अपर सचिव
UPMA SRIVASTAVA, IAS
Additional Secretary

भारत सरकार
सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय
शास्त्री भवन, नई दिल्ली-110001
Government of India
Ministry of Social Justice & Empowerment
Shastri Bhawan, New Delhi-110001
Tel. : 011-23383077 Fax : 011-23383956
E-mail : as-sje@nic.in

प्राक्कथन

भारतरत्न डॉ. बी.आर. अम्बेडकर भारतीय सामाजिक–राजनीतिक आंदोलन के ऐसे पुरोधा रहे हैं, जिन्होंने जीवनपर्यंत समाज के आख़िरी पायदान पर संघर्षरत् व्यक्तियों की बेहतरी के लिए कार्य किया। डॉ. अम्बेडकर बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे इसलिए उनके लेखों में विषय की दार्शनिक मीमांसा प्रस्फुटित होती है। बाबासाहेब का चिंतन एवं कार्य समाज को बौद्धिक, आर्थिक एवं राजनैतिक समृद्धि की ओर ले जाने वाला तो है ही, साथ ही मनुष्य को जागरूक मानवीय गरिमा की आध्यात्मिकता से सुसंस्कृत भी करता है।

बाबासाहेब का संपूर्ण जीवन दमन, शोषण और अन्याय के विरुद्ध अनवरत क्रांति की शौर्य–गाथा है। वे एक ऐसा समाज चाहते थे जिसमें वर्ण और जाति का आधार नहीं बल्कि समता व मानवीय गरिमा सर्वोपरि हो और समाज में जन्म, वंश और लिंग के आधार पर किसी प्रकार के भेदभाव की कोई गुंजाइश न हो। समता, स्वतंत्रता और बंधुत्व के प्रति कृतसंकल्प बाबासाहेब का लेखन प्रबुद्ध मेधा का प्रामाणिक दस्तावेज़ है।

भारतीय समाज में व्याप्त विषमतावादी वर्णव्यवस्था से डॉ. अम्बेडकर कई बार टकराए। इस टकराहट से डॉ. अम्बेडकर में ऐसा जज़्बा पैदा हुआ, जिसके कारण उन्होंने समतावादी समाज की संरचना को अपने जीवन का मिशन बना लिया।

समतावादी समाज के निर्माण की प्रतिबद्धता के कारण डॉ. अम्बेडकर ने विभिन्न धर्मों की सामाजिक, धार्मिक व्यवस्था का अध्ययन व तुलनात्मक चिंतन–मनन किया।

मैं प्रतिष्ठान की ओर से माननीय सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्री, भारत सरकार का आभार व्यक्त करती हूँ जिनके सद्परामर्श एवं प्रेरणा से प्रतिष्ठान के कार्यों में अपूर्व प्रगति आई है।

उपमा श्रीवास्तव

(उपमा श्रीवास्तव)
अतिरिक्त सचिव
सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय,
भारत सरकार, एवं
सदस्य सचिव

प्रस्तावना

बाबासाहेब डॉ. भीमराव रामजी अम्बेडकर एक प्रखर व्यक्तित्व, ज्ञान के प्रतीक और भारत के सुपुत्र थे। वह एक सार्वजनिक बौद्धिक, सामाजिक क्रांतिकारी और एक विशाल क्षमता संपन्न विचारक थे। उन्होंने सामाजिक और राजनीतिक स्थितियों के व्यावहारिक विश्लेषण के साथ–साथ अंतःविषयक दृष्टिकोणों को अपने लेखन और भाषणों के माध्य से प्रभावित किया जो बौद्धिक विषयों और भावनाओं को अभिव्यक्त एवं आंदोलित किया। उनके लेखन में वंचित वर्ग के लोगों के लिए प्रकट न्याय और मुक्ति की गहरी भावना है। उन्होंने न केवल समाज के वंचित वर्गों की स्थितियों को सुधारने के लिए अपना जीवन समर्पित किया, बल्कि समन्वय और 'सामाजिक समरसता' पर उनके विचार राष्ट्रीय प्रयास को प्रेरित करते रहे। उम्मीद है कि ये खंड उनके विचारों को समकालीन प्रासंगिकता प्रदान कर सकते हैं और वर्तमान समय के संदर्भ में डॉ. अम्बेडकर के पुनःपाठ की संभावनाओं को उपस्थित कर सकते हैं।

डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान, भारत के साथ–साथ विदेशों में भी जनता के बीच बाबासाहेब डॉ. अंबेडकर की विचारधारा और संदेश के प्रचार–प्रसार हेतु स्थापित किया गया है। यह बहुत ख़ुशी की बात है कि सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्री के नेतृत्व में प्रतिष्ठान के शासी निकाय के एक निर्णय के परिणामस्वरूप, तथा पाठकों की लोकप्रिय माँग पर डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान, बाबासाहेब अम्बेडकर के हिंदी में संपूर्ण वांग्मय (Complete CWBA Volumes) का दूसरा संस्करण पुनर्मुद्रित कर रहा है।

मैं संयोजक, अनुवादकों, पुनरीक्षकों, आदि सभी सहयोगियों, एवं डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान में अपनी सहायक, कुमारी रेनू और लेखापाल, श्री नन्दू शॉ के प्रति आभार प्रकट करता हूँ, जिनकी निष्ठा एवं सतत् प्रयत्न से यह कार्य संपन्न किया जा सका है।

विद्वान एवं पाठकगण इन खंडों के बारे में सुझाव से डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान को उसकी वैधानिक ई–मेल आई.डी. **cwbadaf17@gmail.com** पर अवगत कराएं ताकि, अनुदित इन खंडों के आगामी संस्करणों को और बेहतर बनाने में सहयोग प्राप्त हो सकेगा।

डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान हमेशा पाठकों को रियायती कीमत पर खंड उपलब्ध कराने के लिए प्रयास करता रहा है, तदनुसार आगामी संस्करण का भी रियायत नीति (Discount Policy) के साथ बिक्री जारी रखने का निर्णय लिया गया है। अतः प्रत्येक खंड के साथ प्रतिष्ठान की छूट नीति को संलग्न कर दिया गया है। आशा है कि ये खंड पाठकों के लिए प्रेरणा का स्रोत बने रहेंगे।

(डॉ. देबेन्द्र प्रसाद माझी)
निदेशक, डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान
सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय, भारत सरकार,

15, जनपथ,
नई दिल्ली

अपने खून की आखिरी बूंद तक आजादी की रक्षा का संकल्प हमें करना ही चाहिए।

—डॉ. भीमराव अम्बेडकर

विषय सूची

खंड 18, भाग 3

रियायत नीति (Discount Policy)

233

जो लोग करोड़ों लोगों को अछूत और अपराधी मानते हो उन्हें आजादी मांगने का हक नहीं

अस्पृश्यों के एकमात्र नेता और भारत सरकार के कार्यकारी मंडल के सदस्य डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर दिनांक 14 जनवरी, 1946 को सुबह मद्रास मेल से सोलापुर आए।

सुबह सोलापुर नगरपालिका और जिला लोकल बोर्ड संस्था की ओर से हरिभाई देवकरण हाईस्कूल के कै. रा. ब. मुले स्मारक मंदिर में डॉ. अम्बेडकर को प्रशस्ति-पत्र प्रदान किया गया। इस अवसर पर शहर के प्रमुख व्यवसायी, डॉक्टर्स, सरकारी अधिकारी, वकील आदि आमंत्रित गण्य-मान्य उपस्थित थे।

शुरुआत में नगरपालिका की ओर से प्रदान किए जाने वाले प्रशस्ति-पत्र का मसौदा नगराध्यक्ष रा. ब. नागप्पा अण्णा अफजूलपुरकर ने पढ़ कर सुनाया। फिर प्रशस्ति-पत्र डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को प्रदान किया गया। उसके बाद जिला बोर्ड की ओर से प्रदान किया जाने वाला प्रशस्ति-पत्र बोर्ड के अध्यक्ष श्री जी. डी. साठे ने पढ़ कर सुनाया और प्रदान किया। प्रशस्ति-पत्रों के स्वीकार करने के बाद डॉ. अम्बेडकर ने कहा -

मैं बहुत आभारी हूं कि मुझे प्रशस्ति-पत्र प्रदान किए गए। सोलापुर शहर मेरे लिए अपरिचित नहीं। मैं कई बार यहां आया हूं। राजनीति और सामाजिक कार्यों का प्रचार भी किया है। सच में देखा जाए तो मेरे सार्वजनिक कार्य की शुरुआत सोलापुर से ही हुई है। स्व. रा. ब. मुले ने अस्पृश्यों के लिए बोर्डिंग खोला और खुशी की बात है कि उनका काम उनके भाई डॉ. भालचंद्र राव बनाम काकासाहब मुले ने बढ़िया ढंग से आगे चलाया है ।

भारत सरकार का अब तक का इतिहास देखें तो पता चलता है कि कर वसूलना तथा कानून और व्यवस्था पर नजर रखना यही दो उद्देश्य उनके सामने थे। हालांकि वर्तमान में इनमें कुछ बदलाव आया है। देश की दरिद्रता दुनिया के इतिहास में अपनी ही तरह की मिसाल है। सब मानेंगे कि इसी दरिद्रता को मिटाने का उद्देश्य हमने अपने सामने रखा है। दिल्ली में पुनर्गठन का काम बड़े जोरों से चल रहा है। रहने की सुविधा, शिक्षा, व्यवसाय और उद्योग आदि पर केंद्र सरकार की 90 प्रतिशत ऊर्जा व्यय हो रही है। इस काम में स्थानीय बोर्ड, महानगरपालिका की मदद लेने की नीति अपनाने की व्यवस्था बनाई जाने वाली है।

जनता, 15 जनवरी, 1946

मैं अभी मंत्री हूं। केंद्र सरकार की ओर से मजदूरों के हितो के बारे में अधिक ध्यान दिया जा रहा है। 1930 में इस मुद्दे को लेकर रॉयल कमीशन का गठन किया गया था। इस आयोग ने कई सूचनाएं की थीं। 1930 से 1942 तक का इतिहास देखने से यह पता चलेगा कि इस बारे में कुछ भी काम नहीं हुआ है, लेकिन 1942 से अर्थात् मेरे मंत्री पद ग्रहण करने के बाद से आज 1946 तक केवल 3 वर्षों में विकास हुआ दिखाई देगा। यह आत्मप्रशंसा नहीं, बल्कि वास्तविकता है। 1920 से आज तक केंद्रीय एसेंब्ली में मजदूरों के केवल एक प्रतिनिधि को लिया जाता था। आज आप देखेंगे कि लोकसभा में 3 मजदूर प्रतिनिधि हैं। अब तक काउंसिल ऑफ स्टेटस् में एक भी मजदूर प्रतिनिधि नहीं लिया जाता था, लेकिन अब से एक प्रतिनिधि वहां भी लिया जाएगा।

आगामी केंद्रीय एसेंब्ली की बैठक में 10 बिल पेश होने वाले हैं जो मजदूरों के हित में होंगे। इनके मसौदे मैंने तैयार किए हैं। इससे पता चलेगा कि किस तरह देश में सामाजिक और आर्थिक दरिद्रता को दूर करने की कोशिशें जारी हैं।

देश की सामाजिक स्थितियां अजीब हो गई हैं। देश के छह करोड़ लोगों को अछूत मानने वाले और छुआछूत का पालन करने वाले लोग इस देश में हैं। इस देश में अपराधों को व्यवसाय के तौर पर उपजीविका का साधन बनाने वाले 25 लाख लोग हैं। इतिहास बताता है कि आठ हजार वर्ष पूर्व इस देश में संस्कृति का निर्माण हुआ। ऐसे भी करोड़ों लोग हैं, जिन्हें यह नहीं पता कि कैसे कपड़े पहनें, खाना क्या खाएं आदि। जो सामर्थ्यवान हैं उन पर यह जिम्मेदारी है। देश आजाद हो कहने वालों पर यह जिम्मेदारी और ज्यादा है। जो लोग करोड़ों लोगों को अछूत और अपराधी मानते हैं उन्हें आजादी मांगने का हक कैसे हो सकता है? इस जिम्मेदारी को टाला नहीं जा सकता।

आजादी मांगना बहुत आसान है। मुझसे कई बार पूछा जाता है कि डॉ. साहेब ''आप कॉंग्रेस में क्यों नहीं शामिल हो जाते? आपका सम्मान बढ़ेगा, हर रोज अखबार में मौके की जगह पर आपका नाम छपेगा।'' लेकिन मुझे यह मंजूर नहीं। बोलने से अधिक काम करने की जरूरत होती है। मैं कहीं भी जाऊं, जब ऐसी स्थितियों से सामना होता है तो मन व्यथित होता है। अस्पृश्यता निवारण का असली काम मैं ही कर रहा हूं।

असल में यह काम स्पृश्य समाज के नेताओं का है। अंग्रेजों से आजादी मांगने वालों को अपने देश की छुआछूत की समस्या के निवारण का काम हाथ में लेना चाहिए। स्वराज मांगने वाले इन लोगों के बारे में अंग्रेज मन ही मन क्या सोचते हैं, इसका मुझे अहसास है। जितनी जल्दी अस्पृश्यता नष्ट होगी उतनी ही जल्दी हमें आजादी मिलेगी (स्वराज हाथ में आएगा)। यह निश्चित है कि उसके बगैर स्वराज नहीं मिलेगा।

234

कार्यकुशल न भी हों तो चलेगा, लेकिन लोग निष्ठावान होने चाहिए

दिनांक 14 जनवरी, 1946 के दिन सोलापुर मैं अथाह जनसागर के सामने डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने जोरदार भाषण दिया। उन्होंने कहा,

अपने अस्पृश्य भाइयो-बहनो को चुनावों के संदर्भ में दो शब्द कहने की मुझे वैसे तो जरूरत नहीं है, लेकिन कुछ लोगों के द्वारा आग्रह किए जाने से मुझे बोलना पड़ रहा है। अपने समाज पर मुझे पूरा विश्वास है। पूरे अछूत समाज का शेड्यूल्ड कास्ट फेडरेशन को समर्थन है इस बारे में मुझे कोई शक नहीं। अस्पृश्य समाज किसी भी अन्य समाज की तुलना में ज्यादा समझदार हुआ है। वह अपना हित-अहित जानता है। हमारा संगठन इतना मजबूत है कि दिल्ली में बैठे-बैठे मैं अगर इशारा करता हूं तब भी मेरा पूरा समाज मेरे आदेश का निष्ठा के साथ पालन करता है।

कुछ लोगों को आपत्ति है कि मध्य प्रांत की 6 सीटें काँग्रेस को कैसे मिलीं? जवाब में, मैं कहूंगा कि केवल मैदान में उतरना ही बाजी मार लेना नहीं होता। हम अस्पृश्यों का अभेद किला मुंबई प्रांत में है। उसे अगर विपक्ष जीत ले तो हम पगड़ी उतार कर शरण आएंगे।

काँग्रेस का प्रचार आज हवाई जहाज, रेल और मोटरगाड़ियों के सहारे जोरदार तरीके से चल रहा है। मैं उनसे सवाल पूछना चाहता हूं कि,

घमंड और बड़बोलेपन के साथ देश की ''सारी जनता अपने साथ है'' कहने वाले इन लोगों को हवाई जहाज में उड़ने की क्या षरूरत है? ये लोग पूरे देश को क्यों मथ रहे हैं? क्यों इतना हल्ला-गुल्ला मचा रहे है? चुनाव प्रसार के लिए, मैं केवल चार-पांच जगहों पर ही गया। मैं पूछता हूं कि जनता अगर काँग्रेस के साथ है तो यूं रुपया लुटाते हुए हवाई जहाज, रुपया और गाड़ियां लेकर पोतराज की तरह घूम क्यों रहे हैं?

आने वाले चुनाव कोई बच्चों का खेल नहीं हैं। आगामी चुनाव एक संग्राम है, युद्ध है। कौरव-पांडवों के युद्ध की तरह ही यह लड़ाई भी होगी। कौरव-पांडवों का युद्ध टालने के लिए कृष्ण ने बीच-बचाव किया, लेकिन दुर्योधन ने कृष्ण को घमंड से कहा - सुई की नोक पर लगी जितनी मिट्टी भी पांडवों को नहीं मिलेगी। युद्ध टालने के लिए सुलह कराने की कोशिश मैंने गांधीजी को खत लिख कर की। अपना मान-सम्मान भुला कर, अपने नेता होने को भुला कर मैंने उन्हें खत लिखाा। मैं नहीं चाहता था कि

दुबारा राउंड टेबल परिषद जैसे हालात पैदा हों। मैं आपसी बैर बढ़ने नहीं देना चाहता, अपने समाज का हित चाहता हूं और दोनों राजनीतिक मांगों के सहारे समस्या हल करने की कोशिश की जाए, इसलिए मैंने गांधीजी को पत्र लिखा। तब मेरी सुलह की मांग को नकारते हुए उन्होंने कहा कि – 'आपके और हमारे दृष्टिकोण में समानता नहीं है।' मेरे खत लिखने से पहले यही गांधी, जिन्ना के घर जाकर उनके साथ नजदीकी बढ़ा रहे थे। मैंने सोचा कि अगर गांधह, जिन्ना से मिलते हैं तो मुझसे भी मिलेंगे। गांधी-जिन्ना के बीच कौन-सा समान दृष्टिकोण था; यह तो कोई राजनीतिक विशेषज्ञ ही बता पाएंगे। राज्य केवल आपके अकेले की कमाई नहीं। वह तो दोनों का प्रयास है, ऐसे में 'सुई की नोक बराबर इतनी मिट्टी भी पांडवों को नहीं मिलेगी' कहने वाले दुर्योधन की तरह, गांधी भी मुझसे मिलने के लिए तैयार नहीं हैं। समझौते की बातचीत खत्म होने के बाद कृष्ण ने दुर्योधन से कहा था कि आप अपना पक्ष संभालिए। गांधी जब दुर्योधन की भूमिका स्वीकारते हैं तो अस्पृश्य समाज को भी अपना शौर्य, पौरुषत्व दिखाते हुए इस युद्ध में शेड्यूल्ड कास्टस् फेडरेशन के उम्मीदवारों को जिता कर गांधी और काँग्रेस को डंके की चोट पर बता देना चाहिए कि आप अपना पक्ष संभालिए हम अपना पक्ष संभाल लेंगे।

भावी संविधान तय करते समय अछूतों का पक्ष हम ही मजबूती के साथ रखेंगे। इस बार के इलेक्शन सीधेसादे नहीं हैं। शिक्षकों का वेतन, खेती पर लगान कम करना, बूंदी के लड्डुओं का खाना-पाने का साधन नहीं है इलेक्शन। अंग्रेजों के चले जाने के बाद सत्ता किसके हाथ में रहेगी यह भावी संविधान में इस इलेक्शन के जरिए तय करना है।

चुनाव के मौके का फायदा उठाते हुए कई खोखले घोषणा-पत्र जारी हुए हैं। लेकिन उनमें कोई दम नहीं। घोषणा-पत्र में कही बातों पर बाद में अमल नहीं किया गया तो हम अस्पृश्य उनका क्या कर सकते हैं? हम अपना रोना लेकर किसके पास जाएंगे? यह लड़ाई सत्ता की है।

रोटी के लिए किसी का मुंह ताकने की नौबत हमारे समाज पर न आए। पेट पालने की समस्या हल हो, सम्मान के साथ हम जी सकें, इसके लिए सत्ता की जरूरत होती है। वही पाने के लिए हमारी यह लड़ाई है।

गांव का मुखिया या जमींदार अगर पीटता है तब भी अस्पृश्य की शिकायत की कोई सुनवाई नहीं होती क्योंकि पुलिस से लेकर कलक्टर तक सब एक-दूसरे के नाते-रिश्तेदार होते हैं। दीवान भी उन्हीं की जाति का। जीवन भर हमारा समाज क्या गुलामी में ही रहेगा? हमारी लड़ाई, इसीलिए है कि जो अंग्रेजी राज में है वही भावी राज में न हो। जब तक हिंदुओं के हाथ में राजनीतिक सत्ता रहेगी तब तक गुलामी समाप्त नहीं होगी। इस चुनाव में हमारा दलित फेडरेशन वोट की भीख नहीं मांगता। हम चाहते हैं कि हम

सबका भविष्य उज्ज्वल हो, इसीलिए हम सत्ता चाहते हैं। अपने वोट के रूप में समाज हमें वह दे, उसे पाना हमारा हक है।

इस बार अगर अस्पृश्य समाज जागा नहीं तो पेशवा युग की तरह फिर अस्पृश्यों को कमर में झाड़ू और गले में थूकने के लिए मटका बांधने की नौबत आएगी। दलित फेडरेशन द्वारा खड़ा किया गया उम्मीदवार केवल एक बहाना है। उम्मीदवार से निजी मतभेद, अदावत आदि को भुला कर दलित फेडरेशन के उम्मीदवार को वोट दें और याद रहे कि उसे वोट देना दलित फेडरेशन को वोट देना है। मान लीजिए कि फेडरेशन के उम्मीदवार के रूप में खुद मैं खड़ा हूं।

विधिमंडल में ब्राह्मण और बनियों के कंधे से कंधा लगा कर 15-20 अछूत सम्मान के साथ उठ-बैठ सकेंगे इस स्थिति तक मैंने आपको पहुंचा दिया है। इस अटूट संगठन को मिट्टी-सीमेंट लगा कर मैं मजबूत करना चाहता हूं। हमें अपने इस किले को अभेद्य रखने की हरसंभव कोशिश करनी होगी। हिंदू और मुसलमान आपस में मिल कर अगर हम पर हमला करें तब भी यह किला अभेद्य रहेगा। उसे चोट न पहुंचे इसकी पूरी-पूरी व्यवस्था मैंने की है।

किसी के निजी दोषों की ओर ध्यान नहीं देना चाहिए। अस्पृश्यों में मतभेद हैं यह कह कर हमारे विरोधी हममें फूट डालने की कोशिश कर रहे हैं, लेकिन यह वास्तविकता नहीं है। मुंबई के पिछले प्राथमिक चुनावों में बहुसंख्य महार मतदाता होने के बावजूद चमार उम्मीदवार को खड़ा कर हमने उसे जिताया। काँग्रेस का टिकट हो तब भी ब्राह्मण मतदाता, ब्राह्मण उम्मीदवार को और मराठा मतदान, मराठा उम्मीदवार को अपना वोट देते हैं, लेकिन हमारे फेडरेशन में ऐसा कोई भेदभाव नहीं।

हम तुम्हें मिनिस्टर बनाएंगे, यह-वो काम करेंगे, फलां फलां देंगे आदि कई तरह के प्रलोभनों को किनारे कर हमारा समाज फेडरेशन के साथ है। यह अब साबित हो चुका है। हमारे उम्मीदवार के खिलाफ कई तरह की अफवाहें फैलाई जाती हैं, लेकिन ध्यान रखें, हमने कड़ी परीक्षा के बाद ही उम्मीदवारों को चुना है। हमारे सभी उम्मीदवार सिद्धांतों का पालन करने वाले हैं।

मुंबई एसेंब्ली में काँग्रेसी मंत्रिमंडल का कामकाज 2 साल 7 महीनों तक चला तब स्वतंत्र मजदूर संघ के 15 निष्ठावान सदस्यों ने किसी से हार नहीं मानी। उन्हें फुसलाने की महती कोशिश की गई, लेकिन हमारे 15 लोग मतभेद के बावजूद, अनुशासन में, राजनीति में सिद्धांतों के प्रति निष्ठावान रहे।

विद्वान, कार्यकुशल लोग न भी हों तो कोई हर्ज नहीं, लेकिन लोगों में निष्ठा होना जरूरी है। ज्ञान की कमी पूरी करने के लिए मैं हूं। जो बिक सकता है, लालच का शिकार हो

सकता है उसके होने का कोई फायदा नहीं। अपने पर और भावी पीढ़ी पर आने वाले संकटों को दूर कर भावी पीढ़ी की राह आसान करना अपना कर्तव्य है। हमारे पुरखे पिछले 2000 सालों से चुपचाप गुलामी सहते आए हैं। क्या हम भी उसी गुलामी को चुपचाप सहते रहेंगे? (नहीं........ . जनता की प्रतिक्रिया) हर पीढ़ी का यह कर्तव्य है कि अगली पीढ़ी की राह की कठिनाइयो को हटाने की वे कोशिश करें।

मुसलमानों को जो पाने के लिए 20 सालों तक कोशिशें करनी पड़ी वह हमने 2 सालों में हासिल कर लिया है, यह बेहद महत्वपूर्ण बात है।

मैं आजकल दिल्ली में रह रहा हूं। मेरी टेबिल पर एक घंटी है। उस घंटी को बजाते ही मेरा चपरासी मेरे सामने जिस प्रकार हाजिर होता है, बिल्कुल उसी तरह दिल्ली से मैं जब स्विच दबाता हूं तब मुंबई में तुरंत रोशनी होती है। मेरा आत्मविश्वास झूठा नहीं, बिल्कुल सच्चा है। वास्तविकता की नींव पर खड़ा है। कल का मुंबई का इलेक्शन देखिए। शेड्यूल्ड कास्ट फेडरेशन के भंडारे को 12899 और देवरुवकर को 11334 वोट मिले, जबकि काँग्रेस के उम्मीदवार को धूल चाटनी पड़ी। मुंबई का इलेक्शन भारत के इलेक्शन में हमेशा याद किया जाएगा।

लोगों को लगता है कि मुस्लिम लीग संगठित है। मुस्लिम लीग के ज्यादा उम्मीदवार चुनकर आए हैं। मैं कहना चाहता हूं कि फेडरेशन की ताकत मुस्लिम लीग से भी अधिक संगठित है। उसकी एक वजह भी है। मुस्लिम घेरे के अंदर हैं हम घेरे से बाहर हैं। बाहर रहते हुए भी हम दुश्मन को बुरी तरह मात दे सकते हैं। ऐसी स्थितियों में अस्पृश्यों को राजनीति की समझ नहीं है यह कहना पूरी तरह से मूर्खता है।

आज झगड़ा किस बात पर है? अंग्रेज इस देश से जब चले जाएंगे तब कौन राज करेगा? हिंदू? मुसलमान? या फिर, हिंदू और मुसलमान मिल कर? हमें कई तरह के लालच दिए जाते हैं, लेकिन असली लड़ाई किस बात की है। यह आप लोगों को समझ लेना चाहिए। हमारी लड़ाई सत्ता के लिए है। हम सत्ता चाहते हैं। हम हिंदुओं का राज्य नहीं चाहते। हम भीख नहीं चाहते। हम सचमुच का स्वराज चाहते हैं। हमारी लड़ाई काँग्रेस से है। मुसलमान जो मांगते हैं काँग्रेस उन्हें देती है। मुसलमानों की आबादी 25 प्रतिशत है। उन्हें साढे तैंतीस प्रतिशत सीटें मंजूर हैं। अब वे 50 प्रतिशत की मांग करते हैं। शिमला परिषद के दौरान उनकी यह मांग भी मंजूर करने के लिए काँग्रेस तैयार थी और हमारे वाजिब हक के बारे में काँग्रेस ने क्या कहा? अस्पश्यों को हम सुई की नोक बराबर मिट्टी भी नहीं मिलेगी! (शेम शेम शेम की आवाजें)। पेशवाई को फिर आने नहीं देना चाहते हो तो, आपको जागरुक रहना पड़ेगा। मुंबई एसेंब्ली के लिए मैंने आपके

जिले में जिवाप्पा ऐदाले को चुनाव में खड़ा किया है। जिवाप्पा केवल निमित्तमात्र है। मैं ही सब कुछ हूं। मुझे वोट दें। (तालियों की गड़गड़ाहट)

मैं जातिवाद के खिलाफ हूं। मांग और भंगियों के साथ मैं खाना खाता हूं। जातिवाद का मैं कट्टटर दुश्मन हूं। मैं चाहता हूं कि आपसी जातिवाद जल्द से जल्द मिटे। ब्राह्मणों द्वारा ये जातिवाद पैदा किया गया है। मेरे फेडरेशन में जातिवाद को हमेशा के लिए समाप्त किया गया है। मांग, भंगी, चमार आदि सभी के साथ मैं समानता से पेश आता हूं। महार जाति में पैदा हुआ यह मेरा दोष नहीं है। मुंबई में 90 प्रतिशत महार थे, लेकिन मुंबई में चमार समाज के देवरुखकर को मैंने खड़ा किया है। बढ़ई बढ़ई को वोट देगा, कासार (मनिहार) कासार को वोट देगा यह बिल्कुल नहीं चलेगा। सबको अपना वोट शेड्यूल्ड कास्टस् फेडरेशन के उम्मीदवार को देना चाहिए। दूसरा उदाहरण, नासिक में 90 प्रतिशत महार हैं लेकिन वहां म्युनिसिपालिटी चुनावों में भंगी को खड़ा किया। महारों ने उसे जिताया।

खानदेश में एक मांग उम्मीदवार को टिकट दिया गया था। दुर्भाग्य से रास्ते में उसकी गाड़ी खराब हो गई। नॉमिनेशन पेपर दर्ज करने के लिए तय समय पर वह उपस्थित नहीं रह पाया। दो माह पूर्व अपने 30 छात्रों को उच्च शिक्षा के लिए विलायत भेजा। उनमें मांग, चमार, ढोर और भंगी भी हैं। मैं जातियों के बीच भेदभाव नहीं करता।

विजापुर, अहमदनगर, बेलगांव इन तीन जगहों पर जाना मेरे लिए संभव नहीं है। भारत के सभी प्रांत मुझसे 'आप अभी तक हमारे यहां क्यों नहीं आए?' सवाल करते हैं। मैं गर्व के साथ कह सकता हूं कि मुंबई के इलाके में चौकाने वाला राजनीतिक विकास हुआ है। लगता है यहां विजापूर जिले से भी कुछ लोग आए हुए हैं। वे काले को अपना वोट दें और अहमदनगर के मतदाता रोहम को वोट दें।

मृत्यु का भय किसे है? एक गांगुर्डे मरा तो क्या हुआ? घायल अन्य 300 लोग मरें तो भी क्या? 'तुम्हें गोली से उड़ा देंगे, तुम्हारा कत्ल कर देंगे', जैसी धमकियों वाले गुमनाम खत न आए हों ऐसे मेरे लगातार छह महीने नहीं गुजरते। इन चुनावों में सबको चाहिए कि वे निडर रहें और गुलामी वत्म करने के लिए फेडरेशन के उम्मीदवार को ही अपना वोट दें। यह अखिल अस्पृश्य समाज की लड़ाई है। यह बात ध्यान में रखें। बिगुल बजने पर सेना में जिस प्रकार सभी सैनिक इकट्ठा होते हैं, उसी प्रकार हर स्त्री-पुरुष को पोलिंग बूथ पर जाकर अपने उम्मीदवार को वोट देना चाहिए।

235

स्वराज्य के लिए मेरा बिलकुल विरोध नहीं, हां, स्वराज्य में हमें भी हिस्सेदारी मिलनी चाहिए

(दहिवडी (सातारा) दिनांक 15 फरवरी, 1946)

अध्यक्ष महोदय, भाइयों और बहनों,

आज मैं यहां दिल्ली से करीब 1000 मील की यात्रा कर पहुंचा हूं। यह मौका उतना ही महत्वपूर्ण है। चारो ओर अलग-अलग पार्टियों की चुनावी गहमागहमी शुरू है, लेकिन मेरे और गांधी के बीच के झगड़े की बात भारत के अखबारों में बार-बार उछाली जा रही है। यह झगड़ा पिछले 25 वर्षों से यानी सन 1920 से चल रहा है। आप लोग सोचेंगे कि यह झगड़ा किस बात के लिए है? गांधी का तिलक के साथ झगड़ा था। गांधी का गोखले के साथ भी झगड़ा था। गांधी का सर चिमणलाल सीटलवाड के साथ भी झगड़ा था। अब बाकी झगड़े खत्म हो गए लेकिन मेरा और गांधी का झगड़ा अब भी जारी है।

मैं एक दरिद्र परिवार में जन्मा हूं। बडी मेहनत और लगन के साथ मैंने पढ़ाई की। आगे बड़ोदा सरकार की मदद से विलायत जाकर उपाधियां प्राप्त कीं। फिर नौकरी की। दो साल बाद नौकरी छोड़ कर फिर विलायत गया और बैरिस्टर तथा डी एससी की उपाधियां हासिल कीं। तब से समाजकार्य और व्यवसाय दोनों मैं बड़ी ईमानदारी से करता आया हूं। बैरिस्टर की पढ़ाई जब मैंने शुरू की थी तब हाईकोर्ट के सभी वकील ब्राह्मण और सभी सॉलीसिटर्स गुजराती थे। उसी वक्त गांधी के पास जाकर मैं अपने लिए कुछ मांग सकता था। सम्मान, केसेस और रुपया-पैसा भी पा सकता था। औरों की तरह ही मेरा निजी विवाद होता तो वह मिटा कर मैं गांधी की शरण में जा सकता था। लेकिन गांधी और मेरे बीच का विवाद अभी तक मिटा नहीं है। इसकी वजह यह है कि मैं गांधी से अपने लिए कुछ भी मांगना नहीं चाहता। मैं अपनी बुद्धि, अपने पुरुषार्थ तथा अपने बल के सहारे जीवन बिता रहा हूं। गांधी से मैं जो मांग रहा हूं वह आप लोगों की तरफ से और जो न्याय है वही मांग रहा हूं। गांधी के साथ मेरा यह झगड़ा अपने पूरे समाज की ओर से है और समाज के उज्जवल भविष्य के लिए है।

गरुड़: 10 मार्च, 1946

आजकल तो सब लोग स्वराज की मांग कर रहे हैं, लेकिन सोचिए कि स्वराज किसका? स्पृश्यों से हमारा सवाल है कि आपका राज हम पर ही क्यों है? क्या हमें भी स्वराज और न्याय तथा अधिकार नहीं मिलने चाहिएं? हिंदुओं का स्वराज कहें तो शुद्ध पेशवाई! पेशवाई भी स्वराज ही था ना? उसमें हम पर अनगिनत जुल्म ढाए गए। अछूत व्यक्ति का थूक रास्ते पर ना गिरे, इसलिए उसके गले में मिट्टी का मटका बांधा गया और उसके चलने पर मिट्टी पर होने वाले उसके पैरों के निशान से छुआछूत न फैले इसके लिए उसकी कमर में पीछे झाड़ू लटकाई गई। पहचान के लिए उसके गले में काला धागा बांधा गया। दोबारा ऐसी स्थितियां पैदा न हों, इसीलिए मैं संघर्ष कर रहा हूं।

स्वराज से मेरा बिल्कुल विरोध नहीं है, लेकिन उस स्वराज में हमें भी हिस्सा चाहिए। अधिकार की जगहों, मौके की जगहों पर हमारे लोगों का भी हक होना चाहिए। राउंड टेबल कॉन्फ्रंस में अलग चुनाव क्षेत्र के लिए मैं लड़ा। मेरा आग्रह था कि स्पृश्यों द्वारा चुने गए प्रतिनिधि हमें नहीं चाहिए। आखिर मेरी जीत हुई, मैंने अलग चुनाव क्षेत्र हासिल किया, लेकिन इससे गांधी के पेट में दर्द होने लगा। अस्पृश्यों को स्वाभिमान के जो हक मिले उन्होंने यरवदा जेल (पूना), में आमरण अनशन किया और हमारे हक हमसे छीन लिए। इस कारण हमें बहुत कम हक मिले। हमारे किले की दीवार को उन्होंने दरकाया, अब उस दरार को हमें संगठन का चूना-मिट्टी भर कर फिर जोड़ना होगा। सरकारी अधिकारी हमारे हों, मंत्री हमारे हों, केंद्र सरकार में भी हमारे मंत्री होना जरूरी हैं। सात प्रांतों में कॉंग्रेस के मंत्रिमंडल बने, लेकिन गांधी का नजरिया नहीं बदला और न उनका मन पलटा। अभी हाल में गांधी मद्रास के दौरे पर गए थे। वहां किसी ने उनसे पूछा कि आपके और अस्पृश्यों के बीच मनमुटाव क्यों है? तब सीधा सरल जवाब देने के बजाय गांधी ने टालमटोल वाला जवाब दिया और कहा कि अंग्रेजों ने इन्हें अधिकार की लत लगाई। मराठा, मुसलमान, ईसाई, एंग्लो इंडियन को नौकरियां दी जाती हैं उसमें गांधी को कोई आपत्ति नहीं, लेकिन देखा यही गया है कि अस्पृश्यों को नौकरियां दी गईं तो उन्हे कष्ट होने लगता है।

हमारे लिए ये चुनाव बेहद महत्वपूर्ण हैं। अंग्रेज हमारी सत्ता छीन कर लोगों को सत्ता और संविधान बनाने के अधिकार देने वाले हैं। इसके लिए एक संविधान समिति बनाई जाने वाली है। हमारे विधायक वहां जाकर प्राप्त संविधान अधिकारों को सतत जारी रखेंगे। हमें ऐसे लोग चाहिएं जो बिना किसी लागलपेट के नौकरियां, शिक्षा, प्रतिनिधित्व, सत्ता, अलग अस्तित्व, उपनिवेश आदि मांगें और उनके सामने रखें। स्पृश्यों की अंजुली से पानी पीने वाले लोग हमें नहीं चाहिए। कॉंग्रेस के टिकट पर चुनाव लड़ने वाले लोग अगर बिना किसी की परवाह किए हमारी मांगें रखेंगे तो मैं उन्हें भी समर्थन दूंगा, लेकिन वे लोग स्पृश्यों के गुलाम हैं। अस्पृश्यों के हित की ओर ध्यान दिए बगैर अपने स्वार्थ की सोचने वाले हैं। हम अगर उन्हें हराते हैं तो बहुत अच्छा ही होगा। धनवान अपने कुत्ते को जिस

प्रकार पट्टे से बांधता है और इस बात का ख्याल रखता है कि उसका कुत्ता कहीं और न जाए उसी प्रकार का पट्टा है कॉँग्रेस का टिकट। कॉँग्रेस को पास भी फटकने ना दो। कॉँग्रेस का उम्मीदवार अपना दुश्मन है। वह दूसरों के अधीन है। हमारे लोग पराश्रित न हों इस बारे में आपको जागरुक रहना होगा।

परवशता कैसे नुकसानदेह होती है इसका एक प्रत्यक्ष उदाहरण मैं आपको बताता हूं। फलटण के कुछ महारों को 4 बीघा जमीन मिली थी। कुछ कारणों से वहां का राजा एक मंदिर में हर रोज 500 ब्राह्मणों को पंचपकवानों का भोजन कराता था। हर रोज राजमहल से वहां गाडियां भर-भर कर खाना आता। वहां के महार लोग उनका जूठन खाकर गुजारा कर लेते और इसीलिए खेती नहीं करते थे। महारों की जमीन पर जंगल उगा कर मराठों ने कब्जा कर लिया। आगे 60-70 वर्षे के बाद राजा को समझ में आया और उसने ब्राह्मणों को भोजन कराना बंद किया। महारों को भी जूठन मिलनी बंद हुई। बाद में एक बूढ़ा अपनी जमीन वापिस पाने के लिए जमीन के कागजात लेकर मुझसे मदद मांगने आया, लेकिन 1874 से पहले जमीनें गई थीं इसलिए कुछ किया नहीं जा सकता था। इस प्रकार जूठन के कारण महारों को अपनी जमीन से हाथ धोना पड़ा और पराश्रित जीवन के कारण उनके हक गए, इसलिए आप सब नींद से जागिए और आंखें खुली रखिए। साल दो साल में ही यहां बड़ा परिवर्तन होने वाला है। अंग्रेज सत्ता छोड़ देंगे तब सारी सत्ता किसी और के पास जाए, इससे पहले हमें अपना हिस्सा भी चाहिए। इसी कारण आने वाले चुनाव एक निर्णायक संग्राम की तरह हैं। कौरव-पांडवों के संग्राम की तरह।

हमारे ब्राह्मणेतर साथी अब कॉँग्रेस की ओर झुक रहे हैं। अब कॉँग्रेस और हमारी फेडरेशन के बीच झगड़ा है। हमने तय किया, अगर हम एकजुट हुए तो निश्चित रूप से जीत हमारी ही होगी। हमेशा के लिए स्थितियों में फेरबदलाव लाना हो तो तय करना होगा कि आत्म-सम्मान के साथ ही जिएंगे भले आत्मसम्मान पाने की लड़ाई में जान भी क्यों न गंवानी पडे।

20 साल पहले की स्थितियों और आज की स्थितियों में जमीन-आसमान का फर्क है। उस समय 90 प्रतिशत लोग यही कहते कि 'हुजूर, हम आपकी गौशाला में ही रह लेंगे।' आज हममें से एक भी व्यक्ति यह कहने के लिए राजी नहीं होगा। यह खुशी की बात है। पहले महारों को विधिमंडल की इमारत में झाड़ू लगाने का काम दिया जाता था, लेकिन आज मेरे 15 लोग विधिमंडल में सदस्य बने हैं। अन्य लोगों के साथ वहां वे सम्मान के साथ बैठते हैं। आगे चल कर वे मंत्री भी बन सकते है, इसीलिए ये चुनाव बहुत महत्वपूर्ण हैं। ब्राह्मण या ब्राह्मणेतर चुनाव लड़ते हैं अपना सम्मान बढ़ाने के लिए, लेकिन आप और हमें विधिमंडल में अगर जाना है तो जिस चक्की में हम पिस रहे हैं

उस चक्की के खूंटे को अपने अधिकार में करने के लिए। हमें वहां जाकर जोर–जबरदस्ती और अन्याय को मिटाने का काम ही करना है। हमारे पास पैसा नहीं, हम बलवान नहीं, इसीलिए हमें राजनीतिक सामर्थ्य की जरूरत है। हमारी सहमति से ही राजपाट चलना चाहिए, इसीलिए, जिसे वोट देने का अधिकार प्राप्त है, वह अपने इस अधिकार को अमूल्य चीज समझे और इस्तेमाल करे। वोट यानी कड़े संघर्ष से प्राप्त 'संजीवनी मंत्र' है। उसके सही इस्तेमाल से ही हमारी सुरक्षा हो सकती है। स्वाभिमानपूर्वक जीने का वह एक सहारा है। उसकी देखभाल करें, इसी नजरिए से इन चुनावों को देखें।

विधिमंडल में भी हम अल्पसंख्यक हैं। कुल 175 सदस्यों में से हमारे सदस्यों की संख्या केवल 15 है। इतनी संख्या के साथ काम करना कठिन है। इसीलिए 15 की जगह अब हमें 20–25 लोगों को चुनाव में जिताना होगा। इसीलिए हम जनरल जगहों पर भी चुनाव लड़ रहे हैं। दक्षिणी हिस्से में मे. इनामदार को उम्मीदवार के रूप में खड़ा किया है। हम सब उन्हें चारों वोट देंगे तभी हमारी जीत हो सकती है। हमारे 10000 वोट हैं, उन्हें कम से कम 10000 वोट मिलने चाहिएं। हर किसी के 4 वोट और 4 जगहें हैं। इसीलिए सब अपनी जिम्मेदारी समझें। हमारे विरोधियों के पास पैसा है। विरोधियों द्वारा कालाबाजारी से कमाया गया पैसा अब वे पाप धोने के लिए काँग्रेस को चुनावों की खातिर दे रहे हैं। हम अगर पैसों के सहारे राजनीति करने लगे तो हमें राजनीति छोड़नी पड़ेगी। हमारे अस्पृश्य लोग काँग्रेस के पीछे नहीं हैं। अन्य लोग पैसे के बहकावे में आकर काँग्रेस के पीछे पड़े रहते हैं। काँग्रेस को अगर लोग मानते तो बिना फूटी कौड़ी खर्च किए काँग्रेस का इलेक्शन हो जाना चाहिए। 1937 में मेरे विरोधी ने 35000 रुपये खर्च किए। मेरे केवल 900 रुपए ही खर्च हुए जितने कि जरूरी थे और मैं अव्वल चुन कर आया। इसमें मुझे गर्व महसूस होता है, इसीलिए, कहना पड़ेगा कि अगर राजनीति कोई समझ सकता है वह केवल अस्पश्य ही। अन्य लोग अपने लिए राजनीति करते हैं। उनके सामने समाज का या देश के हित का मामला नहीं होता।

मैं पिछले 20 सालों से राजनीति में काम कर रहा हूं, तथा इस विषय का सूक्ष्मता से अध्ययन भी करता रहा हूं। मेरी राजनीति कभी विफल नहीं रही। राजनीति को अच्छी तरह से समझा और बूझा है। इसीलिए मेरी राजनीति सच्ची, ईमानदार और स्वाभाविक है। अन्य लोग पानी के किनारे खड़े रह कर, कूद–फांद कर केवल आनंद लेते हैं। उनके पास तजुर्बा नहीं। हमारी बात अलग है, इसीलिए आप सब जागरुक रह कर, विरोधियों के किसी भी तरह के छलावे–बहकावे में न आते हुए, उनकी धमकियों से न डरते हुए, समाज के उद्धार का पवित्र कर्तव्य पूरा करें, अपने चारों मत अपने ही उम्मीदवार को दें। उसे बताएं कि, जो कहना था वह कह कर मैंने अपना दायित्व निभाया है। मुझे उम्मीद है कि आप सब लोग अपना कर्तव्य पूरा करेंगे।

236

राजनीतिक सत्ता में मुख्य पद हासिल करो

भारतीय अस्पृश्य वर्ग के नेता डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने दिनांक 16 फरवरी, 1946 के दिन बेलगांव जिले के कुछ प्रमुख गांवों का सरसरी तौर पर दौरा किया। शेडबाल में उन्होंने लोगों को चुनाव के बारे में थोड़ा उपदेश दिया। उसके बाद वह ऐगली गांव गए। वहां उपस्थित जनसमुदाय को उन्होंने अहसास कराया कि अस्पृश्य समाज के हिस्से आई जिम्मेदारी कितनी महत्वपूर्ण है। उसके बाद वह सोली और अथणी गांवों का दौरा कर शाम 5.30 बजे के आसपास निपाणी पहुंचे। वहां जोर–शोर से उनका स्वागत किया गया।

निपाणी हाईस्कूल के बड़े मैदान में डॉ. अम्बेडकर के भाषण का आयोजन किया गया था। वहां सभा शुरू होने से पहले ही काफी भीड़ जुटी थी। सभा के सुरक्षा इंतजाम की जिम्मेदारी समता सैनिक दल की थी और वे मुस्तैदी से उसमें जुटे हुए थे। करीब 1000 समता सैनिक हाथों में लाठियां और भाले लिए अपनी जगहों पर तैनात थे। उन्हें देख कर प्रतिस्पर्धियों को डर महसूस होना स्वाभाविक था। स्वयंसेवकों के बंदोबस्त के कारण सभा का कामकाज बिना किसी रुकावट के संपन्न हुआ। स्वयंसेवकों द्वारा निभाई गई इस सामाजिक जिम्मेदारी के लिए निश्चित रूप से कोई भी उन्हें धन्यवाद ही देगा।

सभास्थान पर डॉ. बाबासाहेब का आगमन होते ही उनके नाम की जय बोली गई और तालियों की गड़गड़ाहट हुई। फिर क्षणकाल में सब ओर शांति छाई। स्वागत गीत और औपचारिक भाषण के बाद डॉ. अम्बेडकर का भाषण हुआ। उन्होंने अपने भाषण में कहा,

प्रिय भाइयों और बहनों,

मुंबई विधिमंडल चुनावों को लेकर अस्पृश्यों के क्या कर्तव्य हैं यह बताने के लिए, मैं आज यहां आया हूं। इस विधिमंडल में प्रतिस्पर्धियों को टक्कर देकर हमने 15 जगहें पाई थीं। उन सभी जगहों पर हमें अपने ही उम्मीदवारों को फिर से जिताना होगा। अगर ऐसा नहीं हुआ तो फिर हम पर यकीनन पछताने की नौबत आएगी, इस बात को पक्का मान लेना। कॉंग्रेस ही हमारी दुश्मन है। वह अस्पृश्यों के लिए कुछ नहीं करेगी। दो साल सात महीनों तक सत्ता उसके हाथ में थी लेकिन हमारे लिए कॉंग्रेस ने कोई बड़ा

गरुड़: 3 मार्च, 1946

काम नहीं किया। 20 सालों से काँग्रेस और हमारे बीच लड़ाई जारी है। आजादी और आत्मनिर्भरता का हमारा आंदोलन तोड़ने के लिए काँग्रेस द्वारा सभी तरह की कोशिशें की गई। चुनाव जीतने के लिए हमारी आरक्षित सीटों पर भी उसने अपनी तरफ के 'अस्पृश्यों' को खड़ा किया है।

इस बार मेरी आपको साफ चेतावनी है कि यह चुनाव जीत कर राजनीतिक सत्ता की प्रमुख जगहों पर आप कब्जा कर लो। पूरे अस्पृश्य समाज का कल्याण इसी में है। गर्व के साथ मैं यह कह सकता हूं कि महार समुदाय अस्पृश्यों का मुखिया है। हमारा संगठन काँग्रेस की आंख की किरकिरी बना हुआ है।

यह खेद के साथ मुझे आपको बताना पड़ रहा है कि महार समाज के बै माने अपने हित शत्रुओं में शामिल हुए हैं। आरक्षित जगहों के लिए फिलहाल तीन उम्मीदवार खड़े हैं। दलित फेडरेशन के वराले, फेडरेशनद्रोही माने और साम्राणी। हालांकि, सुना है कि साम्राणी ने अपनी उम्मीदवारी रद्द करवा ली है। स्पष्ट है कि अब विराले के खिलाफ माने ही मैदान में हैं।

मैंने सुना है कि माने अपने को निर्दलीय उम्मीदवार मानते हैं और अपना प्रचार भी वे उसी तरह कर रहे हैं, लेकिन उसका कोई फायदा नहीं। असल में वह काँग्रेस के हाथ का खिलौना बन गए हैं। कोई यह न समझे कि काँग्रेस का टिकट नहीं मिला, इसलिए वे निर्दलीय उम्मीदवार बने हैं। काँग्रेस का सिंदूर भले उनकी मांग में सजा न हो, लेकिन उनका काँग्रेस के साथ पुनर्विवाह हुआ है। लठ्ठे जिस प्रकार माने को जीत दिलाने की हरसंभव कोशिश कर रहे हैं और उनका प्रचार भी करते हैं उससे साफ जाहिर है कि माने ही उनके उम्मीदवार हैं।

बै माने को इन चुनावों में जिताने के लिए दिवाणबहादुर... नहीं नहीं, मि. लठ्ठे बड़े भडकीले ढंग से प्रचारकार्य में जुटे हैं। पता नहीं लठ्ठे को इन जिलों में लोग कितना मानते हैं। खुद अपने लिए टिकट पाने के लिए उन्हें काँग्रेस हाइकमांड तक हर किसी की लल्लो-चप्पो करनी पड़ी (गिड़गिड़ाना पड़ा)। ऐसी स्थितियों में मि. लठ्ठे के प्रचार का पता नहीं क्या फायदा होगा? उनकी आपसी मिलीभगत अब सबको पता चल चुकी है।

काँग्रेस के रुपयों के बल पर बै माने चुनाव के अखाड़े में उतरे हैं। लेकिन यह पैसा काँग्रेस का नहीं है यह बताने के लिए दिखाया यही जा रहा है कि रुपयों की थैलियां महार वर्ग की ओर से अर्पित की जा रही हैं। महार वर्ग क्या दो-दो हजार रुपयों की थैलियां देने की क्षमता रखता है? आज की सभा में 20-25 हजार लोग उपस्थित हैं। उन

सबको अगर तलाशा जाए तो, हजारों रुपयों की बात तो छोड़ ही दीजिए, 100 कौडियां तक उनके पास से नहीं निकलेंगी। कॉँग्रेस की कूटनीति के दांव–पेंच हम खूब पहचानते हैं, इसीलिए हमारा साफ सवाल है कि, क्यों आप इस प्रकार रुपया फेंकते हैं? हमारा संगठन तोड़ना ही चाहते हैं ना?

बै माने हमसे टूट कर अलग न हों इसलिए मैंने बहुत कोशिश की। उनके कल्याण के लिए मैंने काफी कोशिशें कीं। उनकी शिक्षा के लिए मैंने हर संभव मदद की। उनकी शिक्षा का सही उपयोग हो, इसलिए कोशिश की लेकिन आखिर माने ने हमें दगा दिया। मैं चाहता था कि वह जज बनें, मशहूर कानूनविद् बनें। लेकिन मेरी यह इच्छा पूरी नहीं हो पाई। पढ़ी हुई विद्या पर वह अमल नहीं कर सके। जैसे विलायत जाकर इलेक्ट्रिसिटी की पढ़ाई कर लौटने वाले छात्र द्वारा जूतों की दुकान खोली जाए बिल्कुल वैसा हाल माने का हुआ है। कोल्हापुर जैसे संस्थान में वह अपना जलवा दिखा नहीं सके। जहां अस्पृश्यों की उन्नति के लिए अधिकारी वर्ग भी अनुकूल है वहां वे अपना विकास नहीं कर पाए। ऐसे में अंग्रेजों के भारत में वह क्या कर सकेंगे? माने ने अपनी जाति से द्रोह किया है।

मैंने सुना है कि अपना प्रचार करते समय माने कहते हैं कि तमाखू का व्यापार करने वाले महारों को जो सुविधाएं उपलब्ध हैं वे मैंने ही उपलब्ध कराई हैं। यह बात साफ झूठ है। जो सुविधाएं उपलब्ध हैं वे मैंने हासिल की हैं, माने ने नहीं। दिल्ली में माने मेरे घर आए, मेरे घर ही वे ठहरे भी। वह प्रार्थना लेकर आए थे कि ''कोल्हापुर की रीजन्सी काउंसिल में मुझे मिनिस्टर बनाएं''। लेकिन यह बात बनी नहीं, यही वास्तविकता है।

आखिर में मुझे आपसे बस इतना ही कहना है कि वराले को ही अपने वोट देकर बहुमत से विजयी बनाएं।

237

सिर पर कफन बांध कर हम युद्धभूमि में उतरे हैं

मुंबई की अस्पृश्य जनता के संकल्प के अनुसार थैली अर्पण समारोह और डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का महत्वपूर्ण भाषण आयोजित किया था। इस संदर्भ में निम्नलिखित सूचना जारी की गई थी .

अपने परमपूज्य नेता नेक नामधारी डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को मुंबई के अस्पृश्य समाज की ओर से थैली अर्पण समारोह रविवार दिनांक 17 फरवरी, 1946 को शाम 5 बजे परेल के जीआईपी रेलवे वर्कशॉप के सामने साध्वी रमाबाई अम्बेडकर नगर (नरेपार्क) में आयोजित किया जा रहा है। इस समारोह के बाद बाबासाहेब अम्बेडकर का महत्वपूर्ण भाषण होगा। अस्पृश्य जनता से सविनय अनुरोध है कि वे इस समारोह में उपस्थित रहें।

इस समारोह में उपस्थित रहने वालों के लिए आठ आने का टिकट खरीदना अनिवार्य है। बिना टिकट किसी को सभा में प्रवेश नहीं मिलेगा, इसीलिए, जिन्होंने अब तक आठ आनों के टिकट नहीं खरीदे हैं वे अपने वार्ड कमेटी से या पोयबावडी के मुंबई शेड्यूल्ड कास्टस् फेडरेशन के ऑफिस से तुरंत खरीद लें। सभा स्थान पर टिकट बेचे नहीं जाएंगे और बिना टिकट किसी को प्रवेश नहीं मिलेगा।

टिकट बेच कर मिलने वाली पूरी राशि अपने परमपूज्य नेता नेक नामधारी डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को अर्पण की जाएगी। मुंबई की जनता की इच्छा है कि इस थैली की राशि 50000 रुपयों से कम न हो। इसलिए इतनी राशि जुटाने के हिसाब से एक रुपया, दो रुपए, पांच रुपए या इससे अधिक रुपए लेने की योजना तैयार की गई है। इसीलिए, इस प्रकार रुपया देने वालों से चंदा साभार स्वीकार किया जाएगा। चंदा देने वाले महिला-पुरुषों के नामों की सूची छाप कर प्रकाशित की जाएगी। जो इस सूची में अपने नाम छपवाना चाहते हैं वे तुरंत चंदे की राशि वार्ड कमेटी के पास या मुंबई शेड्यूल्ड कास्टस् फेडरेशन के ऑफिस में 15 फरवरी, तक पहुंचाने की कृपा करें।

सूचना जी. एम. जाधव, अध्यक्ष और एस. बी. जाधव, जनरल सेक्रेटरी, शेड्यूल्ड कास्टस् फेडरेशन, मुंबई शाखा (शहर और उपनगर) की ओर से जारी किया गया था।

जनता : 9 फरवरी और 2 मार्च, 1946

मुंबई में 3 जनवरी, 1946 को हुए प्राथमिक चुनावों के दिन शहीद चोखाजी सावलाराम गांगुर्डे इनकी काँग्रेस के गुंडों द्वारा की गई निर्मम हत्या और इस शहीद की शवयात्रा पर 4 जनवरी, 1946 को पुलिस द्वारा किया गया अमानवीय लाठीचार्ज, उसमें मृत हुए वीर रामचंद्र गुंडू कांबले और उसके बाद मुंबई में जगह जगह अस्पृश्यों की बस्तियों पर किए गए आक्रामक हमले आदि घटनाओं के बारे में 'डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर क्या कहते हैं?' सुनने के लिए मुंबई की अस्पृश्य जनता बेहद आतुर थी। डॉ. बाबासाहेब का यह महत्वपूर्ण भाषण सुनने के लिए मुंबई (शहर और उपनगर) शेड्यूल्ड कास्टस् फेडरेशन शाखा के कार्यकर्ताओं ने दो बार जनता के सामने सभा की तारीख का भी ऐलान किया था। लेकिन दोनों बार व्यस्तता के कारण बाबासाहेब का आना संभव नहीं हो पाया, इसलिए दो बार सभा को स्थगित करना पड़ा। तीसरी बार 17 फरवरी, 1946 के दिन सभा हुई और इस सभा की पूरी मुंबई में धूम मची।

अखिल भारतीय शेड्यूल्ड कास्टस् फेडरेशन का तीसरा अधिवेशन जहां सफलतापूर्वक संपन्न हुआ उसी रमाबाई अम्बेडकर नगर में (नरेपार्क) इस विराट सभा का आयोजन किया गया था। डॉ. बाबासाहब, सम्माननीय अतिथिगण, उम्मीदवार, फेडरेशन के विभिन्न वार्डों के कमेटी सदस्य तथा प्रमुव कार्यकर्ता आदि के लिए विशेष पंडाल सजाया गया था।

इस सभा में प्रवेश के लिए आठ आने का टिकट लगाया गया था, जिसकी पहले से घोषणा की गई थी। पंडाल में प्रवेश के लिए पांच अलग-अलग प्रवेशद्वार रखे गए थे, जिनमें एक आमंत्रितों के लिए था, एक महिलाओं के लिए और तीन पुरुषों के लिए। हर प्रवेश द्वार पर तैनात कार्यकर्ता अपना काम बढ़िया ढंग से कर रहे थे। दोपहर तीन बजे से ही लोग आने लगे थे। दूसरे शहरों से कई लोग विशेष रूप से बाबासाहेब का भाषण सुनने आए थे। पांच बजे तक करीब तीस हजार लोग नगर में दाखिल हो चुके थे। जिनके पास टिकट नहीं थे वे पंडाल के बाहर ही घूम रहे थे। मंच पर मुंबई प्रांतिक विधिमंडल के आने वाले चुनावों में खडे फेडरेशन के अधिकृत उम्मीदवार गुरुवर्य दोंदे और बाबासाहेब के अस्पृश्य समाज के परिचित मित्र तथा बायीं तरफ वार्ड कमेटियों के सदस्य, दाहिनी तरफ महिलाएं, आगे मंच से सटे अखबारों के संवाददाता और सामने अपार जनसमुदाय इस प्रकार वहां समां बंधा था।

डॉ. बाबासाहेब के आगमन से पूर्व कु. गोदावरी, मा. रोकडे, तथा रामचंद्र ने समाज की उन्नति पर आधारित कुछ गीत गाए।

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ठीक साढ़े-पांच बजे आए। उनके आने की खबर मिलते ही तालियों की गड़गड़ाहट और तरह-तरह के जयघोषों की आवाजों से माहौल चेतनाशील हो गया। समता सैनिक दल के कामकाज को देखने की बात पहले से तय थी, इसलिए आते ही डॉ. बाबासाहेब समता सैनिक दल की रैली की तरफ मुड़े। समता सैनिक दल के सैनिकों

को इस बात की जानकारी पहले से थी इसलिए हर सैनिक पूरी तैयारी के साथ आया था। सभास्थल से लगे विस्तीर्ण मैदान में सब समता सैनिक अनुशासन के साथ खड़े थे। शेड्यूल्ड कास्टस् फेडरेशन के सैनिकों का मिलिट्री जैसा अनुशासन जो देखता वह अचंभित ही रह जाता। डॉ. बाबासाहेब के साथ मुंबई शेड्यूल्ड कास्टस् फेडरेशन शाखा के अध्यक्ष श्री जी. एम. जाधव और मुंबई के समता सैनिक दल के जी. ओ. सी. श्री एम. एम. ससालेकर थे। सभा स्थल पर बाबासाहेब का आगमन होते ही बिगुल बजा। बैंड बजने के साथ-साथ डॉ. बाबासाहेब को 'गार्ड ऑफ ऑनर' का सम्मान दिया गया। उसके बाद डॉ. बाबासाहेब ने समता सैनिक दल का मुआयना किया। मुआयना करते समय डॉ. बाबासाहेब के चेहरे पर संतोष के भाव थे। चलते-चलते वह सैनिकों से बातचीत करते, कभी सैनिकों से जानकारी प्राप्त करते। जी. ओ. सी. ससालेकर उनके सवालों के जवाब देते। इस प्रकार समता सैनिक दल का मुआयना कर डॉ. बाबासाहेब मंच पर विराजमान हुए। एक बार फिर तालियों की गड़गड़ाहट हुई। डॉ. बाबासाहेब जब अपनी जगह पर विराजमान हुए तब जी. ओ. सी. ससालेकर ने समता सैनिक दल की 'प्रतिज्ञा' पढ़ कर सुनाई जो हर सैनिक को समता सैनिक दल में शामिल होते समय लेनी पड़ती है।

मुंबई और उपनगर शेड्यूल्ड कास्टस् फेडरेशन शाखा के अध्यक्ष श्री जी. एम. जाधव बनाम मडकेबुवा ने डॉ. बाबासाहेब को पुष्पमाला अर्पण कर स्वागत किया। लोगों ने तालियों की गड़गड़ाहट कर उनका साथ दिया। उसके बाद नायगाव के 'महाराष्ट्र अमॅचर्स पार्टी' के छोटे बच्चों द्वारा मुंबई में लोकप्रिय गीत . 'चल चल रे दलित वीरा' मीठे सुरों में प्रस्तुत किया।

तब तक बाहर बड़ी भीड़ इकट्ठा हो चुकी थी। डॉ. बाबासाहेब ने सबको पंडाल में दाखिल होने को कहा। सुनते ही लोगों का हुजूम अंदर आने लगा। उस वक्त सभास्थान पर बहुत हल्ला मचा। करीब पौन लाख से अधिक लोग उस भीड़ में शामिल थे। फिर शांति स्थापित करने में करीब पांच मिनट लगे। उसके बाद मडकेबुवा ने मुंबई प्रांतिक शेड्यूल्ड कास्टस् फेडरेशन शाखा के अध्यक्ष और नासिक जिले के अपने अधिकृत उम्मीदवार श्री भाऊराव कृष्णराव बनाम दादासाहेब गायकवाड़ को अपनी बात रखने मंच पर बुलाया। दादासाहब गायकवाड़ बहुत कम बोले लेकिन जो भी बोले वह दुश्मन के सीने पर सीधे वार करने जैसा था। भाषण में आने वाले चुनावों में अपना कर्तव्य, अपने ही उम्मीदवारों को बहुमत से जिताने की आवश्यकता, प्राथमिक चुनावों के परिणामों द्वारा मिला अस्पृश्यों की एकजुट का आहवान, कॉंग्रेस की जंघा में चमजूई की तरह पलने वाले अपने विरोधियों की अधोगति आदि विषयों पर संक्षेप में बोले। पिछले हफ्ते मद्रास में गांधी ने अस्पृश्यों के स्वाभिमान को कुरेदने वाले जो अपमानजनक बात कही उसके बारे में उन्होंने खूब बुरा-भला सुनाया। उसके बाद थैली अर्पण करने का समारोह हुआ। श्री मडकेबुवा ने डॉ. बाबासाहेब को सत्रह हजार रुपयों की थैली अर्पण की। उस समय

तालियों की गड़गड़ाहट से पूरा जमीन-आसमान गूंज उठा। डॉ. बाबासाहेब बोलने के लिए उठे तब भी तालियों की गूंज थमने का नाम नहीं ले रही थी। धीरे-धीरे शांति हुई और डॉ. बाबासाहेब बोलने लगे। उन्होंने कहा-

आनेवाले मार्च महीने की 11 तारीख को मुंबई एसेंब्ली के जो चुनाव होने जा रहे हैं तब आपका क्या कर्तव्य होगा यह बताने के लिए आज इस सभा का आयोजन किया गया है। पिछले दो दिनों में मैंने खाने-पीने की फिकर किए बगैर 200 मील की यात्रा की, इसलिए मैं बहुत थक गया हूं। इसलिए आज मैं आपके सामने थोड़ा ही बोलने वाला हूं। इस बारे में आप बुरा न मानें।

अब ये जो चुनाव होने जा रहे है, उनके बारे में आप बिल्कुल निराश न हों। यह एक संग्राम है। यह हमारी आजादी का आखरी संग्राम है। कुरुक्षेत्र पर कौरव-पांडवों के बीच हुए युद्ध की तरह ही हमारी आज की यह लड़ाई है।

महाभारत में कहा है कि कौरव-पांडवों की सेनाएं जब युद्धक्षेत्र में आमने-सामने हुई तब अर्जुन अजीब पशोपेश में था। लड़ाई कैसे की जाए? कौनसा पेंच लड़ाया जाए? विरोधी पक्ष पर हमला कैसे करें? -आदि विषयों के बारे में सोचने के बजाय आत्मा यानी क्या? आदि विषयों के बारे में अर्जुन श्रीकृष्ण से सवाल पूछ रहा था! युद्ध के क्षेत्र में इस प्रकार के सवाल पूछना मूर्खता है! मुझे शक है कि इस प्रकार का कोई प्रसंग घटित भी हुआ हो! भगवद्गीता में श्रीकृष्ण द्वारा कहा हुआ 'संग्राम समय का' कह कर जो बार-बार इसी विषय का वर्णन किया गया है वैसा अगर आज के युग में कोई करना चाहे तो उसे मूर्खों में ही गिना जाएगा।

पिछले बीस सालों में, मैं आपको अपने उद्देश्य और उद्देश्य को साध्य करने के मार्ग के बारे में बताता रहा हूं। मुझे यकीन है कि उसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए आप पूरी तरह संगठित हुए हैं। आज मैं पिछला पाठ बिना दोहराए, आने वाली 11 तारीख को हमारा क्या कर्तव्य होगा इस विषय को केंद्रित कर बोलने वाला हूं।

पिछले चुनावों के समय प्रतिपक्ष से हमारा आमने-सामने सामना नहीं हुआ था। जितने हम आज संगठित हैं उतने तब हम संगठित भी नहीं थे, लेकिन आज हमारी शक्ति बहुत बढ़ गई है। यह देव कर दुश्मन के होश उड़ने लगे हैं। हाल ही में मुंबई में हुए हमारे प्राथमिक चुनावों के दौरान काँग्रेस के लोगों ने अपने वीर चोखाजी गांगुर्डे की हत्या की। मुझे पता चला है कि शहीद चोखाजी गांगुर्डे के शरीर पर दुश्मन द्वारा धारदार हथियारों से किए गए जख्मों के 21 निशान थे इसी शहीद की शवयात्रा में शामिल हुई भारी भीड़ पर पुलिस ने लाठियां चलाई और उसमें हमारा दूसरा वीर रामचंद्र कांबले शहीद हुआ। कइयों को गंभीर चोटें आई। नागपूर में हमारे गजभिए और वासनिक इन दो वीरों की बलि चढ़ी। कुछ दिन पूर्व सातारा में भी हमारी सभा पर काँग्रेस के लोगों ने पत्थर फेंके। सौभाग्य से हमारे लोग घायल नहीं हुए और उनके लोग लहूलुहान हुए!

पिछले चुनावों के समय काँग्रेस ने कोई बखेडा खड़ा नहीं किया। खुले आम हमसे टक्कर लेने का साहस उसने उस वक्त नहीं दिखाया। फिर ऐसा क्या हुआ कि काँग्रेस आज ही हमसे लड़ रही है? हम इस बात को अच्छी तरह जान लें।

हम राजनीति के मैदान में उतरे हैं, इसलिए या हम चुनाव लड़ रहे हैं, इसलिए काँग्रेस का हम स्वाभिमानी अस्पृश्यों पर गुस्सा है ऐसी बात नहीं। असल में वह हमारा फेडरेशन ही नहीं चाहते। शेड्यूल्ड कास्ट फेडरेशन का कांटा उनकी आंवों में चुभ रहा है। अपने फेडरेशन की बढ़ती ताकत से काँग्रेस वाले बौखला गए हैं।

काँग्रेस को लगता है कि अस्पृश्य लोग और मुसलमान अलग-अलग रहकर ही चुनाव लड़ें, उनका समाज बिखरा रहे तो बेहतर है। इस प्रकार बिखरे हुए लोगों को काँग्रेस में खींचने की उनकी कवायद चलती रहती है। कुत्ते के सामने हड्डी डालने से वह भौंकता नहीं। इसी तरह निर्दलीय चुनाव लड़ने वालों को वश करना काँग्रेस के लिए आसान होता है। किसी को जूतों की फैक्ट्री का, किसी को गटर बनाने का काँट्रॅक्ट देकर उसे उपकृत किया जा सकता है। उल्टे किसी ताकतवर संस्था के उम्मीदवार को किसी भी तरह का लालच देकर अपने वश में नहीं किया जा सकता। यही वजह है कि काँग्रेस नहीं चाहती कि हमारी शेड्यूल्ड कास्टस् फेडरेशन ज्यादा ताकतवर बने।

काँग्रेस के नेताओं के नजरिए को अगर अच्छी तरह जांचा-परखा जाए तो समझ में आएगा कि कांग्रेस यही चाहती है कि केवल एक संस्था रहे, वह केवल कांग्रेस। उनकी महत्वकांक्षा है कि अन्य सभी लोग चुपचाप काँग्रेस में ही शामिल हों। एक संस्था, एक नेता और एक ही मार्ग हासिल कर अन्य पूरे समाज पर निर्बाध रूप से सत्ता चलाने की काँग्रेसीजनों की इच्छा है और अपनी इच्छा की पूर्ति के लिए वे जबरदस्त मेहनत कर रहे हैं। हमें मार गिराने के लिए वे किसी भी मार्ग का सहारा ले रहे हैं। हाल ही में हमारे लोगों पर जो हमले हुए हैं, हमले हो रहे हैं, हमारे शूर वीरों की जो हत्याएं हुई हैं उसका कारण है काँग्रेस की यही शैतानी महत्वकांक्षा!

मैं आपसे यही कहना चाहता हूं कि विरोधी पार्टी की किसी भी गुंडागर्दी से आप डरें नहीं। आपके उद्देश्य और उद्देश्य के प्रति आपके प्रेम को लेकर मैं पूरी तरह आश्वस्त हूं। 11 मार्च को होने वाले चुनावों में अपने उम्मीदवार को भारी बहुमत से विजय दिलाने की आप पूरी-पूरी कोशिश करें। किसी की भी धमकियों से आप न डरें।

शहीद गांगुर्डे अच्छे कार्यकर्ता थे। हमारे अन्य सभी शहीद भी अच्छे कार्यकर्ता थे। उन सभी के परिवारों से मैं यह कहना चाहता हूं कि वे उनकी मृत्यु पर शोक न करें। आज या कल लेकिन निश्चित रूप से हर किसी के साथ घटने वाली घटना है मृत्यु। शहीद गांगुर्डे और अन्य शहीदों को वीरगति प्राप्त हुई। उनकी मृत्यु से समूचा समाज दुखी हुआ। ये वीर शहीद मरे नहीं, वे अमर हुए हैं! उनकी मृत्यु अनुपम है।

मैं काँग्रेस वालों से कहना चाहता हूं कि उनकी इस प्रकार की धमकियों से, अत्याचारी हमलों से या उनके कृत्य से हम डरने वाले नहीं हैं। सिर पर कफन बांध कर ही हम लड़ाई के मैदान में उतरे हैं। सामना करने की हमारी पूरी तैयारी है। जो होना होगा वह देखा जाएगा। अपने समाज की आजादी के लिए सभी स्वार्थ त्यागने की तैयारी हम कर चुके हैं। अपमानजनक ढंग से हम किसी की शरण में नहीं जाएंगे। अपने सामर्थ्य पर हमें पूरा भरोसा है। हम दुश्मन की नाक में दम करके छोड़ेंगे। (तालियों की गड़गड़ाहट)। जीत आखिर हमारी ही होगी।

द्रोण मुनि जाति से ब्राह्मण था। वह अमीरों की बस्ती में रहता था। उसके बेटे का नाम था अश्वत्थामा। अमीरों के बच्चे चांदी के बर्तनों में दूध पिया करते थे। देख कर अश्वत्थामा भी अपनी मां से दूध मांगता। गरीब होने के कारण द्रोण के घर में चांदी का बर्तन तो था ही नहीं, गाय भी नहीं थी। बच्चे को बहलाने के लिए मां पानी में आटा मिला कर मिट्टी के बर्तन में भर कर अश्वत्थामा को देती और बाकी बच्चों के साथ वही दूध पीकर अश्वत्थामा संतोष कर लेता। एक दिन द्रोण ने यह देखा। अपना बेटा मिट्टी के बर्तन में आटा-पानी मिला कर बनाया दूध बाकी बच्चों के साथ बैठ कर पीता है यह देख कर द्रोण को बहुत दुख हुआ। उसके मन में आया, मेरे जिंदा रहने का मतलब ही क्या हुआ? कहीं से मुझे एक गाय हासिल करनी होगी। उसे लगा द्रुपद राजा अपना गुरुबंधु है। उसके पास जाकर उसे अपने गुरुबंधु होने की याद दिलाने से गाय मिल सकती है। इसी आशा से वह द्रुपद राजा की नगरी पहुंचा। राजमहल के द्वार के पास जाते ही द्वारपाल ने उससे पूछा कि, तू कौन? द्रोण ने कहा कि, वह राजा का गुरुबंधू है। चीथड़े पहना हुआ आदमी राजा का गुरुबंधू कैसे हो सकता है यह सोच कर द्वारपाल जोर-जोर से हंसने लगे, द्रोण का मषाक उड़ाने लगे। आखिर किसी सयाने आदमी ने दरबार में राजा को वबर भेजी कि आपका कोई गुरुबंधू द्वार पर खड़ा है और आपसे मिलना चाहता है। गुरुबंधू होने की याद दिलाने के लिए द्रोण ने राजा को कुछ बातें बताई और गाय देने की गुजारिश की। यह दरिद्र व्यक्ति भरे दरबार में अपने से रिश्ता बता कर अपनी श्रेष्ठता में कलंक लगा रहा है सोच कर द्रुपद को बड़ा गुस्सा आया और उसने अपने सेवकों से धक्के मार कर द्रोण को दरबार से निकाल दिया। बाहर निकलते हुए द्रोण ने पीछे मुड़ कर राजा से कहा, राजा, अगर तू गाय देना नहीं चाहता था तो मुझे बता देता, लेकिन मुझे वैसा बताने के बजाय भरे दरबार में तूने मेरा अपमान किया। प्रतिज्ञा करता हूं कि मैं इस अपमान का बदला लूंगा। अपने शिष्यों के जरिए तुम्हारे हाथ-पैर बंधवा कर अपने पैरों पर लोट लगवाऊंगा, तभी अपना नाम द्रोणाचार्य बताऊंगा। इतना कह कर द्रोण वहां से निकल गया।

आगे द्रोण ने कौरव-पांडवों को धनुर्विद्या सिवाई। विद्या संपादन करने के बाद अन्य शिष्यों की तरह ही अर्जुन ने जब द्रोण से पूछा, 'मैं आपको क्या गुरुदक्षिणा दूं?' तब

द्रोण ने उससे गुरुदक्षिणा मांगी। अर्जुन सचमुच द्रुपद राजा को बांध कर ले आया और द्रुपद को द्रोण के चरण छूने पड़े।

भाइयों और बहनों, हम अल्पसंख्यक होंगे, गरीब भी होंगे, लेकिन हममें स्वाभिमान है। द्रोण की तरह ही प्रखर अभिमान पालते हुए आप सामर्थ्यवान शत्रु को भी हरा कर अपने पैर पकड़ने के लिए मजबूर करेंग। इस बारे में मुझे पूरा आत्मविश्वास है। (तालियां) । मृत्यु को भी पीछे छोड़ कर अपने समाज की आजादी के लिए पूरे आत्मविश्वास के साथ लड़ना यही अपनी प्रतिज्ञा है। (तालियों की गड़गड़ाहट)

काँग्रेस से तथा हिंदुओं से मैं कहना चाहता हूं कि मारधाड कर और दंगे फैला कर हम चुनाव जीतना नहीं चाहते। सामना ही करना हो तो हमने चूडियां नहीं पहनी हैं! (तालियां)। भले हमारे पास सामर्थ्य नहीं हो, स्वाभिमान जरूर है। जो हम पर हमला करेंगे उन्हें हमारी शरण में आने के लिए हम मजबूर करेंगे। (तालियों की गड़गड़ाहट)

हिंदुओं से मेरा बस इतना ही कहना है कि जिस प्रकार आपकी राजनीति अंग्रेजों की सत्ता से मुक्ति पाने के लिए है, उसी प्रकार हमारी राजनीति हिंदुओं की गुलामी से मुक्त होने के लिए है। आप जिस प्रकार अंग्रेजों का राज नहीं चाहते उसी प्रकार हमें हिंदुओं का राज नहीं चाहिए। आपकी नजर में- अंग्रेज जाएंगे तो हिंदुओं को स्वराज मिलेगा और हमारी नजर में- अंग्रेज जाएंगे और उनकी जगह हिंदू आएंगे। आज केंद्रीय मंत्रिमंडल में कुछ यूरोपीय लोग हैं। उनकी जगह ब्राह्मण, कायस्थ, बनिए बैठेंगे, लेकिन इन लोगों पर हमारा रत्ती भर भी भरोसा नहीं है। पिछले दो हजार सालों से हिंदुओं के कारण हमारी जान सांसत में थी। हजारों सालो से हिंदू रूपी अजगर हमारे शरीर को लपेटे हुए बैठा है। जिस दिन इस अजगर की गिरफ्त खुलेगी वही हमारी आजादी का दिन होगा! अपनी आजादी के लिए हम हिंदुओं की सत्ता का कड़ा विरोध करते हैं। हजारों वर्षों तक जिन्होंने हमें कुचला वे जब सत्ता में आएंगे तब उनका दिल पिघलेगा ऐसा कोई नहीं कह सकता! जो लोग हमारा स्पर्श होने मात्र से नहाते हैं, वे हमारा उद्धार करेंगे यह कोई पागल भी नहीं मान सकता। सत्ता अगर हिंदुओं को ही मिलेगी तो वह हमसे धोवा होग, इसीलिए इस देश की सत्ता में हमें हिस्सा मिलना ही चाहिए। हमारी यह लड़ाई सत्ता पाने के लिए ही है। हिंदु कितनी भी कूटनीतियां करें, रुकावटें करें इस देश के सत्ताधारी बनने की अपनी प्रतिज्ञा हम पूरी करेंगे ही। (तालियों की गड़गड़ाहट)

सबको एक सवाल परेशान किए हुए है कि संभावित अकाल को कैसे टाला जा सकता है? हिंदुओं से अकाल टालने के उपाय के बारे में पूछने पर वे बताते हैं कि राष्ट्रीय सरकार के सत्ता में आने तक अकाल टलने वाला नहीं। राष्ट्रीयय सरकार की सत्ता यानी अभी जो अंग्रेज मंत्री हैं उनकी जगह हिंदू मंत्रियों का आना। इस प्रकार बनने वाली सरकार किस प्रकार अलग किस्म की हो सकती है? कहते हैं, राष्ट्रीय सरकार के

आने से अकाल टलेगा! यह सरासर धोखाधड़ी की जा रही है। लुकाछिपी का खेल खेला जा रहा है। यह सब सत्ता हासिल करने के लिए हिंदुओं द्वारा कार्रवाई की जा रही है। आज का प्रसंग अस्पृश्यों के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण है। हिंदू लोग हमारे हक छीनना चाहते हैं, लेकिन हमारा मरने का हक कोई भी छीन नहीं सकता। (तालियां) अपने अधिकार अगर हमें नहीं मिलें तो उन्हें पाने के लिए जान की बाजी लगाने की हमने ठानी है। हम बिल्कुल किसी की परवाह नहीं करेंगे चाहे गांधी नाक सिकोडें, वल्लभभाई दहाडें या फिर जवाहरलाल नेहरू जलभुन जाएं।

मुसलमानों की तरह हमारी मांगें बहुत ज्यादा नहीं हैं। हमारी आत्मनिर्भरता के लिए, हमारे विकास और उन्नति के लिए ये मांगें उचित ही हैं। उनमें गेहूं बराबर भी कुछ ज्यादा नहीं। हमारी मांगें बढ़ी-चढ़ी हैं ऐसा अगर काँग्रेस और हिंदुओं को लगता है तो मैं उन्हें चुनौती देता हूं कि हमारी मांगों के बारे में सोच-विचार कर न्याय करने के लिए किसी अंतरराष्ट्रीय कोर्ट की नियुक्ति की जाए। कोर्ट में जो भी फैसला होगा उसे मानने के लिए हम तैयार हैं। आप भी उस कोर्ट की सिफारिशें मानने की उदारता अपने में ले आएं।

हमारी न्याय मांगें आप राजी-खुशी देने के लिए तैयार नहीं हैं और अगर टरायब्यूनल की नियुक्ति करने के लिए भी आप तैयार नहीं हैं तो ऐसे हालात में जो होना है वह होगा।

भाइयों और बहनों, अब हिंदू लोगों पर रत्ती भर भी विश्वास नहीं किया जाना चाहिए। अब तक दिए गए आश्वासनों की तरह ही काँग्रेस आगे दिए जाने वाले सभी आश्वासनों को भी तोड़ देगी। हिंदू समाज में समझदारी बिल्कुल नहीं है। जो भी कुछ है उसे मैं नाना फड़णविस की लफंगेगिरी कहता हूं। अपने न्याय हक हमें अंग्रेजों के इस देश से निकल जाने से पहले ही हासिल कर लेने चाहिए। इस राष्ट्र की राजसत्ता में अपना हिस्सा हमें प्राप्त करना ही होगा। यह बड़ा भाई दुश्मन से भी ज्यादा खतरनाक है। उन पर रत्ती भर विश्वास करना नुकसानदेह साबित होगा। इसीलिए, बाप की मृत्यु से पहले ही संपत्ति का बंटवारा होना चाहिए। बड़ा भाई अगर साम-दाम-दण्ड-भेद उपायों से भी नहीं मानेगा, हमें अपना हिस्सा मिलने की राह का अड़ंगा बनेगा तो अपनी सारी ताकत लगा कर अपना हिस्सा पाने की अपनी प्रतिज्ञा पूरी करके रहेंगे। (तालियों की गड़गड़ाहट)

11 मार्च, को जो चुनाव होने जा रहे हैं उसके बारे में बताना मैं जरूरी समझता हूं। ई और एफ वॉर्ड में हमारे 28 हजार और हिंदुओं के एक लाख चौंतीस हजार मतदाता हैं। जी वार्ड और सबर्बन में हमारे 32 हजार और एक लाख चौदह हजार हिंदुओं के मतदाता हैं। हिसाब लगाने से पता चलेगा कि हमारे मतदाता कम हैं। यह लड़ाई है। महाभारत में कौरवों की सेना का आंकड़ा 11 अक्षौहिणी और पांडवों की सेना का आंकडा 9 अक्षौहिणी बताया गया है। आंकड़ों के हिसाब से कौरवों की जीत होनी चाहिए

थी लेकिन अल्पसंख्यक पांडव विजयी हुए। इसी प्रकार हमारे हर मतदाता को उस दिन जाकर अपना वोट देना होगा। हिंदुओं के मतदाता बहुत ज्यादा हैं। काजरोलकर को अगर 1,34,000 वोट मिलेंगे तो वह सीधे स्वर्ग में पहुंच जाएगा। वहां क्या है मैं नहीं जानता। (हंसी) हमारे सभी मतदाताओं को उस दिन वोट देना होगा। पहले श्राद्ध के दिन जिस तरह सब इकठ्ठे हुआ करते थे उसी प्रकार 11 मार्च को वोट देने के लिए आप लोगों को जाना होगा। 3 जनवरी को मुंबई में हुए प्राथमिक चुनावों में अपने दोनों उम्मीदवारों को 11-12 हजार वोट मिले थे। काँग्रेस के उम्मीदवार को 2-2 हजार वोट मिले। पुरभय्यों को महार-मांगों के नाम याद करवा कर उनसे ये वोट दिलवाए। इससे हमें सीख लेनी चाहिए। आने वाले चुनावों में हो सकता है कोई और आपके नाम से वोट दे जाए। हमें गाड़ी-घोड़ा कुछ नहीं मिलेगा। काँग्रेस वालों के पास उस दिन बहुत गाड़ियां होंगी। आप लोग चलकर जाएं और अपना वोट दें। चुनाव के दिन काँग्रेस के लोग आपको डराएंगे। धमकियां देंगे। इस बारे में समता सैनिक दल के लोगों को जागरुक रहना होगा। हिंदू हमारे खिलाफ हैं ही, सरकार की पुलिस भी हमारे खिलाफ है। इसीलिए अपने लोगों को सुरक्षा मुहैया कराने की जिम्मेदारी समता सैनिक दल पर ही है। इससे पूर्व दल का प्रदर्शन अच्छा रहा है। अपने लोगों को काँग्रेस या पुलिस से कोई परेशानी न हो इसका ख्याल समता सैनिक दल को रखना होगा।

इससे पूर्व समता सैनिक दल ने कई बार प्रशंसनीय काम किया है। इस दल पर बहुत बड़ी जिम्मेदारी है। कार्य की दक्षता के लिए दल को केवल इस बार फेडरेशन के अध्यक्ष श्री जाधव के मार्गदर्शन में काम करना होगा।

मुझे पक्का विश्वास है कि हमारे प्रतिनिधि अपने विरोधियों को न सिर्फ हराएंगे बल्कि उन्हें चारों खाने चित करेंगे। आज काँग्रेस के लोग प्रजातंत्र के नाम की जय बोल रहे हैं। क्या वे प्रजातंत्र का मतलब जानते भी हैं? अगर जानते हैं तो उन्हें लोगों से ना सही अपने मन से शर्मिंदगी महसूस होनी चाहिए। जिन्हें 90 प्रतिशत वोट मिलते वे चुने गए हैं ऐसा वे समझते, कोई लड़ाई नहीं करता। मुझे आपसे बड़ी उम्मीद है कि 11 तारीख को आप विरोधियों को धूल चटाएंगे। आपने मुझे 17000 रुपयों का चेक दिया इसके लिए मैं आपका बहुत आभारी हूं हालांकि ये रकम चुनावों की चटनी के लिए भी काफी नहीं हैं। हम अखबारों में पढ़ते हैं कि गांधीजी को पांच लाख की थैली अर्पण की गई। नेहरू को 3 लाख की थैली अर्पण की गई। कम पैसा मिला इसका बिल्कुल खेद नहीं है लेकिन इस काम में जरूरत बहुत अधिक की है। हमारी राजनीति बिकाऊ नहीं है। यह दिलों की, अंत:करण की राजनीति है। पिछले 20 सालों में कभी मुझे एकमुश्त 5000 रुपए भी नहीं मिले हैं। इसका मुझे कोई खेद नहीं है। हमारे लोग हिंदुओं के कंधे से कंधा लगा कर बैठते हैं। मेरे लोगों में उन्नति का आत्मविश्वास जगा है। इसी में मुझे खुशी है।

भाइयों और बहनों, मुझे और कोई खास बात नहीं कहनी है। आपकी ध्येय प्राप्ति के लिए निश भाव, कर्तव्य परायण के बारे में मुझे पूरा विश्वास है। आपसे मैं ज्यादा कुछ मांगना नहीं चाहता। दिल्ली जाकर मैं एक ही उम्मीद रखूंगा और इंतजार करता रहूंगा। 11 तारीख के चुनावों में हमारी जीत के तार का!

238

बात राष्ट्रवाद की, कृति जातिवाद की

''अस्पृश्यों के हकों पर डाका डाल कर राजनीति की दृष्टि से उन्हें पूरी तरह ठगने के बाद जहां भी संभव हो वहां, हर तरह से अस्पृश्यों का मनोबल कुचलने का काम काँग्रेस द्वारा शुरू किए जाने के बड़े प्रमाण हमें मिलने लगे हैं।

मुंबई में पढ़ाई करने की इच्छा रखने वाले अस्पृश्य छात्रों के सामने कई तरह की मुश्किलें आती हैं, इसलिए डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने सोचा कि अस्पृश्य छात्रों को खास रियायतें मिलें। इसलिए 'पीपल्स एजुकेशन सोसाइटी' की स्थापना कर उसके जरिए सिद्धार्थ कॉलेज शुरू किया जाए। कॉलेज खोलने के लिए केंद्र सरकार से ग्रैंट ली गई और मुंबई विश्वविद्यालय से मान्यता भी प्राप्त कर ली गई है। जून में यह कॉलेज शुरू होने जा रहा है। अस्पृश्यों के लिए विशेष रियायतों वाले कॉलेज की स्थापना हो रही है और वह खुल भी रहा है, यह देख कर सवर्ण हिंदुओं में जलन पैदा हो चुकी है। हिंदू धर्म रूपी पेट के अंदर इस द्वेषरूपी जलन के कारण जो घपले पैदा हो रहे हैं उसकी आवाज 26 मार्च, 1946 के दिन केंद्रीय विधानसभा की बैठक में सुनाई दी।

1932 में पुणे करार का बोझ अस्पृश्यों के गले बांधने से पूर्व गांधी जब आखरी सांसें ले रहे थे, तब बनारस हिंदू विश्वविद्यालय के पंडित मदन मोहन मालवीय ने अपने शब्दों के सहारे डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के मानो चरण ही पकड़ रखे थे। जिन लोगों के कहे को मान कर डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने गांधी को जीवनदान दिया था, उनमें पंडित मदन मोहन मालवीय का स्थान बहुत ही महत्वपूर्ण है। इन्हीं मालवीय साहब के सुपुत्र ने कुत्सित बुद्धि से सिद्धार्थ कॉलेज के बारे में सवाल पूछे और कहा कि इस प्रकार के कॉलेज की कोई आवश्यकता नहीं है क्योंकि, अस्पृश्यों की शिक्षा संबंधी सारी जरूरतें हिंदू समाज पूरी कर रहा है। पंडित गोविंद मालवीय के सवालों का डॉ. बाबासाहेब ने विधानसभा में जो जवाब दिया उसे हम यहां दे रहे हैं।'' - संपादक, जनता।

जनता : 13 और 20 अप्रैल, 1946

अध्यक्ष महोदय,

फाइनांस बिल पर चल रही चर्चा में बोलने का मुझे अवसर दिए जाने के लिए पहले मैं आपका धन्यवाद व्यक्त करता हूं, क्योंकि मैं जो कहने वाला हूं वह मेरे विभाग से संबंधित नहीं है। अब तक हुई चर्चा में मेरे विभाग पर कोई विशेष टिप्पणी नहीं की गई इसका मुझे संतोष है। इसके बावजूद मैं बोलने के लिए उठ खड़ा हुआ हूं। कल फाइनांस बिल के बारे में बोलते हुए मेरे मित्र पंडित गोविंद मालवीय अस्पृश्यों के लिए खोले जा रहे कॉलेज की योजना के बारे में भी बोले थे जिसकी वजह से आज मुझे बोलना पड़ रहा है।

कॉलेज की योजना का निरीक्षण शिक्षा विभाग ने किया और फाइनांस विभाग ने उसे मान्यता दी, इसलिए इन विभागों को ही अगर इस विषय में खुलासा करने दिया होता तो बेहतर होता। मैंने उस योजना को केवल लागू किया था। इसके बावजूद मेरे मित्र गोविंद मालवीय द्वारा उपस्थित किए मुद्दों का जवाब देने की जिम्मेदारी ऊपरिनिर्दिष्ट विभागों पर न डाल कर मैं खुद जवाब देने के लिए खड़ा हुआ हूं। इसकी केवल एकमात्र वजह है और वह है कि इस योजना की समीक्षा करते हुए मेरे मित्र ने उसे राजनीतिक लबादा उढ़ाने की कोशिश की है।

इस योजना के बारे में शुरू में ही मेरे मित्र ने कहा, 'मुझे इस योजना के बारे में आश्चर्य होता है।' मैंने जब उनका पूरा भाषण पढ़ा तब मुझे लगा कि उन्हें आश्चर्य लगने की वजह खुद उनकी धारणा है, जिसके कारण उन्हें लगता है कि शिक्षा क्षेत्र में दलीय अंधानुकरण का भूत घुस आया है। इस मामले में, मैं अपने मित्र को एक मशहूर कहावत याद दिलाना चाहूंगा कि- *कांच के घरों में रहने वालों को दूसरों के घरों पर पत्थर नहीं फेंकने चाहिएं।* इस कहावत के जरिए जो कहा जा रहा है वह पडिंतजी समझ पाएंगे या नहीं यह मैं नहीं जानता लेकिन आश्चर्य की बात यह है कि पंडितजी राश्र्वाद की बातें बहुत अच्छी तरह कर लेते हैं। सादे हिंदुओं की बात तो दूर रही जिनके साथ अपना क्षेत्र-गोत्र नहीं मिलता उन ब्राह्मणों के हाथ का पानी तक न पीने का जिगर न रखने वाले पंडितजी जैसे आदमी राष्ट्रवाद की चर्पटपंजरी सभागृह के सदस्यों को और मुझे सुनाते हैं यह देख कर मुझे बहुत आश्चर्य हो रहा है।

धर्मांधता में सनी पवित्रता को किसी और की छुआछूत न हो इसका ख्याल रखने वाले को राष्ट्रवाद-जातिवाद का हल्ला मचाते हुए किसी और पर जातिवाचकता का, पार्टी का अंधानुकरण करने का, पक्षपात का आरोप करने से पहले थोड़ा सोचना चाहिए। बनारस के हिंदू विश्वविद्यालय के साथ पंडितजी का गहरा ताल्लुक था या है इस बात को वे न भूलें। मैं पंडितजी से पूछता हूं कि बनारस हिंदू विश्वविद्यालय क्या जातिवाचक संस्था नहीं है? बल्कि मैं तो यह कहना चाहता हूं कि बनारस हिंदू विश्वविद्यालय सभी हिंदुओं

के लिए नहीं है, वह केवल हिंदू धर्म की एक विशिष्ट जाति की देखरेख में चलने वाली और खास उन्हीं के लिए चलाई जाने वाली संस्था है। इस विश्वविद्यालय के अध्यापक वर्ग में ब्राह्मणेतर लगभग है ही नहीं, इस बात से क्या वे इनकार कर सकेंगे?

1916 में इस विश्वविद्यालय द्वारा पारित किए गए प्रस्ताव में क्या यह पक्के तौर पर तय नहीं किया गया था कि हिंदू धर्मशास्त्र का अध्यापकत्व केवल ब्राह्मणों को ही मिले, किसी अन्य को न मिले, भले उस विषय में उसकी शैक्षिक योग्यता ब्राह्मण अध्यापक से श्रेष्ठ क्यों न हो? बहुत दूर की नहीं, अभी हाल ही में एक कायस्थ लड़की को ब्रह्मज्ञान के पाठ्यक्रम में इस विश्वविद्यालय द्वारा प्रवेश न दिए जाने पर उसे अनशन करना पड़ा था कम से कम इस बात को मेरे मित्र भूले नहीं होंगे। इन सभी उदाहरणों से क्या यही साबित नहीं होता कि यह जातीय अंधानुकरण है, पक्षपात है, धर्मांधता है? पंडितजी के पास इसका कोई जवाब है?

अस्पृश्यों के लिए अलग कॉलेज की स्थापना को लेकर कल हुई चर्चा की रिपोर्ट पढ़ते हुए मेरा ध्यान अपने एक और मित्र श्री अयंगार के वक्तव्य की ओर गया। श्री अयंगार का ध्यान अपने शहर में क्या चल रहा है इस तरफ शायद नहीं गया हुआ दिखाई देता। मैं उनसे कहता हूं कि वे इसी महीने की 12 तारीख का मद्रास से निकलने वाला 'हिंदू' अखबार पढ़ें। उसमें उन्हें पता चलेगा कि सालेम में उनके जातभाइयों ने एक सभा का आयोजन किया था, जिसमें यह तय किया गया कि वास ब्राह्मणों के लिए एक बड़ी संस्था की स्थापना की जाए और उस संस्था द्वारा ब्राह्मणों के हितों की रक्षा हो, ब्राह्मणों के लिए कॉलेज खोला जाए, उद्योग चलाए जाएं। और ब्राह्मणों की इस परिषद के अध्यक्ष कौन? सर सी. पी. रामस्वामी अय्यर जैसी विभूति!

इस देश का हर आदमी मुंह से राष्ट्रवाद की जय बोलता रहता है लेकिन उसके काम जातीयता, अंधानुकरण से भरे होते हैं।

जिस समाज को अपने संकट भरे, आत्यंतिक कठिन जीवन के बारे में पहली ही बार अहसास हुआ होता है वह अस्पृश्य समाज इन संकटों से अपनी मुक्तता करवाने के उद्देश्य से उच्च शिक्षा पाने हेतु शैक्षिक संस्था स्थापन करने की सोचते हैं। तब जो सदस्य अपने बारे में यह कहते नहीं थकते कि, 'हमने जनता के कल्याण का बीड़ा उठाया है' वही सदस्य 'पक्षांधता- जात्यांधता' मचाई जाने के विरोध में हल्ला बोल कर विरोध दर्ज करते हैं।

सभी सदस्यों के सामने मैं एक महत्वपूर्ण बात साफ करना चाहता हूं कि यह कॉलेज सिर्फ अस्पृश्यों का है यह कहना पूरी तरह गलत होगा। अन्य सभी कॉलेजों की तरह इस कॉलेज में भी हर किसी को शिक्षा पाने की इजाजत है। इतना ही नहीं इस कॉलेज के लिए जिन अध्यापकों की नियुक्ति करनी है उनमें सभी जातियों को शामिल किया

गया है। उनमें हिंदू ब्राह्मण हैं, ब्राह्मणेतर भी हैं, पारसी हैं, ईसाई हैं और मुसलमान भी हैं। इस बात की ओर सदस्यों का ध्यान दिलाते हुए मुझे बेहद खुशी है कि जिस समय इस कॉलेज को मान्यता दिलाने के लिए मुंबई विश्वविद्यालय के सामने अर्जी रखी गई उस वक्त बिना किसी आशंका के विश्वविद्यालय ने तुरंत मान्यता दी। इतना ही नहीं, यह भी कहा गया कि इससे पूर्व विश्वविद्यालय के सामने ऐसी कोई व्यवस्था नहीं आई थी। खासतौर पर कहने की विशेष बात यह है कि इस कॉलेज की स्थापना, अध्यापक वर्ग तथा अन्य व्यवस्था विश्वविद्यालय को इतनी पसंद आई है कि मुंबई विश्वविद्यालय के किसी भी कॉलेज को आज तक पहले साल में ही सभी कक्षाएं चलाने की अनुमति नहीं मिली थी वह इस कॉलेज को पहले ही साल में दी गई है। कहने का तात्पर्य यही है कि किसी मायने में इस कॉलेज को 'केवल अस्पृश्यों का कॉलेज' नहीं कहा जा सकता। इस कॉलेज में प्रवेश, वजीफे और होस्टल में रहने की जगह आदि विशेष सुविधाएं अस्पृश्यों को उपलब्ध कराई जाएंगी। इस कॉलेज की स्थापना की आवश्यकता क्यों पड़ी यह मैं अब बताना चाहता हूं।

मुंबई प्रांत में छात्रों की संख्या में कितनी बेतहाशा वृद्धि हुई है इस बारे में शायद सदस्यों को जानकारी न हो। सामने बैठे मेरे मित्र गाडगिल को पता है कि पिछले ही साल एक ही साल में मुंबई विश्वविद्यालय को उन्नीस नए कॉलेज खोलने की अनुमति देनी पड़ी। इससे आप जान पाएंगे कि किसी कॉलेज में प्रवेश पाना छात्रों के लिए कितनी मुश्किल बात हो गई है। अस्पृश्य छात्र खासकर इस कठिन स्थिति से बहुत ज्यादा परेशान हैं। मैट्रिक पास करने के बाद अस्पृश्य छात्रों को किसी भी कॉलेज में प्रवेश नहीं मिल पा रहा। यही वजह थी कि अस्पृश्य छात्रों की मुश्किल की ओर मुझे सरकार का ध्यान दिलाना पड़ा और मैंने अस्पृश्य छात्रों की मुश्किल दूर करने वाली संस्था की स्थापना के बारे में बताया। इसलिए कहता हूं कि जिस 'सिद्धार्थ कॉलेज' की कल्पना और योजना के संदर्भ में आपत्तियां उठाई जा रही हैं उनमें कोई दम नहीं।

मेरे मित्रों ने एक और बात पर चर्चा के दौरान ध्यान दिलाया था। उन्होंने चर्चा का रुख राजनीति की ओर क्यों मोड़ा यह समझना मुश्किल है। हाल ही में हुए चुनावों के बारे में बोलते हुए मैं बुरी तरह लड़खड़ाया ऐसा उनका कहना है। यह कह कर उन्हें क्या हासिल हुआ यह तो वे वुद ही जानें, लेकिन मुझे ऐसा लगता है कि उन्हें लगा होगा कि, भारत सरकार को मेरे कथन के साथ सहमत नहीं होना चाहिए था। जो हो, कहा यही जा रहा है कि मेरी हालत सूखे पौधे की तरह हुई है। उन विरोधियो से मैं यह कहना चाहता हूं कि यह वसंत ऋतु के आगमन से पूर्व की स्थिति है। मेरा आंदोलन अमर है।

चुनाव परिणामों के बारे में बोलते हुए मेरे मित्रों ने कहा कि अस्पृश्यों की सभी आरक्षित सीटें काँग्रेस ने जीत लीं। मैं उनसे यह पूछना चाहता हूं कि जिन तरीकों से ये

सीटें जीती हैं क्या उन तरीकों की काँग्रेस ने कभी पड़ताल की है? क्या तरीके अपनाए गए थे यह मैं बताता हूं और सबूतों के साथ बताता हूं।

कई जगहों पर, वास कर सातारा जिले में मतदाताओं को मतदान केंद्रों तक पहुंचने ही नहीं दिया गया। सभी सदस्यों को इस बात का पता तो होगा ही कि सातारा जिला वही जगह है जहां पत्री सरकार थी। 361 गांवों के अस्पृश्य मतदाताओं को गांव वाले गांव की कचहरी में लेकर गए। डरा धमकाकर उनसे पूछा गया कि आप काँग्रेस को वोट देंगे या नहीं? अस्पृश्य मतदाताओं ने काँग्रेस को वोट देने से साफ इनकार किया उन्हें कचहरी में ही बंद करके रखा गया। उन पर पहरा बिठाया गया ताकि वे वहां से हिलें नहीं। इस तरह के कई उदाहरण मैं आपको बता सकता हूं। यह तो कुछ भी नहीं, काँग्रेस के विरोध में खड़े रहे अस्पृश्य उम्मीदवारों के साथ मारपीट भी की गई। अभी हाल में आगरा में चुनाव हुए, वहां की बात ही लीजिए। चुनाव के दिन अस्पृश्यों के पचास मकान जलाए गए। अस्पृश्य मतदाता, मतदान केंद्र पर वोट देने गए तो पीछे 20 लोगों के घरों को लूटा गया। नागपूर में सात लोगों के कत्ल हुए और यह सब काँग्रेस के सवर्ण हिंदुओं ने किया। चुनाव जीतने के लिए ऐसे तरीके अपनाए गए। ये सीटें काँग्रेस ने जीतीं या जिस राजनीतिक पार्टी का मैं प्रतिनिधि हूं उस शेड्यूल्ड कास्ट्स् फेडरेशन ने जीतीं यह केवल चुनाव परिणामों के आधार से तय करना केवल मूर्खता होगी क्योंकि, समाज में अस्पृश्यों की संख्या 5 प्रतिशत है और हिंदुओं की संख्या 95 प्रतिशत है। ऐसे हालात में कौन किसका प्रतिनिधि है यह कैसे तय किया जा सकता है? इसीलिए, चुनाव परिणामों की कसौटी प्राथमिक चुनावों के परिणामों से ही तय की जानी चाहिए। क्योंकि, अस्पृश्यों के प्राथमिक चुनाव अलग चुनाव क्षेत्र के आधार पर हुए हैं। इन प्राथमिक चुनावों के परिणाम क्या निकले? यहां बैठे लोगों को पता चले इसलिए मैं यहां कुछ जगहों के परिणाम बताता हूं। आप यह बहुत गौर से सुनिए –

पंजाब में तीन जगहों पर प्राथमिक चुनाव हुए। मुंबई में तीन सीटों के लिए, मध्य प्रांत में चार जगहों पर, मद्रास में दस जगहों पर और संयुक्त प्रांत में दो जगहों पर प्राथमिक चुनाव हुए। सदस्य एक बात ध्यान में रखें कि प्राथमिक चुनाव अपरिहार्य नहीं होते। अस्पृश्यों के पांच उम्मीदवार जब तक चुनाव में नहीं उतरते तब तक प्राथमिक चुनाव नहीं हो सकते। चुनावों में अंट-शंट वर्चा होता और उतने रुपए न होने के कारण अस्पृश्य प्राथमिक चुनाव ही नहीं चाहते। कुल 22 जगहों के लिए प्राथमिक चुनाव हुए। हर सीट के लिए काँग्रेस ने अपना प्रत्याशी खड़ा किया था। इन 22 सीटों में से 19 सीटों पर शेड्यूल्ड कास्ट्स् फेडरेशन के उम्मीदवारों को सर्वाधिक वोट मिले। मुंबई में दो जगहों पर तो अस्पृश्य उम्मीदवार की तुलना में काँग्रेस के उम्मीदवार को नगण्य वोट मिले। भायखला विभाग में शेड्यूल्ड कास्ट्स् फेडरेशन के उम्मीदवार को 11334 वोट मिले जबकि काँग्रेस के उम्मीदवार को केवल 2096 वोट मिले और मुंबई जी. और

उपनगर विभाग में शेड्यूल्ड कास्ट्स् फेडरेशन के उम्मीदवार को 12899 वोट मिले जबकि काँग्रेस के उम्मीदवार को केवल 2088 वोट मिले। मध्य प्रांत के केवल दो जगहों के ही आंकड़े मैं देता हूं। नागपूर चुनाव क्षेत्र में शेड्यूल्ड कास्ट्स् फेडरेशन के उम्मीदवार को 1933 वोट मिले जबकि काँग्रेस के उम्मीदवार को केवल 270 वोट मिले। भंडारा विभाग में शेड्यूल्ड कास्ट्स् फेडरेशन को 3187 वोट मिले और काँग्रेस तथा निर्दलीय उम्मीदवार आदि सबको मिला कर 976 वोट मिले। आगरा विभाग में शेड्यूल्ड कास्ट्स् फेडरेशन को 2248 वोट मिले और काँग्रेस तथा निर्दलीय उम्मीदवार आदि सबको मिला कर 840 वोट मिले। पंजाब-लुधियाना-फिरोजपुर विभाग में शेड्यूल्ड कास्ट्स् फेडरेशन को 1900 वोट मिले और काँग्रेस को 500 वोट मिले। (डॉ. बाबासाहेब बोल रहे थे तभी काँग्रेस पार्टी के विधायक दीवान चमनलाल ने बीच में ही उठ कर कहा, 'डॉ. अम्बेडकर कोरी गप सुना रहे हैं!' सुन कर डॉ. बाबासाहेब गुस्से से लाल हो गए और उन्होंने उनके शब्दों पर आपत्ति की। उस वक्त उन्होंने दीवान चमनलाल से कहा कि, जब मान्यवर डॉ. अम्बेडकर अपनी बात मुद्दों के साथ प्रस्तुत कर रहे हैं तब बीच में ही उठ कर इस प्रकार हल्ला मचाना ठीक नहीं है। सदन में उपस्थित किए गए मुद्दों का जब जवाब दिया जा रहा हो तब शांतिपूर्वक उनको सुना जाना चाहिए। उनकी बात बीच में काटते हुए – वे गप हांक रहे ऐसा कहा नहीं जा सकता। अध्यक्ष द्वारा इस प्रकार कान खींचे जाने पर दीवान चमनलाल ने अपना कथन वापिस लिया। उसके बाद डॉ. बाबासाहेब ने अपना कथन जारी रखा।) मद्रास प्रांत के केवल एक ही जगह का आंकडे मैं देता हूं। अमलापुरम विभाग में शेड्यूल्ड कास्ट्स् फेडरेशन के उम्मीदवार को 10540 वोट मिले और काँग्रेस के उम्मीदवार को 2383 वोट मिले। प्राथमिक चुनावों से संबंधित आंकड़ों का यह हाल है। इसके आधार पर एक बात सहज ही साबित होती है कि प्राथमिक चुनाव के परिणामों को ही प्रतिनिधित्व की असली कसौटी मानी जानी चाहिए।

इन चुनावों में काँग्रेस ने सप्रमाण साबित कर दिया कि चुनाव नहीं, यह तो साफ धोखाधड़ी थी। इसके साथ ही, आज तक मैं अस्पृश्यों के लिए अलग चुनाव क्षेत्र की जो लड़ाई लड़ते आया हूं उसे इस चुनाव के कारण भारी बल मिला है।

पंडित मालवीय ने एक और बात बताई कि हिंदू लोग अस्पृश्योद्धार की तरफ बहुत ध्यान दे रहे हैं। अस्पृश्यों के नैतिक उद्धार और विकास के लिए वे पानी की तरह पैसा बहा रहे हैं। इस बारे में, मैं बस इतना ही कहना चाहता हूं कि बाहर जो भी कुछ हो रहा है उसे पल भर के लिए छोड़ भी दें और इस सदन की चारदीवारी के अंदर जो कुछ भी हो रहा है उसके आधार से अगर तय करें तब कोई भी निष्पक्ष आदमी यही कहेगा कि मालवीय के उपरिनिर्दिष्ट कथन में कोई तत्व नहीं है। यह बात सही है कि इस सदन में मुझे आए कुछेक दिन ही बीते हैं लेकिन इस सदन की रिपोर्ट मैं नियम से और ध्यान से पढ़ता रहा

हूं। जो भी पढ़ने लायक है वह सब मैं पढ़ चुका हूं। उसमें मैंने पाया कि गांव-गांव में हर रोज अस्पृश्यों पर होने वाले अन्याय-अत्याचार के संदर्भ में किसी भी सदस्य द्वारा सदन में एक भी सवाल नहीं उठाया गया है। किसी रिपोर्ट में यह पढ़ने में नहीं आया, ऐसा कोई प्रस्ताव आज तक सदन पटल पर नहीं रखा गया है, जिसमें कहा गया हो कि अस्पृश्यों के लिए कुछ किया जाना चाहिए। वैसे, अपवादस्वरूप 1933 में सामने बैठे कुछ सदस्यों ने अस्पृश्यता हटाने के कुछ प्रयास किए थे। मंदिर प्रवेश के संदर्भ में एक बिल रखा गया था। वॉइसरॉय ने जब उसे मान्यता देने से इनकार किया तब बहुत हल्ला मचा था। इस बिल को पारित नहीं किया गया तो आत्महत्या करने की धमकी भी कई सदस्यो ने दी थी। लेकिन जब बिल को मान्यता दी गई तब क्या हुआ क्या आप जानते हैं?

बिल वापिस लिया गया। रंगा अय्यर की हालत देखने लायक थी क्योंकि उन्होंने ही वह बिल सदन के सामने रखा था। साथियों ने दगा दिया तो वे भड़क गए। उन्होंने अपने साथियों को खूब गालियां सुनाई आखिरकार बेचारे को मुंह की खानी पड़ी। मुझे याद है कि दो बार और अस्पृश्यों से संबंधित सवालों का जिक्र हुआ था। पहला, 1916 में माणेकजी दादाभाई ने 'अस्पृश्यों की समस्याओं के बारे में एक पूछताछ समिति नियुक्त करने' के बारे में प्रस्ताव रवा था। उस वक्त आज की इस चर्चा की शुरुआत करने वाले गोविंद मालवीय के पिता ने ही उस प्रस्ताव का घोर विरोध किया था। दूसरा प्रसंग साल 1927 का है। स्व. लॉर्ड बर्नहेड ने उस वक्त कहा था कि अस्पृश्य अल्पसंख्यक होने के कारण उन्हें संविधान के तहत सुरक्षा प्रदान की जाए। लेकिन....

जब-जब हम खुद लड़ाई छेड़ कर अपने अस्तित्व के बारे में लोगों को अहसास कराते हैं तब तब उन्हें हम पर बहुत दया आती है। हम जब- *अलगचुनावक्षेत्र* की मांग करते हैं, नौकरियों में निश्चित अनुपात में आरक्षण की, शिक्षा के लिए ग्रँट की मांग करते हैं तभी हिंदुओं को पता चलता है कि हम भी जिंदा हैं, वरना वे हमें मरा हुआ ही मान कर चलते हैं। बाकी समय वे लोग हमें पूछते तक नहीं, हम उनकी गिनती में कहीं नहीं ठहरते। हमें अपने सामाजिक और राजनीतिक हक देने से इनकार करते हुए वह कहते हैं, कि आप तो हिंदू ही हैं। यही बंधुभाव व्यक्त करते हुए अगर अपनी जेब से कुछ जाने वाला हो तो तब हम उनके 'चाचा के मामा के भतीजे के भांजे' बन जाते हैं। कुछ भी वर्च न होने वाला हो, उनका फायदा होने वाला हो तब हम उनके भाई होते हैं, वहा रे वाह इनका बंधुत्व!

आखिर में बस इतना ही कहता हूं, और खास तौर पर जोर देकर कहता हूं कि हिंदुओं की दी हुई भिक्षा पर जीने की अब हमारी बिल्कुल भी इच्छा नहीं है। उनका दान-धर्म हमें नहीं चाहिए। हम इस देश के वासी हैं। सरकारी खजाने पर जिस प्रकार अन्य जातियों का अधिकार है वैसे ही हमारा भी अधिकार है। हमें गुलामी में रहने पर

मजबूर करने वाली, हमारी नैतिकता भ्रष्ट करने वाली भीख हमें नहीं चाहिए। हम अपने योग्य अधिकारों के लिए ही लड़ रहे हैं। हमें वे मिलने ही चाहिए और, मैं आपको चेतावनी देता हूं कि अगर हमारी न्याय की लड़ाई का विरोध किया गया तो खून बहाकर भी हम अपने उद्देश्य को प्राप्त कर लेंगे।

239

हो सकता है आज हम लड़ाई हारे हों, लेकिन, युद्ध में जीत हमारी ही होगी

25 जून, 1946 के दिन फ्रंटियर मेल ने धड़-धड़ करते हुए शाम 4.15 को मुंबई सेंट्रल स्टेशन में प्रवेश किया। उसी समय हजारों लोगों की आवाजें स्टेशन परिसर में गूंजने लगीं। जब समुद्र अपनी मर्यादा त्यागकर अनियंत्रित हो जाता है और तूफान की स्थिति पैदा हो जाती है, वैसे ही उठे तूफान का शोर था। स्टेशन परिसर में स्वागत के लिए इकठ्ठा हुए 80000 महिला-पुरुष कार्यकर्ताओं के भव्य जनसमुदाय की वह आवाज थी। खुशी के कारण होश खो बैठने से धक्कमपेल मची, लोग एक-दूसरे को ठेलने लगे। सुबह सात बजे से भूख-प्यास की परवाह किए बिना बैठे उस जनसमुदाय को अचानक अपने उद्धारक का अहसास हुआ और उनके चेहरे खिले हुए कमल की तरह दिखाई देने लगे। उनके मन भर आए और उनकी आंखों से खुशी के आंसू बहने लगे। शोरगुल हुआ तथा भीड़ ने गंभीर, प्रदीर्घ नारे लगाना शुरू किए।

समता सैनिक दल के 5000 तेजस्वी वीर, रेल पुलिस और उनके अधिकारी उस जनसमुदाय को व्यवस्थित करने में असमर्थ दिखाई दिए।

ऑल इंडिया शेड्यूल्ड कास्ट्स् फेडरेशन के जनरल सेक्रेटरी श्री बापूसाहब पी. एन. राजभोज, मुंबई प्रांत शेड्यूल्ड कास्ट्स् फेडरेशन के अध्यक्ष दादासाहब बी. के. गायकवाड़ तथा मुंबई की जनता के प्रिय नेता एडवोकेट आर. डी. भंडारे और बाबासाहेब के चिरंजीव भाऊसाहब यशवंतराव अम्बेडकर ने आगे चल कर बाबासाहेब अम्बेडकर रेल के खास डिब्बे से उतरे तब उनका स्वागत किया।

सड़क के दोनों किनारों पर खड़े समता सैनिक दल के सैनिकों से सलामी लेते हुए उनके बीच से जब डॉ. बाबासाहेब बाहर निकल रहे थे तब कई लोग आशिर्वाद पाने के लिए उनके पैरों पर गिर रहे थे। एडवोकेट भंडारे एकदम सामने थे और दल के

जनता : 13 जुलाई, 1946

सर्वेसर्वा एम. एम. ससालेकर लोगों को किनारे करते हुए डॉ. बाबासाहेब के लिए भीड़ में से रास्ता बना रहे थे।

कुछ दूर चलने के बाद बाबासाहेब के स्वागत के लिए अपने छोटे-छोटे बच्चों को साथ लिए बैठी करीब 15000 महिलाओं ने डॉ. बाबासाहेब पर फूल बरसाए। ये महिलाएं बारिश, धूप, तेज हवाएं इतना ही नहीं खुद अपनी तथा अपने बालको की भूख की परवाह किए बगैर डॉ. बाबासाहेब के स्वागत के लिए आई थीं। उनके स्नेह के कारण सबके हृदय गद्गद हुए। दुनिया के किसी भी भगवान के प्रति उसके भक्तों में नहीं होगी ऐसी भक्ति और स्नेह डॉ. बाबासाहेब के चरणों में होने का सबूत अस्पृश्यों ने दुनिया को दिया।

डॉ. बाबासाहेब को उसी रास्ते से और आगे ले जाकर उसी समय वहां बनाए गए ऊंचे मंच पर बिठाया गया।

कई फूलमालाएं उनके गले में पड़ी थीं तथा लोगों के बीच जैसे खुशी की लहरें उमड़ रही थीं। लोग कई प्रकार के नारे लगा रहे थे। उनमें प्रमुख थे अम्बेडकर कौन है, दलितों का राजा है; अम्बेडकर जिंदाबाद, थोड़े दिन में भीम राज; शेड्यूल्ड कास्टस् फेडरेशन की जय हो; स्वतंत्र मताधिकार हासिल करो आदि। बुलंद नारों के कारण स्टेशन परिसर गूंज रहा था।

यह गूंज स्टेशन के बाहर वाले रास्ते तक पहुंची तो वहां इकठ्ठा हुए हजारों लोगों में हलचल हुई। बाढ़ के पानी की तरह लोगों का हुजूम सेंट्रल स्टेशन में घुसा तो स्टेशन तथा उसके आसापास का खुला हिस्सा पूरी तरह भर गया। स्टेशन के छज्जे, पुल के जंगले आदि पर लोगों की पहले से ही भीड़ थी। वाहनों की आवाजाही ठप्प थी वाहन जहां थे वहीं खड़े हो गए।

लोगों को संबोधित करने के लिए डॉ. बाबासाहेब खड़े हो गए। आसपास तालियों की गड़गड़ाहट गूंज उठी। डॉ. बाबासाहेब के चेहरे पर यात्रा की थकान और परेशानी की जगह प्रसन्नता थी। चेहरे के इर्द-गिर्द प्रसन्नता की आभा फैली हुई थी।

पहले उन्होंने मुंबई की दलित जनता की ओर से किए गए अभूतपूर्व स्वागत के लिए आभार व्यक्त किया। फिर वह बोले-

दिल्ली से मैं हार कर नहीं लौटा हूं। परीक्षा में अनुत्तीर्ण हुए छात्र की सांत्वना की तरह यह सभा मेरी सांत्वना के लिए आयोजित नहीं की गई है। अपनी पूरी जिंदगी में मुझे कभी हार का सामना नहीं करना पड़ा। पिछले चार सालों से, मैं अपने दलित समाज के लिए जो कुछ कर रहा हूं, उसके लिए यहां मेरा इस प्रकार स्वागत किया जा रहा है। यह बात मेरे दुश्मन और घर के भेदी जरूर याद रखें। (तालियों की गड़गड़ाहट)। वाइसराय द्वारा हाल ही में घोषित की गई नई अस्थाई सरकार के मंत्रीमंडल में अस्पृश्य

वर्ग के प्रतिनिधि को शामिल किया गया यह वास्तव में हमारी जीत है। 1945 में हुई शिमला परिषद में भारत सरकार में एक भी अस्पृश्य प्रतिनिधि को शामिल करने से गांधी ने इनकार किया था। अब जिन जगजीवन राम को वाइसराय ने चुना है उन्हें ही गांधी ने उस वक्त साफ–साफ कह दिया था कि केंद्र सरकार में अस्पृश्यों के प्रतिनिधि को शामिल नहीं किया जाएगा। लेकिन अब एक साल के बाद अस्पृश्यों का अधिकार मान लिया गया है। यह हमारे आंदोलन का ही फल है। संगठित आंदोलन के जरिए ही हमने यह हासिल किया है।

केंद्र सरकार में अस्पृश्य वर्ग को स्थान मिला यही महत्वपूर्ण बात है। व्यक्ति भले कोई भी हो। उस जगह अगर हमारा कुत्ता भी जाकर बैठे तो कोई बात नहीं। (हंसी की गड़गड़ाहट और तालियां) वाइसराय का चुना आदमी लायक निकले तो और अच्छा है। समय के साथ उसकी काबिलियत अपने आप साफ होगी, लेकिन एक बार फिर मैं साफ–साफ कहता हूं कि अस्पृश्य वर्ग को सत्ता में हिस्सा लेने का मौका मिला यह हमारे आंदोलन का ही फल है। हमारी मांगें लेकिन इतने भर से पूरी नहीं होतीं। हमारी न्याय मांगें पूरी हुए बगैर हमारा आंदोलन समाप्त नहीं होगा। मुसलमानों की संख्या की तुलना में हमारी आबादी आधी होने के कारण उसी अनुपात में हमें सरकार में जगहें मिलनी चाहिएं।

1942 के आंदोलन में गांधी ने नारा दिया था– करेंगे या मरेंगे । हमारी लड़ाई की भी यही घोषणा होगी। उद्देश्य की प्राप्ति तक हम जान की बाजी लगा कर लड़ेंगे। आज हम लड़ाई हारे होंगे, लेकिन युद्ध हम जीतेंगे ही। (तालियों की गड़गड़ाहट)

मुंबई हमारे आंदोलन का केंद्र है। इसीलिए चार सालों के बाद एक बार दोगुने उत्साह के साथ इस आंदोलन में आपका साथ देने के लिए मैं फिर आ गया हूं। सिर्फ मेरा कार्यक्षेत्र ही बदला है। अब आपसे मेरा पहले से अधिक ताल्लुक होगा। अपने संगठन को अभेद्य बनाएं। आपसी मतभेदों को भूल जाइए। अबके बाद अपने दरवाजे हमेशा खुले रखें। निर्भय बनें और जोरदार लडाई की तैयारी रखें। अपने परिवार से आगे सोचिए और अपने समाज के लिए थोड़ा स्वार्थ त्याग करें। आखिकार सफलता आपको ही प्राप्त होनी है। इस जोशीले संदेश के साथ डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने अपना तेजस्वी भाषण पूरा किया तब जमीन–आसमान तालियों की और *जयभीम* के नारों से गूंज रहा था।

आखिर श्री मडकेबुवा ने सभी कार्यकर्ताओं, स्वयंसेवकों और लोगों के प्रति आभार प्रकट किया। लोग आनंद भरे हृदय से, अति प्रन्नित मन के साथ अपने–अपने घर लौटे। इस प्रकार यह विराट स्वागत सभा अत्यंत सफलतापूर्वक संपन्न हुई।

240

इस देश का कोई भी राजनीतिक दल हमारी आजादी की लड़ाई का समर्थन नहीं करता.....

पूना शहर के अहिल्याश्रम में 21 जुलाई, 1946 के दिन दोपहर 3.30 बजे एक सभा का आयोजन किया गया था। इस अवसर पर महिलाओं तथा पुरुषों की भारी-भरकम भीड़ को संबोधित करते हुए डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने कहा -

भाइयों और बहनों,

यहां चल रहे सत्याग्रह का सिंहावलोकन करने के लिए आज हम सब लोग यहां इकठ्ठा हुए हैं। अपने सत्याग्रह का खबरें भले थोड़ी-थोड़ी ही क्यों न हो, अखबारों में छापी गई हैं। लेकिन आपने देखा होगा कि अखबारवालों ने जो कुछ छापा है उसमें सत्याग्रह के बारे में थोडी-सी भी सहानुभूति या आदर की भावना नहीं दिखाई गई है। उन्होंने लिखा है कि इस सत्याग्रह में केवल महार लोग ही शामिल हैं क्योंकि मैं केवल महारों का ही नेता हूं। उन्होंने प्रचार किया है कि मेरे साथ अन्य कोई भी नहीं है। इस तरह का प्रचार आज-कल की बात नहीं है। वे हमेशा ही ऐसा करते आए हैं। पता चला कि विदेशों में भी उसका थोड़ा असर हुआ है। कल कमीशन की ओर से पार्लियामेंट में एक भाषण हुआ था। उसमें कहा गया है कि मैं पूरे भारत का नेता नहीं हूं। मेरे पीछे मध्य प्रांत और मुंबई के कुछ लोग हैं, बस। उनका यह कथन असत्य, चालाकी भरा और घातक है। हाल ही में हुए बंगाल के चुनावों से उनके कथन का झूठ साफ हो जाता है।

भारत के पूरे अस्पृश्य समाज का समर्थन मुझे प्राप्त है। बंगाल का चुनाव इसका सबूत होगा, क्योंकि बंगाल में कोई महार नहीं है। बंगाल में *नामशूद्र* नामक जाति है, इन नामशूद्रों ने मुझे चुनाव में जिताया है। अब मैं उनसे पूछना चाहता हूं कि, आपके

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकरांची भाषणे : संपा. मा. फ. गाजरे, खण्ड 1. 1986 में पुनर्मुद्रित. पृष्ठ 162-166

कथनानुसार अगर मैं भारत के सभी अस्पृश्यों का नेता नहीं हूं तो मैंने बंगाल से चुनाव जीता कैसे?

अंग्रेजों ने कई बार घोषणा की कि अस्पृश्य समाज भारत की स्वतंत्र जमात है। लेकिन कैबिनेट मिशन द्वारा अस्पृश्य समाज का कभी नाम नहीं लिया गया। उन्होंने अस्पृश्य समाज का नाम शामिल नहीं किया, उसी समय मैंने संविधान समिति में शामिल होने का निर्णय लिया।

अस्पृश्य समाज के कल्याण के लिए मेरा संविधान समिति में शामिल होना बेहद जरूरी था। संविधान समिति में, मैं न पहुंच पाऊं इसलिए कॉंग्रेस ने कई षडयंत्र रचे। महाराष्ट्र के बहुत कम लोग बड़े हैं उनमें मुझे शामिल न करने वालों को मूर्ख ही कहा जा सकता है। मि. जयकर को कॉंग्रेस ने खत भेजा कि संविधान समिति का चुनाव आप लड़िए। मि. मुन्शी को बुलाया गया और कई अन्य लोगों को आमंत्रित किया गया। इतनी सुहागनों के बीच वास्तव में उन्हें मुझे भी कुंकुम लगाना चाहिए था, लेकिन उनकी कोशिश मुझे विधवा बनाने की ही रही। उन्होंने इसके लिए बहुत कोशिश की। इसीलिए सुख से रहने के लिए मैं मुंबई छोड़ कर बंगाल में चला गया। वहां मैंने महार जाति के लोग न होते हुए भी चुनाव जीता इस बात को मेरे दुश्मन हमेशा याद रखें।

इस सत्याग्रह में केवल महार लोग ही शामिल हैं ऐसा कहा जाता है जो कि सरासर झूठ है। पकड़े गए लोगों के नामों की फेहरिस्त अभी-अभी आप लोगों को पढ़ कर सुनाई गई। उससे आप जान जाएंगे कि इस सत्याग्रह में महार, मांग, चमार आदि सभी जातियों के लोग शामिल हैं। मुंबई प्रांत में अन्य जाति के लोगों की तुलना में महार जाति के लोगों की संख्या ज्यादा है। स्पष्ट है कि अस्पृश्य लोगों के उद्धार के आंदोलन में महार जाति के लोग बड़ी संख्या में हिस्सा ले रहे हैं, इसलिए किसी को बुरा मानने की जरूरत नहीं है।

किसी न किसी लालच के वशीभूत होकर ज्यादातर लोग कॉंग्रेस में शामिल हुए हैं। कोई चमडे ़का व्यापार करना चाहता ह। इसलिए उसे चमड़ा पाना है, कोई मक्खन का व्यापार करना चाहता है इसलिए उसे सफेद रंग का पतला कागज चाहिए और इसीलिए वह कॉंग्रेस में शामिल हो रहा है। कोई कॉंट्रॅक्टस् पाना चाहता है तो कोई नौकरी पाना चाहता है। हमारे आंदोलन में कोई अपना स्वार्थ साधने के लिए शामिल नहीं हुआ। किसी को देने के लिए हमारे पास नौकरियां नहीं हैं, हम किसी को कॉंट्रॅक्टस् नहीं दे सकते और मक्खन के लिए हम किसी को सफेद पतला कागज भी नहीं दे सकते। (लोगों की हंसी और तालियों की आवाज)। हम सब बिल्कुल निस्वार्थ भाव से अपने स्वतंत्रता संग्राम में हिस्सा ले रहे हैं। निस्वार्थ भाव से लोगों के शामिल होने में ही हमारे आंदोलन की सफलता निहित है।

ऐसा नहीं कि हमारे सत्याग्रह की कोई समझ न आने वाली, बहुत बड़ी और गहरी वजह है। तीसरी पास बच्चा भी इसका मतलब समझ सकता है, इतना सब कुछ आसान है। लेकिन मुंबई प्रांत के मुख्य मंत्री मि. वेर ने कहा है कि उन्हें इसका मतलब समझ नहीं आ रहा। वैसे, पागलपन का ऐसा स्वांग भरने की कोई जरूरत नहीं है।

बाप मरते समय अपनी संपत्ति किसे मिलनी चाहिए इस बारे में वसीयत लिखता है। अंग्रेजों ने घोषणा की है कि वे इस देश को छोड़ कर जा रहे हैं। मरने वाले बाप की तरह ही उन्होंने भी अपनी वसीयत लिखी है। अपने पीछे अपनी संपत्ति का वारिस कौन होगा इस बारे में बाप जैसे निर्णय करता है उसी प्रकार अंग्रेजों ने भी इस देश के वारिस का फैसला कर लिया है। उन्होंने घोषणा की है कि, इस देश के असली वारिस होंगे दो– हिंदू और मुसलमान। अस्पृश्यों का उन्होंने जिक्र तक नहीं किया।

हमें लगा था कि इस देश का पुश्तैनी हक जब तय किया जा रहा है तो अस्पृश्यों को भी कुछ मिलेगा। हमें लगा था कि हिंदुओं को अगर अठन्नी मिलेगी तो हमें कम से कम चवन्नी (पावली) तो जरूर मिलेगा। लेकिन छलकपटी और बेहद चालाक अंग्रेजों ने अस्पृश्य समाज को धोखा दिया।

हिंदू और मुसलमान सत्ता के वारिस बन चुके हैं। सत्ता का हक हिंदुओं को मिला है। हमारा उनसे सीधा सवाल है कि, मिली हुई सत्ता में हमारा हिस्सा कितना है? मि. खेर का कहना है कि यह सीधा–सादा और जायज सवाल उनकी समझ में नहीं आ रहा, उनका न समझना केवल एक ढोंग है। इस तरह अनजान बनने से कुछ हासिल नहीं होगा। इस देश में सुखपूर्वक राज करना हो तो हिंदुओं को हमारे सवाल का जवाब देना ही होगा। अब तक हिंदुओं ने इस सवाल का जवाब नहीं दिया है। इसी कारण हिंदुओं से हमारा झगड़ा है। अंग्रेजों से झगड़ने में कोई फायदा नहीं। मरे हुए बाप से पुश्तैनी अधिकार के लिए लड़ने में कहां की समझदारी है?

हमारी लड़ाई मुसलमानों के साथ नहीं है, क्योंकि वे हमारा विरोध नहीं करते। मुसलमान बहुल प्रान्तों में हमारी मांगें पूरी करने के लिए वे तैयार हैं।

लेकिन काँग्रेस को, हमारे हकों के बारे में सार्वजनिक घोषणा करनी होगी। केवल खोखली बातों से अब काम नहीं चलेगा। हमारी मांगों के संदर्भ में काँग्रेस को तुरंत श्वेतपत्र जारी करना होगा। इसके अभाव में अगर ऐसा नहीं हुआ तो, पुणे में शुरू हुए सत्याग्रह की ज्वाला पूरे देश में फैलने में समय नहीं लगेगा। हमारी मांगों की पूर्ति के लिए सभी प्रांतों में हमें लड़ाई छेड़नी पड़ेगी।

आज की हमारी लड़ाई अहिंसात्मक है। हमने अहिंसा का प्रभावी अस्त्र धारण किया है। अहिंसा के बारे में गांधी की अपनी एक व्याख्या है, लेकिन मेरी व्याख्या गांधी की व्याख्या से पूरी तरह अलग है। तुकारामबुवा की जो थी वही अहिंसा की व्याख्या मेरी भी है।

तुकाराम की व्याख्या के अनुसार -(मराठी भाषा में है *(दया तिचे नाव, भूतांचे पाळण। आणिक निर्दाळण कंटकांचे।)* यानी, प्राणियों पर दया जरूर करें लेकिन दुष्टों का दमन भी करें। मुझे भी यही सही लगता है। इस व्याख्या का अनुसरण करते हुए हम अहिंसक सत्याग्रह करेंगे ही साथ ही कंटकों का खात्मा भी करेंगे।

हमारे सत्याग्रह का आज भले उन पर कोई असर नहीं हुआ हो, लेकिन कुछ समय के बाद उनकी गर्दन हमारे सामने झुकने ही वाली है। अलग चुनाव क्षेत्र की हमारी मांग उन्हें माननी ही पड़ेगी।

हमारी अलग चुनाव क्षेत्र की मांग काँग्रेस के मन में डर का हौवा पैदा करती है। हमें अलग चुनाव क्षेत्र मिलने से देश का बड़ा नुकसान होगा ऐसा उन्हें लगता है। लेकिन उन्हें इस प्रकार डरने की कोई जरूरत नहीं है। अलग चुनाव क्षेत्र से किसी का नुकसान नहीं होने वाला है। सिक्खों को अलग चुनाव क्षेत्र दिया गया है और इसके कारण देश दो फाड़ नहीं हुआ है।

1934 तक जिन्ना काँग्रेस में थे। वे जब काँग्रेस में थे तब काँग्रेसी उनकी भगवान की तरह पूजा किया करते थे। उनकी देशभक्ति के स्मारक के तौर पर काँग्रेस ने मुंबई में 'जिन्ना हॉल' के नाम से एक इमारत खड़ी की थी। यही जिन्ना अलग चुनाव क्षेत्र से ही हमेशा चुनाव जीतते आए हैं यह कोई ना भूलें। जिन्ना के अलग चुनाव क्षेत्र के कारण अगर देश का कोई नुकसान नहीं हुआ तो अस्पृश्यों को अलग चुनाव क्षेत्र देने से देश का बड़ा नुकसान होगा कहने का कोई अर्थ नहीं। मैं पिछले 20 सालों से इस देश की राजनीति में हूं। इन 20 सालों में देश के लिए नुकसानदेह साबित हो ऐसा कोई कार्य मैंने नहीं किया। मेरे मित्र गोवले को इस बात का पता है। मि. गोखले मुझे अपना दोस्त मानते हैं कि नहीं पता नहीं लेकिन मैं उन्हें अपना दोस्त मानता हूं। (हंसी) वाइसराय की कौंसिल में अंग्रेजों को जोर देकर सवाल पूछने वाला अकेला मैं ही था। इन लोगों ने असली अंग्रेज को देखा नहीं होगा। देखा तो वे बौखला जाएंगे।

हमारी लड़ाई हमेशा सिद्धांतों के लिए होती है। हमारा झगड़ा 6 करोड़ अस्पृश्य जनता की ओर से है। हमें राजनीतिक सुरक्षा चाहिए। मुर्खों के कारण अथवा धूर्तों के कारण हमारा कोई नुकसान न हो इस प्रकार उस सुरक्षा का स्वरूप होना चाहिए। हमारे आंदोलन में मूर्खों के लिए तथा धूर्तों के लिए कोई स्थान नहीं। हम ऐसा आंदोलन खड़ा करना चाहते हैं जिसमें लुच्चों-लफंगों के लिए कोई जगह नहीं होगी। अन्य लोगों की तरह हमें भी आजादी चाहिए। हमें किसी की भी - विदेशियों की अथवा स्वदेशियों की गुलामी नहीं करनी। हमें आजादी चाहिए। लेकिन उसी के साथ हमें प्रजातंत्र भी चाहिए। सत्ता अगर कुछ गिने-चुने लोगों के हाथ गई तो इसका कोई भरोसा नहीं कि हमारे अच्छे दिन आएंगे। यह हमारा डर है और यह डर साधार होने के कारण ही लगता है कि सत्ता आम आदमी के हाथ आनी चाहिए। हमारी पक्की धारणा है कि राजनीतिक सत्ता असल

में किसानों–मजदूरों के हाथ होनी चाहिए।

अन्य लोग भले कुछ भी कहें, हमें आजादी चाहिए और वो हम लेकर रहेंगे। इस देश की किसी भी जाति, जमात अथवा वर्ग द्वारा हम पर शासन न चलाया जाए। हमें ऐसे राजनीतिक हक चाहिए कि उनके सहारे हमें इस देश में सिर ऊंचा उठा कर जीने की आजादी मिले। गुलामी को हम अपने जूते की नोक पर रखेंगे।

इस देश के 6 करोड़ अस्पृश्यों की लड़ाई सही मायने में आजादी की लड़ाई है। इसके बावजूद इस देश के किसी व्यक्ति का हमारे आंदोलन को समर्थन नहीं, सहयोग नहीं, सहानुभूति नहीं। पोस्ट की हड़ताल हो तो उसे सबका समर्थन मिलता है। मैं यह नहीं कह रहा कि आप उन्हें समर्थन न दें। इस देश में कम्युनिस्टस् हैं, उग्र मतवादी हैं और भी मतांतरवादी हैं लेकिन इनमें से किसी का भी हमारी आजादी की लड़ाई के लिए समर्थन नहीं।

आप सभी लोगों को एक बात ध्यान में रखनी होगी कि हमें किसी का समर्थन मिले या न मिले हमें यह लड़ाई जीतनी है। अपने ही बलबूते हमें लडाई जीतनी है। हमें अपनी ताकत पर भरोसा करना है। उसी पर अपना दारोमदार रखना है। अपने मजबूत संगठन के सहारे हम सभी दिक्कतो को लांघ सकते हैं। इस सत्याग्रह की सारी जिम्मेदारी केवल हम पर है। अब लड़ाई की शुरुआत हो चुकी है। सिर फूटे या माथा, हमें आखिर तक लड़ने का निश्चय करना होगा।

महिलाओं के बारे मे, मैं दो शब्द कहना चाहूंगा। महिलाओं का इस सत्याग्रह में सहयोग बडे ही गर्व की बात है। काँग्रेस के आंदोलन में महिलाओं के सहयोग के कारण उन्हें बड़ा गर्व महसूस होता था। लेकिन आज के हालात से पता चलेगा कि अस्पृश्य समाज की महिलाएं भी अन्य महिलाओं की तुलना में किसी भी तरह पीछे नहीं हैं। हमारे आंदोलन को आज महिलाओं से भी बहुत बड़े पैमाने पर समर्थन मिल रहा है। हालात अगर अनुकूल होते तो इससे अधिक महिलाएं कारागृह जातीं।

रोक लगा रखी जिसकी वजह से हमारे सामने कई मुश्किलें हैं। इसी कारण सत्याग्रह के मोर्चे पर हम ज्यादा लोगों को ला नहीं सकते। काँग्रेस सरकार रोक को खत्म करे। अगर वे रोक खत्म करते हैं तो मेरी काँग्रेस को चुनौती है कि बड़ी आसानी से कम से कम एक लाख लोग कारागृह जा सकते हैं।

मैंने देश को नुकसान पहुंचाने वाली कौन–सी बात की है इसका मुझे पता नहीं। राउंड टेबल कॉन्फरंस से लेकर मेरी सरकारी नौकरी तक सारे कामों पर काँग्रेस वाले पैनी नजर डालें। अंग्रेजों को डपटकर बताने वाले मंत्रियों में मैं प्रमुख था और आज अंग्रेजों को देख कर भी जिन्हें डर लगता है वे मंत्री भी सदन में जाकर बैठे हैं। काँग्रेस

की टिकट पर इस प्रांत में जिन 15 लोगों को इस बार चुना गया है उनसे मैं पूछना चाहता हूं कि उन्होंने अपने जीवन के कितने घंटे इस समाज के लिए और इस देश के विकास के लिए लगाए हैं? अस्पृश्यों की उन्नति के लिए जिन्होंने पूरी ताकत लगाकर कोशिशें कीं उन्हें जगह दिए बिना किसी अलग व्यक्तियों को ही विधायक बनाया गया है। गरीबों का राज आए, प्रजातंत्र का शासन हो और अगर काँग्रेस की इच्छा हो तो पिछले 2000 सालों से, जिन्हें हमेशा दबाया गया उन 6-7 करोड़ अस्पृश्यों को उनके उचित व अत्यावश्यक हक मिलने चाहिए।

241

हक के लिए हमारी लड़ाई जारी रहेगी

पुणे, दिनांक ५ अगस्त, १९४६

अस्पृश्यों के नेता डॉ बाबासाहेब अम्बेडकर ने नई अस्थाई सरकार के बारे में कहा कि, नई अस्थायी सरकार बनाते समय काँग्रेस ने अस्पृश्यों के साथ जिस प्रकार का व्यवहार किया है उस पर गौर करें तो पता चलेगा कि नई अस्थायी सरकार को अस्पृश्यों के फेडरेशन की मान्यता नहीं मिलेगी। अस्पृश्य इस सरकार को मानेंगे या इस सरकार के प्रति आज्ञाकारी रहेंगे ऐसी आशा काँग्रेस नहीं रख सकती।

आगे उन्होंने कहा-

''अस्थाई सरकार से अस्पृश्यों का नामोनिशान मिटाने को लेकर काँग्रेस और ब्रिटिश सरकार के बीच मानो कोई अलिखित करार हुआ है।''

पाकिस्तान की मांग हो सकती है कुछ अर्थपूर्ण हो सकती है। लेकिन सवर्ण हिंदुओं की बराबरी में मुसलमानों को प्रतिनिधित्व देने में कोई तुक नहीं। और, सभी अल्पसंख्यक जमातों को मिला कर कुल चार जगहें दिए जाने का समर्थन भी नहीं किया जा सकता। अनुसूचितों की संख्या मुसलमान समाज की संख्या की तुलना में आधी से अधिक है। इसलिए मुसलमानों को जितनी दी गई हैं उससे आधी संख्या में जगहें अनुसूचितों को क्यों नहीं मिल रहीं?

पिछले साल शिमला में हुई बातचीत में अनुसूचितों को दो जगहें देने की बात काँग्रेस ने स्वीकार की थी। इस आधार पर कहा जा सकता है कि काँग्रेस ने अनुसूचितों के साथ अब अन्याय किया है। इसीलिए, काँग्रेस को उनसे राजनिष्ठा की उम्मीद नहीं रखनी चाहिए।

इन सभी अन्यायों से बढ़कर बात यह कि काँग्रेस ने श्री जगजीवन राम को अनुसूचितों

गरुड़, 1 सितंबर, 1946

के प्रतिनिधि के तौर पर चुना। काँग्रेस द्वारा अनुसूचितों पर किए गए अत्याचारों के बावजूद वे सरकार में शामिल होने के लिए तैयार हैं इससे उनकी असली योग्यता का पता चलता है।

अनुसूचितों द्वारा छेड़े गए सत्याग्रह आंदोलन के बारे में पूछे जाने पर डॉ. अम्बेडकर ने कहा, उचित अधिकार पाने के लिए हमारी लड़ाई जारी रहेगी। हम कभी शरण नहीं लेंगे।

इस अवसर पर शेड्यूल्ड कास्टस् फेडरेशन के अध्यक्ष दिवाणबहादुर एन. शिवराज का भी भाषण हुआ।

242

समय और स्थितियों को अनुकूल बनाया जाए तो दुनिया की कोई भी शक्ति इस देश को एक होने से रोक नहीं सकती

संसद के कामकाज की शुरुआत 9 दिसंबर, 1946 से हुई थी। संसद में कुल 296 सदस्य चुन कर आए थे। उनमें से 207 सदस्यों ने कामकाज में हिस्सा लिया। 89 सदस्य अनुपस्थित थे। उन्होंने संसद के कामकाज का बहिष्कार किया था कहना ज्यादा सही होगा। इनमें ज्यादातर सदस्य मुस्लिम लीग और रियासतों के प्रतिनिधि थे।

दिनांक 13 दिसंबर, 1946 के दिन पं. जवाहरलाल नेहरू ने संविधान का योग्य और लक्ष्य बताने वाला प्रस्ताव रखा। उन्होंने अपने भाषण में कहा कि हर बार की तरह केवल हाथ ऊपर उठा कर नहीं वरन् सदस्य खड़े होकर इस प्रस्ताव को पारित करेंगे ऐसी मैं उम्मीद करता हूं। श्री पुरुषोत्तमदास टंडन ने प्रस्ताव को समर्थन देने वाला वक्तव्य दिया।

डॉ. एम. आर. जयकर ने श्री नेहरू के प्रस्ताव में सुधार का प्रस्ताव रखा। उनके मतानुसार भारत को एक आजाद, प्रजातांत्रिक, सार्वभौम राज्य बनाने के दृष्टिकोण से, संविधान को इसके अनुकूल बनाने के लिए मुस्लिम लीग और भारतीय रियासत के प्रतिनिधियों के सहयोग की जरूरत है। इससे इस प्रस्ताव को अलग बल मिलेगा। इसके लिए इन दो संगठनों के प्रतिनिधि अगर शामिल होना चाहते हैं तो उनके शामिल होने तक प्रस्ताव पर चर्चा को आगे बढ़ाया जाए।

कुछ अपवादों को अगर छोड़ दें तो कई सदस्यों ने श्री जयकर के सुझाए गए सुधार का कड़ा विरोध किया। वे किसी हालत में चर्चा को स्थगित होने नहीं देना चाहते थे।

इस पृष्ठभूमि पर संविधान सभा के अध्यक्ष डॉ. राजेंद्रप्रसाद ने अगले वक्ता के तौर पर डॉ. बाबासाहेब को आमंत्रित किया। वह मंगलवार का दिन और तारीख थी 17 दिसंबर,

1. Dr. Babasaheb Ambedkar Writings and speeches Vol. 13 PP 7)

1. अतिथि संपादक मंडल और हिंदी अनुवाद संध्या पेडणेकर द्वारा किया गया है।

1946 । संविधान सभा का कामकाज शुरू होने के बाद वह 9वां दिन था जब डॉ. अम्बेडकर ने पहली बार भाषण दिया। भाषण देने के लिए वह जब उठे तो कइयों को लगा कि डॉ. जयकर की तरह ही डॉ. अम्बेडकर भी सभागृह के गुस्से का शिकार बनेंगे। लेकिन ठीक इसके उल्टा हुआ। इस प्रसंग का वर्णन करते हुए सभा के एक सदस्य और प्रत्यक्षदर्शी न. वि. गाडगील कहते हैं, 'उनका वक्त्व्य एक मंजे हुए राजनीतिज्ञ की तरह था। उसमें कटुता बिल्कुल नहीं थी। ईमानदारी के साथ वह आह्वान कर रहे थे और पूरा सभा गृह मंत्रमुग्ध होकर सुन रहा था।' सभी सदस्यों ने बहुत ही उत्साह के साथ उनके भाषण का स्वागत किया। सभागृह की लॉबी में सभी ने उन्हें बधाई देने के लिए घेर लिया।[1]

इस प्रसंग का वर्णन करते हुए डॉ. अम्बेडकर की कार्यवाही लिखने वाले श्री धनंजय कीर लिखते हैं - बडे सिर वाली, मजबूत ठुड्डी, लंबा गोलाकार-गंभीर और तेजस्वी चेहरे वाले तथा बेहतरीन पोषाक पहने एक मजबूत व्यक्तित्व जयकर की जानकारी को समर्थन देने के लिए खड़ा रहा। वह व्यक्ति्त्व था डॉ. भीमराव आंबेडकर। काँग्रेस के कट्टर विरोधी। काँग्रेस के तौर-तरीकों और नेताओं की उन्होंने कई बार खुले आम और निजी बातचीत में खिल्ली उड़ाई थी। सहज ही संविधान सभा के सभी सदस्यों की नजरें उन पर टिकीं। सभी सदस्यों पर एक बार डॉ. अम्बेडकर ने अपनी नजरें घुमाईं। हर सदस्य को लगा कि जयकर के प्रस्ताव का समर्थन कर डॉ. अम्बेडकर अपनी प्रतिष्ठा गंवा बैठेंगे। काँग्रेस के नेता देश के कर्ताधर्ता नेताओं के प्रतीक थे। उनके खिलाफ बोलना यानी अपने लौकिक जीवन का नुकसान करने जैसा था। काँग्रेस के सदस्य अपने कट्टर विरोधी को उसकी जगह दिखाने के लिए आतुर थे ही।

देश के बड़े-बड़े नेता अपने इर्द-गिर्द बैठे हैं इसका डॉ. अम्बेडकर को अहसास था। उनके बारे में उनके विरोधियों ने भी कई बातें सुन रखी थीं, उनका भाषण सुनने का यह पहला ही मौका था। डॉ. अम्बेडकर ने गंभीर स्वर में, पूरे आत्मविश्वास के साथ अपना भाषण शुरू किया[2]।

उन्होंने कहा -

अध्यक्ष महोदय, इस प्रस्ताव पर बोलने के लिए आपने मुझे आमंत्रित किया इसके लिए मैं दिल से धन्यवाद देता हूं। जो भी हो, आपके इस आमंत्रण से मैं आश्चर्यचकित हुआ हूं यह मुझे मानना ही पड़ेगा। मैं उम्मीद कर रहा था कि मुझसे पहले 20-22 लोग भाषण करने वाले थे सो, अगर मेरी बारी आएगी भी तो वह कल आएगी। आज मैं बिना किसी तैयारी के आया हूं, इसलिए आज के बजाय कल बोलना मुझे ज्यादा अच्छा लगता। इस प्रसंग में अपने विचार पूरी तैयारी के साथ आपके सामने रखना मुझे अच्छा लगता। आपने मुझे दस मिनट बोलने की इजाजत दी है। इतने कम समय में इस प्रस्ताव पर बोल कर मैं इसके साथ कैसे न्याय कर पाऊंगा यह मेरी समझ में नहीं आ रहा। इसके बावजूद इस

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर : डॉ. धनंजय कीर, पृ. 400.

बारे में अपनी राय मैं कम से कम शब्दों में रखने की कोशिश करूंगा।

अध्यक्ष महोदय, कल से जिस प्रस्ताव पर चर्चा हो रही है उसके स्पष्टतः दो हिस्से हैं– उनमें से एक विवादास्पद है और दूसरा उपयोगी है। प्रस्ताव के 5 से 7वें परिच्छेद तक का हिस्सा उपयोगी है। इन परिच्छेदों में भारत के भविष्यकालीन संविधान के लक्ष्यों को दिखाया गया है। मुझे यहां कहना ही पड़ेगा कि पं. जवाहरलाल नेहरू जैसे समाजवादी द्व ारा तैयार किया गया यह प्रस्ताव भले उपयोगी हो लेकिन बेहद निराशाजनक है। प्रस्ताव के इस हिस्से में उन्होंने जो कुछ शामिल किया है; मुझे उम्मीद थी कि वे इससे आगे जाकर सोचेंगे। इतिहास के अध्ययनकर्ता के रूप में मैं इस बात का खयाल जरूर रखता कि किसी भी हाल में प्रस्ताव के इस हिस्से में शामिल बातें उसमें जोड़ी ही न जातीं। प्रस्ताव का वह हिस्सा पढ़ते हुए बरबस फ्रांस के सदन द्वारा मानवीय हकों के संदर्भ में उद्घोषित किए गए घोषणा–पत्र की एक धारा याद आती है। वास्तव में 450 सालों के बाद भी मानवीय हकों से संबंधित घोषणा–पत्र और उसमें जोड़ा गया तत्व अपनी मानसिकता का अविभाज्य हिस्सा है ऐसा अगर मैंने कहा तो वह उचित ही होगा। मैं तो कहना चाहूंगा कि दुनिया के किसी भी सुसंस्कृत इलाके में रहने वाले आधुनिक मनुष्य की मानसिकता का वह अविभाज्य हिस्सा बन गया है। कट्टरपंथी विचार रखने वाले तथा सामाजिक संरचना के मामले में पुरातनवादी हमारे देश में इन तत्वों की वैधता को नकारने वाला शायद ही कोई हो। इस प्रस्ताव में उसे दोहराना केवल अपने पंडित होने का प्रदर्शन करना भर है। ये सिद्धांत हमारे स्पष्ट नजरिए का हिस्सा बने हुए हैं। इसलिए, हमारे लक्ष्यों के रूप में उनकी घोषणा करना अनावश्यक हो जाता है। इस प्रस्ताव में कुछ अन्य खामियां भी हैं। मैं देख रहा हूं कि प्रस्ताव के इस हिस्से में कुछ अधिकारों के बारे में व्यवस्था को साफ–साफ बताया है लेकिन उन्हें हासिल करने के उपायों का या किसी योजना का उसमें जिक्र नहीं है। आप जानते हैं कि लोगों के हक जब छिन जाते हैं तब ऐसी व्यवस्था बेकार ही कही जाएगी जिसमें छीने गए हकों को फिर पाने का कोई प्रबंध न हो। ऐसे उपायों की मुझे इसमें कमी महसूस हो रही है। किसी भी व्यक्ति के प्राण, उसकी आजादी और उसकी संपदा को कानूनी कार्रवाई के बिना छीना नहीं जा सकता यह सर्वमान्य सूत्र भी इस प्रस्ताव में मुझे कहीं दिखाई नहीं देता। कानून और नीति की सीमा के तहत मौलिक अधिकारों की व्यवस्था की गई है। असल में कानून क्या है और नीति के क्या मायने हैं यह उस वक्त की सरकार ही तय करेगी। तब एक शासनकर्ता एक नजरिया अपनाएगा तो दूसरा कोई और नजरिया अपनाएगा। तत्कालीन शासनकर्ताओं पर अगर यह फैसला छोड़ दिया जाए तो पता नहीं मौलिक अधिकारों की स्थिति क्या बनेगी, यह बताना मुश्किल है। महोदय, प्रस्ताव में आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक न्याय की व्यवस्था दी गई है। इस प्रस्ताव के पीछे अगर ईमानदारी और वास्तविकता हो – जिसके बारे में मुझे रत्ती भर भी आशंका नहीं है, तो प्रस्ताव प्रस्तुत करने वालों को राज्य जिसके सहारे सामाजिक,

आर्थिक और राजनीतिक न्याय कर सके ऐसे स्पष्ट उपायों की व्यवस्था करनी चाहिए थी। इस पृष्ठभूमि पर मैं सोच रहा था कि देश में आर्थिक, सामाजिक न्याय की व्यवस्था पर अमल कर पाने के लिए खेती और उद्योगों के राष्ट्रीयकरण की व्यवस्था प्रस्ताव में होना आवश्यक था। समाजवादी अर्थव्यवस्था के बगैर भविष्य में कोई भी सरकार देश में सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय कैसे कर पाएगी यह बात मेरी समझ में नहीं आ रही। इसीलिए इन बातों के स्पष्ट जिक्र के लिए मेरा विरोध न होते हुए भी मुझे यह प्रस्ताव थोड़ा निराशाजनक ही लगता है। इस प्रस्ताव के बारे में मेरे मत और जानकारी पेश करने के बाद यह सवाल मैं यहीं छोड़ रहा हूं।

अब मैं प्रस्ताव के पहले हिस्से की ओर मुड़ता हूं। पहले चार परिच्छेदों का इसमें समावेश है। इस सभा में अब तक जो चर्चा हुई है उसके आधार पर मैं कह सकता हूं कि यह हिस्सा विवादास्पद है। प्रस्ताव में प्रयुक्त 'गणराज्य' शब्द विवाद का केंद्रबिंदु है ऐसा लगता है। 'सार्वभौमिकत्व लोगों के बीच से निर्माण होता है' चौथे परिच्छेद के इस हिस्से के इर्दगिर्द यह विवाद केंद्रित है। मेरे मित्र डॉ. जयकर द्वारा कल उपस्थित किए गए–मुस्लीम लीग की अनुपस्थिति में सभा द्वारा इस प्रस्ताव पर विचार करना सही नहीं होगा– इस मुद्दे पर यह विवाद पैदा हुआ। महोदय, इस महान देश के सामाजिक, राजनीतिक तथा आर्थिक भविष्यकालीन संरचना और उज्ज्वल भविष्य के बारे में मेरे मन में तिलभर भी आशंका नहीं। आज हम राजनीतिक, सामाजिक तथा आर्थिक नजरिए से विभाजित हैं इसका मुझे अहसास है। एक-दूसरे के खिलाफ लड़ने वाली छावनियों के समूह हैं हम, बल्कि मैं तो यह भी मानता हूं कि मैं भी ऐसी ही एक छावनी का नेता हूं। महोदय, यह सब भले सही हो, लेकिन मुझे पूरा यकीन है कि समय और स्थितियों को अगर अनुकूल बनाया जाए तो कोई भी शक्ति इस देश को एक होने से रोक नहीं सकती। (तालियों की गड़गड़ाहट) विभिन्न जातियां और संप्रदाय होने के बावजूद हमें एक होने से कोई नहीं रोक सकता। इस बारे में मेरे मन में कोई आशंका नहीं। (हर्षध्वनि) भले आज मुस्लिम लीग भारत को दो फाड़ करने की कोशिश में लगा है, लेकिन एकछत्र भारत ही उनके लिए भी सही होगा। मैं दावे के साथ कह सकता हूं कि अगर चाहें तो मुस्लिम खुद अपने बारे में सोचने लगेंगे।(हर्षध्वनी और तालियों की गड़गड़ाहट)

अंतिम लक्ष्य के बारे में मेरे मत में हममें से किसी को भी डर पालने की जरूरत नहीं है। इस बारे में किसी के मन में कोई आशंका नहीं होनी चाहिए। अपनी दिक्कतें अंतिम लक्ष्य को लेकर नहीं है। आज जो संगठित नहीं हैं उस समाज के लोग एक साथ संगठन के मार्ग पर कैसे आगे बढ़ें इस बारे में सोचना यही हमारी दिक्कत है। हमारी मुश्किल लक्ष्य को लेकर नहीं, शुरुआत कैसे की जाए यह हमारे सामने खड़ी दिक्कत है। अंतिम उद्देश्य को लेकर हमें कोई दुविधा नहीं। इसीलिए अध्यक्ष महोदय, मुझे लगता है कि, अपनी मर्जी से हमारी मित्रता को स्वीकारने के लिए इस देश के हर पक्ष को

अगर तैयार करना हो तो, पूर्वाग्रह के कारण जो अभी भी शामिल होने के लिए तैयार नहीं हैं ऐसे घटकों को मुख्य धारा में शामिल करना होगा और ऐसा करने के लिए उन्हें कुछ रियायतें देनी पड़ें तो देने की कूटनीतिक चतुरता बहुसंख्यक पक्ष दिखाएं यह बताने के लिए मैं यह आह्वान कर रहा हूं। मन में डर पैदा करने वाले नारों और शब्दों को हम दूर रखते हैं। हमारे विरोधियों की मानसिकता और पूर्वाग्रहों को ध्यान में रखते हुए हम उन्हें कुछ रियायतें देंगे। उन्हें भी अपने साथ कर लेंगे। हम जिस मार्ग पर आगे बढ़ रहे हैं उस मार्ग पर अपनी मर्जी से वे हमारे साथ हो लेंगे। इस मार्ग पर लंबे समय तक हम अगर साथ चलते रहे तो ही हम एकता की दिशा में आगे बढ़ेंगे। आयु. जयकर की उपसूचना का मैं यहां केवल इसलिए समर्थन कर रहा हूं कि हम सबको इस बात का अहसास हो कि साथ मिलकर आगे बढ़ना ही इस समय बहुत महत्वपूर्ण है। सबको इसका अहसास होना जरूरी है। हम सही हों या गलत, हमारे कानूनी अधिकारों के साथ हमारी भूमिका मेल खा रही हो अथवा न खा रही हो, 16 मई अथवा 6 दिसंबर के निवेदनों के अनकूल हो अथवा न हो – ये सारी बातें कुछ समय के लिए हम किनारे रखें। कानूनी मुद्दे से भी यह मसला अधिक महत्वपूर्ण है, बल्कि यह कानूनी मुद्दा है ही नहीं। कानून की सभी बातें हम दूर रखते हैं और ऐसी कोशिश करते हैं कि जो लोग आज हमारा साथ देने के लिए तैयार नहीं हैं वे भी साथ देने के लिए तैयार हो जाएं। मैं आप सब लोगों से आह्वान करता हूं कि हम ऐसा माहौल तैयार करें।

इस सदन में चल रही चर्चा में दो सवाल विचारार्थ रखे गए हैं। इन सवालों का मेरे मन पर इतना गहरा असर हुआ कि मैंने उन्हें दर्ज कर रखा है। उनमें से एक सवाल मेरे मित्र बिहार के मुख्यमंत्री ने कल की सभा में अपने भाषण में उपस्थित किया था। वह पूछ रहे थे कि मुस्लिम लीग को इस संविधान सभा में सहयोगी होने से प्रस्तुत प्रस्ताव कैसे रोक सकता है? आज मेरे मित्र डॉ. श्यामाप्रसाद मुखर्जी ने दूसरा प्रश्न उपस्थित किया कि कैबिनेट मिशन के प्रस्ताव से यह प्रस्ताव अलग तो नहीं? महोदय, ये दोनों सवाल अत्यंत महत्वपूर्ण हैं और उनके केवल जवाब, नहीं स्पष्ट जवाब दिए जाने चाहिए। मुझे साफ तौर पर ऐसा लगता है कि प्रस्तुत प्रस्ताव से कुछ निकलने का उद्देश्य हो या ना हो, यह केवल आकस्मिक घटना हो या न हो, लेकिन इस प्रस्ताव का निश्चित परिणाम मुस्लिम लीग को संविधान सभा से बाहर रखने में ही होने वाला है। इस संदर्भ में प्रस्ताव के तीसरे परिच्छेद की ओर मैं आपका ध्यान दिलाना चाहता हूं क्योंकि, मुझे लगता है कि यह परिच्छेद अत्यंत महत्वपूर्ण और अर्थपूर्ण है। तीसरे परिच्छेद में भारत के भावी संविधान के बारे में विचार किया गया है। प्रस्ताव रखने वाला इसके जरिए क्या कहना चाहता है मैं नहीं जानता। लेकिन मैं यह मान कर चलता हूं कि मंजूर होने के बाद यह प्रस्ताव तीसरे परिच्छेद के संदर्भ से संविधान निर्माण के लिए संविधान सभा के निर्देशन का काम करेगा। क्या कहा है इस तीसरे परिच्छेद में? तीसरा परिच्छेद कह रहा है कि इस देश में राज्य संस्था के दो प्रकार होंगे। पहला– निचले स्तर पर स्वायत्त प्रांत अथवा राज्य अथवा ऐसे हिस्से होंगे जो अखंड भारत में शामिल होना चाहते हैं। ये स्वायत्त घटक पूरी तरह अधिकारयुक्त होंगे। उनके कुछ

अन्य अधिकार भी होंगे। घटक प्रांत के ऊपरी स्तर पर संघ राज्य होंगे। कुछ हद तक उन्हें कानून बनाने, उन पर अमल करने और प्रशासन चलाने के अधिकार होंगे। प्रस्ताव का यह हिस्सा पढ़ते हुए सम्मिलित करने की संकल्पना के संदर्भ और एक तरफ केंद्र सरकार और दूसरी तरफ के प्रांतीय सरकारों के बीच संपर्क बनाए रखने वाली व्यवस्था मुझे कहीं दिखाई नहीं दे रही। कॅबिनेट मिशन के प्रस्ताव की पृष्ठभूमि पर इस परिच्छेद को पढ़ने के बाद या कांग्रेस की वर्धा में परिषद में पारित किए गए प्रस्तावों की पृष्ठभूमि में इस परिच्छेद को पढ़ने के बाद भी प्रांतों के एकीकरण की संकल्पनाओं के संदर्भ में मुझे कहीं नहीं दिखाई देते। इसलिए मानना ही पड़ेगा कि मैं बेहद आश्चर्यचकित हूं। इस प्रकार अलग गुट बनाने की कल्पना जाती तौर पर मुझे स्वीकार नहीं। (सुनो....सुनो...)। मुझे मजबूत केंद्र सरकार पसंद है। (सुनो....सुनो...)। 1935 में भारत सरकार कानून द्वारा तैयार किए गए केंद्र सरकार से भी अधिक मजबूत केंद्र सरकार मुझे चाहिए। लेकिन महोदय, मेरे इन मतों को वर्तमान स्थिति में कहीं स्थान है ऐसा मुझे दिखाई नहीं देता। हमने काफी लंबी यात्रा की है। मेरी नजर में जिसे बेहद प्रशंसनीय, सम्मानजनक और आश्रय का स्थान माना जाए ऐसी 150 साल की प्रशासनिक व्यवस्था से निर्माण हुई मजबूत केंद्र सरकार को डिगाने की सहमति काँग्रेस पक्ष ने क्यों दी यह काँग्रेस ही जाने। इस भूमिका का त्याग करने के बाद तथा हमें मजबूत केंद्र सरकार नहीं चाहिए ऐसी भूमिका अपनाने के बाद, घटक राज्य तथा केंद्र सरकार को जोड़ने वाली बीच की उपसंघराज्य की कड़ी स्वीकारने के बाद परिच्छेद 3 में शामिल करने की योजना का जिक्र क्यों नहीं किया गया यह मैं जानना चाहता हूं। एकत्रीकरण से संबंधित धाराओं को ठीक से समझने में काँग्रेस पक्ष, मुस्लिम लीग और अंग्रेज सरकार सहमत नहीं हो पा रहे हैं यह मैं समझ सकता हूं। मैंने इस बारे में सोचा है और अगर मैं गलत हूं यह कोई सप्रमाण मुझे समझा दे तो मैं अपनी राय में सुधार लाने को तैयार हूं कि विभिन्न गुटों में विभाजित राज्यों द्वारा अगर संघराज्य अथवा उप संघराज्य को मान्यता दी जाए तो काँग्रेस इस प्रस्ताव का विरोध नहीं करेगी इस बात को कम से कम काँग्रेस ने माना था। काँग्रेस की यही सोच है इसका मुझे भरोसा है। मेरा सवाल है कि प्रस्ताव रखने वाले व्यक्ति द्वारा उसे तथा उसके पक्ष की जिस बात पर सहमति है उन प्रांतों की एकता या प्रांतों के एकीकरण की बात का जिक्र प्रस्ताव में क्यों नहीं किया गया है? इस प्रस्ताव में संघ की कल्पना को पूरी तरह टाला क्यों गया है? इस बात का जो भी जवाब हो, वह मुझे इस प्रस्ताव में दिखाई नहीं दे रहा। इसलिए, मैं कहना चाहता हूं कि, बिहार के प्रधान और डॉ. श्यामाप्रसाद मुखर्जी द्वारा उपस्थित किए गए दो सवालों का परिच्छेद 3 यह जवाब है। उनके द्वारा प्रस्तुत किए गए दो सवालों में से पहला सवाल यह है कि, 16 मई के प्रस्ताव के साथ यह प्रस्ताव अलग कैसे है? और दूसरा सवाल है– संविधान सभा में मुस्लीम लीग के प्रवेश पर यह प्रस्ताव क्यों प्रतिबंध लगाता है? निश्चित तौर पर मुस्लीम लीग इस बात का फायदा उठाएगा और अपनी लगातार अनुपस्थिति का समर्थन करेगा। महोदय, मेरे मित्र डॉ. जयकर द्वारा इस प्रस्ताव से संबंधित निर्णय को मुल्तवी किए जाने को लेकर जो दलील प्रस्तुत की थी उसे मैं कुछ हद तक कानूनी कह सकता हूं, भले ही इससे उन्हें

थोड़ा दुख पहुंचे। उनकी दलील थी कि क्या ऐसा करने का अधिकार आपके पास है? अपनी बात रखते हुए उन्होंने संविधान सभा के कामकाज से संबंधित कॅबिनेट मिशन के कथन का कुछ हिस्सा पढ़ कर सुनाया। उनकी दलील का मुख्य हिस्सा था, कि इस प्रस्ताव पर निर्णय लेने के लिए संविधान सभा द्वारा जो कार्यपद्धति अपनाई गई है वह कॅबिनेट मिशन के वक्तव्य में समाहित कार्यपद्धति से बिल्कुल अलग है। महोदय, इस मुद्दे को मैं थोड़े अलग तरीके से रखना चाहता हूं। इस मुद्दे को सीधा मंजूर अथवा नामंजूर करने का अधिकार आपको है अथवा नहीं यह मैं आपसे नहीं पूछूंगा। हो सकता है आपके पास यह अधिकार हो। मैं यही पूछना चाहता हूं कि क्या ऐसा करना आपके लिए दूरदर्शी साबित होगा? क्या आपके लिए यह सूझबूझ का निर्णय साबित होगा? अधिकार एक बात है, समझ पूरी तरह से अलग दूसरी बात है। इस बात का निर्णय लेते हुए सदन इस बात पर जरूर गौर करे कि क्या इस प्रकार निर्णय लेना समझदारी होगी? क्या यह कूटनीतिक चतुरता साबित होगी? इस पल यह निर्णय करना क्या दूरदर्शिता साबित होगी? इसका जवाब देते मैं कहना चाहूंगा कि यह दूरदर्शिता या समझदारी भरा कदम सिद्ध नहीं होगा। काँग्रेस और मुस्लिम लीग के बीच का विवाद मिटाने के लिए एक बार और कोशिश किए जाने का सुझाव मैं देता हूं। यह सवाल जीवन-मृत्यु जितना महत्वपूर्ण है और किसी पक्ष की प्रतिशत के आधार पर उसे कभी सुलझाया नहीं जा सकता इसका मुझे यकीन है। राष्ट्र के भविष्य के बारे में सोचते हुए लोगों की प्रतिशत, नेताओं की प्रतिशत या दल की प्रतिशत नगण्य हो जाती है। किसी भी बात से ज्यादा राष्ट्र का भविष्य महत्वपूर्ण होता है। संविधान सभा का काम सर्व-सहमति से होने के लिए यह लाभप्रद रहेगा। इतना ही नहीं, इससे मुस्लीम लीग द्वारा कोई निर्णय लिए जाने से पूर्व उसकी प्रतिक्रिया भी संविधान सभा को पता चलेगी। इसी कारण मैं डॉ. जयकर की उपसूचना का समर्थन कर रहा हूं। हम अगर जल्दबाजी से निर्णय करेंगे तो भविष्य में उसका क्या असर होगा इस बारे में भी हमें सोचना होगा। सभागृह जिनके बस में है उस काँग्रेस पक्ष की इस बारे में क्या योजनाएं हैं मैं नहीं जानता। इस बारे में वे क्या सोच रहे हैं यह कहने का मेरा अधिकार नहीं है। इस मामले को लेकर उनके क्या दांव-पेंच हैं, उनके पास इस मामले में क्या उपाय हैं मैं नहीं जानता। लेकिन उपस्थित सवाल पर एक तटस्थ व्यक्ति के नाते सोचते हुए मुझे लगता है कि इस बारे में निर्णय लेने के केवल यही तीन उपाय हैं कि, एक दल दूसरे दल की शरण चला जाए, शांतिपूर्ण चर्चा से राह निकाली जाए और तीसरा मार्ग खुलेआम संघर्ष किया जाए। महोदय, संविधान सभा के कुछ सदस्यों से मैं यह सुन रहा हूं कि वे संघर्ष, करने की तैयारी में हैं। मैं मानता हूं कि राष्ट्र के सामने उपस्थित समस्या का हल युद्ध के जरिए ढूंढने की कल्पना देश के किसी व्यक्ति के दिमाग में आए इससे मैं भयभीत हो गया हूं। मैं नहीं जानता कि देश के कितने लोग इस सोच का समर्थन करते हैं। मुझे लगता है इसके कई समर्थक हैं। मुझे लगता है कि, ऐसी कल्पना को बहुसंख्यकों का समर्थन मिलने के पीछे वजह यही होगी कि उन्हें लगता है कि यह युद्ध अंग्रेजों के खिलाफ होगा। लेकिन महोदय, यहां जिस युद्ध के बारे में सोचा जा रहा है क्या उसे केवल स्थानीय, सीमित और केवल अंग्रेजों के

खिलाफ रखा जा सकता है? अंग्रेजों के अलावा किसी और के साथ लड़ना न हो तो ऐसी योजना के लिए मेरे विरोध की कोई वजह नहीं होगी। लेकिन क्या यह युद्ध केवल अंग्रेजों के खिलाफ होगा? किसी संकोच के बगैर मैं इस सदन को जहां तक संभव हो स्पष्ट रूप से कहना चाहूंगा कि इस देश में अगर युद्ध हुआ और इस युद्ध का संबंध अगर हमारे सामने उपस्थित समस्याओं के साथ जुड़ा हो तो यह युद्ध अंग्रेजों के खिलाफ नहीं होगा, वह होगा मुस्लिमों के खिलाफ। उससे बुरी बात यह हो सकती है कि यह युद्ध अंग्रेज और मुस्लिमों के संयुक्त मोर्चे के खिलाफ होगा। जिस प्रकार इस युद्ध के होने का मुझे डर है उससे अलग तरीके से यह युद्ध होने की संभावना मुझे नजर नहीं आती। महोदय, अमेरिका के साथ हुई सुलह से पहले बर्क द्वारा दिए गए वक्तव्य का कुछ हिस्सा मैं सदन में पढ़ कर सुनाना चाहता हूं। सदन का माहौल शांत करने में उसका कुछ उपयोग होगा इसका मुझे विश्वास है। आप जानते हैं कि अमेरिका के बागी उपनिवेशों पर कब्जा पाने के लिए अंग्रेजों की कोशिश चल रही थी। उनकी इच्छा के खिलाफ उन्हें अपने वश में करने का अंग्रेजों का इरादा था। तब उपनिवेशों को जीत कर उन्हें वश में करने का विरोध करते हुए बर्क ने कहा था,

''महोदय, मुझे यह कहने की इजाजत दीजिए कि बलप्रयोग का असर केवल तात्कालिक होता है। उसके आधार पर केवल कुछ समय के लिए अधिकार प्राप्त किए जा सकते हैं। उन्हें हमेशा वश में रखने के लिए फिर से बल का प्रयोग करने की जरूरत को हमेशा के लिए खारिज नहीं किया जा सकता। जिस राष्ट्र को हमेशा अपने अधीन रखना हो उस पर इस प्रकार शासन नहीं चलाया जा सकता।

मेरी दूसरी आपत्ति प्रयोग में लाए जाने वाले बल के परिणामों को लेकर अनिश्चय के बारे में है। जरूरी नहीं कि बल के प्रयोग से हमेशा दहशत ही पैदा हो और तैयार सेना का मतलब जीत नहीं होता। जीत न पाने की स्थिति में फिर कोई मार्ग नहीं बचता। बातचीत असफल हो जाने पर केवल बल प्रयोग का मार्ग ही बचता है। लेकिन तब बल प्रयोग अगर असफल रहे तो बातचीत का कोई जरिया बाकी नहीं बचता। दया के बदले कभी-कभी सत्ता और अधिकार पाए जा सकते हैं लेकिन शक्ति का प्रयोग और पराजित हिंसा से सत्ता और अधिकार भीख में मांगे नहीं जा सकते.....

बल के प्रयोग के लिए मेरा विरोध इसलिए भी है कि हिंसा के कारण कोशिश की पराकाष्ठा से जो आप पाएंगे उसे ही आप हानि पहुंचाएंगे। आप जो पाएंगे वह उसके मूल रूप में नहीं होगा, वह अवमूल्यित, बरबाद और विनाश के रूप में होगा।''

इन अनमोल शब्दों की ओर ध्यान न देना अनिष्टकारी हो सकता है।

हिंदू-मुस्लिम समस्या अगर बल के प्रयोग से हल करने की किसी की योजना हो तो, साफ शब्दों में कहता हूं कि उन्हें यह ध्यान में रखना होगा कि युद्ध के सहारे मुसलमानों को हरा कर उन्हें संविधान के दायरे में लाना हो तो उनकी सहमति के बगैर बने संविधान की शरण आने के लिए उन्हें बाध्य किया जाए तो इस देश को हमेशा के लिए इन्हीं

---

1. मूल अंग्रेजी भाषण का मराठी अनुवाद अतिथि संपादक मंडल और हिंदी अनुवाद संध्या पेडणेकर द्वारा किया गया है।

कोशिश में लगे रहना होगा। एक बार की जीत हमेशा की जीत साबित नहीं होगी।

अब तक मैंने जितना समय लिया उससे अधिक समय मैं नहीं लेना चाहता। एक बार फिर बर्क को उर्द्धृत कर मैं भाषण को समाप्त करना चाहता हूं। बर्क ने एक जगह कहा है कि, 'सत्ता देना आसान है, अकल देना मुश्किल है।' इस सभा को प्राप्त सार्वभौम अधिकार का प्रयोग अकल के साथ करने के लिए हम तैयार हैं, यह हम अपने आचरण से साबित करेंगे। देश के सभी घटकों को अपने साथ ले चलने का यही एकमात्र उपाय है। एकता की ओर आगे बढ़ने का इसके अलावा कोई और मार्ग नहीं। इस बारे में आपके मन में कोई आशंका नहीं होनी चाहिए।''[1]

243

सत्य की खोज के लिए मनुष्य को पूरी आजादी मिले

टिप्पणी : नवयुग के इस अंक में भाषण कब हुआ इसका जिक्र नहीं है लेकिन शिक्षा सत्र के अंत में होने का जिक्र है। इससे अंदाज लगाया जा सकता है कि भाषण फरवरी-मार्च, १९४७ के आसपास हुआ होगा। -संपादक)

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने दिनांक 8 जुलाई, 1945 को 'पीपल्स एज्युकेशन सोसाइटी' की स्थापना की। केवल शिक्षा प्रदान करना ही नहीं वरन भारत में बौद्धिक, सामाजिक और नैतिक प्रजातंत्र का प्रचालन सुचारू रूप से हो सके ऐसी शिक्षा देना इस सोसाइटी का उद्देश्य था। संस्था ने 20 जून, 1946 के दिन मुंबई में सिद्धार्थ कला एवं विज्ञान महाविद्यालय की स्थापना की।

सिद्धार्थ कॉलेज के पहले साल के अंत में डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने भाषण दिया –

उन्होंने भाषण में कहा– आपके प्रिन्सिपल साहब ने आपको बताया कि हमारा सिद्धार्थ कॉलेज शैशवावस्था में होने के कारण उसे अभी अपनी परंपरा निर्माण करनी है। मुझे व्याख्यान देने का मौका आप लोगों ने दिया है उसका फायदा उठाते हुए अब मैं 'हमारे कॉलेज की परंपरा' विषय पर ही करने जा रहा हूं। लेकिन अपनी बात शुरू करने से पहले मैं आजकल के छात्रों को दो शब्द कहना चाहता हूं। 1923 से 1937 तक दो साल मैं सिडनहॅम कॉलेज में प्रोफेसर था और इसी दौरान यहां के लॉ कॉलेज का भी मैं प्रिंसिपल था। 1937 के बाद छात्रों से मेरा संपर्क टूटा। तब से मैंने प्रोफेसर का पेशा छोड़कर राजनीति को अपनाया। राजनीति में मनुष्य को अपनी एक विशिष्ट मनोभूमिका

नवयुग : 13 अप्रैल, 1947

बनानी पड़ती है। अपनी सोच को खास तरीके से ढालना पड़ता है। राजनीति में मनुष्य के लिए प्रचार कार्य करना बहुत जरूरी हो जाता है। लेकिन इसके खिलाफ प्रोफेसर कभी प्रचार कार्य नहीं कर सकता। प्रचारक कभी भी अध्यापक या प्रोफेसर नहीं बन सकता। अब चूंकि मैंने राजनीतिक प्रचारक का पेशा अपनाया है तो मुझे शक है कि मैं किसी विषय पर प्रोफेसर के नाते अपने विचार बेहतर ढंग से पेश कर पाऊंगा। लेकिन मुझे उम्मीद है कि आज का मेरा भाषण प्रचारक के तौर पर नहीं होगा।

मेरी एक आदत है। जिस विषय पर मुझे बोलना होता है उसके सभी पहलुओं के बारे में पहले मैं अच्छी तरह सोच लेता हूं। लेकिन आज मुझे कबूलना पड़ेगा कि इस व्याख्यान से पहले इस प्रकार सोचने के लिए जितने समय की आवश्यकता होती है उतना समय और जितनी मानसिक शांति की जरूरत होती है उतनी मानसिक शांति मुझे नहीं मिली। कई लोग बिना वजह मिलने चले आते हैं और मेरा समय लेते रहते हैं। एक बात मैं पहले ही स्पष्ट करना चाहता हूं कि आजकल के छात्रों से मैं पूरी तरह निराश हूं। कुछ समय तक उनसे मेरे घनिष्ट संबध रहे लेकिन जितना मैं उन्हें समझ सका, मुझे उनमें आस्था की कमी महसूस हुई। हमारे देश में एक समय ऐसा था जब गोखले, तिलक, रानडे, सर फिरोजशाह मेहता जैसे कई और आस्थावान, लगन वाले छात्र पैदा हुए। उनमें आस्था थी, उम्मीद थी, उत्साह था, अनुशासन था। उन्हें अपने ऊपर कुछ जिम्मेदारी है इसका पूरा अहसास था। लेकिन आजकल के छात्रों में यह अहसास या अनुशासन बिल्कुल नहीं है। आज तक मैंने कई छात्रों को पढ़ाया होगा। लेकिन अब कभी रास्ते में उनसे मुलाकात हुई तो वे गर्दन घुमा कर कहीं और का रुख कर लेते हैं और आगे बढ़ जाते हैं। आपसी पहचान है यह वे दिखाना तक नहीं चाहते। कई कालेजों में व्याख्यान देने के लिए मुझे आमंत्रित किया जाता है। मैंने अब निश्चय किया है कि उनका आमंत्रण मैं अस्वीकार करूंगा। इसके लिए केवल सिद्धार्थ कॉलेज अपवाद है। सिद्धार्थ कॉलेज अपनी परंपरा को कैसे स्थापित करे यह अब मैं आपको बताता हूं।

अपने कॉलेज का नाम सिद्धार्थ कॉलेज है। यही नाम क्यों रखा गया? नाम देने के बदले में किसी करोड़पति से मैं कुछ लाख रुपया अवश्य ले सकता था। लेकिन मैंने ऐसा सोचा नहीं। अगर मैं किसीसे रुपया लेता तो कॉलेज का नाम उनके नाम पर रखना पड़ता। मैंने इस कॉलेज को सिद्धार्थ कॉलेज नाम देने का निश्चय किया, किसी अमीर से पैसा लेने का ख्याल मन में नहीं आने दिया। आप जानते हैं कि यह बुद्ध का नाम है, बचपन का। अपना यह सिद्धार्थ कॉलेज भी अभी छोटे बालक समान है। अभी उसकी नौ माह तक की उम्र नहीं हुई है। सो, अगर इस कॉलेज ने अब तक अपनी परंपरा को कायम नहीं किया है तो उसमें मुझे आश्चर्य की कोई बात नहीं नजर आती। लेकिन केवल इसी से आप यह अनुमान बिल्कुल न निकालें कि इस कॉलेज के सामने कोई लक्ष्य नहीं है।

लक्ष्य के कारण ही इस कॉलेज का नाम सिद्धार्थ रखा है। इस बात को ध्यान में रखें। बुद्ध के नाम से इस कॉलेज की स्थापना क्यों की गई? क्योंकि, ब्रह्मजालसूत्र में बुद्ध ने ही यह उद्देश्य हमें बता रखा है। उस सूत्र में बताया गया है कि हम यह मान कर चलते हैं कि भारत में औपनिषदिक दर्शन का प्रसार हुआ है। इन दार्शनिकों का ब्रह्म में विश्वास है। एक बार कई ब्राह्मण दार्शनिक गौतम से मिलने आए। गौतम के शिष्यों ने अपने गुरु से कहा, ''आपसे मुलाकात की उम्मीद लेकर वे ब्रह्मवादी दार्शनिक आपसे मिलने आए हैं। उन्होंने एक नए दर्शन की स्थापना की है और इस दर्शन के प्रमुख भगवान ब्रह्म है यह उनका दावा है। गुरुजी, इस बारे में आपके विचार क्या हैं यह हम सब जानना चाहते हैं।''

इस पर गौतम ने जो जवाब दिया वह विचारणीय है ऐसा मुझे लगता है। गौतम ने ब्रह्मवादियों से सवाल किया, 'क्या आप लोगों ने ब्रह्म को देखा है?' उन्होंने कहा, 'नहीं।' गौतम ने पूछा, 'क्या आपकी ब्रह्म से बातचीत हुई है?' जवाब मिला, 'नहीं।' गौतम ने पूछा, 'क्या आपने ब्रह्म के बारे में कुछ सुना है?' फिर जवाब मिला, 'नहीं।' गौतम ने पूछा, 'क्या आपने ब्रह्म को चखा है?' जवाब वही था, 'नहीं' तब गौतम ने उनसे कहा कि जब आप कहते हैं कि आपके पंचज्ञानेंद्रियों ने और पंचकर्मेंद्रियों ने ब्रह्म क्या है इसका अनुभव नहीं किया, तो फिर ब्रह्म है यह आप किस भरोसे कहते हैं? इस पर ब्रह्मवादियों से कोई जवाब देते नहीं बना।

मैं आपको गौतम के एक और व्याख्यान के बारे में बताता हूं। महापरिनिब्बानसूत्र में इस बारे में विवेचन हुआ है। गौतम आसन्न मरण स्थिति में थे। उस दौरान उनके प्रमुख शिष्य कुशिनारा में रहते थे। उस वक्त उनके मुख्य शिष्य आनंद ने गौतम से कहा, 'महाराज, आप इतनी जल्दी निर्वाण नहीं ले सकते। ऐसी कई बातें बाकी हैं जिनके बारे में आपने अपना निर्णय अभी हमें नहीं दिया है। हमारा मार्गदर्शन नहीं किया है!' बुद्ध ने इसका जो जवाब दिया वह सचमुच विचारणीय है। उन्होंने कहा, 'मैं चालीस सालों से आपके साथ रहा हूं। यानी मेरी उम्र अब पूरे अस्सी साल की है। इतने सालों तक मैं आपके संपर्क में रहा हूं इसलिए आपके कहने पर मुझे आश्चर्य हो रहा है कि अपने कुछ प्रश्नों के जवाब अभी भी आपको नहीं मिले हैं। सभी सवालों के जवाब आपको मुझसे नहीं मिले हैं यह मुझे असंभव लगता है। अपने चालीस साल के सम्बोधन में बताने लायक अभी कुछ बाकी रहा हो ऐसा मुझे नहीं लगता। आपके इस सवाल से आपके दिमाग में कुछ गड़बड़ है ऐसा मुझे लगता है। अब तक मैंने तुम्हें जो जो सिखाया वह आप पूरी तरह समझे नहीं ऐसा मुझे लगने लगा है। एक बात ध्यान में रखें और उसी के अनुसार व्यवहार करें, ताकि आपके सवाल आप खुद हल कर पाएंगे। यानी कि, कोई बात केवल मैं कहता हूं इसीलिए सत्य है ऐसा आप न मानें। आपकी विचारशक्ति,

आपकी तर्कशक्ति अगर उस बात को सच मानती हो तभी उसको स्वीकार कीजिए। वरना बेझिझक उसे छोड़ दीजिए। यही मेरी आपको सीख है।'

गौतम बुद्ध के इस कथन का क्या मतलब है? इसका मतलब यही है कि हर व्यक्ति को सोचने की आजादी है। उस आजादी का इस्तेमाल उसे सत्य को ढूंढने के लिए करना चाहिए और सत्य के मायने क्या हैं? व्यक्ति के पंच कर्मेंद्रियों और पंच ज्ञानेंद्रियों को जो सही लगे वही सत्य है। यानी कि, सत्य दिखाई दे, सुनाई दे, उसे हम सूंघ सकें, उसका स्वाद ले सकें और उसके अस्तित्व के बारे में हम लोगों को यकीन दिला सकें।

गौतम ने अपने शिष्यों के आगे यही उद्देश्य रखे थे। सिद्धार्थ कॉलेज भी इन्हीं लक्ष्यों का अनुसरण करने वाला है - 1. सत्य को खोज निकालना, 2. मानवता की सीख देने वाले धर्म का ही अनुसरण करना।

आधुनिक विचार प्रणाली किस दिशा में आगे बढ़ रही है मैं जानता हूं। मैं आपसे यह भी कह देता हूं कि कार्ल मार्क्स के दर्शन से भी मैं अवगत हूं। उसके धार्मिक विचारों के बारे में भी मैं जानता हूं। धर्म को वह *अफू*कहता है। लेकिन उसका यह कथन मुझे स्वीकार नहीं। सत्य को खोज निकालना यही सत्यधर्म होता है। सत्य और सत्ता परस्पर विरोधी बातें हैं। शास्त्र भी किसी बात को परिपूर्ण या अंतिम नहीं मानता। इसीलिए सत्य भी अधूरा होने के कारण कालानुसार बार-बार उसे खोजना क्रमप्राप्त है। इसी कारण दुनिया में पूरी तरह पवित्र कुछ भी नहीं।

धर्म यानी सत्य यह हमें सीखना होगा। *नहिसत्यात्परोधर्मः!* यानी, सत्य से बढ़कर कोई धर्म नहीं। हमारा लक्ष्य भी यही हो। हम किसी और को कभी दुख न पहुचाएं। यही हमारे धर्म की सीख होनी चाहिए। सत्य खोजने में व्यक्ति को पूरी आजादी मिले यही अपने इस कॉलेज का लक्ष्य हो।

244

आर्थिक लूट रोकने के लिए राष्ट्रीय समाजवाद का अनुसरण करना ही एकमात्र उपाय है

मुंबई में दिनांक 12 अप्रैल, 1947 के दिन डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर की अध्यक्षता में श्री विष्णुपंत वेलणकर को अलग-अलग संस्थाओं की ओर से सार्वजनिक तौर पर सम्मानित किया गया। इस अवसर पर वेलणकर ने कहा कि, आज मुंबई में महाराष्ट्रीयन लोग क्लर्की करनेवाले या बोझा उठाने वाले के तौर पर काम करने वाले घाटी ही दिखाई देंगे। इस बुरी तस्वीर को बदलने के लिए महाराष्ट्र को कोशिश करनी चाहिए। पैसे से ही सब बातें होती हैं। आज महाराष्ट्र का सम्मान नहीं है क्योंकि यहां लाव-लाव रुपयों के चेक लिखने वाले नहीं हैं। गांधी का आंदोलन पैसों पर आधारित है। हमारे लोग हजारों की तादाद में फांसी पर चढ़ जाने के बावजूद उनकी कोई पूछ नहीं। सभी बातें 'लक्ष्मीबाई' की चमक के आधार पर चल रही हैं। इसलिए, युवकों, लेखनी को व्यापार का साथ दो, रुपया कमाओ, शरीर को मजबूत बनाओ। इन्हीं के सहारे राजनीति में तुम्हें यश मिलेगा। आज के भाषण में आपके लिए मेरा यही संदेश है।

उसके बाद डॉ. अम्बेडकर ने अपने समापन भाषण में कहा-

विष्णुपंत और मैं पूर्वपरिचित नहीं हैं, उनका संक्षिप्त परिचय मैंने हाल ही में पढ़ा है। उसके आधार पर मुझे दो-तीन बातें शिक्षाप्रद लगीं। पहली महत्वपूर्ण बात यह कि, शिक्षा में अपेक्षित सफलता न मिलने के बावजूद वह कभी निराश नहीं हुए, उन्होंने अपने लिए दूसरा कार्यक्षेत्र चुना। उसमें यश प्राप्त किया। दूसरी बात, उद्योग जगत् में उनका स्थान। रुपया न हो तो व्यक्ति की आजादी, समाज की आजादी, देश की आजादी जैसे शब्द कोई मायने नहीं रखते। अमेरिका इतना बलवान क्यों है? पैसों के कारण ही आज इंग्लैंड अमेरिका की मर्जी के अनुसार चलने लगा है। क्यों? इसलिए कि उसके पास पैसा नहीं है। अमेरिका से उसे पैसे मांगने पड़ते हैं।

हालांकि, विष्णुपंत के इस मत से मैं सहमत नहीं हूं कि पैसा कमाने के लिए ब्रह्मचर्य की जरूरत होती है। यह अगर सही होता तो कहना पड़ता कि सभी मारवाड़ी और गुजराती ब्रह्मचारी हैं! एक हाथ से खाते हुए वे दूसरे हाथ से कमाते दिखाई देते हैं। उनके पास न विद्या है, न कला। लेकिन अपने और अपनी सात पीढ़ियों के कल्याण के लिए वे अर्थसंचय करते हैं।

छोटे उद्योगों के सहारे महाराष्ट्रीयन लोगों का कल्याण नहीं हो सकता। बड़े उद्योग वे शुरू नहीं कर सकते। अन्य प्रांतों तथा विदेशियों द्वारा हो रही लूट को रोकने के लिए राष्ट्रीय समाजवाद को स्वीकारने का एक ही मार्ग आज देश के सामने उपलब्ध है।

गरुड़ : 20 अप्रैल, 1946

245

प्रोफेसर अध्ययन, अध्यापन और अनुसंधान कामों के लिए ही समर्पित रहें

भाषण की तारीख न दिए जाने के कारण नवयुग के अंक की तारीख के अनुसार स्थान दिया है।

–संपादक

मुंबई के सेंट झेवियर्स कॉलेज के पुरातत्व अनुसंधान और पुराण–इतिहास इस विषय के विद्वान प्रोफेसर रेव्हरंड फादर हेरास का सिद्धार्थ कॉलेज में *महें-जो-दारो(मोहन जोदड़ो) के लेखों का पठन* विषय पर भाषण हुआ। उस दिन डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने प्रोफेसरों के अनुसंधान कार्य के बारे में विवेचन किया। उन्होंने कहा–

फादर हेरास ने अपार मेहनत से महें–जो–दारो में मिले सिक्कों और ईंटों पर की लिखावट कैसे पढ़ी जाए इस विषय पर अध्ययन किया। हर किसी को इस बारे में आनंद, गर्व और आश्चर्य की अनुभूति होगी इसमें दो राय नहीं। मेरे मन में कई सवाल आए कि जिस प्रकार फादर हेरास ने अपना पूरा ध्यान इस विषय पर केंद्रित किया और बेहद महत्वपूर्ण अनुसंधान किया उसी प्रकार का अनुसंधान हमारे हिंदी विषय के प्रोफेसरों ने क्यों नहीं किया? क्या ऐसे विषयों में उनकी रुचि ही नहीं है? या फिर उनके पास इस काम के लिए जरूरी विद्वत्ता नहीं? या कि, साधन सामग्री की कमी है? आज, इन बातों के क्या कारण हो सकते हैं इस पर जरा बारीकी से हम सोचेंगे।

मुझे लगता है कि *थोड़े रुपए कमाएं और सुख से जिएं* के अलावा हमारे प्रोफेसर्स के मन में और कोई महत्वाकांक्षा ही नहीं है। महत्वाकांक्षा के अभाव में ही उनके हाथों कोई महत्वपूर्ण काम शायद नहीं हो पाता। कभी–कभार वे पाठ्यपुस्तकों पर नोटस् लिखते हैं। नोटस् लिखने के अलावा और कोई महत्वपूर्ण काम हो सकता है इस बारे में पता नहीं वे जानते भी हैं या नहीं!

तभी एक प्रोफेसर ने कहा, 'हम प्रोफेसर्स आजकल के विश्वविद्यालयों में मिलने वाली शिक्षा की ही उपज हैं। इसीलिए, इस बारे में प्रोफेसरों को नहीं वरना विश्वविद्यालय की शिक्षा पद्धति को ही दोष देना होगा।'

तब डॉक्टर अम्बेडकर ने कहा, 'मैं मानता हूं कि हमारे विश्वविद्यालयों की शिक्षा

नवयुग : अम्बेडकर विशेषांक, 13 अप्रैल, 1947

पद्धति के कारण श्रेष्ठ प्रोफेसरों का निर्माण कठिन हुआ है। हममें से कई प्रोफेसरों को शेक्सपियर के नाटक या काव्य कॉलेजों में पढ़ाने पड़ते हैं। यह विषय पढ़ाने की शुरुआत जबसे हुई है तबसे हमारी युवा पीढ़ी को या भारत को किस प्रकार फायदा पहुंच रहा है? मुझे लगता है, कोई फायदा नहीं होता। मैं भी कभी-कभी नींद न आए तो शेक्सपियर या काव्य वगैरा पढ़ता हूं। नहीं पढ़ता ऐसी बात नहीं है। लेकिन वह केवल समय काटने के लिए। उस विषय पर मैं सोच नहीं सकता।

हमारे कॉलेजों में आजकल एकदम साधारण स्तर की शिक्षा दी जाती है। मानता हूं कि, बी ए की परीक्षा तक स्कूल के अध्यापक बच्चों को पढ़ाते हैं उसी पद्धति से शिक्षा दी जाती है। ऐसा नहीं कि उसमें हम सुधार नहीं ला सकते। मुंबई शहर में ही आर्टस् और साइंस विषय पढाने वाले छह बड़े-बड़े कॉलेज हैं। आजकल के चलन के अनुसार हर कॉलेज विश्वविद्यालय से जुडा हुआ है लेकिन इसके बावजूद उनका अस्तित्व अलग विद्यालय की तरह ही है, है ना? इससे होता यही है कि इन छहों महाविद्यालयों में अलग-अलग प्रोफेसरों के द्वारा एक ही विषय बार-बार पढ़ाया जाता है। इससे एक ही काम की निरर्थक पुनरावृत्ति होती है। लेकिन, मान लीजिए कि इन विषयों के बजाय अगर हम ऐसा करें कि, एलफिन्स्टन महाविद्यालय में केवल इतिहास और अर्थशास्त्र यही विषय पढ़ाए जाने की व्यवस्था करें और जो प्रोफेसर इन विषयों को पढ़ाना चाहें उन्हें केवल एलफिन्स्टन कॉलेज में ही भेजा जाए तो एक ही विषय के 7-8 प्रोफेसर्स एक जगह मिलेंगे। फिर उनके काम को हम सहज ही विभाजित कर पाएंगे। एक प्रोफेसर 'प्राचीन भारत' पर भाषण देंगे। एक अन्य प्रोफेसर- 'बुद्ध का समय और ईसामसीह युग' का प्रारंभ विषय पर भाषण देंगे। तीसरे प्रोफेसर 'मुस्लिम युग' विषय पर भाषण देंगे। चौथे 'मराठों का युग' विषय पर और पांचवें प्रोफेसर 'अंग्रेजों का युग' विषय पर भाषण देंगे। इससे विषयों का अच्छा बंटवारा होगा और हर प्रोफेसर को अपने विषय का पूरा अध्ययन करने की फुरसत मिलेगी। इससे हर प्रोफेसर को अपने विषयों पर अनुसंधान करने की तैयारी के लिए ज्यादा समय मिलेगा। मुंबई विश्वविद्यालय में अन्य सुधार होने के इंतजार में बैठे रहने की बजाय पहले हम इस एकदम सादे से सुधार को तुरंत लागू करें। हर कालेज एक-दो विषयों के लिए ही अपने को समर्पित रखे। इससे उस कॉलेज में उस विषय से संबंधित सभी ग्रंथ इकठ्ठा हो पाएंगे। आवश्यक वस्तुओं का संग्रहालय भी पास ही रखने की व्यवस्था भी की जा सकेगी। सभी कॉलेजों के प्रोफेसरों को अलग-अलग तनख्वाह न देते हुए विश्वविद्यालय की ओर से ही सबकी एक-सी तनख्वाह तय की जाए। इससे आज की तरह अलग-अलग न होकर सरकारी कॉलेज और निजी कॉलेज के प्रोफेसरों की तनख्वाह एक-सी होगी। तनख्वाह की समस्या दूर होने तथा काम के उचित बंटवारे के बाद शिक्षा देने का काम और अनुसंधान कार्य तेजी से शुरू होगा।

मेरा मानना तो यह है कि, प्रोफेसर अपने अध्ययन और अध्यापन के काम में अपने को इस तरह समर्पित कर लें कि अपने घर का खयाल रखने तक के लिए उनके पास फुर्सत न हो। वह काम पूरी तरह उनकी पत्नी के ही सुपूर्द हो। प्रोफेसर बेकार के काम अपने जिम्मे लेकर अपनी जिम्मेदारियां बढ़ाएं यह मुझे मंजूर नहीं। अध्ययन–अध्यापन में अनुसंधान भी शामिल है। इन तीन बातों के अलावा प्रोफेसरों को कोई अन्य काम नहीं करना चाहिए।

246

देश की आजादी के मार्ग में बाधाएं उत्पन्न करना मेरी नीति नहीं है

दिनांक 14 अप्रैल, 1947 के दिन मान्यवर डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के 55वें जन्मदिन के उपलक्ष्य में बहुसंख्य अस्पृश्यों ने चमक-दमक के साथ डॉ. बाबासाहेब का सार्वजनिक सम्मान किया। इस अवसर पर दलित वर्ग को संबोधित करते हुए डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने कहा-

अखिल भारत की दलित जनता को अपनी विकृत स्थिति के बारे में अहसास होने के कारण अब वह अपने जीवन को परिपूर्णता की दिशा में ले जाने के लिए संगठित होकर चल पड़ी है। अब उसका भविष्य उज्ज्वल बनेगा यह सोच कर मैं आनंद-विभोर हो जाता हूं। उस दिन वॉइसरॉय को मैंने साफ शब्दों में कह दिया, ''आपने अगर मुझे बुलाया नहीं होता तो मैं आपसे मिलने आता ही नहीं। अंग्रेजों के पीछे भागते फिरने की मेरी इच्छा नहीं।'' किसी जमाने में दलित समाज के सुख संवर्धन की जिम्मेदारी अंग्रेजों ने खुद कंधों पर ली थी। उस वक्त मुझे लगा था कि अंग्रेज अपनी बात को सच कर दिखाएंगे, अपनी जिम्मेदारी पूरी करने के लिए कदम आगे बढ़ाएंगे। लेकिन ऐसा हुआ नहीं। अंग्रेज भारत छोड़ कर जा रहे हैं इसकी मुझे बिल्कुल फिक्र नहीं है, लेकिन हमें संविधान में जो रियायतें चाहिए थीं उनके बारे में बिना कुछ किए ही वे जा रहे हैं। उनका यह बर्ताव सही है या नहीं इसका फैसला वे खुद ही करें। अस्पृश्यों की हितरक्षा की कुछ व्यवस्था करने की जरूरत के बारे में मैंने उन्हें सौ बार बताया था। अंग्रेज अगर यह काम नहीं भी करते तो छह करोड़ अस्पृश्यों का भाग्य उज्ज्वल होने का मुझे पूरा यकीन होने की बात भी मैंने उनसे कही थी। मजदूर सरकार हमारे न्याय अधिकार अगर हमें नहीं भी दे, 6 करोड़ की जनसंख्या वाला अस्पृश्य वर्ग किसी प्रकार के सहयोग या ताकत की परवाह किए बगैर भी मनचाहा प्राप्त कर ही लेगा, इस बारे में मेरे मन में कोई आशंका नहीं।

जागरुकता और संगठन के अभाव में हम अब तक दूसरों का वर्चस्व सहते आए, लेकिन अब वह समय लद गया। अब हममें नवशक्ति का संचार हुआ है। भारत का हर व्यक्ति यह जानता है। इसीलिए काँग्रेस और लीग अपनी-अपनी तरफ से हमारा समर्थन प्राप्त करने की कोशिश में लगे हुए हैं। इसकी एक ही वजह है- फौलादी संगठन।

अरुण : 9 जून, 1947

1948 के जून महीने में भारत छोड़ने की अंग्रेजों की घोषणा के कारण हमारी स्थिति और मुश्किल हो गई है। इसका खयाल आते ही इस बात की कल्पना भी नहीं की जाती कि हमारा आगे क्या होगा। स्थितियां ऐसी भी हो सकती हैं कि अंग्रेजों को यहीं रहना पड़े। हमारे संविधान के तहत सुरक्षा की मांग अंग्रेजों की घोषणा के बाद पीछे छूट गई जैसा भले लग रहा हो लेकिन...

हमें अपनी समस्याओं पर ध्यान देने के लिए मजबूर कर अपने राजनीतिक अधिकार लेने में और उन्हें स्थापित करने में हमें जरूर सफलता मिलेगी इस बारे में आप यकीन रखें।

मुझे यह बताने में बहुत खुशी हो रही है कि मौलिक अधिकार नियामक कमेटी में हमें काफी सफलता मिली है। मौलिक अधिकारों के संदर्भ में मेरा बनाया मसौदा कमेटी को प्रस्तुत किया– वह स्वीकार किया गया है। केवल राज्य के कामकाज और नौकरी में श्रेणियां बनाने के सवाल पर थोड़ा विवाद हुआ। श्रेणियों का भेद टालने के कुछ उपाय मैंने सुझाए। उसमें भी मुझे सफलता मिलने के आसार लगते हैं। ऐसा हुआ तो कानून मंडल और कार्यकारी मंडल में हमें खूब सुरक्षा मिलेगी। खेद के साथ मुझे कहना पड़ रहा है कि आम दलित जनता जिससे सहमत नहीं ऐसा मसौदा अल्पसंख्यक उप–कमेटी के दो अस्पृश्य सदस्यों ने प्रस्तुत किया है। उनमें से एक ने मांग की है संयुक्त मतदाता संघ की (शेम शेम की आवाजें) दूसरे ने इससे आगे बढ़ कर संयुक्त मतदाता संघ में विभाजक मतदाता पद्धति की मांग की (फिर शेम शेम की आवाजें)। इस बारे में मुझे उम्मीद है कि उप–कमेटी के अन्य अल्पसंख्यक जमातों का मुझे सहयोग मिलेगा। कमेटी इन समस्याओं का निर्णय बहुमत के आधार पर लेगी या इस मामले पर सुलह की बात चलाएगी इस का मुझे सही अंदाजा नहीं है। लेकिन एक बात तय है कि अगर वे बहुमत के आधार पर निर्णय लेंगे तो संविधान समिति से मैं अपना संबंध तोड़ लूंगा (तालियां।) फिर क्या करना है हम तय करेंगे। राजनीतिक समस्याओं को हल करने के लिए हमें अपना दोगुना कर्तव्य निभाने की जिम्मेदारी निभानी है। पहला अपने लोगों के प्रति और दूसरा अपने देश के प्रति। हम सब चाहते हैं कि हिंदुस्तान आजाद हो। मुझे इस बात का अहसास है कि मंत्री योजना में हमारी उपेक्षा की गई है लेकिन इस कारण हमें देश की आजादी की राह में रोड़े नहीं अटकाने हैं। हिंदुस्तान को सहजता से आजादी पाने की कोशिश करना आसान होना चाहिए। इसी भावना और अहसास के साथ मैंने आज तक कई भाषण किए हैं। लेकिन इसके साथ ही मैं यह भी निश्चयपूर्वक कह सकता हूं कि मुझे पूरा यकीन है कि राजनीतिक अधिकार सुरक्षित करते हुए अगर 6 करोड़ अस्पृश्यों को संरक्षण नहीं दिया गया और अस्पृश्यों की इच्छानुसार रियायतें देने के लिए काँग्रेस ने अपनी रजामंदी नहीं दर्शायी तो संविधान समिति से निकलने के मेरे

द्वारा उठाए गए कदम के लिए कोई मुझे दोषी नहीं ठहराएगा। 296 सदस्यों की संविधान समिति में मैं केवल अकेला हूं। व्यक्ति चाहे जितना बड़ा क्यों न हो, उसमें असामान्य बुद्धि, और विवाद की अतुलनीय सामर्थ्य ही क्यों न हो वह अगर अकेला हो जाए तो कुछ कर नहीं सकेगा यह बात आप सब लोग भी ध्यान में रखिए। 211 सदस्य अगर मिल कर तय करते हैं कि किसी बात की यथार्थता को बौद्धिक या वैचारिक कसौटी पर परखे बगैर ही, केवल विरोधक को मार गिराने के लिए ही विरोध करना है तब अकेला व्यक्ति क्या कर सकता है?

आखिर में बस मैं यही उम्मीद करता हूं कि सबकी सद्बुद्धि जागृत होकर उन्हें इन बातों का अहसास होगा और खुद को जो प्राप्त करना है वह प्राप्त किया जा सकेगा। इसके लिए हमें केवल संगठन की जरूरत है। अपनी लगातार कोशिश से हमें जो राजनीतिक अधिकार प्राप्त होंगे वे केवल एक निश्चित समयावधि के लिए ही होंगे यह बात भी ध्यान में रखनी होगी। हिंदुस्तान में एक समय ऐसा आएगा जब केवल हमारे ही नहीं बल्कि सभी समाजों के आरक्षित अधिकार नष्ट किए जाएंगे क्योंकि तब उनकी जरूरत समाप्त हो जाएगी। जब यह होगा तब हमें अपने संगठन, शक्ति और एकता के बल पर निर्भर करना होगा। इसीलिए अभेद संगठन निर्माण करने का निश्चय पक्का करें।

आपकी उन्नति कष्ट और परेशानियां सहने में ही है इसलिए विपत्तियां आने पर धीरज ना खोएं। उसी से आपमें दिव्य तेज पैदा होगा। यही एकमात्र संदेश मैं आपको देना चाहता हूं। कुछ गांवों में दलितों पर होने वाले अत्याचारों और अन्यायों के कारण आप अपनी हिम्मत न हारें। पूरी तरह संगठित होने के निश्चय से प्रेरित होकर नई उमंग के साथ, खुशी-खुशी और पूरे उत्साह के साथ निरंतर कार्य करने की राह पर आगे बढ़ेंगे तो इस देश के किसी भी तरह के दुख-दर्द से आपको डर नहीं लगेगा।

247

अस्पृश्य मजदूर बिना किसीकी बातों में आए अपने संगठन को मजबूत करें

मुंबई के एच. एम. आई. डॉकयार्ड के अस्पृश्य कामगारों की ओर से डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को 1001 रु. की थैली अर्पण करने का समारोह एस. एस. मोकलसाहब की अध्यक्षता में मंगलवार दिनांक 27 मई, 1947 को शाम 6 बजे सिद्धार्थ कॉलेज में बडी धूमधाम से मनाया गया। इस समारोह में भाई ए. वी. चित्रे, मुंबई शहर शेड्यूल्ड कास्ट्स् फेडरेशन के महासचिव श्री भातनकर आदि लोग उपस्थित थे।

अस्पृश्य कामगारों के लिए किए गए कार्यों की विस्तृत जानकारी कार्यक्रम की शुरुआत में अस्पृश्य कामगार संघ के अध्यक्ष ने दी। बाद में डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को थैली अर्पण की गई। जवाब देने के लिए डॉ. अम्बेडकर खडे हुए तब तालियों की गड़गड़ाहट हुई। सभा में ढाई-तीन हजार लोग उपस्थित थे।

डॉ. अम्बेडकर ने कहा -

आज भाषण करने का मेरा कोई इरादा नहीं है क्योंकि आपके काम से मैं संतुष्ट नहीं हूं। लेकिन परम्परा के अनुसार मुझे आपके प्रति आभार प्रकट करने होंगे। गोदी में तीन से चार हजार अस्पृश्य कामगार होने के बावजूद सामाजिक कार्य के लिए केवल एक हजार रुपए ही इकठ्ठा हों यह बड़े आश्चर्य की बात है। मैं जब मजदूर मंत्री था तब गोदी के कामगारों को पांच-छह बार तनख्वाह में बढ़ोतरी मिली। दारू पीना, फिल्में और नाटक देखने जैसी लतों पर खर्च करने के लिए आपके पास बहुत पैसा होता है लेकिन सामाजिक कार्य में मदद देने के लिए आप ना-नुकर करते हैं। खैर!

नौकरियों में मुसलमानों के लिए 25 प्रतिशत जगहें देना 1934 में तय हुआ। उस वक्त अस्पृश्यों के लिए कोई आरक्षण नहीं था। लेकिन प्रांतीय और भारत सरकार के साथ बड़ी लड़ाई छेड़ कर मैंने अस्पृश्य वर्ग के लिए सरकारी नौकरियों में आठ पूर्णांक एक तिहाई प्रतिनिधित्व दिलाया। आगे 1942 से 1945 के आखिर तक जब मजदूर मंत्री के पद पर था तब मैंने अस्पृश्य वर्ग के लिए ढेर सारी नौकरियां उपलब्ध कराईं। अपने पद का इस्तीफा देने से एक दिन पहले ही मुझे पता चला कि भारत सरकार ने अस्पृश्यों के लिए सरकारी नौकरियों में जनसंख्या के अनुपात में बारह पूर्णांक दो तिहाई प्रतिशत आरक्षण की व्यवस्था की है। यह सब मैंने ही लड़-झगड़ कर

गरुड़ 15 जून, 1947

आपके लिए हासिल किया है। अब इस सुविधा को हासिल करना आपका काम है। इसके लिए आपको हमेशा संगठित रहना होगा। आपका संगठन अगर मजबूत नहीं होगा तो सरकार द्वारा आपके लिए बनाई जाने वाली योजनाओं का आप लाभ नहीं ले पाएंगे। इसीलिए, अस्पृश्य कामगारों को चाहिए कि वे देश के हालात की तरफ ध्यान देते हुए अस्पृश्य कामगार हितवर्धक संगठन को मजबूत बनाएं। काँग्रेस, कम्युनिस्ट आदि किसी की बातों में न आकर गोदी के अस्पृश्य कामगार संघ के प्रमुख लोगों के मार्गदर्शन में अपनी लड़ाई में जीत हासिल कीजिए।

डॉ. अम्बेडकर साहेब का भाषण पूरा होने के बाद श्री जी. के. भालेराव और श्री एस. बी. शेडवईकर आदि नेताओं के प्रसंगानुसार भाषण हुए और जयभीम की जयकार की गूंज के साथ सभा का विसर्जन हुआ।

248

मुझे ऐसे कार्यक्षम लोग चाहिएं जिनकी क्षमता के बारे में मुझे भरोसा हो

मंबई में 22 जून, 1947 के दिन सिद्धार्थ कॉलेज के मैदान में डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर की अध्यक्षता में श्री दादासाहब गायकवाड़ को थैली अर्पण की गई। उस वक्त डॉ. बाबासाहेब ने कहा,

दादासाहब गायकवाड़ को दी जा रही राशि देख कर मुझे गुस्सा आ रहा है। मुझे पहले अगर इस तुच्छ बात का पता चलता तो मैं यहां नहीं आता। यहीं अगर रुपया इकठ्ठा किया जाए तब भी एक हजार की रकम बड़ी आसानी से जुट जाएगी। 352 रुपया देना शर्म की बात है। सामाजिक समर्पण को यह शोभा नहीं देता। जो देना हो वह पूर्ण निष्ठा भाव से दीजिए। इस प्रकार जबरदस्ती कुछ करने के लिए किसने कहा आपसे? अगर किसी को कुछ देना हो तो उस व्यक्ति की हैसियत के अनुसार दो।

कोकणी पंचायत के बारे में बोलते हुए उन्होंने पंचायतों को काफी सुनाया और कहा कि, इसके बाद अगर कोई पंचायत बिना वजह रुपया अपने पास रखती है तो उस पर मैं मुकदमा दायर करूंगा। इस बुरी आदत को खत्म करने के लिए कोई कठोर कदम होना ही चाहिए।

मुझे कार्यक्षम लोग चाहिएं। उनकी क्षमता के बारे में मुझे यकीन होना चाहिए। सचिव पर जिनके आरोप हैं वे मुझे अपनी शिकायत के बारे में समझाएं और यकीन दिलाएं। मैं उस जगह पर उन्हें नियुक्त करूंगा। मुझे काम से मतलब है। इलेक्शन से नहीं। मुझे क्षमतावान लोग चाहिएं।

अपना कोंकण प्रांत शिक्षा के क्षेत्र में पिछड़ा हुआ है। इसलिए मैं उसे शिक्षा सुविधाएं उपलब्ध कराने के बारे में सोच रहा हूं। मुंबई सरकार से जमीन की मांग की है। दापोली में बच्चों की शिक्षा के लिए बोर्डिंग खोलना है। इसलिए आप उन्हें तन, मन, धन से मदद करें। इस कार्य में 20 हजार रुपये लगेंगे।

गरुड़ : 29 जून, 1947

249

दुनिया के न्यायालय के समक्ष अंग्रेजों को जवाब देना होगा

मुंबई में 7 जुलाई, 1947 के दिन भारत के महान राजनीतिज्ञ और संविधान विशेषज्ञ डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने नए आजादी बिल पर अपनी राय प्रकट करते हुए कहा, दो उपनिवेशों में भारत को विभाजित कर कुछ रियायतें बनाई जा सकती हैं लेकिन इन उपनिवेशों और रियासतों के बीच फूट के बीज बोना कतई समर्थनीय नहीं होगा। इस धूर्तता का जवाब अंग्रेजों को दुनिया के न्यायालय के सामने देना होगा।

सुधार कमीश्नर श्री मेनन ने परसों बताया कि व्यवहारिकता से वर्हाड मध्यप्रांत का ही एक हिस्सा है। श्री मेनन का मत अगर सही है तो वर्हाड की जनता को विशेष संतोष होगा। लेकिन यह मत नए बिल के दूसरी धारा की 7वीं उपधारा के अनुकूल नहीं। इस धारा के अनुसार 15 अगस्त, के दिन रियासतों का सार्वभौमिकित्व तथा अन्य सभी करार रद्द हो जाएंगे। इसलिए जिस करार के कारण वर्हाड प्रांत अंग्रेजों को मिला था वह करार भी रद्द होने वाला है। इसका मतलब, 15 अगस्त के बाद वर्हाड प्रांत फिर निजाम को मिलेगा। इस धारा में वर्हाड का साफ जिक्र नहीं है लेकिन इस धारा का रूप सामान्य होने के कारण अलग जिक्र की आवश्यकता नहीं। यह धारा वर्हाड प्रांत पर लागू न किए जाने की स्थिति में अलग जिक्र करना जरूरी होता।

वर्हाड की ही तरह अन्य संस्थानों के जो हिस्से करार के अनुसार ब्रिटिश हिस्सों में शामिल किए गए हैं वे भी इस धारा के तहत फिर रियासतों में जाएंगे। श्री मेनन द्वारा इस धारा का जो अर्थ लगाया गया है वह गलत है।

सरदार पटेल का कहना भी गलत है कि निजाम के साथ नया करार होने तक वर्हाड का जो स्थान अब है वही कायम रहेगा। प्रदेशों की अदला-बदली के संदर्भ में जो करार और चुंगी, पोस्ट, यातायात आदि के संदर्भ में किए गए करार आदि के बिलों में सुधार किए गए हैं। प्रदेशों से संबंधित करार इसके बाद निरस्त हो जाएंगे।

मेरा अर्थ अगर गलत हो तो मुझे सचमुच खुशी होगी। लेकिन कॉमन्स में एटली जब इस पर चर्चा करेंगे तब उनसे सवाल पूछ कर इस धारा के बारे में स्पष्ट करना भारत और वर्हाडी जनता के हित में रहेगा।

गरुड़ : 13 जुलाई, 1947

इस धारा के कारण जो परिणाम होंगे उन्हें ध्यान में राते समय मजदूर सरकार जिस प्रकार की आजादी दे रही है उस आजादी को पाकर कितने लोगों को खुशी होगी यह मैं कह नहीं सकता। अंग्रेज हमेशा दावा करते आए हैं कि हमने भारत में एकता पैदा की। किसी भी प्रकार का विवाद पैदा किए बगैर अगर वे यह एकता हमारे सुपूर्द की होती तो यह उनके लिए गर्व की बात साबित होती।

दुर्भाग्य से हिंदी जनता के हाथ में अविभाजित हिंदुस्तान वापिस न देकर यही एकता नष्ट करने की बात ब्रिटिश पार्लियामेंट ने तय की है और जिस वक्‍त अंग्रेज भारत में आए तब भारत जिस विभाजित रूप में था उसी स्वरूप में आज वह हमें वापिस मिल रहा है। भारत का दो उपनिवेशों में विभाजन करने के कुछ कारण होंगे। रियासतों और इन उपनिवेशों में फूट डालने की धूर्तता अगर अंग्रेज करते हैं तो दुनिया के समक्ष उन्हें अपनी इस करतूत का जवाब देना पड़ेगा।

250

समाज के विश्वासपात्र नेता बनें और समाज का सही मार्गदर्शन करें

मुंबई के सिद्धार्थ कॉलेज के छात्रावास के दलित छात्रों द्वारा 4 अक्तूबर, 1947 की शाम परमपूज्य सांसद डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को अल्पाहार के लिए आमंत्रित किया गया। भास्करराव भोसले ने औपचारिक भाषण दिया। उन्होंने संक्षेप में, और प्रभावशाली ढंग से अपनी बात रखी। उनके बाद डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने छात्रों से कहा –

हमारे छात्रों पर बहुत बड़ी जिम्मेदारी है। हमारी राजनीति की लड़ाई अभी खत्म नहीं हुई। उसके लिए शेड्यूल्ड कास्टस् फेडरेशन के झंडे तले सबको अपना संगठन बढ़ाना होगा। अपना आचरण शुद्ध रखते हुए अपने उद्देश्य को पाने के लिए जागरुक रहना होगा। आज की स्थिति में अगर अपनी मनोवांछा पूरी नहीं हुई तब भी हमें उसे प्राप्त करने के संकल्प के साथ आगे बढ़ना होगा। आपके लिए इस कॉलेज में मैंने कई तरह की सहूलियतें उपलब्ध कराई हैं। उनका लाभ उठाएं। आज राजनीति में हमारे दल की भले उपेक्षा की गई हो फिर भी भविष्य में हम अपना उद्देश्य प्राप्त कर लेंगे और अपने दल को विजय दिलाएंगे। इग्लैंड के मजदूर पार्टी का उदाहरण अपनी आंखों के आगे हमेशा रखें। वह बहुत छोटा दल था और उसे कदम-कदम पर हार का सामना करना पड़ा था। लेकिन अपनी लगातार कोशिश के कारण आज वह दल सत्ता में शामिल है। कॉँग्रेस में शामिल हुए दलितों ने हमें धोखा दिया है। इसीलिए, मैं आपको आदेश देता हूं कि इन हालात के बारे में समग्रता से सोच कर वर्तमान स्थितियों के साथ टक्कर लेने के लिए आप अपने समाज के नेता बनें और समाज का उचित मार्गदर्शन करें।

डॉ. बाबासाहेब के भाषण के बाद आयु. बी. सी. कांबले ने सबके प्रति आभार प्रकट किया और डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर की जयकार की गूंज से कार्यक्रम संपन्न हुआ।

गरुड़ : 12 अक्तूबर, 1947

251

अल्पसंख्यकों को समझना ही चाहिए, अधिकार के नाम पर उन पर अत्याचार न करें

भारत सरकार के विधि मंत्री और भारतीय अस्पृश्यों के महान नेता डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर हाल ही में मुंबई आए थे। उस दौरान मुंबई के सिद्धार्थ कॉलेज में दिनांक 10 अक्तूबर, 1947 के दिन उन्होंने छात्रों को मार्गदर्शन करते हुए विद्वतापर्ण भाषण दिया। उन्होंने कहा –

अध्यक्ष महोदय और सभागृह में उपस्थित सदस्यों,

इस महत्वपूर्ण अवसर के लिए योग्य भाषण तैयार करने के लिए जितना समय देना जरूरी था उतना देना मेरे लिए लगभग असंभव था, इसका मुझे खेद है। क्योंकि यह समय देश के राजनीतिक जीवन में अत्यंत महत्वपूर्ण है।

अब तक हम में से ज्यादातर छात्र राजनीतिक आंदोलनों की ओर ध्यान देने लगे हैं यह सही है, लेकिन उसे राजनीति क्या है, राजनीति में क्या जिम्मेदारियां उठानी पड़ती हैं और राजनीतिक मामलों में सफलता पाने के लिए किन मार्गों को अपनाना पड़ता है इसका वास्तविक अहसास नहीं है। विश्वविद्यालयीन जीवन, जीवन के असली सवाल और राजनीति में कोई मेल नहीं था। आप जब कहते हैं कि हमने जीवन के एक नए क्षेत्र में प्रवेश किया है तब मुझे आपसे यह उम्मीद होती है कि आपने इस कॉलेज के छात्रों की पार्लियामेंट की स्थापना की है और उसके जरिए आपको जो बातें हासिल करनी हैं वे हैं –

1. अपने मन का विकास, उद्देश्य को विस्तार देना, सोचने की क्षमता बढ़ाना, कठिन सवालों को सुलझाने की अपनी शक्ति बढ़ाना।

2. इस प्रकार आपको प्राप्त शक्ति्त, योग्यता, लक्ष्य, ताकत का इस्तेमाल इस देश की जनता के सामने उपस्थित विकराल समस्याओं को हल करने के लिए करना।

और यह कोई आसान बात नहीं है। पढाई के कमरे में आराम से बैठकर अथवा विज्ञान की प्रयोगशाला में बैठे–बैठे ऐसे सवाल हल नहीं हुआ करते। ये काम उतने आसान नहीं हैं। इनको हल करने के लिए इससे अधिक कुछ करने की जरूरत होती है। आप यहां राजनीति विज्ञान, इतिहास, व्यापार, आयात–निर्यात, मुद्रा और हम लोगों के

गरुड़ : 26 अक्तूबर और 2 नवंबर, 1947

जीवन में महत्वपूर्ण जगह ले चुके जो अन्य विषय हैं, केवल उन्हीं का अध्ययन नहीं करने वाले हैं, बल्कि, जो ज्ञान आप पाएंगे उसके सहारे आप न केवल अपने आपको, बल्कि इस देश का सफल नेतृत्व करने वाले राजनीतिज्ञों की भी मुश्किल समस्याएं हल करने में मदद करने वाले हैं। उनसे कहां गलतियां हो रही हैं, यह आप बताएंगे। इसीलिए मैं कहता हूं कि कम से कम इस कॉलेज के छात्र – और मैं ऐसी उम्मीद करते हैं कि पूरे भारत के न सही, इसी इलाके के अन्य कॉलेजों के छात्र भी – आज एक नई दिशा की ओर बढ़ रहे हैं।

मुझे यकीन है कि आप इस पार्लियामेंट को केवल मनोरंजन का साधन नहीं समझेंगे। कुछ युवाओं को अति उत्साह में लगता होगा कि किसी की बुराई करने या हंसी–मजाक उड़ाने के लिए यह जगह अच्छी है, लेकिन वे ऐसा न समझें। मैं उम्मीद करता हूं कि इस जगह के महत्व को आप समझें और उतनी ही गंभीरता से उसमें हिस्सा लें। और, मैं यह उम्मीद भी करता हूं कि, इस सभागृह में सरकार के सदस्य और विपक्ष के नेताओं के बीच ही नहीं तो सभी सदस्यों के बीच उपस्थित किए गए सवालों पर अपनी–अपनी क्षमता के अनुसार अध्ययनपूर्ण बहस हो।

इसके अलावा एक और बात का ध्यान आपको रखना होगा और वह बात है कि तानाशाही शासनप्रणाली में नौकरशाही या राजा के मतानुसार कानून बनाए जाते हैं और ऐसी जगहों पर बोलना अनावश्यक हो जाता है। सत्ताधीश हो या नौकरशाह हो उन्हें किसी के बोलने की ओर ध्यान देने की जरूरत नहीं होती क्योंकि उनकी इच्छा ही कानून होता है। लेकिन पार्लियामेंट में कानून बनाए जाते हैं और ये कानून भले लोगों की इच्छा के अनुसार ही बनाए जाते हैं लेकिन जिसके पास विपक्ष को अपनी तरफ खींच लेने की कला होती है वही अपने विरोधी मतों पर विजय भी पा सकता है। इस सभागृह में जो आपके विलाफ हैं उनके साथ मारपीट करके आप जीत हासिल नहीं कर सकते। इसी प्रकार अल्पसंख्यक लोग गुंडों को लाकर बहुसंख्यकों पर दबाव नहीं बना सकते। बहुसंख्यक भी अल्पसंख्यकों के साथ मारपीट नहीं कर सकते। इस सभागृह में जिन्हें अपनी बात मनवानी होती है वे केवल अपनी वाकपटुता के बलबूते पर ही मनवा सकते है। अपने विरोधियों को उसे बहस के जरिए ही अपनी ओर कर लेना होता है। बहस भले सौम्य हो या तेज, लेकिन हमेशा वह तर्क और विचारशील होनी चाहिए। इसीलिए, पार्लियामेंट जैसी संस्थाओं में सफलता पाने का गुर है सभागृह को अपने वश में करने की योग्यता। आपको महत्वपूर्ण विषयों पर चर्चा करने के लिए पूरी तैयारी के साथ सभागृह में आना होगा और सभागृह में भाषण देने की कला सीखने के लिए मेहनत करनी होगी। अपने अनुभव के सहारे कहूं तो यह कला सीखना कोई कठिन काम नहीं है। मैं खुद कोई बहुत बड़ा वक्ता नहीं हूं। और मान लीजिए अगर किसी ने भारत की राजनीति में हिस्सा लेने वालों में से अच्छे वक्ताओं की फेहरिस्त बनाने की सोची तब भी वह

मेरा नाम उस फेहरिस्त में किसी बलबूते शामिल नहीं कर पाएगा, और मुझे यह सम्मान पाने की लालसा नहीं है। एक समय ऐसा था कि मुझे अपने संकोच से छुटकारा पाने की फिक्र हुआ करती थी। मैं इस बात को लेकर इतना निराश था कि छात्र मेरा मजाक उड़ाएंगे यही सोच कर सिडनहॅम कॉलेज में मिली नौकरी छोड़ देने तक की सोची थी। लेकिन मैं आपको आश्वस्त करता हूं कि जिन्हें मेरी तरह डर सताता हो वे अपना डर त्याग कर भाषा पर प्रभुत्व पाने की कोशिश में लग जाएं। मेरे मतानुसार इसमें कठिन कुछ भी नहीं। इस सभागृह को अगर ढ़ग से चलाना हो तो अध्यक्ष के निर्णय का सम्मान करना शर्त है। अध्यक्ष के निर्णय पर आप किसी तरह की शंका को मन में न लाएं। अगर ऐसा कोई सवाल पैदा होता है और कोई पुराना संदर्भ उपलब्ध न हो तो या फिर तुरंत निर्णय करना अध्यक्ष के लिए असंभव हो तो अध्यक्ष खुद विभिन्न दलों के सदस्यों को उस प्रश्न पर अपने विचार व्यक्त करने और व्यक्त किए गए विचारों की छानबीन कर अर्थ बताने के लिए कहेंगे। किसी निर्णय के बारे में इस प्रकार छानबीन होने के बाद अध्यक्ष जो निर्णय करेंगे उसे आपको अंतिम वाक्य की तरह स्वीकारना होगा भले ही वह गलत क्यों न हो। कुछेक सालों का अपवाद छोड़ दें तो 1926 से लेकर 1946 तक के लगभग सभी सालों में मैंने पार्लिमेंटरी कामकाज में हिस्सा लिया है। उस अवधि में हर तरह के अध्यक्ष मैंने देखे। उनमें से कई अच्छे थे, कुछ नहीं, कुछ निष्पक्ष थे, कुछ योग्य थे, कुछ अयोग्य थे, कुछ संतुलित थे और कुछ अन्य गुण और अवगुणों से भरे थे लेकिन हमने उनके निर्णय का हमेशा सम्मान ही किया। असल में यह दुख की बात है कि पार्लियामेंट का काम कैसे चलता है इसका प्रत्यक्ष ज्ञान आपको मिल नहीं पाता। अगर आपको पेरिस, लंदन या अमेरिका जाने और उन जगहों के अधिवेशन देखने का मौका मिले तो इन तीन सभागृहों के मजेदार मतभेदों को देखने का अवसर आपको मिलेगा। आप पाएंगे कि पैरिस का सभागृह आश्चर्य का एक नमूना है। एक बार पैरिस के कनिष्ठ सभागृह में मुझे लगातार दो या तीन दिन जाना पड़ा था। वहां जो कुछ चल रहा था वह देख कर मुझे लगा कि क्रॉफर्ड मार्केट में और उस जगह में कोई फर्क नहीं है। उस सभागृह में लोग बार-बार यहां-वहां आवाजाही कर रहे थे और अनुशासन नाम की कोई चीज वहां नहीं थी। अध्यक्ष की बात कोई नहीं सुन रहा था सभी अनुशासन की अनदेखी कर रहे थे और बिचारे अध्यक्ष महोदय को शांति बनाए रखने के लिए बार-बार अपना हथौड़ा, और इसी काम के लिए बनाया गया लकड़ी का एक टुकडा टेबिल पर मारना पड़ता था। उनकी ओर किसी का भी ध्यान नहीं था। लेकिन लंदन के सभागृह में इसके बिल्कुल विपरीत तस्वीर आपको दिखाई देगी। वहां एक नियम है कि अध्यक्ष जब खड़े होते हैं तब वहां कोई और अपनी जगह खड़ा नहीं रहेगा। हर सदस्य को बैठे रहना होगा। उसी प्रकार सदन में जब एक व्यक्ति खड़ा हो तब कोई और अपनी जगह खड़ा नहीं रह सकता, हर किसी को बैठे रह कर उसको सुनना है।

कॉमन्स सभागृह में अध्यक्ष की अनुमति के बिना कोई सदस्य अपने भाषण की शुरुआत नहीं कर सकता। साथ ही अध्यक्ष पर कोई रोक नहीं होती कि वे फलां व्यक्ति को ही बोलने की इजाजत दें। वहां उनकी भाषा में एक उक्ति कही जाती है कि, ''अपनी नजर में आने वाले व्यक्ति को ही अध्यक्ष बोलने की अनुमति देते हैं।'' लेकिन इस उक्ति में एक छुपी बात है और उसके अनुसार हो सकता है अध्यक्ष किसी सदस्य की ओर देखें और उस सदस्य को भाषण के लिए आमंत्रित करने के बजाय केवल उसकी ओर देख कर आखें मिचकाएं। इसकी वजह भी साफ है। कई लोगों के साथ-साथ होने से अध्यक्ष हर सदस्य को जानते हैं, उनके अच्छे-बुरे गुणों को जानते हैं। अध्यक्ष को केवल उनके पारिवारिक जीवन के बारे में जानकारी नहीं होती, बाकी सब वह जानते हैं। इसी कारण अध्यक्ष लंबा, ऊबाऊ भाषण देने वालों को या उन सदस्यों को बोलने की अनुमति नहीं देते जिनकी बातों में महत्वपूर्ण मुद्दे नहीं होते।

पार्लिमेंटरी प्रजातंत्र जिसे कहा जा सकता हो ऐसा प्रजातंत्र आज हमारे यहां है। इस शब्द के क्या मायने होते हैं यह हम जानें। तानाशाह शासनप्रणाली और इस प्रकार के प्रजातंत्र का फर्क यही है कि तानाशाह शासनप्रणाली में कानून बनाने वाली सभा अथवा पार्लियामेंट नहीं होता। जनता की इच्छा का वहां कोई सम्मान नहीं होता। राजा अथवा तानाशाह ही सब कुछ होता है। जनता का प्रतिनिधित्व वह अपने पास ही रखता है। अपनी मर्जी के अनुसार वह राज चलाता है। जबरदस्ती अपने आदेश थोपकर जनता को उत्पीड़ित करता है। आज हम मजदूरों की तानाशाही का उदाहरण भी देखते हैं। इन दोनों में वैसे देखा जाए तो कोई फर्क नहीं है। बस इतना ही कि, यहां तानाशाहों ने मजदूरों का प्रतिनिधित्व किया है। लेकिन यहां भी तानाशाही अथवा किसी राजा की शासन व्यवस्था की तरह ही जनता की इच्छा का कोई स्थान नहीं होता। पार्लिमेंटरी प्रजातंत्र इन दो व्यवस्थाओं का स्वर्णिम संयोजन है। इस संस्था में कोई बुराई प्रवेश न करे इसलिए उसकी अच्छाइयों को मन में स्थान देना होगा। कई राजनीतिक दार्शनिकों ने इसकी अलग-अलग तरीके से व्याख्या की है। उनमें से एक व्याख्या के अनुसार कानून का राज्य अर्थात् पार्लियामेंटरी प्रजातंत्र। किसी समय उसकी यह खासियत मन में जगह बनाने लायक और संकेतात्मक हुआ भी करती थी। यूरोप से जब राजतंत्र हटा और उसकी जगह प्रजातंत्र ने ली तब यह सत्तांतर देखने वाली पीढ़ी को प्रजातंत्र की खासियतें मन में घर करने वाली और सांकेतिक लगी थीं। क्योंकि उससे पहले राजकाज निजी हुआ करता था। राजा अपनी इच्छा के अनुसार कामकाज चलाता और उसके बनाए कानून की सीमा से वह खुद बाहर रहता। कानून से वह श्रेष्ठ माना जाता, क्योंकि कानून जनता के लिए बनाया जाता उसके लिए नहीं। इसलिए कानून के जिस राज्य के हम नागरिक हैं, जिसकी खासियतों का हम लाभ उठाते हैं वह हमारे लिए एक सामान्य-सी बात है और उनसे अब हम इतने परिचित हैं कि उसकी इन खासियतों की ओर कभी हमारा ध्यान

ही नहीं गया। इसके बावजूद, प्रजातंत्र की खासियत ज्यों की त्यों हैं और वह यह कि, जो कानून बनाते हैं वे भी उसके दायरे में आते हैं।

किसी ने प्रजातंत्र की व्याख्या करते हुए कहा है कि बहुसंख्यकों का शासन यानी प्रजातंत्र। यह बात सही है कि अपने विधानमंडल में बहुसंख्यकों की राय से सभी सवालों के हल निकाले जाते हैं, लेकिन इस बात की ओर आप सावधानी से ही दखें, ऐसी मैं आपको सलाह देना चाहूंगा। क्योंकि यह बड़ी घातक बात है। बहुसंख्यकों की सत्ता का सिद्धांत केवल सहुलियत के हिसाब से ही माना गया है। इन सिद्धांतों को बहुत ज्यादा अहमियत मत दो। क्योंकि उससे कई सारे सिरदर्द पैदा होंगे। कुछ विशेष नजरियों से देखा जाए तो बहुसंख्यकों की सत्ता अन्यायपूर्ण होती है। इस बात को मैं विस्तार से कह सकता हूं। उदाहरण के तौर पर, आजकल हम संविधान बनाने के काम में लगे हुए हैं, मैं अध्यक्ष हूं। अल्पसंख्यकों के मौलिक अधिकारों को हमें सुरक्षा प्रदान करनी है। इसका मतलब यह कि अल्पसंख्यकों के कुछ मामलों में हस्तक्षेप करने का बहुसंख्यकों को कोई अधिकार नहीं। मौलिक अधिकारों का मतलब यही होता है। बहुसंख्यकों के अधिकारों पर इस प्रकार मौलिक अधिकारों के कारण प्रतिबंध लग जाते हैं। सच बात यह है कि, बहुसंख्यकों की सत्ता का सिद्धांत अनपेक्षित घटी घटना की बात है।

कॉमन्स सभागृह के इतिहास का अगर आप अध्ययन करेंगे तो आपके ध्यान में एक बात आएगी कि 1415 में कॉमन्स सभागृह में एक सूचना दी गई। उस पर विचार करने के लिए अनुकूल और प्रतिकूल राय रखने वाले अलग-अलग कमरों में गए। अध्यक्ष ने क्लर्क से 'हां' और 'नहीं' कमरे के सदस्यों की संख्या पूछी। क्लर्क जवाब के अनुसार हां वाले कमरे में 50 सदस्य थे और नहीं वाले कमरे में 20 सदस्य थे। इसके बाद अध्यक्ष हां वाले कमरे में गए और वहां सदस्यों से उन्होंने कहा कि वे ना वाले कमरे में जाकर वहां के सदस्यों को मनाएं और सभागृह में ले आएं और उनको जब वे ले आए तभी सूचना के बारे में लिया गया निर्णय बताया। इसका एक खास मतलब यह होता है कि अल्पसंख्यकों की भले मौन सहमति के साथ ही सही लेकिन उनकी सहमति के बगैर अध्यक्ष बहुसंख्यकों की ओर से निर्णय नहीं ले सकते। शुरुआत में इसी प्रकार चला करता था। आगे चल कर किन्हीं वजहों से बहुसंख्यकों द्वारा अल्पसंख्यकों को मनाए जाने की यह प्रथा खत्म हुई। इसलिए पार्लियामेंटरी प्रजातंत्र में सहूलियत के नजरिए से बहुसंख्यकों की सत्ता के तौर पर इस सिद्धांत को मान्यता भले दी हो, लेकिन उसका मतलब यह नहीं कि उस सिद्धांत के बल पर आप अल्पसंख्यकों पर अन्याय कर सकें या उन पर दबाव डाल सकें। इससे इस सभागृह में कई समस्याएं पैदा होंगी। इसके लिए आप अल्पसंख्यकों को मनाएं। उन पर आप कष्टकारी अधिकार न चलाएं।

वॉल्टर बगेहाट नाम के एक राजनीतिज्ञ दार्शनिक थे। उन्होंने पार्लिमेंटरी प्रजातंत्र की

व्याख्या करते हुए कहा है कि यह बहस करने वाली राज व्यवस्था है। मुझे लगता है कि यही बहुत बड़ा सत्य है। क्योंकि प्रजातंत्र में सब कुछ खुला होता है। परदे के पीछे से कुछ काम नहीं किया जाता। इसी प्रकार केवल एक व्यक्ति की इच्छा है इसलिए कुछ नहीं किया जाता। हर विषय सदन में प्रस्ताव, कानून अथवा सूचना के रूप में रखा जाता है और सदन में उस पर बहस की जाती है।

'क्लोजर' की परंपरा वाली पार्लियामेंटरी पद्धति हम लागू नहीं कर पाए यह बड़े खेद की बात है। इस व्यवस्था में एक बार पार्लियामेंट द्वारा अपने पक्ष के कुछ सदस्यों को 48-36 और 24 घंटों तक बोलने पर मजबूर कर ग्लॅडर्स्टन और लॉर्ड नॉर्थबुक को कैसे मुश्किल में डाला था यह किस्सा सुनाया गया है। इसी कारण क्लोजर पद्धति कैसे अस्तित्व में आयी यह भी बताया।

सभी विधानमंडलों में बहस पूरी करने के बाद सवाल-जवाब के लिए समय रखने का प्रावधान होता है और बहस के लिए भी काफी समय मिलता है। एक बात ध्यान में रखें कि पार्लियामेंट में जो चर्चा होती है उसका उद्देश्य केवल निर्णय लेना ही नहीं होता, उससे अधिक महत्व चर्चा का होता है। कॉमन्स में हुई बहस अगर ऊंचे स्तर की हुई और अगर उस विवाद को व्यवस्थित ढंग से अखबारों में प्रकाशित किया जाए तो उसके जरिए लोगों को राजनीति की शिक्षा पाने का एक अमूल्य अवसर मिलेगा, इसमें कोई शक नहीं और यही उसकी महत्वपूर्ण विशेषता है।

पार्लियामेंटरी पद्धति को स्वसत्ता राज्य पद्धति माना जाता है और यह सच भी है। लेकिन इससे महत्वपूर्ण बात यह होती है कि इस देश को जिसकी जरूरत है उस सुराज्य का आप कैसे निर्माण कर सकते हैं? यह एक बहुत ही महत्वपूर्ण सवाल है और इस बारे में आग्रह से एकाध पहलु को ही छूने वाली कोई बात मैं कहना नहीं चाहता। लेकिन मैं आपके सामने विचार के लिए एक-दो बातें रखना चाहूंगा। मेरी राय के अनुसार सुराज्य क्या होता है? आग्रह के साथ एक ही पहलु की बात करने वाले पक्ष को रखा न जाए। पूंजीवालों को पूंजीवादी राज्य व्यवस्था और खुले व्यापार के सिद्धांत में स्वर्ग दिखाई देगा, सामाजिक सत्तावादियों को समाजवादी पद्धति में सुराज्य व्यवस्था के अधिक गुण दिखाई देंगे। कई विभिन्न राय रखने वाले लोगों को उनकी पसंदीदा शासनप्रणाली सुराज्य के लिए योग्य लगेगी। अर्थात्, वास्तविकता यह है कि सुराज्य के बारे में कई तरह के मत हो सकते हैं। विविध वर्णों का, वंशों का हमारा समाज और इसके कारण पैदा होने वाली कई उलझी हुई विकट समस्याओं के हल ढूंढने के लिए कोई एकमात्र कारगर व्यवस्था का मिल पाना मुश्किल है। इसके लिए अलग-अलग उपायों की योजना करनी होगी। और मुझे लगता है कि, आपको यह बात अच्छी तरह ध्यान में रखनी होगी। अपने देश को इस बुरी स्थिति से मुक्ति दिलाने के लिए किसी एक ही कठोर कार्रवाई को

अपनाने से हमें बचना होगा। ऐसे कई उपाय होंगे और उन्हें लागू करते समय समाज को उपयुक्त सावधानी बरतनी होगी। समाज की बुनियाद मजबूत होनी चाहिए और उसका लक्ष्य विशाल। समाज की नजर संकीर्ण न हो और किसी एक सिद्धांत को श्रेष्ठ न माना जाए। समाज की उन्नति के कई उपाय हो सकते हैं और विभिन्न लोग अगर अलग-अलग उपायों में विश्वास करते हों तो स्पष्ट है कि देश में विभिन्न पक्ष होगे ही। मेरी राय में राजनीति में ईमानदारी का होना जरूरी है। जब ईमानदार लोग राजनीति में होगे तब ही प्रजातंत्र का सही-सही विकास होगा। मैं जानता हूं कि कई लोगों की राय में राजनीतिक पुरुष बेईमान होते हैं। इसके क्या मायने होते हैं? जिन्हें एक तरह का दर्शन ही समाज के उद्धार का उपाय है ऐसा लगता है वे उन लोगों से अलग ही रहें जिनका उस दर्शन के देश के उद्धारक होने में विश्वास नहीं होता। सुलह से बनी शासनप्रणाली कारगर नहीं होती। और यह बात सही है यह मैं आपको बेहिचक बताता हूं। क्योंकि शासन का मतलब ही निर्णय लेना होता है और जब तक समाज सत्तावादी (जिन्हें एक मन के और निश्चय के कहते हैं ऐसे लोग कि जिनका जीवन दर्शन एक ही है) राज्य की सत्ता में नहीं आते तब तक ऐसी राज्य व्यवस्था में आप, आपकी राय सही निर्णय नहीं ले सकते और न आप काम को जल्दी निपटा सकते हैं। पूंजीपति और समाज सत्तावादियों के मिले-जुले मंत्रिमंडल में किसी विषय पर अगर निर्णय लेना हो तो उन्हें अपने मतभेदों को पहले समाप्त करना होगा और दूसरे पक्षों से अनुमति लेने के लिए अपने सिद्धांतों की बलि चढ़ानी होगी। इस प्रकार लिए गए निर्णय भी जाहिर है कि न इधर के होंगे न उधर के। यानी, सही नहीं होंगे। इसीलिए, इस कॉलेज में पार्लियामेंटरी प्रजातंत्र की शुरुआत करने से पहले आपको एक-दूसरे के बारे में निश्चित ज्ञान, सही जानकारी और विचारों का पता चलना जरूरी है।

अब इस लड़ाई में किस की विजय होगी यह देखने के लिए समर स्थल पर उपस्थित रहने की कोशिश करते हैं। काँग्रेस और समाजवादी दोनों के लिए हमारे मन में एक-सी आत्मीयता है। अब देखते हैं कि कहां तक अंग्रेजी और समाजवादी लोग इस कसौटी पर खरे उतरते हैं। इस देश पर आने वाले मुश्किल के समय में आप देश की मदद करने के लिए सक्षम बनें यही हमारा उद्देश्य है।

252

राजनीति की लगाम शिक्षा के बगैर हाथ नहीं आनेवाली

बुधवार दिनांक 14 जनवरी, 1948 के दिन मुंबई के धोबीतलाव नाइट स्कूल के छात्रों की भाषण प्रतियोगिता समारोह शाम 8 बजे सिद्धार्थ कॉलेज में हुई। इस समारोह की दो बातें विशेष थीं जो सहज ही प्रकट हो रही थीं। पहली खास बात यह कि अंग्रेजी के ए. बी. सी. अक्षरों का विस्तार कैसे किया जाता है यह सीखने वाले इन छात्रों के इस कार्यक्रम के लिए डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर बड़ी आत्मीयता के साथ उपस्थित थे। दूसरी खासियत थी छात्रों में हीनभावना। दरिद्रता के कारण जिन युवकों को बचपन में ही मन मसोसकर स्कूल की सीढ़ियां उतर कर मिल–कारखानों की राह पकड़नी पड़ी थी ऐसे 350 युवक अब नौकरी करते करते इस नाइट स्कूल में पढ़ने लगे हैं। इन्ही छात्रों का यह कार्यक्रम था। अध्यक्षता करने पीपल्स एज्युकेशन सोसाइटी के वाइस चेयरमन डी. जी. जाधव को आमंत्रित किया गया था। परीक्षक समिति में आयु. हुदलीकर, आयु. केलसीकर और आयु. भास्करराव भोसले थे। भाषण प्रतियोगिता के लिए तीन विषय दिए गए थे . 1. अस्पृश्य युवकों के कर्तव्य 2. हिंदु धर्म के बारे में मुझे क्या लगता है? 3. फिल्में देखना अच्छा है या बुरा? नौ छात्रों ने इस स्पर्धा में हिस्सा लिया था और पुरस्कार जीते . 1. कु. हाटे 2. कु. कांबले और 3. कु. जाधव ने।

इस अवसर पर नाइट स्कूल के प्रबंधक, वाद–विवाद मंडल के सचिव और समारोह अध्यक्ष के भाषण हुए। उनके बाद तालियों की गड़गड़ाहट के बीच डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने अपना भाषण शुरू किया। उन्होंने कहा –

प्रिय मित्रों,

आज जो भाषण प्रतियोगिता का कार्यक्रम हुआ और उसमें जिन छात्रों ने हिस्सा लिया उनकी सोच और मेरी सोच में बहुत फर्क है, ऐसा मुझे लगता है। जिन्होंने इस प्रतियोगिता में हिस्सा लिया था उनका काम उत्सुकता जगाने वाला रहा ऐसा शायद खुद उन्हें भी नहीं लगता होगा। हालांकि, अपना भाषण अच्छा नहीं हुआ इसमें निराश होने जैसी कोई बात नहीं। हो सकता है यह आपका पहला ही अवसर हो। जिन्होंने कोशिश करके इतने बड़े जनसमुदाय के सामने बोलने का साहस किया वे सचमुच प्रशंसा के पात्र हैं।

भाषण एक कला है। बड़ी मेहनत करनी पड़ती है इस कला को सीखने में। कुछ

जनता : 17 जनवरी, 1948

लोगों में यह कला हो सकता है पैदाइशी हो। महाराष्ट्र में नामदार गोवले निष्णात वक्ता थे इस बारे में दो राय नहीं हो सकती। कोल्हापुर के राजाराम कॉलेज में नामदार गोवले प्रोफेसर के पद पर कार्य कर रहे थे। इस दौरान किसी वक्‌ता का वहां भाषण हुआ। मेहमानों के प्रति आभार प्रकट करने का काम आयु. गोखले को दिया गया था। आयु. गोवले अपना भाषण लिख कर लाए थे। इतना ही नहीं भाषण उन्होंने याद भी कर लिया था, लेकिन वे जब बोल रहे थे तब किसी ने कुछ इशारा किया और वे अपना भाषण भूल गए। 1–2 मिनटों में ही वे सभागार से बाहर निकल गए।

इस घटना ने उन्हें अच्छा सबक सिखाया। मेकॉले नामक एक लेखक की सारी किताबें याद करने की उन्होंने ठान ली। मेकॉले का पूरा साहित्य उन्होंने याद कर लिया। उनके कमरे में हर तरफ आईने लगे हुए थे। भाषण करते हुए वे अपने आपको आईने में देखा करते। भाषण करते हुए अपने हाथ, अपने बाल, अपनी मुद्राएं वे आईने में देखा करते।

आजकल मिस्टर चर्चिल को हाऊस ऑफ कॉमन्स में अंग्रेजी भाषा पर प्रभुत्व रखने वाला वक्‌ता माना जाता है। हाऊस ऑफ कॉमन्स में जाने से पहले वह भी अपना भाषण लिख कर तैयार रखते हैं। वह तात्कालिक पर बोलने वाले वक्ता नहीं हैं। श्रोताओं से आश्चर्योद्‌ग निकलें, अपने को कुशाग्रों में अग्रणी माना जाए इसलिए महत्वपूर्ण लोकोक्‌तियां वह अपने शर्ट के स्टिक कफ पर लिख कर ले जाते हैं। किसी के विरोध करने के बाद ही उनके भाषण में रंग चढ़ता है। मिस विकिलसन यह जानती थीं। तब लेबर पार्टी ने तय किया कि उनके भाषण का विरोध नहीं करेंगे ताकि उनके भाषणों की रंगत ही न बढ़े। इससे चर्चिल के भाषण एकदम असरहीन होने लगे।

इसलिए, आप लोगों को भी निराश होने की जरूरत नहीं है। प्रजातंत्र के युग में बेहतरीन भाषणकला की बहुत जरूरत है। जो बोलने की कला के सहारे दुश्मन का मन जीत लेता है वह महापुरुष होता है।

इस कला को आत्मसात करने के लिए बहुत मेहनत करनी चाहिए। मैं खुद भी पहले डरपोक था। एलफिन्स्टन कॉलेज में मैं जब प्रोफेसर था तब छात्रों के सामने भाषण देते समय शुरू–शुरू में मेरा मन भी डांवाडोल हुआ करता था। उच्चवर्णियों के आगे महार का बच्चा बोला तो उसका मजाक उड़ाया जाएगा ऐसा डर मुझे लगता था। बहस–मुबाहिसों में मैंने ज्यादातर हिस्सा नहीं लिया। उस वक्‌त मुझे लगता नहीं था कि मैं अच्छा बोल पाऊंगा। अंग्रेजी भाषा मैं अच्छी तरह लिख सकता हूं। कम से कम मुझे उस वक्त ऐसा लगता था। लेकिन कड़ी मेहनत और लगन को अपनाकर मैंने यह कला विकसित की है।

इस मामले में मैंने महती प्रयत्न किए हैं। 13–13 बार मैंने अपने भाषण लिखे हैं।

इससे बेहतर कोई भी कुछ अधिक बता नहीं पाएगा इस बारे में यकीन होने के बाद ही मैं अपना भाषण दिया करता था।

आज मैं जो कुछ थोड़ा-बहुत बोल लेता हूं वह सब मेरे पूर्वपरिश्रम का ही फल है ऐसा कहना पड़ेगा।

आज छात्रों के जो भाषण हुए उनमें मैं वाकपटुता नहीं तलाशता। मैं किसी और नजरिए से इनकी ओर देख रहा था। बताने लायक बात यह कि, सबकी भावनाओं में मुझे एक ही स्वर सुनाई दिया। 20 सालों तक किसानों की तरह मैंने खेती की, हल चलाया, कंकड़-पत्थर हटाए। आज उस जमीन में अंकुर उगा है यह देख कर मुझे बहुत खुशी हो रही है। अनगिनत लोगों के सामने मैंने भाषण दिया है, बहुत सारे लोग मेरा भाषण सुनने के लिए आते रहे हैं। उस वक्त कभी मुझे लगता कि मैं कहीं किसी बाबा की तरह का काम तो नहीं कर रहा हूं? आज युवाओं में जो जागरूकता देख रहा हूं तो लगता है कि वे समाज में कुछ स्थान हासिल करना चाहते हैं, सम्मान के साथ जीना चाहते हैं। अपने पुरखों की तरह कलंकित जीवन वे नहीं बिताना चाहते। सभी के भाषणों में मुझे यही स्वर सुनाई दिया।

शिक्षा और विद्या के बिना अपना उद्धार संभव नहीं। अपने जीवन में मैंने कई तरह के काम किए। राजनीति में मेरे जीवन का महत्वपूर्ण समय बीता। अभी राजनीति की लगाम उच्चवर्णियों के हाथ में है। लगाम को अपने ही पास रखने के लिए उच्चवर्णियों की कोशिश जी-जान से चल रही हैं। श्रेष्ठ दर्जे की मौके की जगहें हासिल करने के लिए जो शिक्षा चाहिए वह उच्चवर्णियों के अलावा अन्य किसी को अभी प्राप्त नहीं हुई हैं। कहा जाता है कि जिसके हाथ में पालने (झूले) की डोर होती है वही दुनिया का उद्धार कर सकता है। इसी प्रकार राजनीति की लगाम विद्या के बगैर अपने हाथ नहीं आने वाली। सत्ता को अपने कब्जे में करने के लिए कई लोगों की कोशिश जारी हैं, लेकिन उन्हें सफलता नहीं मिल पा रही। इस फर्क की जड़ यही है। इंजीनियर, कलक्टर आदि पद उच्चवर्णियों को केवल इसलिए मिलते हैं क्योंकि उनके पास विद्या है। सौ में से करीब-करीब 99 इंजीनियर, 99 कलक्टर उच्चवर्ण के होते हैं। सो, अपने मातहत की जगहे वे अपने ही लोगों को देते रहते हैं।

केवल क्लर्क बनने के लिए इस नाइट स्कूल का आपको लाभ नहीं मिलेगा बल्कि मौके की जगहें पाने के लिए भी आप काबिल बनेंगे। रात्रि के स्कूल की कोशिशें प्रशंसनीय हैं। इस स्कूल की मैं जितनी हो सके हर तरह से मदद करूंगा। नाइट स्कूल को सालाना 1000 रुपयों की ग्रांट देने का मैंने निश्चय किया है। साथ ही पाठ्यपुस्तकों के लिए जो 200-300 रुपयों की जरूरत पड़ेगी वह भी मैं दूंगा। अर्थात् जो-जो देना मेरे लिए संभव है वह सब कुछ दूंगा। आप सबको इस बात का लाभ उठाना होगा।

और एक बात, आप लोगों को साफ-सुथरा रहना होगा। यहां कुछ छात्रों को मैंने साफ-सुथरे कपड़े पहने हुए देखा। किसी मैगजीन के एक अंक में 'महार और उनके जगमगाते कपड़े' शीर्षक से एक लेख छपा है। असल में वह वस्तु-स्थिति नहीं बल्कि केवल प्रशंसा है। कहावत मशहूर है, *एकनूरआदमी,दसनूरकपड़ा* बाहर निकलते समय आपके कपड़े बिल्कुल साफ होने चाहिएं। आपका पहनावा देख कर ही लोगों के मन में पहले आपके बारे में आदर उत्पन्न होना चाहिए।

मेरा काफी पैसा कपड़ों पर ही खर्च होता है। शर्ट, पैंट कॉलर्स मेरे पास कितने हैं इसका खुद मुझे भी अंदाजा नहीं है। यह बात सच है कि मेरे पास दर्जनों कपड़े हैं। कई बार उन सबसे इतना ऊब जाता हूं कि लगता है सबकी नीलामी कर दूं।

जिस प्रकार आपको साफ-सुथरा रहना होगा उसी प्रकार आपको स्वाभिमान के साथ भी रहना होगा। 'पाटील, मैं आपके जूतेबराबर हूं' वाली सोच छोड़ देनी चाहिए। किसी से अपमान सहने के बजाय मैं मर जाना पसंद करूंगा - ऐसी आपकी सोच होनी चाहिए।

आपको खूब पढ़ना चाहिए। हर रोज एकाध किताब पढ़ने की आदत आपको डालनी चाहिए। इससे आपका ज्ञान भी बढ़ेगा और आपमें आत्मविश्वास पैदा होगा। अपनी नई इमारत खड़ी हो जाने पर 1000-2000 छात्रों का प्रबंध किया जा सकता है। दिन भर काम कर रात 8 से 10 बजे तक आप पढ़ाई करते हैं यह निश्चित ही प्रशंसनीय है। आप सबको सफलता मिले यही कामना मैं करता हूं।

253

धार्मिक कानून के खिलाफ धर्मनिरपेक्ष कानून की लड़ाई में धार्मिक कानून का पलड़ा भारी हो तो देश का विनाश अटल है

नई दिल्ली में लॉ युनियन के सालाना समारोह के अवसर पर 'हिंदू संस्कृति के पतन के कारण' विषय पर भाषण देते वक्त डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने कहा –

प्राचीन हिंदू समाज में 'भगवान ने कानून बनाया है' जैसी कई गलत धारणाएं प्रचलित थीं। इसी कारण किसी जमाने में जो हमारा राष्ट्र विकास के शिखर पर था वह प्रगतिशील नहीं रह पाया। धार्मिक कानून के खिलाफ धर्मनिरपेक्ष कानून की लडाई यहां भी हुई। दुर्भाग्य से यहां धार्मिक कानून की जीत हुई जो देश के पतन की एक प्रमुख वजह बनी।

हमारे प्राचीन समाज ने सामाजिक धारणा के इस दोष को दूर करने में आनाकानी की और आज यही उसके विनाश की वजह बनी है। मनु जैसे विषमतावादी विचारकों द्वारा जो प्रतिबंध तैयार किए गए थे उन्हीं से चिपके रहने की भारतीय समाज की मानसिकता रही। समाज की कमियों को सुधारना कानून का लक्ष्य होता है।

हमारे देश में संस्कृति में सुधार लाने का कार्य लगातार कभी हुआ नहीं। किसी जमाने में कुछ समाज और राष्ट्रों का इसीलिए विनाश हुआ क्योंकि वे प्रगतिशील नहीं बन पाए। भारत के इतिहास पर नजर दौड़ाएं तो यह बात सहज ही ध्यान में आएगी।

आम आदमी सोचता है कि आज की विधानसभा की रचना और कार्यपद्धति को हमने इंग्लैंड से लिया हुआ है। लेकिन अगर कोई हमारे प्राचीन ग्रंथ 'विनय पिटीका' पढ़े तो उसका यह भ्रम दूर हो जाएगा। विनय पिटीका के अध्ययनकर्ताओं को विधानसभा से संबंधित कुछ नियम पता थे। कइयों को लगता है कि प्रस्ताव न रखने से विधानसभा में उस विषय पर बहस नहीं होगी और वोट भी नहीं पड़ेंगे यह नई बात है, लेकिन यह एक सर्वमान्य गलतफहमी है।

लगभग सभी यह मानते हैं कि गुप्त मतदान की पद्धति हमने अंग्रेजों से ली है। यह भी गलत धारणा है। 'विनय पिटीका' में गुप्त मतदान की खास व्यवस्था का वर्णन है। इस पद्धति को उसमें 'सालपत्रकगृहे' कहा जाता था। इसमें पेड़ की छाल का मतपत्रिका के तौर पर इस्तेमाल किया जाता था। मुझे मानना होगा कि किन्हीं वजहों से हमने अपना

गरुड़ : 18 अप्रैल, 1948, भाषण की तारीख नहीं दी गई है।

यह राजनीतिक नजरिया खो दिया। विधानसभा जैसी लोगों की सहयोग पर आधारित संस्थाएं विनष्ट हुईं और हम एकतंत्री राजा के नागरिक बने। इसी कारण सुसंस्कृति ने अवनति की राह ली और अन्य समाज की तरह हिंदी समाज भी समय-समय पर पिछड़ता चला गया।

कानून बनाने का उद्देश्य होता है समाज के दोषों को दूर करना। यह हमारा दुर्भाग्य ही है, कि पिछले जमाने में नागरिकों ने समाज के दोषों को दूर करने के लिए कानून का इस्तेमाल ही नहीं किया। इसी कारण उनका विनाश हुआ।

इस देश में जितने विद्रोह हुए हैं उतने दुनिया के किसी भी राष्ट्र में नहीं हुए हैं। पोप की वर्चस्विता को हटाने के लिए यूरोप में झगड़े हुए उससे कई साल पहले भारत में धर्म आधारित कानून के खिलाफ धर्मनिरपेक्ष कानून का झगड़ा चल रहा था। दुर्भाग्य से भारत में धार्मिक कानून श्रेष्ठ माना गया। मेरी राय में उसके रूप में देश पर एक बड़ी आपत्ति आन पड़ी। उस जमाने के हिंदू समाज के अप्रगतिशील लोगों के बीच कानून में बदलाव नहीं किया जा सकता यह धारणा रूढ़ हो चुकी थी और मेरी राय में यही धारणा इस आपत्ति के आने की वजह है।

254

मैं पत्थर की तरह मजबूत हूं, पिघलने का डर मुझे नहीं, आपका हाल अलग है, आप ढेले की तरह बिखर जाओगे!

संयुक्त प्रांत शेड्यूल्ड कास्टस् फेडरेशन का 5वां अधिवेशन 24-25 अप्रैल को लखनऊ में आयोजित किया गया।

पिछले वर्ष इसी जगह शेड्यूल्ड कास्टस् फेडरेशन की ओर से राजनीतिक अधिकार पर मुहर लगाने के लिए और मनुष्यो की समानता के तथ्य को सार्वजनिक करने के लिए सत्याग्रह किया गया। 2000 से अधिक दलित महिला और पुरुषों ने इस सत्याग्रह में हिस्सा लिया था। लखनऊ में उन सबको गिरफ्तार कर कारागार में रखा गया था। संयुक्त प्रांत की अस्पृश्य जनता का यह बहुत बड़ा त्याग था। सत्याग्रह से मुक्त हुए महिला और पुरुषों की अब तक केवल एकमात्र भावनापूर्ण इच्छा थी कि दलितों को मुक्ति का मार्ग दिखाने वाले निर्भय नेता डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के दर्शन हों और जीवन को पवित्र करने वाला उनका उपदेश सुनने का पुण्य मिले। उनकी इस इच्छा और कोशिश के फलस्वरूप लखनऊ में डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का भाषण हो रहा था। उनका यह भाषण निःसंदेह अस्पृश्यों के आंदोलन में मील का पत्थर है।

आयु. गयाप्रसाद, ज से संयुक्त प्रांत शेड्यूल्ड कास्ट फेडरेशन की कोशिश से तथा बाल गोविंद, कन्हैयालाल सोनकर, चौधरी बुद्धदेव और मेवालाल सोनकर के सहयोग से अधिवेशन सफलतापूर्वक संपन्न हुआ। इस अधिवेशन में 10,0000 से अधिक दलित समुदाय उपस्थित था। ऑल इंडिया शेड्यूल्ड कास्टस् फेडरेशन के ज से राजभोज भी उपस्थित थे। आयु. गोपीचंद विप्पल (प्रेसिडेंट, संयुक्त प्रांत समता सैनिक दल), आयु. तिलकचंद कुरील (प्रेसिडेंट संयुक्त प्रांत शेड्यूल्ड कास्टस् फेडरेशन) वहां के मुख्य संगठनकर्ता और आधार स्तंभ हैं।

इस अधिवेशन को विशिष्ट कहने की दो वजहें हैं। पहली वजह यह कि इस अधिवेशन के जरिए दुनिया के सामने यह बात आ गई है कि काँग्रेस सरकार में अभी भी अस्पृश्यों के साथ ढाए जा रहे जुल्मों पर रोक नहीं लगी है और कांग्रेस अस्पृश्यों के प्रति गदगद प्रेम का ढिंढोरा पीट कर मूर्ख बना रही है। दूसरी वजह यह कि देश को प्रगति कारक नीति की ओर ले जाते वक्त अत्यंत हीन स्थिति में रह रहे अस्पृश्य समाज की उन्नति के लिए जो बातें करनी आवश्यक हैं वे करने से दलित फेडरेशन कभी

जनता : 1 मई, 1948

चूकेगा नहीं, यह साबित हो चुका है।

रविवार दिनांक 25 अप्रैल, 1948 के दिन इस अधिवेशन में डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का भाषण हुआ । उन्होंने अपने भाषण में कहा –

भाइयों और बहनों,

काँग्रेस में शामिल होने से अपना कुछ हित साध्य होगा ऐसा मुझे नहीं लगता। दिनों–दिन काँग्रेस कमजोर हो रही है। समाजवादी उससे अलग हुए, इसलिए वह अधिक दुर्बल हुई है। ऐसे समय इन दोनों पार्टियों के बीच चल रही प्रतिस्पर्धा का फायदा उठा कर अपनी पार्टी का अलग अस्तित्व बनाए रखते हुए जो पार्टी हमारी शर्तें मानेगी उनके साथ सहयोग कर हम सत्ता हासिल कर सकते हैं। सत्ता सामाजिक प्रगति का अचूक नुस्ख है।

काँग्रेस में जाकर पिछड़ी जातियों का सत्ता हासिल करना असंभव है। वह एक बहुत बड़ी संस्था है। हमारा उसमें प्रवेश करना महासागर में बूंद डालने जैसा होगा। उस संस्था में शामिल होकर हमारी उन्नति नहीं होगी। काँग्रेस अगर अलग–अलग गुटों में विभाजित हुई तो हम अपने उद्धार की उम्मीद कर सकते हैं। काँग्रेस में हम अगर प्रवेश करें तो हमारे दुश्मनों की ताकत बढ़ेगी। आज काँग्रेस की हालत आग लगे घर की जैसे हुई है। उसमें प्रवेश कर हम जल कर भस्म हो जाएंगे। अगले दो सालों में काँग्रेस का विनाश हुआ तो उसमें मुझे बिल्कुल आश्चर्य नहीं होगा।

आज समाजवादियों ने काँग्रेस से विदा ली है। इस कारण निश्चित रूप से काँग्रेस की ताकत कम होने वाली है। ऐसे वक्त हमें अपनी ताकत अलग संगठन खड़ा कर तीसरे मोर्चे के रूप में खड़े होने में खर्च करनी होगी। काँग्रेस अथवा समाजवादी में से किसी एक पार्टी को अगर बहुमत नहीं मिला तो वे हमारे वोटों की भीख मांगने आएंगे। ऐसे समय अपना समर्थन देने के लिए हम अपनी शर्तें रख कर सत्ता में संतुलन बना सकते हैं।

करीब 12 साल पूर्व लोथियन समिति के सदस्य के तौर पर हम लखनऊ आए थे। यहां के अस्पृश्यों में उस वक्त से राजनीतिक जागरुकता अधिक हुई है यह देख कर मुझे खुशी होती है।

पिछले साल संयक्त प्रांत में अस्पृश्यों द्वारा किए गए सत्याग्रह आंदोलन का मैं गर्व के साथ जिक्र करता हूं। उस आंदोलन में हिस्सा लेकर जिन्होंने तकलीफ और पीड़ा सही उन सबका मैं अभिनंदन करता हूं। एक बात आपके ध्यान में आई होगी कि किसी बात को साधने का निश्चय हम जब करते हैं और उसके लिए सभी कोशिशें करने पर उतारू हो जाते हैं तब राह में कितनी भी मुश्किलें क्यों न आएं हम अपने लक्ष्य की प्राप्ति सहजता के साथ कर सकते हैं।

मेरे काँग्रेस सरकार में शामिल होने से मेरे कई अनुयायी थोड़े बौखला गए हैं।

उनके मन की आशंकाएं दूर करने की मैं कोशिश करने जा रहा हूं। यह कोई कांग्रेस की गुलामी नहीं बल्कि संसद में जाकर अपने समाज के अधिकारों के लिए लड़ने के लिए, मैं कर रहा हूं।

अपनी घोषणा के अनुरूप यहां के हिंदू, मुस्लिम, सिक्ख, अस्पृश्य आदि को सत्ता सौंप कर अंग्रेज यहां से निकल नहीं गए हैं। शिमला परिषद में भी वाइसराय ने घोषणा की थी कि केवल काँग्रेस के हाथ में सत्ता नहीं सौंपी जाएगी। 1946 में शेड्यूल्ड कास्टस् फेडरेशन ने प्राथमिक चुनाव जीते थे। विरोधियों को पूरी तरह परास्त करने के कारण फेडरेशन का प्रतिनिधि स्वरूप स्थापित हो चुका था। लेकिन बाद में अंग्रेज अपना दिया वचन पालने से मुकर गए। उन्होंने हिंदू, मुस्लिम और सिक्खों के हाथ सत्ता सौंपने का निर्णय लिया।

अपने राजनीतिक आंदोलन का वह बड़ा ही विचित्र दौर था। सब तरफ अंधेरा छाया हुआ था। आशा की एक किरन भी कहीं नजर नहीं आ रही थी। मेरे सिर पर अपने लोगों की बहुत बड़ी जिम्मेदारी थी। मेरी समझ में कुछ भी नहीं आ रहा था। ऐसे हालात में मैं उन्हें किसी भी रास्ते ले जाने के लिए तैयार नहीं था। हालात का सही आकलन होने तक इंतजार करने का निर्णय मैंने लिया।

मुझसे यह सवाल पूछा जाता है कि 25 सालों तक आपने काँग्रेस से टक्कर ली और अब ऐन वक्त पर आपको सांप क्यों सूंघ गया? चुप रहने की नीति आपने अब क्यों अपनाई? मैं उन्हें बताना चाहता हूं कि लड़ाई की नीति हमेशा काम नहीं आती। कई बार दूसरी नीति अपनाना जरूरी हो जाता है। अंग्रेजों ने हमें धोखा दिया और कई दगाबाज हमारे बीच भी थे। इतनी बड़ी संस्था के साथ लड़ना उस वक्त ठीक नहीं होता। इसके बाद सुलह का रास्ता ही बचता है। इस तरह से हमें कई अधिकार मिले हुए हैं। हमें जितना चाहिए था उतना हमारी झोली में भले न आया हो, हमने काफी बातें हासिल कर ली हैं।

विधानसभा में और नौकरियों में हमें आरक्षण मिला है। इससे हमारा उस क्षेत्र में प्रतिनिधित्व का अवसर हमें मिला है। हमारी लगभग सभी मांगें मान ली गई हैं। अलग चुनाव क्षेत्र की मांग मंजूर नहीं हुई। अन्य अल्पसंख्यकों द्वारा की गई इस मांग को भी अस्वीकार किया गया इसलिए इस बारे में हमें शर्मिंदा होने की जरूरत नहीं है। यह समय काँग्रेस के साथ लड़ाई मोल लेने का नहीं है। सहयोग और समझौते की राह से ही जितना हो सके हमें हासिल कर लेना चाहिए।

मैं केंद्र सरकार में शामिल हुआ हूं लेकिन काँग्रेस का सदस्य नहीं बना। मेरा ऐसा कोई इरादा भी नहीं है। केंद्र सरकार में शामिल होने के लिए मुझे काँग्रेस की तरफ से आमंत्रित किया गया और मैं बिना किसी शर्त के काँग्रेस सरकार में शामिल हुआ।

पत्थर की तरह कड़ा होने के कारण मुझे पानी में अपने पिघल जाने का डर नहीं है। इसीलिए, काँग्रेस सरकार में शामिल होने के बावजूद मुझ पर कोई असर नहीं होने वाला। लेकिन आपकी स्थिति कुछ अलग है। पानी में गिरे ढेले की तरह आप घुल जाएंगे। वहां रहना मुश्किल है ऐसा महसूस होने पर मैं कभी भी वहां से बाहर निकल सकता हूं।

हालात ऐसे हैं कि आज राजनीति में अपने लोगों का होना आवश्यक हो गया है। अच्छे कानून से धोखे की संभावना नहीं होती यह बात सच है लेकिन अच्छे कानून को लागू करते वक्त धूर्तता बरती जाने की संभावना होती है। कानून लागू करते वक्त अस्पृश्यों के खिलाफ गलत बर्ताव की परंपरा रखने वालों के हाथ अगर अधिकार हों तो अपने भविष्य के लिए यह बात बुरी साबित हो सकती है।

जबरदस्ती परिश्रम कराने को कानून की सुरक्षा प्राप्त नहीं है, लेकिन जमींदार ऐसी व्यवस्था को लागू कर रहे हैं। कई जगहों पर अत्याचारी लोगों के रिश्तेदार अधिकार के पदों पर नियुक्त हुए हैं इसलिए उनके खिलाफ अस्पृश्यों द्वारा दी गई अर्जियां भी ये अधिकारी दबा देते हैं। अधिकार के इन पदों पर अगर अस्पृश्य लोग होते तो अपने बांधवों के हकों की वे जरूर रक्षा करते।

मैंने अगर काँग्रेस में प्रवेश करने का निर्णय लिया तो उसकी सार्वजनिक घोषणा करूंगा। उसमें अगर अस्पृश्यों के हित की बात हो तो मैं आपको भी वही करने की सलाह दूंगा। लेकिन, जब तक मैं आपको खुले आम काँग्रेस में जाने का आह्वान नहीं करता तब तक आप काँग्रेस में ना जाएं! इस सम्बोधन के साथ डॉक्टर बाबासाहेब ने अपना भाषण समाप्त किया।

विरोध के लिए विरोध करना मुझे मंजूर नहीं।

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के इस भाषण का अलग ही गलत और झूठा अर्थ निकाल कर एक अखबार ने इस बारे में खबर प्रकाशित की। उस पर डॉ. बाबासाहेब ने अपना स्पस्टीकरण दिया। जनता के 8 मई, 1948 की प्रति में वह प्रकाशित हुआ है। उसमें वह कहते हैं–

मुझे बहुत खेद महसूस हुआ कि मेरे भाषण के अनुचित अर्थ निकाल कर एक स्थानीय अखबार ने खबर छापी है तथा उसमें यह भी लिखा गया है कि मंत्रिमंडल के अपने सहयोगी के बारे में मैंने कुछ अनुचित कहा।

मेरा 25 अप्रैल का भाषण स्वतःस्फूर्त था। अपने भाषण के कुछ मुद्दे मैं यहां दे रहा हूं। विभिन्न बिंदुओं को लेकर मेरे कुछ अनुयायियों द्वारा मुझ पर की गई टिप्पणियों के जवाब मैं दे रहा हूं –

पहला मुद्दा . त्रिमंत्री प्रतिनिधिमंडल जाने के साथ मैंने चुप्पी साध ली उसके पीछे

क्या वजहें थीं?

दूसरा मुद्दा . मैं काँग्रेस सरकार में क्यों शामिल हुआ?

तीसरा मुद्दा– मैंने भविष्य में क्या करने की सोची है?

पहले मुद्दे के जवाब में मैंने कहा कि, त्रिमंत्री प्रतिनिधिमंडल के सामने शेड्यूल्ड कास्ट्स् फेडरेशन ने अलग चुनाव क्षेत्र की मांग की थी। दो कारणों से हमारी इस मांग को ठुकरा दिया गया– (1) मुस्लिम और सिक्खों की तुलना में हमारी पार्टी कमजोर थी। और, (2) हममें आपसी फूट भी थी। हमारे बीच कई धोखेबाज लोग थे।

त्रिमूर्ती मंत्रिमंडल के निर्णय से साबित यही हुआ कि दलितों का कोई अलग राजनीतिक अस्तित्व नहीं है। साथ ही मुझे ऐसा भी लगा कि, अगर राजनीतिक सुरक्षा नहीं है तो इसके मायने यही हुए कि शेड्यूल्ड कास्ट्स् फेडरेशन पर आया यह सर्वनाश का समय है। मेरे सामने गहरा अंधेरा फैला। तब से मैंने कोई मत नहीं रखा। मेरी चुप्पी की वजह यही है।

दूसरे मुद्दे के बारे में यही कहूंगा कि, मैं काँग्रेस का विरोधी था और समीक्षक भी, लेकिन केवल विरोध के लिए विरोध करना मुझे कभी भी मंजूर नहीं था। आपसी सहयोग से अपना लाभ होने वाला हो तो हमें आपसी सहयोग की भावना के साथ ही बर्ताव करना चाहिए। इसीलिए काँग्रेस के साथ मैंने हाथ मिलाया। संविधान ने हमें जो सुरक्षा दी है उसे इस आपसी सहयोग के बगैर हासिल नहीं किया जा सकता था। मैंने जो कहा उसकी पुष्टि के लिए मैंने कुछ उदाहरण भी दिए।

मंत्रिमंडल में शामिल होने की वजह बताते हुए मैंने ये दो कारण दिए – पहला, मंत्रिमंडल में शामिल होने के लिए मुझे बिना किसी शर्त के आमंत्रित किया गया था और दूसरा कारण, बाहर रह कर करने के बजाय मंत्रिमंडल में शामिल होकर अस्पृश्यों के हितों की रक्षा करना ज्यादा आसान होता।

भाषण में मैंने बताया कि दलितों को इस बारे में डर नहीं पालना चाहिए कि पूर्वाग्रहों के कारण उनके बारे में बुरे कानून बनाए जाएंगे। डर पालना ही हो तो कानून के बुरे कार्यान्वयन के बारे में पालें। दलित वर्ग के लोग इस काम में शामिल नहीं हैं इसीलिए काम में गड़बड़ियां होती हैं। हमारे समाज के लोग सदियों से भोले-भाले और ईमानदार होते हैं। इस काम में सवर्ण लोग ज्यादा हैं इसलिए सरकार को दलितों के बारे में सहानुभूति नहीं है। इन सभी बातों पर गौर करने के कारण ही मैंने सरकार में शामिल होने का निर्णय लिया।

अब तीसरा मुद्दा। मैंने कहा कि काँग्रेस में शामिल होने का कोई फायदा नहीं। तीसरा पक्ष बनकर रहने में ही ज्यादा सुरक्षा है। सरकार के तानाशाही रवैये पर उतर आने का

डर होता है।

हाल ही में काँग्रेस से समाजवादी अलग हुए और अब काँग्रेस और समाजवादी इस प्रकार दो पार्टियां बनी हैं। हमारे सामने नहीं है कि क्या हमें काँग्रेस में शामिल होना चाहिए? असली सवाल है कि हमें काँग्रेस में शामिल होना चाहिए या समाजवादियों का साथ देना चाहिए? समाजवादियों की पार्टी अधिक बलवान होने की संभावना है। इसलिए मैंने सलाह दी कि इन दोनों पार्टियों के साथ संतुलन बनाए रखते हुए उनसे लाभ लेने वाली सत्ता के रूप में हमें तीसरी पार्टी बनानी चाहिए। केवल अनुयायी बन कर किसी पार्टी में शामिल होने का कोई मतलब नहीं। ऐसे मेल के सहारे बहुत हुआ तो हम अधिकार पाएंगे लेकिन इससे सत्ता अथवा अधिकार हासिल कर ही लेंगे इसका कोई भरोसा नहीं।

इस संदर्भ में मैंने आगे कहा कि, जनसंख्या के अनुपात के अनुसार संयुक्त प्रांत में नौकरियों में आपको 22 प्रतिशत आरक्षण की जरूरत होते हुए भी केवल 10 प्रतिशत का आरक्षण दिया गया इसलिए अभी हाल ही में आपने एक प्रस्ताव के जरिए मंत्रीमंडल के प्रति निषेध प्रकट किया है। आप जो आरक्षित जगहें चाहते हैं वे आपको क्यों नहीं दी जातीं? क्योंकि संयुक्त प्रांत के विधिमंडल में जिस बहुमत की जरूरत होती है उसके लिए वे आप पर निर्भर नहीं हैं। इसलिए लेन-देन की बातचीत के लिए मजबूत संगठन खड़ा करने के बाद ही आप सरकार से 22 प्रतिशत की मांग कर सकते हैं। तब 'हमें इनके भरोसे ही चलना है' यही सोच कर आपकी मांग स्वीकारी जाएगी।

उसके बाद मैं पिछड़ी जनजातियों और दलित वर्ग की एकता के बारे में बोला। इन दोनों को मिलाने से देश की जनता बहुसंख्यक बन जाती है। अगर वे मिल जाएं तो क्या वे इस देश पर राज नहीं कर सकेंगे? राजनीतिक सत्ता हासिल करने के लिए उन्हें बस एकजुट होना है। वयस्क मतदान शुरू होने जा रहा है इसलिए यह कठिन भी नहीं है। जनता धैर्यशाली इसलिए नहीं बन पाती क्योंकि उसे लगता है कि काँग्रेस यहां हमेशा के लिए रहने वाली है। यह गलत सोच है। लोकप्रिय जनतंत्र में कोई भी सरकार हमेशा के लिए नहीं रह सकती। जब कांग्रेस के कालाबाजारी का हमारे देश के लोगों को पता चलेगा तो अपने आप ही जनता द्वारा कांग्रेस को नकारा जाएगा। अन्य पिछड़े वर्ग और दलित-पीड़ितों को राज करने का कभी अवसर मिलेगा ही, ऐसा मेरा विश्वास है। ध्यान में रखें कि, पं. नेहरू और सरदार पटेल जैसे उच्च नेताओं द्वारा स्थापित की गई सरकार भी हमेशा के लिए नहीं टिकी रह सकती।

आपको मेरे इस बयान से ध्यान में आ गया होगा कि मैंने काँग्रेस पर या मंत्रिमंडल के अपने सहयोगियों पर हमला किया यह कहना कितना गलत है।

255

संविधान के तहत अगर कुछ गलत बातें होती हैं तो जिम्मेदारी संविधान की नहीं मनुष्य की धूर्तता की होगी

29 अगस्त, 1947 के दिन संविधान सभा में आयु. सत्यनारायण सिन्हा द्वारा निम्नलिखित सात सदस्यों की मसौदा समिति गठित करने के बारे में प्रस्ताव रखा था जिसे सभा द्वारा मंजूर किया गया। प्रस्ताव में सम्मिलित सात सदस्यों के नाम निम्नानुसार थे–

1. अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर
2. एन. गोपालस्वामी अयंगार
3. डॉ. बी. आर. आंबेडकर
4. के. एम. मुन्शी
5. सैय्यद मोहम्मद सादुल्ला
6. बी. एल. मित्तल
7. डी. पी. खेतान[1]

30 अगस्त, 1947 के दिन डॉ. अम्बेडकर को मसौदा समिति के अध्यक्ष के तौर पर सर्वसम्मति से चुना गया। इस समिति की पहली बैठक 27 अक्तूबर, 1947 को हुई। इस दरमियान के दो महीने के समय में संविधान सभा के अध्यक्ष डॉ. राजेंद्रप्रसाद का एक पत्र मसौदा समिति के नाम डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को मिला। इस पत्र को बैठक में प्रस्तुत किया गया। उस पत्र में कहा गया था कि – संविधान समिति की बैठक दिसंबर माह के मध्य में होने के कारण राव के ड्राफ्ट का सभी सदस्यों में वितरण किया जाए। इस पर डॉ. अम्बेडकर के साथ सभी अन्य सदस्यों ने अपनी राय दर्ज की कि इसकी कोई जरूरत नहीं क्योंकि इस ड्राफ्ट और उपसमितियों की रिपोर्ट को ध्यान में रख कर संविधान का नया मसौदा बनाना है।

इस दरमियान अर्थात् 30 अगस्त, 1947 के बाद डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने कार्यालय द्वारा बनाए गए मसौदे की सभी धाराओं का निरीक्षण कर अपनी शब्द रचना वाली धाराएं बनाई थीं। 27 अक्तूबर 1947 से संविधान सलाहकार के कार्यालय द्वारा तैयार किए गए मसौदे तथा उसकी धाराओं पर विचार और बहस हुई। उसमें कौन–सी धाराएं बदलनी होंगी, कौन–सी धारा को बढ़ाना होगा, किसकी शब्द रचना को बदलना

1. डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर राइटिंग्स एंड स्पीचेस, ड 13, पृष्ठ क्र. 29

होगा आदि मसलों पर फुर्ती से निर्णय लिए गए।[1]

संविधान सभा के सामने मसौदा प्रस्तुत करते हुए मसौदा समिति के अध्यक्ष डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने घटना समिति के अध्यक्ष डॉ. राजेंद्रप्रसाद को मसौदे से संबंधित एक पत्र भी दिया था। उसमें उन्होंने मसौदा समिति की भूमिका स्पष्ट की थी। पत्र इस तरह था–

नई दिल्ली

21 फरवरी, 1948

प्रति,
सम्माननीय अध्यक्ष,
भारतीय संविधान सभा,
नई दिल्ली

प्रिय महोदय,

भूमिका –संविधान सभा द्वारा 29 अगस्त, 1947 के दिन पारित किए गए प्रस्ताव के अनुसार नियुक्त किए गए मसौदा समिति द्वारा तैयार किया गया भारत का नया संविधान मसौदा समिति की ओर से मैं प्रस्तुत कर रहा हूं।

समिति के सदस्यों की ओर से भले मुझे हस्ताक्षर करने का अधिकार दिया गया हो, समिति की हर सभा में सभी सदस्य उपस्थित नहीं रहा करते थे। लेकिन जिन सभाओं में निर्णय लिए गए उस हर सभा में आवश्यक सदस्य संख्या में उपस्थिति हुआ करती थी और निर्णय एकमत से अथवा उपस्थित सदस्यों के बहुमत से लिए जाते।

मसौदा तैयार करते हुए संविधान सभा द्वारा लिए गए निर्णयों की अथवा संविधान सभा द्वारा नियुक्त की गई समितियों के निर्णयों पर मसौदा समिति द्वारा अमल किए जाने की उम्मीद थी। मसौदा समिति ने जहां तक संभव हो इसका पालन करने की कोशिश की है। लेकिन कुछ मामलों में मसौदा समिति को लगा कि बदलाव करना जरूरी है। इस प्रकार किए गए सभी बदलाव अधोरेखांकित कर अथवा बदले हुए हिस्से के पास अलग से जिक्र कर बताए गए हैं। हर परिवर्तन को स्पष्ट करने के लिए अलग से टिप्पणी देने के एहतियात भी मसौदा समिति द्वारा लिए गए हैं। लेकिन विषय का महत्व ध्यान में रखते हुए इन महत्वपूर्ण परिवर्तनों की ओर आपका और संविधान सभा का ध्यान दिलाना योग्य होगा ऐसा मुझे लगता है।

2. **उद्देश्य-पत्रिका** – जनवरी, 1947 को संविधान सभा द्वारा स्वीकृत लक्ष्य प्रस्ताव

---

1. फुले-अम्बेडकर संशोधनातील प्रदूषणे : लेखक वसंत मून, पृष्ठ संख्या 21

उद्घोषित करता है कि भारत एक सार्वभौम, स्वतंत्र गणराज्य होगा। मसौदा समिति द्वारा *सार्वभौमप्रजासत्ताकगणराज्य* शब्दसमूह स्वीकृत किया गया है क्योंकि, सार्वभौम शब्द में ही स्वतंत्रता अंतर्निहित है। इसलिए स्वतंत्र शब्द जोड़ने से अधिक कुछ हासिल होगा ऐसा नहीं लगता। भारतीय प्रजासत्ताक गणराज्य और ब्रिटिश राष्ट्रसंघ के बीच के संबंधों का सवाल आगे चल कर हल करना है।

लक्ष्य से संबंधित प्रस्ताव में शामिल न होते हुए भी समिति द्वारा बंधुत्व के परिच्छेद को लक्ष्य वाले परिच्छेद में समाविष्ट किया है। बंधुत्व और शुभकामनाओं की आज भारत को जितनी जरूरत है उतनी पहले कभी नहीं थी और नए संविधान में इस विशेष लक्ष्य का उद्देश्य पत्रिका में खास जिक्र करते हुए उस पर विशेष जोर देने की जरूरत समिति को लगी।

अन्य मामलों में उद्देश्य-पत्रिका का लक्ष्य तथा उसकी भाषा भी शामिल करने की समिति द्वारा कोशिश की गई है।

धारा १ –

3. **भारत का वर्णन**– मसौदे के पहले अनुच्छेद में भारत का वर्णन संघराज्य (Union of States) इस प्रकार किया गया है। संघराज्य के घटकों को आज राज्यपाल के प्रांत या मुख्य आयुक्त के प्रांत या भारत के संस्थानों के तौर पर पहचाना जाता है, लेकिन समान जिक्र हो इसलिए नए संविधान में उनका जिक्र राज्य (state) के तौर पर करना समिति को अधिक युक्तियुक्त लगता है। बेशक नए संविधान में कुछ घटकों में फर्क रहेगा और इस फर्क को स्पष्ट करने के लिए समिति ने राज्यों को तीन हिस्सों में बांटा है – पहली सूची के भाग 1, भाग 2 और भाग 3 में शामिल हिस्से नई व्यवस्था के अनुसार राज्यपाल के प्रांत, मुख्य आयुक्त के प्रांत और भारतीय संस्थान होंगे।

समिति ने फेडरेशन की जगह संघराज्य (Union) शब्द का प्रयोग किया है। नाम से वैसे कोई फर्क नहीं पड़ता फिर भी समिति ने ब्रिटिश नॉर्थ अमेरिका एक्ट, 1867 के उद्देश्य-पत्रिका की भाषा को प्रधानता दी है और संविधान की तरह रचना भले फेडरेशन की हो फिर भी सोचा यही है कि भारत का वर्णन संघराज्य (Union) के तौर पर करना ही लाभदायक है।

अनुच्छेद ५ और ६ :

4. **नागरिकता** – समिति ने संघराज्य के नागरिकत्व के बारे में बहुत ही ध्यानपूर्वक और विस्तृत विचार-विमर्श किया है। समिति ने सोचा कि संघराज्य निर्माण के समय संघराज्य नागरिकता की प्राप्ति के लिए व्यक्ति के भौगोलिक दृष्टिकोण से जन्म अथवा वंश अथवा स्थायी निवास का आधार आवश्यक होगा। इस प्रमाण के बगैर वह कानूनन

अस्वीकार किया जाएगा। भारतीय भूमि के साथ इस प्रकार का कोई भी संबंध न होने वाले व्यक्ति अगर भारत के साथ एकनिष्ठता की शपथ लें तो उन्हें नागरिकता प्रदान करने को लेकर समिति आश्वस्त नहीं है। क्योंकि अगर दूसरे देश भी इसी प्रकार की व्यवस्था को लागू करेंगे तो ऐसे कई लोग होंगे जो हमारे संघराज्य में पैदा हुए, यहीं उनका स्थायी निवास होगा और उनकी निष्ठा किसी विदेश के साथ बंधी होगी। पिछले कुछ महीनों में बड़ी संख्या में भारत में स्थानांतरित हुए लोगों की जरूरतों के बारे में समिति ने सोचा है और उनके निवास और उनकी नागरिकता की प्राप्ति के लिए खास आसान पद्धति का अवलंब किया है। वे या उनके माता-पिता में से कोई एक या उनके दादा-दादी में से कोई एक भारत अथवा पाकिस्तान में पैदा हुए हैं यह मान कर उन्हें आगे बताई बातों पर अमल करना होगा-

अ) भारत के जिला मॅजिस्ट्रेट के सामने भारत में रहने की इच्छा प्रकट करना; और

ब) इच्छा प्रकट करने से पहले कम से कम एक महीने तक भारत में रहना।

अनुच्छेद ७ से २७

5. **मौलिक अधिकार** - मौलिक अधिकार और उनकी सीमाओं के बारे में जहां तक संभव हो स्पष्टता के साथ विचार रखने की कोशिश की है। क्योंकि न्यायालयों को उनके आधार पर न्याय देना होगा।

अनुच्छेद ५९ :

6. **संघराज के राष्ट्रपति के अधिकार** - भारतीय राज्य और अन्य घटकों के राज्यकर्ताओं के प्रति कोई दुर्भावना मन में न पालते हुए समिति ने सोचा है कि मृत्युदंड की सुनाई गई सजा को मुल्तवी करने, माफ करने या कम करने का अधिकार राष्ट्रपति के पास रहना उचित रहेगा।

अनुच्छेद २७८ : कुछ विशेष स्थितियों में संविधान में कुछ विशेष प्रबंध स्थगित कर राज्यपाल को घोषणा-पत्र जारी करने का अधिकार नए संविधान के तहत दिया गया है। यह काम वह केवल दो हफ्तों की अवधि तक कर सकते हैं और उनके लिए आवश्यक होगा कि वे इसकी रपट राष्ट्रपति को भेजें। रिपोर्ट पाने के बाद राष्ट्रपति उस घोषणा-पत्र को रद्द कर सकते हैं अथवा अपना नया घोषणा-पत्र जारी कर सकते हैं। परिणामत: राज्य कार्यकारिणी की जगह केंद्रीय कार्यकारिणी की सत्ता जारी होगी। घोषणा-पत्र में दर्ज किए गए समय के लिए राज्य के अधिकार वाले प्रदेश पर केंद्र की सत्ता शुरू होगी। 1935 के कानून अंतर्गत . 'अनुच्छेद 93 की प्रशासन पद्धति' (Section 93 regime) की जगह यह व्यवस्था लागू की गई है।

अनुच्छेद ६० :

7. **संयुक्त सूची के विषयों से संबंधित कार्यकारी अधिकार** - वर्तमान संविधान के अनुसार भारतीय प्रशासन कानून, 1935 के 7वीं सूची के भाग 1 और 2 के अनुसार संयुक्त सूची में शामिल विषयों के कार्यान्वयन के अधिकार केंद्र के पास हैं। मसौदा संविधान में समिति ने इसमें थोड़ा बदलाव किया है। और 'इस संविधान में दर्ज किए गए स्पष्ट प्रबंध अथवा संसद द्वारा पारित कानून को दरकिनार कर प्रांतों को कार्यकारी अधिकार (जिनका जिक्र राज्य के तौर पर किया जाता है) दिए गए हैं। इससे विशिष्ट मामलों में कार्यकारी अधिकार केंद्र सरकार को दिए जाएं अथवा जरूरत पड़ने पर राज्य सरकार किस तरह इन अधिकारों का उपयोग करे इस बारे में सूचना देने का अधिकार केंद्र सरकार को दिया जाए यह फैसला करने की स्वतंत्रता नए संविधान के तहत संसद के पास रहेगी। इसका प्रबंध करते हुए समिति ने जो बातें ध्यान में रखी हैं वह है- कार्यकारी प्रदत्त अधिकार की और कानून संबंधी अधिकार की व्याप्ती समान हो।'

अनुच्छेद ६७ :

8. **राज्यसभा का गठन** - संविधान सभा के निर्णय के अनुसार राज्यसभा की अधिकतम 250 सदस्य संख्या में से 25 सदस्य सूची में से या चुनाव-क्षेत्र से विशिष्ट उद्देश्यों के अनुसार चुननें होंगे। जिस देश की (आयरलैंड) पद्धति से सूची पद्धति स्वीकारी उस देश में वह असफल रहने के कारण समिति ने सोचा है कि विशेष ज्ञान प्राप्त या साहित्य, कला, विज्ञान आदि क्षेत्रों के अनुभव प्राप्त व्यक्तियों में से 15 व्यक्तियों को राष्ट्रपति द्वारा सदस्य के तौर पर नियुक्त किया जाए। श्रम, व्यापार या उद्योग इन विशेष क्षेत्रों के विशेष प्रतिनिधित्व के लिए सोचने की जरूरत नहीं क्योंकि वयस्क मतदान पद्धति के कारण उन्हें केंद्रीय संसद में हमेशा काफी प्रतिनिधित्व जरूर मिलेगा यही वास्तविकता है ऐसा समिति को लगता है।

अनुच्छेद ६३ और १५१ :

9. **केंद्रीय संसद और राज्य विधानसभा की समय-सीमा** - समिति को लगता है कि संसदीय पद्धति के खास कर वयस्क मतदान पद्धति के आधार से निर्मित नए संविधान को लागू करते हुए शुरुआत में चार वर्षों से ज्यादा की समयावधि होना जरूरी है। नए मंत्रियों को प्रशासन के विवरण से परिचित होने के लिए कुछ समय लगता है और उनके कार्यकाल का आखिरी वर्ष अगले चुनावों की तैयारी में चला जाता है। योजनाबद्ध प्रशासन के लिए चार वर्षों की समयावधि में उन्हें मिलने वाला समय काफी नहीं होगा।

अनुच्छेद १०७ और २०० :

10. **सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालय** - ब्रिटेन और अमेरिका में प्रचलित प्रथा के अनुसार कुछ खास परिस्थितियों में खास मामलों पर काम करने के लिए समिति

का सुझाव है कि सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालयों के अवकाशप्राप्त न्यायाधीशों को बुलाया जाए।

अनुच्छेद १३१ :

11. **राज्यपालों की नियुक्ति की प्रक्रिया** - समिति के कुछ सदस्यों की राय में निर्वाचित राज्यपाल और विधानसभा के लिए जिम्मेदार मुख्यमंत्री का सहअस्तित्व संघर्ष पैदा कर सकता है। इसलिए समिति द्वारा राज्यपाल की नियुक्ति की विकल्प प्रक्रिया का सुझाव दिया है - विधिमंडल चार व्यक्तियों के नाम सुझाए (जरूरी नहीं कि वे उसी राज्य के निवासी हों) और संघराज्य के राष्ट्रपति उन चार में से एक की राज्यपाल के पद पर नियुक्ति करें।

अनुच्छेद १३८ :

12. **उपराज्यपाल** - समिति को उपराज्यपाल के प्रावधान की जरूरत है ऐसा नहीं लगता। क्योंकि, राज्यपाल के कार्यरत रहने तक उपराज्यपाल के लिए करने लायक कोई भी काम नहीं बचेगा। केंद्र की स्थिति अलग है। क्योंकि, उपराष्ट्रपति राज्यसभा का अध्यक्ष है। लेकिन कई राज्यों में वरिष्ठ सभागृह नहीं होगा और उपराष्ट्रपति की तरह ही उपराज्यपाल को काम सौंपना संभव नहीं होगा। मसौदे में व्यवस्था की गई है कि अचानक स्थितियों में उम्मीद न हों ऐसे बदलाव आएं तो विधानमंडल (अथवा राष्ट्रपति को) राज्यपाल द्वारा किए जाने वाले कामों के निर्णय लेने के अधिकार दिए गए हैं।

अनुच्छेद २१२ से २१४ :

13. **केंद्रशासित प्रदेश** - संविधान सभा द्वारा पारित किए गए प्रस्तावों के अनुसार हमने अध्यक्ष के नाते दिल्ली, अजमेर-मारवाड़, कूर्ग, पंथ-पिपलोडा और अंडमान तथा निकोबार द्वीप समूह इन केंद्रशासित प्रदेशों के लिए संविधानात्मक बदलाव सुझाने के उद्देश्य से सात सदस्यों की एक समिति नियुक्त की थी। समिति द्वारा 21 अक्तूबर, 1948 के दिन अपनी रिपोर्ट पेश की गई। संक्षेप में समिति की सिफारिशें इस प्रकार थीं-

1. दिल्ली, अजमेर-मारवाड़ और कूर्ग प्रांतों के लिए राष्ट्रपति द्वारा उपराज्यपाल की नियुक्ति की जाए।
2. इनमें से हर प्रांत का कामकाज विधानसभा को जवाबदेह मंत्रिमंडल के पास रहेगा।
3. इनमें से हर प्रांत में चुनाव के जरिए विधानसभा बनेगी। पंथ-पिपलोडा के बारे में समिति द्वारा सुझाव दिया गया है कि उन्हें अजमेर-मारवाड़ के साथ जोड़ा जाए। अंडमान तथा निकोबार द्वीप समूहों के बारे में समिति का सुझाव था कि वर्तमान हालात के अनुसार भारत सरकार आवश्यक बदलाव करके वहां का कामकाज संभाले। अलग शब्दों में कहें तो ये द्वीपसमूह मुख्य आयुक्त के प्रांतों के रूप में रहेंगे। समिति के

अजमेर–मारवाड़ और कूर्ग का प्रतिनिधित्व करने वाले सदस्यों ने समिति की रिपोर्ट के साथ अपना मतपत्र जोड़ दिया। उसमें उन्होंने कहा कि, छोटा भूप्रदेश, भौगोलिक स्थान और इस प्रदेश में संसाधनों की कमी के कारण निर्माण होने वाली विशेष समस्याओं के कारण निकट भविष्य में इन्हें आसपास के प्रदेश के साथ जोड़ना संभव नहीं है। सो उनका आग्रह था कि संबंधित लोगों की पड़ताल के बाद इसे संभव बनाने के लिए संविधान में विशेष प्रबंध करना होगा।

दिल्ली के बारे में समिति को लगता है कि दिल्ली भारत की राजधानी है इसलिए उसे स्थानीय प्रशासन के तहत रखना उचित नहीं होगा। अमेरिका में सरकार का स्थान कहां हो इस बारे में वैधानिक अधिकार का इस्तेमाल काँग्रेस ही करती है और ऑस्ट्रेलिया में भी यही हाल है। इसीलिए मसौदा समिति इस निर्णय तक पहुंची है कि अस्थायी समिति द्वारा जो सुझाव दिए गए हैं उससे व्यापक योजना होना जरूरी है। उसके अनुसार मसौदा समिति ने सुझाया है कि भारत सरकार की तरफ से इन केंद्रशासित प्रदेशों का कामकाज या तो मुख्य आयुक्त या उपराज्यपाल या पड़ोसी राज्य के राज्यपाल या शासक के द्वारा हो। किसी विशिष्ट क्षेत्र के लिए क्या किया जाए इस बारे में राष्ट्रपति एक आदेश निकाल कर निर्णय लेंगे। स्पष्ट है कि अन्य की तरह इस व्यवस्था में भी राष्ट्रपति प्रभारी मंत्री की सलाह का अनुसरण करेंगे। सलाह दिए जाने के बाद वे दिल्ली के लिए उपराज्यपाल की नियुक्ति करेंगे। दी गई सलाह को मानते हुए वह मद्रास के राज्यपाल को कूर्ग का अथवा कूर्ग के लोगों की इच्छा को ध्यान में लेकर मैसूर के शासन का जिम्मा सौंपेंगे। अध्यादेश के माध्यम से वे स्थानीय विधानसभा या सलाहकार मंडल की नियुक्ति कर सकेंगे। उनका स्वरूप अधिकार और कार्य अध्यादेश के निर्देशानुसार तय होंगे। यह योजना मसौदा समिति को संबंधित प्रदेशों की जरूरतों के अनुसार मेल खाने वाली और लचीली लगी।

समिति द्वारा यह व्यवस्था भी की गई है कि भारतीय संस्थानों (Indian States) की योजना उड़ीसा (ओडिशा) की तर्ज पर की जाएगी जिन्होंने अपनी समूची सत्ता, अपना कार्यक्षेत्र और अपने अधिकार केंद्र सरकार को सौंप रखे हैं। उन्हें केंद्र शासित प्रदेश मानते हुए मुख्य आयुक्त, उपराज्यपाल या पड़ोसी राज्य के राज्यपाल अथवा शासक के द्वारा हर क्षेत्र की जरूरत के अनुसार प्रशासन चलाया जाएगा।

अनुच्छेद २१६ से २३२ :

14. **वैधानिक अधिकारों का विभाजन** – केंद्रीय अधिकार समिति की सिफारिशों के अनुसार और संविधान सभा द्वारा स्वीकार किए गए अनुसार वैधानिक सूची के ज्यादातर हिस्सों में बदलाव नहीं किया गया है। लेकिन मसौदा समिति द्वारा जिनमें बदलाव किया गया है उन तीन बातों की ओर मैं आपका ध्यान दिलाना चाहूंगा।

अ) समिति ने सुझाया है कि जब सामान्य तौर पर राज्यसूची में शामिल विषय को राष्ट्रीय महत्व प्राप्त होता है तब संसद कानून बना सकती है। राज्य के अधिकारों

पर अनावश्यक अतिक्रमण न हो इसलिए मसौदे में इस प्रकार प्रबंध किया गया है कि राज्यसभा में जहां राज्य के अंश के रूप में प्रतिनिधित्व होता है वहां 2/3 बहुमत से इस संदर्भ में प्रस्ताव पारित हो तो केंद्र इस प्रकार कर सकता है।

ब) समिति ने सोचा है कि खेती की जमीन के अलावा अन्य संपत्ति पर विरासत के अधिकार का ही नहीं, उत्तराधिकार से संबंधित सभी विषयों को साझा सूची में शामिल करना योग्य रहेगा। इसी प्रकार जो मसले विभिन्न तरह के निजी कानूनों द्वारा फिलहाल तय होते हैं उन सभी मसलों को समिति ने समवर्ती सूचित किया है। इसलिए इस मामले में भारत में एक समान कानून बनाना आसान होगा।

क) केंद्र के लिए भूमि संपादन केंद्र सूची में और राज्य के उपयोग के लिए भूमि संपादन का कानून राज्य सूची में शामिल किया गया है। समिति ने सुझाया है कि जिन तत्वों के आधार से संपादित की गई भूमि की भरपाई तय की जाएगी उन सभी मामलों को समवर्ती सूची में शामिल किया जाएगा जिससे इसमें समानता आ सकेगी।

इसके अलावा आजकल की विचित्र स्थितियों को ध्यान में रखते हुए जहां आवश्यक चीजों की आपूर्ति पर केंद्र के नियंत्रण की जरुरत है वहां के बारे में समिति का सुझाव है कि संविधान लागू होने के बाद पांच सालों की तय अवधि तक आवश्यक चीजों का उत्पादन आपूर्ति और आवश्यक वितरण प्रणाली विस्थापितों की मदद और पुनर्वास जरूरी चीजों का व्यापार और वाणिज्य समवर्ती सूची के विषयों के अनुसार ही रहेंगे। इस नीति को अपनाते हुए समिति ने भारतीय कानून 1946 के केंद्र सरकार और विधानसभा कानूनी प्रावधानों का अनुसरण किया है।

अनुच्छेद २४७ से २६९

15. **वित्तीय प्रबंध**–व्यापक नजरिए से अगर सोचा जाए तो केंद्र और राज्यों की चुंगी के समिति वितरण संबंधी मामलों के अलावा विशेषज्ञ वित्त समिति की सभी सिफारिशें मसौदा द्वारा मसौदे में शामिल की गई हैं। इस क्षेत्र में फिलहाल के अस्थिर माहौल को ध्यान में रखते हुए मसौदा समिति ने सोचा है कि अगले पांच सालों तक चुंगी वितरण क्षेत्र में 'जैसे थे' स्थिति बरकरार रखना ही योग्य होगा। आखिरी वर्ष में वित्त आयोग हालात का जायजा ले सकेगा।

अनुच्छेद २८१ - २८३

16. **सेवा** - सेवाओं से संबंधित पूरे विवरण के साथ प्रबंधों को संविधान में जोड़ना समिति ने टाला है। संवैधानिक प्रबंध करने से सुयोग्य विधानसभाओं द्वारा कानून बना कर उसका पालन करने का समिति ने सोचा है। समिति की राय यह है कि अन्य देशों की तरह ही इस देश के भावी विधानसभा भी सेवा क्षेत्र को निष्पक्षता से संभालेंगे।

अनुच्छेद २९१-२८९

17. **चुनाव, मतदान का अधिकार आदि** - चुनाव क्षेत्र तय करने के लिए मतदान से संबंधित विवरण संविधान में अंतर्भूत करने की जरूरत समिति को नहीं लगी। यह काम सहायक कानून मंडल को सौंपा गया है।

अनुच्छेद ३०४

18. **संविधान सुधार** - समिति ने कुछ तय मामलों के संदर्भ में राज्य विधानसभा के लिए समिति वैधानिक अधिकारों के प्रबंधों को जोड़ा है।

अनुच्छेद २९२, २९४ और ३०५-

19. **अल्पसंख्यकों को सुरक्षा** - विधानसभा और लोकसेवा में जगहें आरक्षित रखे जाने के बारे में सलाहकार समिति और संविधान सभा द्वारा लिए गए निर्णयों को मसौदे में शामिल किया गया है। ये प्रबंध भारतीय संस्थानों पर लागू नहीं होने के बावजूद भारत के व्यापक हित को ध्यान में रखते हुए भारतीय संस्थानों द्वारा वहां के अल्पसंख्यकों के लिए उसी तरह के प्रबंध अपनाएं। मसौदा समिति द्वारा मुझसे कहा गया है कि मैं इस महत्वपूर्ण मामले की तरफ आपका ध्यान दिलाऊं।

परिशिष्ट १ :

20. **भाषावार प्रांत** - पहले परिशिष्ट के पहले हिस्से और नीचे दी गई टिप्पणी की ओर मैं आपका ध्यान आकृषित करना चाहता हूं। संविधान को अंतिमतः स्वीकार करने से पूर्व अगर आंध्र अथवा किसी अन्य भाषाई प्रांत का इस परिशिष्ट में जिक्र करना हो तो भारत सरकार कानून के 1935 के अनुच्छेद 290 के तहत राज्यपाल के प्रांत के तौर पर अलग योजना बनाने के लिए जल्द से जल्द कार्रवाई करनी होगी। अर्थात् नए संविधान में नए राज्य के निर्माण के प्रबंध हैं। हालांकि नए संविधान के लागू होने के बाद ही इस पर अमल किया जा सकेगा।

परिशिष्ट ५ और ६

21 **अनुसूचित जाति (S.C.), [अनुसूचित जनजाति (S.T.)] अनुसूचित क्षेत्र और जनजाति क्षेत्र** - इस विषय से संबंधित उपसमितियों की सिफारिष्टों समिति द्वारा परिशिशें में शामिल की गई हैं।

21. श्री अल्लादि कृष्णस्वामी अय्यर ने कुछ मुद्दों के बारे में (सैद्धांतिक उलझन पैदा किए बगैर) एक टिप्पणी अलग से की जो उनके विनम्र अनुरोध के अनुसार मसौदे में जोड़ी गई है।

22. इस मुश्किल काम को पूरा करते हुए समिति को संवैधानिक सलाहकार

1. डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर राइटिंग एंड स्पीचेस, 13 खंड, पृष्ठ 95 से 104

श्री बी.एन. राव उपसचिव तथा मसौदे का ढांचा तैयार करने वाले श्री एस.एन. मुखर्जी और संविधान समिति सचिवालय के कर्मचारी वर्ग के मिले सहयोग के प्रति मैं समिति की कृतज्ञता को दर्ज किए बगैर संविधान के इस मसौदे को आपके समक्ष प्रस्तुत नहीं कर सकता।

आपका विश्वासपात्र

बी. आर. आंबेडकर[1]

संविधान का मसौदा 26 फरवरी, 1948 को भारत सरकार के गैजट में लोगो की जानकारी के लिए तथा लोगों की राय जानने के लिए प्रकाशित किया गया। करीब आठ महीनों तक वह लोगों के पास था। उसके बाद 4 नवम्बर, 1948 के दिन डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने उसे संविधान सभा के समक्ष पेश किया। इस अवसर पर उन्होंने जो भाषण दिया उसका संविधान सभा के और देश के इतिहास में असाधारण महत्व है। इस भाषण के असर के कारण ही संविधान सभा के ज्यादातर सदस्यों ने डॉ. अम्बेडकर की प्रशंसा यह कहकर की कि वह प्रकांड पंडित, संविधान निर्माण के शिल्पकार, संविधान के बारे में पूरे अधिकार के साथ भाष्य करने वाले, गहन अध्येता, काबीलियत रखने वाले हैं। चुनिदा सदस्यों की इस संदर्भ में भावनाएं व्यक्त करने वाले भाषण हुए जिनमें से कुछ हिस्से यहां दिए जा रहे हैं –

टी. टी. कृष्णम्मा चारी – सदन को अहसास होगा कि आपके द्वारा नियुक्त किए गए सात में से एक सदस्य ने इस्तीफा दिया। उनकी जगह अन्य की नियुक्ति की गई। एक सदस्य की मृत्यु हुई, लेकिन उस पद को भरा नहीं गया। एक सदस्य अमेरिका में थे उनकी जगह किसी को नहीं दी गई। एक और सदस्य रियासत के कामों में उलझे हुए थे, इसलिए उनकी जगह भी खाली थी। एक या दो सदस्य दिल्ली से काफी दूर रहा करते थे और उनकी सेहत ठीक नहीं थी इसलिए वह भी उपस्थित नहीं रह पा रहे थे। सो अंततः संविधान बनाने की जिम्मेदारी पूरी तरह डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर पर आई। उन्होंने यह काम पूरी जिम्मेदारी के साथ सफलतापूर्वक पूरा किया। उनका यह कार्य प्रशंसनीय है, इसमें कोई दो राय नहीं। हम सब उनके प्रति कृतज्ञ हैं।

काजी सैय्यद करीमुद्दीन – संविधान का मसौदा विचारार्थ रखने के प्रस्ताव पर डॉ. अम्बेडकर ने भूमिका में जो वक्तव्य दिया, उसके लिए मैं उनका अभिनंदन करता हूं। उनका भाषण ध्यान देने योग्य था और मुझे यकीन है कि आने वाली पीढ़ियां उन्हें महान संविधानकर्ता के रूप में जानेगी।

डॉ. पी. एस. देशमुख– मेरे सम्माननीय मित्र डॉ. अम्बेडकर का भाषण उच्चकोटि का था। प्रस्तुत किए गए मसौदे पर दिया गया वह प्रभावपूर्ण वक्तव्य था। सब जानते ही हैं कि वह एक प्रख्यात अधिवक्ता हैं और मुझे लगता है कि उन्होंने अपनी जिम्मेदारी पूरी तरह से निभाई। अगर उन्हें पूरी छूट मिलती तो इस संविधान को वे शायद अलग रूप दे पाते।

डॉ. जोसेफ अल्बन डिसूजा – शुरुआत से लेकर आखिर तक विद्वानों को शोभा

देने वाला, कार्यक्षम, स्वीकार योग्य, तुलनात्मक नजरिए से श्रेष्ठ संस्मरणीय दस्तावेज डॉ. अम्बेडकर और उनकी मसौदा समिति ने प्रस्तुत किया है।[1]

दिनांक 4 नवम्बर, 1948 के दिन संविधान का मसौदा संविधान सभा के समक्ष पेश करते हुए डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने कहा –

''अध्यक्ष महोदय,

मसौदा समिति द्वारा पारित किया गया संविधान का मसौदा मैं विचारार्थ इस सदन में प्रस्तुत कर रहा हूं।

29 अगस्त, 1949 के दिन संविधान सभा में पारित प्रस्तावानुसार इस मसौदा समिति की नियुक्ति की गई थी। संविधान सभा द्वारा नियुक्त केंद्रीय अधिकार समिति, केंद्रीय संविधान समिति, अल्पसंख्यक और आदिवासी क्षेत्र आदि की प्रांतीय संविधान समिति और मौलिक अधिकार सलाहकार समिति की रिपोर्ट के अनुसार संविधान सभा द्वारा लिए गए निर्णय पर आधारित संविधान निर्माण की जिम्मेदारी मसौदा समिति को सौपी गई थी। संविधान सभा द्वारा यह निर्देश भी दिया गया था कि कुछ विशिष्ट मसलों पर भारत कानून, 1935 के प्रावधानों को अपनाया जाए। संविधान सभा द्वारा दिए गए निर्णयों में मसौदा समिति किन मामलों पर विचार करना नहीं चाहती और किन मामलों में बदलाव कर विकल्प सुझाए हैं इसका जिक्र मैंने 21 फरवरी, 1948 को अपने खत में किया है। इस अपवाद को छोड़ दें तो संविधान सभा द्वारा दिए गए अन्य सभी निर्देशों का मसौदा समिति द्वारा ईमानदारी से पालन किया गया है, ऐसा मेरा विश्वास है।

मसौदा समिति द्वारा निर्माण किया गया संविधान का मसौदा एक असाधारण दस्तावेज है। इसमें 315 अनुच्छेद और 8 परिशिष्टो का समावेश है। संविधान का यह मसौदा अन्य किसी भी देश के संविधान की तुलना में अधिक विस्तृत है, यह मानना ही पड़ेगा। जिन्होंने इसे पढ़ा नहीं है उन्हें इसकी महत्वपूर्ण और विशेष खासियतों का पता नहीं चल पाएगा।

संविधान का यह मसौदा आठ महीनों तक लोगों को पढ़ने के लिए उपलब्ध था। मित्र समीक्षक और विरोधियों के लिए इसके प्रावधानों प्रतिक्रिया प्रकट करने के लिए इतना समय काफी था। इनमें से कुछ प्रतिक्रियाएं अनुच्छेदों का अर्थ न समझने के कारण व्यक्त की गई हैं ऐसा मैं निश्चित तौर पर कह सकता हूं। जो भी हो, आपत्तियां उठाई जा रही हैं तो उनका जवाब देना ही पड़ेगा।

इन दो वजहों से इस मसौदे को विचारार्थ प्रस्तुत करते हुए मैं आपका ध्यान संविधान के प्रमुख मुद्दों की ओर दिलाना चाहता हूं। साथ ही जो आपत्तियां उठाई गई हैं उनका जवाब भी देना चाहता हूं। उससे पूर्व संविधान सभा द्वारा नियुक्त की गई तीन समितियों की रिपोर्ट

---

1. डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर राइटिग एंड स्पीचेस के अंग्रेजी परिच्छेद का मराठी में पृष्ठ 72 से 77, 13 खंड, भाषांतर अतिथि संपादक मंडल द्वारा किया गया।]

मैं सदन के समक्ष प्रस्तुत करना चाहता हूं। केंद्र और (1) मुख्य आयुक्त के प्रांतो के बारे में रिपोर्ट, (2) केंद्र और राज्यो के आर्थिक संबंधों के बारे में विशेषज्ञ समिति की रिपोर्ट, (3) आदिवासी क्षेत्र के बारे में सलाहकार और समिति की रिपोर्ट जो मसौदा समिति को विचारार्थ काफी देर से मिला, इसके बावजूद उसकी प्रतियों का सदन के सभी सदस्यो में वितरण किया गया है। इस रिपोर्ट और उसकी सिफारिशों का मसौदा समिति द्वारा विचार किया गया है इसके बावजूद सदन के पटल पर इसे रखना औपचारिकता के नजरिए से समीचीन होगा।

अब हम मुख्य विषय पर आते हैं। संविधान से संबंधित कानून के छात्र संविधान हाथ में आते ही निश्चित रूप से दो सवाल पूछेंगे। पहला सवाल संविधान प्रशासन के किस तरीके पर आधारित है और दूसरा सवाल संविधान का स्वरूप क्या है। ये दो सवाल इतने महत्वपूर्ण हैं कि हर संविधान के मसौदे में भारतीय संघ राज्य के सर्वोच्च पद पर कार्यकारी अधिकारी का प्रावधान है जिसे संघ का राष्ट्रपति कहा जाएगा। कार्यकारी अध्याय 7 का यह पद हमें अमेरिका के अध्यक्ष पद की याद दिलाता है। लेकिन केवल नाम की समानता के अलावा अमेरिका के और मसौदा समिति द्वारा अपनाई गई प्रशासन पद्धति में किसी प्रकार की समानता नहीं है। अमेरिका की शासन पद्धति को अध्यक्षीय शासन पद्धति कहते हैं। संविधान के मसौदे में संसदीय प्रणाली अपनाई गई है इन दोनों में मौलिक अंतर है।

अमेरिका की अध्यक्षीय प्रणाली में अध्यक्ष कार्यकारी मंडल का प्रमुख होता है। प्रशासन पूरी तरह उसके आधीन होता है। संविधान मसौदे के अंतर्गत राष्ट्रपति का स्थान इंग्लैंड के संविधान के राजा के समान है। वह राज्य का प्रमुख है लेकिन कार्यकारी मंडल का नहीं। वह राष्ट्र का प्रतिनिधित्व करता है लेकिन राष्ट्र पर प्रशासन नहीं करता। वह राष्ट्र का प्रतीक है। प्रशासन में उनका स्थान प्रतीकात्मक ठप्पे का है, राष्ट्र के निर्णय उनके हस्ताक्षर और ठप्पे के साथ घोषित किए जाते हैं। अमेरिका के संविधान के अनुसार अध्यक्ष के तहत विभिन्न विभागों के सचिव काम करते हैं। इसी प्रकार भारतीय संघराज्य के राष्ट्रपति के अधिकार में विभिन्न शासकीय विभागों के मंत्री काम करेंगे। यहां एक बार फिर दोनों के बीच मौलिक अंतर है। किसी भी सचिव द्वारा दी गई सलाह मानने का बंधन अमेरिका के राष्ट्रध्यक्ष पर नहीं है। भारतीय संघराज्य के राष्ट्रपति के लिए लेकिन उनके मंत्रियों की दी हुई सलाह को मानना बंधनकारी है। मंत्रियों की सलाह के खिलाफ जाकर अथवा उनकी सलाह के बगैर वह कुछ नहीं कर सकते। अमेरिका के अध्यक्ष किसी भी सचिव को किसी भी वक्त पदमुक्त कर सकते हैं। भारतीय संघराज्य के राष्ट्रपति को लेकिन संसद में मंत्रियों को जब तक बहुमत प्राप्त है तब तक कुछ करने का अधिकार नहीं।

अमेरिका की अध्यक्षीय शासनप्रणाली कार्यकारी मंडल तथा कानून मंडल के विभाजन पर आधारित है, जिसके कारण अध्यक्ष और उनके सचिव काँग्रेस के सदस्य नहीं होते। मसौदा संविधान को यह प्रणाली मंजूर नहीं। भारतीय संघराज्य के मंत्री संसद के सदस्य होते हैं। केवल संसद के सदस्य ही मंत्री बन सकते हैं। संसद के अन्य सदस्यों की तरह

ही मंत्रियों के भी कुछ अधिकार होते हैं, जैसे कि, वे संसद में बैठ सकते हैं। चर्चा में हिस्सा ले सकते हैं। और उसके कामकाज में मतदान कर सकते हैं। अर्थात्, दोनों शासन पद्धतियां जनतांत्रिक हैं और इनमें से एक को चुनना इतना आसान नहीं। जनतांत्रिक कार्यकारी मंडल के लिए दो शर्तें पूरी करनी पडती हैं। एक– कार्यकारी मंडल का स्थिर होना आवश्यक है। दो– कार्यकारी मंडल का उत्तरदायी होना जरूरी है। दुर्भाग्य से इन दोनों बातों का समपरिमाण में भरोसा देने वाली प्रणाली अब तक बन नहीं पायी है। अधिक स्थिरता और कम जिम्मेदारी का समावेश जिसमें है ऐसी प्रणाली मिल सकती है अथवा अधिक जिम्मेदारी और कम स्थिरता वाली प्रणाली भी मिल सकती है। अमेरिका और स्विट्जरलैंड की शासन प्रणाली में स्थिरता अधिक और जिम्मेदारी कम है वहीं ब्रिटेन की शासन पद्धति अधिक जिम्मेदार है लेकिन उसमें स्थिरता कम है। इसके कारण स्पष्ट हैं। अमेरिका का कार्यकारी मंडल असंसदीय है। यानी कि, अपने अस्तित्व के लिए वह काँग्रेस से प्राप्त बहुमत पर निर्भर नहीं है। इसके बिल्कुल उल्टा, इंग्लैंड में संसदीय कार्यकारी मंडल है। इसका मतलब उसका अस्तित्व संसद के बहुमत पर निर्भर है। असांसदीय कार्यकारी मंडल के कारण अमेरिका की काँग्रेस कार्यकारी मंडल को बर्खास्त नहीं कर सकती। लेकिन, सदन के बहुसंख्य सदस्यों का विश्वास भंग हो जाने पर इस्तीफा देना संसदीय प्रशासन के लिए अनिवार्य हो जाता है। जिम्मेदारी के नजरिए से देखें तो असांसदीय कार्यकारी मंडल संसद से संबद्ध न होने के कारण विधिमंडल की ओर से उसकी कम जवाबदेही बनती है। इसकी तुलना में देखें तो बिल्कुल उल्टा, संसदीय कार्यकारी मंडल संसद के बहुमत पर ज्यादा निर्भर होने के कारण वह अधिक जिम्मेदार होता है। संसदीय पद्धति असंसदीय पद्धति से अधिक जिम्मेदार होती है इतना ही इन दोनों में फर्क नहीं है, जिम्मेदारी का मूल्यांकन करने का समय और पद्धति में भी इनमें फर्क है। असांसदीय मूल्यांकन शासनपद्धति में – जोकि अमेरिका में प्रचलित है कार्यकारी मंडल की जिम्मेदारी का कालबद्ध होता है। दो साल में एक बार वह किया जाता है। मतदाताओं की ओर से वह किया जाता है। संसदीय शासनपद्धति के अनुसार चलने वाले इंग्लैंड में कार्यकारी मंडल की जिम्मेदारी का मूल्यांकन रोजमर्रा और कालबद्ध दोनों तरीकों से होता है। प्रश्न, प्रस्ताव, अविश्वास प्रस्ताव, स्थगन प्रस्ताव और भाषणों पर चर्चा आदि माध्यमों के सहारे सभागृह के सदस्य रोजमर्रा मूल्यांकन करते हैं। समयबद्ध मूल्यांकन हर पांच सालों के बाद या उनसे पहले होने वाले चुनावों के समय मतदाताओं की ओर से होता है। कहा जाता है कि, अमेरिका में अस्तित्व में न होने वाली जिम्मेदारी का रोजमर्रा का मूल्यांकन समयबद्ध मूल्यांकन से अधिक असरदार होता है और भारत जैसे देश को इसकी ज्यादा जरूरत है। कार्यकारी मंडल के बारे में सोचते हुए संसदीय पद्धति की सिफारिश कर मसौदा संविधान ने स्थिरता से अधिक जिम्मेदारी को प्रधानता दी है।

अब तक मैंने मसौदा संविधान के तहत प्रशासन पद्धति का विवरण दिया है। अब

मैं संविधान के प्रकार इस दूसरे मुद्दे की तरफ आता हूं।

इतिहास में संविधान के दो प्रमुव प्रकार दिखाई देते हैं। एक है संघीय (Unitary) और दूसरा है संयुक्त संघीय (Federal)। संविधान की अपनी दो खासियतें हैं। (1) केंद्र के पास सर्वाधिकार होना और (2) सहायक सार्वभौम सत्ताओं का अभाव। इसके विपरीत में संयुक्त संविधान में, (1) केंद्रीय सत्ता के साथ सहायक सत्ता का होना और (2) इसमें हर सत्ता तय क्षेत्र में सार्वभौम होती है, ये दो बातें होती हैं। दूसरे शब्दों में संयुक्त संविधान का मतलब है दो सत्ता केंद्रों का होना । दोहरा सत्ताकेंद्र होने की हद तक मसौदा संविधान संयुक्त संविधान की तरह ही है। जिस संविधान का प्रस्ताव रखा गया है उसकी दोहरी सत्ता केंद्र व्यवस्था के तहत केंद्र में एक संघराज्य होगा और उसकी परिधि में घटक राज्य होंगे। संविधान की ओर से उनके लिए निर्धारित किए क्षेत्र में दिए गए सार्वभौम अधिकारों का इस्तेमाल करने की उन्हें आजादी होगी। अमेरिका में भी दोहरे सत्ता केंद्र हैं – उनमें से एक को संयुक्त सरकार और दूसरे को राज्य सरकार कहते हैं। ये प्रस्तावित सरकार के संघराज्य और घटक राज्यों के साथ मेल खाने वाले हैं। अमेरिका के संविधान में संयुक्त सरकार केवल राज्यों का संघ नहीं और घटक राज्य संयुक्त सरकार के प्रशासकीय हिस्सा अथवा अभिकर्ता नहीं। इसी प्रकार मसौदा संविधान में निर्देशित किए अनुसार भारतीय संविधान राज्यों का संघ नहीं है। और घटक राज्य केंद्र सरकार के प्रशासकीय घटक अथवा अभिकर्ता संस्थाएं नहीं। यहां भारत और अमेरिका के संविधानों की समानता समाप्त होती है। दोनों संविधानों की समानताओं से अधिक दोनों को एक–दूसरे से अलग करने वाले भेद अधिक मूलभूत और स्पष्ट हैं। सूक्ष्मता से समझें तब ही इन दोनों में क्या अंतर है आपको पता चलेगा।

अमेरिकी संघराज्य और भारतीय संघराज्य में दो प्रमुख भेद हैं। अमेरिका की दोहरे सत्ता केंद्र वाली प्रणाली दोहरी नागरिकता के साथ जुडी हुई है। अमेरिका में देश की नागरिकता के साथ–साथ राज्य की नागरिकता भी होती है। अमेरिका के संविधान में हुए 14वें संविधान संशाधन से दोहरी नागरिकता की शर्तें बहुत हद तक शिथिल हो गई हैं। इसलिए अमेरिका में नागरिकता का अधिकार, विशेषाधिकार और आजादी वापिस लेने पर राज्य पर प्रतिबंध लगाया गया है। साथ ही विलियम एंडरसन द्वारा ध्यान दिलाए जाने के बाद मतदान का अधिकार और सरकारी नौकरी में मौके आदि मामलों में राज्य अपने नागरिकों की तरफदारी कर सकते हैं और करते हैं। इस प्रकार का समर्थन कई मामलों में निचले स्तर का होता है। राज्य में अथवा स्थानीय स्वराज्य संस्था में नौकरी पाने के लिए ज्यादातर जगहों पर उसी राज्य का निवासी या वहां का नागरिक होना जरूरी होता है। शराब की बिक्री या ऋणपत्र जैसे व्यवसाय में प्रशासनिक कानूनों का जहां कठोरतापूर्वक पालन करना जरूरी होता है वहां भी उपरिनिर्दिष्ट शर्तों की पूर्ती करनी पड़ती है।

अपने नागरिकों के विशेष लाभ के लिए हर संयुक्त राज्य को उनके कार्यक्षेत्र में कुछ विशेष अधिकार बहाल किए गए हैं। उदा. शिकार और मच्छीमारी राज्य के अधिकार में

होते हैं। शिकार और मच्छीमारी के लिए जरूरी आज्ञापत्र पाने के लिए राज्य का निवासी न होने की स्थिति में राज्य के निवासी व्यक्ति से अधिक शुल्क उससे लेने का चलन है। राज्य के महाविद्यालय और विश्वविद्यालयों के प्रवेश के लिए राज्य के निवासी न होने वालों से अधिक शुल्क लिया जाता है। और आपातकाल को छोड दें तो अन्य समय केवल राज्य के नागरिकों को ही अस्पताल और अनाथालयों में प्रवेश दिया जाता है।

संक्षेप में कहना हो तो, ऐसे अनेक अधिकार हैं जो राज्य सरकार केवल अपने नागरिकों और निवासियों को ही देती है। अनिवासियों के लिए उनको पाने की कानूनी तरीके से मनाही होती है। या फिर अनिवासियों के लिए निवासियों से अधिक कठिन शर्तों पर वे बहाल किए जाते हैं। अपने राज्य के नागरिकों को मिलने वाली इन सुविधाओं के कारण राज्य के नागरिक महत्वपूर्ण प्राप्त होता है। इन सभी बातों पर सूक्ष्मता से गौर करने पर पता चलता है कि नागरिकों और अनिवासियों को मिलने वाले अधिकारों में बहुत फर्क होता है। कारण विशेष से होने वाली या अल्पकालिक रिहाइशी में हर जगह कुछ विशेष कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है।

प्रस्तावित भारतीय संविधान में दोहरी राज्यप्रणाली के साथ-साथ एक नागरिकता है। पूरे भारत में एक ही नागरीकता है - भारतीय नागरिकता। वह राज्य की नागरिकता नहीं। किसी भी राज्य का निवासी होने के बावजूद हर भारतीय को देश का नागरिक होने के नाते समान अधिकार हैं। प्रस्तावित भारतीय संविधान की दोहरी राज्य प्रणाली अमेरिका की दोहरी राज्य प्रणाली एक और मामले में अलग है। अमेरिका में केंद्र और घटक राज्यों का संविधान में आंशिक संबंध है। अमेरिका के केंद्र और राज्य सरकार के संबंधों का वर्णन करते हुए ब्राईस (Bryce) कहते हैं .

"केंद्र अथवा राष्ट्रीय सरकार और राज्य सरकारों की तुलना एक ही भूमि पर खडी बड़ी इमारत और छोटी इमारतों के समूह के साथ की जा सकती है। लेकिन वे मूलतः एक-दूसरे से भिन्न हैं।"

अमेरिका की केंद्र और राज्य सरकारें परस्पर भिन्न हैं। लेकिन कितनी भिन्न हैं? इस भिन्नता की कुछ हद तक पहचान निम्नलिखित वास्तविक स्थितियों से होती है -

1. प्रशासन का जनतांत्रिक स्वरूप कायम रखते हुए हर राज्य को अपना संविधान बनाने की इजाजत है।

2. राष्ट्रीय सरकार पर निर्भर न रहते हुए राज्य के लोगों ने अपने संविधान में संशोधन/परिवर्तन करने का अधिकार हमेशा के लिए अपने पास रखा है।

ब्राइस के ही शब्दों में अगर कहना हो तो- "अमेरिका के राज्य के राष्ट्रसंघ का यह स्वरूप राज्य के अपने संविधान में किए गए प्रबंधों पर आधारित है। राज्य की सत्ता,

विधानसभा, कार्यकारी मंडल और न्याय मंडल राज्य संविधान द्वारा निर्मित और राज्य के अधीन हैं।''

प्रस्तावित भारतीय संविधान में ऐसी कोई व्यवस्था नहीं है। भारत का कोई भी राज्य (हर हाल में भाग 1 के) अपना संविधान निर्माण नहीं कर सकता। केंद्र और राज्यों का एक ही संविधान है और कोई राज्य इससे अपने को मुक्त नहीं रख सकता। उसी घेरे में रह कर उन्हें कार्य करना होगा।

अब तक मैंने अमेरिका के संघराज्य और भारतीय संघराज्य इनमें क्या अंतर है इस ओर आपका ध्यान दिलाया। प्रस्तावित भारतीय संघराज्य के कुछ अन्य लक्षण भी हैं। उनके कारण केवल अमेरिकन संघराज्य का ही नहीं वरन् अन्य संघराज्यों से उनका अलग होना स्पष्ट होता है। अमेरिका के अलावा अन्य सभी संघराज्य पद्धतियां संघराज्य के तय सांचों में बद्ध हैं। किसी हालत में वे अपना आकार और प्रकार बदल नहीं सकते। कभी भी वे एकसंघ रूप धारण नहीं कर सकते। लेकिन मसौदा संविधान समय और परिस्थितियों की जरूरत के अनुसार केंद्रीय तथा संघराज्य – दोनों रूप धारण कर सकता है। इस प्रकार उसकी रचना की गई है कि सामान्य स्थितियों में वह संघराज्य के रूप में काम करेगा लेकिन युद्ध की स्थितियों में वह केंद्रीभूत तरीके से काम करेगा। अनुच्छेद 275 के प्रावधानों के मुताबिक राष्ट्रपति को बहाल किए गए अधिकारों में उन्होंने घोषणा-पत्र जारी किया कि पूरे राज्य की तस्वीर ही बदल जाएगी और राज्य का केंद्रीभूत राज्य में परिवर्तन होगा। इस घोषणा के अनुसार केंद्र सरकार निम्नांकित अधिकार हासिल कर सकती है (1) राज्यसूची के विषयों सहित अन्य किसी भी विषय में कानून बनाने का अधिकार। (2) राज्यों के अधिकार में आने वाले विषयों के बारे में प्राप्त कार्यकारी सत्ता का उपयोग राज्य कैसे करें इस बारे में मार्गदर्शन करने का अधिकार। (3) किसी भी अधिकारी को किसी भी उद्देश्य के साथ सत्ता सौंपने का अधिकार और (4) संविधान के आर्थिक प्रबंधों के स्थगन का अधिकार – किसी भी संघराज्य को इस प्रकार केंद्रीभूत राज्य में परिवर्तन करने का अधिकार नहीं। प्रस्तावित मसौदा संविधान के संघराज्य और अपने को ज्ञात अन्य सभी संघराज्यों के बीच का भेद यह एक महत्वपूर्णमुद्दा है।

प्रस्तावित भारतीय संघराज्य में और अन्य संघराज्यों में केवल इतना ही फर्क नहीं है। संघप्रणाली में अगर प्रशासन प्रभावशाली न हो तो उसे कमजोर माना जा सकता है। संघराज्य पद्धति की समीक्षा करते हुए कहा जाता है कि – उसे दो तरह की कमजोरियों का सामना करना पड़ता है – कठोरता और कानूनी स्वरूप। संघराज्य प्रणाली अर्थात् federal system के यह दो मूलभूत दोष हैं इसमें दो राय नहीं हो सकती। संघराज्य का संविधान अनिवार्यतः लिखित रूप में होता है और लिखित संविधान में निश्चित रूप से कठोरता होती है। संघराज्य का संविधान अर्थात् संविधान के कानून के अनुसार केंद्र अथवा राज्य सरकारों के बीच सार्वभौमिकत्व का विभाजन। इसके अपरिहार्य रूप से दो परिणाम होते हैं -1) राज्यों को दिए गए क्षेत्रों में केंद्र द्वारा किसी क्षेत्र में हस्तक्षेप किया जाना या इसके खिलाफ हो तो उससे

संविधान का उल्लंघन होता है। और, 2) इसे न्याय की सीमा का उल्लंघन माना जाएगा और इस बारे में न्याय केवल न्यायपालिका द्वारा ही किया जाएगा। संघराज्य का यह स्वरूप होने की वजह से संघराज्य संविधान पर कानूनी होने के आरोप से मुक्त नहीं। संघराज्य संविधान के ये दोष अमेरिका के संविधान में खुले तौर पर दिखाई देते हैं।

आगे चल कर संघराज्य प्रणाली को जिन देशों ने स्वीकार किया उन्होंने कठोर और कानूनी होने के मूलभूत दोषों से निर्माण हो रहे बुरे परिणामों को घटाने की कोशिश की इस संदर्भ में ऑस्ट्रेलिया का उदाहरण दिया जा सकता है। ऑस्ट्रेलिया के संविधान ने संघराज्य के स्वरूप की कठोरता कम करने के लिए निम्नलिखित उपायों का अनुसरण किया –

1) राष्ट्रसंघ की संसद को समवर्ती सूची के विषयों से संबंधीत कानून बनाने के अधिकार देकर असाधारण विषयों से संबंधित कानून बनाने के अधिकार कम किए।

2) अल्प समय के लिए कार्यान्वित होने वाले कुछ अनुच्छेदों पर अमल संसद द्वारा तय किए गए समय तक ही लागू रहेंगे इस बात का प्रबंध किया गया।

यह बात साफ है कि ऑस्ट्रेलिया के संविधान के तहत ऑस्ट्रेलियन संसद ऐसी कई बातें कर सकती है जो अमेरिकन काँग्रेस के अधिकार में नहीं आतीं और उन्हें करने के लिए अमेरिका के प्रशासन को सर्वोच्च न्यायालय में जाना पड़ता है। इस प्रकार के अधिकार देने की तात्विकता ढूंढने के लिए सर्वोच्च न्यायालय की क्षमता, कुशलता और इच्छा पर निर्भर रहना पड़ता है।

खुद ऑस्ट्रेलिया द्वारा जितना उपभोग नहीं किया गया उससे अधिक कठोर और कानूनी होने की तीव्रता कम करने के लिए मौजूदा संविधान ने ऑस्ट्रेलियन योजना पर गौर किया। ऑस्ट्रेलिया के संविधान की तरह ही कानून बनाने के समवर्ती अधिकारों की प्रदीर्घ सूची का इसमें समावेश किया है। आस्ट्रेलियन संविधान में समवर्ती विषयों की संख्या 39 है। मसौदा संविधान में वे 37 हैं। ऑस्ट्रेलियन संविधान के जैसे ही मसौदा संविधान में ऐसे 6 अनुच्छेद हैं जिनका प्रावधान तात्कालिक है और परिस्थितयों के अनुसार कभी भी संसद उनमें बदलाव कर सकती है। कुछ मामलों में कानून बनाने के अधिकार संसद को देकर मसौदा संविधान ऑस्ट्रेलियन संविधान से बहुत आगे निकल गया है। ऑस्ट्रेलिया की संसद को कानून बनाने के विशेषाधिकार दिए है। आस्ट्रेलियन संसद को केवल 3 विषय के लिए विशेषाधिकार प्राप्त हैं, लेकिन मसौदा संविधान में 91 विषय के लिए कानून बनाने का विशषाधिकार है। इस प्रकार प्रकृति से यह कठोर मानी जाने वाली संघराज्य प्रणाली को (federalism) मसौदा संविधान द्वारा जहां तक संभव हो, अधिक से अधिक लचीलापन दिया है।

मसौदा संविधान ने ऑस्ट्रेलियन संविधान का अनुसरण किया है या फिर बड़े पैमाने पर अनुसरण किया है, केवल इतना भर कहकर नहीं चलेगा। एक बात ध्यान में रखनी होगी कि, संघराज्य की कठोरता और उसके कानूनी स्वरूप को मात देने के लिए नए उपायों की योजना की है जो बेहद विशिष्टतापूर्ण हैं तथा वह और कहीं दिखाई नहीं देती।

इसमें से पहले, अर्थात् सामान्य स्थितियों में केवल प्रांतों से संबंधित विषयों के संदर्भ में भी संसद को कानून बदलने का अधिकार दिया गया है। इस मामले में अनुच्छेद 226, 227 और 229 की ओर मैं ध्यान दिलाना चाहूंगा। अनुच्छेद 226 के अनुसार राज्य की सूची का एकाध विषय भी अगर राज्य से संबंधित हो तो भी देश के लिए महत्वपूर्ण हो तो वरिष्ठ सभागृह में दो बटा तीन 2/3 के बहुमत से पारित किए जाने के बाद केंद्र सरकार उस संदर्भ में कानून बना सकेगी। राष्ट्रीय आपातकाल के समय अनुच्छेद 227 के तहत इसी प्रकार का अधिकार संसद को दिया गया है। प्रांत अगर इजाजत दें तो संसद के इस प्रकार के अधिकारों का उपयोग करने का प्रावधान अनुच्छेद 229 में दिया गया है। इनमें से आखरी वाला प्रबंध ऑस्ट्रेलिया के संविधान में अगर है तब भी अन्य दो मसौदा संविधान की विशेषताएं हैं।

कठोर और कानूनी होना कम करने के लिए स्वीकारा गया दूसरा उपाय है। संविधान में सुधार के लिए संविधान के अनुच्छेदों का दो विभागों में विभाजन होता है। पहले हिस्से में, (क) केंद्र और राज्यों में कानून बनाने वाले अधिकारों का विभाजन (ख) संसद में राज्यों को दिया गया प्रतिनिधित्व और (ग) न्यायालयों के अधिकार से संबंधित अनुच्छेद। अन्य सभी अनुच्छेदों का समावेश दूसरे हिस्से में किया गया है। संविधान का बड़ा हिस्सा संविधान के दूसरे हिस्से से व्याप्त है और संसद दो तरह के बहुमत से उनमें सुधार कर सकती है, हर सदन में उपस्थित और मतदान में हिस्सा लेने वाले कुल सदस्यों की संख्या के 2/3 बहुमत द्वारा तथा हर सदन की कुल सदस्य संख्या के बहुमत द्वारा। इस अनुच्छेद में सुधार के लिए राज्यों की अनुसंमति की जरूरत नहीं। केवल पहले हिस्से के अनुच्छेदों में सुधार के लिए मात्र अतिरिक्त सुरक्षा के तौर पर राज्यों की अनुसंमति की शर्तों की योजना की गई है।

इसलिए कोई भी बेहिचक यह कह सकता है कि कानूनी और कठोर होने के दोषों का भारतीय संघराज्य पर कोई असर नहीं होगा। लचीलापन इस संघराज्य की खासियत है।

अन्य संघराज्यों की तुलना में प्रस्तावित भारतीय संघराज्य की एक और खासियत है। अलग विधिमंडल, अलग कार्यकारी मंडल और न्यायिक अधिकार के बारे में विभाजित अधिकारों पर निर्भर होने के कारण हर सत्ता केंद्र में कानून, प्रशासन और न्यायिक सुरक्षा में अनिवार्यत: भिन्नता पैदा होती है। खास सीमा तक इस भिन्नता का अनुचित असर नहीं होता। स्थानीय जरूरतें और हालात ध्यान में लें तो प्रशासन को कानून बनाने के लिए इस बात का स्वागत भी किया जा सकता है। लेकिन यही भिन्नता एक खास सीमा के

बाद बौखलाहट भरी स्थितियां निर्माण करने का कारण भी बन सकती हैं। उसके कारण कई संघराज्यों में इस प्रकार की बौखलाहट वाली स्थितियां उत्पन्न भी हुई हैं। संघराज्य में अगर 20 राज्य होंगे तो विवाह, तलाक, विरासत के अधिकार, पारिवारिक संबंध, करार, क्षतिपूर्ति, अपराध, नाप-तौल, चेक और अधिपोषण, वाणिज्य, न्यायप्राप्ति की क्रिया, प्रशासन का दर्जा और पद्धति के बारे में अलग-अलग कानूनों की कल्पना करनी पड़ेगी। ऐसे हालात न सिर्फ राज्यों को कमजोर करते हैं बल्कि एक राज्य से दूसरे राज्य में जाने वाले नागरिक के लिए भी असहनीय बन जाते हैं। क्योंकि, इससे एक राज्य में कानून द्वारा सहमति प्राप्त बात दूसरे राज्य में गैर-कानूनी साबित हो सकती है। भारतीय संघराज्य का स्वरूप कायम करने के उपाय और मार्ग मसौदा संविधान ने सुझाए हैं। साथ ही देश की एकता पर आंच न आने देने के लिए आवश्यक मूलभूत बातों में भी एकसूत्रता पैदा की है। मसौदा संविधान द्वारा इसके लिए तीन सूत्र अपनाए हैं। [Civil & Criminal Procedure Code]

1) एक ही न्याय पद्धति
2) मूलभूत नागरिक और फौजदारी संहिता में एक समानता; और
3) महत्वपूर्ण पदों पर नियुक्तियों के लिए समान अखिल भारतीय नागरी सेवाएं।

मेरे कहने के मुताबिक दोहरी न्याय व्यवस्था, दोहरी विधि संहिता और दोहरी नागरी सेवा में संघराज्य की मूल दोहरी राजनीतिक व्यवस्था की तार्किक परिणति है। अमेरिका में संघराज्य न्याय व्यवस्था और राज्य न्याय व्यवस्था एक-दूसरे से भिन्न और स्वतंत्र हैं। भारतीय संघराज्य में राज्य की व्यवस्था दोहरी होने के बावजूद न्याय पद्धति बिल्कुल दोहरी नहीं है। उच्च न्यायालय तथा सर्वोच्च न्यायालय एक ही न्याय व्यवस्था के अभिन्न अंग हैं। घटनात्मक कानून, कानून या फौजदारी कानून से निर्माण होने वाले सभी मामलों को हल करने के लिए अधिकार क्षेत्र के तौर पर उच्च न्यायालय और सर्वोच्च न्यायालय की एक-सी न्याय व्यवस्था निर्माण की गई हैंइस कार्य पद्धति में सभी तरह की उपाय योजनाओं की भिन्नता को टालने के लिए इस व्यवस्था को बनाया गया है। लगभग इसी तरह की व्यवस्था केवल कनाडा में है। ऑस्ट्रेलिया में भी लगभग इसी तरह की व्यवस्था है।

नागरी और सामुदायिक जीवन के आधार पर बने कानूनों की भिन्नता को भी ध्यानपूर्वक दूर करने की कोशिश की गई है। दीवानी और फौजदारी कानून की महत्वपूर्ण संहिताएं जैसे कि नागरी आचार संहिता, दंड संहिता, फौजदारी आचार संहिता, गवाही का कानून, संपत्ति हस्तांतरण का कानून, तलाक एवं विरासत के अधिकार संबंधी कानून आदि को भी समाहित कर समवर्ती सूचित किया है। जिससे कि संघराज्य प्रणाली को कमजोर न होने देते हुए जरूरी समानता हमेशा के लिए बरकरार रखी जाए।

मेरे अनुसार संघराज्य (Federal) प्रणाली की दोहरी व्यवस्था के साथ-साथ सभी

संघराज्यों में एक केंद्रीय नागरी सेवा और दूसरी राज्य नागरी सेवा होती है। भारतीय संघ राज्य में दोहरी व्यवस्था की दोहरी नागरी सेवा होने के बावजूद उसका एक अपवाद है। स्पष्ट है कि हर देश की प्रशासनिक संरचना में प्रशासन का स्तर कायम रखने के लिए कुछ विशिष्ट महत्वपूर्ण पद होते हैं। प्रशासन के विस्तृत और उलझे हुए तानेबाने में ऐसे पद ढूंढ निकालना आसान नहीं होता। लेकिन इसमें कोई शक नहीं कि नागरी सेवा के इन पदों पर नियुक्त अधिकारियों की क्षमता पर प्रशासन का स्तर निर्भर होता है। संयोग से हमें पूरे देश के ं समान प्रशासनिक पद्धति की विरासत मिली है। और हमें अहसास है कि मौके के वे पद कौन-से हैं। इसलिए राज्यों को अपनी नागरी सेवा निर्माण करने से रोके बगैर अखिल भारतीय स्तर पर भारतीय नागरी सेवा के माध्यम से समान योग्यता और समान वेतन की कसौटी पर चुने हुए उम्मीदवारों की ही नियुक्ति पूरे संघराज्य के मौके के पदों पर करने का प्रावधान संविधान में किया गया है।

प्रस्तावित संघराज्य की ये प्रमुव विशेषताएं हैं। अब मसौदा संविधान समीक्षकों के इस बारे में जो मत हैं आइए जान लेते हैं।

कहा जाता है कि मसौदा संविधान में नया कुछ भी नहीं। इसका आधा हिस्सा भारत सरकार कानून, 1935 से लिया गया है और बचा हुआ आधा हिस्सा अन्य देशों के संविधानों से उठाया गया है। मसौदा समिति का अपना योगदान बहुत कम है।

सवाल यह भी पूछा जा सकता है कि दुनिया के इतिहास में आज की तारीख को निर्माण किए जाने वाले संविधान में क्या कुछ नया भी हो सकता है? पहला लिखित संविधान बनने के 100 सालों से अधिक समय बीत चुका है। कई देशों ने उसी का अनुकरण कर अपने संविधानों का निर्माण किया है। संविधान का नियमित सहयोग क्या हो इसका निर्णय बहुत पहले ही किया गया है। साथ ही संविधान के मूलभूत सिद्धांत क्या हों इस बारे में समर्थता के स्तर पर स्वीकृति हो चुकी है। इस पृष्ठभूमि पर प्रमुख प्रावधानों के बारे में सभी संविधानों में समानता दिखाई देना स्वाभाविक है। आज निर्माण होने वाले संविधान में अगर नया कुछ कर दिखाना हो तो इतना ही कि पुराने संविधान के दोषों को दूर करने के लिए बदलाव सुझाना और देश की जरूरत के अनुसार आवश्यक बातें जोड़ना। अंधे होकर अन्य संविधानों की नकल करने का आरोप संविधान के अधूरे अध्ययन पर आधारित है इसका मुझे पूरा-पूरा यकीन है। मसौदा संविधान में नया क्या है इस ओर मैंने आपका ध्यान दिलाया है। जिन्होंने संविधान का अध्ययन किया है और इसके बारे में निष्पक्ष तरीके से सोच-विचार के लिए जो तैयार हैं वे मानेंगे कि मसौदा समिति ने अपना कर्तव्य निभाते हुए बिना देखे और गुलामी की मानसिकता से अनुसरण नहीं किया है।

भारत सरकार कानून, 1935 का बहुत बड़ा हिस्सा मसौदा संविधान में है इस आरोप को लेकर मैं अपनी नाराजगी व्यक्त नहीं करूंगा। अच्छी बातें स्वीकारने में शर्मिंदा होने

जैसा कुछ नहीं है। वह कोई उधारी का हिस्सा नहीं है। संविधान की मौलिक कल्पना पर किसी के बौद्धिक संपदा का अधिकार नहीं होता। मुझे अगर किसी बात का बुरा लगता हो तो वह इस बात का कि भारत सरकार कानून, 1935 से लिए प्रावधानों का बड़ा हिस्सा ज्यादातर प्रशासन के विवरण से जुड़ा हुआ है। मैं मानता हूं कि प्रशासन के विवरण को संविधान में स्थान नहीं दिया जाना चाहिए। मेरी इच्छा है कि संविधान में इस हिस्से को टालने का उपाय मसौदा समिति ढूंढे लेकिन उसे शामिल करने की जरूरत का समर्थन अगले वाक्य को पढ़ कर किया जा सकता है। ग्रीस के इतिहास के दार्शनिक ग्रोट ने कहा है कि,

''विशिष्ट वर्ग के केवल कुछ बहुसंख्यक लोगों द्वारा ही नहीं वरन् सबके द्वारा आदरभाव के साथ नैतिकता का पालन किया जाना स्वतंत्र और शांतिपूर्ण प्रशासन की अनिवार्य शर्त है। अपनी वर्चस्व स्थापित करने की सामर्थ्य न होने वाला कोई भी बलदंड और दुराग्रही अल्पसंख्यकों का वर्ग स्वतंत्र संस्थाओं के लिए काम करना असंभव कर देता है।''

ग्रोट की राय में आदर सहित नैतिकता अर्थात्, ''संवैधानिक सिद्धातों के बारे में सर्वोच्च स्तर का आदरभाव मन में रखते हुए कानून की तय मर्यादा के अंदर रहकर काम करने वाले शासनों का आदेशों का पालन करते हुए अपनी राय और कृति मुक्त होकर व्यक्त करनी चाहिए। जनता से संबंधित लिए गए निर्णयों के अनुसार सत्ताधारियों की संयम के साथ समीक्षा करनी चाहिए। साथ ही विभिन्न पार्टियों की रस्साकशी की कटुता स्वाभाविक होते हुए भी संवैधानिक तत्वों के बारे में आपका जितना ही विरोधियों के मन में भी आदर है इसका विश्वास देश के हर नागरिक के मन में प्रस्फुटित होना चाहिए।'' (सुनिए... सुनिए)।

जनतांत्रिक संविधान को शांतिपूर्ण तरीके से लागू करने के लिए संवैधानिक नैतिक प्रचार की जरूरत है ऐसा हर कोई मानता है लेकिन उसके साथ जुड़ी दो अन्य बातें दुर्भाग्य से मानी नहीं जातीं। उनमें से पहली बात है प्रशासकीय स्वरूप का संविधान के स्वरूप से निकट का संबंध होता है। प्रशासन के स्वरूप की संविधान के स्वरूप के साथ घनिष्ठ समंजस्य बैठना जरूरी होता है। दूसरी बात यह कि संविधान के स्वरूप में बदलाव किए बिना केवल प्रशासनिक व्यवस्था में बदलाव कर उसके द्वारा संविधान को प्रभावहीन कर और विरोध कर संविधान पर अमल करने की राह में बाधाएं उत्पन्न करना पूरी तरह संभव है। इतिहासकार ग्रोट के कथनानुसार जहां लोगों के बीच नैतिकता बनाना प्रस्फुटित है वहां प्रशासनिक विवरणों को संविधान से हटा कर उसे विधानसभा को सौंपने की जोखिम स्वीकारी जा सकती है। सवाल यह है कि इस प्रकार की निर्माण को नैतिकता सहज भावना नहीं है। उसे पालना-पोसना पड़ता है। हमारे लोगों के बीच अभी वह पैदा नहीं हुई है। हमें यह सीखना होगा। भारतीय लोकतंत्र भारतीय मिट्टी का केवल ऊपरी आवरण है। यह मिट्टी मूलतः अलोकतांत्रिक है।

इन स्थितियों में प्रशासनिक व्यवस्था निर्माण करने की सूचनाओं के लिए विधानसभा

का विश्वास करना बुद्धिमानी साबित नहीं होगा। संविधान में उन्हें समाविष्ट करने के पीछे यही नजरिया है।

संविधान में उन्हें समाविष्ट करने के पीछे यही दृष्टिकोण है।

मसौदा संविधान पर लगाया जाने वाला दूसरा आरोप है कि उसके किसी भी हिस्से में प्राचीन भारतीय राज्यव्यवस्था का प्रतिबिंब दिखाई नहीं देता। कहा जाता है कि भारतीय संविधान का निर्माण प्राचीन हिंदू राज्यव्यवस्था के अनुसार होना चाहिए था। पश्चिमी सिद्धांतों का समावेश किए बगैर नए संविधान की ग्राम पंचायत और जिला पंचायत के प्रारुप के अनुसार उसका ढांचा बनाया जाना चाहिए था। तो कुछ लोगों ने कट्टर विरोध का रवैया अपनाया है। वे किसी भी तरह की प्रांत या केंद्र सरकारें नहीं चाहते। भारत में अधिक से अधिक ग्राम सरकारें चाहिएं। भारतीय विद्वानों का ग्रामीण समाज के लोगों के प्रति जो प्रेम है वह करुणाजनक भले न हो 'असीम'! है।

(हंसी).... इसकी प्रमुख वजह है मेटकाफ द्वारा की गई ग्राम पंचायत और जिला पंचायत की प्रशंसा। उनका जिक्र करते हुए मेटकाफ ने कहा कि वे छोटे प्रजातंत्र हैं जिनमें उनकी जरूरत की सभी चीजें उन्हें गांव में ही उपलब्ध होंगी साथ ही बाहरी दुनिया के साथ उनका कोई संपर्क नहीं रहेगा। इस ग्राम समुदाय का अस्तित्व एक अलग राज्य का स्वरूप धारण करता है। मेटकाफ की राय में आज तक हुई सभी क्रांतियां बदलावों के प्रभाव से भारतीय जनता का जतन करने के काम में अन्य किसी बात से इस ग्राम व्यवस्था ने अधिक योगदान दिया है। साथ ही उन्हें मुक्त और स्वतंत्र जीवन का बड़े पैमाने पर उपभोग करने के लिए यह व्यवस्था उपयुक्त है। यह बात सही है कि जहां और कुछ टिका नहीं रहता वहां ग्राम समुदाय टिके हुए हैं। लेकिन जिन्हें ग्राम समुदायों के बारे में गर्व है वे यह कभी नहीं सोचते कि देश के कुल व्यवहारों में तथा देश का भविष्य गढ़ने में ग्राम समुदाय का कितना नगण्य योगदान रहा है और इसके कारण क्या है? देश का भविष्य निर्माण में उनकी भूमिका का वर्णन खुद मेटकाफ ने किया है। वह कहता है- एक के बाद एक कर राजतंत्र नष्ट होते गए। एक के बाद एक विद्रोह हुए। हिंदु, पठाण मुगल मराठा, सिक्ख और अंग्रेज सब एक के बाद एक राज्यकर्त्ता बने। लेकिन ग्राम समुदाय जैसा था वैसा ही अब तक रहा है। संकट समय आने पर उनमें से कुछ लोग शस्त्र धारण करते हैं और अपने को सुरक्षित करते हैं। शत्रु की सेना देश में संचार करते हुए गुजरती है। ग्राम समुदाय अपने अल्प मवेशियों को चारदीवारी में बंद कर शत्रु की सेना को अपने क्षेत्र से गुजरने देते हैं। उन्हें चुनौती नहीं देते।

देश के इतिहास में ग्राम समुदायों ने ऐसी ही भूमिका निभाई है। यह जानने के बाद किसी को उनके बारे में गर्व क्यों महसूस हो? यह वास्तविकता हो सकती है कि वे सभी तरह के संकटों से बचते आए हैं लेकिन केवल जिंदा रहने का कोई मतलब नहीं। किस स्तर का जीवन जिया यह महत्वपूर्ण है। निश्चय ही उन्होंने केवल निम्न स्तर का

और केवल स्वार्थ के स्तर का जीवन जिया है और इन ग्राम राज्यों के कारण ही भारत का नाश हुआ ऐसा मैं समझता हूं। प्रांतवाद और जातिवाद का निषेध करने वाले गांवों के समर्थन में आगे आए हैं इसका मुझे आश्चर्य होता है। गांव क्या हैं? केवल स्थानीयता के कुंड, अज्ञान की गुफा, संकुचित मानसिकता और जातिवाद। इसीलिए मसौदा संविधान ने गांवों को नकारा और व्यक्ति को घटक माना इसकी मुझे खुशी है।

अल्पसंख्यकों को दी गई छूट के प्रबंधों के कारण भी मसौदा संविधान की आलोचना की जा रही है। इसके लिए मसौदा समिति जिम्मेदार नहीं। संविधान सभा द्वारा लिए गए निर्णयों पर वह अमल करती है। अल्पसंख्यकों को सहूलियतें देने का जो निर्णय संविधान सभा द्वारा लिया गया है और जिस पर अमल किया जा रहा है मेरी राय में वह सही है। इस बारे में मेरे मन में बिल्कुल संदेह नहीं। इस देश में अल्पसंख्यक और बहुसंख्यक दोनों ने गलत मार्ग अपनाया। अल्पसंख्यकों के अस्तित्व को नकारना बहुसंख्यकों की गलती है और अल्पसंख्यकों द्वारा अपने अल्पसंख्यकत्व को सीने से लगाए रखना, उसे चिरस्थायी बनाने की कोशिश करना भी उतना ही गलत है। दोनों उद्देश्य साध्य हो सकें ऐसे उपाय ढूंढना जरूरी है। इस दिशा में आगे बढ़ने की शुरुआत के तौर पर अल्पसंख्यकों का अस्तित्व मानना ही होगा। कोशिश यह भी की जानी चाहिए कि किसी समय अल्पसंख्यक और बहुसंख्यक एकरूप हों। संविधान सभा द्वारा सुझाए गए उपायों का स्वागत होना चाहिए। क्योंकि उनके द्वारा बताए गए उपायों से ही यह दोहरा उद्देश्य साध्य किया जा सकता है। धर्मांधता की भावना को बल देकर अल्पसंख्यकों को दी जा रही सहूलियतों का विरोध करने वालों को मैं दो बातें बताना चाहता हूं। पहली बात यह कि अल्पसंख्यक विस्फोटक शक्ति होती है। उसका विस्फोट होने से पूरे राज्य के बिखर जाने का खतरा होता है। यूरोप का इतिहास इसी प्रकार की भरपूर और भयानक वास्तविक घटनाओं का प्रत्यक्ष गवाह है। दूसरी बात यह है कि भारत के अल्पसंख्यकों ने अपना अस्तित्व बहुसंख्यकों के हाथों सौंपना स्वीकार किया है। आयरलैंड का विभाजन टालने के लिए किए गए लेन-देन के इतिहास में रेडमंड ने कार्सन से कहा था कि प्रोटेस्टंट अल्पसंख्यकों के लिए आपको जो चाहिए उन सहूलियतों की मांग कीजिए लेकिन आयरलैंड को एक ही रहने दीजिए। तब कार्सन ने उन्हें जवाब दिया था कि आपके द्वारा दी जाने वाली सहूलियतें चूल्हे में झोंकिए। हमें यह बिल्कुल मंजूर नहीं कि आप हम पर राज करें। भारत के किसी भी अल्पसंख्यक समुदाय ने ऐसी भूमिका नहीं अपनाई। और बहुसंख्यकता राजनीतिक न होकर जातीय है। इस प्रकार के जातीयवादी बहुसंख्यकों का राज्य अल्पसंख्यकों द्वारा निष्ठा के साथ स्वीकारा गया है। इसीलिए अल्पसंख्यकों के प्रति भेदभाव न करना अपना कर्तव्य है। इसका अहसास बहुसंख्यकों को रखना होगा। अल्पसंख्यकत्व टिका रहे या एकसार हो यह बहुसंख्यकों के बर्ताव पर ही निर्भर होगा। अल्पसंख्यकों के विरोध में भेदभाव करने की आदत बहुसंख्यक जिस क्षण छोड़ेंगे उस क्षण से अल्पसंख्यकों के अस्तित्व का कोई कारण नहीं बचेगा। वे एकसार हो जाएंगे।

मसौदा संविधान के मौलिक अधिकारों से जुडे हिस्से की सबसे अधिक आलोचना हुई है। कहा जाता है कि मौलिक अधिकारों की व्याख्या करने वाले 13वें अनुच्छेद के कई अनुच्छेदों को बरकरार रवते हुए छंटनी की गई। और इन अपवादों ने मौलिक अधिकारों को निगल लिया है। इन अनुच्छेदों का धिक्कार करते हुए कहा गया है कि यह एक तरह की धोखाधड़ी है। समीक्षकों की राय में मौलिक अधिकारों का निरपेक्ष होना आवश्यक है। वरना वे मौलिक अधिकार नहीं रहते। समीक्षक अपनी दलीलों के समर्थन में अमेरिकी संविधान का तथा उस संविधान से पहले इस सुधारों में शामिल अधिकार विधेयकों का सहारा लेते हैं। कहा जाता है कि अमेरिका के अधिकार संबंधी विधेयक में मौलिक अधिकार वास्तव हैं, क्योंकि वे किसी भी सीमा और अपवादों से नियंत्रित नहीं हैं।

खेद के साथ मुझे यह कहना पड़ रहा है कि मौलिक अधिकारों के संदर्भ में सारी समीक्षा गलतफहमी पर आधारित है। पहली बात यह कि मौलिक अधिकारों को मौलिक न होने वाले अधिकारों से अलग-अलग करने के लिए दिए गए आधार पर की गई समीक्षा की नींव मजबूत नहीं है। यह नहीं कहा जा सकता कि मौलिक अधिकार अनिर्बंध होते हैं और मौलिक न होने वाले अधिकार अनिर्बंध नहीं होते। इन दोनों में फर्क यही है कि मौलिक न होने वाले अधिकारों का निर्माण पार्टियों के बीच होने वाले करारों से होता है तो मौलिक अधिकार कानून की देन हैं। मौलिक अधिकार राज्य की देन हो तो भी राज्य उन पर सीमाएं नहीं लगा सकता ऐसा कहा नहीं जा सकता।

दूसरी बात यह कि अमेरिका में स्वछंद मौलिक अधिकार हैं यह कहना गलत है। अमेरिका के संविधान और मसौदा संविधान में जो फर्क है वह आकार के बारे में है, मूल उद्देश्य के बारे में नहीं। अमेरिका के मौलिक अधिकार स्वछंद नहीं हैं इसमें कोई दो राय नहीं। मसौदा संविधान में शामिल मौलिक अधिकारों के अपवादों के समर्थन में अमेरिका के सर्वोच्च न्यायालय के एक मामले का जिक्र किया जा सकता है। मसौदा संविधान के अनुच्छेद 13 में शामिल अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के अधिकार पर जो रोक है उनके समर्थन में सर्वोच्च न्यायालय के कम से कम एक मामले का जिक्र किया जा सकता है। मसौदा संविधान के अनुच्छेद 13 में शामिल अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के अधिकार पर जो रोक है उनके समर्थन में सर्वोच्च न्यायालय के एक निर्णय का जिक्र करना काफी होगा। अपेक्षित बदलाव लाने के लिए हिंसात्मक मार्ग को अपनाने वालों को सजा देने के उद्देश्य से न्यूयार्क अपराध अराजकता कानून की (New York Criminal Anarchy Law) संवैधानिकता के बारे में गिटलॉ खिलाफ न्यूयॉर्क (Gitlaw X Newyork) के मुकदमे में सर्वोच्च न्यायालय ने कहा है कि -

''संविधान द्वारा दी गई अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता गैर-जिम्मेदाराना तरीके से बोलने अथवा प्रकाशित करने की बेरोका आजादी टोक नहीं है। कोई किस बात का चुनाव करे अथवा किसी को मनमाने तरीके से बोलने का पासपोर्ट मिला है ऐसी बात नहीं। अभिव्यक्ति की आजादी का गलत इस्तेमाल करने वालों को सजा नहीं मिलेगी ऐसा भी

नहीं। प्राचीन काल से ही यह मूलभूत सिद्धांत स्थापित हो चुका है।''

इसलिए यह कहना गलत होगा कि अमेरिका के संविधान ही की तरह मूलभूत अधिकारों की सीमाएं अगर तय करनी हों तो उसका प्रावधान संविधान में ही किया जाए और जहां ऐसा नहीं किया गया है वहां सभी संबंधित मामलों के बारे में सोच-विचार करने के बाद ही निर्णय लेने के अधिकार न्यायपालिका को सौंपे जाएं इसका फैसला किया जा सकता है। मुझे खेद है कि अमेरिका का संविधान जानने की अगर यह गलती नहीं है तब भी उसका पूरी तरह गलत मतलब निकाला जा रहा है। अमेरिका का संविधान ऐसा कुछ नहीं करता। साथ आने के अधिकार का अपवाद अगर छोड़ दें तो अमेरिका के नागरिकों को दिए गए मौलिक अधिकारों पर अमेरिकी संविधान अपनी तरफ से किसी तरह की सीमाएं नहीं लादता। अमेरिकी संविधान द्वारा मौलिक अधिकारों पर सीमाएं लादने का अधिकार न्यायपालिका को सौंपा गया है यह कहना भी सही नहीं होगा। सीमाएं लादने का अधिकार विधानसभा का है। समीक्षकों की दृढ़ धारणा से वास्तविक स्थितियां अलग हैं। अमेरिका में संविधान द्वारा दिए गए मौलिक अधिकार असीमित थे इसमें कोई दो राय नहीं। इसके बावजूद तुरंत विधिमंडल के ध्यान में यह बात आ गई कि मौलिक अधिकारों को सीमित करके उन पर नियंत्रण रखना बेहद जरूरी है। इस प्रकार सर्वोच्च न्यायालय के सामने जब इन सीमाओं की संवैधानिकता का सवाल पैदा हुआ तब दलील पेश की गई कि अमेरिका के विधिमंडल को संविधान द्वारा इस प्रकार सीमाएं लादने का अधिकार नहीं दिया है। तब सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पुलिस अधिकारों का सिद्धांत पेश किया गया और मूलभूत अधिकारों की असीमितता का समर्थन करने वालों का विरोध करने के लिए दलील पेश की कि हर राज्य को पुलिस अधिकार दिए गए हैं जो उनमें शुरू से शामिल हैं, इसलिए राज्य के पास इस अधिकार के होने का जिक्र संविधान में अलग से करने की जरूरत नहीं है। इससे पूर्व जिक्र किए गए मुकदमें में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय में जो शब्द कहे गए थे वे मैं आज यहां उद्धृत करता हूं -

''इस आजादी का प्रयोग लोककल्याण में बाधा पैदा करने के लिए करने वालों को, सार्वजनिक नैतिकता को भ्रष्ट करना चाहने वालों को, अपराध वृत्ति को बढ़ावा देना चाहने वालों को या बरगलाने वालों को, सार्वजनिक शांति को भंग करने की कोशिश करने वालों को अपने पुलिस अधिकारों का इस्तेमाल कर सजा देने का अधिकार राज्य को है इस बारे में कोई विवाद पैदा न हो....''

मौलिक अधिकार असीमित हैं - इस प्रकार रचना न करते हुए मसौदा संविधान में पुलिस अधिकार सिद्धांत की सहायता से संसद की मदद के लिए सर्वोच्च न्यायालय पर निर्भर रखे बगैर मौलिक अधिकारों का निर्माण करने का अधिकार संविधान द्वारा प्रत्यक्ष राज्य को दिया गया है। इससे परिणामस्वरूप कोई फर्क नहीं पड़ता। एक में प्रत्यक्ष रूप से जो किया गया है वही दूसरे में परोक्ष रूप से किया गया है। दोनों ही जगह मौलिक अधिकार स्व्छंद या असीमित नहीं हैं।

मसौदा संविधान में मौलिक अधिकारों के साथ-साथ दिशादर्शक सिद्धांत भी दिए गए हैं। संसदीय जनतंत्र के लिए बनाए गए संविधान में यह बिल्कुल नया है। संसदीय जनतंत्र के लिए निर्मित संविधान में ऐसे सिद्धांतों का प्रावधान केवल आयरिश स्वतंत्र राज्य के संविधान में किया गया है। इन दिशादर्शक सिद्धांतों की भी समीक्षा की गई है। ये केवल पवित्र घोषणाएं हैं, उनमें बंधनकारिता की सामर्थ्य नहीं ऐसा भी कहा जाता है।

स्पष्ट है कि यह अनावश्यक टिप्पणी है। कई शब्दों के माध्यम से संविधान ही यह कह रहा है।

अगर कोई कहे कि दिशादर्शक सिद्धांतों को कानून का समर्थनात्मक बल ही न मिले तो मैं यह मान सकता हूं। लेकिन अगर कोई यह कहे कि उसके पीछे कोई बंधनकारी सामर्थ्य नहीं है तो मैं उसे नहीं मान सकता। दिशादर्शक सिद्धांतों को अनिवार्य बनाने के लिए कानून के न होने के कारण वे निरर्थक हैं यह भी मैं नहीं मानता।

दिशादर्शक सिद्धांतों का स्वरूप उपनिवेश और भारत के गवर्नर को प्राप्त अनुदेशों के संलेखों (instrument of instructions) की तरह है। मसौदा संविधान ने राष्ट्रपति और राज्यपालों को इस तरह के संलेख देने की अनुशंसा की है। अनुदेशों के सलेखों का प्रावधान संविधान की 4थी अनुसूची में रखा है। अनुदेशों के संलेवों को ही दिशादर्शक सिद्धांत कहा गया है। अंतर केवल इतना ही है कि अनुदेश विधिमंडल और कार्यकारी मंडल को दिए गए हैं। मेरी राय में ऐसी बातों का स्वागत किया जाना चाहिए। शांति, सुव्यवस्था और अच्छी सरकार बने इसके लिए ही सत्ता उनके सुपूर्द की जाती है। लेकिन सत्ता के उचित उपयोग के लिए साथ-साथ अनुदेश देना भी जरूरी है।

एक और वजह से मसौदे में प्रस्तावित संविधान के अनुदेशों का समावेश न्यायसंगत ठहरता है। निर्माण किए गए मसौदा संविधान में देश के लिए जरूरी सरकारी कामकाज की व्यवस्था का सिर्फ प्रावधान रखा है। विशिष्ट राजनीतिक पार्टी को सत्ता में लाने के लिए कुछ देशों में अस्तित्व में आई योजनाओं की तरह की यह योजना नहीं है। संकल्पित व्यवस्था द्वारा जनतंत्र की परीक्षा में सफलता पाने के लिए किसके हाथ में सत्ता हो इसका फैसला पूरी तरह जनता के हाथों में ही सौंपा गया है और यह उचित भी है। लेकिन भले कोई भी सत्ता में आए वह मनमाने ढंग से सत्ता का इस्तेमाल नहीं कर सकता। सत्ता का इस्तेमाल करते हुए उन्हें अनुदेशों के साधनों का (instrument of instructions) - जिन्हें दिशादर्शक सिद्धांत भी कहा गया है। आदर करना ही होगा। वह उन्हें नजरंदाज नहीं कर सकता। उन्हें तोड़ने के लिए उसे न्यायालय में जवाब नहीं देना होगा। सत्ता प्राप्ति के लिए जब विभिन्न शक्तियां कोशिश करेंगी उस समय दिशादर्शक सिद्धांत कितने मूल्यवान होंगे इसका पता चलेगा।

अनुदेशों के साथ उनका पालन करने की अनिवार्यता का प्रावधान न होने के कारण संविधान में उनके शामिल किए जाने का विरोध करने की दलील सही नहीं। संविधान में

उन्हें कहां रखा जाए इस बारे में मतभेद हो सकते हैं जिन प्रावधानों पर अमल किए जाने की बंदिश नहीं उनको बंदिश वाले प्रावधानों के साथ थोड़ा अजीब लगेगा यह मैं मानता हूं। मेरी राय में उनका सही स्थान अनुसूची III(अ) और अनुसूची IV- में है, जिसमें राष्ट्रपति और राज्यपालों को दिए अनुदेशों के संलेख हैं। क्योंकि, जैसा कि मैंने कहा था कार्यकारीमंडल और विधिमंडल अपने अधिकारों का प्रयोग कैसे करें यही बताने के लिए अनुदेशों के संलेखों की योजना है। हालांकि, यह केवल व्यवस्था का मामला हुआ।

कुछ समीक्षकों के अनुसार केंद्र सरकार बहुत अधिक बलशाली हुई है। कुछ लोगों की राय में उसे अधिक सामर्थ्यवान होना चाहिए। मसौदा संविधान इन दोनों का स्वर्णिम मध्य है। केंद्र को शक्ति प्रदान करने का आप भले कितना ही विरोध क्यों न करें, आप केंद्र को शक्तिशाली होने से रोक नहीं सकते। आधुनिक युग में सत्ता का केंद्रीकरण अनिवार्य है। अमेरिका की केंद्र सरकार का ही उदाहरण लीजिए। संविधान से सीमित अधिकार मिलने के बावजूद आजतक की उसकी यात्रा में उसके मूल स्वरूप में काफी विस्तार हुआ है और वहां केंद्र सरकार के अधिक शक्तिशाली होने के कारण राज्य सरकारों के अधिकारों को ग्रहण लगा हुआ है, यही दिखाई देगा। यह आज की स्थितियों का असर है। ऐसी स्थितियों का असर भारत सरकार पर भी होने वाला है । भले कितनी भी कोशिश क्यों न की जाए उसे शक्तिशाली होने से कोई नहीं रोक सकता। दूसरी तरफ उसके शक्तिशाली होने की प्रवृत्ति का हमें विरोध करना चाहिए। जितना काम कर सकता है उससे अधिक उसे खाना नहीं चाहिए । उसकी ताकत उसके पद के अनुपात में होनी चाहिए। अपने ही वजन से अगर वह गिर पड़े तो यह गलत होगा।

मसौदा संविधान की समीक्षा करते हुए कहा जा रहा है कि इसमें केंद्र और प्रांतों के संवैधानिक संबंधों के लिए एक तरह का प्रावधान और केंद्र और संस्थानों के बीच के संवैधानिक संबंधों के लिए अलग तरह का प्रावधान रखा गया है। सुरक्षा, अंतरराष्ट्रीय नीति और यातायात से संबंधित मामलों के अलावा केंद्रीय सूची में समावेश किए गए अन्य सभी मामलों को स्वीकारना भारतीय संस्थानों के लिए अनिवार्य नहीं होगा। समवर्ती विषयों की सूची को स्वीकारने का उन पर बंधन नहीं होगा। संविधान परिषदों का गठन कर अपने संविधान निर्माण करने की आजादी उन्हें दी गई है स्पष्ट है कि यह बहुत दुर्भाग्यपूर्ण बात है और मेरी राय है कि यह असमर्थनीय है। इस तरह का भेदभाव देश की कार्यक्षमता के लिए भी जोखिम भरा साबित हो सकता है। जब तक यह भेदभाव जारी रहेगा तब तक केंद्रीय सत्ता अखिल भारतीय स्तर के विषयों पर अपना प्रभाव खो देगी। क्योंकि सभी विषयों के बारे में और सब ओर अगर सत्ता का इस्तेमाल करना संभव नहीं हो तो उसे सत्ता कैसे कहें? वह सत्ता ही नहीं। युद्ध की स्थितियां बन जाएं और कुछ क्षेत्रों में आवश्यक अधिकारों के इस्तेमाल पर पाबंदियां लगाई जाएं तो पूरे देश की सुरक्षा पर संकट आ सकता है। अधिक गंभीर बात यह है कि मसौदा संविधान में सभी

संस्थानों को अपनी सेना खड़ी करने की सहूलियत दी गई है। मेरी राय में यह प्रावधान बेहद जोखिम भरा और अधोगामी (पीछे ले जाने वाला?) है और यह भारत के विघटन का तथा केंद्रीय प्रशासन को उखाड़ने का कारण बनेगा। इस मसले पर मसौदा समिति की मानसिकता के बारे में अगर मेरा अंदाजा गलत नहीं हुआ तो मेरे मतानुसार समिति इस मामले को लेकर संतुष्ट नहीं थी। समिति चाहती थी कि प्रांत और भारतीय रियासतों का केंद्र के साथ के संवैधानिक संबंधों का आधार एक ही होना चाहिए। दुर्भाग्य से इस मामले में वे कोई सुधार नहीं ला पाए। संविधान सभा के निर्णय से वह बंधी थी तो दूसरी ओर संविधान सभा लेन-देन संबंधी विचार-विमर्श के लिए नियुक्त दो समितियों के बीच हुए करार से बंधी थी।

लेकिन जर्मनी में जो घटा उससे हम अपने को धीरज बंधा सकते हैं। 1870 में बिस्मार्क द्वारा स्थापित जर्मन साम्राज्य 25 घटकों का संमिश्र राज्य था। इन 25 में से 22 राज्यों में राजतंत्र था और 3 जनतंत्र वाले नगर राज्य थे। आप सब जानते हैं कि समयानुसार उनका यह अलग स्वरूप समाप्त हुआ और एक संविधान के अधीन एक ही भूमि पर रहने वाले एकजुट लोगों का स्वरूप जर्मनी को मिला। जर्मनी से भी अधिक गति से भारतीय रियासतों का विलय होगा। 15 अगस्त, 1947 के दिन भारत में 600 रियासतें थीं। भारतीय रियासतों का भारतीय प्रांतों के साथ हुए एकीकरण से अथवा आपसी विलय से वा केंद्र द्वारा उन्हें केंद्रशासित प्रदेश का स्थान दिए जाने के कारण अब केवल 20 से 30 रियासतें ही बची हैं। विकास की यह प्रक्रिया बड़ी तेजी से हुई। बची हुई रियासतों का में आह्वान करता हूं कि वे भारतीय प्रांतों की भूमिका को अपनाते हुए तथा भारतीय प्रांतों की व्यवस्था के अनुसार ही वे भारतीय संघराज्य के पूर्ण घटक बनें। इससे भारतीय संघराज्य के लिए वे आवश्यक शक्ति प्रदान करेंगे। अपनी संविधान सभाओं का निर्माण करने और अपने स्वतंत्र संविधान निर्माण करने की परेशानियों से वे बचेंगे और जो उनके लिए मूल्यवान है उसमें से कुछ गंवाने की नौबत उन पर नहीं आएगी। उम्मीद करता हूं कि मेरा आह्वान व्यर्थ नहीं जाएगा। संविधान पारित होने से पूर्व राज्य और भारतीय संस्थानों के बीच के भेद हम समाप्त कर सकेंगे।

कुछ समीक्षकों ने इस बात पर आपत्ति की है कि मसौदा संविधान के अनुच्छेद 1 में भारत का वर्णन यूनियन ऑफ स्टेटस् के तौर पर किया जाए। वे इसे फेडरेशन ऑफ स्टेटस् कहलाना चाहते हैं। केंद्रीभूत राज्य (Unitory States) वाले दक्षिण अफ्रीका का वर्णन संघ (Union) के तौर पर किया जाता है यह बात सही है। लेकिन कनाडा के फेडरेशन होने के बावजूद उसका वर्णन संघ के तौर पर ही किया जाता है। संविधान के फेडरल होने के बावजूद भारत का वर्णन संघ के तौर पर करने से शब्द रचना के प्रयोग को किसी तरह की हानि नहीं पहुंचती। महत्वपूर्ण बात यह है कि संघ शब्द का प्रयोग जान-बूझ कर किया गया है। कनाडा के संविधान में संघ शब्द का प्रयोग क्यों

किया गया यह मैं नहीं जानता लेकिन मसौदा समिति ने उसका इस्तेमाल क्यों किया यह मैं आपको बता सकता हूं। मसौदा समिति यह स्पष्ट करना चाहती थी कि भारत भले फेडरेशन होने जा रहा है लेकिन राज्यों के आपसी करार न हो पाने के कारण यह फेडरेशन अस्तित्व में नहीं आया और फेडरेशन किसी करार का परिणाम न होने के कारण किसी भी राज्य को उससे अलग होने का अधिकार नहीं रहेगा। फेडरेशन यूनियन है क्योंकि वह अविभाज्य है। प्रशासन की सुविधा के लिए देश और लोगों का विभिन्न राज्यों में भले विभाजन किया जाता हो, देश पूरी तरह एक है। एक ही स्रोत से निर्माण हुए एक सार्वभौम राज्य की अधिसत्ता में रहने वाले ये लोग एक हैं। अमेरिकी फेडरेशन अविभाज्य है और किसी राज्य को उससे अलग होने का अधिकार नहीं है यह साबित करने के लिए अमेरिकी लोगों को गृहयुद्ध करना पड़ा था। इसलिए मसौदा समिति ने सोचा कि यह मसला तर्क या विवाद के सुपूर्द करने के बजाय शुरुआत में ही इसे साफ तौर पर अंकित किया जाए।

संविधान सुधार से संबंधित प्रावधानों की मसौदा संविधान के समीक्षकों ने कठोर आलोचना की है। कहा गया है कि मसौदे में शामिल प्रावधानों के कारण उनमें सुधार करना कठिन होने वाला है। सुझाव है कि कम से कम शुरुआती कुछ सालों में केवल बहुमत के सहारे संविधान में सुधार करना आसान होना चाहिए। असल में यह दलील चतुराई पूर्ण और चालाकी भरी है। कहा यह भी गया है कि संविधान सभा वयस्क मतदान पद्धति से नहीं चुनी गई है। उल्टे भविष्य में संसद वयस्क मतदान पद्धति से चुनी जाने वाली है। इसके बावजूद संविधान सभा को सादे बहुमत के आधार से संविधान मंजूर कराने का अधिकार दिया गया है। दूसरी ओर, भविष्य में संसद के लिए यह अधिकार नहीं दिया गया है। यह बेमेल बात मसौदा संविधान के कारण ही होने की बात भी खुले आम कही जा रही है। मुझे इस आरोप का खंडन करना ही होगा क्यों कि इसका कोई आधार नहीं है। मसौदा संविधान के संविधान सुधार संबंधी प्रावधान कितने सीधे सादे हैं यह समझने के लिए अमेरिका और ऑस्ट्रेलिया के संविधानों में सुधारों के प्रावधानों का अध्ययन करना होगा। उनके साथ तुलना करने के बाद पता चलेगा कि प्रस्तावित संविधान में सुधार के प्रावधान सबसे अधिक सरल हैं। परंपरागत संकेत अथवा सर्वमत जैसी उलझन भरी और कठिन कार्यपद्धति मसौदा संविधान ने अपनाई नहीं है। सुधार लाने के अधिकार केंद्रीय अथवा प्रांतीय विधिमंडल को सौंपे हैं। कुछ खास विषयों में जो बहुत ही कम हैं सुधार के लिए राज्य विधानसभा से मंजूरी की जरूरत होगी। संविधान के अन्य सभी अनुच्छेदों में सुधार करने का अधिकार संसद को दिया गया है। रोक केवल यही होगा कि सदन में उपस्थित और मतदान में हिस्सा लेने वाले सदस्यों के दो तिहाई से अधिक बहुमत से और हर सदन की कुल सदस्य संख्या के बहुमत से सुधार मंजूर होंगे। संविधान में सुधार करने के लिए इससे आसान तरीके की कल्पना करना मुश्किल है।

बेमेल होने का आरोप प्रस्तावित संविधान में रखे गए सुधार संबंधी प्रावधानों पर लगाया जा रहा हैं। ये आरोप गलत धारणाओं पर आधारित हैं। संविधान निर्माण के समय संविधान सभा ने पक्षीय नजरिया नहीं अपनाया है। एक बेहतरीन और कार्यशील संविधान निर्माण से अधिक अन्य कोई भी स्वार्थ भरा उद्देश्य नहीं है। संविधान के अनुच्छेदों के बारे में सोचते हुए विशिष्ट मापदंडों के प्रयोग का नजरिया नहीं था। भविष्य की संसद द्वारा अगर संविधान सभा का रूप धारण किया तो उसके सदस्य पक्षीय नजरिया अपनाएंगे। और पक्षीय कार्यक्रमों को लागू करने में जो अनुच्छेद अड़ंगा पैदा करने वाले लगेंगे उसमें वे सुधार करेंगे। संसद स्वार्थपूर्ण उद्देश्यों से प्रेरित हो सकती है। संविधान सभा के सामने लेकिन ऐसा कोई नजरिया नहीं है। संविधान सभा और भावी संसद में यही फर्क है। इससे साफ होता है कि संविधान सभा भले सीमित मतदान पद्धति से चुनी गई हो लेकिन केवल बहुमत से संविधान पारित करने के लिए वह विश्वासपात्र है। और संसद भले वयस्क मतदान पद्धति से चुनी गई हो फिर भी सुधार के लिए उसे भी समान अधिकार देने के लिए वह विश्वासपात्र है, ऐसा नहीं।

मुझे विश्वास है कि मसौदा समिति द्वारा तैयार किए गए मसौदा संविधान पर उठाई गई सभी आपत्तियों का मैंने यथोचित जवाब दिया है। पिछले आठ महीनों में संविधान लोगों के सामने विचारार्थ रखा गया था। इस दौरान संविधान पर व्यक्त की गई ध्यान देने योग्य प्रतिक्रियाएं आपत्तियों से मुक्त हैं ऐसा मुझे नहीं लगता । मसौदा समिति द्वारा बनाये गए संविधान को स्वीकार करना है अथवा नहीं, या मंजूर करने से पहले उसमें कुछ बदलाव करने हैं यह संविधान सभा को तय करना है।

लेकिन मैं यहां कहना चाहूंगा कि भारत के कुछ प्रांतीय विधानसभाओं ने संविधान के मसौदों पर चर्चा की है। बॉम्बे सीपी, प. बंगाल, बिहार, मद्रास और पूर्व पंजाब में चर्चा हुई। कुछ प्रांतीय विधानसभाओं में संविधान के आर्थिक प्रावधानों के बारे में और मद्रास में अनुच्छेद 226 के बारे में गंभीर आपत्तियां की गई थीं यह बात सही है। लेकिन ये अपवाद अगर छोड़ दें तो किसी भी प्रांतीय विधानसभा में संविधान के अनुच्छेदों पर कोई गंभीर आपत्ति नहीं की गई। कोई भी संविधान परिपूर्ण नहीं होता। और मसौदा संविधान अधिक अच्छा करने के उद्देश्य से मसौदा समिति खुद कुछ सुधारों का सुझाव रखने वाली है। लेकिन प्रांतीय विधानसभा में हुई चर्चा से मुझे यह कहने का साहस दिया है कि मसौदा समिति द्वारा तैयार किया गया संविधान शुरुआत के तौर पर इस देश के लिए निश्चित रूप से अच्छा है। मेरी राय में वह व्यावहारिक है, लचीला है और देश को शांति और युद्धजनित स्थितियों में एक सूत्र में बांधे रखने के लिए समर्थ है। मैं कह सकता हूं कि सचमुच नए संविधान के अंतर्गत अगर कुछ गलतियां रह गई हैं तो उसका कारण यह नहीं होगा कि हमारा संविधान गलत है बल्कि हमें कहना पड़ेगा कि इंसान धूर्त था। महोदय, मैं संविधान प्रस्तुत करता हूं।[1]

1. मूल अंग्रेजी भाषण के मराठी अनुवाद से अनूदित।

256

जिन्हें काम करना पसंद है उन्हें मौका दें, आपस में झगड़े नहीं

मुंबई शेड्यूल्ड कास्ट्स् फेडरेशन की ओर से 22 दिसंबर, 1948 के दिन मुंबई के आर. एम. भट हाइस्कूल में डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर और आयुष्मती माईसाहब अम्बेडकर को जलपान के लिए आमंत्रित किया गया। इस अवसर पर डॉ बाबासाहेब अम्बेडकर ने सम्बोधित किया–

सभाधिपति, बहनों आर भाइयों,

मुझे पक्का याद नहीं है, लेकिन, शायद 1946 में जो चुनाव हुए थे तब यही पर एक सभा का आयोजन किया गया था। उस समय मैं उपस्थित था। आज मैं यहां उपस्थित हूं तो सहज ही उस वक्त हुई सभा की याद ताजा हो गई। कहना पड़ेगा कि 1946 के चुनावों में हमने और हमारी पार्टी ने असफलता का बहुत बड़ा भार अपने कंधों पर लिया था। चुनाव हारने को लेकर बुरा मानने की कोई जरूरत नहीं। असफलता के बारे में मुझे कभी बहुत अफसोस नहीं होता। क्रिकेट में कभी किसी टीम की हार होती है कभी किसी टीम की जीत होती है। हारने वाली टीम आगे कभी जीत भी सकती है और जीतने वाली टीम आगे कभी हार भी सकती है। चुनावी हार–जीत भी कुछ–कुछ ऐसी ही होती है। पिछले चुनावों में अगर काँग्रेस ने हमें केवल हराया होता तो उसमें कोई खास बुरा मानने वाली बात नहीं थी। लेकिन उस दौरान काँग्रेस ने हमारे साथ जो जोर–जुलुम और अत्याचार किए वैसा अत्याचार भारत में और कहीं शायद ही हुआ हो। नायगांव की 17 नंबर वाली चाल में कितना भयंकर वाकया हुआ था। महिलाओं का बाहर निकलना तक नामुमकिन हो गया था। नायगाव में मसाला पीसने की एक दुकान है। वहां काम करने वाली एक अस्पृश्य महिला को स्पृष्य गुंडे उठा कर ले गए। उसके साथ बलात्कार किया और उसके कपड़े छीन कर उसे नग्नावस्था में छोड़ दिया। ऐसा अमानवीय अत्याचार था।

तब कइयों के मन में आशंका थी कि क्या हिंदुओं से लड़ना समझदारी होगी? आप में से भी कइयों को ऐसा ही लगा था। हर किसी के सामने बड़ी मुश्किल खड़ी थी। कई लोगों ने कहा भी था कि अम्बेडकर का साथ देना कहां तक सही होगा? मैं खुद भी चिंता में पड़ गया था। मेरा साहस भी मेरा साथ छोड़ रहा था। लेकिन आपकी आज

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर रांची भाषणे : मा फ गाजरे, खंड 7, पृष्ठ 26–28

की मानसिक स्थिति और साहस की तुलना अगर उस दौरान के साहस और मानसिक स्थिति के साथ की जाए तो क्या पता चलता है? 1946 के बेहद कठिन समय से हम संभले यह कोई छोटी-सी बात नहीं। अब आपके अंदर धैर्य आया है। अगर आपसे पूछा जाए कि - आप क्या करेंगे? तो मुझे यकीन है कि आप में से हर कोई कहेगा, ''हम आपकी पार्टी छोड़ेंगे नहीं।'' (तालियां) इतना साहस आपमें आया है।

कई लोग मुझसे पूछते हैं कि आप भाषण क्यों नहीं देते? संदेश क्यों नहीं देते? मैं भाषण नहीं देता, संदेश नहीं देता इसका मतलब यह नहीं कि मुझे आपकी चिंता नहीं, आपके लिए मेरे मन में रोष है या कि मैं आपके भले के बारे में सोचता नहीं। स्थिति भांप कर काम करना पड़ता है। दोस्त कौन है? दुश्मन कौन है? ऐसे समय क्या करना चाहिए? जैसी बातों पर गौर करना चाहिए। ऐसे हालात में चुप बैठ कर सोचते रहने के अलावा अन्य कोई चारा नहीं।

पिछले चुनाव में हमारी हार हुई। लेकिन एक साल बाद हुए म्युनिसिपल चुनावों में हमने जीत हासिल की है। 8-10 सीटें हम पा सके। हमारे उम्मीदवारों को मिले वोटों की संख्या इतनी अधिक है कि उनकी बराबरी करने के लिए चार-चार काँग्रेसी उम्मीदवारों के वोट मिलाने पड़ेंगे। इसीलिए, हमें किसी से डरने की जरूरत नहीं है। हमारा संख्या बल बहुत बड़ा है। अगर हम संगठित हो जाएं, अपना वोट अगर हम बेचें नहीं, अपने वोट का अगर गलत इस्तेमाल नहीं किया, सही वजह के लिए ही उनका अगर इस्तेमाल किया तो हमें किसी से डरने की कोई जरुरत नहीं है।

अगले चुनावों में क्या करना है इस बारे में आज सोचने की जरूरत नहीं है। कौन-से दल चुनावों में उतरते हैं पहले यह देखना होगा। हम अल्पसंख्यक हैं इसलिए किसी न किसी दल का हमें सहयोग देना पड़ेगा। हर दल के कार्यक्रम क्या हैं उनका यह दख कर इस मामले में निर्णय लेना होगा। किसी दल के साथ अगर हाथ मिलाना है तो अपना दल तोड़कर उसमें शामिल होने की जरूरत नहीं। अपने पक्ष को साबुत रख कर ही किसी और पक्ष के साथ हाथ मिलाने की हमें सोचनी होगी। यही हमारी नीति होनी चाहिए।

ब्राह्मणेतर पक्षों का जो हाल हुआ है वही हमारा न हो इसलिए यह संकेत देना मेरे लिए जरूरी हो गया है। अपना संगठन तोड़ कर ब्राह्मणेतर दल काँग्रेस में शामिल हुआ, फिर उन्होंने काँग्रेस छोड़ी और अपना संगठन खड़ा करने लगे। किसी और के घर में घुसने, फिर बाहर निकलने और टूटे हुए घर की मरम्मत करने जैसी नीति हमें नहीं अपनानी है।

सुना है कि फेडरेशन के चुनाव होने जा रहे हैं। ठीक है। चुनावों से मेरी कभी कोई दुश्मनी नहीं रही। एक ही व्यक्ति किसी अधिकार की जगह हमेशा रहे यह भी अच्छा नहीं।

चुनाव हों लेकिन अच्छे माहौल में हों। उनके कारण भेदभाव न फैलें। मेरी राय में काम करने का जिन्हें शौक हो उन्हें जरूर मौका देना चाहिए। लेकिन आपस में लड़ाई–झगड़े न हों। मुझे लगता है कि अगर झगड़े होने वाले हैं तो इलेक्शन ही न हों।

एक और बात मैंने सुनी है कि म्युनिसिपाल्टी वाले हमारे कार्पोरेटर्स कुछ काम नहीं करते। किसीने मुझे यह भी बताया कि आपकी पार्टी का प्रमुख भी कुछ काम नहीं करता। अगर प्रमुख काम नहीं करता तो मेरा कोई आग्रह नहीं कि आप उसकी बात सुनें। आप आजाद हैं। जो काम नहीं करता उसे झटक देने की आजादी आपके पास है। मैं कभी आपसे नहीं कहूंगा कि आप किसी की गुलामी करें।

मैंने यह भी सुना है कि कार्पोरेटर्स को क्या–क्या काम करने चाहिए यह तय करने के लिए एक एडवायजरी बोर्ड की स्थापना की गई है। मुझे यह बात बिल्कुल पसंद नहीं आई। सलाह देने वाले लोग बड़े विद्वान हैं या अनुभवप्राप्त हैं ऐसी बात नहीं है, बिना वजह विवाद बढ़ेंगे।

इस समस्या के हल के तौर पर कार्पोरेटर हर पवखाड़े या महीने में फेडरेशन के कार्यकर्ताओं की मीटिंग करें और इस मीटिंग में कार्यकर्ता अपने काम की रिपोर्ट कार्पोरेटर्स को दें। कार्पोरेशन में कौन–कौन काम किए, मीटिंगों में उपस्थित थे या नहीं, अगर थे तो जाग रहे थे या सो गए थे आदि बातों की रिपोर्ट कार्पोरेटर्स फेडरेशन की मीटिंग में दें और बताएं कि फेडरेशन के कार्यकर्ता ''फलां–फलां प्रस्ताव रखें''।

और मुझे कुछ नहीं कहना। इलेक्शन आने ही वाले हैं। अगले साल पूरे देश में चुनाव होंगे, उनकी तैयारी करो। इतना कह कर मैं आपसे विदा लेता हूं।

257

दूसरे की हवेली में घुसना बड़ी मूर्खता है, अपनी कुटिया की रक्षा करें

16 जनवरी, 1949 के दिन डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर और उपासिका माईसाहब अम्बेडकर के स्वागत में सार्वजनिक सभा का आयोजन किया गया था।

सभा का आयोजन अचानक किए जाने से कई लोगों को सूचना देर से मिली। इसके बावजूद औरंगाबाद, अहमदनगर, नासिक और मुंबई से आए हजारों लोगों ने सभा में हिस्सा लिया। शनिवार की दोपहर से ही हर रेल लोगों से भर-भर कर आ रही थी। स्टेशन और सराय के अहाते में अपार अस्पृश्य जनसमुदाय इकठ्ठा हुआ था। उनके कारण इस सभा को एक बड़े मेले का स्वरूप प्राप्त हुआ था। हर ट्रेन जब स्टेशन में आती तब पूरा माहौल ''जय भीम'' के नारे से गूंज उठता। हर कोई दूसरे को ''जय भीम'' की सलामी देकर स्वागत कर रहा था। पूरे मनमाड़ में लोग छाती पर डॉ. बाबासाहेब की फोटो लगा कर घूम रहे थे।

रविवार के दिन ठीक 11 बजे पंजाब मेल स्टेशन पर आई तब 'डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर की जय', 'बोलो रे बोलो जयभीम', 'शेड्यूल्ड कास्टस् फेडरेशन की जय हो', 'तरुण पार्टी जिंदाबाद, थोडे दिन में भीमराज' आदि नारों से पूरा मनमाड़ गूंज उठा। डॉ. बाबासाहेब के दर्शन पाने के लिए उनके सेलून कंपार्टमेंट के दोनों तरफ महिलाओं और पुरुषों की भीड़ जुटने लगी। इतनी भीड़ हुई कि डॉ. बाबासाहेब बाहर नहीं आ पाए। आखिर सबको दर्शन मिले, इसलिए सेलून की दोनों तरफ की खिड़कियां खोल दी गईं। केवल दर्शन पाने के भूखे हजारों लोग अतृप्त नयनों से जहां से भी संभव हो उनके दर्शन कर धन्यभाग हो रहे थे। अस्पृश्यों के अपने नेता के प्रति इतना प्रेम देख कर स्पृश्य वर्ग के लोग अचंभित रह गए। उनमें से एक ने तो मुझे कह सुनाया कि पूरे भारत में अपने नेता से इस तरह प्रेम करने वाला अस्पृश्य समाज और उनके नेता डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर जैसा कोई और नहीं। भारत के अन्य सभी नेता निश्चित तौर पर मन में डॉ. बाबासाहेब से जलते होंगे।

सभामंडप रंगबिरंगी पताकाओं से सजा हुआ था। 'आयुष्मती सवितादेवी द्वार', 'मातोश्री रमाबाई द्वार' के नाम से दो प्रवेश द्वार बनाए गए थे। पंडाल के आगे की तरफ बीचों-बीच गौतम बुद्ध की प्रतिमा थी। 'बुद्धम् शरणम् गच्छामि' लिवी पताकाएं सजी थीं।

जनता : 22 जनवरी, 1949

शुरुआत में मुंबई प्रांत के अध्यक्ष भाऊराव गायकवाड़ ने डॉ बाबासाहेब अम्बेडकर और श्रीमती सविताबाई अम्बेडकर का स्वागत करने और मुंबई इमारत फंड के लिए थैली समर्पित करने के लिए सभा बुलाने की बात कही। उसके बाद अलग-अलग संस्थाओं की ओर से डॉ. बाबासाहेब और श्री. सविताबाई को फूलमालाएं अर्पण करने के कार्यक्रम हुए।

पहले मुंबई प्रांतिक दलित फेडरेशन की सचिव आयुष्यमति गीताबाई गायकवाड़, कु. शांताबाई दाणी और अखिल भारतीय दलित फेडरेशन के महासचिव बापूसाहेब राजभोज के भाषण हुए। उसके बाद आधे घंटे तक डॉ. बाबासाहेब का सुमधुर तथा आशा से भरपूर भाषण हुआ।

उन्होंने कहा, 'मेरे मित्र भाऊराव गायकवाड़ ने अपनी आदत के अनुसार मुझसे पूछा कि किसी सभा के आयोजन के लिए मुझे कोई आपत्ति तो नहीं? सभा के आयोजन के लिए मैंने हामी भरी।

मुझसे कहा गया कि मुंबई इमारत फंड के लिए चार हजार रुपयों की थैली अर्पण की जाएगी। मुझे चार हजार रुपयों का लालच दिया गया। (जोरदार हंसी) उम्मीद है कि सभा के अंत तक इसका खुलासा हो जाएगा।'

'इधर कई दिनों से मैं राजनीति के बारे में बोलता नहीं हूं एकदम शांत हूं। क्योंकि आजकल मैं राजनीतिक बंधन में हूं। अन्य किसी भी समाज की तुलना में अस्पृश्य समाज राजनीति-ज्ञानी है इस बारे में मुझे कोई शक नहीं। (तालियों की गड़गड़ाहट)' किसी भी समाज की उन्नति उस समाज के शैक्षिक विकास पर निर्भर करती है। राजनीतिक सफलता पाने के लिए जैसा कि मैं कहता रहा हूं हमारे समाज को बड़े ओहदों पर कब्जा करना होगा।

आरक्षित जगहें हमें नहीं मिली हैं इसलिए डरने की कोई जरूरत नहीं है। हमारी जनसंख्या सात करोड़ है। हम संगठित रहेंगे तभी अपना दल मजबूत होगा। एक बात हमेशा ध्यान में रखनी होगी। शेड्यूल्ड कास्ट फेडरेशन अपना राजनीतिक संघ है। उसी के साथ हमें जुड़े रहना चाहिए। (तालियों की गड़गड़ाहट, जयघोष)। हम अल्पसंख्यक होंगे, लेकिन संघर्ष में हम अपनी जान की बाजी लगाएंगे। हम, डरें ऐसी कोई वजह नहीं। (तालियों की गड़गड़ाहट)

दूसरी बात यह कि हमें कभी दूसरे दलों के साथ गठजोड़ भी करना होगा। जो पार्टी हमारा कल्याण करेगी वही हमारी करीबी होगी। हमारे कार्यक्रमों से जिस पार्टी के कार्यक्रम ज्यादा से ज्यादा मिलेंगे उस पार्टी से गठजोड़ करने में कोई हर्ज नहीं। फिर चाहे वह पार्टी कॉँग्रेस हो, समाजवादी हो या बहुजन समाजवादी हो।

निजी स्तर पर काम करने जैसी और मूर्खता कोई नहीं। एक महत्वपूर्ण बात मैं आपसे

कहना चाहता हूं। संगठन तोड़ कर दो–चार लोगों का अलग संगठन में शामिल होना आत्मघात कर लेने जैसा है। हमें समूह बना कर ही रहना होगा यह आप जानते हैं।

अपना घर तोड़ कर दूसरों के घर में घुसना बड़ी मूर्खता है। अपनी कुटिया को सुरक्षित रखिए। अगर ऐसा नहीं किया तो ब्राह्मणेतर दल की तरह ही हमारी भी हालत होगी। ब्राह्मणेतर दल की क्या दुर्दशा हुई सब जानते हैं। 1932 तक हम मिल–जुल कर काम किया करते थे। तब कुछ ब्राह्मणेतर नेताओं को लगा कि काँग्रेस से अलग रह कर कोई फायदा नहीं है। काँग्रेस में शामिल होकर अंदर से कुतर कर उनका गढ़ तोड़ा जा सकता है। बाहर से यह किला तोड़ा नहीं जा सकेगा। यही सोच कर वे काँग्रेस में शामिल हुए। मैंने कई बार उन्हें चेतावनी दी, लेकिन वे मेरी बात नहीं माने। लेकिन आज ब्राह्मणेतर लोगों को लगता है कि उनसे भयंकर गलती हुई है। आज ब्राह्मणेतर दल नामशेष रह गया है। अपनी कुटिया को वे कब तक संभाल पाएंगे इस बात को लेकर मैं सशंक हूं।

अपना घर तोड़ कर समझौता करना मुझे बिल्कुल पसंद नहीं। हम अपनी घर की कीमत पर कुछ नहीं करेंगे।

पहले मुझ पर इल्जाम लगाया जाता था कि मैं देश के लिए घातक बातें करता हूं। लेकिन अब उन आरोपों का झूठ सबके सामने है। हमारा दल कभी भी देश के विरोध में नहीं था। हमारे दल ने देश के साथ कभी द्रोह नहीं किया। वह हमारे खिलाफ षडयंत्र था। हमारा पक्ष अगर प्रतिस्पर्धा में उतरा तो कोई इससे पार नहीं पा सकता। हम ही हमेशा आगे रहेंगे। (तालियां)

असली समाजवाद की स्थापना केवल हम ही कर सकते हैं। किसानों मजदूरों के राज की स्थापना हम ही कर सकते हैं। क्योंकि हममें अमीर कोई नहीं है और न ही कोई मध्यवर्ग है। हम सब कामगार मजदूर गरीब हैं। हम ही जनतंत्र निर्माण कर सकेंगे। इतना ही नहीं कम्युनिस्टों का कम्युनिज्म भी राजनीति में हमसे पीछे ही है। सैद्धांतिक रूप में कभी हमारे दल के पिछड़ने की संभावना नहीं है। हमारे देश में कई दल हुए। उन सबको हमसे ईर्ष्या होती है। काँग्रेस का अपवाद छोड़ दें तो भारत में शेड्यूल्ड कास्ट्स् फेडरेशन जैसा कोई दूसरा दल नहीं है। सबका ध्यान हमारे दल की तरफ है। हमारा दल गुड़ की डली की तरह है और अन्य दल चींटियों की तरह हैं। हमारे पक्ष से सहायता पाने के लिए ये अन्य पक्ष चींटियों की तरह चिपकने की कोशिश कर रहे हैं। इसलिए उनसे हमें बहुत सजग रहना होगा।

अपने लोगों की नैतिकता साफ–सुथरी हो। अस्पृश्यों का भविष्य बहुत उज्ज्वल है। इस बारे में मन में यकीन रखिए। काँग्रेस कहती है कि विदेशी सत्ता को भगा कर वह क्रांति ले आई है। इसके लिए हम उन्हें धन्यवाद देते हैं। लेकिन यह क्रांति अधूरी है। सच्चा जनतंत्र अगर निर्माण करना हो तो पिछले हजारों सालों से सिर पर नाचने वाला

उच्च वर्ग नीचे आए और समाज का दलित उच्च स्थान पर आए, इसके बगैर सच्ची क्रांति होना संभव नहीं। (तालियां) क्रांति का पहिया अब तक केवल आधा ही घूमा है। धुरी के साथ यह पहिया जब तक पूरा नहीं घूमता तब तक जो भी होगा वह सही मायने में क्रांति नहीं हो सकती और, वह पहिया हम ही घुमाएंगे।

फिलहाल मैं राजनीति के बंधन में हूं। 1950 में या उससे पहले ही यह बंधन टूटेगा। चुनाव करीब हैं। उस वक्त मैं आपको पूरी बातें बताऊंगा। अपने समाज के लिए मैंने सरकारी नौकरियों में आरक्षण का प्रबंध कर रखा है। लेकिन उन आरक्षित पदों के लिए लायक उम्मीदवार नहीं मिलते। जो राजनीतिक अधिकार पाए हैं उन पर अमल नहीं हो पाता क्योंकि वहां अधिकारी उच्च वर्ण के होते हैं। इसीलिए, अधिकार की उन जगहों पर हमें कब्जा कर लेना चाहिए।

राजनीति की ही तरह शिक्षा संस्था का भी महत्व है। किसी समाज की उन्नति उस समाज के बुद्धिमान, कुछ कर गुजरने का माद्दा रखने वाले और उत्साही युवकों के हाथ होती है। इसी दिशा में सोचते हुए पिछले कुछ वर्षों से मैं राजनीति की तरफ थोड़ा कम ध्यान देकर शैक्षिक संस्थाओं की ओर ज्यादा ध्यान दे रहा हूं। मुंबई में सिद्धार्थ कॉलेज शुरू किया है। सिद्धार्थ कॉलेज में फिलहाल 2400 छात्र पढ़ रहे हैं। उनमें से 160 छात्र हमारे हैं। उन पर हर साल मैं 21000 रुपए खर्च करता हूं। मेरा पूरा ध्यान इसी बात पर है। औरंगाबाद जाकर वहां कॉलेज खोलने के बारे में सोच रहा हूं। यह सब ''नामदेव की शादी पाडुरंग ने की'' जैसा ही है।

संविधान समिति ने भविष्यकालीन संविधान का मसौदा तैयार किया है और उसमें अस्पृश्यों के लिए आरक्षण का प्रबंध है। नए संविधान की 9वीं धारा में अस्पृश्यता का खात्मा किया गया है। किसी भी तरह का जातिभेद, ऊंच-नीच की भावना को रद्द कर दिया है। नाई को आपके बाल काटने होंगे, धोबी को आपके कपड़े धोने होंगे, मंदिर, उपहारगृह, और ढाबों पर आपके साथ उच्चवर्णियों की तरह सबको व्यवहार करना होगा। सब लोग आपके साथ समानता का व्यवहार करें। इस कानून को तोड़ने वालों को उसे सजा देने का अधिकार केंद्रीय विधिमंडल को दिया गया है। इन्हीं बातों की हम लोग कई सालों से मांग कर रहे हैं।

तीन तरह के राजनीतिक हक हम मांगते रहे हैं। पहला, हमारे प्रतिनिधियों को विधिमंडल में शामिल किया जाए। दूसरा, जनसंख्या के अनुपात में सरकारी नौकरियों में आरक्षण मिले, तीसरा, अलग चुनाव क्षेत्र मिले। इनमें से केवल एक बात नहीं हो पाई - हमें अलग चुनाव क्षेत्र नहीं मिले। इससे हमारा भाग्योदय खंडित होगा ऐसा मैं नहीं मानता। जो भी मिलता है उसे लेकर अधिक की मांग करते रहना चाहिए। 'पहनूंगी तो जरीवाली साड़ी ही पहनूंगी, नहीं तो मैं नंगे बदन रहूंगी' इस कहावत जैसी मानसिकता नहीं होनी चाहिए। इसमें कैसा पुरुषार्थ है?

258

दूसरों पर निर्भरता को त्याग कर एकजुट हों और संगठन को प्रभावी बनाओ

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर और माईसाहेब अम्बेडकर का सत्कार समारोह मनमाड़ में बड़ी धूमधाम से संपन्न हुआ। उसके बाद उन्होंने पहले से तय कार्यक्रम के अनुसार 16 जनवरी, 1949 की मध्यरात्रि से हैदराबाद संस्थान के दौरे की शुरुआत की। रात के डेढ़ बजे वे मनमाड़ स्टेशन से रवाना हुए। 17 जनवरी, 1949 के दिन तड़के वे इस दौरे के पहले स्थान पर अर्थात् औरंगाबाद पहुंचे। वहां तक की यात्रा के दौरान ट्रेन जिन स्टेशनों पर रुकी वहां-वहां उनका सम्मान समारोह हार्दिकता के साथ संपन्न हुआ।

हर स्टेशन पर अस्पृश्य जनता बड़ी संख्या में उपस्थित थी। गैसबत्तियां, रंगबिरंगी कागजी पताकाओं से लगभग सभी स्टेशन सजाये सभी विभिन्न मतों को मानने वाले गए थे।

औरंगाबाद स्टेशन पर जनता की अभूतपूर्व भीड़ जमा थी। सभी दलों के लोग डॉ. बाबासाहेब के स्वागत के लिए वहां उपस्थित थे।

सैंकड़ों पुष्पगुच्छ एवं फूलमालाएं डॉ. बाबासाहेब और माईसाहब अम्बेडकर को अर्पण किए गए। उस वक्त हर ओर ''भीम भगवान की जय'' का नारा गूंज रहा था।

पुरानी याद

औरंगाबाद के सिविल एडमिनिस्ट्रेटिव ऑफिसर आयु. राजवाड़े, डीएसपी आयु. अश्केर और अन्य पुलिस अधिकारी अपने पूरे लाव-लश्कर के साथ उपस्थित थे। पुलिस का 'गार्ड ऑफ ऑनर' यानी सम्मान के साथ अभिवादन स्वीकार कर डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर अपने सभी दोस्तों के साथ आयु. अश्केर की गाड़ी में बैठ और औरंगाबाद में स्थापित किए जा रहे सिद्धार्थ कॉलेज की जगह का मुआयना करने के लिए गए। कॉलेज के लिए तय की गई जगह देखने के बाद औरंगाबाद शहर के प्रसिद्ध ऐतिहासिक स्थल भी उन्होंने देखे। 'पनचक्की' देवते हुए डॉ. बाबासाहेब को 10-11 साल पुरानी एक बात याद आई। दिल खोल कर वह हंसे और तुरंत आयु. भाऊराव गायकवाड़ को बुला कर याद दिलाया कि 10-11 साल पहले औरंगाबाद के मुसलमानों द्वारा दौलताबाद का किला देखते हुए उनका अपमान यह कह कर किया था कि 'आप नीच जाति के हैं...'। एक बार

जनता, 5 फरवरी, 1949

फिर हंस कर डॉक्टरसाहब ने कहा, 'वही मुसलमान आज मुझे अपने जूतों समेत उनके भगवान के पास ले जाने के लिए भी तैयार हैं।' पनचक्की के पड़ोस में स्थित मस्जिद में ढाई-तीन सौ साल पहले हुए किसी फकीर के कपड़े बेहद एहतियात से रखे हुए देख कर तथा उस पर की गई कढ़ाई को देखते हुए उन्होंने प्राचीन कलावैभव की प्रशंसा की। फिर वहीं कुछ देर तक आराम करने के बाद उन्होंने ठंडा पानी पिया। उस वक्त एक मुसलमान फोटोग्राफर ने उनकी कई तस्वीरें खींची। कुछ देर आराम करने के बाद बाबासाहेब औरंगाबाद के स्टेट गेस्ट हाउस में दोपहर के भोजन के लिए लौट आए।

हैदराबाद के लिए रवाना

उसी दिन शाम की गाड़ी से वह हैदराबाद के लिए रवाना हुए। औरंगाबाद आते हुए हर स्टेशन पर जिस प्रकार उनका स्वागत हुआ था, उसी प्रकार औरंगाबाद से सिकंदराबाद के बीच के स्टेशनों पर भी हुआ। डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर हैदराबाद आ रहे हैं इस बात की खबर हैदराबाद दलित फेडरेशन के कार्यकर्ताओं ने वहां की दलित जनता को 4-5 दिन पहले ही बता दी थी। तभी से बाबासाहेब के आने का इंतजार हर स्टेशन पर अस्पृष्य जनता द्वारा किया जा रहा था। 18 जनवरी, 1949 को तड़के ही नांदेड़ स्टेशन पर गाड़ी पहुंची। उस वक्त बाबासाहेब सोए हुए थे। उन्हें जगा कर तकलीफ न देने के उद्देश्य से हैदराबाद संस्थान शेडुल्ड कास्ट फेडरेशन के सचिव श्री मनोहर ने सभी लोगों से विनम्र अनुरोध करते हुए लौट कर आते वक्त उन्हें बाबासाहेब के दर्शनों का लाभ कराने का आश्वासन दिया। दिनांक 20 जनवरी, 1949 के दिन औरंगाबाद लौटते हुए गाड़ी उसी नांदेड़ स्टेशन पर जब पहुंची तब भी रात का ही समय था। पता चला कि वहां दिनांक 18 जनवरी, 1949 को आई अस्पृश्य जनता 21 जनवरी, 1949 तक वहीं जम कर बैठी थी। खाली पेट, खुले में, ठंड-हवा सहते हुए सभी लोग बाबासाहेब के दर्शनों के लिए वहां चार दिनों से रुके हुए थे।

21 जनवरी, 1949 को तड़के ही गाड़ी ने औरंगाबाद स्टेशन में प्रवेश किया। एक बार फिर माहौल जयघोष की ध्वनि से और फूलमालाओं से लद गया। गार्ड ऑफ ऑनर का कार्यक्रम हुआ।

हैदराबाद के सिविल एडमिनिस्ट्रेटिव ऑफिसर श्री प्रधान, औरंगाबाद के सीएओ श्री आयु. राजवाड़े, डीएसपी आयु. अश्केर के साथ डॉ. बाबासाहेब औरंगाबाद गेस्ट हाउस गए। वहां एक पार्टी हुई। पार्टी में स्टेट काँग्रेस के कार्यकर्ताओं द्वारा बाबासाहेब को फूलमालाएं और पुष्पमालाएं पहनाई गईं। पूछा गया कि अस्पृश्य जनता के लिए हम क्या करें? बाबासाहेब ने सब को एक ही जवाब दिया कि आप सब लोग शाम के समय सभा स्थल पर आइए। वहीं आम जनता के सामने ही मैं आपको अस्पृश्योद्धार का मार्ग बताऊंगा और दिखाऊंगा।

शाम के 5.30 बजे वह मराठा विद्यालय देखने गए। इसी प्रकार अन्य संस्थाओं में जाकर वहां के लोगों से मिल कर डॉ. बाबासाहेब ठीक समय पर सभास्थल पर पहुंचे।

एक लाख की विराट सभा

सभा के पंडाल का वर्णन शब्दों में नहीं किया जा सकता। उस जगह को बहुत ही सुंदर ढंग से सजाया गया था। कुल 18 लाऊडस्पीकर्स लगाए गए थे। इसी से सभा-सम्मेलन जिन्होंने देखे हैं उन लोगों को इस बात का अंदाजा हो जाएगा कि वहां कितने लोग इकठ्ठा हुए थे। एक लाख से अधिक लोग वहां इकठ्ठा हुए थे।

औरंगाबाद स्टेट दलित फेडरेशन के सचिव आयु. बी. एस. मोरे ने शुरुआती भाषण दिया। हैदराबाद संस्थान में अस्पृश्य जनता पर हुए घोर अत्याचारों के बारे में उन्होंने अपने भाषण में बताया। उनके बाद अखिल भारतीय शेडुल्ड कास्ट फेडरेशन के उपसचिव आयु. पां. ना. राजभोज ने फेडरेशन की नीति के बारे में और संगठन के बारे में जानकारी दी। उनके बाद आयु. गायकवाड़ ने 5-10 मिनटों के भाषण में वहां उपस्थित लोगों को अपने महान नेता का भाषण अत्यंत शांति से, सुनने का अनुरोध किया।

मातंग समाज के प्रमुव कार्यकर्ताओं ने मातंग जाति के लोगों को फेडरेशन में शामिल होने और अपना उत्कर्ष साध्य करने की सलाह दी। आयु. मोरे ने बताया, 'हम सभी पतित जनता के सच्चे उद्धारक बाबासाहेब अम्बेडकर ही हैं।'

उनके बाद डॉ. बाबासाहेब ने कहा-

जब तक आप अपने मजबूत संगठन के बल पर अपनी ताकत दुनिया को दिखा नहीं देंगे तब तक आप पर इस तरह के अत्याचार होते ही रहेंगे। अन्याय अत्याचार को संगठित होकर ही हमें रोकना होगा। इस संदर्भ में आपको वेदों में लिखी एक कहानी सुनाने का मेरा मन है। एक बार एक बकरा भगवान के पास शिकायत लेकर गया। उसने कहा- भगवान, तुमने सारी दुनिया बनाई। पशु-पंछी, पेड-पौधे, मनुष्य-प्राणि आदि संपूर्ण चराचर की तुमने निर्माण किया। इसी नाते तुम हमारे पिता और हम तुम्हारी संतानें हुए। यानी रिश्ते में हम सब भाई-भाई हुए। तुम्हारे ही बनाए शेर-सिंहों द्वारा तुम्हारी आंखों के सामने हम बकरियों को बिना किसी लाज-लिहाज के, बिना किसी पाप-पुण्य की परवाह किए खा जाना क्या ठीक है? इस पर भगवान ने जवाब दिया, सही है, वास्तविकताएं तुम्हारे कहे अनुसार ही हैं। लेकिन उसी के साथ यह बात भी सही है कि तुम्हारा बाह्य स्वरूप इतना डरपोक, बेचारा दिखाई देता है कि इस वक्त तुम्हारा निर्माता होने के बावजूद तुम्हें खा जाने का मेरा मन कर रहा है। हमेशा इस प्रकार गर्दन को झुकाए रहने के बजाए गर्दन थोड़ी ऊंची करो। चौकन्ने दिखाई देने की कोशिश करो। रौबदार बनो। तुम पर हमला करने वाले का प्रतिकार करने की न्याय बुद्धि के साथ यथाशक्ति कोशिश करो औरों पर निर्भर मत रहो। मुक्के का जवाब मुक्के से दो। फिर देखें तो सही, कौन

तुम्हें परेशान करेगा? कौन तुम्हें खाएगा? इस कहानी के अनुसार मैं आपसे कहता हूं कि आप लोग परावलंबी बन कर रहने की मानसिकता त्याग कर एकजुट बनो, प्रभावी संगठन बना कर रहो।

कुछ काँग्रेस वाले आपके साथ यह कह कर धोखा करेंगे कि मैं काँग्रेस में चला गया हूं। आप ऐसे लोगों की बातों में न आएं। मैं काँग्रेस में न कभी गया था न जाऊंगा। अगर कभी ऐसी नौबत आए तो मिलने वाले सभी सम्मान को लात मार कर मैं अपना ध्येय पूरा करूंगा।

अब स्पृश्यवर्गीयों द्वारा मेरा सम्मान किया जाता है। बडे–बडे अधिकारी मेरा सम्मान करते हैं। आज इन लोगों को अगर मुझसे डर लगता है तो उसकी वजह उनके इस यकीन में है कि मेरे पीछे अत्यंत प्रभावी और राजनीति के धुरंधर लोगों की शक्ति है। इसीलिए मैं कहता हूं कि यह सम्मान, यह गौरव मेरा नहीं है, यह आप लोगों का है जिन पर उन लोगों ने अत्याचार किए थे। मैं केवल निमित्त मात्र हूं। आप पर हुए और हो रहे अत्याचार की शिकायत मैं करूंगा और कोशिश भी करूंगा कि उसके जरिए क्या क्या पाना है हमें। आपको बस अपनी संस्था को एक रखते हुए मजबूती से संगठित रहना है।

259

केवल राजनीतिक विकास से जीवन के सवाल हल नहीं होते

शेडयूल्ड कास्ट के इकलौते नेता और भारत सरकार के कानून मंत्री तथा कॉँस्टीट्यूशन मेकिंग बॉडी के अध्यक्ष डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर, 21 जनवरी, 1949 के दिन औरंगाबाद के मराठा विद्यालय में आए।

'मराठा समाज' संस्था की ओर से इस अवसर पर उनके सम्मान के लिए सभास्थान को यथायोग्य सजाया-संवारा गया था।

पहले हाईस्कूल के स्वयं-सेवकों ने उनका अभिवादन किया। उसके बाद माणिकराव मोताले द्वारा स्वागत पर पद्य प्रस्तुत किए गए।

तदोपरांत संस्था के सभासद, कार्यकारी मंडल, आयु. वुशालराव मोताले वकील ने डॉक्टरसाहब के गुणानुवाद पर उन्हें पुष्पमालाएं अर्पण की। साथ ही आयु. राजभोज, ऑल इंडिया शेड्यूल्ड कास्ट्स् फेडरेशन के महासचिव और आयु. गायकवाड़, श्री सुब्बय्या आदि शेड्यूल्ड नेताओं को फूलमालाएं अर्पण की गईं।

संस्था के सचिव आयु. पंडितराव गव्हाणे (बी. ए. एल. एल. बी), वकील ने मानपत्र पढ़ कर सुनाया। उनके बाद तालियों की गडगडाहट के साथ वह डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को अर्पण किया गया। प्रशास्ति-पत्र के जवाब में डॉक्टरसाहब ने कहा,

किसान, मजदूर समाज को शिक्षित करने के लिए, उनमें शैक्षिक विकास हो, इसलिए मराठा हाइस्कूल जैसी संस्थाओं की आज बहुत जरूरत है। औरंगाबाद में इस तरह की संस्था खुल रही है इसका मुझे संतोष है।

हिंदू धर्मग्रंथों और उपनिषदों के कारण पीढ़ी दर-पीढ़ियों से उच्च वर्ग की सेवा करना केवल यहीं तक अन्य पिछड़ों और अस्पृश्य का काम सीमित होकर रह गया है।

चतुण्वर्णीय व्यवस्था के कारण अस्पृष्य वर्ग पर घोर अन्याय हुए हैं। इन स्थितियों में बदलाव लाना जरूरी है। दलित समाज को कानूनन सम्मान का स्थान मिलना चाहिए और इसीलिए मन में स्वाभिमान की भावना जागृत करने वाली शिक्षा उन्हें मिलनी चाहिए।

अस्पृष्य वर्ग वुद सोचना सीखे। अस्पृश्य वर्ग का सम्पूर्ण विकास तभी संभव है जब प्रशासन में महत्वपूर्ण पदों पर उनकी नियुक्ति हो। अब तक ऐसे पद केवल उच्च वर्ग के हाथ में रहे हैं।

दलित बंधू : 10 फरवरी, 1949

30 जनवरी के बाद महाराष्ट्र में हुए अत्याचारों की वजह यह है कि उच्चवर्णियों ने महत्वपूर्ण पद अपने हाथ में रख कर समाज को लूटा है।

केवल राजनीतिक विकास से जीवन के सभी सवाल हल नहीं होते। जीवन में सम्पूर्ण विकास के लिए जिन अनेक बातों की जरूरत होती है उनमें से राजनीतिक स्वतंत्रता भी एक है।

जीवन में विकास लाने के लिए शिक्षा ही एकमात्र महत्वपूर्ण बात है। पिछले 25 सालों से मैं राजनीति में काम कर रहा हूं। इतने सालों के मेरे अनुभवों से मुझे लगता है कि शिक्षा ही जीवन में सबसे महत्वपूर्ण बात है।

पिछले 2-4 सालों से मेरे मन पर अस्पृश्यों की शिक्षा का सवाल छाया हुआ है। इसी कारण मैंने मुंबई में सिद्धार्थ कॉलेज की स्थापना की।

स्थितियां अगर अनुकूल रहीं तो मराठवाड़ा में अस्पृश्यों के विकास के लिए औरंगाबाद में सिद्धार्थ कॉलेज की शाखा खोलने की इच्छा है।

260

हिंदू परम्परागत धर्म के जर्जर हिस्सों को ठीक करने के अलावा हिंदू कोड बिल में दूसरा कुछ नहीं

हिंदू पार्लियामेंट के समक्ष नए हिंदू कोड बिल को कानून में रूपांतरित करने के लिए प्रस्तुत करते हुए भारत के कानून मंत्री डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने कहा,

आप अगर हिंदू आचार, हिंदू संस्कृति और हिंदू समाज को हमेशा के लिए बनाए रखना चाहते हों तो उसमें जहां सुधार अथवा संशोधन की आवश्यकता हो वहां सुधार अथवा संशोधन करने से हिचकिचाना नहीं। हिंदू परम्परागत धर्म का जो हिस्सा बिल्कुल जर्जर हो चुका है उसको ठीक करने के अलावा इस बिल में और कुछ भी नहीं है।

विवाह के बारे में पुरानी सोच और नई सोच वाले लोगों की मर्जी रखने की कोशिश की गई है। पुरानी सोच वाले लोगों को धर्म के अनुसार उनके ही समाज के दुल्हा-दुल्हनों की शादी कराने की इजाजत दी गई है। तो नई सोच वाले लोगों को अपनी विवेक की मानते हुए अपने समाज से बाहर के दुल्हा-दुल्हनों के साथ शादी करने की आजादी दी गई है।

हिंदू समाज का 90 प्रतिशत हिस्सा शूद्रों का है और शूद्रों में विवाहविच्छेद या तलाक देने की रीति बहुत आम है। केवल 10 प्रतिशत हिंदुओं में तलाक लेने की रीति नहीं है। इसलिए मेरा यह सवाल है कि क्या आप 10 प्रतिशत लोगों का कानून 90 प्रतिशत लोगों पर लागू करेंगे? (तालियां)

आप पाएंगे कि लोगों को तलाक का अधिकार हमारे शास्त्रों में भी दिया गया है। वैवाहिक संबंध सुवदायी होने के लिए शासत्रों द्वारा बताए गए नियमों को एक तरफ कर अलग ही रुढ़ियों को उनसे श्रेष्ठ स्थान दिया जा रहा है।

दुनिया के जिन लोगों में तलाक बहुत आम बात है उनके अनुभव तलाक का अधिकार देने के लिए अनुकूल ही हैं।

यह सरकार के लिए अथवा इस सदन के लिए बंधनकारी नहीं है कि हर बिल लोगों की राय जानने के लिए प्रसारित किया जाए या उसे प्रकाशित किया जाए। दूसरी बात यह कि, जान-बूझ कर ऐसी व्यवस्था की गई है कि इस बिल का असर केवल प्रांत तक ही सीमित रहे । बात को अगर प्रांत तक ही सीमित रखना हो तो इससे पहले

जनता : 26 फरवरी, 1949, भाषण की तारीख नहीं दी गई है।

भी दो-तीन बार यह बिल लोगों की राय जानने के लिए प्रकाशित किया गया था। चौथी बार बिल को लोगों के सामने रखने से कोई खास फर्क पड़ेगा ऐसा मुझे नहीं लगता। जब रियासतों पर भी इस कोड को लागू किया जाएगा तब मैं आपको यकीन दिलाता हूं कि रियासत के लोगों की राय भी ली जाएगी।

सिलेक्ट समिति द्वारा वैवाहिक अधिकारों और कानूनन तलाक के बारे में दो नए परिच्छेद पहले बिल में जोड़े गए हैं।

सिलेक्ट कमेटी का कहना है कि, धर्मांतरण के कारण अगर पिता अपने बच्चे को गोद देने की प्रक्रिया में शामिल होने के लायक नहीं माना जाता तब अपने बच्चे को गोद देने का अधिकार मां के पास होना ही चाहिए। इसी प्रकार अगर किसी हिंदू विधवा द्वारा धर्मांतरण किया जाता है तो अपने बच्चे को गोद देने का उसका अधिकार भी निरस्त किया जाए ऐसी व्यवस्था इस बिल में की गई है।

गोद लेने के विभिन्न तरीकों में भी थोड़ा फेरबदल किया गया है। सिलेक्ट कमेटी ने निर्णय लिया है कि गोद लेने के कोड में दर्ज तरीकों के अलावा कोई भी अन्य विधि गोद लेने के लिए नहीं अपनाई जा सकती।

सिलेक्ट कमेटी द्वारा इसमें सुधार के लिए दो सुझाव दिए गए हैं हिंदू धर्म में अपने बच्चे के अभिभावक बनने का जो प्राकृतिक अधिकार पिता को मिला हुआ है उसे पिता के संन्यास लेने अथवा धर्मांतरण करने पर उससे छीन लिया गया है। इस बिल का उद्देश्य हिंदुओं को संगठित करना है इसीलिए इस तरह की शर्त रखना आवश्यक है।

कन्या के हक में भी सिलेक्ट कमेटी द्वारा काफी बदलाव किए गए हैं। मूल हिंदू बिल के अनुसार कन्या को पुत्र की तुलना में आधा हिस्सा मिलने का प्रतिपादन किया गया था। लेकिन न्यायपूर्ण तरीके से बँटवारा हो इसलिए और महिलाओं को भी विरासत में समान अधिकार मिले, बेटी को भी बेटे के समान हिस्सा मिले ऐसी व्यवस्था सिलेक्ट कमेटी द्वारा की गई है।

प्रस्तुत कोड पर आरोप लगाए जाते हैं कि नया कोड प्रचलित कानून के विरुद्ध है। इसके बारे में मैं सभागृह को खुले मन से कहना चाहता हूं कि अगर आपको इस कोड पर भरोसा न हो, अथवा इस कोड को मान्यता देने के बाद भी आप रूढ़ियों का ही पालन करते रहने वाले हो तो इस कोड को पास करने का कोई मतलब नहीं। कानून को भी कुतरने की ताकत रूढ़ियों में होती है इस कारण उनके आगे यह कोड बेजान हो जाएगा।

कुछ लोगों ने आशंका जताई है कि 'मिताक्षर' कानून की तरह क्या इस कोड के जरिए हिंदू संयुक्त परिवार पद्धति नष्ट की गई है? बता दूं कि इस कोड में जो व्यवस्था

की गई है उसके अनुसार संयुक्त परिवार के हर सदस्य का हिस्सा अलग से उसके नाम पर दर्ज होगा। यह कोई बहुत ही क्रांतिकारी बात बिल्कुल नहीं है। आप सब जानते हैं कि आजकल के जमाने में हर कोई अलग रहना चाहता है। इसलिए इस कोड के जरिए भले संयुक्त परिवार का संयुक्त अधिकार हटाया गया हो, लेकिन संयुक्त परिवार व्यवस्था को बनाए रखा है। अर्थात् अब 'मिताक्षर' कानून की जगह 'दायभाग' कानून लेगा। इस कानून द्वारा इतनी ही व्यवस्था की गई है।

महिलाओं को विरासत में मिलने वाली संपत्ति की बात बेहद पेचीदा है। इस मामले में 1. स्त्रीधन 2. विधवा की संपत्ति, ये दो हिस्से बनाए गए हैं। जो संपत्ति पुरुष की ओर से विरासत अधिकार के तहत महिला को मिलती है उसे विधवा की संपत्ति कहा गया है। इस बारे में सिलेक्ट कमेटी का निर्णय है कि महिला में जब अन्य मामलों में अपनी संपत्ति की देखभाल के लिए जरूरी चतुरता और सामर्थ्य होता है, तो यह भी मान लेना चाहिए कि विधवा की संपत्ति की देखभाल के लिए भी वह चतुर और समर्थ है। मैं अगर सदियों के हिंदू संस्कृति और कानूनों से पीड़ित महिलाओं को न्याय देने में सफल हुआ तो मेरा जन्म सार्थक हुआ ऐसामैं मानूंगा। इसीलिए इस हिंदू कोड में दर्ज किया गया है कि महिला को मिलने वाली संपत्ति पर उसका पूरा और नियंत्रणरहित मालिकियत का अधिकार है।

261

अपना भविष्य उज्ज्वल है

अखिल भारतीय शेड्यूल्ड कास्ट फेडरेशन की वर्किंग कमेटी की बैठक दिनांक 19-20 नवंबर को दिल्ली में होगी। अध्यक्षता आयु. एन. शिवराज (बी.ए.बी.एल.) करेंगे। वर्किंग कमेटी की इस बैठक में विशेष तौर पर आमंत्रित डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर उपस्थित रहेंगे।

वर्किंग कमिटी के कार्यक्रम इस प्रकार हैं -

(1) शेड्यूल्ड कास्ट फेडरेशन के पूरे देश में चल रहे काम का जायजा लेना।

(2) अखिल भारतीय शेड्यूल्ड कास्ट फेडरेशन के अगले कार्यक्रम और नीति तय करना।

(3) अखिल भारतीय शेड्यूल्ड कास्ट फेडरेशन की अगले अधिवेशन की तारीख और स्थान निश्चित करना।

(4) समता सैनिक आदि दलों पर लगी पाबंदी के बारे में विचार-विमर्श करना।

सर्कुलर में एक और बात कही गई है कि जो लोग वर्किंग कमेटी के पास जानकारी भेजना चाहते हैं वे आयु. पी. एन. राजभोज, महासचिव, अखिल भारतीय शेड्यूल्ड कास्ट फेडरेशन के नाम से 1, हार्डीज एव्हेन्यू, न्यू दिल्ली, इस पते पर भेज दें। करीब तीन सालों के बाद वर्किंग कमेटी की बैठक बुलाईं जाने से उसके निर्णयों और आदेशों की ओर सभी अस्पृश्य जनता का ध्यान लगा हुआ है।

अलग-अलग स्थानों के प्रांताध्यक्षों के लिए

आयु. राजभोज ने एक और पत्र फेडरेशन के ही सभी प्रांताध्यक्षों के नाम लिखा। उनसे अभी तक फेडरेशन के काम की रपट नहीं आई है। इस बारे में उन्होंने नाराजगी भी जता दी है। विभिन्न प्रांतों में कितनी जिला शाखाएं हैं, कितनी (तालुका/तहसील) शाखाएं हैं, कितनी गांव शाखाएं हैं आदि के साथ-साथ फेडरेशन के सभासद कितने हुए, कितना पैसा इकठ्ठा हुआ और संगठन का कार्य कहां तक हुआ इस बारे में उन्होंने हर प्रांताध्यक्ष से जल्द से जल्द रिपोर्ट मंगाई। वे इस रिपोर्ट को वर्किंग कमेटी के समक्ष पेश करना चाहते हैं।

जनता : 12, 19 और 26 नवंबर, 1949

वर्किंग कमेटी के क्रियाकलाप जानकारीपूर्ण लगते हैं। खासकर उसका समय महत्वपूर्ण है। खास दर्ज करने लायक बात यह है कि करीब संविधान तीन वर्षों के बाद 19-20 नवंबर को ही वर्किंग कमेटी की बैठक बुलाई गई है। जल्द ही घटना समिति का काम पूरा होगा। संविधान घोषित होते ही नई पार्लियामेंट का निर्माण होगा। भारतवासियों को नए पार्लियामेंट में अस्पृश्य समाज के हकों का अहसास वर्किंग कमेटी कराएगी। अस्पृश्य समाज के अधिकारों की रक्षा करने और उनके बारे में सब दूर पैनी नजर से हर घटना पर ध्यान रखने का काम करने में वर्किंग कमेटी माहिर है इसी का यह सबूत है।

काँग्रेस या अन्य दलों के साथ शेड्यूल्ड कास्ट फेडरेशन के संबंध कैसे हों इस बारे में अफवाहें फैला कर जो अफरातफरी मची थी उसे दूर करने के लिए वर्किंग कमेटी के प्रस्ताव काम आएंगे इसमें कोई शक नहीं।

अ. भा. शेड्यूल्ड कास्ट फेडरेशन की वर्किंग कमेटी अर्थात् अस्पृश्य समाज का सर्वश्रेष्ट न्यायालय है। इसी न्यायालय से दलितों को सही न्याय मिलेगा। और न्याय पाने के लिए वर्किंग कमेटी के आदेश के अनुसार पालन और तन-मन-धन लगा कर शेड्यूल्ड कास्ट फेडरेशन के संगठन को मजबूत करने के लिए सभी अस्पृश्य बंधुओं को तैयार रहना होगा।

तय कार्यक्रम के अनुसार दिनांक 19-20 नवंबर, 1949 को अखिल भारतीय शेड्यूल्ड कास्ट फेडरेशन की मीटिंग दिल्ली में मध्य प्रांत के आयु. डी. एल. पाटील की अध्यक्षता में हुई इस बैठक का कामकाज गुप्त तरीके से किया गया। वर्किंग कमेटी की बैठक में वर्तमान राजनीतिक हालात के बारे में सूक्ष्मता से विचार-विमर्श किया गया और निर्णय लिया गया कि शेड्यूल्ड कास्ट फेडरेशन अपनी पुरानी नीति पर ही कायम रहे। हालांकि यह भी साफ किया गया कि शेड्यूल्ड कास्ट फेडरेशन की भूमिका असहयोग की बिल्कुल नहीं होगी। यह भी स्पष्ट किया गया कि जो पार्टी अस्पृश्यों के लिए खास कार्यक्रम रखेगी और जो समान हिस्सा देगी उसी के साथ सहयोग करने के बारे में दलित फेडरेशन सोचेगा।

उपस्थितों के नाम

विशेष आमंत्रण के कारण भारत सरकार के कानून मंत्री डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर वर्किंग कमेटी की बैठक में उपस्थित थे। विभिन्न प्रांतों के वर्किंग कमेटी के लगभग सभी सदस्य उपस्थित थे। प्रांतों के अनुसार निम्नलिवित सदस्य बैठक में दिखाई दे रहे थे-

पंजाब

1. आयु. सेठ किशनदास
2. आयु. बालमुकुंद

मध्य प्रांत

1. आर. व्ही. कवाड़े

2. आयु. डी. एल. पाटील

3. आयु. एस. ए. खंडारे

मुंबई

1. दादासाहेब गायकवाड़

2. कु. शांताबाई दाणी

3. आयु. आर. आर. भोले

4. श्री बी. एच. वराले

संयुक्त प्रांत

1. आयु. तिलकचंद कुरील

2. आयु. गोपीचंद पीपल

3. परसरामजी

बिहार

1. गणेशरामजी

मध्य भारत

1. डॉ. विवेकानंद

2. आयु. नितनवरे

आंध्र

1. आयु. एवाडापल्ली

आसाम

1. आयु. शेखीभाई

हैदराबाद

1. आयु. सुब्बय्या

इसके अलावा अखिल भारतीय शेड्यूल्ड कास्ट फेडरेशन के उप-सचिव बापूसाहब राजभोज भी उपस्थित थे। आयु. एन. शिवराज कुछ खास वजह से आ नहीं पाए इसलिए वर्किंग कमेटी की बैठक मध्य प्रांत के आयु. डी. एल. पाटील की अध्यक्षता में हुई।

दो दिनों में हुआ कामकाज

दिनांक 19 और 20 को वर्किंग कमेटी का कामकाज हुआ।

पहले दिन के कामकाज की शुरुआत दलित फेडरेशन के महा सचिव आयु. बापूसाहब राजभोज द्वारा पढ़ी गई रिपोर्ट से हुई। आयु. राजभोज ने रिपोर्ट में तीन सालों के कामकाज का लेखा-जोखा प्रस्तुत किया। पिछले सत्याग्रह का वर्णन कर उन्होंने सत्याग्रहियों का अभिनंदन किया। मद्रास, संयुक्त प्रांत, मध्य प्रांत आदि के दौरे के अनुभवों का वर्णन भी संगठन के नजरिए से उन्होंने किया। विभिन्न प्रांतीय शाखाओं में बहुत शिथिलता की बात भी उन्होंने जोर देकर कही। प्रांतीय शाखाओं से फेडरेशन के सदस्यों की संख्या बढ़ाई नहीं जाती, हिसाब नहीं मिलते, प्रचार के लिए यात्राएं नहीं निकाली जातीं ये शिकायतें उन्होंने एक बार फिर डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के सामने वर्किंग कमेटी की बैठक में की। आयु. राजभोज ने अपनी रिपोर्ट के आखिर में डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर कार्यों की प्रशंसा की। आयु. राजभोज ने कहा कि डॉक्टर साहब ने संविधान बनाकर शत्रू से भी वाहवाही पाई। यह उनकी और फेडरेशन की भी विजय है। आयु. राजभोज को संगठन में अनुशासन बनाए रखने के लिए कुछ महत्वपूर्ण सूचनाएं मिली हैं जिनके बारे में वह जल्द ही एक सर्कुलर निकालने वाले हैं।

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का भाषण

आयु. राजभोज द्वारा रिपोर्ट पढ़े जाने के बाद डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने काफी संक्षिप्त में भाषण दिया। बाबासाहेब ने अपने भाषण में कहा-

हमें अपना संगठन अलग ही रखना होगा। अलग संगठन के बगैर हम स्वाभिमान के साथ जी नहीं सकेंगे। आज जो छोटे-मोटे राजनीतिक दल दिखाई देते हैं उनके पास अस्पृश्यों के लिए कोई खास योजनाएं नहीं हैं। कोई अगर इस प्रकार के कार्यक्रम रखते तो हम उनके बारे में जरूर सोचते। लेकिन इस वजह से हमारी राह रुक नहीं जाएगी। हमें अपनी सुप्तावस्था को त्यागना होगा। अब के बाद हमें जो भी पाना हो वह इज्जत के साथ ही पाना होगा। किसी की हांजी-हांजी करके या भीख मांग कर हमें कुछ नहीं चाहिए। हमारा भविष्य अब उज्ज्वल है। भविष्य उज्जवल बनाने के लिए मुझे निष्ठावान लोगों की जरूरत है।

आखिर एक बात मुझे साफ तौर पर कहनी है कि अगर आप मुझे अपना नेता मानते हैं तो आपको मेरी बातें माननी होंगी।

चार महत्वपूर्ण प्रस्ताव

उसके बाद शेड्यूल्ड कास्ट फेडरेशन की वर्किंग कमेटी द्वारा चार महत्वपूर्ण प्रस्ताव पारित किए गए। शेड्यूल्ड कास्ट फेडरेशन की मौजूदा नीति में किसी तरह का फेरबदलाव

नहीं किया गया और पहले प्रस्ताव द्वारा आदेश दिया गया कि आगामी पार्लियामेंट चुनावों के जाल में कोई फंसें नहीं। दूसरा प्रस्ताव समता सैनिक दल के बारे में है। अन्य स्वयंसेवी संस्थाओं द्वारा जिस प्रकार के हिंसात्मक कृत्य हुए उस प्रकार के कोई काम समता सैनिक दल द्वारा न किए जाने के बावजूद आरएसएस जैसे संगठनों पर की पाबंदी हटाई गई और समता सैनिक दल पर लागू पाबंदी हटाई नहीं गई इस बात का दूसरे प्रस्ताव में विरोध किया गया।

अखिल भारतीय शेड्यूल्ड कास्ट फेडरेशन के महासचिव को संगठन के बारे में महत्वपूर्ण सूचना देने वाला तीसरा प्रस्ताव है। इस प्रस्ताव के जरिए पार्टी में अनुशासन बनाए रखने के लिए अनुशासन भंग करने वालों को दण्डित करने के अधिकार भी उन्हें दिए गए हैं। आयु. ठवरे, गोपालसिंह को दलित फेडरेशन से निष्कासित करने का निर्णय लिया गया है।

चौथा प्रस्ताव अ. भा. शेड्यूल्ड कास्ट फेडरेशन के आगामी सार्वजनिक अधिवेशन के बारे में है जिसमें तय हुआ है कि अगला अधिवेशन पंजाब में होना है। अधिवेशन का स्थान और तारीख जल्द ही घोषित की जाएगी।

262
राजनीतिक दल स्वयं को देश से बड़े मानने लगें आजादी तो खतरे में पढ़ जाएगी

26 नवंबर, 1949 के दिन दिन संविधान सभा के अध्यक्ष डॉ. राजेंद्रप्रसाद का कार्यक्रम समापन भाषण होने के बाद भारतीय संविधान पारित हुआ। जिनका जिक्र हमेशा भारतीय संविधान के शिल्पकार के तौर पर किया जाता है जो कि बिल्कुल सार्थक है उन डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का उससे एक दिन पहले यानी 25 नवंबर, 1949 के दिन संविधान सभा में आखिरी भाषण हुआ।

संविधान निर्माण के लिए उन्हें कितना परिश्रम करना पड़ा इसका अंदाजा आगे दी गई खबर से लगता है –

''अंदाज है कि 17 तारीख को संविधान समिति का कामकाज स्थगित हो सकता है। संविधान सभा का कामकाज अगर रुक गया तो डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को कुछ दिनों तक पूरी तरह आराम करना पड़ेगा। आराम के लिए माईसाहब के साथ डॉ. बाबासाहेब शायद कश्मीर जाएंगे ऐसा लगता है।''

संविधान सभा का कामकाज जब चल रहा था तब डॉक्टरसाहब प्रतिदिन 12 से 14 घंटों तक काम किया करते थे। इस साल के आखिर तक यानी 31 दिसंबर, 1949 के आसपास उन्हें संविधान पारित करवाना है। क्योंकि, सभी संकल्प किया है कि नया संविधान 26 जनवरी, 1950 के दिन लागू हो।[1]

संविधान निर्माण में उनके योगदान और काम के लिए संविधान सभा के ज्यादातर सदस्यों द्वारा तथा समाचार-पत्र समूहों के इस क्षेत्र के जानकारों द्वारा उनकी खूब प्रशंसा की गई। उनमें से उद्धरण प्रस्तुत हैं ।

आर. के. सिधवा – ''यह संविधान सर्वोत्तम है। लोगों को यह बताना मैं अपना कर्तव्य समझता हूं। मुझे उम्मीद है कि संविधान सभा का हर सदस्य यही कहेगा। हम में भले कितने ही मतभेद हों लेकिन इस संविधान के बारे में हमें गर्व है। हम दुनिया पर इस बात को स्पष्ट करेंगे ताकि दुनिया को पता चले कि यह दस्तावेज संदर्भ के लिए उपयुक्त है। 26 जनवरी, 1950 के ऐतिहासिक दिन हमारा सार्वजनिक जनतंत्र राज्य होगा। मुझे गर्व है कि उस दिन इस संविधान को कानून का स्वरूप प्राप्त होगा।''[2]

पंडित ठाकुरदास भार्गव – ''मसौदा समिति और उसके सभी सदस्यों के प्रति हमें किस प्रकार कृतज्ञता व्यक्त करनी चाहिए यह मेरी समझ में नहीं आ रहा है। कानून के बारे में कुशाग्र बुद्धि, अथक परिश्रम, अति उच्च प्रकार का कौशल, दृढ़ आत्मविश्वास,

1. जनता : 17 सितंबर, 1949

2. Dr. Babasaheb Ambedkar : Writings and Speeches, Vol. 13, PP - 1164 & 65

आधुनिकता के साथ इन गुणों से युक्त मसौदा समिति के अध्यक्ष डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने इस संविधान सभा के माध्यम से नेतृत्व किया और इस संदर्भ में निर्माण हुए सभी उलझी गुत्थियों को हल किया।''[3]

बेगम ऐज़ाज रसूल – ''संविधान ने भारतीय जनता की आशाओं और आकांक्षाओं को मूर्त रुप प्रदान किया है। शब्दों योजना, प्रावधानों की कसौटियों पर संविधानों का अगर मूल्यांकन करना हो तो दुनिया के संविधानों में ये संविधान श्रेष्ठ प्रकार का साबित होगा। इस बारे में हमारे मन में संविधान के प्रति जो गर्व की भावना है वह न्यायोचित ही कहलाएगी। इस मेहती मार्गदर्शक कार्य के लिए मैं डॉ. अम्बेडकर और मसौदा समिति के सदस्यों का अभिनंदन करती हूं।

धर्मनिरपेक्षता हमारे संविधान की महत्वपूर्ण विशिष्टता है। धर्मनिरपेक्षिता का आग्रहपूर्वक प्रतिपादन हमारे संविधान की पवित्रता है और हमें इस पर गर्व है। इस धर्मनिरपेक्षिता की भावना को हमेशा बल मिलेगा और कभी उसे कलंकित नहीं किया जाएगा इसका मुझे पूरा भरोसा है। भारत के लोगों की एकता इसी पर निर्भर है। उसके बगैर विकास की आशा–आकांक्षाएं व्यर्थ साबित होंगी।''[4]

संविधान सभा के रोजमर्रा के काम की वबरें दिल्ली और बाहर के अखबारों को देने की जिम्मेदारी जे. पी. चतुर्वेदी नामक एक विख्यात पत्रकार को सौंपी गई थीं। श्री चतुर्वेदी को भारतीय पत्रकारिता आंदोलन का जनक माना जाता है। संविधान निर्माण के कार्य में डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के योगदान के बारे में वह कहते हैं। उस जमाने में उन्हें करीब से देखने का उच्चतम अवसर मिला। डॉ. बाबासाहेब को चुनौती देना असंभव था। वह दुनिया के सभी संविधानों के विद्वान थे। उनसे चर्चा करने का मौका मिलना बौद्धिक दावत हुआ करती थी और मुझे ऐसे मौके मिला करते थे।

उनके बारे में जानकारी देते हुए ज्यादातर यही बताया जाता है कि उन्होंने दलितों अन्य पिछड़े वर्गों, आदिवासियों अल्पसंख्यकों और शोषितों के उद्धार के लिए संघर्ष किया। लेकिन नए भारतीय गणतंत्र की बुनियाद खड़ी करने के लिए उनके योगदान का जिक्र नहीं किया जाता। उन्हें आधुनिक मनु कहा जाता है। जिस समाज से उनका उदय हुआ उस समाज के हित के लिए उन्होंने न केवल नए कानून बनाने की कोशिश की बल्कि नए कानून दिए भी। भारत में तब जनतंत्र शैशवावस्था में था, उन्होंने संविधान के रूप में कानून दिया। संविधान निर्माण करने वाले संविधान सभा के पितामह को जब हम याद करते हैं उस वक्त हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि भारत की संविधान सभा में डॉ. अम्बेडकर सबसे श्रेष्ट व्यक्तित्व थे। प्रत्यक्षत: उन्होंने वर्तमान संविधान की रचना की। भारतीय प्रजातंत्र की उत्क्रांति को सुव्यवस्थित करने के लिए और देश की अखंडता

---

3. Dr. Babasaheb Ambedkar : Writings and Speeches, Vol. 13, PP - 1169&70

4. Dr. Babasaheb Ambedkar : Writings and Speeches, Vol. 13, PP - 1179

को सुरक्षित रखने के लिए उनके विचार मार्गदर्शन करेंगे।''[5]

संविधान के मशहूर विशेषज्ञ एस. वी. पायली ने कहा - अपनी विद्वत्ता, कल्पनाशक्ति, तर्कनिश, वाकपटुता और अनुभवों को डॉ. अम्बेडकर ने दांव पर लगाया। बेहद कठिन सवाल पर भी उनका जबरदस्त उत्तर हुआ करता था। वह बड़े ही प्रभावकारी ढंग से और आसानी से अपनी राय सामने रखते। दुनिया के सभी विकसित देशों के संविधानात्मक कानूनों का और उन पर किए गए अमल के बारे में उन्हें अच्छी जानकारी थी। साथ ही 1935 वाले कानून की सूक्ष्मता से जानकारी थी। संविधान के मसौदे के बारे में जब चर्चा हो रही थी तब हर सवाल का वह स्पष्ट तथा प्रभावी और आसान तरीके से जवाब देते थे। उनसे जवाब के बाद सदस्यों के मन का संदेह, उलझन और कठिनाई दूर हो जाती। तर्क आधारित मुक्तियुक्त प्रभावी तथा सब समझ सकें ऐसा स्पष्टीकरण, किसी भी मुद्दे का तुरंत उत्तर देकर मतभेद को खत्म करने की कला केवल उनके ही पास थी किसी और सदस्य के पास नहीं। यह सब करते हुए विरोधियों द्वारा अगर कोई सही मुद्दा पेश किया गया तो उसे जल्द-समझ कर स्वीकारने की उदारता भी उनमें थी। इसीलिए उन्हें आधुनिक मनु या भारतीय संविधान के जनक कहा जाता है, जो सही भी है।''[6]

बंगाल के विभाजन के कारण वहां से चुने गए कुछ सदस्यों का संविधान सभा की सदस्यता समाप्त हो गयी थी उनमें डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर भी शामिल थे। तब तक के उनके कार्य से संविधान सभा को उनकी संविधान विशेषज्ञता और उनके मार्गदर्शन की और उनके सहयोग की बेहद जरुरत महसूस हो रही थी। इस बात का अहसास डॉ. राजेंद्रप्रसाद के मुंबई प्रांत के तत्कालीन मुख्यमंत्री श्री बी. जी. खेर को 30 जून, 1947 को लिखे वत से होता है। अपने खत में लिखते हैं . 'अन्य किसी बात के बारे में न भी सोचें तो हमें अब लगने लगा है कि संविधान सभा और जिन विभिन्न समितियों पर डॉ. अम्बेडकर की नियुक्ति हुई उनमें उनका कार्य इतना अमूल्य है कि हम उनके योगदान से वंचित नहीं रहना चाहते। वह बंगाल से चुन कर आए थे। उस प्रांत के विभाजन के बाद उनका संविधान सभा की सदस्यता वत्म हो चुकी थी। संविधान सभा का अगला सत्र दिनांक 14 जुलाई से शुरू हो रहा है और मैं चाहता हूं कि उसमें उनकी सहभागिता हो। इसीलिए, तुरंत उनकी नियुक्ति हो।''[7] इस प्रकार जुलाई 1947 में मुंबई प्रांत से डॉ. अम्बेडकर को दोबारा संविधान सभा के लिए चुना गया।

उनकी नियुक्ति कितनी सार्थक थी इसका पता संविधान सभा के अध्यक्ष डॉ. राजेंद्रप्रसाद द्वारा 26 नवंबर, 1949 को संविधान पारित करते हुए दिए भाषण में डॉ. अम्बेडकर के प्रति व्यक्त भावनाओं से चलता है। डॉ. राजेंद्रप्रसाद कहते हैं- इस कुर्सी पर बैठ कर

---

5. फुले-अम्बेडकर संशोधनातील प्रदुषणे, वसंत मून, पृष्ठ 21 और 24
6. तत्रैव, पृ. 29
7. Dr. Babasaheb Ambedkar : Writings and Speeches, Vol. 13, PP 25-26

संविधान सभा के कार्य का मैं हर रोज निरीक्षण करता आया हूं। संविधान सभा की मसौदा समिति द्वारा कितने उत्साह, निष्ठा और लगन के साथ काम को पूरा किया इसका अहसास किसी और से अधिक मुझे है। खासकर मसौदा समिति के अध्यक्ष डॉ. अम्बेडकर ने अपने स्वास्थ्य की परवाह किए बगैर इस काम को पूरा किया है। (तालियां) मसौदा समिति और उसके अध्यक्ष पद के लिए उन्हें चुनने का जो निर्णय हमने लिया उससे बेहतर और उचित निर्णय कोई और नहीं था। उनका चुनाव सार्थक था यह साबित कर दिवाया। इतना ही नहीं, उन्होंने जो कार्य किया उससे उनके कार्य को एक ओज प्राप्त हुआ। इस संदर्भ में समिति के अन्य सदस्यों के बीच भेदभाव करना ठीक नहीं होगा। मैं जानता हूं कि अध्यक्ष की तरह ही सभी ने अपनत्व और निश से कार्य किया है। राष्ट्र उन्हें धन्यवाद दे वे इस योग्य हैं।''[8]

उसके बाद देश-विदेश में डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का सम्मान होता रहा। चिरंतन ध्यान में रहे ऐसा महत्वपूर्ण राष्ट्रकार्य उन्होंने किया। डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने संविधान के सहारे अस्पृश्यता को हमेशा के लिए खत्म कर दिया था। इतना ही नहीं वरन् उन्होंने भारतीय जीवन में स्वतंत्रता, समानता, बंधुभाव और न्याय जैसे श्रेष्ठ जीवनमूल्यों को स्थापित किया था। इसीलिए दुनिया के एक महान संविधान विशेषज्ञ के तौर पर उनका नाम हुआ। विख्यात राज्यविज्ञानी और ऑक्सफर्ड तथा केंब्रिज विश्वविद्यालय के पूर्व प्रोफेसर अर्नेस्ट वार्कर ने 1951 में अपना प्रिंसिपल्स ऑफ सोशल एंड पोलिटिकल थियरी ग्रंथ प्रकाशित किया। उन्होंने वह भारतीय संविधान की प्रस्तावना को समर्पित किया है। इस ग्रंथ की भूमिका में वह कहते हैं, 'मेरे इस ग्रंथ का सार इस भूमिका में समाया हुआ है। भारतीय जनता द्वारा अपनी स्वतंत्रता का आरंभ करने से पूर्व इन श्रेष्ठ मानवी मूल्यों को अंगीकार किया इसका मुझे अभिमान है।'

भारतीय संविधान के शिल्पकार अम्बेडकर के कृतित्व का इससे बढ़ कर सम्मान और क्या हो सकता है!''[9]।

ध्यान आकर्षित करने वाला अद्वितीय व्यक्तित्व

''डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का भाषण करीब 55 मिनटों तक चला। संविधान समिति के भव्य हॉल में उस वक्त सुईपरक सन्नाटा था। सभी गैलरियां ठसाठस भरी हुई थी फिर भी किसी के सांस लेने की या हाथ-पैर हिलाने तक की आवाज नहीं थी। बेहतरीन वुलन सूट पहने, दूर से आकर्षक नजर आते, बीच-बीच में लोगों पर नजर डालते एक ही व्यक्ति पर सबकी नजरें टिकी हुई थीं। वह व्यक्ति थे डॉक्टर बाबासाहेब आंबेडकर।

डॉक्टर साहब के भाषण की शुरुआत में और अंत में तालियों की जो गड़गड़ाहट

---

8. Dr. Babasaheb Ambedkar : Writings and Speeches, Vol .13, PP 1219.

9. डॉ अम्बेडकर : संविधान के शिल्पि : आयु. शांताराम शंकर रेगे डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर गौरव ग्रंथ समिति, महाराष्ट्र राज्य साहित्य और संस्कृति मंडल, मुंबई, पृ. 358.

हुई उसका वर्णन करना कठिन है। तालियों के रूप में उन पर आदर और सम्मान की बरसात हो रही थी। भाषण के बाद तो हर किसीने उनसे हाथ मिला कर उन्हें धन्यवाद दिया।''[10]

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने अपने भाषण में कहा–

''महोदय,

संविधान सभा की पहली बैठक दिनांक 9 दिसंबर, 1946 को हुई। इस बात को आज 2 वर्ष 11 महीने और 17 दिन बीते हैं। इस दरमियान संविधान सभा के कुल 11 सत्र हुए हैं। इन 11 सत्रों में 6 सत्र संविधान की भूमिका का प्रस्ताव पारित करने और मौलिक अधिकार, केंद्रीय संविधान, केंद्र के अधिकार, प्रांतीय संविधान, अल्पसंख्यक समिति की रिपोर्ट तथा अनुसूचित क्षेत्र और अनुसूचित जनजातियों पर विचार-विमर्श करने में बीते। सात, आठ, नौ, दस और ग्यारहवें सत्र का उपयोग मसौदा संविधान पर विचार-विनिमय के लिए किया गया।

संविधान सभा ने 29 अगस्त, 1947 के दिन मसौदा समिति को चुना। उसकी पहली बैठक 30 अगस्त के हुई। 30 अगस्त, से 141 दिनों तक कामकाज चला । इस दरमियान समिति संविधान का मसौदा तैयार करने के काम में व्यस्त रही। संविधान सलाहकारों ने कामकाज के लिए ढांचा मसौदा समिति को सौंपा तब मसौदा संविधान में 243 अनुच्छेद और 13 परिशिष्ट थे। मसौदा समिति द्वारा संविधान सभा को प्रस्तुत किए। पहले मसौदा संविधान में कुल 315 अनुच्छेद और 8 परिशिष्ट शामिल थे। विचार-विमर्श के आखरी दौर में मसौदा संविधान में अनुच्छेदों की संख्या बढ़ कर 386 हुई। अंतिम स्वरुप में मसौदा संविधान में 395 अनुच्छेद और 8 परिशिष्ट शामिल रहे। मसौदा समिति में करीब 7635 सुधार सुझाए गए, उनमें से 2473 सुधार प्रत्यक्ष विचारार्थ सदन में प्रस्तुत किए गए।

इन वास्तविक स्थितियों का मैं केवल इसलिए जिक्र कर रहा हूं क्योंकि किसी समय ऐसा कहा जाता था कि अपना काम पूरा करने के लिए समिति ने अत्यधिक समय लिया। वह बेहद धीमी गति से काम करती रही। जनता का धन बेहिसाब खर्च करती रही। रोम जब जल रहा था तब जैसे नीरो फिडल बजाता बैठा था बिल्कुल उसी तरह के हालात समिति के भी होने के बातें कही जा रही थीं। क्या इन आरोपों में सच्चाई है? अन्य देशों की संविधान समितियों द्वारा संविधान बनाने के लिए कितना समय लिया इस पर आइए, एक नजर डालते हैं। कुछ उदाहरण देखते हैं। अमेरिका की समिति की पहली बैठक 25 मई, 1787 को हुई थी। चार महीनों में अर्थात् 17 सितंबर, 1787 को उन्होंने अपना काम पूरा किया। कनाडा की संविधान सभा की पहली बैठक 10 अक्तूबर, 1864 को हुई और मार्च, 1867 में संविधान का कानून में परिवर्तन हुआ। अर्थात् 2 साल 5 महीनों का समय लगा। ऑस्ट्रेलिया के संविधान निर्माण का काम मार्च 1891 में

10. जनता : 3 दिसंबर, 1949

शुरु हुआ और 9 जुलाई, 1900 में उनके संविधान को कानून का स्वरूप मिला। इसके लिए उन्हें 9 वर्ष का समय लगा। दक्षिण अफ्रीका के संविधान निर्माण के काम की शुरुआत अक्तूबर, 1908 में हुई और 20 सितंबर, 1909 में उनके संविधान को कानून का स्वरुप प्राप्त हुआ। एक साल के परिश्रम से उन्होंने यह काम पूरा किया। यह बात सही है कि अमेरिका और दक्षिण अफ्रीका की संविधान समितियों द्वारा लिए गए समय से हमने अधिक समय लिया। लेकिन कनाडा की संविधान सभा से हमने अधिक समय नहीं लिया और ऑस्ट्रेलिया की संविधान सभा की तुलना में हमने बहुत ही कम समय लिया। किसने कितना समय लिया इस बारे में सोचते समय दो बातों पर ध्यान दिया जाना जरूरी है। पहली बात यह कि अमेरिका, कनाडा, दक्षिण अफ्रीका और ऑस्ट्रेलिया इन देशों के संविधान हमारे देश के संविधान से बहुत छोटे हैं। जैसा कि मैंने बताया कि हमारे संविधान में 395 अनुच्छेद हैं। अमेरिकी संविधान में केवल 7 अनुच्छेद हैं। उनमें से पहले 4 अनुच्छेदों को 21 उपविभागों में विभाजित किया गया है। कनाडा के संविधान में 147, ऑस्ट्रेलिया के संविधान में 128 और दक्षिण आफ्रिका के संविधान में 153 अनुच्छेद हैं। एक और बात पर ध्यान दिया जाना जरूरी है कि इन चारों देशों के संविधान निर्माताओं को संविधान सुधार के सवालों का सामना नहीं करना पड़ा था। जिस स्वरूप में प्रस्तुति की गई उसी रूप में उन्हें स्वीकृति मिली। दूसरी तरफ हमारी संविधान सभा को 2473 सुधारों पर विचार करना पड़ा। इस वास्तविकता को ध्यान में रखें तो देरी का आरोप मुझे निराधार है। इतने कम समय में इतना कठिन कार्य पूरा करने के लिए समिति खुद का अभिनंदन करे तो उसमें कुछ गलत नहीं कहा जा सकता।

मसौदा समिति के कार्य की ओर देखते हुए ऐसा लगता है। आयु. नजीरुद्दीन अहमद को उसे पूरी तरह नकारना उनका कर्तव्य है उनकी राय में, मसौदा समिति का काम न केवल नकारने योग्य है बल्कि उससे भी हीन स्तर का है। मसौदा समिति द्वारा किए गए कार्य के बारे में अपनी राय प्रकट करने का अधिकार हर किसी को है। नजीरुद्दीन को भी है। मसौदा समिति के किसी भी सदस्य से अधिक बुद्धिमान होने का नजीरुद्दीन को भरोसा है। मसौदा समिति उनके इस दावे को चुनौती नहीं देना चाहती। बल्कि, संविधान सभा को वह मसौदा समिति पर नियुक्त होने लायक हैं ऐसा ही लगता है। इसलिए उनका हमारे बीच स्वागत करने में मसौदा समिति को खुशी ही होती। संविधान निर्माण के कार्य में उन्हें योगदान का अवसर अगर नहीं मिला तो निश्चित रूप से संविधान समिति का कोई दोष नहीं।

मसौदा समिति पर अपना गुस्सा प्रकट करने के लिए नजीरुद्दीन अहमद ने उसे एक नया नाम दिया है। वह मसौदा समिति को भ्रमण करने वाली समिति कहते हैं। व्यंग्य कसने में नजीरुद्दीन को निश्चित रूप से खुशी मिलती होगी इसमें कोई दो राय नहीं। लेकिन उन्हें एक बात के बारे में स्पष्ट जानकारी शायद नहीं है कि अनियंत्रण के कारण बहते जाना और बहते हुए पर नियंत्रण रखने में फर्क होता है। परिस्थितियों पर नियंत्रण

था, इसलिए मसौदा समिति कभी बह नहीं गई। जहां मछली जाल में नहीं फंसने वाली थी वहीं जाल बिछा कर वे बैठी नहीं रही। जो मछली वह पकड़ना चाहती थी, वह जहां मिलने की संभावना थी वहीं उसने अपना जाल बिछाया था। बेहतर कुछ पाने की कोशिश करना इसका मतलब भटकना नहीं होता। यह कह कर नजीरुद्दीन संविधान समिति का अभिनंदन नहीं करना चाहते यह मैं जानता हूं फिर भी मैं, उन्होंने जो भी कुछ कहा है उसे समिति के अभिनंदन के रूप में ही स्वीकार करता हूं। दोषपूर्ण सुधारों को परे कर अगर योग्य सुधारों को स्वीकारने की ईमानदारी और साहस मसौदा समिति नहीं दिखाती तो ही वह अपने कर्तव्य से हट जाती और प्रति की झूठी बातों की बलि चढ़ने की दोषी कहलाती। यह अगर गलत है तो उस गलती को बेझिझक मान कर उनमें सुधार लाने के लिए मसौदा समिति ने कोशिश की इसमें मुझे खुशी है।

एक सदस्य के अपवाद को अगर छोड़ दें तो संविधान सभा के सदस्यों द्वारा मसौदा समिति द्वारा किए गए काम की भरपूर प्रशंसा की है इसकी मुझे खुशी है। मसौदा समिति द्वारा जो परिश्रम किए गए उनका उत्स्फूर्तता से स्वीकार कर खुले दिल से प्रशंसा किए जाने से मसौदा समिति को खुशी होगी इसका मुझे भरोसा है। संविधान सभा के सदस्य और मसौदा समिति के मेरे सहयोगियों ने मुझ पर अभिनंदन की जो वर्षा की है उससे मैं इतना गद्गद् हुआ हूं कि उनके प्रति अपनी कृतज्ञता को पूरी तरह व्यक्त करने के लिए मेरे पास यथा योग्य शब्द नहीं बचे हैं। संविधान सभा में आते हुए आरक्षित जातियों के हितों की रक्षा करने के अलावा मेरी कोई बड़ी आकांक्षा नहीं थी। इससे बड़ी जिम्मेदारी के काम के लिए मुझे आमंत्रित किया जाएगा इसका मुझे थोड़ा भी अहसास नहीं था। मसौदा समिति में मुझे चुना गया तो मुझे बहुत आश्चर्य हुआ। मसौदा समिति के अध्यक्ष पद के लिए जब मुझे चुना गया तब तो मेरे आश्चर्य का कोई ठिकाना ही नहीं रहा। मसौदा समिति में मेरे मित्र सर अल्लादी कृष्णस्वामी अय्यर जैसे मुझसे बडे, अच्छे और योग्य व्यक्ति थे। इतना भरोसा कर, मुझ पर इतनी बड़ी जिम्मेदारी सौंप कर उन्होंने मेरा चयन किया और देश सेवा का मुझे मौका दिया इसके लिए मैं संविधान सभा और मसौदा समिति के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करता हूं। (हर्षध्वनि)

मुझे इस काम का श्रेय दिया जा रहा है लेकिन यह केवल मेरा काम नहीं है। संविधान सभा के सलाहकार सर. बी. एन. राव का भी इसमें आंशिक योगदान है जिन्होंने मसौदा समिति के विचारार्थ संविधान का कच्चा मसौदा तैयार किया। मसौदा समिति के अन्य सदस्यों का भी इसमें हिस्सा है। जैसा कि मैंने बताया, 141 दिनों तक इस समिति ने काम किया। नए सूत्र ढूंढ निकालने की इस समिति की कल्पनाशीलता और कई मुद्दों को अपने विचारों में समाहित करने की सहनशीलता के बगैर संविधान निर्माण का यह कठिन काम सफलता के साथ पूरा नहीं हो पाता। इसके श्रेय का बड़ा हिस्सा संविधान का ढांचा बनाने वाले प्रमुख आयु. एस एन मुखर्जी का भी है। जटिल प्रस्तावों को आसान और सुस्पष्ट कानूनी स्वरूप में परिवर्तित करने की तथा इसके लिए कठोर परिश्रम करने की उनकी

क्षमता शायद ही किसी और में हो। वह समिति की एक बहुमूल्य रत्न हैं। उनके सहयोग के बगैर संविधान को पूरा करने के लिए समिति को कई वर्षों तक काम करना पड़ता। आयु. मुखर्जी के तहत काम करने वाले कर्मचारियों का जिक्र मुझे करना ही होगा। कितना मुश्किल काम उन्होंने पूरा किया है। कितना कठोर परिश्रम उन्हें करना पड़ा मुझे अहसास है कि कभी-कभी उन्होंने आधी-आधी रात तक जाग कर काम पूरा किया है। उनकी कोशिश और उनके सहयोग के लिए मैं उनके प्रति आभार व्यक्त करता हूं। (हर्षध्वनि)

संविधान सभा अगर विभिन्न घटकों का बिखरा हुआ समुदाय बन कर रहती तो, यहां काला पत्थर, वहां सफेद पत्थर दिखाई देने वाली सिमेंट के इस्तेमाल के बगैर बनी सड़क की तरह हर सदस्य और हर समूह अपने आप में एक कानून बन कर रहता, मसौदा समिति के लिए काम करना बेहद मुश्किल हो जाता। अफरातफरी के अलावा कुछ हाथ नहीं आता। समिति में कॉँग्रेस के अस्तित्व के कारण कामकाज व्यवस्थित और अनुशासनबद्ध ढंग से हो पाया। अफरातफरी पैदा होने का कोई मौका ही उत्पन्न नहीं हुआ। कॉँग्रेस पार्टी के अनुशासन के कारण ही संविधान समिति को संविधान के हर अनुच्छेद और हर संशोधन के भविष्य के प्रति यकीन हुआ और संविधान प्रस्तुत करना आसान हुआ। इसी कारण मसौदा संविधान सभा में आसानी से पारित होने का श्रेय कॉँग्रेस पार्टी को भी देना होगा।

सभी सदस्य अगर पार्टी के अनुशासन से बंधे रहते तो संविधान सभा का कामकाज बड़ा नीरस हो जाता। पार्टी की अनुशासन संबंधी कठोर नीति के कारण सभी केवल हामी भरने वाले समूह मात्र में परिवर्तित होकर रह जाते। संयोग से समिति में कुछ विद्रोही लोग भी थे। उनमें मुख्यतः आयु. कामत, डॉ. पी. एस. देशमुख, आयु. सिधवा, प्रो. सक्सेना और ठाकुरदास भार्गव का भी समावेश था। उनके साथ ही प्रो. के. टी. शाह और हृदयनाथ कुंजरू का जिक्र करना ही पड़ेगा। उनके द्वारा उपस्थित किए गए मुद्दे सैद्धांतिक थे, मैं उनकी सूचनाओं को स्वीकार नहीं कर पाया इसका मतलब उनकी सूचनाओं का मूल्य कम था ऐसा नहीं होता। समिति के कामकाज में जिंदादिल बनाए रखने के लिए उनके द्वारा दिए गए योगदान का महत्व कम नहीं होता। मैं उनके प्रति आभार प्रकट करता हूं। उनके बगैर संविधान के मौलिक सिद्धांतों को स्पष्ट करने का मौका मुझे नहीं मिलता। असल में संविधान पारित करने के तकनीकी हिस्से से भी यह अधिक महत्वपूर्ण है।

और, अध्यक्ष महोदय, इस सभा का कामकाज आपने जिस तरह सम्भाला उसके लिए आखिर में मुझे आपके प्रति आभार व्यक्त करना ही होगा। इस सभा के कामकाज में जिन सदस्यों ने हिस्सा लिया, उनके साथ जो आप अपनत्व और सम्मान के साथ पेश आए यह कभी भुलाया नहीं जा सकता। मसौदा समिति द्वारा प्रस्तावित कुछ सुधार केवल तकनीकी से संबंधित होने का कारण बताते हुए नकारने की कोशिश हुई। मेरे लिए वे क्षण बहुत ही चिंताजनक थे। संविधान निर्माण के कार्य को असफल बनाने के उद्देश्य से आगे ले आए गए कठोर कानून को आपने अनुमति नहीं दी इसलिए खास कर मुझे

आपको धन्यवाद देना है।

संविधान का जितना समर्थन करना था उतना मेरे मित्र सर अल्लादि कृष्णस्वामी अय्यर और आयु. टी. टी. कृष्णमाचारी ने किया है। इसलिए संविधान की गुणवत्ता के मसले पर मैं बोलना नहीं चाहता। मेरी राय में संविधान भले कितना भी बुरा हो उसे लागू करने की जिम्मेदारी जिन पर है वे अगर ईमानदार हों तो वे अच्छे ही साबित होंगे। इसी प्रकार संविधान भले कितना भी बुरा क्यों न हो उसे लागू करने की जिम्मेदारी जिन पर है वे अगर ईमानदार हों तो वह अच्छा ही साबित होगा। संविधान पर अमल करना पूरी तरह से संविधान पर ही निर्भर नहीं करता। संविधान केवल राज्य के कुछ हिस्सों को – जैसे कि कानून मंडल, कार्यकारी मंडल और न्यायपालिका बनाता है। इन विभागों का कार्य हमेशा लोगों पर तथा अपनी आकांक्षाएं तथा साधनों के रूप में लोगों द्वारा निर्माण की गई राजनीतिक पार्टियों पर निर्भर रहने वाला है। भारत के लोग और उनके राजनीतिक दल कब किस प्रकार पेश आएंगे यह कोई कैसे बताए? अपने उद्देश्यों की प्राप्ति के संवैधानिक मार्ग को अपनाएंगे या फिर क्रांतिकारी मार्ग को अपनाएंगे? अगर वे क्रांतिकारी मार्ग को अपनाएंगे तो भले संविधान कितना भी अच्छा क्यों न हो वे असफल रहेंगे यह बताने के लिए किसी विधिवेता की जरूरत नहीं। इसीलिए भारतीय लोग और उनके राजनीतिक दल कैसे पेश आएंगे यह जाने बगैर संविधान के बारे में कोई भी निर्णय लेना निरर्थक होगा।

साम्यवादी और समाजवादी दल की ओर से संविधान के बारे में बड़े पैमाने पर नाराजगी जताई जा रही है। वे संविधान के प्रति क्यों नाराजगी जाहिर करते हैं? सचमुच संविधान ठीक नहीं है इसलिए क्या वे अपनी नाराजगी व्यक्त करते हैं? इस सवाल के जवाब में मैं निश्चित रूप से ना ही कहूंगा। साम्यवादी पार्टी को कामगारों पर तानाशाही के सिद्धांतों पर आधारित संविधान चाहिए। प्रस्तुत संविधान संसदीय जनतंत्र पर आधारित होने के कारण वे संविधान का विरोध करते हैं। समाजवादी दो बातें चाहते हैं – पहली बात कि, अगर सत्ता उनके हाथ में आती है तो वे बिना उसकी कीमत चुकाए निजी संपत्ति का राष्ट्रीयकरण अथवा सामाजीकरण करने की आजादी उन्हें संविधान के तहत मिलनी ही चाहिए। समाजवादी जो एक और चीज चाहते है वह है संविधान के मौलिक अधिकार निरपेक्ष तथा किसी भी तरह के बाधारहित होने चाहिए। उनके पक्ष को अगर सत्ता प्राप्त करने में असफलता मिली तो बेरोकटोक टीका–टिप्पणी करने की ही नहीं वरन् राज्य को नेस्तनाबूत करने की आजादी भी उन्हें चाहिए।

मुख्य रूप से इन दोनों मांगों के कारण ही संविधान पर टिप्पणी के बाण चलाए जा रहे हैं। संसदीय जनतंत्र के सिद्धांत ही केवल राजनीतिक जनतंत्र का आदर्श रुप हैं ऐसा मैं नहीं मानता। मैं ऐसा नहीं कह सकता कि मोल चुकाए बिना किसी की निजी संपत्ति को अपने कब्जे में करने का सिद्धांत इतना पवित्र है कि उससे अलग नहीं हुआ जा सकता। मौलिक अधिकार कभी भी अबाध नहीं हो सकते, और मैं यह भी नहीं कहता

कि उन पर डाले गए प्रतिबंध कभी हटाए ही नहीं जा सकते। मैं बस इतना बताना चाहता हूं कि संविधान में शामिल राय आज की पीढ़ी की राय है। आपको यह कथन अगर अत्युक्तिपूर्ण लगता है तो मैं यह कहूंगा कि ये संविधान सभा के सदस्यों की राय है। संविधान में उन्हें शामिल करने को लेकर मसौदा समिति को दोष नहीं दिया जाना चाहिए। वैसे, मैं कहूं कि संविधान सभा पर भी इसका दोषारोपण क्यों हो? अमेरिका के संविधान निर्माण की प्रक्रिया में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने वाले अमेरिकी कूटनीतिज्ञ जेफरसन् ने कुछ अति महत्वपूर्ण और तथ्यपूर्ण विचार व्यक्त किए हैं। संविधान निर्माताओं को उनके विचारों को हमेशा याद रखना चाहिए। एक जगह वह कहते हैं कि,

''हर पीढ़ी बहुसंख्यकों की इच्छा के अनुसार खुद को बांध लेने का अधिकार प्राप्त आजाद राष्ट्र की तरह है। अन्य राष्ट्र के लोगों की तरह ही आने वाली पीढ़ी को कोई बंधक नहीं बना सकता।''

एक और जगह वह कहते हैं,

''देश हित के लिए स्थापन की गई संस्थाओं को छुआ नहीं जा सकता अथवा उनमें फेरबदलाव नहीं किए जा सकता। उनके उद्देश्यों की पूर्ति के लिए उन्हें जिम्मेदार नहीं ठहराया जा सकता। क्योंकि लोगों के हित की जिम्मेदारी जिन पर सौंपी गई है उन्हें कुछ अधिकार भी बहाल किए गए हैं। शायद सत्ता का दुरुपयोग करने वाली राजसत्ता के विलाफ यह असरदार प्रावधान हो सकता है। लेकिन यह कल्पना राष्ट्र के दृष्टिकोण से बेहद नासमझी है। इसके बावजूद हमारे कानूनविद और धर्मगुरु इसी सिद्धांत को सामान्यतया लागू करने की कोशिश करते हैं। वो सोचते हैं कि हमसे पहली पीढ़ी इस धरती पर अधिक आजादी के साथ रहा करती थी। हम जिसे बदल नहीं पाएंगे ऐसे अपरिवर्तनीय कानून हम पर लादने के अधिकार उनके पास थे। इसी प्रकार भावी पीढ़ी जिसे बदल न पाए ऐसे कानून हमने बनाए और लोगों पर लादे तो यह दुनिया केवल मृतकों की होगी, जिंदा लोगों की नहीं होगी।''

मैं मानता हूं कि जेफरसन ने जो बताया है वह सत्य है। इस बारे में दो राय नहीं हो सकती। जेफरसन के बताए सत्य की ओर अगर संविधान सभा नजरंदाजी करती तो उस पर दोषारोपण किया जा सकता था। उसका विरोध भी किया जा सकता था। लेकिन क्या सचमुच ऐसा हुआ है? वास्तविकता इसके बिल्कुल खिलाफ है। संविधान में सुधार के प्रावधान का ही उदाहरण लीजिए। कनाडा के संविधान में सुधार करने का अधिकार वहां के लोगों को नकारा गया है लेकिन हमारे संविधान ने उनकी तरह अंतिम और अचूक होने का दावा नहीं किया है। अमेरिका और ऑस्ट्रेलिया की तरह संविधान में सुधार के लिए असाधारण शर्तें भी नहीं रखी गई हैं। उल्टे संविधान सभा ने हमारे संविधान में सुधार के लिए बेहद सुलभ तरीकों का प्रावधान रखा है। संविधान की समीक्षा करने वाले किसी भी समीक्षक को मैं चुनौती देता हूं कि वे दिखा दें कि अपनी जैसी स्थिति वाले संसार के किसी भी देश की संविधान सभा द्वारा सुधार के लिए इस तरह का प्रावधान किया गया हो। संविधान के प्रति

असंतुष्ट लोगों को केवल 2/3 का बहुमत ही प्राप्त करना होगा। वयस्क मतदान पद्धति से चुनी गई संसद में उनकी तरफ से वे 2/3 का बहुमत भी अगर प्राप्त नहीं कर सकें तो संविधान के प्रति उनके असंतोष को आम जनता का असंतोष नहीं माना जा सकता।

संविधान से संबंधित एक महत्वपूर्ण विषय के बारे में अब मैं कहना चाहता हूं। सत्ता का जरूरत से अधिक केंद्रीकरण किया गया है और प्रांतों को नगरपालिका के स्तर पर लाया गया है इस प्रकार की एक गंभीर शिकायत भी की जाती है। स्पष्ट है कि यह नजरिया न केवल अत्युक्तिपूर्ण है, बल्कि संविधान के जरिए क्या करवाना है इस बारे में जानकारी के अभाव को भी दर्शाता है। केंद्र और राज्य के बीच का संबंध जानने के लिए जिन मूलभूत सिद्धांतों पर वे आधारित होते हैं उन्हें समझना जरूरी है। संघ राज्य का मूलभूत सिद्धांत यह है कि विधानसभा और कार्यकारी मंडल की सत्ता का केंद्र और राज्य के बीच का बंटवारा केंद्र के किसी कानून के तहत नहीं वरन् संविधान द्वारा ही किया गया है।

संविधान का यही काम है। संविधान के तहत होने वाले राज्य अपने विधि संबंधी अथवा कार्यकारी अधिकारों के लिए किसी भी प्रकार केंद्र पर निर्भर नहीं हैं। इस मामले में केंद्र और राज्य समान स्तर पर हैं। ऐसे संविधान को केंद्रीभूत कहा जाए यह बात समझना थोड़ा मुश्किल है। यह भी हो सकता है कि अन्य किसी भी संघराज्य के संविधान में जितना नहीं दिया गया है उतना विधानसभा और कार्यकारी मंडल का व्यापक क्षेत्र संविधान द्वारा केंद्र को दिया गया है। ऐसा भी हो सकता है कि शेष अधिकार राज्यों को न देकर केंद्र को दिए गए हों। लेकिन ये विशिष्टताएं संघराज्य के मूलतत्व नहीं हैं। जैसा कि मैंने बताया था, संघराज्य की मूल पहचान है केंद्र और घटकों के बीच विधानसभा और कार्यकारी मंडल की सत्ता का संविधान द्वारा किया गया विभाजन है। यह तत्व हमारे संविधान में अंतर्निहित है। इस बारे में कोई गलती हो ही नहीं सकती। यह कहना गलत होगा कि इसीलिए राज्यों को केंद्र के अधिकार में रखा गया है। विभाजन की यह मर्यादाएं केंद्र अपनी इच्छानुसार नहीं बदल सकता। यह अधिकार न्यायपालिका के पास भी नहीं है। इस बारे में यह बिल्कुल योग्य कहा गया है कि –

''न्यायालय सुधार ला सकते हैं लेकिन एक को हटा कर उसकी जगह दूसरा कानून नहीं बना सकते। पुराने अन्वयार्थ में बदलाव करते हुए वे नया युक्तिवाद कर सकते हैं, नया नजरिया सामने रख सकते हैं। अल्पमत से दिए गए निर्णयों को बदल सकते हैं लेकिन सीमा–रेखाएं ऐसी हैं जिन्हें वे पार नहीं कर पाएं। अधिकार के निश्चित बंटवारे में अब वे नए सिरे से फेरबदलाव नहीं ला सकते। जो अधिकार अस्तित्व में हैं उनकी व्यापकता वे बढ़ा सकते हैं। लेकिन एक सत्ता को दिया अधिकार निःसंशय दूसरे को नहीं दिया जा सकता।''

इस प्रकार संघ पद्धति को हराने वाला केंद्रीयकरण का यह पहला आरोप निराधार सिद्ध होता है।

दूसरा आरोप यह कि, राज्यों को परास्त करने का अधिकार केंद्र को दिया गया है।

इस आरोप को मानना ही पड़ेगा। लेकिन इस प्रकार मात देने का अधिकार संविधान की साधारण विशिष्टताओं का हिस्सा नहीं है। उनका प्रयोग और उन पर किए जाने वाले अमल को केवल आपातकाल तक ही सीमित रखा गया है। ध्यान रवने योग्य एक और बात यह है कि आपातकाल आने के बाद हम केंद्र को अधिकार देना क्या टाल सकते हैं? आपातकाल के दौरान भी केंद्र के पास विजय पाने के अधिकार होने की बात जिन्हें मंजूर नहीं है उन्हें लगता है, समस्या के बारे में स्पष्ट जानकारी नहीं है। प्रसिद्ध मासिक पत्रिका 'द राउंड टेबल' के दिसंबर 1935 के अंक में इस समस्या को एक लेखक ने बहुत सफाई से स्पश किया है। उसमें से कुछ हिस्सा यहां उद्धृत कर रहा हूं-

''अधिकार और कर्तव्य की आपसी उलझन राजनीतिक व्यवस्था है और अंततः नागरिक किसकी और किस सत्ता के प्रति अपनी निष्ठा व्यक्त करें इस बात से ताल्लाक रखती है। सामान्य हालात में यह समस्या पैदा नहीं होती। कानून पर आसानी से अमल किया जा सकता है। अलग-अलग क्षेत्रों में अलग-अलग सत्ताओं का आदेश मान कर मनुष्य अपना व्यवहार करता रहता है। संकट के समय किसका आदेश माना जाए इस बात को लेकर संघर्ष पैदा हो सकता है। और स्पस्ट है कि ऐसे समय अंतिम निष्ठा को टूटने नहीं देना चाहिए। निष्ठा के बारे में अंतिम निर्णय कानून के न्यायालयीन अर्थ के सहारे नहीं लिया जा सकता। कानून को वस्तुस्थिति के साथ मेल खाने वाला होना चाहिए वरना वह बिल्कुल प्रभावहीन होगा। जब सारे शिष्टाचार एक तरफ कर रखे जाते हैं उस वक्त एक सवाल रह जाता है कि नागरिकों की शेष निष्ठा पर किसकी सत्ता हो? केंद्र की अथवा घटक राज्यों की?''

इस सवाल का जवाब कौन और किस प्रकार देता है इस पर इस समस्या का हल निर्भर करता है और यही सवाल महत्वपूर्ण है। आपातकाल के दौरान नागरिकों की शेष निष्ठा घटक राज्यों के साथ नहीं बल्कि केंद्र के साथ होनी चाहिए। ज्यादातर लोगों की यही राय होती है। इसमें कोई दो राय नहीं। क्योंकि मिली-जुली उद्देश्यपूर्ति के लिए और देश के कुल हितों की रक्षा के लिए केंद्र सरकार ही कार्य करती है। इसी कारण आपातकाल में केंद्र सरकार को अधिक अधिकार देने का समर्थन निहित होता है। आखिर आपातकालीन अधिकार केंद्र को देने में राज्यों पर क्या उत्तरदायित्व आता है? इतना ही फेरबदलाव आता है कि आपातकाल में अपने हितों की रक्षा के साथ-साथ राज्यों को कुल राष्ट की राय और राष्ट्र के हितों का ध्यान रखना होता है। जो इस व्यवस्था को ठीक से समझ नहीं पाए हैं वही इसके खिलाफ शिकायत करेंगे।

यहां मैंने अपना भाषण पूरा किया होता, लेकिन मेरा मन देश के भविष्य को लेकर इतना चिंतित है कि इस बारे में मेरी राय व्यक्त करने के लिए इस अवसर का इस्तेमाल किया जाए ऐसा मुझे लगता है। 26 जनवरी, 1950 के दिन भारत एक आजाद देश बनेगा। (हर्षोल्लास की ध्वनि) फिर उस आजादी का क्या होगा? भारत अपनी आजादी को बरकरार रखेगा या फिर से गंवा देगा? मेरे मन में यही विचार पहले आता है। भारत

पहले कभी आजाद नहीं था ऐसी बात नहीं है। लेकिन एक बार उसने अपनी आजादी गंवाई है, क्या एक बार फिर वह अपनी आजादी गंवा बैठेगा? भविष्य के बारे में यही सवाल मुझे बहुत ज्यादा चिंता में डालता है। भूतकाल में भारत ने केवल अपनी आजादी गंवाई थी ऐसी बात नहीं है। देश के ही कुछ विश्वासघात करने वाले और बेईमान लोगों के कारण भारत ने अपनी आजादी गंवाई थी यह वास्तविकता मुझे बेहद बेचैन करती है। मुहम्मद बिन कासिम ने सिंध प्रांत पर हमला किया उस वक्त दस राज्यों के सैनिक अधिकारियों ने मुहम्मद बिन कासिम के दूतों से घूस ली और अपने राज्य के लिए लड़ने से इनकार किया। मुहम्मद गौरी को भारत पर आक्रमण करने का आमंत्रण जयचंद ने दिया था। पृथ्वीराज के खिलाफ लड़ने के लिए उसने मुहम्मद गौरी को अपने और सोलंकी राजाओं की मदद का आश्वासन दिया था। शिवाजी जब हिंदुओं की मुक्ति के लिए लड़ रहा था उस वक्त अन्य मराठा सरदार और राजपूत राजा मुगल सम्राटों की ओर से युद्ध लड़ रहे थे। सिक्ख राज्यकर्ताओं को हराने की कोशिश जब अंग्रेज शासक कर रहे थे तब उनका प्रमुख सेनापति गुलाबसिंग चुप बैठा रहा। सिक्खों का राज्य बचाने के लिए उसने सिक्खों की मदद नहीं की। 1857 को भारत के ज्यादातर हिस्सों में अंग्रेजों के खिलाफ स्वतंत्रता युद्ध की घोषणा की तब सिक्ख दर्शक बन कर बस देवते रहे।

क्या एक बार फिर इतिहास दोहराया जाएगा? इसी खयाल से मैं चिंताग्रस्त हुआ हूं। जातियों और संप्रदायों के रूप में अपने पुराने दुश्मनों के साथ भिन्न और परस्पर–विरोधी विचारप्रणाली वाले राजनीतिक दलों की भी भरमार होने वाली है। इस वास्तविकता के बारे में सोच कर मैं अधिक ही चिंताग्रस्त हुआ हूं। मैं नहीं जानता कि भारत के लोग अपनी सिद्धांत से देश को श्रेष्ठ स्तर पर दखेंगे अथवा अपनी सिद्धांत को देश से बढ़ कर मानेंगे। लेकिन एक बात पक्की है कि अगर पक्ष अपनी तत्वप्रणाली को देश से बढ़कर मानेंगे तो दोबारा आजादी गंवाने का संकट आएगा ही। और इस बार आजादी गंवा बैठे तो वह हमेशा के लिए हाथ से जाएगी। इस संभावना के खिलाफ लड़ने के लिए हमें कटिबद्ध होना है। अपने खून की आखरी बूंद जब तक है तब तक अपनी आजादी की रक्षा का निर्धारण हमें करना ही होगा। (हर्षध्वनि)

26 जनवरी, 1950 को भारत एक जनतांत्रिक देश बनेगा। अर्थात् उस दिन भारत में ऐसी सरकार बनेगी जो लोगों द्वारा बनाई जाएगी, लोगों की होगी, लोगों के लिए काम करेगी। तभी मेरे मन में खयाल आता है कि इस जनतांत्रिक संविधान का क्या होगा? उसे महफूज रखने के लिए यह देश समर्थ रहेगा या एक बार फिर वह अपनी आजादी गंवा बैठेगा? मेरे मन में आने वाला यह दूसरा खयाल भी पहले खयाल की तरह ही मुझे चिंता में डाल देता है।

जनतंत्र क्या होता है यह भारत को पता नहीं था ऐसी बात नहीं है। किसी जमाने में भारत में गणराज्यों की भरमार थी। अगर कहीं नौकरशाही थी तो चुनी हुई या सीमित हुआ करती थी। वे कभी भी अबाध नहीं थीं। भारत को संसद अथवा संसदीय प्रणाली

के बारे में पता नहीं था ऐसी बात नहीं। बौद्ध भिक्खू संघों के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि उस वक्त न केवल संसद थी बल्कि संघ भी कुछ और नहीं संसद ही थे। आधुनिक युग में परिचित संसदीय कार्यप्रणाली के सभी नियम संघ को पता थे और वे उनका पालन करते थे। बैठने की व्यवस्था, विधेयक प्रस्तुत करने के नियम, प्रस्ताव, कामकाज के लिए जरूरी न्यूनतम सदस्य संख्या, दल के नेता द्वारा आदेश देना, मतों की गिनती, मतपत्रिका के द्वारा मतदान करना, कटौती की सूचना, नियम से काम करना, न्याय व्यवस्था आदि के बारे में उनके पास नियम थे। संसद के काम के ये नियम बुद्ध द्वारा संघ की सभाओं के लिए प्रयोग में लाए गए थे, लेकिन देश में उस दौरान कार्यरत राजनीतिक विधानसभा की नियमावली से ही उन्होंने ये नियम स्वीकारे होंगे।

भारत ने यह जनतांत्रिक पद्धति गंवाई। अब क्या दूसरी बार भी वह उसे गंवाने वाला है? मैं नहीं जानता। लेकिन लंबे समय से जनतंत्र प्रयोग में न होने के कारण उसका बिल्कुल नया लगना भारत जैसे देश में हो सकता है। यहां जनतंत्र द्वारा तानाशाही को स्थान दिए जाने का जोखिम है। नए सिरे से देश में आया जनतंत्र अपना बाह्यरूप बरकरार रखेगा लेकिन असल में वह तानाशाही को ही जन्म देगा। प्रचंड बहुमत हो तो दूसरी संभावना के पैदा होने का जबरदस्त खतरा है।

हम अगर सचमुच चाहते हैं कि केवल बाह्य स्वरूप में ही नहीं वरन् वास्तव में जनतंत्र अस्तित्व में आए तो हमें उसके लिए क्या करना होगा? मेरी राय में जो पहले हमें अपने सामाजिक और आर्थिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए संवैधानिक मार्ग को ही अपनाने की ठान लेनी चाहिए। अर्थात्, क्रांति का खून से सना मार्ग हमें त्यागना होगा। इसका मतलब है कि कानून तोड़ना, असहयोग, सत्याग्रह इन मार्गों को भी हमें दूर रखना होगा। आर्थिक और सामाजिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए जब संवैधानिक मार्ग उपलब्ध नहीं थे तब इन असंवैधानिक मार्गों को अपनाने का बड़े पैमाने पर समर्थन किया जाता था। लेकिन अब संवैधानिक मार्ग उपलब्ध हैं इसलिए इन असंवैधानिक मार्गों का समर्थन नहीं कर सकते। असल में ये मार्ग अराजकता फैलाने की शुरुआत हैं। जितने जल्दी हम उन्हें त्याग देंगे उतना ही हमारे हित में होगा।

एक और महत्वपूर्ण बात है जिस पर हमारा अमल करना बेहद जरूरी है। जनतंत्र के संवर्धन में जिनकी आस्था है उन सबको जॉन स्टुअर्ट मिल की दी हुई चेतावनी को ध्यान में रखना होगा। उनकी राय में, 'व्यक्ति भले कितना भी महान हो लोगों को अपनी स्वतंत्रता उसके चरणों में अर्पण नहीं करनी चाहिए। साथ ही उस पर इतना विश्वास न करें कि वह प्राप्त अधिकारों का इस्तेमाल लोगों की संस्थाएं ध्वस्त करने के लिए करे।' अपना पूरा जीवन देश के लिए समर्पित करने वाले महापुरुषों के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करना गलत नहीं। लेकिन कृतज्ञता की भी कोई सीमाएं होनी चाहिएं। आइरिश देशभक्त डॅनियल ओकॉनेल ने ठीक ही कहा है कि, ''कोई भी व्यक्ति अपने स्वाभिमान की बलि चढा कर कृतज्ञता व्यक्त नहीं कर सकता। कोई महिला अपने शील की बलि चढ़ा कर कृतज्ञता व्यक्त नहीं

कर सकती और कोई भी देश अपनी आजादी की बलि चढ़ा कर कृतज्ञता व्यक्त नहीं कर सकता।'' अन्य देशों की तुलना में भारत को सावधान रहने के इस इशारे पर ज्यादा ध्यान देना होगा। क्योंकि, भारत में भक्ति, भक्ति का मार्ग अथवा विभूतीपूजा अन्य किसी देश की राजनीति की तुलना में सबसे अधिक दिखाई देगी। धर्म में भक्ति आत्मा की मुक्ति का मार्ग हो सकती है लेकिन राजनीति में भक्ति अथवा व्यक्तिपूजा अध:पतन और अंतत: तानाशाही की ओर ले जाने वाला मार्ग साबित होती है।

तीसरी बात केवल राजनीतिक जनतंत्र पर हमें संतोष नहीं कर लेना चाहिए। अपने राजनीतिक जनतंत्र का हमें सामाजिक जनतंत्र में परिवर्तन करा लेना ही चाहिए। राजनीतिक जनतंत्र की जड़ में अगर सामाजिक जनतंत्र की ताकत न हो तो वह अधिक समय तक टिक नहीं सकता। सामाजिक जनतंत्र क्या है? वह जीने की एक राह है। इसके जरिए स्वतंत्रता, समता और बंधुता को जीवन के सिद्धांत के रूप में मान्यता दी जाती है। स्वतंत्रता, समता और बंधुता को एक त्रयी के स्वतंत्र अंगों के रूप में नहीं सोचा जा सकता। इन तीनों का मिल कर एक संघ बनता है यानी कि, उनमें से किसी एक को अलग करने का मतलब जनतंत्र के मूल उद्देश्य को ही छोड़ देना है। समता से स्वतंत्रता को अलग नहीं किया जा सकता और न ही स्वतंत्रता को समता से अलग किया जा सकता है। इसी प्रकार स्वतंत्रता और समता को बंधुभाव से अलग नहीं किया जा सकता। समता के बिना स्वतंत्रता का मतलब है कि कुछ लोगों का बहुतांश लोगों के ऊपर प्रभुत्व करना। स्वतंत्रता के बगैर समानता निजी कर्तत्व के लिए मारक होगी। बंधुता के बिना स्वतंत्रता और समता अस्तित्व में ही नहीं रहेंगे। उन्हें व्यवहार में ले आने के लिए पुलिस महकमे की जरूरत पड़ेगी। भारतीय समाज में दो बातों का सिरे से अभाव है। इस वास्तविकता को मान कर ही हमें शुरुआत करनी होगी। उनमें से एक है समता। हमारा समाज श्रेणीबद्ध विषमता के सिद्धांत पर आधारित है। अर्थात् समाज में कुछ लोग ऊंचे स्तर के हैं और अन्य लोग निचले स्तर के। आर्थिक क्षेत्र में हमारे समाज में कुछ लोगों के पास बहुत अधिक संपत्ति है तो कई लोग अत्यंत घोर गरीबी में जीते हैं। 26 जनवरी, 1950 के दिन हम एक विसंगतिपूर्ण समाज में प्रवेश करने वाले हैं। राजनीति में हमारे पास समता होगी, लेकिन सामाजिक और आर्थिक जीवन में असमानता होगी। राजनीति में हम हर व्यक्ति का एक वोट और हर वोट का समान मूल्य वाले सिद्धांत को मान्यता देंगे। सामाजिक और आर्थिक संरचना के कारण अपने सामाजिक और आर्थिक जीवन में हर व्यक्ति का समान मूल्य वाला सिद्धांत हम नकारते रहेंगे। इस प्रकार के परस्पर विरोधी जीवन में हम और कब तक जिएंगे? आर्थिक और सामाजिक जीवन में हम और कब तक समानता को नकारते रहेंगे? अगर अधिक समय तक हम उसे नकारते रहेंगे तो अपना राजनीतिक जनतंत्र हम खुद संकट में डालेंगे इसमें कोई दो राय नहीं। इस विसंगति को जितनी जल्दी हो सके हमें खत्म कर देना है। अन्यथा जिन्हें विषमता जनित बुरे परिणामों को झेलना पड़ता है वे बहुत परिश्रम से इस सभा द्वारा निर्माण की गई राजनीतिक जनतंत्र की संरचना को नष्ट करेंगे।

हममें जो कमियां हैं, उनमें दूसरी है – बंधुत्व के तत्व को मानना। बंधुत्व यानी क्या? भारतीय लोग अगर एक हैं तो सभी भारतीयों में बंधुत्व का भाव समान रूप में होना है। सामाजिक जीवन में इससे एकता और सामंजस्य आता है। लेकिन इसे हासिल करना मुश्किल है। कितना मुश्किल है यह इस कहानी से पता चलता है जो अमेरिका के बारे में जेम्स ब्राइस ने अपने लिखे अमेरिकी कॉमनवेल्थ खंड में बताई है। मैं इस कहानी को ब्राइस के ही शब्दों में सुनाना चाहूंगा–

''कुछ वर्ष पूर्व अमेरिकन प्रोटेस्टंट एपिस्कोपल चर्च के त्रिवार्षिक अधिवेशन में उनकी सामूहिक प्रार्थना में फेरबदलाव करने का प्रसंग आया। प्रार्थना के वाक्यों को छोटा करने और सभी लोगों के लिए होने वाली प्रार्थना को उसमें मिलाना ठीक रहेगा। न्यू इंग्लंड के प्रमुख धर्मोपदेशक ने ये शब्द सुझाए, कि, 'हे प्रभो हमारे राष्ट्र को आशिर्वाद दें'। उस दिन सभी लोगों द्वारा उत्साह के साथ उन्हें स्वीकार भी किया गया। इसी वाक्य पर दूसरे दिन फिर सोचा गया। धर्मोपदेशकों के अलावा अन्य कई लोगों को राष्ट्र शब्द पर आपत्ति थी। उनका कहना था कि इस शब्द के कारण वास्तव में न होने वाली राष्ट्र की एकता स्पष्ट रूप से सूचित होती है। इसलिए उस शब्द को हटाया गया और 'हे प्रभो इन संयुक्त राज्यों को आशिर्वाद दे' शब्दों का प्रयोग किया गया।''

यह घटना जब घटी तब अमेरिका के लोगों के बीच एकता की भावना की इतनी कमी थी कि उन्हें नहीं लगता था कि उनका एक राष्ट्र है। अमेरिका के लोगों के मन में एक राष्ट की भावना नहीं पनप सकी तो भारतीयों के मन में उसका पनपना कितना कठिन है इसका अंदाजा लगाया जा सकता है। मुझे वे दिन याद हैं जब राजनीति के लोगों को 'भारतीय लोग' कहने से कितनी कोफ्त हुआ करती थी। ''भारतीय राष्ट्र'' कहलाना उन लोगों को पसंद था। मेरी राय में अपना एक राष्ट्र है इस पर विश्वास करना यानी जो अस्तित्व में नहीं है उसके अस्तित्व में होने का भ्रम पालना। हजारों जातियों में बंटी जनता का एक राष्ट्र कैसे बन सकता है? सामाजिक और मानसिक नजरिए से हम अभी भी एक राष्ट्र नहीं हैं इसका अहसास हमें जितने जल्दी होगा उतना हमारे लिए अच्छा होगा। उसके बाद ही हमें एक राष्ट्र होने की जरूरत कितनी महत्वपूर्ण है इसका पता चलेगा। हमारे उद्देश्य की पूर्ति के लिए किन उपायों का और किन मार्गों का अनुसरण करना है इस पर हम गंभीरतापूर्वक सोचने लगेंगे। इस उद्देश्य तक पहुंच पाना भी बहुत कठिन है। अमेरिका के लोगों के लिए जितना मुश्किल था उससे कई गुना मुश्किल है। अमेरिका में जाति की समस्या नहीं है। भारत में जातियां हैं। जातियां राष्ट्रविरोधी हैं। पहली बात, वे सामाजिक जीवन में फूट डालती हैं। जातियां राष्ट्रविरोधी हैं क्योंकि वे जातियों के बीच आपसी तिरस्कार कटुता और द्वेष की भावना निर्माण करती हैं। हमें अगर वास्तव में राष्ट्र बनना है तो इन सभी मुश्किलों से पार पाना होगा। राष्ट्र निर्माण के बाद ही असल में बंधुभाव देखने को मिलेगा। बंधुत्व बिना समता और स्वतंत्रता की बात करना केवल ऊपरी रंग की परत, केवल बाहरी दिखावा होगा।

हमारे सामने अब जो मुश्किल काम हैं उनके बारे में मेरी ये प्रतिक्रियाएं हैं। कुछ लोगों के लिए आनंददायी नहीं हैं ऐसा लग सकता है। इस देश में राजनीतिक सत्ता केवल मुठ्ठी भर लोगों की बपौती या मिलकियत भर रह गई है। ज्यादातर लोग केवल बोझ ढोने वाले प्राणी ही नहीं वरन् शिकार बन कर रह गए हैं। कोई इस बात से इनकार नहीं कर सकता। इससे वे न केवल विकास के मौकों से बल्कि मानवीय जीवन का महत्व जानने से भी वंचित रहने वाले हैं। इतना उनका अध:पतन हुआ है। अस्पृश्य लोग अपने ऊपर होने वाले अत्याचारों से, अपने ऊपर चलाई जाने वाली हुकूमत से ऊब गए हैं। खुद ही राज चलाने को वे आतुर हो गए हैं। अस्पृश्य वर्ग में निर्माण हुई इन तीव्र भावना को वर्ग संघर्ष और वर्गयुद्ध बनने तक बढ़ने नहीं देना चाहिए। इसका असर विभाजन में हो सकता है। वह निश्चित रूप से विनाशकारी दिन होगा। अब्राहम लिंकन ने कहा है कि विभाजित घर ज्यादा समय तक टिक नहीं सकता। उनकी आकांक्षाओं की पूर्ति के लिए जितनी जल्दी हो सके उतनी जल्दी उनके लिए मौके उपलब्ध कर देना देश के हित में, आजादी की रक्षा के हित में, फिलहाल सत्ता का उपभोग कर रहे मुठ्ठी भर लोगों के हित में और कुल मिलाकर जनतांत्रिक संरचना बनाए रखने के लिए ज्यादा उपयुक्त होगा। जीवन के सभी क्षेत्र में समता और बंधुत्व स्थापित करने से ही यह संभव हो सकता है। इसीलिए मैं इस बात पर इतना जोर दे रहा हूं।

सभागृह को मैं ज्यादा थकाना नहीं चाहता। आजादी खुशी की बात है इसमें कोई दो राय नहीं लेकिन इस आजादी के साथ हमारे कंधों पर बहुत बड़ी जिम्मेदारियां आई हैं इस बात को हमें नहीं भूलना चाहिए। आजादी के कारण अब किसी बुरी बात के लिए हम अंग्रेजों को जिम्मेदार नहीं ठहरा सकेंगे। इसके बाद अगर कुछ बुरा होगा तो उसके लिए अपने अलावा किसी और को हम जिम्मेदार नहीं ठहरा सकेंगे। अनुचित प्रसंग होने का बड़ा खतरा है। समय तेजी से बदल रहा है। हमारे लोग भी नई-नई विचारधाराओं को टटोल रहे हैं। लोगों के राज से अब वे ऊब रहे हैं। अब वे लोगों के लिए राज चाहते हैं। राज लोगों का, लोगों द्वारा चुना हुआ है अथवा नहीं इसकी चिंता अब वे नहीं करेंगे। जिस संविधान में हम लोगों का, लोगों के लिए चुने शासन के तत्व का जतन कर रहे हैं उसे अगर सुरक्षित रखना हो तो अपनी राह में क्या अड़चनें हैं इसे पहचानना होगा, जिससे कि लोग लोगों द्वारा चुने गए राज्य से लोगों के लिए राज्य की ओर मुड़ेंगे। इस दिशा में आगे बढ़ने में हमें कमजोर नहीं पड़ना है। देश की सेवा करने का यही एकमात्र उपाय है। दूसरा अगर होगा तो मुझे पता नहीं है।''[11]

---

11. मूल अंग्रेजी से मराठी में अनुवाद संपादक मंडल द्वारा और हिंदी अनुवाद संध्या पेडणेकर द्वारा किया गया है।

263

हिंदू कानून को सिलसिलेवार बनाना होगा

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर मुंबई में थे। इस अवसर का लाभ उठाते हुए सिद्धार्थ कॉलेज के छात्र-पार्लियामेंट द्वारा उन्हें ''हिंदू कोड बिल'' पर भाषण देने के लिए आमंत्रित किया। सिद्धार्थ कॉलेज बाबासाहेब अम्बेडकर की संतान जैसा ही होने के कारण उन्होंने छात्रों का अनुरोध माना और आश्वासन दिया कि वह हिंदू कोड बिल विषय पर भाषण देंगे। बुधवार, 11 जनवरी, 1950 के दिन सुबह 9 बजे सुंदराबाई हॉल में बुलाए गए छात्र पार्लियामेंट के अधिवेशन में वह बोले।

बुधवार के दिन सुबह 8 बजे ही सुंदराबाई हॉल छात्रों से भर गया था। इनमें छात्राओं की संख्या कुछ अधिक थी। श्रोताओं में समाज के कुछ गण-मान्य लोग भी उपस्थित थे। लाऊड स्पीकर की विशेष व्यवस्था की गई थी।

डॉक्टरसाहब बोलने के लिए उठे। तालियों की गड़गड़ाहट के साथ छात्रों ने उनका स्वागत किया। उस वक्त डॉक्टरसाहब बहुत ही उत्साह में थे। इतना ही नहीं उनके चेहरे पर उस वक्त विनोद की लहरें भी दिखाई दे रही थीं। उन्होंने अंग्रेजी भाषा में, स्पष्ट उच्चारण और आवेश के साथ, सुस्पष्ट विचार छात्रों के सामने रखे। उनके भाषण के बीच-बीच में हास्य का सुगंध भी फैल रही थी। श्रोताओं का मानना था कि इतना अच्छा भाषण उन्होंने पार्लियामेंट में भी शायद कभी नहीं दिया होगा।

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने अपने भाषण में कहा-

चेयरमन और सभागृह के सदस्यों,

आज यहां भाषण देने के आमंत्रण के लिए मैं आपका आभारी हूं। आपकी पार्लियामेंट में आकर हिंदू कोड बिल पर मैं बोलूं यह आपकी इच्छा है। लेकिन ऐसा करते वक्त पार्लियामेंट की मुश्किल खड़ी होगी यह मैं जानता था। मैं आपकी पार्लियामेंट का सदस्य नहीं हूं। जो व्यक्ति इस पार्लियामेंट का सदस्य नहीं है वह इस पार्लियामेंट के अधिवेशन में कैसे बोल सकता है इस प्रकार की आपत्ति कोई भी उपस्थित कर सकता है। इस बात को ध्यान में रखते हुए इस मुश्किल से बाहर निकलने का उपाय मैंने ढूंढा है। आपकी पार्लियामेंट द्वारा एक प्रस्ताव मंजूर किया जाए और उस प्रस्ताव के जरिए मुझे बोलने की अनुमति दी जाए। इसके अनुसार चेयरमैन द्वारा प्रस्ताव मंजूर करवाने की बात मानी इस बात की मुझे खुशी है। इसीलिए मैं आपकी पार्लियामेंट में बोल रहा हूं।

आप जानते हैं कि, पार्लियामेंट में मेरे द्वारा प्रस्तुत किए गए हिंदू कोड बिल को

जनता 14 जनवरी, 1950

लेकर आजकल बड़ा विवाद चल रहा है। इस बिल का पूरा विवेचन करना हो तो कम से कम दो घंटे का समय लगेगा। इतना समय न आपके पास है न मेरे पास। हालांकि, आप छात्र हैं, जागरुक हैं, जानकार हैं इसलिए, कम समय में हिंदू कोड बिल पर मैं अपने विचार आपके सामने रखने की कोशिश करता हूं।

अभी आप छात्र हैं, इस बिल के अनुच्छेदों की सिलसिलेवार जानकारी आपको नहीं होगी। आप अपने पाठ्यक्रम, पढ़ाई और परीक्षा में व्यस्त होते हैं। लेकिन यह बिल आज के तथा भावी पीढ़ी के दृष्टिकोण से अत्यंत महत्वपूर्ण तथा इसके कारण देश को कौन-कौन से लाभ मिलने वाले हैं यह एक नागरिक के नाते आपको पता होना चाहिए, इसलिए इस बिल के बारे में मैं कुछ विशेष जानकारी आप लोगों को दे रहा हूं।

हिंदू कोड बिल के मुख्यतया दो उद्देश्य हैं। हिंदू कानून को पूरे देश में सूत्रबद्ध करना यह पहला उद्देश्य है। इसे अंग्रेजी में कोडिफिकेशन यानी कूटबद्ध करना कहते हैं। दूसरा उद्देश्य है हिंदू कानून की कुछ शाखाओं में सुधार लाना। इस दूसरे उद्देश्य पर ही फिलहाल छिड़ा हुआ विवाद केंद्रित है।

पहले उद्देश्य के बारे में बोलना हो तो बता दूं कि उसको लेकर कोई विवाद नहीं है और होना संभव भी नहीं है। हिंदू कानून के सुसूत्रीकरण को लेकर सबकी सहमति है। किसी भी कानून के लिए मूलभूत कसौटियों की पूर्ति करनी पड़ती है और ऐसी ही कसौटियां हिंदू कानून के बारे में होना भी जरूरी है।

किसी भी कानून का तीन मूलभूत कसौटियों पर खरा उतरना जरूरी होता है। ये कसौटियां हैं-

1. कानून का निश्चित होना जरूरी होता है। उसके किसी भी अनुच्छेद को अथवा प्रावधानों को लेकर संदिग्धता नहीं होनी चाहिए। उसका अर्थ स्पष्ट होना जरुरी है। यह पहली कसौटी है।

2. कानून सब जगह एक समान होना चाहिए। प्रादेशिक बदलावों से वह जकड़ा हुआ न हो। मुंबई में हुए कत्ल के लिए आरोपी को जो सजा मिलेगी वही त्रिचनापल्ली में हुए कत्ल के लिए वहां के आरोपी को मिलनी चाहिए। यह दूसरी कसौटी है।

3. सारी जनता जिसे समझ सके, उसका आश्रय ले सके ऐसा आकार में सुयोग्य कानून होना चाहिए। अपने अधिकारों के बारे में हर नागरिक को पता होना चाहिए। हर बात के लिए वकील पर निर्भर रहना पड़े ऐसा कानून न हो। यह तीसरी कसौटी है।

इन कसौटियों के आधार पर अगर हिंदू कानून पढ़ा कर देखें तो क्या पता चलेगा? यही कि, उपरोक्त किसी कसौटी पर हिंदू कानून खरा नहीं उतरता। दुनिया के सबसे लचर कानून का उदाहरण देना हो तो हिंदू कानून का दिया जा सकता है। यह कानून

जितना अनिश्चित, सरस्र प्रवाह या सिलसिले का अभाव होने वाला और महंगा कानून दुनिया में और कहीं नहीं मिलेगा। इस बारे में और अधिक विवेचन की जरूरत नहीं है। हिंदू कानून में सरस्र प्रवाह लाने की जरुरत है यह बात सभी मानते हैं।

अब हिंदू कोड बिल के दूसरे अर्थात् उसमें सुधार लाने वाले उद्देश्य के बारे में जानते हैं। जैसा कि मैंने ऊपर बताया है, विरोधियों ने इसी बात पर हंगामा खड़ा किया हुआ है। हिंदू कानून में इस बिल के जरिए क्या सुधार सुझाए गए हैं यह जानने के बाद विरोधियों का कथन सही है या गलत इस बात का पता चलेगा।

हिंदू कोड बिल के तहत कुल पांच सुधार सुझाए गए हैं। इन के बारे में थोड़ी जानकारी प्राप्त करना जरूरी है।

पहले सुधार के तहत विवाह, बच्चा गोद लेना आदि के संदर्भ में जाति को लेकर है। पुराने और वर्तमान हिंदू कानून के अनुसार विवाह और बच्चा गोद लेना जातियों के अंदर ही हुआ करते थे और होते हैं। अगर किसी दूसरी जाति के व्यक्ति से विवाह हो या अन्य जाति से बच्चे को गोद लिया गया हो तो उस विवाह को और उस गोद लेने को रद्द माना जाता था। इस प्रकार हिंदू समाज और कानून दोनों जाति पर ही आधारित हैं। जिसकी कोई जाति नहीं वह हिंदू नहीं। हिंदू कोड बिल में यह बात नामंजूर की गई है। हिंदू कोड बिल के अनुसार जातियां नष्ट होने वाली हैं। नए कानून के अनुसार जाति के बंधन नष्ट होने वाले हैं इसलिए किसी भी जाति में विवाह और बच्चा गोद लेने की घटनाएं हो सकती हैं।

दूसरा सुधार एक पत्नीत्व के पालन संबंधी है। प्रचलित और पुरातन हिंदू कानून के अनुसार एक हिंदू पुरुष को कई महिलाओं के साथ विवाह करने की अनुमति है। बहुपत्नीत्व को लेकर मुसलमानों के कानून की समीक्षा की जाती है लेकिन हिंदू कानून और मुसलमानों के कानून में बहुत ज्यादा अंतर है। मुसलमानों के विवाह संबंधी कानून के अनुसार जो पुरुष चारों पत्नियों के साथ इन्साफ कर सकता हो अर्थात् जो उनके वैवाहिक जीवन को सुखी रख सकता हो केवल उसी को चार विवाह करने की अनुमति है। इस तरह की कोई शर्त हिंदू विवाह कानून में नहीं है।

हिंदू कानून के अनुसार एक पुरुष को कई महिलाओं के साथ शादी करने की सिद्धांततः इजाजत हो ऐसी बात नहीं है। हालांकि इस प्रकार के कई उदाहरण देखने में आते हैं। बंगाल में कुलीन विवाह पद्धति है। इस पद्धति के तहत पुरुष 500 महिलाओं के साथ विवाह कर सकता है। इसी को मानते हुए एक बंगाली पुरुष ने 500 शादियां की थीं। पंढरपूर मेले के दौरान पंडे जिस प्रकार यात्रा करने वालों के नाम-पते एक रजिस्टर में दर्ज करके रखता है उसी तरह इस बंगाली पुरुष ने अपनी सभी पत्नियों के नाम-पते, उम्र आदि एक रजिस्टर में दर्ज कर रखे थे। अलग-अलग गांवों में, हर जगह उसकी

पत्नियां थीं। उनके बीच पति–पत्नी के रूप में संबंध नहीं होते थे, बल्कि उस पर इस प्रकार का कोई बंधन नहीं था। इसलिए वह बंगाली हर गांव में जाकर अपने लिए पत्नी ढूंढता और वधू के परिवार से वर दक्षिणा भी वसूलता था। इस प्रकार हमारी बहुपत्नी प्रथा भयंकर है। हिंदू कोड बिल का रूपांतरण कानून में होने के बाद इस पद्धति को बंद किया जाने वाला है। नए कानून के अनुसार एक हिंदू केवल एक स्त्री के साथ ही विवाह कर सकता है।

तीसरा सुधार विवाह विच्छेद या तलाक के संदर्भ में है। आज के कानून के अनुसार पत्नी को पति की अर्धांगिनी माना जाता है। एक बार शादी करने के बाद पत्नी किसी भी कारण से पति से अलग नहीं हो सकती और न तलाक ले सकती है। हिंदू विवाह कानून के अनुसार शादी को न खुलने वाली गांठ माना जाता है। असल में जिस स्त्री की अपने पति के साथ नहीं बनती अथवा जिस पति की अपनी पत्नी के साथ नहीं बनती उन्हें जबरदस्ती साथ में रखना ठीक नहीं होता। इसलिए कुछ शर्तों पर पति–पत्नी को एक दूसरे से तलाक मिलने की सहूलियत हिंदू कोड बिल में रखी गई है।

चौथे सुधार के तहत हिंदू कानून के 'कोपारसिनरी' पद्धति को नष्ट किया गया है। पुरखों से जो इस्टेट चली आती है उस पर वंशजों के हक के संदर्भ में वर्तमान में दो पद्धतियां प्रचलन में हैं। पहली 'मिताक्षरा' और दूसरी 'दायभाग'। मिताक्षरा पद्धति बंगाल के अलावा अन्य सभी जगहों पर चल रही है। इस पद्धति के अनुसार पिता की मृत्यु के बाद उसके सभी बच्चों को जन्मसिद्ध अधिकार के रूप में बाप की संपत्ति मिलती है। इस संपत्ति को बेचने के लिए उनके बच्चों की अनुमति की जरूरत होती है। इस पद्धति को प्रतिबंधदाय भी कहते हैं। दयाभाग पद्धति बंगाल प्रांत और आसपास के कुछ हिस्सों में प्रचलित है। इस पद्धति के अनुसार बच्चों को किसी भी तरह के अधिकार नहीं होते, केवल पिता की मृत्यु के बाद ही उन्हें संपत्ति का अधिकार मिलता है। इसके अलावा एक और पद्धति है जिसे उत्तराधिकार का कानून कहते हैं (Law of Succession)। लेकिन यह हिंदुओं पर लागू नहीं है। सो, नए बिल में मिताक्षरा पद्धति को रद्द कर दिया गया है और दायभाग पद्धति को सब जगह लागू किया जाने वाला है। इससे सब जगह एक–सी पद्धति लागू होगी और सिलसिला बना रहेगा। इस्टेट जोड़ने–बांटने के लिए बाप स्वतंत्र होगा। इससे संपन्नता बढ़ने और आर्थिक उत्पादन बढ़ने में मदद होगी।

पांचवा और आवरी सुधार महिलाओं को उत्तराधिकार में मिलने वाली संपत्ति के अधिकार से संबंधित है। आज महिलाओं को संपत्ति में पूरा हक नहीं मिलता। शादी के समय उसे जो रकम या गहने तोहफे के तौर पर मिलते हैं वही उसका धन माना जाता है। बेटी के अधिकार को लेकर जो भेदभाव है उसे हटाया जाने वाला है। बाप की कमाई में आगे से बेटों की तरह ही बेटियों को भी योग्य हिस्सा मिलेगा। अर्थात्, बेटा

और बेटी का भेद अब कानून नहीं मानेगा। महिला को भी समान हिस्सा मिलेगा। अब तक इस तरह की व्यवस्था नहीं थी। 1937 से पहले तो विधवाओं को भी अपने पति की आमदनी पर अधिकार नहीं था। 1937 में एक नया कानून बनाया गया। लेकिन इस कानून में सीमित मालिकियत और बेटियों के समान उत्तराधिकार का अधिकार माना नहीं गया था। इस नए हिंदू कानून के अनुसार ये दो खामियां हटा दी गई हैं।

इन सभी विवरणों को जानने के बाद एक बात आप सभी समझ गए होंगे कि सुधार कैसे करें और किस तरह के सुधार करें इस बारे में मतभेद हो सकते हैं लेकिन सुधार नहीं चाहिए ऐसा बिल्कुल नहीं कहा जा सकता।

सुधार की ओर देखने के तीन नजरिए हो सकते हैं। इन नजरियों से ही आपके विरोध के बारे में जानकारी मिलेगी। एक बुद्धिवादी नजरिए से इन सुधारों को देखा जा सकता है। दूसरा तुलनात्मक अध्ययन कर देखा जा सकता है और तीसरा सनातनियों के नजरिए से देखा जा सकता है। पहले दो नजरिए रखने वालों से विरोध से अधिक संहिताकरण की पद्धति को लेकर मतभेद हो सकते हैं। इसमें अंतर्भूत मूलभूत सिद्धांतों का विरोध वह नहीं करेंगे।

सनातनियों का नजरिया जीवन में क्या कभी स्वीकारा जा सकता है? आज जीवन की सभी बातों पर राज्य के संविधान का असर हो रहा है। उसे सार्वभौमत्व है। मैं इस बात की घोषणा करना चाहता हूं कि मनू का अधिकार अब समाप्त हो चुका है।

हमारे देश में सनातनी मानसिकता का प्रभाव अधिक है। ऐसे ही बहुसंख्यक समाज को साथ लेकर चलना है इसलिए मैं उनकी राय भी जानना चाहता हूं। लेकिन ऐसा करते वक्त मेरे मन में एक सवाल पैदा होता है कि नए हिंदू कोड बिल में हम जो सुधार लाने जा रहे हैं क्या उन्हें हमारे धर्मशास्त्र का आधार बिल्कुल नहीं है? मैं संस्कृत विद्वान नहीं हूं। हिंदू कानून का पंडित भी नहीं हूं। लेकिन हिंदू धर्मशास्त्रों का मैंने थोड़ा अध्ययन किया है। उसके आधार पर कह सकता हूं कि इन सुधारों के लिए किसी न किसी शास्त्र का आधार दिया जा सकता है।

1. फिलहाल जो हिंदू कानून है वह जाति को मानता है। जाति को मां के समान माना जाता है क्योंकि यह कानून 'मातृसावर्ण्य' मानता है। लेकिन, क्या मातृसवर्ण का नियम विश्वव्यापी है? क्या आदिमयुग से यह नियम लागू है? या कि, मातृसवर्ण का नियम नया है? नया अगर है तो पुराना नियम क्या था? हमें इन सवालों पर ध्यान देना होगा।

आज जैसे लोग जाति को लेकर सवाल उठाते हैं उसी प्रकार पुराने समय में भी यह सवाल उठा करता था। बच्चे की जाति मां की जाति से तय हो या कि पिता की जाति से? इस बारे में मनुस्मृति में 'अवांतर वर्ण' नामक एक पद्धति बताई गई है जिसके तहत कहा गया है कि पिता ब्राह्मण हो और माता क्षत्रिय हो तो बच्चे की जाति ब्राह्मण ही

मानी जाए लेकिन ब्राह्मण पिता और वैश्य माता के बच्चे को वैश्य माना जाए। लेकिन मनुस्मृति से पहले वाले ग्रंथ में पिता की जाति ही संतान की जाति कहने-मानने के उदाहरण भी मिलते हैं। राजवाडे द्वारा लिखित 'राधामाधवविलासचंपू' में ऐसे उदाहरणों की एक लंबी सूची ही दी गई है। क्षत्रीय जाति का शांतनु और शूद्र जाति की गंगा से उत्पन्न भीष्म को क्षत्रीय ही माना जाता है। ब्राह्मण पराशर का पुत्र था कृष्णद्वैपायन। उनकी माता मत्स्यगंधा जाति से मछुआरन थी। लेकिन कृष्णद्वैपायन को ब्राह्मण ही माना जाता है। विश्वमित्र क्षत्रिय और मेनका अप्सरा। इस दंपति की पुत्रि शकुंतला को क्षत्रिय माना जाता है। जरत्कारू ब्राह्मण था और जरत्कारी नागिन थी। उनका पुत्र आस्त को ब्राह्मण माना जाता है। पिता की जाति ही बच्चे को दी जाती रही है। मेरा सवाल है कि आज अगर इसी पद्धति को स्वीकारा जाता है तो पुरानी रूढ़ियाँ कहां टूटती हैं?

('जनता' का बीचवाला पन्ना उपलब्ध नहीं हो पाया - संपादक)

करें और दूसरी शर्त कि पहली पत्नी के निर्वाह के लिए अगर पहले ही बड़ी रकम दे रहे हो तो यह शर्त सबसे अधिक कठिन है।

सो, इन शर्तों का अर्थ एक ही है कि कौटिल्य एक पत्नीव्रत ही चाहते थे।

नए हिंदू कानून में तलाक के संदर्भ में जो शर्तें हैं उसे पराशर स्मृति का आधार दिया जा सकता है। पराशर स्मृति में अगर महिला दूसरा विवाह करना चाहे तो पति का नपुंसक होना, लापता होना या मृत होना जरूरी माना जाता है। इससे एक बात साबित होती है कि पुरुष का स्त्री से विभक्त होने का अधिकार पहली शर्त में माना गया है। हमने हिंदू कोड बिल में तलाक की शर्तें बढ़ा कर उसकी व्याप्ति विस्तृत की है। यानी कहा जा सकता है कि तलाक के मुद्दे पर पराशर स्मृति जैसा कोई अन्य अधिकारपूर्ण आधार नहीं है।

महिलाओं के उत्तराधिकार के बारे में प्रसिद्ध स्मृतिकार बृहस्पति का आधार दिया जा सकता है। उसने कहा है कि विधवा की संपत्ति पर कोई भी अपना उत्तराधिकार नहीं बता सकेगा। इसके लिए कारण देते हुए उन्होंने कहा है कि, महिला चूंकि पुरुष की अर्धांगिनी होती है इसलिए पति की मृत्यु के बाद वह अपनी अर्धांगिनी के रूप में जीती है। इसीलिए अर्धांगिनी के धन पर किसी का अधिकार नहीं हो सकता। मुझे लगता है कि उसकी यह राय बेहद सशक्त है और इसे मानने में किसी को आपत्ति नहीं हो सकती।

मिताक्षरी उत्तराधिकार पद्धति के लिए मनु का भी विरोध था इस बात को ध्यान में रखना चाहिए। मैं अगर बताऊं तो आपको शायद आश्चर्य लगेगा कि मनु भी संयुक्त परिवार पद्धति का विरोधी था। परिवार की संपत्ति के लिए उसका विरोध था। उस समय यज्ञ को ही सर्वश्रेष्ठ कर्म माना जाता था। आर्य मानते थे कि यज्ञ जितने अधिक पैमाने पर होंगे उतने ही अधिक पैमाने पर धर्म का प्रचार-प्रसार होगा। महिलाओं को वेदाभ्यास

की इजाजत न होने के कारण वे यज्ञ नहीं कर पाती थीं। इसीलिए संपत्ति पर भी उनका अधिकार नहीं था। तब यज्ञ और संपत्ति के बीच निकट संबंध हुआ करता था। सो, मनु कहते हैं, 'अगर धर्म का अधिक प्रचार करना हो तो अधिक यज्ञ करने होंगे' इस नियम को लागू करना हो तो संयुक्त परिवारों के कारण क्या यज्ञों की संख्या कम नहीं होगी? इस धार्मिक दृष्टिकोण के सहारे ही बताइए क्या संयुक्त परिवार पद्धति धर्मविरोधी नहीं है? और मिताक्षरी उत्तराधिकार पद्धति का आधार संयुक्त परिवार पद्धति ही है। मैं सनातनियों से यह पूछना चाहता हूं कि आपका मनु संयुक्त परिवार का विरोधी था क्या आप यह मानने के लिए तैयार हैं?

इसके बाद दत्तक या गोद लेने के विधान के बारे में सोचते हैं। हिंदुओं में गोद लेने की प्रथा का उद्‌गम कहां है यह भी देखना जरूरी है। मनु के कथनानुसार हिंदु व्यक्ति को जिन चार ऋणों से जीवन व्यातीत करना पड़ता है उनमें से एक है पितृऋण। इस ऋण से मुक्ति पाने के लिए एक पुत्र होना ही काफी होता है। एक से अधिक पुत्रों का होना निजी अभिलाषा का प्रतीक कहा जा सकता है। इसीलिए मनु अन्य पुत्रों का संपत्ति पर अधिकार मानने के लिए भी तैयार नहीं है। सो, इसके आधार पर कहा जा सकता है कि उत्तराधिकार की मिताक्षर पद्धति मनू के बाद की है। मनु द्वारा अन्य पुत्रों का परिवार की संपत्ति पर अधिकार को मान्यता न दिए जाने के कारण जो मुश्किल हालात पैदा हुए थे उन्हीं में से गोद लेने की पद्धति निर्माण हुई। आपस्तंभ सूत्र में तो पुत्र के बेचने का या उसे दान में देने का कड़ा विरोध जताया गया है। इसलिए मैं सनातनियों से पूछना चाहता हूं कि क्या गोद लेना शास्त्रसंम्मत है? लेकिन आगे चलकर समाज की जरूरत को ध्यान में लेकर वशिष्ट स्मृतियों में बदलाव किया गया। उन्होंने कहा कि, आपस्तंभ स्मृतियों का बंधन केवल घर के ज्येष्ठ पुत्र के बंधन के संदर्भ में लागू है। अन्य पुत्र गोद लिए या दिए जा सकते हैं। सो, इस प्रकार गोद लेने की प्रथा आई।

इन सभी बातों को आधारों के सहारे ध्यानपूर्वक सोचने के बाद हम यकीनन कह सकते हैं कि आज का प्रचलित हिंदू कानून ही शास्त्रों द्वारा संमतिप्राप्त नहीं है। हिंदू धर्मशास्त्रों के साथ उसका कोई ताल्लुक नहीं है। मूलशास्त्र की तुलना में उसमें बहुत अधिक बदलाव हुआ है। मैं बस इतना ही कहना चाहता हूं कि सनातनी लोग शास्त्रों का ठीक से अध्ययन नहीं करते। बल्कि मैं तो यह भी कहना चाहता हूं कि हमारे नए सुधारों के लिए ही किसी न किसी शास्त्र का आधार प्राप्त है।

इसीलिए मेरी स्पष्ट राय है कि नया हिंदू कोड बिल न तो क्रांतिकारी है और न ही उग्र है। मैं किनारों के पास ही नाव चलाने वाले लोगों में से हूं। पैसिफिक में यात्रा के लिए निकले एकाकी साहसी यात्री की तरह मैं नहीं हूं। अगर उग्र बिल ही बनाना होता तो वह इस बिल से बिल्कुल अलग होता। आज का यह बिल सर्वश्रेष्ठ मध्यम

मार्ग है। मैं सबको साथ लेकर चलने में विश्वास रखता हूं। इसीलिए आप सब लोग इस बारे में सोचें।

हमसे एक और सवाल भी पूछा जाता है कि क्या हम हिंदुओं को परेशान करने के लिए यह बिल बना रहे हैं? हिंदू शास्त्र में गलतियां हैं, दोष भी हैं लेकिन उन्हें वैसे ही रहने दीजिए। आप क्यों हस्तक्षेप कर रहे हैं? हिंदु दुर्बल हैं, अहिंसावादी हैं इसीलिए हम उन्हें परेशान करते हैं ऐसा उनका कहना है। उनका हम पर आरोप है कि मुसलमानों के धर्म में कोई फेरबदलाव किया तो वे हिंसात्मक कृत्य करेंगे, सरकार के विलाफ असंतोष फैलाएंगे इसलिए हम उनके कानून में फेरबदलाव लाने से डरते हैं। हिंदुओं में विरोध करने की ताकत नहीं है इसलिए हम उनके कानूनों में बदलाव कर रहे हैं आदि सब गलतफहमियां है।

हमारी राय तो यह है कि धर्म और भौतिक अधिकारों के हकों के बीच कोई संबंध नहीं होना चाहिए। हमें लगता है कि पूरे देश के लिए एक समान कानून हो, एक सिविल कोड हो। इस प्रकार का प्रावधान हमारे संविधान में है और इस बारे में उसमें निर्देश भी दिए गए हैं।

लेकिन ऐसा सिविल कोड कैसे बनेगा? स्वर्ग से उतरेगा या कि उसे विदेशों से आयात करना होगा? कानून का हमेशा धीमे-धीमे विकास होता है। वास्तविक स्थितियों से वह पैदा होता है। इसलिए, हिंदू कोड नए सिविल कोड की पहली पायदान है। इसीलिए आज हिंदू कोड का संहिताबद्ध होना जरूरी है। उसी से हम 'महत्तम साधारण विभाजक' निकाल सकते हैं। उसके बाद हम मुसलमान आदि अल्पसंख्यकों के पास जाकर उन्हें इन सुधारों की दिशा के बारे में अवगत कराएंगे। लेकिन मेरे हाथ में जब तक कुछ मुद्दे नहीं होंगे तब तक क्या नया सिविल कोड बनाना संभव हो पाएगा? इन बातों पर विरोध करने वाले एक बार जरूर सोचें। हिंदुओं के साथ पक्षपात करने का इसका कत्तई उद्देश्य नहीं है। अपने सिविल कोड के लिए आवश्यक भूमिका तैयार करना मात्र उद्देश्य है।

यह बिल एकांगी नहीं है। सनातनी मतों का इसमें विरोध नहीं है। केवल नए आचार-विचारों को मान्यता दी गई है। जिन्हें नई राय, नई आचार पद्धतियां पसंद नहीं हैं वे उनका पालन करें ऐसा मेरा आग्रह नहीं है।

किसी सनातनी व्यक्ति को अपनी कमाई का कुछ हिस्सा अपनी बेटियों को नहीं देना हो तो वह अपने वसीयत में उसका स्पष्ट उल्लेख करे या कहे कि अपनी बेटी हिंदू नहीं है। हिंदू स्मृति इस बात की उसे पूरी आजादी दे रही है। इस प्रकार नए सुधारों से आप मुक्त भी रह सकते हैं। इसलिए सनातनी सोच का उसमें विलय हो रहा है यह सफेद झूठ है। यह सर्वोत्तम स्वर्णमध्य है। इस प्रकार मैं कहूंगा कि सनातनी अपनी राह खुद चुनें, लेकिन अन्य सभी उसी राह पर चलें इस बात के प्रति आग्रही न रहें।

264

विदेशियों की गुलामी अगर दुबारा झेलनी पड़े तो वह आत्मनाश ही होगा

जल्द ही डॉ. बाबासाहेब मुंबई आने वाले हैं। जनवरी के पहले या दूसरे हफ्ते में शायद वह मुंबई पहुंचेंगे। संविधान बनाने का महान कार्य सफलतापूर्वक पूरा करने के उपलक्ष्य में मुंबई शहर शेड्यूल्ड कास्ट्स फेडरेशन ने तय किया है कि उनका शाही सम्मान और स्वागत समारोह की तैयारी के लिए मुंबई शहर दलित फेडरेशन के केंद्रीय कार्यकारी मंडल की शीघ्र बैठक 1 जनवरी, 1950 के दिन बुलाई गई थी।

प्रसंगानुसार स्वागत

काँग्रेस के नेताओं और मंत्रियों का हमेशा स्वागत होता रहता है। डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के साथ ऐसी बात नहीं है। स्वयं डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को इस प्रकार स्वागत समारोह में हिस्सा लेना पसंद नहीं है। उनके लिए आयोजित स्वागत समारोह प्रसंग के अनुसार योग्य और भव्य होते हैं। आजाद भारत का संविधान बनाने का कार्य उन्होंने सफलतापूर्वक संपन्न किया इससे ऐसा कौन-सा अस्पृश्य है जिसका सीना गर्व से फूला हो। इसीलिए, मुंबई में उनके आगमन पर मुंबई में उनका भव्य एवं अभूतपूर्व स्वागत होगा।

स्वागत अभूतपूर्व होगा

25 जून, 1946 के दिन भी इसी प्रकार मुंबई सेंट्रल स्टेशन पर उनका सार्वजनिक स्वागत हुआ था हालांकि उससे अधिक भव्य, अभूतपूर्व तरीके से उनका यहां स्वागत होगा इसमें कोई शक नहीं। मुंबई शेड्यूल्ड कास्ट्स फेडरेशन को विश्वास है कि इस समारोह में 150000 लोग हिस्सा लेंगे।

स्वागत का दिन, समय और स्थान की जानकारी हैंडबिल के जरिए दी जाएगी।

स्वयंसेवकों के दल

स्वागत समारोह की व्यवस्था के लिए स्वयंसेवकों के दल तैयार किए जाएंगे। वर्दी के तौर पर वे सफेद आधी बाहों वाली कमीज और सफेद पैंट पहनेंगे। साथ ही उन्हें खास तरीके के बैचेज भी दिए जाएंगे। हर वॉर्ड से 25-30 स्वयंसेवकों को लिया जाएगा।

जनता : 31 दिसम्बर 1949 और 7, 14 जनवरी, 1950

व्यक्ति और संस्थाएं अपना नाम दर्ज करें

जो व्यक्ति या संस्था डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को फूलमाला अर्पण करना चाहते हैं, उन्हें पहले मुंबई शेड्यूल्ड कास्ट्स फेडरेशन के दफ्तर में अपने नाम दर्ज कराने होंगे। ऐन समय पर हड़बड़ी न मचे इसलिए इस तरीके से काम करना पड़ेगा। स्वागत के लिए भव्य पंडाल खड़ा किया जाएगा। उसमें लाऊडस्पीकर की व्यवस्था की जाएगी। इस प्रकार की सूचना मुंबई शेड्यूल्ड कास्ट्स फेडरेशन के जनरल सेक्रेटरी की ओर से दी गई है।

भारत सरकार के कानून मंत्री नामदार डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर अपनी पत्नी माईसाहेब अम्बेडकर के साथ सोमवार दिनांक 2 जनवरी, 1950 के दिन शाम 6.30 बजे दिल्ली से हवाई जहाज से यात्रा करके मुंबई के सांताक्रुज हवाई अड्डे पर उतरे। तब वह खुश लग रहे थे। उनके स्वागत के लिए मुंबई शहर और उपनगर शेड्यूल्ड कास्ट्स फेडरेशन के कार्यकर्ता उपस्थित थे। इसके अलावा अन्य अस्पृश्य भाई-बहनों की भीड़ सांताक्रुज हवाई अड्डे पर उनके दर्शन के लिए जुटी थी।

मनोहारी दृश्य और फूलमालाएं

डॉक्टरसाहब ने आते समय गैबर्डिन का सूट पहना था। माईसाहब ने उसी रंग से मिलते-जुलते रंग की जरी वाली साड़ी पहनी थी। डॉक्टरसाहब और माईसाहब जब हवाई जहाज से उतरे तब उन्हें ले जाने के लिए खड़ी टूरिस्ट गाड़ी के पास पहुंचे तब 'अम्बेडकर जिंदाबाद', 'थोडे दिनों में भीमराज' जैसी घोषणाएं स्वागत के लिए वहां इकठ्ठा अस्पृश्य भाई-बहनों ने की। उसके बाद डॉ बाबासाहेब को पुष्पमाला अर्पण किए गए और उनकी गाड़ी वहां से चल पड़ी।

पता चला कि डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर 13 जनवरी, 1950 तक मुंबई में रहने वाले हैं।

डॉ. बाबासाहेब के आगमन के समय मुंबई में उनका भरपूर स्वागत किया जाने वाला है। इस बात की जानकारी जनता के पिछले अंक में प्रकाशित की गई है। उसके लिए शेड्यूल्ड कास्ट्स फेडरेशन मुंबई शहर और उपनगर शाखा की स्वागत समिति द्वारा जो जानकारी प्रचार के लिए दी वह इस प्रकार थी-

यह अत्यधिक हर्ष का विषय है कि डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर और भाईसाहब अम्बेडकर सोमवार दिनांक 2-1-1950 के दिन शाम 6.30 बजे मुंबई आए हैं। डॉ. बाबासाहेब के आगमन के लिए हम सब बहुत ही उत्सुक होते हैं। उस पर भारतीय संविधान की जिम्मेदारी पूरी करने के बाद वह पहली बार मुंबई लौट रहे हैं इस कारण हमारा उत्साह दोगुना हो गया है। ऐसे समय डॉ. बाबासाहेब का स्वागत भव्य तरीके से हो यह आप सबकी तीव्र

इच्छा होगी और यह सहज भी है। यह बात ध्यान में रख कर ही मुंबई शहर और उपनगरों के शेड्यूल्ड कास्ट्स फेडरेशन की शाखाओं ने दिनांक 1-1-1950 के दिन शीघ्र बैठक बुलाकर यह प्रस्ताव पारित किया।

''भारतीय संविधान बनाने में प्रशंसनीय सफलता पाकर डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर, भारतीय अस्पृश्य आंदोलन की जनमभूमि मुंबई नगरी में पहली बार आ रहे हैं। इसलिए उनका सार्वजनिक स्वागत किया जा रहा है और उनके कृतित्व के लिए अस्पृश्य जनता को महसूस होने वाली अपार खुशी के प्रतीक रूप भारतीय संविधान की प्रति उसी आकार के सोने में लपेट कर उन्हें अर्पण की जाएगी।''

इस प्रस्ताव के अनुसार दिनांक 2 जनवरी, 1950 के दिन स्वागत समिति ने डॉ. बाबासाहेब से भेंट की। डॉ. बाबासाहेब और माईसाहब ने कृतार्थकर सार्वजनिक स्वागत समारोह में शामिल होने का आश्वासन दिया।

इस सम्मान समारोह में जो बातें जनता की जानकारी के लिए बताई जाएंगी वे इस प्रकार हैं

1. स्वागत समारोह की जगह, दिनांक और समय के बारे में जानकारी डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर की सुविधा के अनुसार तय कर जल्द ही परिपत्र नं 2 और जनता साप्ताहिक में प्रकाशित की जाएगी।

2. स्वर्ण प्रतीक के लिए शेड्यूल्ड कास्ट्स फेडरेशन मुंबई शहर और उपनगर शाखा के सभी वार्डों में से पुराने सदस्यों से और जिनके नाम प्रकाशित किए गए हैं उन नए सदस्यों से प्रत्येक से 3 रु. सहयोग राशि के रूप में लिए जाएंगे जो उन्हें दिनांक 5 जनवरी, 1950 से पहले देने होंगे।

इसके अलावा मुंबई के हर अस्पृश्य बंधु-भगिनी से कम से कम चार आने देने का अनुरोध है।

स्वागत समिति ने चार आनों के टिकट छापे हैं। इन टिकटों पर नंबर और शेड्यूल्ड कास्ट्स फेडरेशन मुंबई शहर और उपनगर शाखा के महासचिव के हस्ताक्षर के मुहर लगे होंगे। बिना टिकट लिए कोई भी पैसे ना दें। इस प्रकार के टिकट जिनके पास होंगे वे ही पैसा इकठ्ठा करने वाले अधिकृत व्यक्ति हैं। उनसे ही टिकट खरीदने में कोई हर्ज नहीं है। चार आनों से अधिक रकम अगर कोई दे तो उसे धन्यवाद सहित स्वीकार किया जाएगा। हालांकि जितनी रकम देंगे उसकी रसीद जरूर लें।

3. स्वयंसेवकों के जत्थे, डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को अर्पण की जाने वाली फूलमालाएं और पुष्पगुच्छों के बारे में फेडरेशन के केंद्रीय दफ्तर में जानकारी मिलेगी।

घोषणा के अनुसार 11 जनवरी, 1950 के दिन दलितों के सर्वश्रेष्ठ नेता डॉ. बाबासाहेब

अम्बेडकर और डॉ. माईसाहेब अम्बेडकर का सार्वजनिक सम्मान समारोह मुंबई शहर उपनगर शेड्यूल्ड कास्ट्स फेडरेशन की ओर से मुंबई के नरेपार्क मैदान पर संपन्न हुआ। इस अवसर पर 2 लाख से अधिक दलित बंधु-भगिनियों का समुदाय उपस्थित था। खासकर बहनों की उपस्थिति बहुत अधिक थी। अपने भक्ति-भाव के प्रतीक स्वरूप अस्पृश्य भाई-बहनों ने डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को संविधान के आकार का स्वर्ण बक्सा और रु. 2000 अर्पण किए। इस प्रकार उन पर अपनी निश कायम होने की बात उन्होंने दुनिया के सामने स्पष्ट की।

सचमुच अभूतपूर्व समारोह था

इस समारोह की तैयारियों के लिए बहुत ही कम समय मिला और उसकी तुलना में कार्यक्रम को मिली सफलता अभूतपूर्व ही कही जा सकती है। 11 तारीख के कार्यक्रम की सूचना अस्पृश्य बंधुओं को 10 तारीख को ही दी जा सकी। तब से मुंबई शेड्यूल्ड कास्ट्स फेडरेशन के कार्यकर्ताओं में हडबड़ी मची हुई थी। रातोंरात हैंडबिल बांटकर, थालियां पीट कर और मोटर में बैठकर हर मोहल्ले में घूम-घूम कर डॉ. बाबासाहेब के सम्मान समारोह की जानकारी दी गई और इतने कम समय में प्रचार के बावजूद 2,00,000 लोग जुटे। यह बात सचमुच अभूतपूर्व ही थी। इतना विराट जनसमुदाय किसी भी नेता के सम्मान समारोह के लिए पिछले 50 सालों से मुंबई में इकठ्ठा हुआ होगा ऐसा नहीं लगता।

सम्पूर्ण व्यवस्था अनुशासन से परिपूर्ण थी

करीब चार वर्ष के बाद शेड्यूल्ड कास्ट्स फेडरेशन का नीलवर्ण का ध्वज नरे पार्क के भव्य मैदान में फक्र से फहर रहा ता। नरे पार्क के चारों तरफ से किसी महायात्रा के समान अस्पृश्य जनता की हुजूम उमड़ रहा था। उनकी व्यवस्था और अनुशासन कायम रखने के लिए मार्ग के दोनों तरफ और मैदान के चारों ओर स्वयंसेवक खड़े थे। समारोह के लिए एक छोटा-सा लेकिन सुंदर पंडाल लगाया गया था। लाऊडस्पीकर की व्यवस्था भी की गई थी। आम महमानों के लिए करीब 500 कुर्सियां लगाई गई थीं। महिलाओं के लिए खास इंतजाम किया गया था। कुल मिला कर समारेह की व्यवस्था बहुत ही सुचारू चाकचौबंद रखी गई थी।

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का आगमन

शाम 6.30 बजे डॉ. बाबासाहेब का आगमन हुआ। तब जनसमुदाय ने 'अम्बेडकर जिंदाबाद' के गगनभेदी नारे लगाए गए। लोगों से अटा पडा नरे पार्क इन नारों से गूंज उठा। डॉ. बाबासाहेब के मंच पर आते ही फोटोग्राफरों का समूह खड़ा हुआ। वे फटाफट डॉ. बाबासाहेब के अलग-अलग पोजेस में फोटो लेने लगे। कोई नीचे बैठकर, कोई घुटने

टेक कर तो कोई तीर–कमानों की तरह खड़े होकर फ्लैश लाईट डालकर डॉक्टर साहब के फोटो ले रहा था। दृश्य सचमुच बड़ा ही मनोहारी था।

महासचिव का भाषण

मुंबई शहर और उपनगर शेड्यूल्ड कास्ट्स फेडरेशन के महासचिव आयु. जे. जी. भातनकर के संक्षिप्त भाषण से समारोह की शुरुआत हुई। उन्होंने कहा–

''डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का हम सभी दलित भाई–बहनों को दर्शन का सुअवसर मिले ऐसी हम सबकी बहुत दिनों से इच्छा थी। हालांकि, डॉक्टर साहब के कई जरूरी काम लगे रहते हैं इसलिए आज तक यह संयोग साकार नहीं हो पाया था। संविधान निर्माण का काम निश्चित तौर पर गर्व महसूस करने योग्य है। उनका स्वागत के अवसर के कारण ही आज हमें उनके दर्शन हो रहे हैं। इसके लिए हम उनके प्रति हमेशा कृतज्ञ हैं।''

उनके बाद समारोह के अध्यक्ष आयु. डी. पी. गंब्रे इन्होंने पहले डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को फूलमाला अर्पण की उसके बाद सोने का बक्सा और दो हजार रुपयों की राशि दी। इस प्रसंग की तस्वीरें लेने के लिए एक बार फिर फोटोग्राफरों में होड़ लगी। सोने का बक्सा अर्पण करने का कार्यक्रम पूरा होने के बाद डॉ. बाबासाहेब और माईसाहेब को कई संस्थाओं और व्यक्तियों की ओर से फूलमालाएं पहनाई गईं। मंच पर मालाएं–पुष्पगुच्छों का ढेर लगा हुआ था।

अंत में, तालियों की गड़गड़ाहट के बीच डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर भाषण के लिए खड़े हुए।

उन्होंने कहा,

प्रिय बहनों और भाइयों,

आज के कार्यक्रम में आने के लिए पहले मैं तैयार नहीं था। क्योंकि मुंबई आने के बाद जो कार्य निपटाने थे वे बहुत महत्वपूर्ण थे। उन कार्यों के मध्य में आज के कार्यक्रम के लिए समय निकाल पाना मुश्किल लग रहा था। लेकिन आज यहां इतने लोग इकठ्ठा हुए हैं यह देखकर तथा मुझे देने के लिए आपने जो यह बक्सा बनाया है उसे देखकर मुझे लग रहा है कि आज अगर मैं यहां उपस्थित नहीं रहता तो इतने बड़े जन समुदाय को निराश कर देता। इतना ही नहीं आपके द्वारा खर्च किया गया पैसा बेकार चला गया ऐसा लगता। इसलिए आज आप लोगों को आनंद हुआ ही होगा और मेरी नजर में भी यह बात संतोषजनक, आनंददायी और समयोचित ही है। (तालियां)

आज आप लोगों ने सभा का आयोजन किया और मुझे यह सोने का बक्सा दिया, असल में यह सब करने की वैसे कोई विशेष आवश्यकता नहीं थी। मेरी अध्यक्षता में और मेरे नेतृत्व में कई दिनों से कोई सभा नहीं हुई थी और मुझे भी आप लोगों से दो

शब्द कहने की जरूरत नहीं पड़ी थी। इसलिए कुछ लोग ऐसा कह रहे थे कि मैं दिल्ली में रहता हूं इसलिए अन्य प्रांतों में भी और कुल मिलाकर राजनीतिक हलके में मेरे पैरों के नीचे की रेत खिसकती जा रही है। ऐसी सोच रखने वाले और मानने वाले लोग यहां हों, तो उन्हें पता चला होगा कि मेरे पैरों के नीचे की रेत बह नहीं गई है बल्कि और मजबूत हो गई है। (तालियों की गड़गड़ाहट) किसी राजनीतिक दल की ओर से बुलाई गई इतनी बड़ी सभा अन्य किसी राजनीतिक नेता की अध्यक्षता में हुई हो ऐसा मुझे नहीं लगता। सिनेमा देखने के लिए जैसे कुछ लोग जाते हैं उसी तरह कुछ लोग एकाध-दो नेताओं को देखने के लिए जाते हैं। लेकिन अपने राजनीतिक दल के नेतृत्व में आज भी इतनी प्रचंड सभाएं होती हैं। इससे मुझे लगता है कि हमारे संगठन का अभी विघटन नहीं हुआ है। इसीलिए मेरा अभिनंदन करने के लिए यहां जो लोग इकठ्ठा हुए हैं उन सभी महिलाओं और पुरुषों का तथा सभा के आयोजकों को मैं मन से धन्यवाद देता हूं। (तालियों की प्रचंड गड़गड़ाहट)

अपने राष्ट्र का संविधान लिखने की जिम्मेदारी मुझ पर आई यह एक एकमेव स्थिति है। भारत का संविधान तैयार करने के लिए संविधान समिति बनाई गई तब मेरी हालत क्या थी यह आपको पता तो होगा ही। 1946-47 में हुए चुनावों में शड्यूल्ड कास्ट्स् फेडरेशन की हार हुई थी। हालांकि इस पराजय के बारे में शर्म महसूस हो ऐसी कोई बात नहीं है। क्योंकि उन चुनावों के दौरान पूरा भारत एक तरफ था और हमारा दल दूसरी तरफ था। एक ओर प्रबल राजनीतिक संगठन था और दूसरी तरफ अल्पसंख्य अस्पृश्यक, उन्हें उस ताकतवर संगठन से लड़ाई लड़नी थी अर्थात्, उस वक्त पराजय ही हमारा भविष्य था।

लेकिन हारने के बाद रुकने से कैसे काम चलता। हम लोगों को किसी प्रकार संविधान समिति में शामिल होना था। अस्पृश्यों के राजनीतिक अधिकार संविधान समिति के सामने रखने का मौके की तलाश में हमारे प्रतिनिधि थे। वह प्रसंग बड़ा ही कठिन था। काँग्रेस और शेड्यूल्ड कास्ट्स् फेडरेशन के बीच कड़ा विरोध था और इसी कारण इस दल का संविधान समिति में प्रवेश न होने देने का काँग्रेस ने निश्चय ही किया हुआ था। (शेम, शेम की ध्वनि) काँग्रेस ने मेरा संविधान समिति में जाना हर तरह से असंभव कर रखा था। आखिर मैंने बंगाल प्रांत से प्रवेश पाने का मार्ग ढूंढ निकाला और वहां गया। अस्पृश्य वर्ग के अधिकार उन्हें मिलें, हिंदुओं के राज्य में उन्हें कुछ सहूलियतें मिलें बस इतना ही मेरा सीमित उद्देश्य था।

राष्ट्र का संविधान निर्माण करूं यह मेरी महत्वाकांक्षा नहीं थी। जहां समिति की सदस्यता भी मुझे नहीं मिल पा रही थी, वहां मैं अधिकार से कुछ बेहतर कर पाऊंगा ऐसी कल्पना करना भी मेरे लिए संभव नहीं थी। उन्होंने तय किया था कि किसी को

भी अंदर आने देंगे लेकिन डॉ. अम्बेडकर को नहीं। संविधान समिति के दरवाजे मेरे लिए बंद थे ही खिडकियां भी बंद की गई थीं। आसपास के छेद भी बंद कर दिए गए। लेकिन आपके प्यार और स्नेह की ताबुद्ध से मैं अंदर पैर रख पाया और विधिलिखित ऐसा था कि जिसे अंदर पैर नहीं रखने देने का निश्चय लोगों ने किया था उसी को यह बड़ी जिम्मेदारी सौंपी गई। (हियर हियर की ध्वनि) जो कुछ भी हुआ बहुत ही सौभाग्य के कारण हुआ क्योंकि इतना महान कार्य करने का मौका इंसान को कभी-कभार ही मिलता है। यह बात मेरे लिए गौखमयी है उसी प्रकार आपके लिए भी है। (तालियों की गूंज)

वैसे देखा जाए तो मैंने इसमें कुछ खास नहीं किया है। लेकिन इस कार्य से एक बात पूरा हिंदू समाज मानने लगा है। पिछले 20 सालों से मुझ पर कई तरह के आरोप लगाए जाते रहे हैं। मैं और मेरा दल राष्ट्रद्रोही हैं, यह अंग्रेजों का साथी है, मुसलमानों का पिछलग्गु है इस प्रकार के निहायत झूठे किस्म के आरोप मुझपर किए जा चुके थे। महत्वपूर्ण बात यह है कि हम ऐसे नहीं हैं इस बारे में अब उन लोगों को यकीन हुआ है। 20 सालों से हमारे दल पर जो कलंक लगा था वह अब धुल गया है। शेड्यूल्ड कास्ट्स् फेडरेशन एक सुसंगठित मजबूत राजनीतिक रूप आख्तियार करने वाला लेकिन राष्ट्रद्रोही कृत्यों में कभी भी शामिल नहीं होने वाला दल है इस बारे में सबको यकीन हुआ है।

आज की राजनीति में, मैं अब जाना नहीं चाहता। लेकिन कुछ बातें कहने का मन अवश्य हो रहा है।

पहले हमारी राजनीति शत्रुता की बुनियाद पर हुआ करती थी। काँग्रेस वाले हमें और हम काँग्रेस वालों को दुश्मन की तरह माना करते थे। मुझे लगता है कि पहले अस्पृश्य वर्ग के सभी नेता कुछ संकीर्ण नजरिया रखते थे और उसी के अनुसार बर्ताव भी करते थे। मैं खुद भी कुछ हद तक इस दोष से ग्रसित था। हमें लगता- हमारा क्या होगा? हिंदुओं के हाथ में राजनीतिक सत्ता आई तो क्या होगा? लेकिन राजनीति का यह रुख हमें बदलना ही होगा।

हम अपने लोगों का हित देखा करते थे उस बात को आगे जारी तो रखना ही होगा, लेकिन साथ ही साथ अब एक बात हमें पक्की तौर पर ध्यान में रखनी होगी। अपने देश को मिली आजादी को कैसे बरकरार रखा जा सकता है इस बारे में हमें सोचते रहना होगा। पहले भी आजादी मिलने के बाद भी हमारे देश को पराश्रित रूप में गुलामी में जीना पड़ा है। पहले मुसलमानों और फिर अंग्रेजों ने हमारी आजादी छीनी थी। आजादी की जितनी जरूरत ऊंचे वर्ग के लोगों को है उतनी ही जरुरत निम्न वर्ग के लोगों को भी है। अंग्रेजों की गुलामी से हम आजाद हुए हैं। लेकिन अब फिर विदेशियों की गुलामी

अगर हमें करनी पड़े तो यह बात बड़ी ही दुर्भाग्यपूर्ण और कष्टदायी होगी। इसीलिए, इस देश की आजादी की रक्षा करना भी हर एक व्यक्ति को अपना कर्तव्य मानना होगा।

इस देश पर अंग्रेज लोग राज करते थे। तब किसे क्या हक दें, किस दल को कब क्या अधिकार दें, इस बारे में वे ही निर्णय किया करते थे। उस वक्त हमने अन्य दलों के साथ दूरी बनाए रखी। लेकिन अब अंग्रेज नहीं हैं, इसलिए अन्य दलों के साथ मिल-जुल कर रहने की नीति हमें अपनानी होगी। सुलह, बातचीत आदि के जरिए उनके साथ अच्छे संबंध बनाए रखने होंगे। हम अल्पसंख्यक हैं, राज्य के संविधान के जरिए भले हमें कुछ जगहें मिलें, कुछ नौकरियां मिलें लेकिन हम रहेंगे अल्पसंख्यक ही। अगर सही ढंग से हमें अपना विकास करना है तो किसी न किसी दल के साथ अथवा वर्ग के साथ हमें हाथ मिलाना ही होगा अर्थात्, पुराना बैर और पुरानी शत्रुता हमें भुलानी पड़ेगी। हमारा शत्रु कौन है, मित्र कौन है यह पहचानना हमें आना चाहिए और हमें अपनी शक्ति बढ़ाने की कोशिश करनी चाहिए। पहले जैसा अलग रहना अब नहीं चलने वाला।

काँग्रेस हो, सोशलिस्ट हो, किसान-मजदूर पक्ष हो - किसी भी दल के साथ सहमत होते हुए हमें एक बात का ध्यान रखना है कि हमारा संगठन न टूटे। व्यक्ति के तौर पर इंसान की कोई कीमत नहीं होती। आज काँग्रेस और राजनीति में मेरी जो पूछ है वह इसीलिए है कि मेरे पीछे शेड्यूल्ड कास्टस् फेडरेशन का संगठन है। जिस दिन इस संस्था का सहारा हट जाएगा उस दिन से राजनीति में मेरा स्थान भी खत्म हो जाएगा। इसीलिए, देश की रक्षा की भावना मन में रखते हुए भावी राजनीति के दोस्त-दुश्मनों का पहचानते हुए, अपना अस्तित्व बिना खोए चौकन्ने रह कर शेड्यूल्ड कास्टस् फेडरेशन के नेतृत्व में हमें आगे बढ़ना होगा।

देश की राजनीतिक पार्टियों का भविष्य क्या है यह निश्चित तौर पर आज कोई नहीं बता सकता। चुनाव होने तक राजनीति किस करवट बैठेगी कोई नहीं कह सकता। चुनाव पैसों के बल पर लड़े जाते हैं। अब तक शेड्यूल्ड कास्टस् फेडरेशन ने जो राजनीति की उसमें पैसों का कोई स्थान नहीं रहा। इस दल के लोग दरिद्र तथा गरीब होने के कारण बड़ी रकम जुटने की कोई उम्मीद भी नहीं थी। लेकिन अब इस पार्टी के हर सदस्य को चार आने देकर एक चुनाव फंड खडा करना होगा। शेड्यूल्ड कास्ट्स फेडरेशन को अब फंड खडा करने का आंदोलन खड़ा करना होगा। ऑल इंडिया शेड्यूल्ड कास्ट्स फेडरेशन वर्किंग कमेटी में इस का प्रस्ताव भी पारित हुआ है। स्वयंसेवक अब इस काम के लिए घर-घर जाएं। भाइयों और बहनों आपने मेरा सम्मान किया इसके लिए आभार व्यक्त कर मैं आपसे विदा लेता हूं।

265

ईमानदारी, कर्तव्यों के प्रति जागरुकता महाराष्ट्र की परंपरा है और राष्ट्रहित का दृष्टिकोण

दिल्ली की सभी महाराष्ट्रीयन संस्थाओं की ओर से 27 जनवरी, 1950 के दिन दोपहर 1 बजे से बृहन् महाराष्ट्र भवन में स्वतंत्रता दिवस बड़ी धूम-धाम से मनाया गया। शहर में उस दिन मनाए जाने वाले विभिन्न कार्यक्रमों को ध्यान में रखते हुए एक छोटा-सा कार्यक्रम आयोजित किया गया था। तय कार्यक्रम के अनुसार ठीक डेढ़ बजे दिगंबर पलुस्कर के गायन का कार्यक्रम शुरू हुआ। उनके बाद बिस्मिल्ला पार्टी का शहनाई वादन हुआ।

महाराष्ट्रियों का कर्तत्व

उसके बाद नियोजित अध्यक्ष डॉ बाबासाहेब अम्बेडकर के अध्यक्ष पद की सूचना ना. काकासाहब गाडगिल द्वारा दी गई। उन्होंने कहा, ''पिछले कई सालों से भारत की जनता जिस महत्वपूर्ण दिन की राह देख रही थी वह दिन कल था। पराधीनता और राजसत्ता के सारे बंधन तोड़ कर भारत के जनतंत्र पर मुहर लगी। ऐसे जनतंत्र का संविधान लिखने वाले डॉ. बाबासाहेब आज पधारे हैं। यह सहज ही है कि इतना महत्वपूर्ण काम हम में से ही एक महाराष्ट्रीयन व्यक्ति के द्वारा संपन्न हुआ इसका सबको गर्व है। दिल्ली के सभी महाराष्ट्रीयन व्यक्तियों की ओर से मैं उनका हार्दिक स्वागत करता हूं।'' ना. गाडगिल ने फिर डॉ. अम्बेडकर और माईसाहब को फूलमालाएं अर्पण कीं।

समारोहों का शौक नहीं

उसके बाद डॉ. बाबासाहेब का संक्षिप्त भाषण हुआ। उन्होंने कहा-

दिल्ली की महाराष्ट्रीयन संस्थाओं की ओर से कई बार मुझसे अलग-अलग अवसरों पर उपस्थित रहते हुए अपना वक्तव्य सुनाने के लिए कहा गया था। लेकिन पिछले तीन सालों में, मैं संविधान समिति के कामों में व्यस्त था, इसलिए आमंत्रण स्वीकार नहीं कर पाया था। अर्थात्, मैं महाराष्ट्रीयन समारोह में जैसे उपस्थित नहीं रह पाया था, उसी तरह अन्य किसी भी कार्यक्रम में उपस्थित नहीं रह पाया था। कृपा कर ऐसी गलतफहमी नहीं पालना कि यहां सम्मान होगा इसलिए मैं यहां आया हूं। एक तो, मैं स्वभाव से ही अकेले रहना पसंद करने वालों में से हूं, ऐसे समारोहों में शरीक होने का मुझे शौक नहीं

जनता : 4 फरवरी, 1950

है। किताबें पढ़ना और अपना काम करना इसके अलावा अन्य किसी बात में मेरा मन लगता नहीं, इसलिए मैं ज्यादातर कार्यक्रमों में शरीक नहीं होता। आज आप सभी लोगों नें मुझे यहां बुलाकर मेरा सम्मान किया इसके लिए मैं आपका आभारी हूं।

संविधान समिति में मेरा योगदान बहुत बड़ा है ऐसा मैं नहीं मानता, क्योंकि यह संविधान बनाते समय विभिन्न देशों के संविधानों का अध्ययन कर उनमें से अपने देश के योग्य अनुच्छेद चुनना केवल इतना ही हमारा काम था। हमने वही किया। सबसे महत्वपूर्ण बात अगर हमने कोई की है तो पूरे देश की एक राजभाषा हमने तय की। इसी प्रकार अगर हम लिपि के साथ भी कर पाते तो बहुत अच्छा होता। लेकिन समयाभाव के कारण नहीं हो पाया। अपने देश में सैकडों भाषाएं बोली जाती हैं। ऐसे विशाल देश की एक राजभाषा तय कर पाना यह सचमुच बहुत बड़ी बात हुई। लोगों का अब भी यही कहना है कि अलग-अलग प्रांतीय भाषाएं अपने अपने प्रांतों में प्रचलित रहेंगी। लेकिन एक राजभाषा तय होने के बाद भारत के हर नागरिक के लिए का सिलसिला शुरू होगा और उसके जरिए सहज ही संगठन होगा। राष्ट्र को अगर बलिष्ठ बनाना हो तो ऐसे संगठनों की कितनी आवश्यकता है यह अलग से बताने की जरूरत नहीं है।

महाराष्ट्रियनों के बारे में बोलना हो तो एक ऐसी मानसिकता हममें पल रही है कि जिसके कारण हर क्षेत्र में पीछे हैं। मैं इस बात को स्वीकार नहीं करता और आप भी ऐसी राय ना बनाएं। जनसंख्या के बारे में सोचें तो महाराष्ट्रीयन अल्पसंख्यक हैं। इसके बावजूद केंद्र सरकार में हम दो महाराष्ट्रीयन मंत्री हैं। रिजर्व बैंक के गवर्नरशिप का सम्मान भी एक महाराष्ट्रीयन व्यक्ति को ही मिला है। उसी प्रकार राजनीति, विद्वत्ता स्वार्थत्याग आदि सभी गुणों में यह मानने की जरूरत नहीं कि हमारा प्रांत अभी पिछड़ा हुआ है। मैं तो यह कहूंगा कि अन्य किसी भी प्रांतों के नागरिकों से महाराष्ट्रीयन व्यक्ति अपने कर्तव्यों के प्रति अधिक सजग होता है। वह अधिक ईमानदार है और राष्ट्र के लिए अधिक से अधिक त्याग करने के लिए वह तैयार होता है। महाराष्ट्र की उज्ज्वल परंपरा है और उसे कायम रखने के लिए विद्या के प्रति समर्पितता की जरूरत है। यह वर्ग बेहद गर्वीला है। गर्वीला होना बुरा नहीं लेकिन अतिरिक्त अद्भम अच्छा नहीं। असली गर्व पूर्ण विद्याप्राप्ति से ही आता है। आप सभी लोगों से मेरा यही कहना है कि महाराष्ट्र की परंपरा को कायम रखना हो तो अपनी विद्या के प्रति आसक्ति को कम नहीं होने देना चाहिए। जिन गुणों से हम अपनी परंपरा को बनाए रख सकते हैं उनका पालन-पोषण करना होगा। वे गुण हैं - ईमानदारी, कर्तव्यों का अहसास, बताए मार्ग पर चलते हुए राष्ट्रीय हितों का नजरिया रखना। एक बात की हममें कमी है और वह है वाक्पटुता हर युवक द्वारा इस कला में प्रवीणता हासिल किए बगैर आगे राजनीति में प्रजातंत्र पद्धति में वे टिके नहीं रह सकते। यहां बुलाकर आपने मेरा जो सम्मान किया उसके लिए मैं आप सभी के प्रति आभारी हूं।

266

भारत महानता बौद्ध धर्म के कारण है

दो मई, 1950 का दिन भारत के इतिहास में और खासकर अस्पृश्य जनता के आंदोलन में स्वर्णाक्षरों से लिखा जाएगा। इसी दिन दिल्ली में भगवान बुद्ध की 2494वीं जयंती डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर की अध्यक्षता में अस्पृश्य समाज द्वारा सार्वजनिक रूप से मनाई।

करीब 22 वर्ष पूर्व अस्पृश्य समाज द्वारा महाड़ में मनुस्मृति का सार्वजनिक दहन किया गया था और इस निश्चय की घोषणा की थी कि गुलामी लादने वाले हिंदू धर्म में अस्पृश्य समाज ना रहे। इस पृष्ठभूमि पर दिल्ली की बुद्ध जयंति का खास महत्व था, इसमें दो राय नहीं।

बुद्ध जयंति में करीब 20000 अस्पृश्य बंधु-भगिनियों का समुदाय उपस्थित था। विभिन्न राष्ट्रों के विदेशी वकीलों की उपस्थिति इस समारोह की विशेषता थी। इसके अलावा बौद्ध भिक्षुओं का बड़ा समुदाय भी उपस्थित था।

इस अवसर पर डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने जो भाषण दिया वह बेहद श्रवणीय और विस्फोटक रहा। उनके वक्तव्य के कारण अखबारों में जो हलचल मची थी, उसके बारे में सभी जानते हैं। डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का दृढ़कंप मचाने वाला भाषण इस प्रकार है-

उपस्थित सज्जनों, बहनों और भाइयों,

मैंने तय किया है कि आज इस अवसर पर मैं हिंदी में बोलूं। इस बारे में यहां उपस्थित सम्माननीय मेहमानों से मैं पहले ही माफी मांगता हूं। अंग्रेजी में बोलने की मेरी इच्छा थी लेकिन अगर मैं अंग्रेजी में बोलता तो यहां उपस्थित विदेशी मित्र मेरे विचार समझ सकते, लेकिन यहां उपस्थित अधिकांश अंग्रेजी नहीं जानते। इसलिए अंग्रेजी में मेरा बोलना उनके साथ अन्याय करने जैसा होगा, इसलिए मैं हिंदी में बोल रहा हूं।

बार-बार सार्वजनिक सभाओं में जाकर किसी विषय पर जानकारी देने के बहाने भाषण देते रहने की मेरी आदत नहीं है। दिल्ली आने के बाद, मैं इनी-गिनी सभाओं में ही उपस्थित रहा हूं। बेवजह लोगों का समय जाया करना मुझे ठीक नहीं लगता। जनता का समय लेना ही हो तो पहले अपने पास उनकी नीति में सुधार लाने के लिए तथा

जनता : 13 मई, 1950

उनके लिए मददगार साबित हो ऐसा कुछ होना जरूरी है, ऐसा मुझे लगता है।

कुछ दिनों पूर्व कुछ युवाओं ने मेरा जन्मदिन मनाने की बात कही। उन्होंने उस कार्यक्रम में मुझे उपस्थित रहने के लिए कहा, लेकिन मैंने उनका आमंत्रण स्वीकार नहीं किया। मेरी गैरहाजिरी के कारण कई लोगों को निराशा हुई होगी। लेकिन उसका मुझे बुरा नहीं लगा। क्योंकि मुझ जैसे आम आदमी का जन्मदिन मना कर किसी को क्या मिलता? आपसे मुझमें अलग क्या बात है? मुझसे आपमें इन्सानियत क्या कम है? मुझे ऐसा बिल्कुल नहीं लगता। कुछ लोगों को अपना जन्मदिन मनाना अच्छा लगता होगा, मुझे अपना जन्मदिन मनाना पसंद नहीं है, इसीलिए मैंने उन युवकों को भगवान बुद्ध का जन्मदिन मनाने के लिए कहा और इसीलिए अपने सभी काम एक ओर रख कर मैं आया हूं।

हमारे देश के लोग भगवान की पूजा करते हैं। रामजयंती, कृष्णजयंती मनाना उन्हें अच्छा लगता है। राम-कृष्ण जयंती के कार्यक्रमों में मैं हजारों को शामिल होते हुए देखता हूं। लेकिन भगवान बुद्ध के जयंती समारोह में 100 लोग भी बड़ी मुश्किल से दिखाई देते हैं। बुद्ध विहारों में मैं जाता हूं तब मुझे यह फर्क दिखाई देता है। राम अथवा कृष्ण की जयंती लोग क्यों मनाते हैं? क्योंकि, लोगों को लगता है कि वे भगवान हैं। धर्मशास्त्रों का मैं कोई बड़ा पंडित नहीं हूं, हालांकि जो धार्मिक साहित्य मैंने पढ़ा है उसके आधार पर मैं यह कहना चाहता हूं कि भगवान के पद पर आसीन व्यक्ति के विचारों का पवित्र होना जरूरी होता है। ऐसे व्यक्ति के मन में किसी और के प्रति द्वेषभावना नहीं होनी चाहिए, उसके मन में कोई स्वाद्रित के विचार नहीं होने चाहिए और किसी के प्रति बैर भावना उसके मन में नहीं होनी चाहिए। उनके कारण किसी का नुकसान नहीं होना चाहिए।

अब, क्या इन कसौटियों पर राम और कृष्ण खरे उतरते हैं? पहले राम के बारे में जानते हैं। राम क्या सचमुच भगवान थे? दो-तीन वजहों से राम को भगवान नहीं माना जा सकता।

जिस वक्त राम सीता और लक्ष्मण के साथ वन में रहता था उस वक्त उसने रावण की बहन शूर्पणखा की नाक काटी। देवपुरुष क्या कभी ऐसा काम कर सकते हैं? यह पहली वजह है। बाली और सुग्रीव के बीच बेवजह राम ने दखलंदाजी की। इतना ही नहीं, बाली पर उसने पत्नी और राज्य सुग्रीव के हवाले करने की जबरदस्ती की। देवपुरुष क्या कभी ऐसा काम कर सकते हैं? यह हुई दूसरी वजह। किसी धोबी ने सीता के चरित्र के बारे में बुरा कहा इसलिए राम ने सीता का त्याग किया। ऐन दुपहरी के समय सीता को जंगल में छोड़ने का आदेश लक्ष्मण को देने वाला राम क्या सचमुच भगवान था? सीता के बारे में उसने दस सालों तक कोई खबर नहीं ली, इसलिए उसके पास बिना लौटे सीता को धरतीमाता की शरण लेकर आत्महत्या करनी पड़ी। जिस राम को लोग भगवान मानते हैं उसका चरित्र ऐसा था।

अब कृष्ण के बारे में देखते हैं। महाभारत के युद्ध में प्रमुव व्यक्ति था कृष्ण और अगर उसने अपनी कूटनीति नहीं दिखाई होती तो शायद कौरव-पांडव बंधुओं के बीच का यह युद्ध पैदा ही नहीं होता। कृष्ण ने दोनों पक्षों को एक-दूसरे के खिलाफ भड़काया और उनके युद्ध की अग्नि में आग दी। किसी के पास फलां चीज मांगने जाना ऐसा वह एक पक्ष से कहता और दूसरे से कहता कि जो आएगा उसकी बात नहीं मानो।

क्या ऐसी बातें भगवान के या पवित्र व्यक्ति के हाथों होंगी? फिर हम कृष्ण को भगवान का स्थान कैसे दे सकते हैं? मैं यह सब झूठ नहीं बता रहा। महाभारत तथा अन्य ग्रंथों में ही कृष्ण की इन करतूतों का वर्णन है। तुम्हारी मां अगर तुम्हें नंगा देखेगी तो तुम्हारा शरीर वज्र का बनेगा ऐसा किसी ने दुर्योधन से कहा। इस बात का पता चलते ही कृष्ण गांधारी के घर गया। दुर्योधन जब घर के लिए निकला तब कृष्ण ने उससे उसकी नग्नावस्था के बारे में पूछा और सलाह दी कि वह अपना शरीर ढंके। गांधारी ने दुर्योधन के शरीर का जितना हिस्सा देखा उतना हिस्सा वज्र-सा बना। यह बात केवल श्रीकृष्ण को पता थी। उसने सबसे कहा, इसी रहस्य के सहारे भीम ने दुर्योधन पर हमला किया और उसे मार डाला।

दुर्योधन की मृत्यु का रहस्य श्रीकृष्ण को पता था। अर्जुन की मृत्यु को टालने के लिए कृष्ण ने षड्यंत्र रचा द्रोणाचार्य का बेटा अश्वात्थामा जब युद्धस्थल पर लड़ रहा था तब श्रीकृष्ण ने द्रोणाचार्य को गलत जानकारी दी। उसने धर्मराज को 'नरो वा कुंजरो' कहने पर विवश किया। कृष्ण के इस धोखे के कारण शिशुपाल को इतना गुस्सा आया कि भरे दरबार में उसने श्रीकृष्ण को गालियां सुनाईं। शिशुपाल की निर्भयता से भगवान भी खुश हुए। कृष्ण को भला-बुरा सुनाने के लिए उस पर खुले आम पुष्प वृद्धि हुई। कृष्ण भगवान नहीं था। इतना ही नहीं, वह आम लोगों से भी हीन था। इस बात को साबित करने के लिए ऐसे अन्य भी कई उदाहरण दिए जा सकते हैं।

इसीलिए हम बुद्ध जयंती मना रहे हैं और मैं आपसे कहना चाहता हूं कि अभी हिंदू धर्म की तरह बौद्ध धर्म का भारत में प्रसार नहीं हुआ है लेकिन आजादी के बाद लोगों का रुझान बौद्ध धर्म की ओर हो रहा है। पल भर के लिए सोचिए कि करीब 2500 सालों के बाद यहां बुद्ध जयंती मनाई जा रही है। आज तक बौद्ध धम्म उपेक्षित रहने के बावजूद बुद्ध जयंती मनाई जाती है। इस बात को कौन असामान्य नहीं कहेगा? आजादी के बाद, जिसे हम अपना कह सकेंगे ऐसे दर्शन की हमें जरूरत होगी। हिंदू संस्कृति में हमने खूब ढूंढा। लेकिन उसमें हमें कुछ नहीं मिला। केवल बौद्ध धर्म में ही सच्चे ज्ञान की किरण दिखाई देती है और बौद्ध धर्म के कारण ही हम दुनिया से कह सकते हैं कि भारत देश महान है।

हमारे राष्ट्रध्वज पर बुद्ध का चक्र है। हमारी राजमुद्रा बौद्ध दर्शन पर अधिष्ठित है।

साथ ही, नए भारतीय संधान के अनुसार हमारे राष्ट्राध्यक्ष का जब पदासीन किया गया तब बुद्ध की मूर्ती को ही श्रेष्ठ माना गया।

किस प्रकार हिंदू धर्म अन्य धर्मों से श्रेष्ट है क्या हिंदू लोग इस बात का जवाब दे सकते हैं? अस्पृश्यों का जीवन बरबाद करने की ताकत हिंदू धर्म में है क्या इसी कारण हिंदू धर्म को श्रेष्ट कहा जाए? किसी अस्पृश्य द्वारा पवित्र शब्दों का उच्चारण किया जाए तो उसकी जीभ काटना क्या यही श्रेष्ट धर्म है? उबलता शीशा अस्पृश्यों के कान में उंडेलने के लिए कहने वाला हिंदू धर्म क्या धर्म की संज्ञा पाने के भी योग्य है?

आपको इन सवालों के जवाब देने ही होंगे। कौन-सा धर्म अच्छा और कौन-सा धर्म बुरा यह आपने अब तक पहचाना ही होगा। जिन्हें, विचार, शिक्षा और आजादी नहीं मिल पाई वे हिंदू धर्म को मानेंगे कैसे? इस धर्म ने शूद्रों को ब्राह्मण, क्षत्रीय और वैश्यों की केवल चाकरी करने के लिए ही कहा गया है।

आश्चर्य की बात यह है कि ब्राह्मण कभी शासक नहीं बने। शासन करने वाले लोग नरक में जाते हैं यह धारणा थी ब्राह्मणों की। ब्राह्मणों को नरक से बड़ा डर लगता है। इसीलिए ब्राह्मणों ने क्षत्रियों को राज करने दिया। तब इस सौदे में शूद्र और अस्पृश्य कैसे भागीदार होंगे? अस्पृश बनकर ही हिंदू धर्म में रहना है या धर्म बदलना है इस बात पर सोचने का समय अब आ चुका है। मेरी मानो तो, मुझे हिंदुओं का घमण्ड और विषमता बिल्कुल पसंद नहीं है। बौद्ध और हिंदू धर्म में बहुत फर्क है। बौद्ध धर्म जातिविहीन एक समान समाज रचना को मानता है जबकि हिंदू धर्म की नींव ही जातियों पर आधारित है। हिंदुओं की जातियों के बीच न टूटने वाली दीवारें बना कर उन्हें विभाजित किया गया है।

इस बात से कोई भी इनकार नहीं कर सकता कि हर व्यक्ति को, समाज को और सरकार को भी धर्म की जरूरत है। सच्चे धर्म के बगैर किसी की प्रगति संभव नहीं। इसीलिए कौन-सा धर्म श्रेष्ठ है, अपनाने योग्य है इसका फैसला आपको करना होगा। मैं आपसे कह रहा हूं कि आप बौद्धवाद और ब्राह्मणवाद के बीच का फर्क ध्यान में रखें। इनमें से एक को आपको चुनना होगा। बुद्ध एक मानव था। बुद्ध के सिद्धांत जातिवाद के विरुद्ध थे। बुद्ध आम लोगों के बीच रहा और मानवीय दृष्टिकोण से लोगों के दुख दूर करने की उसने कोशिश की। इसलिए आजसे अपने लिए कौन-सा धर्म ठीक रहेगा इस बारे में आपको फैसला करना होगा। इस बात की निश्चित रुप से आपको आजादी है।

267

धर्म के प्रचार-प्रसार के लिए बौद्धधर्मी देश त्याग करें

दिनांक 25 मई, 1950 से 'सिलोन बुद्धिस्ट काँग्रेस' द्वारा सिलोन (श्रीलंका) की पुरानी राजधानी कॅण्डी में 'विश्व बुद्ध परिषद' का आयोजन किया गया था। 6 जून, तक वह जारी रहनी थी। उसमें एशिया तथा यूरोपीय राष्ट्रों के प्रतिनिधि उपस्थित रहने वाले थे। इस परिषद में बौद्ध धर्म की शिक्षा के अनुसार दुनिया में शांति की स्थापना पर विचार किया जाना था। मुख्य प्रधान डी. एस. सेनानायके प्रतिनिधियों का कोलंबो रेसकोर्स पर स्वागत करने वाले थे। इस परिषद में भारत सरकार के कानून मंत्री डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर भी शरीक होने वाले थे।

दिनांक 23 मई, 1950 के दिन डॉ .बाबासाहेब अम्बेडकर हैदराबाद होते हुए मद्रास पहुंचे। डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के स्वागत के लिए वहां उपस्थित अधिकारी, कार्यकर्ता, चाहने वाले आदि जिनमें प्रमुख श्री कामराज नाडर भी थे। बाबासाहेब ने पत्रकारों से कहा, 'बौद्ध धर्म के बारे में मुझे आस्था है और मुझे परिषद की ओर से आमंत्रण मिला है इसलिए मैं वहां जा रहा हूं।' उसके बाद वे कोलंबो के लिए रवाना हुए।

आज से छह वर्ष बाद बुद्ध युग के 2500 वर्ष पूरे होंगे, तब दुनिया में बौद्ध धर्म की लहर फैली होगी यह आशावाद विश्व बौद्ध भातृसंघ की स्थापना करने का प्रस्ताव रखते हुए सिलोन की बौद्धप्रमुख सी. बी. नुगावाला ने कॅण्डी (सिलोन) में आयोजित इस परिषद में व्यक्त किया। इस प्रस्ताव के लिए इंग्लैंड की सुश्री कॉन्स्टन्स लाऊन्सबरी, ब्रह्मदेस के यू चान चन, बंगाल के डॉ. अरविंद बरुआ, जापान के रिरी नाकायमा, इटली के लोकनायके और थाईलैंड के सुवित निमहेंद्र ने समर्थन किया।

दिनांक 26 मई, 1950 के दिन यहां के 'टेंपल ऑफ दि टुथ' नामक बिहार में 27 देशों के बौद्धधर्मीय प्रतिनिधि इकठ्ठा हुए और उन्होंने बौद्ध धर्म के पुनरुत्थान के बारे में चर्चा की। भारत के कानून मंत्री डॉ. बी. आर. अम्बेडकर भी इस अवसर पर उपस्थित थे। हालांकि अधिकृत प्रतिनिधि न होने के कारण उन्होंने चर्चा में हिस्सा नहीं लिया। विश्व मैत्री का प्रस्ताव परिषद द्वारा मंजूर किए जाने के बाद बाबासाहेब का भाषण हुआ।

उन्होंने कहा–

दलित बंधु : 28 मई, 1950

मैं इस भ्रातृसंघ का भले सदस्य नहीं बना हूं, लेकिन मेरी इस भेंट का उद्देश्य बहुत गंभीर है। सभी बौद्ध देशों को चाहिए कि वे केवल भ्रातृसंघ की स्थापना करने के बजाए बौद्ध धर्म के प्रचार के लिए त्याग करने की मानसिक तैयारी करें। बौद्ध धर्म के समारोह भारत के लोगों को देखने का मौका मिलना चाहिए। भारत के कानून मंत्री ने इस अवसर पर कहा कि, मैं चाहता हूं कि भारत में बौद्ध धर्म के केवल बाह्योपचार का ही अनुसरण किया जाता है या फिर सही बौद्ध धर्म का अनुसरण किया जाता है इस बारे में भारतीय जानें। बौद्ध धर्म जागृत है अथवा केवल परंपरागत है यह भी मैं देखना चाहता हूं।

विश्व मैत्री प्रस्ताव के बारे में भी उन्होंने अपने भाषण में नाराजगी व्यक्त की। अपना अभिप्राय व्यक्त करते हुए उन्होंने कहा कि बौद्धधर्मीय देशों को इस धर्म के विस्तार के लिए कमर कसनी चाहिए, उसके लिए आवश्यक त्याग करने चाहिए और इस प्रकार की कोई घोषणा परिषद में होनी चाहिए थी।

बाबासाहेब ने कहा कि–

"1. बौद्ध धर्म के आचार (पद्धति) और उपचार (विचार) भारत में देखने को नहीं मिलते, उन्हें देखने के मौकों का लाभ उठाएं।

2. साथ ही यह भी देखें कि बौद्ध धर्म के मूल सिद्धांतों से मेल न खाने वाली श्रद्धाओं से बौद्धधर्मी कितने ग्रस्त हैं और मूल विशुद्ध स्वरूप में वह धर्म कितना बचा है।

3. और दुनिया सिलोन को बौद्ध धर्मी कहती है इसलिए सिलोन बौद्ध धर्मानुयायी है या कि वह धर्म आज भी वहां जीवित स्वरूप में प्रचलित है इस बारे में खोज करें।

मैं इन्हीं तीन उद्देश्यों पर काम करने के उद्देश्य से इस परिषद में आया हूं। मित्रता के प्रस्तावानुसार मैं अधिकृत मित्र न होऊं लेकिन यहां आने का मेरा उद्देश्य गंभीर है।"

268

बौद्ध धर्म के कई सिद्धान्तों को हिंदु धर्म ने आत्मसात किया

दिनांक 6 जून, 1950 के दिन डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने वाई. एम. बी. ए. कोलंबो द्वारा आयोजित विश्व बौद्ध भ्रातृत्व सम्मेलन में भाषण देते हुए कहा–

भाइयों और बहनों,

किसी विषय की परंपरा के बारे में पूरी जानकारी मिलने के बाद ही उसके बारे में यथार्थ ज्ञान होता है। इसीलिए जिन स्थितियों ने बौद्ध धर्म को जन्म दिया उसे अगर हम जान लें तो बौद्ध धर्म का वास्तविक महत्व जान पाएंगे। भारत में हमेशा से हिंदूधर्म ही रहा है इस राय से मैं सहमत नहीं हूं। हिंदू धर्म का सबसे आखिर में, विचारों में धीरे–धीरे प्रगति होते–होते उदय हुआ। वैदिक धर्म के प्रसार के बाद भारत में तीन बार धर्म परिवर्तन हुआ है। वैदिक धर्म का रुपांतरण ब्राह्मण धर्म में हुआ और ब्राह्मण धर्म का रूपांतरण हिंदु धर्म में हुआ। समाज के विभिन्न वर्गों में विभाजन को बौद्ध धर्म का विरोध था। इस चातुरवर्णीय की शुरुआत ब्राह्मण धर्म ने ही की थी। फ्रांस के लिए फ्रांस की राज्यक्रांति का जितना महत्व है उतना ही महत्व मानव जाति के लिए बौद्ध धर्म के उदय का है।

वैदिक सीख के अनुसार आचरण बहुत आसान है। वैदिक लोग खास कर यज्ञ पूजक थे। बताया जाता है कि वैदिक आर्यों के तैंतीस करोड़ भगवान थे। अपने इन भगवानों को संतुष्ट करने के लिए वे यज्ञ किया करते थे। इन देवताओं की पूजा के लिए इकठ्ठा की जाने वाली सामग्री बहुत ही श्रेष्ठ स्तर की होना जरूरी था। कृषि युग के उन आर्यों को गो–धन ही सर्वश्रेष्ठ धन लगता था। इसीलिए वे अपने देवताओं की पूजा करते हुए गायों की बलि चढ़ाया करते थे। इसी कारण वैदिक धर्म हिंसा को बढ़ावा देने वाला माना जाने लगा था। यज्ञ में कई पशुओं की बलि दी जाती थी और जिन पशुओं को यज्ञ में बलि चढ़ाया जाता था उन्हें स्वर्ग प्राप्ति होती है ऐसी उनकी श्रद्धा थी। इसीलिए कहा जाता था कि – वैदिक हिंसा हिंसा न भवति – अर्थात्, वैदिक यज्ञों में हुई हिंसा, हिंसा नहीं होती।

यज्ञों में खुलेआम प्राणिहत्या का प्रचार हुआ करता था। इसलिए, बकरियां, भेड़ें, गायें जैसे जिन प्राणियों का मांस खाने योग्य माना जाता था उन सभी प्राणियों को यज्ञ

डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांची भाषणे: संपादक . मा.फ. गाजरे, खंड–2 पुनर्मुद्रण 10–4–1986, पृष्ठ क्रमांक 174–179

में बलि चढ़ाया जाता था। यज्ञों का प्रसार होने के कारण पुरोहितों का महत्व बढ़ा और ब्राह्मणवाद का जन्म हुआ। इस ब्राह्मणवाद ने समाज का ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र इन चार वर्णों में विभाजन किया। चार वर्णों की स्थापना कर समाज में विषमता निर्माण करना ब्राह्मणवाद का मुख्य उद्देश्य था। क्योंकि उसके अलावा ब्राह्मणों की श्रेष्ठता को स्थापित करना संभव नहीं था। अपनी श्रेष्टता की स्थापना के लिए ब्राह्मणों ने कुछ मंत्रों की रचना की। उन मंत्रों के सहारे वे कहने लगे कि ब्राह्मणों की उत्पत्ति ब्रह्मा के मुख से, क्षत्रियों की उत्पत्ति बाहुओं से, वैश्यों की उत्पत्ति जंघा से और शूद्रों की उत्पत्ति ब्रह्मा के पैरों से हुई। इस प्रचार के अलावा वे कहने लगे कि ब्राह्मण सभी वर्णों के गुरु और सर्वश्रेष्ठ हैं। लेकिन भगवान बुद्ध ने उसका खंडन किया। उन्होंने कहा, जिस प्रकार अन्य सभी इंसान पैदा होते हैं उसी प्रकार ब्राह्मण भी पैदा होते हैं। ब्राह्मणों की स्त्रियां ऋतुमति होती हैं, गर्भवती होती हैं, नौ माहों तक गर्भ का पोषण करती हैं, प्रसूत होती हैं, बच्चे को दूध पिलाती हैं . ऐसा ही सर्वत्र दिखाई देता है। ऐसी स्थितियों में ब्राह्मण ब्रह्मा के मुख से निकले और शूद्र उसके पैरों से निकले ऐसा वे कह कैसे सकते हैं? जन्म से कोई भी शूद्र अथवा ब्राह्मण नहीं होता। अपनी करनी से आदमी ब्राह्मण या शूद्र बनता है।

इससे आगे डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने कहा,"जटा, दाढ़ी, गोत्र अथवा जन्म से कोई ब्राह्मण नहीं बनता। जो सत्य और धर्म के अनुसार आचरण करता है, जो काया, वाचा, मन से कोई पाप नहीं करता, जो काम-क्रोध रहित है, जो व्रती, शीलवान, अनुत्सुक, दान्त और जितेंद्रिय है; जो तृष्णारहित और संशयरहित है; जो क्रोध, द्वेष और मदरहित है; जो शोकरहित, निर्मल और शुद्ध है; जिसने भवपाश में फिर-फिर जन्म लेने के लिए कारण बनने वाले मोह का त्याग किया है, जिसने रती और अरती का त्याग किया है और जो शांतचित्त है, जो गंभीर, प्रज्ञावंत, मेधावी, सही और गलत मार्ग का ज्ञाता है; जो सर्वोत्तम निर्वाण का अधिकारी है केवल उसे ही मैं ब्राह्मण कह सकता हूं।"

जो धर्म मानव जाति के कल्याण के लिए सहायक हो सकता है, जिसके जरिए मानव की मुक्ति का द्वार खुल सकता है, जिसमें मानव-मानव के बीच भेदभाव नहीं- वरन् समानता है वही धर्म की संज्ञा के लिए पात्र है। जिस धर्म का मूल तत्व मानव-मानव में भेदभाव पैदा करना ही है वह धर्म 'सद्धम्म' कहलाने के लायक नहीं। ब्राह्मण धर्म ने मानव समाज में भेदभाव की खाइयां पैदा कीं। महिलाओं और शूद्रों के साथ अत्यंत घृणास्पद व्यवहार करने की सीख दी। भगवान बुद्ध के धर्म का मुख्य उद्देश्य मानवों की समता है। अपनी बुद्धि की कसौटी पर कसकर हर बात का स्वीकार करना अथवा उसे अस्वीकृत करने की आजादी इस धर्म में हर एक को है। हिंसा को हटाना और अहिंसा स्वीकार करना यह उसका प्रमुख अंग है। किसी भी प्राणी की देवता के नाम पर हत्या करने या उसे बलि चढ़ाने और फिर निर्लज्जता से 'उसे स्वर्ग मिलने' का प्रतिपादन करने का चलन बौद्ध धर्म में नहीं।

भारत में बौद्ध धर्म का उदय और फ्रांस की राज्यक्रांति ये दो युगांतरकारी घटनाएं हैं ऐसा मुझे लगता है। बौद्ध धर्म के उदय से पहले किसी शूद्र के राजा बनने की कल्पना भी नहीं की जा सकती थी। लेकिन भारतीय इतिहासविद् यह जानते हैं कि बौद्ध धर्म के उदय के बाद शूद्रों को भी सिंहासन पर बैठने का मौका प्राप्त हो रहा है। इससे देश में सामाजिक समता की स्थिति निर्माण हुई। जनतांत्रिक राज्यपद्धति बौद्धकालीन देन है। भगवान बुद्ध के परिनिर्वाण के बाद ईसापूर्व 274 तक बौद्ध की स्थिति क्या थी इसे जानने के पर्याप्त साधन आज उपलब्ध नहीं हैं। हालांकि सम्राट अशोक के समय बौद्ध का बड़ी तेजी से विकास हुआ। अशोक और चंद्रगुप्त जैसे बलशाली सम्राट बौद्ध काल में ही हुए हैं। उन्होंने ही भारत से बाहर के राज्यों के साथ मैत्रीपूर्ण संबंध स्थापित किए थे। बौद्ध युग में भारत में स्थापत्यकला, चित्रकला, मूर्तीकला आदि कई तरह की कलाओं का विकास हुआ। बौद्ध युग में साहित्य और दर्शन का इतना अधिक विकास हुआ कि कई देशों के छात्र यहां के नालंदा और तक्षशिला विश्वविद्यालयों में शिक्षा के लिए आया करते थे। उससे पूर्व कभी भी भारत को इस प्रकार का गौरव प्राप्त नहीं हुआ था।

सवाल यह पैदा होता है कि जो धर्म इतना श्रेष्ट था, जिस धर्म का इतना प्रचार-प्रसार हुआ था वह भारत से लोप कैसे हो गया? इस सवाल के कई जवाब होंगे मुख्य रूप से सम्राट अशोक को इसके लिए जिम्मेदार मानता हूं। अशोक जरूरत से अधिक सहनशील था। इसीलिए मैं उसे दोषी मानता हूं। सम्राट अशोक ने अपने समय में बौद्ध धर्म के अलावा अन्य कई धर्मों को प्रचार की अनुमति दी जो बौद्ध के कट्टर दुश्मन थे। इससे बौद्ध के खिलाफ वाले धर्मों को अपनी शक्ति बढ़ाने का भरपूर मौका मिलता रहा। यही बौद्ध धर्म पर पहला आघात था ऐसा मुझे लगता है।

बौद्ध ग्रंथों से पता चलता है कि भगवान बुद्ध के श्रमण शिष्यों में करीब 60 प्रतिशत ब्राह्मण थे। ब्राह्मण लोग बुद्ध से शास्त्रा करने के लिए आया करते थे। शास्त्रात में निरुत्तर होकर वे बुद्ध से प्रभावित होते थे और सहर्ष उनसे बौद्ध की दीक्षा लेकर बुद्ध के प्रति श्रद्धा से नतमस्तक हो जाते थे इन श्रमण शिष्यों के कारण भगवान बुद्ध का और उनके धर्म का प्रभाव दिनों दिन बढ़ता जा रहा था। लेकिन बौद्ध धर्म में जातिभेद न होने के कारण जब निम्न जाति के लोग बुद्ध की शरण जाकर सिद्ध भिक्षु बनने लगे और धनिकों और राजाओं द्वारा उनकी पूजा और सम्मान जब होने लगा तब ब्राह्मणों से यह बात सही नहीं गई और वे बौद्ध को उखाड़ने के काम में लग गए।

भारत में प्राचीन समय से जिस प्रकार ग्राम-देवता, प्रदेश-देवता, वन-देवी, नदी-देवी, आदि देवी, देवता थे और उनकी पूजा हुआ करती थी उसी प्रकार कुलदेवता भी थी। राजा और धनिकों के कुलदेवताओं की पूजा बहुधा ब्राह्मण द्वारा ही हुआ करती थी। इसलिए राजमहल में कुलदेवता की पूजा के लिए जाने वाले ब्राह्मण रानी की मध्यस्थता

से राज्य के शासन पर अपना प्रभाव डाला करते थे। इस प्रभाव का उपयोग कर उनकी वर्चस्व में बाधा पहुंचाने वाले बौद्ध को उखाड़ फेंकने की वे कोशिश किया करते थे। सम्राट अशोक के समय कुलदेवता की पूजा की निंदा की गई। अशोक कहता है, 'मैं बौद्ध के मार्ग का अनुसरण कर रहा हूं इसलिए अन्य किसी देवी-देवताओं की पूजा करने की मुझे जरूरत नहीं है।' और उसने अपने प्रशासनिक अधिकारियों को आदेश देकर कुलदेवताओं की मूर्तियां हटवा दीं। यह ब्राह्मणों के लिए बहुत बड़ा आघात था। क्योंकि इससे उनकी आजीविका और भ्रामक प्रचार पर लगाम कस गई। इसलिए वे इस बात का बदला लेने के लिए सिद्ध हुए। पहले ब्राह्मण पुरोहित मानते थे कि सभी राजा मरने के बाद नर्क में जाते हैं। क्योंकि राज्य चलाते हुए उन्हें कई पापकृत्य करने पड़ते हैं। इसीलिए, मौका पाने के बावजूद राज्य चलाने की जिम्मेदारी ब्राह्मण अपने सिर पर लेने के लिए तैयार नहीं थे। हालांकि, राजसिंहासन पर बैठने के लिए वे राजी नहीं होने के बावजूद मंत्री अथवा पुरोहित के तौर पर राजा को सलाह देने का काम किया करते थे। साथ ही वे कानून भी बनाते थे। लेकिन कुलदेवता की पूजा बंद होने के कारण जब उनकी बहुत बड़ी हानि हुई तब राज्य का शासन न चलाने के अपने सिद्धांत का त्याग कर वह राज्य पर और सिंहासन पर कब्जा करने की कोशिश उन्होंने शुरू की। भारतीय साहित्य में इस प्रकार की अनेक घटनाओं के जिक्र हैं। कई बार ऐसा भी देखने में आता है कि जहां अपने बलबूते राज्य करना संभव नहीं था वहां अपनी तरफ झुकाव रखने वाले क्षत्रियों को साथ लेकर या उन्हें आगे कर यानी कि उन्हें कठपुतली बना कर वे शासन चलाया करते थे। इस प्रकार एक बार फिर ब्राह्मणवाद ने जोर पकड़ा तो बौद्ध धर्म पर आघात हुआ और भारत से लोप होने के लिए कारण बना।

ब्राहमणों के शासन अधिकार की एक बहुत बड़ी घटना मौर्य साम्राज्य के परिवर्तन के लिए जिम्मेदार दिखाई देती है। वेद की बात यह है कि भारतीय इतिहासविदों ने इस महान घटना को महत्व नहीं दिया। वस्तुतः भारतीय इतिहास की यह सबसे बड़ी घटना है। अंतिम मौर्य सम्राट महाराज बृहद्रथ का सेनापति पुष्यमित्र नाम का एक ब्राह्मण था। पतंजलि उसके गुरु थे। पतंजलि ने बौद्धों से ही योगविद्या सीखी थी। लेकिन बाद में वह बौद्धों का शत्रु बना। उसकी सलाह को मानकर सेनापति शृङ्गवंसीय पुष्यमित्र ने बृहद्रथ की हत्या की और मौर्य वंश की जगह शृङ्गवंश के नाम से ब्राह्मणों का राज चलाया।

इस ब्राह्मण राज्य ने बौद्ध धर्म को अत्यधिक नुकसान पहुंचाया। ब्राह्मण धर्म की पुनर्स्थापना के लिए किए गए कार्यों में से यह सबसे दारुण कृत्य था और भारत से बौद्ध धर्म के नष्टप्राय होने के लिए कारण बनी यह सबसे बड़ी ऐतिहासिक घटना थी।

यह भी माना जाता है कि, भारत से बौद्ध धर्म का लोप होने के लिए विदेशी आक्रमण भी कारण बने। लेकिन यूनानी लोगों के आक्रमणों के कारण बौद्ध धर्म को

कोई नुकसान नहीं पहुंचा। उल्टे उनके द्वारा बौद्ध धर्म के प्रसार के लिए द्रव्य सहायता किए जाने के सबूत भी मिलते हैं। गुप्तयुग में भारत पर हूणों के आक्रमण हुए लेकिन गुप्त राजाओं से पराजित होने के कारण वे भारत में ही रहे। उनके कारण भी बौद्ध धर्म का कोई नुकसान नहीं हुआ। हालांकि, पेशावर के शक राजा कनिष्क ने बौद्ध धर्म की दीक्षा ली थी। उसने तक्षशिला में विशाल बौद्ध विश्वविद्यालय खोला था और बौद्धों की चौथी धर्म-संगति यानी धर्मसभा बुलाई थी। इसी धर्मसंगति में महायान मार्ग का उदय हुआ और बौद्ध साहित्य संशोधित रूप में संस्कृत भाषा में लिखा जाने लगा। विदेशी आक्रमण ाकारियों में से मुसलमानों के द्वारा बौद्ध धर्म का बेहद नुकसान हुआ। मुसलमान प्रतिमा और मूर्तियों के विरोधी थे। उन्होंने बौद्ध मूर्तियों को तहस-नहस किया और भिक्षुओं को मार डाला। नालंदा के विशाल विश्वविद्यालय को सैनिक किला समझकर उसपर हमला किया और चीवरदारी भिक्षुओं को सैनिक मानकर उनका संहार किया। जो भिक्षु उस भीषण रक्तपात से बचे वे नेपाल, तिब्बत, चीन आदि देशों में भाग गए।

नालंदा के विशाल ग्रंथालय में ताड़पत्र और भोजपत्रों पर लिखे दो लाख ग्रंथ थे। हजारों वर्षों का ज्ञान उसमें सम्मिलित था। बख्तियार खिलजी ने उनमें आग लगा दी और वहां पढ़ रहे छह हजार छात्रों में से कुछ छात्रों की हत्या की और कुछ को जबरदस्ती मुसलमान बनाया। बौद्ध मूर्तियों की तोड़-फोड़ की। मुसलमान आक्रमणकारी जहां-जहां भी गए वहां-वहां उन्होंने बौद्धों को या तो मार गिराया या फिर मुसलमान बनाया और बौद्ध मूर्तियों की तोड़-फोड़ की। ग्रंथालय जलाए और विहार नष्ट किए। मेरे कुछ हिंदू मित्र मुझसे पूछते हैं कि मुसलमान आक्रमणकारियों ने हिंदू मंदिर और हिंदुओं की मूर्तियों को भी तहस-नहस कर दिया है ना? इस पर मेरा जवाब यह है कि उन्होंने बौद्ध धर्म का जितना नुकसान किया उतना हिंदू धर्म का नहीं किया। इसकी वजह यह है कि लगभग सभी ब्राह्मण गृहस्थ थे और वे अपने परिवार के साथ अपने ही घरों में रहते थे इसलिए उनकी अलग पहचान नहीं थी। परंतु, बौद्ध भिक्षु मात्र परिवार से अलग, चीवरधारी थे और विहारों में रहते थे। उन्हें पहचानना आसान था। इसलिए, हिंदुओं के प्रसिद्ध मंदिरों के साथ भले मुसलमानों द्वारा तोड़-फोड़ की गई हो लेकिन उनके धर्मगुरुओं और पुरोहितों को कोई हानि नहीं पहुंची थी।

किसी भी धर्म के जिंदा रहने के लिए उसके धर्मगुरुओं और पुरोहितों का लगातार बने रहना आवश्यक होता है। बौद्ध धर्म लोप होने का एक विशेष कारण था बौद्ध भिक्षुओं का अभाव होना। बौद्ध भिक्षुओं की कोई भी जाति नहीं थी। कोई भी व्यक्ति बौद्ध धर्म की शरण में जाकर उपासक, श्रामनेर, भिक्षु अथवा स्थविर-महास्थविर बन सकता था। भिक्षु लोग समाज से दूर विहारों में रहते थे। ब्राह्मणवाद में ऐसी बात नहीं थी। वहां केवल ब्राह्मणों के घर पैदा होने से ही नया ब्राह्मण निर्माण होता था। इस कारण

हिंदुओं की विशेष हानि नहीं हुई। बाद के समय पिछड़े वर्ग के लोगों को भिक्षु बनाकर बौद्धों की परंपरा कायम रखने की कोशिश की गई। लेकिन अच्छी तरह से शिक्षित न होने के कारण ये भिक्षु ब्राह्मणों के युक्तिवाद का जवाब नहीं दे पाए और इसी कारण उनकी हार हुई।

दरमियान के समय में शैव योगियों ने शैव धर्म का और ब्राह्मणों ने वैष्णव धर्म का प्रसार किया। वैष्ण और शैवों में जोरदार संघर्ष हुआ। आखिर ब्राह्मणों ने शैवों को 'रुद्र' बना कर अपने साथ शामिल कर लिया। इस प्रकार शैव और वैष्णवों में एकता हुई। आगे हिंदु धर्म में कई बदलाव हुए। पहले वह हिंसा की सीख देता था लेकिन अब वह अहिंसा की सीख देता है। बौद्ध धर्म के कई तत्व हिंदु धर्म ने अपनाए। प्रतिमा, चैत्य, विहार और भिक्षु आदि दृष्टिकोणों से आज भारत में बौद्ध धर्म के न होते हुए भी हिंदू धर्म सैद्धांतिक रूप में भारतभर में फैला हुआ है।

269

बौद्ध धर्म ब्राह्मण धर्म के लिए चुनौती है

अब पूरी मानव जाति के लिए 'नैतिक मूल्यों का सवाल' बेहद महत्वपूर्ण हो गया है। सांस्कृतिक संघर्ष, युद्ध की भाषा, धर्म का ह्रास के विषाक्त वलय में पूरी मानव जाति फंसी है। वैचारिक अराजकता की तो सारी हदें लांघ दी हैं।

ऐसे, बेहद आपातकालीन समय में डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर द्वारा बौद्ध धर्म का विवेचन करते हुए कोलंबो में जिस धर्मवाणी का उपदेश किया उससे सभी देशों की और खास कर भारत की जनता को सच्चा प्रकाश दिखाई देगा और माना जा सकता है कि सच्चे नैतिक मूल्यों का महत्व पहचाना जाएगा।

भारत में बौद्ध धर्म का उदय और अस्त विषय पर कोलंबो के यंग मेन्स बुद्धिस्ट एसोसिएशन में छात्रों के सामने 6 जून, 1950 के दिन डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का विचार प्रवर्तक और क्रांतिकारी भाषण हुआ। इस अवसर पर उन्होंने कहा-

भारत में बौद्ध धर्म का ह्रास हुआ है और वह धर्म लगभग समाप्त हो चुका है ऐसा कहा जाता है लेकिन मैं इस बात से बिल्कुल सहमत नहीं हूं। कुछ देर के लिए मैं मान भी लूं कि, आज भारत में बौद्ध धर्म के प्रसार के ऐहिक चिन्ह दिखाई नहीं देते हैं, लेकिन इसके बावजूद आध्यात्मिक शक्ति के तौर पर भारत में आज भी बौद्ध धर्म का ज्वलंत प्रभाव है इस बात से कोई भी इनकार नहीं कर सकता। वेद की बात यह है कि इसके बावजूद बौद्ध धर्म का उदय कैसे हुआ? अस्त कैसे हुआ? इन प्रश्नों पर आज तक जितना विचार होना चाहिए था वह नहीं हुआ। बौद्ध धर्म का महत्व ध्यान में रखें तो इस विषय का अध्ययन ठोस वास्तविकताओं की पृष्ठभूमि और गहराई से होना चाहिए। इस तरह के अध्ययन का महत्व आज भारत में अधिक है। इस विषय पर अधिकृत जानकारी देने वाले ग्रंथ अथवा अन्य साहित्य उपलब्ध न होना भी एक समस्या है।

जो लोग चाहते हैं कि बौद्ध धर्म पुनर्जीवत हो उनके सामने यह सवाल वड़ा रहता है कि अगर बौद्ध धर्म में कुछ चिरंतन मूल्य थे तो इस धर्म का ह्रास क्यों हुआ? इस बारे में जानकारी प्राप्त करने की मेरी कोशिश जारी है। अब तक जो जानकारी मैं जुटा पाया हूं उसके आधार पर बौद्ध धर्म के उदय-अस्त के बारे में मैंने जो अनुमान लगाए हैं वे, मुझे लगता है कि सही हैं।

जनता : 10 जून, 1950

ज्यादातर लोग यही समझते हैं कि भारत में शुरू से हिंदू धर्म ही था। लेकिन इतिहास के आधार पर इस की छान-बीन की तो इस मान्यता का कोई आधार दिखाई नहीं देता। हिंदू धर्म भारत में शुरु से नहीं था। आज हिंदू धर्म की स्थिति देखें तो पता चलता है कि वह काफी बाद में भारत में पैदा हुआ है। हिंदू धर्म का निर्माण कई बदलावों से होकर हुआ है। पहले भारत में वैदिक धर्म था। उसके बाद ब्राह्मण धर्म आया। और अब हिंदू धर्म निर्माण हुआ है। इस प्रकार के बदलाव होते रहे हैं।

ब्राह्मण धर्म के दौरान ही भारत में बौद्ध धर्म का उदय हुआ। और वह स्वाभाविक था। ब्रह्मण धर्म की आत्मा विषमता पर आधारित थी। बौद्ध धर्म की आत्मा समानता की थी। जाहिर है कि इन दो विपरीत विचार प्रणाली के धर्मों में संघर्ष होना स्वाभाविक ही है। बौद्ध धर्म ब्राह्मण धर्म के लिए चुनौती समान था क्योंकि बौद्ध धर्म का चातुर्वर्ण्य पद्धति को विरोध था। फ्रेंच राज्यक्रांति द्वारा समानता स्थापित करने का जो कार्य किया गया वही क्रांतिकारी कार्य बौद्ध धर्म के उदय से हुआ। इस प्रकार बौद्ध धर्म का उदय किन स्थितियों में हुआ जानने के बाद ही उसका महत्व समझ में आएगा।

कई लोगों का कहना है कि शंकराचार्य के दर्शन और युक्तिवाद के कारण बौद्ध धर्म निष्प्रभ हुआ। लेकिन मुझे यह बात गलत लगती है। क्योंकि शंकराचार्य की मृत्यु के बाद भी कई सालों तक बौद्ध धर्म भारत में प्रचलित था, उसका विकास हो रहा था। कई बार मुझे लगता है कि शंकराचार्य और उनके गुरु भी बौद्धधर्मीय ही थे।

वैष्णव धर्म और शैव धर्म के तड़क-भड़क वाले प्रचार के कारण बौद्ध धर्म धीरे-धीरे अस्त हुआ। बौद्ध धर्म की ही इन धर्मों ने नकल की थी। नकल करते हुए बौद्ध धर्म को खत्म करने की यह जुगत और थी। मुसलमानों के आक्रमण भी कारण बने। अलाउद्दीन खिलजी ने जब बिहार पर आक्रमण किया तब उसने करीब 5000 से 6000 बौद्ध भिक्षुओं को मार डाला। उससे बनी दहशत के कारण बचे हुए बौद्ध भिक्षु चीन, नेपाल और तिब्बत में भाग गए। उसके बाद भी बौद्ध धर्म को पुनर्जीवित करने की कोशिशें हुईं लेकिन उन्हें सफलता नहीं मिली। क्योंकि, इस बीच हिंदू धर्म का प्रसार हुआ था और करीब 90 प्रतिशत लोगों ने हिंदु धर्म अपनाया था।

हिंदू धर्म का आचरण आसान है इसलिए यह धर्म टिका रहा और बौद्ध धर्म का आचरण कठिन था, इसलिए वह लोप हुआ यही इसका सीधा-सरल जवाब है। इसके अलावा भारत का राजनीतिक वातावरण जिस प्रकार हिंदू धर्म के लिए अनुकूल था उस प्रकार बौद्ध धर्म के लिए अनुकूल नहीं था इस बात को ध्यान में रखना बहुत जरुरी है।

270

बौद्ध धर्म के अलावा अछूतों के उद्धार का और कोई रास्ता नहीं

दिनांक 10 जून, 1950 के दिन डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का एक और भाषण कोलंबो के टाऊन हॉल में हुआ। टाऊन हॉल का समारोह पूरे सिलोन शेड्यूल्ड कास्ट्स फेडरेशन की ओर से आयोजित किया गया था। सिलोन के अस्पृश्य का बड़ा समुदाय समारोह में उपस्थित था। इस अवसर पर डॉ. बाबासाहेब का सम्मान किया गया। जवाब में अपने जातिबंधुओं को संबोधित करते हुए कहा–

''सिलोन बौद्धधर्मियों का देश है। बौद्ध धर्म स्वीकार करने में ही अस्पृश्यों की मुक्ति का मार्ग है। इस बात का मुझे पूरा यकीन है, इसलिए मुझे लगता है कि आप एक तरह से सौभाग्यशाली देश में हैं। सिलोन की बौद्धधर्मीय जनता से मैं कहना चाहता हूं कि अस्पृश्य वर्गीय बंधुओं को आप मन से जोड़ कर बौद्ध धर्म में शामिल कर लें और अपनाए हुए बच्चे की तरह उनके हितों की रक्षा करें।''

''केवल सिलोन के बारे में बोलना हो तो, मैं कहूंगा कि सिलोन बौद्धधर्मीय देश होने के कारण यहां 'अस्पृश्यों का संगठन' बना कर आपको यहां अलग से संगठित होने की जरूरत नहीं है। भारत में शेड्यूल्ड कास्ट्स फेडरेशन है इसलिए आपको उनका अनुकरण करने की जरुरत नहीं। बौद्धधर्मीय देश में खुद को अस्पृश्य समझने की जरूरत नहीं। क्या आप खुद को अस्पृश्य समझें? क्या आपकी यही पहचान हो? – इस बारे में सोचने जैसे हालात अब पैदा हुए हैं। हमें राजनीतिक अधिकार मिलें, विधिमंडल में हमें जगह मिले और समाज हमारे साथ समानता का व्यवहार करे इसलिए भारत में हम एक लम्बी राजनीतिक लडाई लड़ रहे हैं। हमें अभी सफलता नहीं मिली है। इसका मतलब यही है कि राजनीतिक संग्राम से हमें अभी मुक्ति नहीं मिली है।

पिछले 35 सालों से मेरी ये राजनीतिक लड़ाई चल रही है। इस लड़ाई में मुझे उच्चवर्णीय हिंदुओं से लोहा लेना पड़ रहा है। इसी दौरान मैंने दुनिया के सभी धर्मों के बारे में पढ़ाई की और अब, आखिर मैं एक अपिहार्य निर्णय तक आ पहुंचा हूं। निर्णय यही है कि बौद्ध धर्म के अलावा अस्पृश्यों के लिए मुक्ति की कोई और राह नहीं है। केवल बौद्ध धर्म में ही अस्पृश्यता निवारण का चिरकालीन उपाय है। आप अगर समानता

जनता : 10 जून, 1950

का सिद्धांत चाहते हैं और आर्थिक दासता से मुक्ति चाहते हैं तो बौद्धवाद के अलावा अन्य कहीं ठौर नहीं।

सिलोन के सम्माननीय नागरिक बनने का मौका आपको कानूनी तौर पर मिला हुआ है। यह बात भी सही है कि इस कानून के कुछ अनुच्छेदों के खिलाफ शिकायत करने की कई जगहें हैं। लेकिन, मुझे यकीन है कि भारत सरकार और सिलोन सरकार के आपसी सहयोग से, स्नेहभाव से अन्यायकारी प्रावधानों का निवारण किया जा सकता है।''

271

संविधान की नीति का कड़ाई से पालन करें

बौद्ध धर्मियों की मशहूर परिषद में हिस्सा लेने के बाद कोलंबो से लौटते हुए भारत के कानून मंत्री डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का दिनांक 10 जून, 1950 को त्रिवेंद्रम के लेजिस्लेटिव चेंबर में भाषण हुआ। चेंबर के बड़े हॉल में सरकारी अधिकारी, सामाजिक कार्यकर्ता और अस्पृश्य बांधवों-भगिनियों की भीड़ थी । संविधान और संविधानात्मक नीति इस विषय पर बाबासाहेब का विचारप्रवर्तक और समयोचित में कहा-

प्रत्यक्ष संविधान से अधिक संविधान के अनुसार व्यवहार करने की नीति जनता में होना बेहद महत्वपूर्ण है। देश में पार्लिमेंटरी पद्धति को सफलता मिले, इसलिए सरकार और जनता द्वारा संविधान के कुछ संकेत और नीतियों का पालन करना आवश्यक है। ये संकेत और नीतियां निम्नलिखित हैं -

सरकार बनाने की पद्धति के बारे में आदर, कानून का पालन, अलग से खुद सोचने की आदत और बहुसंख्यकों के लिए बने नियमों का पालन।

इसी प्रकार सरकार को भी निम्नलिखित नीतियों का पालन करना होगा -

देश की बहुसंख्य जनता का अपने पर से विश्वास डिग जाने की बात ध्यान में आने के बाद संविधान की नीति का अनुसरण करते हुए सरकार को अपने अधिकार का त्याग करना चाहिए। अल्पसंख्यकों के बारे में आदर की भावना रखनी चाहिए और अंतिम बात यह कि, राज्य का प्रशासन निष्पक्ष हो।

अपने समाज के लोगों का रहन-सहन, उनकी सोचने की क्षमता आदि बातों को ध्यान में रखते हुए केवल सैद्धांतिक दृष्टिकोण पर ध्यान केंद्रित कर संविधान बनाने के कारण विश्व के कई संविधान असफल रहे हैं। अधिकार प्राप्त लोगों को एक बात ध्यान में रखनी चाहिए कि संविधान बनाने और राज्य चलाने का जो अधिकार उन्हें प्राप्त है वह कुछ शर्तों के साथ लोगों द्वारा ही उन्हें दिया जाता है। सरकार अच्छा काम करेगी यह सोचकर ही ये अधिकार दिए जाते हैं। वे अगर इस शर्त को पूरा नहीं कर सकते तो सरकार को अपने अधिकारसूत्र छोड़ देने चाहिए।

जनता : 17 जून, 1950

अल्पसंख्यकों के बारे में आदर

सरकार अल्पसंख्यकों का आदर करें। अल्पसंख्यकों को अपने विचार रखने का मौका मिलना चाहिए।

उसी तरह प्रशासन का निष्पक्ष होना जरूरी है। ब्रिटिश जनता किसी भी राजनीतिक पार्टी की योग्यता का मूल्यांकन उसके गुणों से करती है। इसीलिए और कोई पार्टी सत्ता में आती है तो उसे खुश रखना होगा जैसी स्थितियां वहां आती ही नहीं। उदाहरणों से पता चला है कि भारत में महत्वपूर्ण पदों पर बैठी पार्टियां कुछ लोगों को खास सहूलियतें देती हैं।

पुरानी, नुकसानदेह प्रवृत्तियों को मात देते हुए, क्षुद्र वृत्ति और जातीय भावनाओं को मन से दूर कर, देश में तानाशाही नहीं पनपेगी और किसी प्रकार लोग परेशान नहीं होंगे इस बात का ध्यान रखते हुए ही लोगों को अपना व्यवहार करना चाहिए उम्मीद है कि लोग इन बातों का अनुसरण करेंगे।

272

संगठन से ही राजनीतिक ताकत प्राप्त होगी

21 जुलाई, 1950 के दिन भारत के कानून मंत्री डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर मनमाड़ के रास्ते औरंगाबाद में स्पेशल सेलून से दोपहर डेढ़ बजे पहुंचे। रोटेगाव-लासूर में अनगिनत लोगों ने आदर और भक्तिभाव के साथ डॉ. बाबासाहेब का स्वागत किया। स्टेशन पर पुलिस ने उन्हें सलामी (Guard of Honour) दी।

जनसमुदाय का अभिवादन

शनिवार 22 जुलाई, 1950 के दिन डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर रु. 2001 की सहयोग राशि प्रदान के कार्यक्रम में उपस्थित रहेंगे यह खबर बिजली की गति से पूरे शहर में फैली। शहर के और बाहर के भी हजारों पुरुष और महिलाएं दस बजे से ही सभास्थान में आने लगे। बाबासाहेब के दर्शन होंगे, बाबासाहेब का भाषण भी सुनने को मिलेगा इस खयाल में खोई कई महिलाओं को अपने बच्चों तक की सुध नहीं रही। साढे पांच बजे बाबासाहेब की मोटर आई तब अनगिनत महिलाओं ने दूर से ही भक्तिभाव से बाबासाहेब को नमन किया। उन पर फूलों की वर्षा की। इस अवसर पर अनुशासन बनाए रखने के लिए चालीसगांव के मुनाजी लळिंगकर और हं. शु. निकम ने औरंगाबाद के कार्यकर्ताओं का सहयोग किया।

श्री कन्नडकर मोरे का निवेदन

अखिल हैदराबाद स्टेट शेड्यूल्ड कास्टस् फेडरेशन, औरंगाबाद की ओर से श्री बी. एस. मोरे कन्नडकर ने शुरुआती औपचारिक भाषण दिया। संक्षेप में स्टेट में दलितों की स्थिति के बारे में जानकारी दी। कहा दलित जनता में आजादी, प्रेम और स्वाभिमान का भाव निर्माण कर दलितों-अस्पृश्यों में स्वाभिमान की भावना को निर्माण करने का श्रेय पूरी तरह से डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को ही जाता है। किसान, मजदूर और अस्पृश्यों का उद्धार डॉ. बाबासाहेब के अलावा किसी और से होने वाला नहीं है बात का पता सबको हो चला है ऐसा भी उन्होंने कहा। आखिर में 2001 रुपयों की थैली डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को सादर अर्पण की गई। बाद में डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर तालियों की गड़गड़ाहट के बीच बोलने के लिए उठकर खड़े हुए। कहा-

---

जनता : 5 अगस्त, 1950

मेरे मित्रों, बहनों और भाईयों

सब लोगों ने मिलकर जो थैली अर्पण की है उसके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूं। थैली अर्पण करने की कोई वजह नहीं थी। किसी प्रलोभन के कारण मैंने कभी सेवा नहीं की। आप सबकी थोड़ी-बहुत सेवा करना मेरा नैतिक कर्तव्य है। थैलियों के जरिए मुझे जो थोड़ा-बहुत पैसा मिला उसे मैंने अपने आप पर खर्च नहीं किया। गांधी को कुछ करोड़ रुपयों की थैलियां दी गईं। तिलक को नौ लाख रुपयों की थैलियां दी गईं। हमारी बात उनकी तरह बिल्कुल नहीं है।

मेरी ओर से आपकी निस्वार्थ भाव से सेवा होनी चाहिए बस यही मेरी महत्वाकांक्षा है। अपने भाषण में मेरे मित्र आयु. बी. एस. मोरे ने जो बातें बताईं वह रोंगटे खड़े कर देने वाली हैं। पहले की स्थितियां और अब की स्थितियों में जमीन-आसमान का फर्क है। दौलताबाद का किला देखने आया था तब मेरे मित्र पानी पीने के लिए हौज पर गए और पानी पीने लगे। तब 15-20 साल के एक मुसलमान लड़के ने हम पर गालियों की बौछार की। उसी दौर में, लोगों ने जब देखा कि हम औरंगाबाद आए हैं तब उन्होंने भजन गाकर रतजगा किया। तब आप सोचते कि अन्याय सहते रहना ही हमारा भाग्य है। स्वागताध्यक्ष के शुरुआती वक्तव्य से ऐसा ही लगता है कि अभी भी निजामशाही की छाया बाकी बची है। आगामी राजनीति में आपको कुछ बड़ी सहभागिता मिलने वाली है। स्टेट में अब आपकी जनसंख्या 25 प्रतिशत है। राजकाज में अब हम भी शरीक होंगे। पुराना जमाना अब बीत गया। आने वाला समय उज्जवल है। आप लोगों को राजनीतिक ताकत मिलने वाली है। संगठन को यह ताकत मिलेगी। आपको अधिक नेता नहीं चाहिए। जो नेता हैं उनकी बात मानिए।

पानी अगर मैदान में गिरता है तो फैल जाता है। गड्डों में गिरता है तो वहां वह इकठ्ठा होगा। उसी प्रकार आप लोगों को एकजुट होकर शेड्यूल्ड कास्टस् फेडरेशन के झंडे तले इकठ्ठा होना। आपको भी इंसान होने का हक है। अगर कोई उन्हें छीनता है तो उस सरकार के खिलाफ न्याय की गुहार लगाने के लिए राष्ट्र का सुप्रीम कोर्ट है, वहां आप जा सकते हैं। इसलिए डरना नहीं और एक रहो संगठित होकर लड़ो। आज मैं बस यही आप लोगों से कहना चाहता हूं।

रु. 2001 की सहयोग राशि की थैली डॉ. बाबासाहेब ने आयु. सुब्बय्या सोहन को अगले चुनाव में खर्च करने के लिए दी और जयघोष के साथ सभा समाप्त हुई।

273

वकालत के पेशे में नीति के मार्ग से चलना चाहिए

21 जुलाई, 1950 के दिन डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर औरंगाबाद पहुंचे। स्टेशन पर स्वागत के लिए तहसीलदार आयु. गोविंदराव देशपांडे, पुलिस सुपरिंटेंडेंट आयु. हरिश्चंद्र, अन्य अधिकारी, स्थानीय नेता, वकील और शे. का. फेडरेशन के हजारों लोग उपस्थित थे।

गार्ड ऑफ ऑनर

पुष्पमाला अर्पण करने के बाद डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर रंगमंच से नीचे उतर कर आए। स्थानीय पुलिस से गार्ड ऑफ ऑनर स्वीकार किया। उसके बाद नारों की गूंज में शेड्यूल्ड कास्टस् फेडरेशन के लोगों ने उन्हें फूलमालाएं अर्पण कीं।

उसके बाद डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर प्रिन्सिपल लेखापाल और आयु. चित्रे के साथ पीपल्स एजुकेशन सोसाइटी की इमारत की ओर रवाना हुए। वहां निरीक्षण कर वे फिर सेलुन की ओर लौटे।

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर कॉलेज के समारोह में उपस्थित रहे और उन्होंने कॉलेज की नई इमारत की जगह का मुआयना किया। इस इमारत का पहला पत्थर डॉ. बाबासाहेब के करकमलों द्वारा रखा जाना था।

कोर्ट को भेट

दिनांक 23 को कॉलेज की नई इमारत देखने के बाद वे सेशन्स कोर्ट गए। सेशन्स कोर्ट के जज आयु. चंद्रकांत गोडसे ने उनका स्वागत किया और उन्हें कोर्ट और बार एसोसिएशन का परिसर दिवाया।

इसके बाद डॉ. साहब के बारे में जज गोडसे ने कहा डॉ. अम्बेडकर आधुनिक मनु हैं। उसके बाद डॉ. बाबासाहेब ने मुन्सिफ कोर्ट का उर्दू में चलने वाला कामकाज सुना। इस कामकाज के बारे में डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने कहा–

उर्दू में जो काम चल रहा था उसे मैं समझ तो नहीं पाया लेकिन वह संतोषजनक था ऐसा मुझे लगता है।

कई बार मेरा मन इस बात की चिंता में व्यग्र हो उठता है कि कोर्ट की भाषा क्या

जनता, 29 जुलाई, 1950

हो। कुछ लोग कहते हैं कि कोर्ट की भाषा हिंदी होनी चाहिए। तो कुछ लोगों का कहना है– कोर्ट की भाषा अंग्रेजी होनी चाहिए। स्थानीय भाषा में कानूनी शब्द व्यक्त नहीं हो सकते यह अनुभव है। उदाहरण के तौर पर इक्विटी शब्द के लिए योग्य शब्द नहीं है। इसलिए स्थानीय भाषा का कोर्ट की भाषा होना सबके लिए फायदेमंद शायद साबित न हो। उससे कामकाज में कई मुश्किलें पैदा होंगी। अर्थात्, राष्ट्रीय भाषा के कार्यक्षम होने के बाद उसे उसका योग्य स्थान मिलेगा ही।

मुझे वकील का पेशा बहुत पसंद है। लेकिन लोगों में इस पेशे के लिए आदर की भावना नहीं है। भारत में वकीलों पर कई आरोप लगाये जाते हैं। केन्द्र सरकार से मुक्त होने के बाद मैं इसी पेशे को अपना जीवन समर्पित करने वाला हूं। आज इस देश में लायक वकील बहुत कम हैं। लायक वकील न हों तो यह विभाग की अधोगति को जाएगा। आज इस पेशे को बुरे दिन देखने पड़ रहे हैं इसकी एक वजह यह भी है कि कुछ लोग अवकाश प्राप्ति की उम्र के बाद भी अवकाश नहीं लेते, युवाओं को काम करने का मौका नहीं देते। व्यवसाय की प्रतिष्ठा बनी रहे इसके लिए युवा वकीलों को मौका देना आवश्यक है।

इस व्यवसाय में मर्यादा रखना बेहद जरूरी है उन्होंने आगे कहा– कानून के पंडितों द्वारा आजादी, हेबीअस कॉर्पस और अन्य कामकाज का महत्व जान कर राष्ट्र की सेवा की जानी चाहिए।

274

छात्रों! पराक्रमी और धैर्यवान बनो

आज दिनांक 23 जुलाई, 1950 के दिन औरंगाबाद के पीपल्स एजुकेशन सोसाइटी के कॉलेज के समारोह में डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर उपस्थित थे। समारोह के लिए नागरिक और छात्र भारी संख्या में उपस्थित थे।

कॉलेज के प्रिन्सिपाल डॉ. चिटणीस ने बाबासाहेब का स्वागत कर उन्हें फूलमालाएं अर्पण करने के बाद उनका भाषण हुआ। उन्होंने उम्मीद जताई कि कॉलेज अपनी उच्च परंपरा बरकरार रखेगा और छात्रों को उन्होंने संदेश दिया कि शूर बनो, पराक्रमी और धैर्यवान बनो।

---

29 जुलाई, 1950

275

भारतीय संविधान के मार्गदर्शक सिद्धांतों पर आधारित दीवानी संहिता होनी चाहिए

1 दिसंबर, 1950 के दिन श्री दास के सवाल का जवाब देते हुए डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने कहा–

लोकसभा में प्रस्तुत करने के लिए मुस्लिम कोड बिल बनाने के बारे में सरकार अभी सोच नहीं रही है। सब पर लागू होने वाला भारतीय संविधान के मार्गदर्शक सिद्धांतों पर (डाइरेक्टिव प्रिंसिपल्स) आधारित दीवानी कोड (Civil Code) बनाने की मेरी बहुत इचछा है। लेकिन इस काम के लिए जितना समय जरूरी है उतना समय मुझे मिल नहीं पाता है।

जनता : 20 जनवरी, 1951

276

एक बार फिर बौद्ध धम्म इस देश का धर्म बनेगा

रविवार, 14 जनवरी, 1951 के दिन शाम 6 बजे केंद्रीय कानून मंत्री डॉ. बाबासाहेब अंबेडकर मुंबई के वरली इलाके में बुद्धदूत सोसाइटी द्वारा आयोजित मेले में आए।

शाम 4 बजे से ही दर्शनाभिलाषी लोग सभा स्थान के पंडाल में तथा आसपास जहां भी जगह मिले वहां खड़े थे। ठीक 6 बजे बाबासाहेब कार्यक्रम पंडाल में आए। उनकी जयघोष से आसपास का परिसर गूंज उठा। फूलमालाएं अर्पण कर उनका स्वागत किया गया। उसके बाद प्रो. भागवत ने लोगों से कहा, ''बुद्ध तथा उनके द्वारा दुनिया को मिले अद्वितीय बौद्ध धर्म के बारे में लोगों को जानकारी मिले इस उद्देश्य से यह बुद्धमेला आयोजित किया गया है। चार महीनों पहले यह बुद्धविहार अधूरी बना पड़ी थी। इस काम को जल्द पूरा किया जा सकता है या नहीं इसका खुद हमें भरोसा नहीं था। लेकिन चार माह पूर्व डॉ. बाबासाहेब विहार आए और आश्चर्य! इतने दिन अधूरा पड़ा इमारत बनाने का काम फिर शुरू हुआ। अब यह काम पूरा होने में है। यह केवल बाबासाहेब के आशिर्वादों का प्रभाव है। कुछ लोगों का प्रभाव होता ही ऐसा है। वे अगर मिट्टी भी हाथ में लेते हैं तो सोना होता है। डॉ बाबासाहेब ने जो भी काम अपने हाथ में लिए वे सभी काम अच्छे ढंग पूरे हुए हैं। उदाहरण के तौर पर सिद्धार्थ कॉलेज को ही लीजिए।'' उन्होंने यह भी बताया कि डॉ. बाबासाहेब बुद्ध के बारे में एक किताब लिख रहे हैं।

ठीक 6 बज कर 10 मिनट पर डॉ. खड़े हुए तो माहौल तालियों की आवाज से गूंज उठा। एक बार फिर उनके जयकार गूंज उठी। डॉ. बाबासाहेब ने कहा,

प्रिय बहनों और भाइयों,

भाषण देने के लिए मैं यहां उपस्थित नहीं हुआ हूं। मुझे लगा था कि शायद मेला खत्म हुआ है। लेकिन कल मेरे मित्र प्रो. भागवत मुझसे मिले और उन्होंने बताया कि मेला अभी कई दिनों तक चलने वाला है। यहां आने के लिए मेरे पास समय नहीं था। लेकिन लोगों के आग्रह के कारण मैं ना नहीं कर सका और मैं हाजिर हुआ। ऐसे समारोहों में उपस्थित रहने के क्या परिणाम निकलते हैं मैं अच्छी तरह से जानता हूं। बोलने की कोई भी तैयारी किए बिना मैं आया हूं।

शतकों से चले आ रहे धर्म का दिन अगर मनाना हुआ तो कौन-सा दिन तय किया

जनता, 20 जनवरी, 1951

जाए? कभी लगता है शिवरात्रि के दिन को यह सम्मान मिलना चाहिए, तो कभी लगता है यह दिन राम जयंति या कृष्ण जयंति के दिन मनाया जाए। हिंदू धर्म की संस्कृति द्वारा तय किए गए दिनों के अलावा कोई अन्य विकल्प हमारे दिमाग में नहीं आता। बुद्ध का दिन मनाया जाए यह कल्पना तक किसी के मन में आई नहीं होती। आश्चर्य की बात है कि क्यों ऐसा होता है इसकी वजह मेरी समझ में नहीं आती।

बुद्ध इस दुनिया में 80 वर्ष तक जिए। अपनी उम्र के 45 साल उन्होंने इस देश में प्रचार करने में बिताए। आज शंकराचार्य के पास जैसी मोटरगाड़ी है वैसी मोटरगाड़ी उनके पास नहीं थी। उनके पास सादी गाड़ी या घोड़ा तक नहीं था। यातायात का कोई साधन उन्हें उपलब्ध नहीं था। इसके बावजूद देश के कल्याण के लिए वह जम्मू से लेकर कन्याकुमारी तक पैदल घूमे। बौद्ध धर्म इस देश में 1200 सालों तक था। इस दौरान जिसने भिक्षा मांग कर अपना जीवन बिताया, कई मुसीबतें झेलीं आज इस देश में उसका कोई नाम तक नहीं लेता।

कभी-कभी झूठ की जय होती है, सच्चाई की जय नहीं होती। यह भी ऐसी ही एक बात है। लेकिन सब लोग यह बात ध्यान में रखें कि कभी न कभी सत्य की भी जय होगी ही और आज वह समय आ गया है । 1200 सालों का धर्म एक बार फिर इस देश का धर्म बनेगा इसका मुझे विश्वास है। (तालियां)

हिंदू धर्म किसी नदी की तरह है। दो नदियों का संगम बनता है और उससे एक तीसरी नदी पैदा होती है। हिंदू धर्म ऐसे ही नदी की तरह बना है। एक नदी का पानी साफ होता है और दूसरी नदी का पानी गंदा होता है। इन दोनों का जब मिलन होता है तब साफ पानी भी गंदा हो जाता है। इसी प्रकार हिंदू धर्म की नदी में दो तरह का पानी बह कर आया है। साफ बौद्ध धर्म की नदी और ब्राह्मणी धर्म का गलिच्छ नाला। इन दोनों के संगम के कारण हिंदू धर्म की नदी गंदली हो गई है। उसमें से गंदा और अच्छा पानी अलग करना होगा। तभी गंदगी साफ की जा सकती है।

यहां के भिक्षुमित्र ने बताया कि कई लोग दीक्षा लेना चाहते हैं लेकिन उनसे मैंने कहा कि बौद्ध होना आसान नहीं है। इसीलिए मैं और हमारे लोग मिल कर कुछ नियम बनाने वाले हैं। जो लोग उन नियमों का पालन करेंगे केवल उन्हें ही दीक्षा दी जाएगी। बौद्ध धर्म की दीक्षा लेने के बाद आप हिंदू धर्म की राय और देवता बौद्ध धर्म में नहीं ला सकते। घर में खंडोबा (भगवान की पूजा) और बाहर बुद्ध ऐसा नहीं चल सकता।

साथ ही, जिन हिन्दुओं को दीक्षा लेनी होगी उन्हें हिंदू धर्म की कुरीतियों का त्याग करना होगा। जात मानने वाले लोग बौद्ध बनते हैं और फिर बौद्ध धर्म को ब्राह्मण धर्म बनाते हैं। इस प्रकार बौद्ध धर्म की ही नष्ट करते हैं। बुरे रीति-रिवाजों को लेकर आप बौद्ध धर्म में नहीं आ सकते।

जिनके पास फुर्सत है वे यहां आएं और पहले जानें कि बौद्ध धर्म क्या है। उसके बाद अगर ठीक लगे तो ही बौद्ध धर्म का स्वीकार करें। भानुमति का कुनबा बनाकर नहीं चलेगा। बौद्ध धर्म स्वीकारते हैं तो केवल उसी का पालन करें, बाकी सब छोड़ दें।

इस समय धर्म में शिथिलता आई है। मैं कहता हूं कि धर्म की सबको आवश्यकता है। मेरे मतानुसार एक बात पक्की है। धर्म के बगैर समाज जिंदा नहीं रह सकता। समाज को धर्म चाहिए और वह धर्म केवल बौद्ध धर्म ही होना चाहिए। दुनिया के उद्धार के लिए आवश्यक समता, प्रेम, बंधुभाव आदि सब बातें बौद्ध धर्म में ही हैं। पिछले 20 सालों से मैंने धर्मों का अध्ययन किया है और लगभग हर धर्म के बारे में अध्ययन किया है। सभी धर्मों का गहन चिंतन-मनन करने के बाद मुझे लगता है कि दुनिया को केवल बौद्ध धर्म को ही अपनाना चाहिए।

सोचिए। किसी समय यह देश सुसंस्कृत था ऐसा कहा जाता है। तो फिर उस देश में 5 करोड़ अस्पृश्य कैसे पैदा हुए? करीब 5-7 करोड़ लोगों के लिए उपजीविका कमाने के लिए चोरी-चकारी करनी पड़े यह कैसे हुआ? अस्पृश्यता अपनाने वाला ा कोई धर्म दुनिया में नहीं है। तत्कालीन और वर्तमान के नेताओं ने उसे समाप्त करने की कोशिश क्यों नहीं कीं? चोरी-चकारी कर जीने वाली जाति जिसमें पैदा होती है उस संस्कृति को सुसंस्कृति कहा भी जा सकता है क्या? ऐसी जनजातियों को सुधारने की लोगों ने कोशिश ही नहीं की। स्पष्ट है कि कोई न कोई कमी रही ही होगी । हिंदू धर्म में 5 करोड़ लोग अस्पृश्य और 5-10 करोड़ लोग चोरी-चकारी करने वाले हैं तो आखिर क्यों? इस धर्म में ही कोई कमी है यही इसकी वजह है।

इस नये कार्य को आजमाकर देखें। उसका अध्ययन करें। ऐसे अध्ययन में शामिल हों। इस सुमंगल काम में शरीक होने के लिए मैं आपका अभिनंदन करता हूं।

277

अछूत समाज पर होनेवाले अत्याचारों का दलित प्रतिनिधि पर्दाफाश करें

भारत सरकार के कानून मंत्री और बहुजन समाज के नेता डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने रविवार दिनांक 15 अप्रैल, 1951 के दिन शाम दिल्ली में म्युटिनी रोड पर अम्बेडकर भवन की नींव का पत्थर रखा। यातायात मंत्री रफी अहमद किदवई इस कार्यक्रम के अध्यक्ष थे।

इस अवसर पर डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने कहा–

''दुख के साथ मुझे कहना पड़ रहा है कि ब्रिटिश राज में बहुजन वर्ग के लिए जितनी सुरक्षा प्राप्त थी उतनी सुरक्षा भारत की अपनी राष्ट्रीय सरकार के राज में नहीं है। ब्रिटिश राज में अस्पृश्य वर्ग को 12 प्रतिशत आरक्षण के प्रस्ताव का पूरा अनुसरण किया जाता था। लेकिन आज उस प्रस्ताव की कीमत सादे कागज जितनी भी नहीं रही। ब्रिटिश राज में अस्पृश्य वर्ग के लिए 12 प्रतिशत प्रतिनिधित्व देने वाले प्रस्ताव पर पूरी तरह अमल किया जाता था।

लोग कहते हैं कि हमें आजादी मिली है लेकिन अस्पृश्य वर्ग को आजादी मिली है यह मानने के लिए मैं तैयार नहीं हूं।

पंजाब में हमारे लोगों पर बुरे से बुरे जुल्म हो रहे हैं। इस तरह के जुल्म से परेशान चालीस लोग दिल्ली आए और राजघाट पर उन्होंने आमरण अनशन शुरू किया। दिल्ली के अखबारों ने इस खबर का पूरा बहिष्कार किया। इन लोगों ने करीब तीस दिनों तक अनशन जारी रखा लेकिन उनकी कोई खबर नहीं ली जा रही है यह देखकर उन्हें अनशन तोड़ना पड़ा। मुझे यकीन है कि जिन अखबारों ने उस खबर को नजरंदाज किया था वे ही दिल्ली में किसी बुढ़िया के एक दिन के अनशन की खबर भी बड़े शीर्षक देकर छापी होती। लेकिन अस्पृश्यों की वे खबर नहीं लेते।

पंजाब में सिक्खों और अन्य लोगों द्वारा अस्पृश्य महिलाओं को भगाए जाने की खबरें हैं। अस्पृश्यों पर विभिन्न तरह के अत्याचार किए जा रहे हैं। ग्रामीण इलाके में उन्हें 'जमीन जोतने नहीं दी जाती, लकड़ियां काटने नहीं देते।

जिनसे दलित वर्ग के प्रतिनिधित्व की उम्मीद की जा सकती है ऐसे 10 सदस्य

जनता : 21 अप्रैल, 1951

पंजाब के अस्पृश्यों में हैं। लोकसभा में पिछले दो सालों से मेरे सामने ऐसे तीस सदस्य बैठते हैं। उनमें से किसी को भी मैंने अस्पृश्यों के कल्याण के बारे में, उस वर्ग पर होने वाले अत्याचारों के बारे में कोई सवाल उठाते नहीं देखा। लोकसभा में फिलहाल बजट के बारे में चर्चा हो रही है। अनाज, मुद्रास्फीती, कपड़े और चीनी की किल्लत के बारे में सरकार की खिंचाई करने का अवसर कोई नहीं छोड़ता, लेकिन पंजाब में अस्पृश्यों पर अत्याचार हो रहे हैं उसके बारे में आप क्या कर रहे हैं? यह सवाल किसी ने भी नहीं उठाया।

ऐसे अगर हजारों सदस्य भी लोकसभा में हों तब भी अस्पृश्यों का क्या फायदा होगा? ऐसे मूक लोग क्या कर सकते हैं? मैं एक मंत्री हूं इसलिए मेरे मुंह पर ताला पड़ा है। मैं सरकार में नहीं था, तब जुल्म और जबरदस्तियों के खिलाफ मैं आवाज उठाया करता था। उस वक्त मैं कोई भी अन्याय सरकार की नजरों में ला सकता था। अब मेरे मुंह पर ताला पड़ा है। जिन सदस्यों से अस्पृश्य वर्ग की आवाज उठाने की उम्मीद होती है वे भी चुप बैठते हैं।

देश के विभिन्न हिस्सों से अस्पृश्य वर्ग के हजारों लोग मदद पाने के लिए दिल्ली आते हैं। उनके लिए दिल्ली के अम्बेडकर भवन में इंतजाम किया जाने वाला है। यह भवन सवर्ण हिंदुओं से एक पैसा लिए बिना दलितों को अपनी हिम्मत से खड़ा करना चाहिए।

गांधीजी द्वारा अस्पृश्योद्धार का आंदोलन अपने हाथ में जबसे लिया तब से सवर्ण हिंदुओं के नजरिए में फर्क आया है यह बात मैं मानता हूं। लेकिन श्रीमान शर्मा जैसे व्यक्तियों की सहानुभूति महत्वपूर्ण होने के बावजूद हमें अपनी हिम्मत के सहारे ही डटे रहना है। अपने ऊपर ही हमें निर्भर रहना होगा । भूखे आदमी को रोटी चाहिए केवल सहानुभूति से काम नहीं चलता। हम अगर एकजुट होकर खड़े हो जाएं तो अपने हितैषियों की मदद से और उनके सहयोग से हम अपनी स्थिति में सुधार ला सकते हैं।

पहले केंद्रीय सरकार के दफ्तरों में एक भी अस्पृश्य वर्ग का व्यक्ति नहीं था। अस्पृश्य व्यक्ति तब पट्टे वाला यानी सिपाही भी नहीं बन सकता था। उसके बाद हमारी कोशिश रंग लाती रहीं और अस्पृश्यों को नौकरियों में आरक्षण मिला। उनकी शिक्षा के लिए सालाना तीन लाख रुपए मंजूर किए गए।''

भवन को अपना नाम दिए जाने के प्रति बाबासाहेब ने नाराजगी स्पष्ट की। नाम अगर बदला गया तो उन्हें खुशी होने की बात भी उन्होंने कही।

278

बुद्ध ने वर्णाश्रम धर्म नकारा

दिल्ली शेड्यूल्ड कास्टस् वेलफेयर एसोसिएशन और भारतीय महाबोधि सोसाइटी के संयुक्त तत्वावधान में नई दिल्ली में दिनांक 19, 20 और 21 मई, 1951 के दिन बडी धूम-धाम से बुद्ध जयंति मनाई गई।

शनिवार दिनांक 19 को दिल्ली में बहुत बड़ा जुलूस निकाला गया था। रीडिंग रोड के बुद्ध विहार के पास से इरविन रोड, कनाट सर्किल, पंचकुइयां रोड़ आदि गुजरते हुए दिल्ली शेड्यूल्ड कास्टस् वेलफेयर एसोसिएशन के अम्बेडकर भवन के पास वाले मैदान में जुलूस विसर्जित हुआ।

रविवार दिनांक 20 को एक बड़ी सभा हुई। इस सभा के अध्यक्ष भारत में फ्रांस के वकील ने किया था। इस सभा में भारत में फिनलैंड के प्रतिनिधि ने ना ह्यागो वॉलवन, बर्मा के कौंसिल जनरल ने ना टिन मांग गी, सिलोन के हाइकमीश्नर ने. ना. कुमारस्वामी, नागपूर के प्रो. कुलकर्णी उपस्थित थे। सभा में डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने कहा-

अध्यक्ष महाराज, बहनों और भाईयो,

यहां आए आपको दो-तीन घंटे बीते होंगे और स्पष्ट है कि आपको अपने घर लौटने की जल्दी हो रही होगी। इसलिए मैं ज्यादा समय नहीं लूंगा। मुझसे पहले के वक्ताओं ने भगवान बुद्ध के चरित्र के बारे में बहुत सी बातें बताई हैं। मैं जो बताना चाहता हूं वह जरूरी नहीं कि मैं आज ही बताऊं। ऐसा नहीं कि आज के बाद हमारी मुलाकात नहीं होगी। हम बार-बार मिलने वाले हैं। इसके बावजूद कई लोगों का आग्रह है कि मुझे कुछ कहना होगा इसलिए मुझे थोड़ा बोलना पड़ेगा।

मेरी इच्छा है कि भारत के सभी अस्पृश्य बुद्ध की शिक्षा आत्मसात करें और उसी के अनुसार अपना व्यवहार रखें। पिछले वर्ष बुद्ध जयंति के अवसर पर हम यहां इकठ्ठा हुए थे। तब इतनी भीड़ नहीं थी। आज यहां इतने लोग इकठ्ठा हुए हैं, एक साल में लोगों में इतना रुझान पैदा हुआ है यह देखकर मुझे अच्छा लग रहा है। साथ ही, अस्पृश्यों से संबंधित खबरों को जगह न देने वाले अखबारों में कल के विशाल जुलूस की खबर भी मुझे पढ़ने को मिली। आपने जो प्रगति की है वह निश्चित रूप से प्रशंसनीय है।

बुद्ध जयंति मनाना कोई बहुत बड़ी बात नहीं है। क्योंकि बड़े-बड़ों के काम के

जनता : 26 मई, 1951

बारे में आदर करना है। लेकिन हम बुद्ध जयंति केवल इसीलिए मनाते हैं कि भारत में समाज का पतन न हो। इसीलिए, बुद्ध की शिक्षा स्वीकारने के लिए लोगों से कहने से पहले बौद्ध धर्म और हिंदू धर्म का फर्क उन्हें ठीक से समझाया जाना चाहिए। चतुर्वणीय मूर्तिपूजा और आध्यात्मिक सिद्धांत के स्वरूप में सामाजिक भेदभाव पर आधारित हिंदू धर्म बना है। लोगों के सामाजिक पतन के लिए और राष्ट्र के ह्रास के कारण बने ब्राह्मणतंत्र में और आज के हिंदू धर्म में मुझे तो कोई फर्क दिखाई नहीं देता। हिंदू धर्म में शांति, एकता नहीं इसकी वजह चतुर्वणीय व्यवस्था पर आधारित हिंदू धर्म है इस बात को ज्यादातर हिंदू लोग मान रहे हैं। लेकिन चतुर्वणीय व्यवस्था पर आधारित धर्म के इस चौखटे को कैसे तोड़ना है, हिंदू धर्म में शांति और एकता की स्थापना कैसे करनी है यह बात कोई नहीं जानता। सही-गलत के बारे में सोच कर अनुचित बातों का त्याग न करने का एक ही कारण है कि इस अनुचितता के कारण अर्थात् कि चतुवर्णीय के कारण हिंदुओं का फायदा हो रहा है ऐसा लगता है।

सभी हिंदुओं से मैं यही कहना चाहता हूं कि वे इन पोंगापंथी मान्यताओं से, वर्णाश्रम पद्धति से छुटकारा पाएं। लेकिन यह होगा कैसे? क्योंकि वे वेदाज्ञा को प्रमाण मानते हैं। और वेदों में वर्णाश्रम पद्धति को श्रेष्ठ बताया गया है। धर्म में सुधार होना चाहिए ऐसा केवल कहना भर काफी नहीं है। उसके लिए आचार-विचारों में आमूलचूल बदलाव लाना जरूरी है। उसके बगैर सुधार आना संभव ही नहीं है। उसके बिना सुधार की आशा करना ही व्यर्थ है।

बौद्ध धर्म से द्वेष करने वाले ब्राह्मणों से मैं यही पूछना चाहता हूं कि बुद्ध को शुरुआत में जो भिक्षु मिले थे वे कौन थे? उनमें से 90 प्रतिशत ब्राह्मण थे। कुछ हिंदू लोगों का कहना है कि बौद्ध धर्म को स्वीकार करना हो तो करो, लेकिन इसके लिए ब्राह्मणतंत्र को क्यों कोसा जाता है? इसका जवाब बहुत आसान है। वर्णाश्रम धर्म पर आधारित ब्राह्मणतंत्र पर, हिंदू धर्म पर प्रहार किए बगैर, उसका स्वरूप खोल कर बताए बगैर बौद्ध धर्म का प्रसार संभव नहीं। बौद्ध धर्म की प्रगति की राह का वह रोड़ा बहुत बड़ा है। साफ पानी और गंदे पानी के प्रवाहों को अगर इकठ्ठा बहने दिया गया तो साफ पानी गंदा हो जाएगा। इसी प्रकार बौद्ध धर्म के सही सिद्धान्तों के साथ हिंदू धर्म के गंदे पानी को बहने नहीं देना चाहिए।

बौद्ध धर्म की तरह ही हिंदू धर्म में भी अहिंसा पर जोर दिया गया है यह बात सही है। लेकिन वर्णाश्रम पद्धति को हिंदू धर्म की बुनियाद बनाए जाने के कारण एक वही बात हिंदू धर्म का धिक्कार करने के लिए काफी है। आज हिंदू धर्म में जहां देखो वहां ढोंग है। ब्राह्मण लोग मंदिरों में इसीलिए रहते हैं क्योंकि उन्हें वहां एशोआराम की जिंदगी व्यतीत करने का मौका मिलता है, न कि इसलिए कि वहां रह कर वे भगवान

की भक्ति कर पाते हैं। पिछले वर्ष सिलोन से लौटते वक्त मैं मद्रास गया था। तब वहां के कई हिंदुओं ने मुझसे मंदिर देखने की विनति की। मुझे आश्चर्य लगा, मैं गया भी। मैंने घूम-घूम कर हिंदुओं के मंदिर देखे। वहां ब्राह्मण लोग मूर्ति पूजा करते थे, धूप-कपूर जलाते थे। इसके अलावा वे और कोई काम नहीं करते हैं ऐसा मुझे पता चला। मतलब कि यह उनका एक महत्वपूर्ण उद्योग बना! उनके दूसरे उद्योग के बारे में मुझे पता चला कि उन्हें बहुत भोजन खाना पड़ता है। सुबह का भोजन, दोपहर का भोजन, शाम का भोजन। भोजन का बहुत बड़ा उद्योग वे लोग करते हैं। मैंने उनसे पूछा कि यह सब कैसे चलता है? जवाब मिला कि मद्रास सरकार से उन्हें सालाना डेढ लाख रुपयों की ग्रांट मिलती है। कुछ मंदिरों में सोने-चांदी की मूर्तियां दिखाई दीं। इनमें से कुछ मूर्तियों की कीमत करोड़ों रुपयों में ही हो सकती है। एक तरफ देश में लोग भूख से मर रहे हैं। लोग पैसे-पैसे के लिए मुहताज हैं और दूसरी ओर अनाज का ऐसा प्रयोग और रुपयों-पैसों की ऐसी खैरात। और यह सब हिंदू धर्म के यज्ञों के लिए। फिर क्यों न ये लोग हिंदु धर्म की जयकार करेंगे!

धर्म विशुद्ध सिद्धांतों पर आधारित होना चाहिए। बुद्ध कभी वर्णाश्रम धर्म में विश्वास नहीं रखते थे। हमें यह बात नहीं भूलनी चाहिए कि हम सब एक से हैं। मनुष्य-मनुष्य के बीच किसी तरह का भेदभाव नहीं होना चाहिए। जन्म पर कोई श्रेष्ट या निम्न नहीं हो सकता। श्रेष्टता या नीचता केवल अपनी करनी के आधार से ही प्राप्त होती है। बुद्ध ने ये बातें बताई हैं । लोग अगर फिर बौद्ध धर्म का स्वीकार करेंगे तो यह देश एक बार फिर वैभवसंपन्न बनेगा किसी और तरह से जातिभेद खत्म होना संभव नहीं है। सचमुच अगर कोई जाति-धर्म खत्म करना चाहते हैं तो उनके लिए केवल यही एक उपाय है कि वे बौद्ध धर्म को स्वीकार करें।

लेकिन हम बिना किसी हड़बड़ी मचाए अपने उद्देश्य को हासिल करेंगे। जिनके हाड़-मांस में हिंदू धर्म रच-बस गया है उन बुजुर्गों के लिए तुरंत अपना धर्म त्यागना संभव नहीं होगा और उनसे मैं ऐसा कहूंगा भी नहीं। लेकिन युवाओं के बारे में मुझे बहुत विश्वास है। वे जरुर सही मार्ग अपना कर अपना, समाज का और राष्ट्र का हित करेंगे।

279

उच्च शिक्षा ही हमारी सभी सामाजिक बीमारियों का इलाज है

पीपल्स एजुकेशन सोसाइटी द्वारा चलाए जाने वाले औरंगाबाद के मिलिंद महाविद्यालय की इमारत की बुनियाद भारत के पहले राष्ट्रपति डॉ. राजेंद्रप्रसाद के हाथों 1 सितंबर, 1951 के दिन रखी गई। इस अवसर पर डॉ. राजेंद्रप्रसाद ने अस्पृश्य और गरीब लोगों के बीच बाबासाहेब द्वारा किए जा रहे शिक्षा प्रसार के कार्य की प्रशंसा की। पीपल्स एजुकेशन सोसाइटी के उद्देश्य और लक्ष्य की उन्होंने भरसक प्रशंसा की। राष्ट्रपति द्वारा नींव का पत्थर रखे जाने से पहले डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का भाषण हुआ–

अध्यक्ष महोदय,

जिस कॉलेज की नींव रखने की मैं आपसे विनति कर रहा हूं वह यह कॉलेज 19 जून 1950 के दिन अस्तित्व में आया। कॉलेज वोल कर और उसका कामकाज देखने वालों के बारे में तथा कॉलेज क्यों शुरु किया गया इस बारे में आज अगर दो शब्द कहे जाएं तो गलत नहीं होगा, ऐसा मुझे लगता है। पीपल्स एजुकेशन सोसाइटी, मुंबई इस संस्था द्वारा यह कॉलेज चलाया जाता है और इस संस्था का अध्यक्ष में हूं। यह सोसाइटी 1945 में स्थापित की गई। पूरे देश में और खासकर मुख्य रूप से पिछड़े वर्गों के बीच शिक्षा का प्रसार करना इस संस्था का प्रमुख लक्ष्य और उद्देश्य है। इसी उद्देश्य के अनुसार 1946 में मुंबई में सिद्धार्थ कॉलेज खोला गया। मुझे बेहद खुशी है कि इन चार सालों में ही छात्रों की संख्या, देसी–विदेशी खेल और शिक्षा का दर्जा इन सभी मोर्चों पर सिद्धार्थ कॉलेज मुंबई राज्य में महत्वपूर्ण स्थान हासिल किया है। आज इस कॉलेज में 800 छात्र हैं। अन्यत्र छात्रों की इतनी बडी संख्या कम ही देखने में आती हैं। इंटर कॉलेज खेल प्रतियोगिताओं में ऐसा कोई खेल नहीं होगा जिसमें सिद्धार्थ कॉलेज ने विजय प्राप्त नहीं की हो। मुंबई विश्वविद्यालय की मशहूर छात्रवृत्तियां और पुरस्कार भी कॉलेज ने जीते हैं। सिद्धार्थ कॉलेज की इस उज्जवल परंपरा के बारे में पीपल्स एजुकेशन सोसाइटी को गर्व है।

मुंबई के इस कॉलेज के पिछले चार सालों के इस अनुभव से उत्साहित होने के कारण ही पीपल्स एजुकेशन सोसाइटी की गवर्निंग बॉडी को लगता है कि अपने काम को विस्तार दिया जा सकता है।

शायद यह पूछा जाए कि कॉलेज खोलने के लिए हैदराबाद संस्थान को ही क्यों चुना

जनता : 15 और 22 सितंबर, 1951

गया? कारण बेहद आसान है। हैदराबाद संस्थान शिक्षा और उच्च शिक्षा में बेहद पिछड़ा हुआ है। हैदराबाद संस्थान का विस्तार चौरासी हजार वर्ग मील है और जनसंख्या एक करोड़ साठ लाख है। मार्च, 1949 में संस्थान में कुल 17 कॉलेज थे और इन कॉलेजों में पढ़ने वालों की संख्या 7615 थी। इन आंकड़ों की तुलना मुंबई राज्य के आंकड़ों के साथ करें। मुंबई राज्य का विस्तार एक लाख पंद्रह हजार पांच सौ सत्तर वर्ग मील है और जनसंख्या 3.23 करोड़ है। 31 मार्च 1950 के दिन उसके कॉलेजों की संख्या 90 और उसमें पढ़ने वाले छात्रों की संख्या कुल 50356 थी।

हैदराबाद संस्थान उच्च शिक्षा के मामले में कितना पिछड़ा हुआ है यह इन आंकड़ों से पता चलता है। सवाल यह है कि ऐसा क्यों है? मैं ज्यादा गहराई में नहीं जाना चाहता। अगर लगे तो हैदराबाद सरकार को मैं अलग से एक मसौदा विचारार्थ भेजूंगा। इन हालात में हमारे काम के विस्तार के लिए हैदराबाद संस्थान ही सही है, ऐसा हमें लगता है।

शिक्षा के मामले में हैदराबाद संस्थान का पिछड़ापन अगर छोड़ भी दें तो एक और खेदजनक घटना ध्यान खींचती है। वह है शिक्षा से संबंधित छूट में बरती जा रही असमानता। इन स्थितियों का बिल्कुल समर्थन नहीं किया जा सकता। उच्च शिक्षा का जो भी थोड़ा बहुत प्रसार दिखाई देता है वह केवल हैदराबाद शहर में ही है। कुल सत्रह कॉलेजों में से इंटर तक शिक्षा देने वाले तीन कॉलेज अगर छोड़ दें तो अन्य सभी कॉलेजों के संस्थान राजधानी वाले शहर हैदराबाद में ही हैं। 80 लाख जनसंख्या वाले तेलंगाणा में वारंगल में इंटर तक के अन्य तीन कॉलेजों में से एक कॉलेज है। पैंतालीस लाख जनसंख्या वाले मराठी हिस्से वाले औरंगाबाद में दूसरा इंटर कॉलेज है और पैंतीस लाख जनसंख्या वाले हिस्से के लिए कर्नाटक में तीसरा कॉलेज है।

इस कमी को दूर करने के लिए सोसाइटी ने हैदराबाद संस्थान को चुना। औरंगाबाद की जगह संस्थान के तेलंगाना अथवा कर्नाटक में सोसाइटी कॉलेज खोल सकती थी ऐसा शायद कोई कहे। तो, जातीय या भाषाई भावनाओं से हमारी सोसाइटी का कुछ लेना-देना नहीं है। सोसाइटी का प्रमुख उद्देश्य है जहां-जहां भी मौका मिले वहां शैक्षिक सेवा देना। सोसाइटी की इच्छा थी कि मुंबई का सिद्धार्थ कॉलेज चलाने में जैसी सफलता मिली उसी प्रकार की सफलता इस नई कोशिश में भी मिले।

मुंबई के कुछ कुशल अध्यापकों में से कुछ लोगों को यहां ले आने के लिए सोसाइटी उत्सुक थी। लेकिन पता चला कि केवल मराठी बोलने वाले अध्यापक ही राजी-खुशी यहां आने के लिए तैयार हुए और केवल इसी कारण सोसाइटी ने औरंगाबाद में कॉलेज खोला।

कॉलेज ने जो प्रगति की है उससे कहा जा सकता है कि सोसाइटी द्वारा औरंगाबाद का चुनाव करना योग्य ही था। कॉलेज की प्रगति के बारे में जानकारी देने से पूर्व

कॉलेज की कुछ विशेष नीतियों के बारे में पता चले इसलिए कॉलेज की कुछ खास बातें आपको मैं बताना चाहता हूं।

दर्ज करने योग्य बात यह है कि इस कॉलेज में लड़कों के साथ लड़कियां भी पढ़ रही हैं। सामाजिक पिछड़ापन और सहशिक्षा की गंध भी न होने वाले इस क्षेत्र में लड़कों की बराबरी में लड़कियों को भी शिक्षा देकर इस कॉलेज ने एक नई परंपरा की नींव डाली है। इस कॉलेज में सभी जाति और धर्म की लड़कियां पढ़ रही हैं। लड़कियों की शिक्षा को बढ़ावा मिले और वे बड़ी संख्या में कॉलेज में पढ़ाई करें इसलिए शहर से कॉलेज तक आने के लिए कॉलेज की ओर से एक बस का भी प्रबंध किया गया है। इस कॉलेज के दरवाजे सभी धर्म के बच्चों के लिए खुले हैं। यहां किसी प्रकार जातिवाद नहीं। कॉलेज के प्रोफेसरों में सभी धर्मों और जातियों के प्रोफेसर हैं। छात्रों में विद्या, विनम्रता और चरित्र का निर्माण करना कॉलेज का लक्ष्य है।

अस्पृश्य और पिछड़े वर्गों के छात्रों की शिक्षा की ओर यह कॉलेज विशेष ध्यान देता है। जिस संघर्ष के लक्षण हम आज देख रहे हैं उस निम्न वर्ग और उच्च वर्ग के बीच के संघर्ष को टालने के लिए सभी कॉलेजों को यही करना होगा। अस्पृश्य छात्रों की संख्या धीरे-धीरे बढ़ रही है। आज कॉलेज में 26 अस्पृश्य छात्र हैं और उनमें कुछ छात्राएं भी हैं।

एक साल की इस कॉलेज की प्रगति को देखकर यह साबित होता है कि ऐसे कॉलेज की इस क्षेत्र में जो कमी थी उसे इस कॉलेज ने पूरा किया है। 19 जून 1950 के दिन कॉलेज खुला तब केवल 140 छात्र थे। आज छात्रों की संख्या 332 है और जगह की कमी के कारण पहले वर्ष में प्रवेश की प्रक्रिया बंद करनी पड़ी।

कॉलेज को सभी साधन सम्पन्न बनाने के लिए सोसाइटी की गवर्निंग बॉडी ने कोई अवसर नहीं छोड़ा। कॉलेज द्वारा 1 लाख 26 हजार रुपए खर्च कर लेबोरेटरी बनाई और उसमें सभी प्रकार की सुविधा और उपकरण उपलब्ध कराए हैं। जानकार डेमोन्स्ट्रेटर की देखरेख में साइंस का हर छात्र खुद प्रयोग करता है।

कॉलेज को खुले एक वर्ष ही हुआ है और कॉलेज में एक सुसज्जित लाइब्रेरी भी है उसमें कॉलेज के लिए जरूरी सभी पुस्तकें उपलब्ध हैं। सोसाइटी ने इस लाइब्रेरी पर चालीस हजार रुपए खर्च किए हैं और एक साल के अंदर ही चार हजार किताबें हैं। साहित्यिक और चौंसठ विषयों की पत्रिकाएं यहां उपलब्ध हैं। सोसाइटी चाहती है कि कॉलेज के छात्र तथा अनुसंधान करने वाले छात्रों के लिए यह लाइब्रेरी उपयुक्त हो।

छात्रों के शारीरिक विकास के लिए खेल और कसरत की ओर खास ध्यान दिया जाता है। छात्रों के वैज्ञानिक और बौद्धिक विकास की ओर भी ध्यान दिया जाता है। विज्ञान से संबंधित विषयों की ओर छात्रों का रुझान हो इसलिए तकनीकी, औद्योगिक

और अनुसंधानात्मक स्थलों की यात्राएं आयोजित की जाती हैं। चर्चा (मंथन) साहित्य और विज्ञान के विभागों की स्थापना की गई है और कई छात्र इनका लाभ ले रहे हैं।

केवल छात्रों के लिए ही नहीं, आम जनता के लिए भी कॉलेज द्वारा शिक्षा देने की कोशिश की जा रही है। इस दिशा में यूनेस्को द्वारा सुझाए गए 'अनाज और जनता' विषय पर एक व्याख्यानमाला आयोजित की गई थी। यह व्याख्यानमाला बहुत लोकप्रिय हुई और अखबारों ने भी उसका स्वागत किया । कॉलेज और जनता के बीच का यह संबंध इसी तरह बनाए रखने की कोशिश कॉलेज करेगा।

अभी यह कॉलेज आरंभिक स्थिति में है लेकिन किसी क्षेत्र में भी उन्नीस नहीं। बल्कि, कॉलेज की हर बात में जिंदादिली है और वह बड़ी तेजी से बढ़ता जा रहा है।

लोगों की आंखों में चढ़ जाए ऐसा कुछ अगर कॉलेज ने कमाया हो तो उसका सारा श्रेय केवल कॉलेज को ही जाए यह मैं नहीं कहता। इसके और भी हिस्सेदार हैं। और इसके लिए सोसाइटी सबके प्रति कृतज्ञ है। इसकी मैं घोषणा करता हूं। इस सफलता के हिस्सेदारों में मेरे जो स्नेही हैं उनमें हैदराबाद के पूर्व शिक्षा मंत्री राजा धोंडी राज बहादुर एक हैं। उनकी मदद के बगैर कॉलेज का खुलना संभव ही नहीं था। उनके बाद हैदराबाद के आज के मुख्यमंत्री एम. के. वेलोदी, अर्थमंत्री सी. वी. एस. राव, रेवेन्यू मंत्री शेषाद्री, शिक्षा मंत्री रामकृष्ण राव, साथ ही मेरे सहयोगी मित्र गोपालस्वामी अयंगार, मिनिस्टर फॉर स्टेट, उस्मानिया विश्वविद्यालय के कुलपति नवाब अलीयावर जंग बहादुर, हैदराबाद शेड्यूल्ड कास्ट ट्रस्ट फंड के सचिव आयु. आबासे, औरंगाबाद के तत्कालीन कलक्टर आयु. राजवाड़े, लैंड एक्वीजीशन अफसर अश्पुत्रे, हैदराबाद स्टेट कॉंग्रेस के अध्यक्ष बिंदू, पी. डब्ल्यू. डी. मंत्री नवाबजंग यावरजंग, पी. डब्ल्यूडी. के आर्किटेक्ट दवे इन सबके प्रति मैं तहेदिल से आभार प्रकट करता हूं। आभार प्रकट करते समय मैं कॉलेज के प्रिंसिपल और अन्य सहयोगियों को नहीं भूल सकता क्योंकि, उन्होंने अपना घर-बार मुंबई में छोड़ औरंगाबाद आने का अभूतपूर्व त्याग किया है।

फिलहाल इस कॉलेज में बी. ए. और इंटर साइंस तक की पढ़ाई होती है। लेकिन अगले वर्ष साइंस उपाधि तक की कलासिय्स खोलकर उसे भी पूरे कॉलेज का स्वरूप दिया जाएगा।

फिलहाल कॉलेज किराए के बंगले में चलाया जा रहा है। ये बंगले कैंटोनमेंट विभाग में होने के कारण दो महीनों के नोटिस पर कभी भी जगह खाली कराने के आदेश मिलिट्री हमें दे सकती है। हालात बेहद संवेदनशील हैं। इन हालात के कारण कॉलेज के स्थायी अस्तित्व के बारे में संदेह पैदा होता है। कॉलेज की जरूरत के मुताबिक वर्तमान जगह बहुत ही छोटी है। साथ ही छात्र होस्टल की मांग कर रहे हैं। क्योंकि स्थानीय छात्रों से बाहर से आने वाले छात्रों की संख्या अधिक है। और शहर में अन्यत्र कहीं रहने की

व्यवस्था नहीं है। इन सभी कारणों से कॉलेज की अपनी इमारत का होना अत्यंत जरूरी हो गया है। उस नजरिए से सोसाइटी ने कॉलेज की इमारत बनाने का काम भी शुरु कर दिया है। बारह सौ छात्रों के लिए उपयुक्त क्लासें, एक सभागृह और एक होस्टल होगा। इसके लिए सोसाइटी ने शहर से ढाई कि. मी. की दूरी पर एक पचपन एकड़ जगह खरीदी है। इस जगह के आसपास का स्थान रमणीय और सुंदर है और पास ही तैरने की और बोटिंग की सुविधा भी उपलब्ध है। औरंगाबाद की मशहूर पनचक्की भी वहीं है।

इस प्रकार यह कॉलेज हैदराबाद संस्थान और औरंगाबाद शहर दोनों को प्रख्यात बनाने का सोसाइटी का मंसूबा है। हालांकि, कॉलेज को ऐसी स्थिति प्राप्त होगी या नहीं इस बारे में सोसाइटी को चिंता लगी रहती है। कॉलेज के इस पहले साल में ही सोसाइटी को 1 लाख 7 हजार रुपयों की कमी झेलनी पड़ी। छात्रों की संख्या बढ़ने के कारण इस वर्ष भी थोड़ी कमी झेलनी होगी। इसके अलावा कुछ अन्य कारण हैं जिनकी वजह से अनिश्चित काल तक इस प्रकार की कमी को झेलना पड़ेगा और शायद कॉलेज चलाने की सोसाइटी की कोशिश असफल होगी। वे कारण बेहद गंभीर हैं और बहुत कम लोग उनके बारे में जानते हैं। इसलिए मैं चाहता हूं कि उन कारणों को स्पष्ट करना आवश्यक है।

पहला कारण है उस्मानिया विश्वविद्यालय के इंटर तक के कॉलेज का अस्तित्व। पीपल्स एजुकेशन सोसाइटी द्वारा कॉलेज खोले जाने से पहले से ही उस्मानिया विश्वविद्यालय का यह कॉलेज यहां है यह सच है। लेकिन दोनों कॉलेज ठीक से चलें इतनी संख्या में छात्रों के न होने के कारण वह कॉलेज सोसाइटी के कॉलेज से प्रतिस्पर्धी की तरह पेश आता है। संस्थान में ऐसे कई शहर हैं जहां इमारत की सुविधा है लेकिन कॉलेज नहीं हैं। संस्थान की प्रजा तथा अपने फायदे के नजरिए से ऐसे ही किसी शहर में इस कॉलेज को स्थानांतरित करना उस्मानिया विश्वविद्यालय के लिए कठिन नहीं है। उस्मानिया विश्वविद्यालय अपना कॉलेज किसी और शहर में ले जाएगी ऐसा सोसाइटी से कहा गया था। लेकिन अब इस कॉलेज को औरंगाबाद शहर में ही रखने की उस्मानिया विश्वविद्यालय की कोशिश जारी है। विश्वविद्यालय के सभी छात्रों की व्यवस्था सोसाइटी के कॉलेज में हो सकती है, जबकि उस्मानिया विश्वविद्यालय के कॉलेज की हालत इतनी खस्ता है कि जगह की कमी के कारण वे अपनी लैबोरेटरी कालेअरक औरंगाबाद के निजाम सरकार का पुराना महल) की इमारत में ले जा रहे हैं। पता चला है कि, इस काम के लिए 10,000 रुपए मंजूर किए गए हैं। लेकिन कॉलेज के लिए योग्य सरकारी इमारतें होने वाले मराठवाड़ा क्षेत्र के मोमिनाबाद शहर में ही कॉलेज और लैबोरेटरी साथ में ले जाना क्या अधिक सुविधाजनक नहीं होगा? इस प्रकार एक और जिले में उच्च शिक्षा की सुविधा उपलब्ध हो सकेगी और सोसाइटी के कॉलेज को भी बेकार की प्रतिस्पर्धा से मुक्ति मिलेगी।

दूसरी मुश्किल फीस से संबंधित है। उस्मानिया विश्वविद्यालय को अपने अधिकार में कॉलेज की फीस तय करने का अधिकार है। उस्मानिया विश्वविद्यालय में कम से कम मानी जाने वाली फीस यानी सालाना 60 रुपये ली जाती है। यह सच है कि, पीपल्स एज्युकेशन सोसाइटी को छात्रों से सालाना 120 रुपयों की फीस लेने की इजाजत उस्मानिया विश्वविद्यालय की ओर से दी गई है। इसके बावजूद नजदीकी क्षेत्र नासिक और खानदेश में चलने वाले मुंबई विश्वविद्यालय के कॉलेजों में ली जाने वाली फीस की तुलना में यह आंकड़ा बहुत कम है। फीस की कमी का संस्थान की प्रजा की आर्थिक स्थिति से कुछ लेना-देना नहीं है। उसकी आर्थिक स्थिति आसपास के संस्थानों की प्रजा की आर्थिक स्थिति से किसी तरह उन्नीस नहीं है।

आय के एक हिस्से के रूप में विश्वविद्यालय छात्रों से प्राप्त होने वाली फीस की ओर नहीं देखती इसलिए उनके लिए इतनी कम फीस रखने से कोई फर्क नहीं पड़ता। पुराने करार (चार्टर) के अनुसार हैदराबाद सरकार सरकारी महसूल को ही विश्वविद्यालय की सभी प्रकार की आय मानती थी। विश्वविद्यालय केवल वसूल करने वाला एजेंट माना जाता था। उसे आय से कुछ लेना-देना नहीं होता था। विश्वविद्यालय की प्राप्ति सरकार से मिलने वाली सालाना ग्रांट ही थी।

तीसरे कारण का संबंध प्रोफेसरों की तनख्वाह के अनुपात से है। उस्मानिया विश्वविद्यालय को अपने अधिकार में निजी कॉलेज के प्रोफेसर वर्ग की तनख्वाह तय करने का हक है। औरंगाबाद के उस्मानिया विश्वविद्यालय के प्रोफेसरों की तनख्वाह का अनुपात निम्नानुसार है-

पद	तनख्वाह रुपयों में
प्रिंसिपाल	1200-1700
प्रोफेसर	800-1500
लेक्चरार	300-800
रीडर	350-800

औरंगाबाद के पीपल्स एज्युकेशन सोसाइटी के कॉलेज के लिए विश्वविद्यालय द्वारा समर्थित तनख्वाह का अनुपात निम्नानुसार है -

पद	तनख्वाह रुपयों में
प्रिंसिपाल	500-700
लेक्चरार	250- 400
ज्युनियर लेक्चरार	180-325

उस्मानिया विश्वविद्यालय के कॉलेजों में प्रोफेसरों की तनख्वाह का अनुपात निःसंशय बहुत अधिक है। उस्मानिया विश्वविद्यालय ने सोसाइटी के कॉलेज के लिए तनख्वाह का जो अनुपात तय किया है वह सोसाइटी द्वारा अपने प्रोफेसरों के लिए तय की गई तनख्वाह की रकम से कुछ कम है यह सच है, लेकिन पड़ोस के नासिक और खानदेश जिलों के कॉलेज की फीस के फर्क और तनख्वाह के अनुपात के साथ तुलना करें तो यह अनुपात बहुत अधिक है और वह कॉलेज पर आर्थिक बोझ ही बन जाता है।

चौथा कारण सरकारी ग्रांट के बारे में है। हैदराबाद संस्थान की कॉलेज शिक्षा उस्मानिया विश्वविद्यालय का एकाधिकार ही हो गया है। उच्च शिक्षा की सभी जिम्मेदारियों से खुद को मुक्त रखते हुए हैदराबाद सरकार ने वह जिम्मेदारी उस्मानिया विश्वविद्यालय को सौंप रखी है। सरकार की जिम्मेदारी केवल संस्थान की कॉलेज शिक्षा के लिए उस्मानिया विश्वविद्यालय को ग्रांट देना भर रह गई है। पीपल्स एजुकेशन सोसाइटी को उम्मीद थी कि इसी रकम से अपने कॉलेज को भी ग्रांट मिलेगी। लेकिन उस्मानिया विश्वविद्यालय का युक्तिवाद है कि संलग्न कॉलेजों के वर्चे चलाना भर उनकी जिम्मेदारी है और अन्य विश्वविद्यालयों से संलग्न कॉलेजों का इस ग्रांट पर कोई अधिकार नहीं। इसी कारण कि सोसाइटी का कॉलेज अन्य विश्वविद्यालय से संलग्न होने के कारण उसे ग्रांट देने से उस्मानिया विश्वविद्यालय द्वारा इनकार किया गया। सरकार का यह भी कहना है कि हम जितनी ग्रांट देने के लिए बंधे हैं उतनी ग्रांट हम उस्मानिया विश्वविद्यालय को दे चुके हैं। इसलिए सोसाइटी के कॉलेज के ग्रांट की जिम्मेदारी अपने ऊपर नहीं है और हम और कुछ कर नहीं सकते हैं। इससे हुआ यह है कि सभी तरह के सालाना घाटे का बोझ सोसाइटी को वहन करना पड़ रहा है।

परिणामस्वरूप ये सभी कारण घातक हैं और अब कॉलेज के सामने मुश्किल समस्या खड़ी हुई है। कॉलेज सभी ओर से मुश्किलों से घिरा है और उनसे पार पाने में असमर्थ है। कॉलेज को सालाना ग्रांट देने से मना किए जाने के कारण, बहुत कम फीस लिए जाने के कारण और प्रतिस्पर्धी कॉलेज के कारण आर्थिक स्थितियों पर प्रतिकूल असर हो रहा है। अधिक वेतन के कारण खर्च का बोझ ज्यादा ही बढ़ गया है।

कॉलेज का भविष्य पूरी तरह इन मुश्किलों के हल होने पर निर्भर है। मुझे उम्मीद है कि उस्मानिया विश्वविद्यालय और संस्थान की सरकार की संयुक्त कोशिश से ये मुश्किलें दूर की जाएंगी और कॉलेज के भविष्य को सुरक्षित और निःशंक किया जाएगा। सोसाइटी को कोई खास छूट नहीं चाहिए। इस कार्य के लिए अच्छा और मुक्त क्षेत्र मिले यही सोसाइटी चाहती है।

आधिकारिक तौर पर मुझे पता नहीं है, लेकिन मैंने सुना है कि हमारी सोसाइटी के कॉलेज को सालाना ग्रांट देना हैदराबाद सरकार ने तय किया है। यह बड़े खुशी की खबर

है और अगर वह सच हो तो इस मदद के लिए मैं संस्थान के मंत्रियों का बहुत आभारी रहूंगा। कुलपति द्वारा कॉलेज की राह की अन्य अड़चनें दूर किया जाना ही अब बाकी होगा। मैं उनसे विनति करता हूं कि उस्मानिया विश्वविद्यालय का कॉलेज औरंगाबाद से किसी और जगह स्थानांतरित किया जाए और मुंबई राज्य के नजदीक के जिले की कॉलेज फीस के अनुपात में हमें फीस में बढ़ोतरी करने की इजाजत दें। उम्मीद है कि मेरी विनति पर वे जरुर विचार करेंगे।

सिर पर बड़ी जिम्मेदारी उठाते हुए सोसाइटी ने यह कॉलेज शुरू किया है। यह जिम्मेदारी कितनी बड़ी है इसके बारे में बहुत कम लोग जानते हैं। हैदराबाद संस्थान की उन्नति के लिए निजाम सरकार द्वारा इकठ्ठा किए गए एक करोड़ रुपयों के 'शेड्यूल्ड कास्टस् ट्रस्ट फंड' से 12 लाख रुपयों का कर्ज लेकर सोसाइटी द्वारा यह कॉलेज वोला गया है। हमें बिना ब्याज का कर्ज देने के लिए मैं फंड के बोर्ड के प्रति कृतज्ञ हूं। उपकार माने जाने योग्य ही यह काम होने के बावजूद सोसाइटी इस बात को नजरंदाज नहीं कर सकती कि सालाना 50,000 रुपयों की किस्त से इस कर्ज को लौटाना भी है। 1956 से कर्ज वापसी की किस्त देनी है। 12 लाख रुपयों के इस कर्ज से कॉलेज की इमारत और अन्य सामान खरीदना था। अब तक फर्नीचर और उपकरणों पर 3 लाख रुपए खर्च हुए हैं। इन्हें अगर कर्ज की मूल रकम से घटाया जाए तो करीब 9 लाख रुपए सोसाइटी के हाथ में बचते हैं। अनुमान है कि कॉलेज की इमारत के लिए 20 लाख रुपयों की जरूरत पड़ेगी। यानी कि सोसाइटी के बजट में 11 लाख रुपयों की कमी है। सोसाइटी का अपना कोई जरिया नहीं है जिससे कि इतनी बड़ी रकम खड़ी की जाए। इस घाटे को पूरा करने के लिए सोसाइटी को लोगों के चंदे के ऊपर निर्भर रहना होगा। सोसाइटी द्वारा अपनाया गया कार्य पूरी तरह से राजनीति रहित है। यह कार्य पूरी तरह से शैक्षिक और सांस्कृतिक है। इच्छा और हैसियत रखने वाले किसी भी राजनीतिक दल के व्यक्ति के लिए इस कार्य में मदद देना संभव है। सोसाइटी की ओर से मैं हैदराबाद संस्थान के मराठवाड़ा और औरंगाबाद की जनता से तथा हैदराबाद संस्थान से बाहर की जनता से मैं अपील करता हूं कि इस शैक्षिक कार्य को बढ़ावा देने के लिए वे उदार हृदय से चंदा दें। उम्मीद है कि काफी लोग मेरी विनति का सम्मान करते हुए अधिक से अधिक चंदा देंगे। इस बात से पता चलता है कि अपने लक्ष्य को पाने के लिए सोसाइटी कितने कठिन मार्गों से गुजर रही है। सोसाइटी पर दोहरा बोझ है। कॉलेज की इमारत पूरी करने के लिए 11 लाख रुपए और कर्जा चुकाने के लिए सालाना 50 हजार रुपयों की किस्त लौटाने के लिए रकम का प्रबंध करना है। इसके बावजूद इमारत बनाने के लिए अनुकूल स्थितियां पैदा होकर रुपया मिलने तक सोसाइटी रुकेगी नहीं। इमारत निर्माण का काम सोसाइटी को तुरंत शुरू करना है। मुझे आशा है कि सोसाइटी के निश्चय और चिंता से सभी अवगत होंगे और समझेंगे। काम शुरु होने के बाद काम को देखकर लोग चंदा देंगे

इस बारे में सोसाइटी को विश्वास है। छात्रों के लिए कॉलेज की इमारत भव्य तथा मनोहारी ही बनने वाली है। शिल्पकला के तौर पर तो वह औरंगाबाद शहर का अलंकार बनेगी।

हिंदू समाज के बिल्कुल निम्न स्तर से आने के कारण मैं जानता हूं कि शिक्षा का कितना महत्व है। निम्न जाति के समाज की उन्नति का प्रश्न आर्थिक है ऐसा माना जाता है। लेकिन यह बहुत बड़ी गलती है। भारत के दलित समाज की उन्नति करना यानी उनके अन्न, वस्त्र और छत का प्रबंध कर पहले की तरह ही उन्हें उच्च वर्ग की सेवा में लगाना नहीं है बल्कि, जिस कारण से निम्न वर्ग के विकास की राह अवरुद्ध होकर औरों का गुलाम होने पर विवश करने वाली उनकी कुंठा को नष्ट करना है; वर्तमान समाज व्यवस्था में जिन्हें निर्दयता से लूटा गया है उसका खुद उनके और राष्ट्र के नजरिए से क्या महत्व है इसका उन्हें अहसास कराना है। यही उनकी असली समस्या है। उच्च शिक्षा के प्रसार के अलावा किसी और तरीके से इसे हासिल करना संभव नहीं है। हमारी सभी सामाजिक बीमारियों का मेरी राय में यही एकमात्र इलाज है।

अध्यक्ष महोदय, शिक्षा के प्रसार के काम के लिए कुछ करना बचपन से मेरा सपना रहा है। मैं अपने स्वप्न को साकार कर सका, इसकी मुझे खुशी है। इससे अधिक खुशी मुझे इस बात की है कि कॉलेज की नींव रखने के कार्यक्रम में आप शरीक हुए। कॉलेज की नींव रखने के लिए और हमें आशिर्वाद देने के लिए विद्या और संस्कृति के नजरिए से आपसे अधिक योग्य कोई हो नहीं सकता। मैं खुशामद के लिए यह सब नहीं कह रहा हूं। मैं जो कह रहा हूं उसका विश्वास करें। अध्यक्ष महोदय, अब मैं आपसे विनति करता हूं कि आप कॉलेज की नींव रखें।

280

नदी की धारा को मोड़ने वाले मजबूत पहाड़ की तरह हूं मैं

जलंधर के बुटान मंडी इलाके के मोहल्ला रामदासपुरा में 27 अक्तूबर, 1951 के दिन पहले आम चुनाव के समय डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का भाषण हुआ–

भाइयों और बहनों,

इससे पूर्व भी इस प्रकार के कार्यक्रमों का आयोजन कर उसमें मेरी सहभागिता की उम्मीद आप लोगों ने की थी। लेकिन केंद्र सरकार में मंत्री के पद की जबरदस्त जिम्मेदारियों के कारण और मेरे गिरते स्वास्थ्य के कारण मैं आज से पहले आपके कार्यक्रम में शामिल नहीं हो पाया। इसके लिए मैं पहले ही आपसे क्षमा मांगता हूं। मुझसे यह भी कहा गया है कि मेरा भाषण सुनने के लिए आज से पहले भी कई बार आप यहां इकठ्ठा हुए और आपको निराश होकर लौटना पड़ा। आपको जो तकलीफ हुई, आपको जो निराश होना पड़ा इसके लिए मैं आपसे माफी मांगना चाहता हूं।

आप जानते ही हैं कि पिछले चार सालों से मैं केंद्र सरकार में मंत्री था। भूतकाल में किसी भी मंत्री को जितना काम का बोझ वहन करना न पड़ा हो या भविष्य में किसी भी मंत्री को जितना काम का बोझ वहन नहीं करना पड़ेगा उतना बोझ मुझे वहन करना पड़ रहा था। मैं उस दौरान किसी दौरे पर नहीं जा सका इसकी यही एक वजह है। दूसरी बात यह है कि मेरा स्वास्थ्य भी ठीक नहीं है। अभी भी मैं पूरी तरह स्वस्थ नहीं हुआ हूं। मेरे स्वास्थ्य ने भी मेरे दौरों की राह में रोड़े अटकाए तीसरा और आखरी कारण यह रहा कि इस देश के हर हिस्से में अस्पृश्य लोग हैं। हर तहसील, जिला और प्रांत का अगर मैं दौरा करता रहा तो चार–पांच सालों में भी वह पूरा न हो। आपके गांव आकर आपसे हार्दिक मुलाकात करूं यह आपका आग्रह मेरे बारे में आपके मन में व्याप्त प्रेम के कारण ही होता है। लेकिन हर जगह जाना मेरे लिए असंभव है। आपमें से हर किसी को आत्मनिर्भर होकर आजाद सामाजिक जीवन जीना चाहिए ऐसा मुझे लगता है।

मैंने अपनी उम्र के 60 वर्ष पूरे किए हैं। सरकारी नौकरी में होता तो मुझे जबरदस्ती अवकाश प्राप्त करवाया जाता। लेकिन यह नियम राजनीति में लोगों पर लागू नहीं होता। ऐसा होता तो अच्छा होता। आजकल तो ऐसा दिखाई देता है कि जिनके पास जीवन–यापन के साधन नहीं हैं और बुद्धिमत्ता भी नहीं है। ऐसे 55 वर्ष से अधिक आयु वाले लोग राजनीतिज्ञ बन कर अपना जीवन–यापन कर रहे हैं।

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के भाषण. संपादक – मा. फ. गाजरे, खंड 7, पृ. 48–56

मेरे राजनीति में आने के कारण हैं, मेरे राजनीति के अखाड़े में उतरे अब 30 से भी अधिक साल गुजर गए हैं। इतने लंबे समय तक राजनीति के क्षेत्र में काम करने वाला कोई शख्स आज भारत में नहीं है। आम नियम यही है कि खाली समय में राजनीति कीजिए। इन तीस सालों में से आठ साल मैंने केंद्र सरकार के सदस्य के रूप में बिताए हैं। इस क्षेत्र में भी कोई भी मुझ से आगे नहीं निकल पाया है। मेरी इच्छा होती तो शायद कुछ और सालों तक मैं केंद्रीय सरकार का सदस्य बन कर बिता सकता था।

लेकिन, बचपन से ही, जब से होश संभाला है तब से, हमेशा मैंने एक सिद्धांत का अनुसरण किया। वह सिद्धांत था अपने अस्पृश्य बांधवों की सेवा करना। मैं जहां भी रहूं, जिस किसी पद पर रहूं, हमेशा अपने भाइयों के भले के बारे में सोचता और कार्य करता रहता हूं। अन्य किसी बात को मैंने इतना महत्व नहीं दिया है। अस्पृश्यों के हित की रक्षा मुझे करनी ही होगी यही मेरे भूतकालीन जीवन का उद्देश्य और भविष्य में भी यही मेरे जीवन का उद्देश्य रहेगा। लाभ के पद वाली और बहुत बड़ी तनख्वाहों वाली नौकरियां मुझे दी गई थीं लेकिन अपने लोगों की सेवा करना यही मेरे जीवन का उद्देश्य होने के कारण मैंने वे नौकरियां अस्वीकार कीं।

विदेश से अर्थशास्त्र में उपाधि प्राप्त कर लौटने वाला मैं केवल अस्पृश्यों के बीच पहला व्यक्ति नहीं था वरन् पूरे भारत से मैं पहला व्यक्ति था। मुंबई में दाखिल होते ही मुझे मुंबई सरकार ने राजनीतिक अर्थशास्त्र के प्रोफेसर का पद देने की पेशकश की। अगर मैंने वह नौकरी ली होती तो आज मुझे बड़ी तनख्वाह मिल रही होती। लेकिन मैंने वह नौकरी स्वीकार नहीं की। क्योंकि, मुझे पता था कि कोई सरकारी नौकरी स्वीकारने के बाद लोगों की सेवा करने की आपकी इच्छा पर कई सारे बंधन आ जाते हैं। जीवन-यापन चलाते हुए मैं आजादी से जी भी सकूं इसलिए कानून की पढ़ाई के लिए (अपना पेट पालने के लिए जो किसी और पर निर्भर नहीं होता वही व्यक्ति एक-दो सालों के बाद ही) मैं इंग्लैंड गया। जो अपना पेट पालने के लिए किसी और पर निर्भर नहीं रहता वही व्यक्ति सही मायने में आजाद होता है।

बार-एट7लॉ की उपाधि प्राप्त कर इंग्लैंड से लौटने के बाद एक बार फिर मुझे जिला न्यायाधीश के पद का - तीन सालों के अंदर-अंदर हाइकोर्ट के जज के पद पर पदोन्नति देने के आश्वसन के साथ - नियुक्ति का प्रलोभन दिया गया। उस वक्त मेरी माहवार कमाई 100 रुपए तक नहीं थी। बेहद गरीब लोगों के लिए खड़ी की गई एक चॉल के एक कमरे में मैं रहता था। जज की नौकरी बहुत बड़े तनख्वाह वाली थी और अगर मैं उस नौकरी को स्वीकार कर लेता तो जीवनपर्यंत मुझे कभी रुपए-पैसों की कमी नहीं होती। इसके बावजूद मैंने वह पद अस्वीकार कर दिया। क्योंकि, अगर मैं वह नौकरी करता तो अपने लोगों की उन्नति करने और उनकी स्थिति में सुधार लाने का जो काम

मैं करना चाहता था वह कर नहीं पाता ।

1942 में एक बार फिर मुझे ऐसे ही वाकए का सामना करना पड़ा। आर्थिक रूप से संपन्नता देने वाली और दस साल की नौकरी के बाद बाकी उम्र आराम से गुजार सकूं ऐसी हाइकोर्ट के जज की नौकरी मुझे दी गई। वायसराय की कौंसिल में भी मुझे जगह देने का आश्वासन दिया गया। मैंने अपने जीवन का उद्देश्य आंखों के सामने रखते हुए दूसरी नौकरी की। हर किसी को अपने लोगों की सेवा करने में अपना जीवन बिताना चाहिए और सेवा करते हुए ही मृत्यु को प्राप्त हो जाना चाहिए।

1947 में केंद्र सरकार में, मैं शामिल हुआ। मेरे कुछ आलोचकों ने कहा कि मैं कॉँग्रेस में शामिल हो गया हूं। उनकी आलोचना का जवाब मैंने अपने लखनऊ के भाषण में दिया है। अपने उस भाषण में अपने देश-बंधुओं से मैंने कहा है कि पानी के रेले से बह जाने वाले मिट्टी के ढेले की तरह मैं दरदरा नहीं हूं नदी के प्रवाह को ही बदल देने वाली चट्टान की तरह मैं हूं। मैं कहीं भी रहूं, किसी की संगत में रहूं मैं अपनी विशिष्टता कभी नहीं छोड़ सकता। किसी अच्छे काम के लिए अगर कोई मदद मांगे तो मैं खुशी से उनकी मदद करूंगा। पिछले चार सालों तक मातृभूमि की सेवा करने में मैंने पूरी ईमानदारी से और पूरी सामर्थ्य के साथ कॉँग्रेस का हर तरह से सहयोग किया। लेकिन पूरे समय मैंने अपने को कॉँग्रेस में विलीन होने से अलग रखा है। जो लोग अपने दिए शब्द के साथ और अपने कर्तव्य के साथ ईमानदार रहते हुए अस्पृश्यों के काम में मदद करने की इच्छा रखते हैं मैं उनकी बड़ी खुशी के साथ मदद करूंगा जो केवल मीठा बोलने वाले और मीठे झांसे देने वाले हैं और जिनका अंदरूनी उद्देश्य और कृति हमारे लोगों के हितों के खिलाफ होती है उनकी मैं कभी भी मदद नहीं करूंगा।

अब, आगामी आम चुनावों के बारे में बताना हो तो, शेड्यूल्ड कास्ट के लोग इन चुनावों को जीने-मरने की लड़ाई मानकर पूरी ताकत के साथ लड़ें। अपने उम्मीदवारों को जिताने के लिए अपनी पूरी ताकत लगा दें। दुनिया में इंसान को ताकत मिलती है तो धन से और लोगों के बल से। हम अल्पसंख्यक हैं और हम धनवान भी नहीं हैं। हर गांव में हमारी संख्या कुल जनसंख्या की तुलना में 5 प्रतिशत भी नहीं है। 95 प्रतिशत लोगों की संघशक्ति और उनकी संपत्ति की तुलना में हम बहुत कमजोर हैं। पुलिस खासकर उच्चवर्णीय लोगों में से ही होने के कारण हमारी सही शिकायतों को नहीं सुनती। उल्टे, शिकायत करने पर हमें ही परेशान किया जाता है। दरिद्रता के कारण अधिकारियों को अपनी तरफ नहीं कर पाते हैं। लेकिन हमें एक शक्ति प्राप्त हो सकती है और वह है राजनीतिक शक्ति। हमें इस शक्ति को प्राप्त कर ही लेना चाहिए। इस शक्ति से लैस होकर हम अपने लोगों के हितों की रक्षा कर सकते हैं।

इस देश ने जो आजादी पाई उस आजादी ने क्या आपको शासन का भरोसा दिलाया

है? हम कभी अपने देश की आजादी के खिलाफ नहीं थे। लेकिन एक सवाल का हमें सीधा जवाब चाहिए था। आजाद भारत में हमारी स्थिति क्या और कैसी रहेगी? मैंने यह सवाल गांधीजी और अन्य नेताओं के सामने रखा। हम जानना चाहते थे उनके स्वराज में हमारी स्थिति क्या रहेगी? क्या हमारे साथ होने वाले अत्याचार रुकेंगे? हमारे बच्चों की शिक्षा का क्या प्रबंध होगा? क्या हमारे लोग भारत के स्वतंत्र नागरिक बनकर जी पाएंगे? हम पर हो रहे अत्याचार और जुल्म क्या रुकेंगे? हमारी महिलाओं की इज्जत क्या सुरक्षित रहेगी? गांधीजी या किसी भी अन्य नेता ने इन सवालों के संतोषजनक जवाब नहीं दिए हैं और इनके बारे में जो कुछ कहा है वह बहुत बार ना-नुकूर के बाद ही कहा है।

सबसे पहले गोलमेज परिषद् में मैंने यह सवाल सामने रखा और मांग की कि मुसलमान, ईसाई, सिक्ख और अन्य अल्पसंख्यकों की तरह अस्पृश्यों के लिए अलग चुनाव क्षेत्र होना चाहिए। अस्पृश्यों के लिए अलग चुनाव क्षेत्र होना चाहिए इस न्यायपूर्ण मांग के लिए गोलमेज परिषद में मेरे देशवासियों की ओर से मुझे समर्थन नहीं मिल पाया। हालांकि अपने लोगों के लिए मैंने राजनीतिक हक प्राप्त किए। उसके बाद जो कुछ हुआ वह सब इस देश के सभी लोग जानते हैं। इतना बताना काफी होगा कि आधुनिक भारत के इतिहास में पहली बार जो हक हमने प्राप्त किए उन राजनीतिक हकों को निरस्त करने के लिए गांधीजी ने आमरण अनशन शुरू किया। अस्पृश्यों के मन में जग रही राजनीतिक आकांक्षाओं से डरकर गांधीजी अस्पृश्यों के विलाफ गए। वह चाहते थे कि अस्पृश्य अपने सवर्ण परोपकारी स्वामी यानी सवर्ण हिंदुओं की दया पर निर्भर रहें। गांधीजी के शब्दों पर विश्वास कर और हिंदू नेताओं के आश्वासन पर भरोसा कर गांधीजी की जान बचाने के लिए हमने अपने हक की बलि चढ़ाई। उसके परिणाम अब आप साफ देख रहे हैं। विश्वासघात और कपट की वह एक दुखद कहानी है। सभी तरह के अच्छे-बुरे मार्गों का अपनाकर काँग्रेस ने अस्पृश्यों को उनके न्यायपूर्ण हकों से महरूम किया है। अस्पृश्य समाज में जिनका सम्मान का स्थान नहीं है ऐसे लोग केवल सवर्ण हिंदुओं के समर्थन से कानून मंडल पर चुनकर जाते हैं। तथाकथित हरिजन काँग्रेस के ही भेदिए हैं। इन हरिजन उम्मीदवारों को टिकट देते हुए काँग्रेस की कसौटी क्या होती है यह मेरी समझ में नहीं आता। साधारणतया किसी भी उम्मीदवार को चुनाव के लिए टिकट देते हुए काँग्रेस उससे पूछती है कि क्या उन्हें देश की आजादी की लड़ाई में कारावास हुआ है? लेकिन आश्चर्य की बात यह है कि हरिजनों को टिकट देते हुए काँग्रेस यह कसौटी नहीं होती। आरक्षित जगहों पर हरिजनों को खड़ा कर अस्पृश्यों द्वारा हासिल किए गए हक काँग्रेस बड़ी सहजता से धूल में मिला रही है।

काँग्रेस के टिकट पर कई अस्पृश्य विधानसभा में चुन कर गए हैं। इन हरिजन

विधायकों से मैं पूछना चाहता हूं कि पिछले चार सालों में उन्होंने लोगों के लिए क्या किया? पार्लियामेंट में और संविधान समिति में 30 हरिजन थे। अस्पृश्यों के प्रतिनिधि के तौर पर लिए गए इन 30 सदस्यों में से किसी एक ने तो कभी राज्य संविधान पर हुई चर्चा में हिस्सा लिया था क्या? इन हरिजन सदस्यों में से क्या किसी एक ने भी कोई एकाध सवाल पूछा? क्या कोई प्रस्ताव रखा? या फिर क्या कोई बिल रखा? इन हरिजनों के चुप रहने से पार्लियामेंट के कामकाज का विदेशी समालोचक यही निष्कर्ष निकाल लेगा कि भारत में अस्पृश्यों के साथ किसी प्रकार का कोई अन्याय या अत्याचार नहीं होता और उनकी किसी भी तरह की कोई शिकायत नहीं है। ईमानदारी से कहें तो सच इसके बिल्कुल उल्टा है। हमें ऐसे प्रतिनिधि चाहिएं जो हमारे दुखों के बारे में निडरता से विधानसभा में आवाज उठाएंगे। लेकिन काँग्रेस द्वारा नियुक्त किए गए ये अस्पृश्यों के प्रतिनिधि आज्ञाकारी बनकर या तो अपने मालिकों का गुणगान करते हैं या फिर मुंह चुपकर बैठते हैं जबकि पूरे भारत से अस्पृश्यों के साथ होने वाले अत्याचारों, उन्हें उनके हक-बुनियादी जरूरतें न दिए जाने, उनकी बेइज्जती किए जाने, उनके शोषण और उन पर किए जाने वाले अत्याचारों की भयानक घटनाओं की खबरें हमेशा मिलती रहती हैं।

अस्पृश्य लोगों के मसलों में जवाहरलाल नेहरू ने कभी भी दिलचस्पी नहीं दिखाई। आस्था जाहिर नहीं की। पिछले बीस सालों से वे राजनीति के क्षेत्र में हैं। दो हजार से भी अधिक सभाओं में उन्होंने भाषण दिए होंगे। अस्पृश्य लोगों पर होने वाले अत्याचारों के बारे में क्या कभी उन्होंने कुछ कहा है? जहां तक मुझे याद आता है, कभी नहीं। उन पर मुसलमानों को लेकर पागलपन सवार है। उसी रोग के वे मरीज बन चुके हैं। मुसलमानों पर अन्याय हुआ या अन्याय होने के बारे में उन्हें पता चला तो भी वे विचलित हो जाते हैं। भारत के मुसलमानों की रक्षा करने के लिए वे हर तरह की कोशिश करेंगे। मुसलमानों को सुरक्षा देने के खिलाफ मैं नहीं हूं। मेरी राय में मुसलमानों को पाकिस्तान चले जाना चाहिए। जनसंख्या की अदला-बदली का सही रास्ता नहीं मिल रहा हो तो भारत में रह रहे मुसलमानों की रक्षा करना हमारा कर्तव्य ही है। लेकिन अल्पसंख्य होने के बावजूद अस्पृश्यों के साथ तुलना की जाए तो वे बेहतर हालत में जी रहे हैं। अस्पृश्य, आदिवासी, अपराधी जनजातियां नाम भी घिनौने हैं। पिछडी जातियां अथवा ईसाई लोगों जैसे अन्य अल्पसंख्यकों को सुरक्षा मुहैय्या कराने का अथवा उनके उद्धार के लिए ठोस कुछ करने के बारे में क्या नेहरू ने कभी सोचा है? काँग्रेस के लोगों में अस्पृश्यों के बारे में प्रेम अथवा सहानुभूति अगर नहीं हो तो काँग्रेस पर लोग कैसे विश्वास कर पाएंगे।

काँग्रेस ने अस्पृश्यों के लिए बहुत कुछ किया यह दुनिया को बताते पं जवाहरलाल नेहरू अघाते नहीं। वे जो बताते हैं वह झूठ कैसे है यह केवल एक उदाहरण से मैं बताता हूं।

विभाजन के बाद पाकिस्तान सरकार ने अस्पृश्यों के पाकिस्तान से भारत आने पर पाबंदी लगाने वाला एक फरमान निकाला। कितने ही हिंदुओं ने पाकिस्तान छोड़ा तब भी पाकिस्तान ने उनकी परवाह नहीं की। लेकिन अगर अस्पृश्य देश छोड़ कर जाएं तो मैला ढोने का, सड़के साफ रखने का, मरे जानवरों को उठाने का घृणित काम कौन करेगा? मैंने जवाहरलाल नेहरू से विनति की कि इन लोगों के स्थानांतरण करने पर पाबंदी लगाने वाले आदेश को हटवाने के लिए कुछ कीजिए। लेकिन उन्होंने कुछ नहीं किया। इस समस्या को उन्होंने दबा ही दिया और पाकिस्तान के साथ जितनी बार बातचीत हुई उस समय उन्होंने इस बात का जिक्र तक नहीं किया. अकेले अपने बल पर जितना कुछ संभव था मैंने किया है। महार बटालियन के वीर सैनिकों ने गंभीर जोखम उठाते हुए मेरी मदद की और पाकिस्तान से कई अस्पृश्य लोगों को ले आए।

ऐसे हालात में हम काँग्रेसी नेताओं के आश्वासन पर विश्वास कैसे करें? अस्पृश्य लोगों के बारे में काँग्रेस का उद्देश्य अगर साफ है तो वे आम सीटों पर अस्पृश्य उम्मीदवार को खड़ा कर अपनी मंशा जाहिर क्यों नहीं करती?

हमसे कहा जाता है कि काँग्रेस के साथ लड़ना शेड्यूल्ड कास्टस् फेडरेशन के लिए कठिन होगा। यह असल में सफेद झूठ है। इस चुनाव में हम जरूर जीतेंगे इस बारे में मुझे कोई शक नहीं है। जमाना बदल गया है। पिछले चुनावों में हर कोई हमारे खिलाफ था और, काँग्रेस ने ही आजादी दिलाकर देश को स्वतंत्र किया इस प्रकार काँग्रेस द्वारा किए गए प्रचार के कारण उन पर विश्वास कर हर कोई उनके साथ गया। आज क्या हाल हैं? पंजाब काँग्रेस पर बस नजर डालिए। पंजाब में क्या सचमुच काँग्रेस का अस्तित्व है? पंजाब की काँग्रेस मर गई है ऐसा लगता है। उसके दो आधारस्तंभ। डॉ. गोपीचंद भार्गव और श्री भीमसेन सच्चर श्रेष्ठता के लिए आपस में भिड़े हुए हैं। उम्मीदवार तय करने की तारीख सिर पर आकर खड़ी होने के बावजूद आगामी चुनावों के लिए काँग्रेस ने अपने उम्मीदवारों की सूची अभी मंजूर नहीं की है। जो लोग घर की छत पर खड़े होकर 'हम एक मां के बच्चे हैं' का ऐलान कर रहे थे वे ही अब जानी दुश्मनों की तरह आपस में लड़ रहे हैं। भार्गव गुट और सच्चर गुट में अब मेल होना पूरी तरह असंभव है।

पंजाब का मुख्यमंत्री कौन होगा यही एकमात्र सवाल इन नेताओं के सामने है। इन सज्जनों को लोगों की शिकायतों से कोई लेना-देना नहीं है। पंजाब में लड़ाई किसी सिद्धांत के लिए नहीं वरन् सत्ता के लिए है। यही हाल कमो-बेश अन्य कई राज्यों में भी है। घूसखोरी, भ्रष्टाचार और भाई-भतीजावाद को लेकर कई काँग्रेसी उम्मीदवारों के खिलाफ कई शिकायतें काँग्रेस के दफ्तर में आ रही हैं। 1947 में काँग्रेस प्रसिद्धि के शिखर पर थी। अब, केवल चार वर्ष के अंतराल के बाद वह एकदम निचले स्तर पर फिसल गई है। दुनिया की राजनीतिक पार्टियों के इतिहास का यह एक अद्वितीय उदाहरण है। काँग्रेस के संदर्भ में 'काँग्रेस वाला' और 'सज्जन' ये दो शब्द अब परस्पर विरोधी

अर्थ बताने वाले, मोटे हरफों वाले और एक-दूसरे से कोई संबंध न होने वाले शब्दों का अर्थ व्यक्त कर रहे हैं।

ऐसे हालात में हमें 'हम ये चुनाव हारेंगे' ऐसा नहीं सोचना है। हमारे पुराने दुश्मन . काँग्रेस शक्तिविहीन हो चुकी है। यह सुनिश्चित है स्वाभिमान और एकता के बल पर फेडरेशन को सफलता मिलेगी। बस हमें मन में पक्का कर लेना चाहिए और उसी निश्चय के साथ मैदान में उतरना चाहिए, कोशिश करनी चाहिए। मैं आप सभी भाइयों-बहनों का आह्वन करता हूं कि मतदान के दिन आप अपने सभी काम छोड़ कर अपने मतदान जरुर करें।

काँग्रेस हममें फूट ना डाले इसके लिए शेड्यूल्ड कास्ट फेडरेशन के लोगों को पहरा देना चाहिए। काँग्रेस के बड़बोले और अंटसंट प्रचार के चक्कर में उन्हें नहीं आना चाहिए। इसी प्रकार आपको भगवान जिस हालत में रखे, उसी में संतोष करने वाली मानसिकता का भी त्याग करना होगा। आपको हमेशा सतर्क रहना होगा। आरक्षित सीटें हमारे लिए केवल दस सालों के लिए हैं बात को हमें हर वक्त याद रखनी है। अस्पृश्यता का पूरी तरह खात्मा होने तक आरक्षण बना रहे ऐसी मेरी इच्छा थी। सरदार पटेल ने सदन के अंदर और बाहर बड़े आवेश के साथ मेरे इस प्रस्ताव का विरोध किया। सरदार पटेल की बात छोड़ भी दें तो काँग्रेस की ओर से नियुक्त हरिजनों के 30 प्रतिनिधियों की हिम्मत नहीं हुई कि वे मेरे प्रस्ताव का समर्थन करें। सरदार पटेल का पिछलग्गू काँग्रेस के ये भेदिए और क्या कर सकते हैं? चुनाव के टिकट के खूंटे से बंधे थे। इन मौकापरस्त और सत्ता के लालची लोगों से हम और कोई उम्मीद नहीं कर सकते। आरक्षण केवल दस सालों तक ही रहेगा। इन दस सालों के बाद हम क्या करने वाले हैं? हमारे पास अगर मजबूत संगठन न हो तो देश की राजनीति में हमारा कोई स्थान नहीं रहेगा। अछूत अगर एक जाति में संगठित हो पाए तो हम राजनीति में कोई स्थान प्राप्त कर सकते हैं। अपने संगठन को मजबूत और एकजुट करने के लिए हमें दस साल तक इंतजार नहीं करना चाहिए। हमें अभी से संगठन को मजबूत करना होगा। कल और परसों से भी नहीं - आज से ही। इन दस सालों में हम अगर अपना संगठन मजबूत कर खड़ा नहीं कर सके, उसे सक्रिय नहीं कर सके तो दस सालों के बाद मनुस्मृति-राज स्वीकारने का दुर्भाग्य हमारे हिस्से में लिखा जाएगा। हमारे पास ऐसा संगठन पहले से है। फेडरेशन ही हमारा संगठन है। हमें बस उसे मजबूत करना होगा। पेड़ पहले से रोपा गया है। हमें केवल उसमें पानी देकर देखभाल करनी है। चुनाव आयुक्त द्वारा हमारे फेडरेशन को अखिल भारतीय संगठन के रूप में मान्यता मिली हुई है। हमें नया घर नहीं बनाना है। घर पहले से है। हमें बस इतना ही करना होगा कि उस घर को हमें व्यवस्थित तरीके से अच्छी हालत में रखना होगा। अभी से अगर हम जोरदार कोशिश नहीं करेंगे तो संतोष कर बैठे रहे तो हो सकता है ऐसे हालात का सामना करना पड़े कि जिसमें बेघर होकर

हमें दर-दर की ठोकरें खानी पड़ें। हर तरह का अपमान सहना पड़े। अन्याय-अत्याचार सहने पड़ें। वेदों के जमाने से जिस पंगुत्व का हम शिकार होकर रहे थे उसी के हम फिर शिकार होंगे।

आप सब जानते हैं कि आगामी चुनावों में शेड्यूल्ड कास्टस् फेडरेशन का चुनाव चिन्ह हाथी है। भारत के हर नागरिक को हाथी मालूम है इसीलिए मैंने हाथी को चुनाव चिन्ह के रूप में अपनाया। अनपढ़ लोग भी आसानी से उसे पहचान सकते हैं। इसके अलावा, हाथी अक्लमंदी का, शक्ति और धीरता का प्रतीक है। हमारे लोग हाथी की तरह हैं। उसे अपने पैरों पर खड़े रहने में समय लगता है लेकिन एक बार जब वह अपने पैरों पर खड़ा हो जाता है तब आप उसे आसानी से घुटने टेकने पर मजबूर नहीं कर सकते।

अब चुनाव संबंधित समझौते के बारे में बताना हो तो शेड्यूल्ड कास्ट के लोग अल्पसंख्यक हैं। हमें अलग चुनाव क्षेत्र भी प्राप्त नहीं हुए हैं। इसीलिए चुनावों के लिए हमें अन्य पार्टियों के साथ मैत्री-करार करना होगा। शेड्यूल्ड कास्ट के लिए आरक्षित चुनाव क्षेत्र में हम में से हर एक को दो मतों का हक प्राप्त है। जिस पार्टी के साथ हम गठबंधन करते हैं उनके उम्मीदवार को हम एक वोट दे सकते हैं। एक वोट शेड्यूल्ड कास्ट फेडरेशन के उम्मीदवार को जाएगा। चुनावों के लिए हम किससे समझौता करें इस बात का निर्णय अभी हुआ नहीं है। जल्द ही इस बात का फैसला किया जाएगा। एक बार यह निर्णय हो जाए, उसके बाद जिस पार्टी से हम गठबंधन करेंगे उसके उम्मीदवार को अपना वोट देना शेड्यूल्ड कास्टस् फेडरेशन के हर उम्मीदवार का कर्तव्य होगा।

भाषण पूरा करने से पहले पंजाब के हर मतदाता से मैं विनती करता हूं कि वह फेडरेशन के उम्मीदवार को अपना वोट दे और अपनी उन्नति का मार्ग प्रशस्त करे।

281

हमारे सच्चे प्रतिनिधि संसद तथा राज्यसभा में हों तभी हमारे हित में लड़ सकेंगे

दिनांक 28 अक्तूबर, 1951 के दिन लुधियाना में डॉ. बबासाहब अम्बेडकर का भाषण हुआ।

प्रिय बहनों और भाइयों,

अपने लोगों के साथ बातचीत करने के लिए लुधियाना आने का यह मेरा पहला ही मौका है। इससे पूर्व यहां आने की कई योजनाएं मैंने बनाईं, लेकिन किन्हीं कारणों से मैं आ नहीं पाया था। आप सब लोग एक जगह इकठ्ठे हुए हैं, यह कितना मंगलमय प्रसंग है।

आप जानते हैं कि दो-तीन महीनों के बाद चुनाव होने वाले हैं और कई दल उसमें हिस्सा लेने वाले हैं। इस बार चुनावों में शे. का. फे. भी अपने उम्मीदवारों को उतारने वाला है। विधानसभा और संसद में शेड्यूल्ड कास्ट के लिए रखी सभी आरक्षित जगहें और जहां हमारे मतदाता काफी संख्या में हैं ऐसे कुछ क्षेत्रों से हम चुनाव लड़ने वाले हैं। मुझे उम्मीद है कि हमारे उम्मीदवार जीतेंगे। हमारे उम्मीदवारों की जीत खास कर हमारे मतदाताओं पर ही निर्भर है। हमारे सभी मतदाता अगर अपने उम्मीदवार को ही वोट देंगे तो मुझे यकीन है कि वे जीत जाएंगे। इसीलिए शेड्यूल्ड कास्ट और अन्य पिछड़े लोगों का शेड्यूल्ड कास्टस् फेडरेशन यह एक ही संगठन है। इस संगठन के उम्मीदवारों को ही शेड्यूल्ड कास्टस् के सभी लोग वोट दें ऐसी मैं आप सबसे विनति करता हूं।

भारत पर जब अंग्रेजों का शासन था तब उन्होंने हमें कैसे धोखा दिया यह मैं आपको बताता हूं। भारत से सैंकड़ों मील दूर रहने के बावजूद भारत में अपने शासन की स्थापना करने में वे सफल रहे। पहले ईस्ट इंडिया कंपनी भारत में आई। तब उसका मंसूबा केवल व्यापार करने का था। बाद में धीरे-धीरे उनके मन में यहां अपना राज्य स्थापित करने की इच्छा पैदा हुई। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए उनके पास कहां से सामर्थ्य आई? भारत में उनकी सेना नहीं थी। अपनी सेना नहीं होते हुए भी भारत के सभी राजाओं-महाराजाओं को जीतने में वे सफल कैसे रहे यह कोई नहीं बता सकता। लेकिन अब मैं इस सवाल का जवाब देने वाला हूं। अपने ही देश में जो लोग अस्पृश्य थे उन शेड्यूल्ड कास्ट लोगों की मदद से अंग्रेज लोग भारत के शासक बने। ये अस्पृश्य लोग निरक्षर थे। सवर्ण हिंदुओं

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकरांची भाषणे : संपादक - मा. फ. गांजरे, खंड 7, पृष्ठ 57-65

का उनके साथ का व्यवहार अपमानजनक था। पेट पालने का कोई साधन उनके पास नहीं था। उन्हें हमेशा सवर्ण हिंदुओं की दया पर निर्भर रहना पड़ता था। जो हुआ वह सब सही था यह मेरे कहने का मतलब नहीं है। मैं किसी और मुद्दे पर जोर देना चाहता हूं। मैं इस बात की ओर आप सबका ध्यान दिलाना चाहता हूं कि भारत में शासन की स्थापना करने में हमने जिन लोगों की मदद की उन्होंने भी हमारे साथ बुरा व्यवहार किया। अंग्रेजों की खातिर हमारे पूर्वजों ने लड़ाइयों में अपनी जानें गंवाई और उसके बदले में हमें क्या मिला? किसका लाभ हुआ? शेड्यूल्ड कास्टस् के लोगों द्वारा मदद प्राप्त करने के बावजूद उससे होने वाले लाभ ब्राह्मण और अन्य सवर्ण हिंदुओं ने उठाए। अंग्रेजों ने उनके बच्चों को ही पढ़ाया और हर तरह की आर्थिक मदद उन्हें दी। हमारे लोगों की तरफ ध्यान ही नहीं दिया गया। परिणामस्वरूप गरीब, बेचारे शेड्यूल्ड कास्ट के लोगों की बदौलत सवर्ण हिंदू संपन्न हुए। अस्पृश्य लोग जैसे थे वैसे ही रहे। आज तक शेड्यूल्ड कास्ट के परिवार सुसंपन्न क्यों नहीं हैं? उनके बच्चे पढ़े-लिखे क्यों नहीं हैं? इसका कारण यही है। परिणामस्वरूप सेना, पुलिस और प्रशासकीय सेवा के सभी महत्वपूर्ण पद सवर्ण हिंदुओं के हाथ में ही हैं। हमारी उन्नति के लिए अंग्रेजों को कुछ करना चाहिए था लेकिन उन्होंने हमारे लिए कुछ नहीं किया। 1858 में विद्रोह हुआ। क्या कारण थे उस विद्रोह के पीछे? कारण यही थे कि हमारे लोगों के लिए कुछ करने से अंग्रेज चूक गए। सेना में शामिल हमारे लोगों के सामने उनके खिलाफ विद्रोह करने के अलावा कोई चारा ही नहीं रहा। विद्रोह जब दब गया तो पता चला कि सेना में शामिल हमारे लोगों ने अंग्रेजों के खिलाफ विद्रोह किया था, इसलिए अंग्रेजों ने हमारे लोगों की सेना में भर्ती बंद कर दी। उनकी जगह हिंदू और राजपूतों की सेना में भर्ती की गई। इस प्रकार हम लोगों की आमदनी का प्रमुख जरिया समाप्त हो गया। अंग्रेजों के इस देश में आने से पूर्व अस्पृश्य जिस हालत में थे 1947 में जब अंग्रेजों ने भारत छोड़ा तब भी वैसी ही हालत में थे। सत्ता का हस्तांतरण करते हुए अंग्रेजों ने सारी सत्ता सवर्ण हिंदुओं के हाथ में दी। हम लोगों के हाथ कुछ नहीं आया। न्याय के बारे में जिनके मन में बिल्कुल आस्था नहीं ऐसे हिंदू सवर्णों की दया पर हमें छोड़ कर अंग्रेज चले गए। इससे हम कल्पना कर सकते हैं कि गरीब अस्पृश्यों के साथ सवर्णों का क्या व्यवहार रहा होगा। आज तक हम पिछडे क्यों रहे, उसका यह कारण रहा है। अब मैं आपके सामने एक प्रश्न उपस्थित करना चाहता हूं। क्या अभी भी आप उसी तरह पिछड़े हुए रह कर सवर्ण हिंदुओं के गुलाम बन कर रहना चाहते हैं? आर्य भारत में आए तब से वर्णव्यवस्था लागू हुई। इंसानों को उनके जन्म के आधार पर सामाजिक स्थान दिया जाने लगा। कुछ लोगों को ब्राह्मण कहा गया, कुछ क्षत्रिय बने, कुछ वैश्य बने, कुछ लोग शूद्र बने और अन्य अस्पृश्य बने। इस श्रेणी के अनुसार अस्पृश्य सबके नीचे और समाज से सर्वथा अलग थे। सवर्ण हिंदू और अस्पृश्यों के बीच के संबंध पैर और जूती जैसे थे। घर में प्रवेश करते समय जूता बाहर ही खोल

दिया जाता है उसी प्रकार अछूत लोगों को समाज से बाहर रखा गया, उन्हें किसी तरह के कोई अधिकार नहीं दिए गए। सवर्ण हिंदुओं ने जो अपमानजनक व्यवहार किया गया, उसे हजारों सालों तक हम सहते आए और अभी भी सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक दृष्टिकोण से हो रहे जुल्म सह ही रहे हैं।

कई सालों तक संघर्ष के बाद अब हमने कुछ राजनीतिक अधिकार पाए हैं। और उन्हें भारतीय संविधान में भी शामिल किया गया है। बीस सालों तक के लंबे समय तक मैंने गांधी जी के खिलाफ संघर्ष किया। हमें किसी भी तरह के अधिकार अलग से देने की कल्पना के खिलाफ थे वह। उनकी दलील थी कि अस्पृश्यों को अगर अलग अधिकार दिए गए तो वे हिंदू जीवनपद्धति में वे कभी भी शामिल नहीं हो पाएंगे। इसके अलावा वे हमेशा के लिए हिंदुओं से छिटक जाएंगे। गोलमेज परिषद में भी हमारी अलग चुनाव क्षेत्र की मांग का गांधी जी ने विरोध किया। इसलिए इतने लंबे संघर्ष के बाद हमें कुछ राजनीतिक अधिकार मिले हैं। अब शेड्यूल्ड कास्ट के लिए जो जगहें आरक्षित हैं उन जगहों से हम अपने प्रतिनिधि विधानसभा और संसद में भेज सकते हैं।

हमारे ये अधिकार हमसे छीनने के लिए कई पार्टियां काम कर रही हैं। अपने लोगों के लिए आरक्षित जगहों से अपने उम्मीदवारों को जिताने के लिए हमारे वोट उन्हें मिलें इसके लिए ये पार्टियां कार्यरत हैं। आप उनकी मंशा को अच्छी तरह समझ सकते हैं। उन्हें लगता है कि, शेड्यूल्ड कास्टस् के लोग जहां और जिस हालात में हैं वहीं और वैसे ही रहें वे सत्ता प्राप्त न करें, ताकि आज हमारे लोग जो घृणित काम करते हैं उन कामों को करने के लिए लोग न मिलें ऐसा न हो। इसीलिए आगामी चुनावों में आप लोगों को अपने वोट के बारे में सतर्क रहना होगा। हमारे वोटों के सहारे केवल हमारे सच्चे प्रतिनिधि ही चुने जाएं, कोई और नहीं। आप अगर इस बात के प्रति जागरुक रहें तो ही आपके जो अधिकार राज्य के संविधान में शामिल किए गए हैं वे सुरक्षित रहेंगे।

हमारे सच्चे प्रतिनिधि विधानसभा और संसद में अगर चुनाव जीत कर नहीं जाएंगे तो हम आजादी को उपभोग नहीं कर पाएंगे। हमारे लोगों के लिए आजादी एक नाटक साबित हो सकती है। यह केवल हिंदुओं के लिए आजादी साबित हो सकती है। हमारे लिए नहीं। लेकिन अगर हमारे सच्चे प्रतिनिधि विधानसभा और संसद में होंगे तो वे हमारे हित के लिए लड़ेंगे। हमारे दुख दूर करेंगे। केवल तभी हमारे बच्चों को योग्य शिक्षा मिल सकती है। तभी हमारी दरिद्रता नष्ट हो सकती है और तभी जीवन के हर क्षेत्र में हमें बराबरी का हिस्सा मिल सकता है। भारतीय संविधान में भले शेड्यूल्ड कास्ट के लोगों को खास हक दिए गए होंगे, इसके बावजूद अन्य पार्टियां खासकर काँग्रेस उसमें बिनावजह अड़ंगे डाल रही है। शेड्यूल्ड कास्ट के लिए आरक्षित जगहों पर वे चुनाव में अपने अनुचरों को खड़ा कर रहे हैं। काँग्रेस के टिकट पर चुनाव कर आने वाले लोगों

को उनके मालिक की इच्छा के अनुसार चलना पड़ता है। इसलिए वे हमारे हितों की रक्षा कहां कर पाएंगे? क्या वे हमारे लिए कुछ कर पाएंगे?

अस्पृश्य लोगों के लिए आरक्षित जगहों पर काँग्रेस के टिकट पर संसद में चुनाव जीतकर गए सदस्यों की जानकारी मैं आपको देना चाहूंगा। उनकी संख्या करीब 30 थी और पिछले चार सालों से वे संसद में थे। इन 30 सदस्यों में से एक ने भी पिछले चार सालों में अस्पृश्यों की समस्या पर एक भी सवाल संसद में नहीं उठाया। किसी ने एकाध सवाल उठाया भी हो तो सभाध्यक्ष ने उसे अनुमति नहीं दी और वह विषय वहीं समाप्त हुआ। भूले-भटके कभी सभाध्यक्ष ने सवाल को संसद के कामकाज में शामिल करने की इजाजत दे भी दी तो काँग्रेस का मुख्य नेता संबंधित सदस्य के पास जाकर सवाल छपने से पहले ही उसे वापिस लेने के लिए कहा करते।

कभी भूले-भटके सवाल छप जाए तो उसका जवाब देने का समय जब आता तब सवाल उपस्थित करने वाले से नेता कहते कि वह सदन में अनुपस्थित रहे। इसलिए जिस सदस्य द्वारा सवाल उपस्थित किया गया उसी के अनुपस्थित होने के कारण उस पर चर्चा ही नहीं होती। पिछले एक महीने से संसद में बजट पर चर्चा चल रही है। इस दौरान कोई भी सदस्य चर्चा में सहभागी होते हुए अपने समाज के लिए फलां प्रबंध किया जाना चाहिए यह अपनी राय दर्ज कर सकता है। इतनी रकम अनावश्यक योजना पर खर्च हो रही है और फलां आवश्यक योजना की उपेक्षा की जा रही है इस ओर वह ध्यान दिला सकता है। इन चार सालों में किसी हरिजन सदस्य को मैंने 'कटमोशन' रखते हुए नहीं देखा है। यह सब काँग्रेस के डंडे के कारण होता है। सदस्य अगर कोई प्रस्ताव रखना चाहें तो उसे प्रत्यक्ष में रखने से बहुत पहले से मुख्य नेता से इजाजत लेनी पड़ती है। इन चार सालों में इन सदस्यों ने कभी कोई बिल प्रस्तुत नहीं किया। अस्पृश्य, भारतीय ईसाई और एंग्लो इंडियन आदि लोगों के लिए संविधान के द्वारा जो अधिकार दिए गए हैं उन्हें अगर काँग्रेस द्वारा उनके दुश्मनों ने कब्जा किया तो उस अधिकार का क्या फायदा?

मैं एक बात स्पष्ट करना चाहता हूं कि अगर आप काँग्रेस को चुनेंगे तो आपको हमेशा के लिए दुख भोगना पड़ेगा। काँग्रेस के टिकट पर चुन कर गए हमारे प्रतिनिधि विधानसभा और संसद में मुंह सिलकर बैठे रहेंगे। शेड्यूल्ड कास्टस् फेडरेशन ही हमारा एकमात्र संगठन होने के कारण उसके टिकट पर चुन कर आने वाले हमारे सच्चे प्रतिनिधि ही हमारे हितों की रक्षा कर सकते हैं। काँग्रेस में रह कर भी अपने दुख दूर करने की कोई संभावना होती तो मैं उस संगठन को अपनाता। मैं जानता हूं कि काँग्रेस के पास बहुत पैसा है और मतों को खरीदने की वह कोशिश करेगी। लेकिन आपको इस बारे में सतर्क रहना होगा। मैं चाहता तो हमेशा के लिए काँग्रेस की सरकार में रहता। निश्चित रूप से मुझे वहां कोई अच्छी जगह भी मिलती, लेकिन उसे मैं तभी स्वीकारता जब मेरा

उद्देश्य केवल स्वार्थ साधना होता और मुझे अपने समाज के बारे में कोई आस्था नहीं होती। मुझे किसी लाइसेंस या परमिट की जरूरत होती तो ही मैं वहां रहता। लाइसेंस और परमिट पाने वाला आदमी समाजहित की बलि चढ़ाकर ही वैसा करता है। काँग्रेस सरकार में जब मैं था तब यह मेरा अनुभव रहा है।

अंग्रेज अगर चाहते तो वे जब तक यहां थे हमारी उन्नति के लिए कुछ कर सकते थे। लेकिन उन्होंने भी हमारे साथ धोखा किया। अब वह जमाना बीत गया, अब दूसरा जमाना आ गया है। अंग्रेज हमें छोड़ कर चले गए हैं अन्य लोग अब सत्ता में हैं। इस बार अगर हम सतर्क नहीं हुए और आंखें बंद करके बैठे रहे तो हमारा सर्वनाश निश्चित है। आज तक आप लोग जो अत्याचार सहते आए हैं, सह रहे हैं वह आपकी भावी पीढ़ी को सहना न पड़े ऐसा अगर आप चाहते हो तो आपको अभी इस दिशा में कुछ करना होगा। पेड़ लगाने के कुछ समय बाद आपको फल मिलने लगते हैं। मैं आपके मन में यह बात डालना चाहता हूं कि विधानसभा और संसद की आरक्षित जगहें केवल दस वर्षों के लिए ही हैं। भारत में जब तक अस्पृश्यता प्रचलित है तब तक वे आरक्षित रहें ऐसी मेरी इच्छा है लेकिन काँग्रेस के टिकट पर जो हमारे लोग संसद के सदस्य बने उन्होंने भी मेरा विरोध किया। उच्चवर्णियों के बारे में क्या बोलें? कुछ भी न मिलने के बजाय कुछ मिलना बेहतर है यही सोच कर दस सालों तक सीटों के आरक्षण के लिए मैंने सहमति जताई। अपने लोगों के लिए थोड़ा-बहुत कुछ पाया। यह आरक्षण केवल अगले दो चुनावों तक ही लागू है और तब तक काँग्रेस जैसी पार्टियां आपके पास आएंगी और वोट मांगेंगी। इस प्रकार दस सालों का यह समय निकल जाएगा और इस समय को बढ़ाने की मांग करने के लिए आपका कोई आदमी संसद में नहीं होगा। तब आप क्या करेंगे यह मैं आपसे पूछना चाहता हूं। तब क्या ये काँग्रेस वाले आकर उनके टिकट पर चुनाव लड़ने की विनति आपसे करेंगे? निश्चित रूप से नहीं। वे इतने मूर्ख नहीं हैं। वे आप लोगों को मूर्ख बनाना चाहते हैं। आज जो लोग काँग्रेस का टिकट पाने की इच्छा रखते हैं, उस कोशिश में लगे हैं तब उनके मुंह पर ये काँग्रेस वाले थूकेंगे भी नहीं। इसीलिए आप सब लोग इस समस्या पर सोचें। सोचने के बाद ही तय करें कि किसे अपना वोट देना है।

किसी भी पक्ष के पास या तो सत्ता होनी चाहिए या पैसा होना चाहिए। हमारे समाज के पास पैसा भी नहीं है और सत्ता भी नहीं है। हम उच्चवर्णियों की दया पर गांवों में थोड़े-थोड़े लोग रह रहे हैं। बनिया और मारवाड़ी भी सत्ता में नहीं हैं लेकिन उनके पास पैसा है। पैसों के बल पर वे जो चाहें खरीद सकते हैं। इसलिए अपने लिए कुछ करने का यह एक अच्छा मौका आपके पास है। आप अगर संगठित होंगे तो हित संबंधों की रक्षा के लिए आप अपना प्रतिनिधि विधानसभा या संसद में भेज सकते हैं। ऐसा न करने से आपका विनाश होगा। इस झमेले से अपने समाज को बाहर निकालने के लिए

शेड्यूल्ड कास्टस् फेडरेशन के ध्वज के नीचे आपको संगठित होना होगा। अपने सच्चे प्रतिनिधि चुनने के लिए हर अस्पृश्य को फेडरेशन की मदद करनी होगी। कई पार्टियां आकर आपसे वोट की मांग करेंगी लेकिन उनकी बातों में आकर गलत रास्ते पर निकल नहीं जाना है।

कुछ दिनों पूर्व जवाहरलाल नेहरू यहां आए हुए थे। कहा जाता है कि दो-तीन लाख लोग उनका भाषण सुनने के लिए यहां इकठ्ठा हुए थे। मैं नहीं जानता कि कितने लोग वहां थे। कल मैं जब जालंधर गया था तब वहां दो लाख से भी अधिक लोग इकठ्ठा हुए थे लेकिन हिंदू और काँग्रेसी अखबारों ने वहां अंदाजन केवल 35 हजार लोग इकठ्ठा हुए थे ऐसी खबरें छापीं। मैं आपसे बस इतना ही कहना चाहता हूं कि काँग्रेस की कोई परिषद हो तो श्रोता बहुत कम हों तब भी वे यही छापेंगे कि सभा में बहुत बडा जनसमुदाय इकठ्ठा हुआ था। पांच होंगे तो पचास लिखेंगे, पचास होंगे तो पांच-सौ, पांच-सौ होंगे तो पांच हजार लिखेंगे और पांच हजार को वे पांच लाख लिख कर छापेंगे। इन अखबारों के द्वारा झूठी जानकारी देने और झूठी आलोचना किए जाने को लेकर मुझे आश्चर्य महसूस नहीं होता। ये अखबार कई सालों से मेरी आलोचना करते आए हैं। इसके बावजूद मेरा शारिरिक और मानसिक विकास हो ही रहा है। बहुत बड़े जमावड़े के सामने भाषण देना मुझे पसंद नहीं है। मैं बस इतना चाहता हूं कि इन हिंदु लोगों से होने वाले अत्याचारों का सामना करने के लिए हमारे लोग संगठित हों। मेरे विचार सुनें इतनी मेरी इच्छा है। फिर वे बहुत बड़ी संख्या में इकठ्ठा हों या छोटी संख्या में, मेरे लिए यह महत्वपूर्ण नहीं है।

हर राजनीतिक दल ने अपना घोषणा-पत्र घोषित किया है। हर पक्ष ने आश्वासन दिए हैं कि अगर वे जीत जाएंगे तो ये करेंगे और वो करेंगे। शेड्यूल्ड कास्ट फेडरेशन ने भी अपना घोषणा-पत्र जारी किया है। सबसे पहले काँग्रेस ने अपना मोटा घोषणापत्र जारी किया। लेकिन जब उन्हें अहसास हुआ कि आम आदमी उसे समझ नहीं पाएगा तो उन्होंने उसमें बदलाव किए और उसे छोटा बनाया गया। दिनों-दिन उनका घोषणा-पत्र छोटे से और छोटा होता जाएगा और एक दिन ऐसा आएगा कि काँग्रेस का कोई घोषणा-पत्र ही नहीं रहेगा ऐसा मुझे लगता है। मैं आपको बताना चाहता हूं कि घोषणा-पत्र में क्या होना चाहिए और क्या नहीं होना चाहिए। सभी राजनीतिक दलों को मेरी चुनौती है कि सबसे अच्छा घोषणा-पत्र चुनने के लिए वे एक कमेटी बनाएं। हमारा घोषणा-पत्र ही सर्वश्रेष्ट साबित होगा इसमें मुझे कोई शक नहीं। सभी दलों ने अपने-अपने घोषणा-पत्र में जनता को तरह-तरह के आश्वासन दिए हैं। आश्वासन देना बहुत आसान है लेकिन उन्हें प्रत्यक्ष में उतारना बहुत कठिन है। आप अगर एक बात का आश्वासन दे सकते हैं तो सौ बातों का भी दे सकेंगे। घोषणा-पत्र केवल आश्वासनों की फेहरिस्त नहीं होना चाहिए। देश को जिन समस्याओं से सामना करना पड़ता है उन पर घोषणा-पत्र

में विचार किया जाना चाहिए और उन समस्याओं को कैसे सुलझाया जा सकता है इस बारे में भी विचार व्यक्त किए जाने चाहिए। काँग्रेस के घोषणा-पत्र में क्या ऐसा कुछ है? काँग्रेस के घोषणा-पत्र में केवल एक बात पर ही जोर दिया गया है और वह है मुस्लिम समस्या। इस मुद्दे पर क्या कभी सहमति हो सकती है? विभाजन से पूर्व, जब पाकिस्तान का अस्तित्व नहीं था तब भी मुसलमानों की समस्या थी। लेकिन तब भी देश के सामने केवल यही एक समस्या नहीं थी। बड़ी संख्या में मुसलमान पाकिस्तान चले गए और अब केवल हिंदू, सिक्ख और अन्य अल्पसंख्यक लोग भारत में बचे हैं। क्या आपको लगता है कि भारत अब मुस्लिम समस्या से ग्रस्त है? मुस्लिमों से दस गुना जो गरीब हैं, पिछड़े हैं ऐसे अस्पृश्यों के लिए कुछ करने की जरूरत नहीं है क्या इस बात को आप मान सकते हैं? अनुसूचित जाति, आदिवासी, अपराधी समुदाय घुमंतू आदि की ओर सरकार को सबसे अधिक ध्यान देना चाहिए लेकिन काँग्रेस वाले लोगों से कहते हैं कि जातीवादी नहीं बनना चाहिए और पिछड़ी जातियों के लिए खास प्रावधानों की मांग नहीं करनी चाहिए। भारत की दूसरी समस्या है दरिद्रता। भारत के लोग बहुत गरीब हैं। वे इतने गरीब हैं कि 90 प्रतिशत लोगों को ठीक से खाना भी नहीं मिलता है। उन्हें कपडे नहीं मिलते हैं। उनके सिर पर छत नहीं है। हर साल करोड़ों रुपयों का अनाज विदेशों से आयात किया जाता है। हम कैसे टिक पाएंगे? लेकिन इन सभी बातों के लिए काँग्रेस वालों के पास कोई समय नहीं है। उनके सामने केवल एक ही समस्या है और वह है मुस्लिम समस्या।

मैं आपसे कहना चाहता हूं कि आगामी चुनावों में हम शेड्यूल्ड कास्टस् फेडरेशन के उम्मीदवार खड़े कर रहे हैं। शेड्यूल्ड कास्टस् फेडरेशन सभी पिछड़ी जातियों का प्रातिनिधि दल है। हर पिछड़े वर्ग को उसमें प्रतिनिधित्व दिया जाएगा। इस दल के बारे में किसी को डर नहीं पालना चाहिए। चमार और भंगी समान संख्या में हैं। हम एक ही जमात के लोग हैं इसलिए हमें आपस में झगड़ना नहीं चाहिए। सभी पुरुषों और महिलाओं से मैं विनति करना चाहता हूं कि मतदान के दिन सभी काम परे रख कर मतदान केंद्र पर जाकर मतदान जरूर करें। पहले ही हमारे वोट काफी नहीं हैं और उस दिन अगर आप मतदान नहीं कर पाएंगे तो हमारा भला नहीं हो पाएगा। हम प्रतिनिधित्व के बगैर रह जाएंगे। मतदान का दिन अनुसूचित जातियों के लिए जीवन-मृत्यु का दिन है।

आगामी चुनावों में हिस्सा लेने वाले हर राजनीतिक पक्ष को एक पक्षचिन्ह या पार्टी का निशान दिया गया है। हमारे फेडरेशन का चिन्ह हाथी है। हमारे लोगों के मन में किसी प्रकार की उलझन न पैदा हो इसलिए मैंने यह चिन्ह चुना है। कुछ दलों द्वारा बैल, घोड़े या गधे को चुना गया है लेकिन स्पष्टता के लिए मैंने हाथी को चुना है।

अपनी पसंद के एक ही उम्मीदवार को इस चुनाव के सभी मत नहीं दिए जा

सकेंगे। क्योंकि इस बार एकत्रित (cumulative) मतदान पद्धति नहीं है। अब विभाजित (distributive) मतदान पद्धति है। इसीलिए अलग-अलग उम्मीदवारों को अपने वोट देने हैं। एक साधारण उम्मीदवार को और दूसरा आरक्षित जगह से चुनाव लड़ने वाले उम्मीदवार को अपना मत देना है। आरक्षित जगह से चुनाव लड़ने वाले उम्मीदवार को हम अपने दोनों मत नहीं दे सकते। उसे हम अपना एक मत ही दे सकते हैं। साथ ही साधारण जगहों पर खड़े किसी अन्य को हमें अपना दूसरा मत देना पडेगा। इसीलिए हमें ऐसे पक्ष से समझौता करना होगा जो अपना एक मत हमारे उम्मीदवार को दे और हम अपना एक मत उनके उम्मीदवार को दें। हमें किस दल के साथ हाथ मिलाना है यह हमने अभी तय नहीं किया है। कई दल हमारे पास चुनाव के लिए आए लेकिन किस दल के साथ हमें गठबंधन करनी है इस बारे में अभी हमने अंतिम फैसला नहीं किया है। बातचीत चल रही है। किसी से हाथ मिलाने से पूर्व हमें बहुत सोच-विचार करना होगा। हालांकि किसी न किसी से हमें समझौता तो करना ही होगा।

आखिर मैं आपसे यही कहना चाहता हूं कि पंजाब, उत्तर प्रदेश तथा अन्य दूर-दूर के प्रदेशों से लोग दिल्ली में मेरे पास अपनी शिकायतें लेकर आते हैं। कुछ लोग बताते हैं कि जमींदार ने उनके साथ मार-पीट की और संबंधित अधिकारी से जब न्याय मांगा तो निर्णय उनके खिलाफ दिया गया। क्योंकि अधिकारी की जगह पर जो लोग थे वे सवर्ण हिंदू थे। ऐसी बहुत सी शिकायतें हैं जिनका निराकरण संभव नहीं, बिना रिश्वत के कोई जानकारी नहीं मिलेगी। इसलिए कई लोग निराश होकर अपने गांव चले जाते हैं। इसी वजह से मैंने तय किया है कि दिल्ली में एक इमारत बनाई जाए। वहां हमारा एक वकील रहेगा। वह अपने लोगों की शिकायतें सुन कर सलाह देगा। इससे पूर्व हमने इस काम के लिए दिल्ली में जमीन का एक टुकड़ा खरीद लिया है। उस जगह अब इमारत खड़ी करनी है। वही अपने फेडरेशन का कार्यालय होगा। बाहर से आने वाले लोगों का वहां स्वागत होगा। उनकी शिकायतें सुनी जाएंगी। इस इमारत के बनाने के लिए बहुत आवश्यक होने के बावजूद हमारे पास काफी पैसा नही है। इसीलिए आप सबसे मेरी विनति है कि आप अपनी क्षमता के अनुसार चंदा दें। इस प्रकार हम अपने उद्देश्य को पूरा करने में कामयाबी पा सकते हैं। दिल्ली के बाबा तुलादास निधी इकठ्ठा करने के लिए पंजाब का दौरा करेंगे। इस प्रकार हम अपने उद्देश्य में कामयाबी हासिल कर सकते हैं। इस उदात्त काम के लिए आप सब उदार होकर मदद करें ऐसी विनति एक बार फिर मैं आपसे करता हूं।

282

देश पर आए संकट से मुकाबला करने में हम सबसे आगे होंगे

अक्तूबर माह के अंत में बाबासाहेब ने पंजाब का दौरा किया तब पटियाला में 29 अक्तूबर, 1951 में उनका जोरदार स्वागत हुआ। उस वक्त पंजाब दलित फेडरेशन के प्रमुख नेता बापूसाहेब राजभोज, सेठ किसनदास, श्री सुलेख, श्री मिहानसिंह उपस्थित थे। डॉ. बाबासाहेब ने भाषण में कहा .

बहनों और भाइयों,

श्री राजभोज ने आपको बता ही दिया है कि मेरी तबियत ठीक नहीं है। मैं संक्षेप में अपने दल की भूमिका स्पष्ट करता हूं और राजनीति के अखाड़े में उतरने के बाद किस बात का कैसे मुकाबला करना है, यह बताता हूं।

अस्पृश्यों पर अत्याचार करने तथा महत्वाकांक्षाओं को दबाने की प्रथा पर कॉंग्रेस और सवर्ण हिंदू अगर समय रहते रोक नहीं लगाते हैं तो उन प्रथाओं को खत्म करने के लिए हमें कुछ और तरीके अपनाने पड़ेंगे। समय रहते कॉंग्रेस को अपनी नीति बदलनी होगी। उन्हें अस्पृश्यों को बढ़ावा देने वाली नीति अपनानी होगी।

यह चुनावी दौर है। इसी में देश के सारे दल और उनके कार्यकर्ता व्यस्त हैं। बेशक चुनाव महत्वपूर्ण होते हैं। कम से कम हमें आगामी चुनाव बेहद महत्वपूर्ण - यानी जिंदगी और मौत का सवाल हैं, इसीलिए इस सवाल पर पूरी तरह सोचना और उचित हल निकालना बहुत जरूरी है।

कॉंग्रेस सबसे बड़ा राजनीतिक दल है। पिछले 60 सालों से यह दल बना हुआ है। साथ ही आज वह सत्तारूढ़ है। चार सालों तक इस दल ने राज चलाया है। बड़ी शान से इस पार्टी की ओर से लोगों को यह बताया जाता है कि कॉंग्रेस के अलावा देश और लोगों का कोई भला नहीं कर सकता, इसलिए कॉंग्रेस को ही वोट देना चाहिए। कॉंग्रेस एक बार फिर सत्ता में आना चाहती है। गरीबों को निचोड़ खाने वाली कॉंग्रेस चाहती है कि लोग फिर से चुनें। कॉंग्रेस के पास किराए के प्रचारक बहुत हैं। इस पार्टी के पास बहुत पैसा होने के कारण ऐसे लोग उनसे पलते भी हैं। उनके जरिए कॉंग्रेस लोगों पर दबाव डाल सकती है।

इसलिए कॉंग्रेस में असल में क्या चल रहा है इसकी जानकारी जरूरी है। इकतरफा प्रचार के कारण किसी का नुकसान नहीं होना चाहिए। अनाज और कपड़ों का सवाल कॉंग्रेस हल नहीं कर पाई है, हम सब जानते हैं। उल्टे, यह अब बेहद मुश्किल सवाल बन गया है।

शरणार्थियों की समस्या को भी सत्तारूढ़ कॉंग्रेस हल नहीं कर पाई है। इसलिए फिर

जनता : 3 नवंबर, 1951

अगर सत्ता में आए तो इन सवालों को वह कैसे हल कर पाएगी? अपना निकम्मापन उसने चार सालों के अपने कार्यकाल में साबित कर ही दिया है। काँग्रेस यह कह सकती है कि थोड़े समय में ये समस्याएं हल नहीं हो सकतीं। इसके बावजूद काँग्रेस की केंद्रीय और प्रांतीय सरकारों पर हुकूमत चलाने वाले हाईकमांड द्वारा देश को कम से कम घूसखोरी, सांठगांठ, नैतिक ह्रास इन तीन महान रोगों से मुक्त करना चाहिए था। काँग्रेस अगर चाहती तो वह इन बुराइयों को समूल नष्ट कर सकती थी लेकिन इस जहर का असर काँग्रेस सरकार के राजकाज में इतना आ चुका है कि उसे जड़ से उखाड़ना संभव नहीं। छोटे से लेकर बड़े तक हर कोई एक ही थैले के चट्टे-बट्टे बने गए हैं।

काँग्रेसी मंत्रिमंडल से अपना कोई कामकाज करवाना हो तो घूस देनी ही पड़ेगी वरना अर्जी खारिज की जाएगी, यह पक्का जानिए। मैं ये आरोप नहीं कर रहा। काँग्रेस के भीतर से ही ऐसे आरोप किए जाते हैं। घूसखोरी और कालाबाजारी का कुछ हिस्सा काँग्रेस का मंत्रिमंडल लेता है ऐसा खुलेआम लोग बोलते हैं।

मद्रास के मुख्यमंत्री श्री टी. प्रकाशन को काँग्रेस की ऐसे ही अंदरूनी घपलों के कारण इस्तीफा देना पड़ा। इस्तीफा देने के बाद उन्होंने काँग्रेस हाइकमांड के सामने मद्रास के सहयोगी मंत्रियों पर गंभीर आरोप लगाए। उसमें साफ तौर से कहा गया था कि कुछ मंत्रियों ने नियंत्रण का फायदा उठाते हुए खुद की झोली भरी है। साथ ही सरकारी पैसों का निजी काम के लिए इस्तेमाल किया गया। कुछ लोगों ने रिश्तेदारों को सरकारी काम दिए। उत्तर प्रदेश में भी ऐसा ही कुछ हुआ। किसी समय प्रांतीय काँग्रेस के अध्यक्ष त्रिलोकसिंह और अब यू. पी. एसेंब्ली में विरोधी गुट के नेता ने भी काँग्रेस के मंत्रियों पर इसी प्रकार के आरोप लगाए थे। पंजाब में दो पूर्व प्रमुख मंत्री एक-दूसरे पर घूसखोरी का और अनैतिकता का खुलेआम आरोप लगा रहे हैं।

असल में काँग्रेस हाईकमांड को एक जांच आयोग की नियुक्ति कर इन आरोपों की सिलसिलेवार और गहराई से जांच करनी चाहिए। अपराधियों को दंडित करना चाहिए। इस प्रकार जांच किए बगैर यह नहीं कहा जा सकता कि अच्छी सरकार अस्तित्व में है क्योंकि आरोप खुद मंत्रियों पर लगे हैं। एक अंग्रेज मंत्री के साथ घटी एक घटना का यहां जिक्र करना आवश्यक है। एक मंत्री पर घूसखोरी का आरोप था। मजदूर प्रमुख मंत्री मि. एटली ने तुरंत जांच आयोग की नियुक्ति की। पूछताछ में पाया गया कि एक व्यापारी द्वारा मंत्री को क्रिसमस में एक विस्की की बोतल और कुछ कपड़ा दिया गया था। दोनों में लेन-देन का कोई उद्देश्य नहीं था। बात बिल्कुल ही नगण्य थी। लेकिन एटली ने उस मंत्री को इस्तीफा देने पर बाध्य किया।

लेकिन हमारे देश में क्या स्थितियां हैं देखिए। विभिन्न प्रांतों के करीब पच्चीस मंत्रियों पर गंभीर आरोप हैं। लेकिन काँग्रेस हाइकमांड ने इस तरफ से जानबूझ कर आखें मूंद ली हैं। इतना ही नहीं इन लोगों पर लगे आरोपों की जांच नहीं की गई और वे आरोपी चुपचाप मनमानी कर रहे हैं और ऐसे नेताओं के हाथ में अपने देश का भविष्य है।

बताइए, ऐसी काँग्रेस और उसके मंत्रियों के बारे में विश्वास कैसे निर्माण होगा? जो खुलेआम लोगों को लूट रहे हैं ऐसे चोरों के साथ स्वाभिमानी और न्यायप्रिय पुरुष कैसे सहमत हो सकते हैं? मैं तो कहता हूं कि काँग्रेस सरकार भ्रष्ट (corrupt) सरकार है। वह चोरों की सरकार है।

लोगों को लगता था कि जवाहरलाल नेहरू ऐसे आचारभ्रष्ट मंत्रियों के कामकाज पर ध्यान देंगे लेकिन अनुयायियों को उन्होंने घोर निराश किया है। उल्टे, दिल्ली में जब काँग्रेस का अधिवेशन हुआ तब उन्होंने कहा कि अन्य देशों में घूसखोरी बहुत बड़े पैमाने पर होती है। इससे जो पुराने, प्रतिष्ठित चोर हैं उनके लिए खुला दरवाजा मिल जाता है, जो लोग पक्के चोर बनने में आनाकानी करते रहते हैं उन्हें भी ऐसी बातें धीरज देती हैं। जो लोग घूस लेकर अमीर बन रहे हैं वे इस बात से वुश हो सकते हैं कि जवाहरलाल नेहरू हमारे मंत्री हैं। क्योंकि ऐसे अपराधों के लिए सजा नहीं देना, उन्हें माफ करना या उनकी ओर अनदेवी करना पंडितजी अपना धर्म मानते हैं। जिन्हें ऐसी बातें करने में शर्म नहीं महसूस होती वे देश का कल्याण क्या करेंगे?

जो लोग काँग्रेस को वोट देंगे वे इसी बात के लिए देंगे कि ऐसी बातें चलती रहें। लेकिन भारतीयों में अच्छा क्या है और बुरा क्या है पहचानने की योग्यता आ गई है।

काँग्रेस के लोग दूसरों को सलाह देते हैं कि आप अपनी पार्टी छोड़कर हमारी पार्टी में शामिल हो जाइए। क्योंकि, वे कहते हैं कि, काँग्रेस ही देश का भला करने वाली है। मैं आपसे पूछता हूं कि क्या कभी चूहा और बिल्ली एक साथ रह सकते हैं? सांप और नेवले में मित्रता होना क्या संभव है? एक-दूसरे का वे सत्यानाश ही करेंगे। प्राणिमात्रों में ऐसे कई उदाहरण देखने मिलते हैं। इनके बीच भी यही हाल है। देश में कुछ ऐसे लोग हैं और कुछ ऐसे दल हैं जिनका काम परस्परविरोधी है। किसानों को लूटने वाले बनिए और किसानों के बीच क्या कभी मित्रता संभव है? बिल्कुल ऐसा ही हाल ब्राह्मण और अस्पृश्यों के बीच है। ब्राह्मण वर्ग अस्पृश्यों को हमेशा कैद रखना चाहेगा। वह उन्हें कभी उभरने नहीं देगा।

ब्राह्मणवर्ग अस्पृश्यों को सीधा-सादा जीवन तक जीने नहीं देते। फिर अत्याचारी और पीड़ितों का एक दल होना कैसे संभव है? जिस पार्टी में अत्याचारी और स्वार्थी लोगों को प्रतिष्ठा प्राप्त है ऐसी पार्टी से गरीब और अत्याचार पीड़ित लोगों का क्या कल्याण होगा? बिल्कुल नहीं।

इसलिए ऐसे अत्याचारों से पीड़ित लोगों का एक बहुत बड़ा विरोधी संगठन होना बहुत महत्वपूर्ण है। वरना लोगों की उम्मीदों पर ये पानी फेरते ही रहेंगे। काँग्रेस के झांसे में उनके मीठे धोखे में न आना। अपने पैरों पर कुल्हाडी चलाने से आप ही बाद में दुखी होंगे। ऐसे पक्ष में शामिल होना यानी परंपरा से चले आए अत्याचारों के लिए खुद को समर्पित करना है।

इस प्रकार देश को मिली आजादी का उपभोग केवल सवर्ण ही करेंगे। आजादी के

लाभ अगर आप भी चाहते हैं तो, आप अगर अपना संगठन बनाना चाहते हैं तो शेड्यूल्ड कास्ट्स फेडरेशन को मजबूत करना यही एकमात्र मार्ग है।

कॉँग्रेस के हरिजन मंत्रियों ने लोगों के बीच खुद जाकर प्रचार किया था कि आज की सभा में उपस्थित न रहें। हमारे फेडरेशन द्वारा अगर अस्पृश्यों के हितों के लिए लड़ाई नहीं छेड़ी होती तो क्या यह संभव था? ऐसे हाल में ये मंत्री कहां होते? इन्हें मंत्री किसने बनाया? साफ कहूं तो मैंने बनाया। फेडरेशन ने इन्हें मंत्री बनाया। फेडरेशन ने अगर लड़ाई नहीं छेड़ी होती तो आज ये हरिजन मंत्री भी अपमान और जिल्लतभरी जिंदगी जी रहे होते। इन हरिजन मंत्रियों ने क्या कभी अपनी मां या बहनों की आंखों के आंसुओं को पोंछा है? उनकी जरूरतों की ओर क्या कभी आस्थापूर्वक ध्यान दिया है? उन्हें इंसानियत से भरीपूरी जिंदगी देने के लिए क्या कोई कोशिश की है? कॉँग्रेस के प्रति ईमानदारी रखने वाले इन मंत्रियों ने केवल अपना उल्लू सीधा किया है। इसीलिए राजकाज चलाने के लिए हमें केवल अपने ही लोग चाहिए। जो अपने बंधुओं पर हुए अत्याचारों के बारे में सवाल पूछेंगे, उनके जीवन में सुख लाने की कोशिश करेंगे, प्राणों के बलिदान देने की जरूरत हो तब भी वे अपने प्राणों की बलि चढ़ा कर ही सही उनके हकों की रक्षा करेंगे। ऐसे लोगों को चुनकर भेजना ही उचित है। ऐसे ही लोगों को लोकसभा में और प्रांतीय एसेंब्ली में चुनकर भेजना चाहिए। वे अपनी बुद्धि गिरवी रख कर काम नहीं करेंगे। अस्पृश्यों के दुखों को आवाज देंगे ऐसे लोग ही लोकसभा में उचित काम कर सकेंगे। अब जो अस्पृश्य मंत्री और सदस्य कॉँग्रेस के गुलाम हैं। कुत्ते की तरह वे अपने मालिक के जूते चाट रहे हैं। ऐसे लोग अपने बंधुओं के लिए क्या खाक करेंगे?

कॉँग्रेस में शामिल होने के लिए मुझ पर भी दबाव डाला जा रहा था। लेकिन जो पार्टी मेरे अस्पृश्य बंधुओं का कभी भला नहीं कर सकती उस पार्टी में शामिल होकर क्या मैं भी उनका गुलाम बनूं? यह कभी नहीं हो सकता। इसीलिए मैंने मंत्री पद से इस्तीफा दे दिया। इस्तीफा देने के लिए मुझसे किसी ने कहा नहीं और न ही किसी घपले के कारण मुझे इस्तीफा देना पड़ा है। घूसखोरी या अन्य किसी तरह के भ्रष्टचार में मैं कभी पड़ा ही नहीं। ऐसी सरकार में, मैं कभी निष्पक्ष तरीके से जनता की सेवा नहीं कर पाऊंगा यह जब मेरे सामने साफ हो गया तभी मैंने मंत्रीपद से इस्तीफा दिया और यह ठीक रहा।

अभी भी हमें लगता है कि हमारे सवर्ण हिंदू हमारे उद्धार की खातिर अपने अधिकारों का प्रयोग करें। हम और दस सालों तक इंतजार करें और तब भी अगर हमें लगे कि इसमें कोई मतलब नहीं है तो हम अपने हक को पाने के लिए जो अन्य तरीके हमें सही लगेंगे उन्हें अपनाएंगे।

देश पर संकट आए तो हम हमेशा आगे रहेंगे। असल में हम देश के लिए मर मिटते हैं, सवर्ण हिंदू नहीं। वे देश के नाम पर, लोगों के नाम पर खुद मलीदा खा रहे हैं। यह हमेशा का ही अनुभव रहा है। जब सेना में भर्ती का सवाल उठता है तब अस्पृश्य पहले आगे बढ़ता है और अपना नाम दर्ज कराता है। सवर्ण हिंदू लोग ऐसे कैंपों के आसपास

दुकानें सजा कर बैठ जाते हैं। काँट्रक्ट लेते हैं और देश और लोगों को लूटते हैं।

पिछले चौबीस सालों से मैं अस्पृश्यों को उनके हक दिलाने के लिए लड़ता रहा हूं। लेकिन इसमें मेरा कोई स्वार्थ नहीं है। गांधीजी के सामने मैंने एक सीधा सा सवाल रखा था,

''हम देश की आजादी के खिलाफ नहीं हैं लेकिन आजाद भारत में अस्पृश्यों का क्या स्थान रहेगा?'' लेकिन इस सवाल का गांधी ही नहीं अन्य कोई भी संतोषजनक जवाब नहीं दे पाए। मैं यही सवाल सवर्ण हिंदुओं से पूछना चाहता हूं।

आज देश की आजादी उनकी है। हम अभी भी गुलाम ही हैं। सवर्ण हिंदुओं के अत्याचार का यह फल है। यह हमारा अपराध नहीं है। हम अगर अन्य लोगों की तरह जीना चाहते हैं तो हमें अपने ही पैरों पर खड़े रहना होगा। अस्पृश्य बहन-भाई इस बात को ध्यान में रखें।

सवर्ण हिंदुओं को मेरा सुझाव है कि वे हमने जो हासिल किए हैं उन राजनीतिक अधिकारों को लागू करने की राह में अड़ंगा न डालें। लेकिन काँग्रेस हममें से नमकहराम लोगों को मौका देती है और भेदभाव करने के लिए कहते हैं। चुनाव का टिकट अपनी झोली में आए इसलिए कोशिश करने वाले लोग स्वार्थी और ढोंगी हैं। पहले वे काँग्रेस के पास जाते हैं वहां से गच्चा मिलने पर, लात खााने पर फिर फेडरेशन से टिकट की भीख मांगने आते हैं। इस प्रकार काँग्रेस, हमने जो हक हासिल किए हैं उन्हें नष्ट करना चाहती है। इसीलिए हमें अभी चौकन्ना होना चाहिए। हमें जमकर सामना करना होगा। चुनावों में हमें अपने ही उम्मीदवारों को जिताना होगा। इसमें अगर हम चूक गए तो हमारी हार निश्चित है यह मान लीजिए।

दस सालों की इस अवधि के बाद वे आपकी ओर देखेंगे भी नहीं। हमें इस तरफ से भी सावधान रहना है और कल की खातिर आज ही अपनी इमारत की नींव मजबूत करनी है। हमें ऐसे ही प्रतिनिधि चुनने चाहिए जो हमारे अधिकारों के लिए संसद में लड़ें और प्राण जाएं तब भी पीछे नहीं हटें।

एक और बात आपको ध्यान में रखनी है कि हम अल्पसंख्यक हैं। हमारे मतदाताओं की संख्या भी कम है। प्रत्येक का मतदान करना महत्वपूर्ण है। मतदान के दिन सभी महिला-पुरुषों अपने बाकी सभी काम एक तरफ रख कर हम में से प्रत्येक को अपने मतदान के अधिकार का इस्तेमाल करना होगा।

इस बार यकीनन लगता है कि काफी सफलता मिलेगी। अब काँग्रेस की मजबूती ढह गई है। पंजाब में दो काँग्रेसी गुट गुत्थम-गुथा हैं। उनमें समझौता होना संभव नहीं। हमें काँग्रेस से डरना नहीं चाहिए। इसीलिए मैं आपसे विनति करता हूं कि देश में फेडरेशन द्वारा खड़े किए गए उम्मीदवार को ही अपना वोट दें। हम अगर इस लड़ाई में जीते तो कई ठोस सुधार ले आएंगे। हमारे अधिकारों के बीच आने वाली बातों को खत्म कर देंगे।

283

किसने योजना बनाई इसके बजाय देखें कि योजना कैसी है

दिनांक 15 नवंबर, 1951 को भुसावल में डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने भाषण में कहा–

भाइयों और बहनों,

पहले जब शराब पर पाबंदी नहीं थी, शराब की सरकारी दुकाने थीं, तब शराब बनाने के गैर–कानूनी काम बहुत ही कम थे। किसी भी दूसरे देश की तुलना में हमारे देश के लोगों में शराब की लत बहुत अधिक है। आज जब शराब पर पाबंदी लगी है तब घर–घर शराब का बनना शुरु हुआ है। घर में ही शराब बनने के कारण महिलाओं और बच्चों को भी शराब की लत लग चुकी है। नैतिकता का अध:पतन बड़ी तेजी से हो रहा है।

शराब की लत छुड़ाने के लिए व्यक्ति का शिक्षित होना जरूरी है। अल्पसंख्यक शराब की लत के मारे लोगों को लत से मुक्ति दिलाने के भरसक कोशिशें की जानी चाहिए लेकिन सरकार ने शिक्षा पाना बहुत कठिन कर रखा है। केवल प्राथमिक शिक्षा से आज पिछड़े समाज का उद्धार संभव नहीं है। उन्हें उच्च शिक्षा मुहैया करानी होगी। जब तक यह नहीं होता तब तक उच्च वर्ग के हाथ में ही सत्ता रहेगी। जब तक इन हालात में कोई बदलाव नहीं आता तब तक स्वराज्य का हम अस्पृश्यों को, पिछड़े वर्ग की जनता को क्या फायदा?

शराब पर पाबंदी लगाने के लिए मुंबई सरकार ने 1946 में 9 करोड़ रुपए बरबाद किए। इतना ही नहीं तो शराब पर पाबंदी लगाने का कानून जारी करने के लिए पुलिस वगैरा की नियुक्ति पर गरीब जनता का 3–4 करोड़ रुपया और खर्च किया जा रहा है। उपस्थित लोगों से मैं एक सवाल पूछना चाहता हूं कि समाज में अत्यंत अल्प संख्या में होने वाले शराबियों को शराब की लत से मुक्त करने, नहीं मुक्त करने का भ्रम पैदा करना महत्वपूर्ण है या समाज के बहुसंख्य भूखे लोगों को जिंदा रखना, जिन्हें बदन ढंकने के लिए कपड़ा नहीं मिलता उन्हें कपड़ा दिलाना, जिनके सिर पर छत नहीं है उन्हें आसरा दिलाना अधिक महत्वपूर्ण है? इस सवाल का आप खुद जवाब दें।

जनता : 1 दिसंबर, 1951

इस योजना से दो बातें षरूर होंगी। पहली बात यह कि, नियोजन कमिशन के अध्यक्ष जवाहरलाल नेहरू प्रधानमंत्री के नाते एक सर्वाधिकारी बनने वाले हैं। मैं अपना अनुभव आपको बताता हूं। हर विभाग के कामकाज को और विभाग के मंत्री को पंडित नेहरू अपने नियंत्रण में रखना चाहते हैं। वह किसी को आजादी से काम करने नहीं देने वाले। दूसरी बात यह कि इस योजना से घूसखोरी को बढ़ावा मिलने वाला है। जिन्हें सरकारी काम करवाना होता है उन महिला–पुरुष का अनुभव उन्हें यही बताता है कि घूस दिए बगैर सरकारी अधिकारी काम नहीं करते। इस पंचवर्षीय योजना के अनुसार एक लाख से अधिक रकम वाले व्यवसाय को शुरू करने के लिए सरकारी अधिकारी से इजाजत की जरूरत होगी। इससे घूसखोरी के क्षेत्र में हजारों गुना बढ़ोतरी होने वाली है। कुल मिला कर देखा जाए तो इस योजना में उम्मीद जगाने वाली कोई बात नहीं है।

अपने काम के बारे में जब कोई कुछ ठोस बता नहीं सकता तब औरों के बारे में गलफहमियां फैलाने के लिए, औरों की निंदा करने के लिए वह जहां तक संभव हो सारी कोशिश करता है। काकासाहब का आखिर ऐसा ही हुआ। उन्होंने आखिर शेड्यूल्ड कास्ट्स फेडरेशन और समाजवादी के बीच हुए करार को लेकर जहर उगलने की कोशिश की। उनका सवाल है, शेड्यूल्ड कास्ट्स फेडरेशन जातीय संस्था है, और हम कभी भी किसी जातीय संस्था के साथ सहयोग नहीं करेंगे कहने वाले समाजवादियों ने इस जातीय संस्था के साथ सहयोग क्यों किया? काँग्रेस का दावा है कि कुछ दल जातीय हैं और कुछ नहीं। काँग्रेस की ओर से 1920 से प्रचार किया जा रहा है कि दलित फेडरेशन जातीयवादी संस्था है। काँग्रेस का यह भी दावा है कि सिर्फ काँग्रेस ही जातीयवादी नहीं है। काँग्रेस के नेताओं से मेरा सवाल है कि क्या काँग्रेस के नेताओं ने जाति भेदभाव को किनारे किया है? क्या काँग्रेस के नेताओं ने सहभोज, सह–विवाह पर अमल किया है? काकासाहब ने अपनी कन्या के लिए क्या उच्चकुलीन सरदार पुत्र ही नहीं चुना? अधिकार के पदों पर नियुक्ति करते समय अपने ही जाति के लोगों को वरीयता देने की प्रवृत्ति काँग्रेस के नेताओं में बड़े पैमाने पर दिखाई देती है। हमारे अस्पृश्य समाज में हजारों जातियां हैं। लेकिन जातिभेद तोड़ने की हमने जैसी कोशिश की और कर रहे हैं, वैसी कोशिश क्या काँग्रेस के नेताओं ने की है? आज तो वे केवल अपने ही जातभाई की भरती कर रहे हैं। काँग्रेस से विरोध इसलिए है क्योंकि मैं जाति से महार हूं। हमारी कौम का इतिहास लडाकू और स्वाभिमानी जमात रहा है।

नदी का उद्‌गम और ऋषि का कुल कोई नहीं देखता उसी नजर से हमारे दलित फेडरेशन के कार्यक्रम की ओर, हमारी योजनाओं की ओर देखिए। योजना किसने बनाई यह देखने के बजाय योजना कैसी है यह देखिए। अन्य योजनाओं के साथ कसौटी पर उतारें। ठीक न हो तब बोलिए, बेकार में क्यों बुराई करते हैं?

काँग्रेस को इस बात का बुरा लगता है कि हमने समाजवादियों के साथ हाथ मिलाया। उन्हें लगता है कि सब काँग्रेस की ही उंगली पकड़ कर चलें। समाजवादियों के साथ हमारे हाथ मिलाने से क्या अनर्थ हुआ हम नहीं जानते। काँग्रेस के अलावा जितने भी दल हैं उन्हें एकजुट करने का मेरा खयाल था। हालांकि चुनाव में अधिक समय बचा न होने के कारण अब यह संभव नहीं है। चुनावों के बाद मैं एक बार फिर कोशिश करने वाला हूं। दो पार्टियों की योजनाएं और कार्यक्रम अगर बहुत अंतर न हो तो चुनाव के लिए हाथ मिलाने में बुराई ही क्या है? इसी भूमिका के आधार पर हमने हाथ मिलाए हैं। पूर्व और पश्चिमाभिमुख दो पक्षों में मेल करना बेईमानी हो सकती है लेकिन एक ही दिशा में अगर दो लोग जा रहे हों तो कुछ फासला वे साथ में तय करें तो उसमें कैसी बेईमानी? उसमें कौनसा पाप? आज तो हमारा मेल केवल चुनावों के लिए है।

284

दुनिया के राष्ट्रों की राय में फेडरेशन का घोषणा-पत्र सर्वोत्तम

गुरुवार, दिनांक 15 नवंबर, 1951 के दिन डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर दिल्ली से मुंबई जा रहे थे। उस समय बीच में खानदेश, भुसावल, चालीसगांव आदि जगहों पर उन्होंने प्रचार सभाएं कीं।

कर्मवीर दादासाहब गायकवाड़ के हाथों चालीसगाव तहसील की ओर से दलित समाज ने बाबासाहेब को 2001 रुपयों की थैली अर्पण की। उसके बाद तालियों की गड़गड़ाहट और भीम भगवान की जयकार के बीच बाबासाहेब ने अपना भाषण शुरू किया। उनके भाषण में जोर चुनावों पर था-

देश के अनेक राजनीतिक दलों द्वारा अपने घोषणा-पत्र जारी किए गए हैं। उनमें शेड्यूल्ड कास्ट्स् फेडरेशन का घोषणा-पत्र सर्वोत्कृष्ट होने का प्रमाण दुनिया के सभी राष्ट्रों ने दिया है। काँग्रेस के घोषणा-पत्र में आश्वासनों के अलावा कुछ भी नहीं। पहले दिए गए आश्वासन ही काँग्रेस पूरे नहीं कर पाई है। इसलिए काँग्रेस का घोषणा-पत्र खोखला साबित हुआ। काँग्रेस के नेताओं के बीच आपसी बैर था और है। मैं राजकाज में 4 सालों तक काँग्रेस के साथ रहा। इतने समय में मुझे काँग्रेस के नेताओं के बीच एकता दिखाई नहीं दी। जवाहरलाल नेहरू और टंडनबाबू और जवाहरलाल नेहरू और वल्लभभाई पटेल के बीच का आपसी बैर-भाव जगजाहिर है। इसलिए हम ऐसे हालात में क्या कर सकते हैं? काँग्रेस बाहरी तौर पर भले अच्छी लगे लेकिन अंदर से पूरी तरह से जर्जर है। उसमें एकता नहीं। ऐसी काँग्रेस को वोट देने से क्या मतलब है? इसलिए इस बात पर हर स्पृश्य-अस्पृश्य को सोचना होगा। काँग्रेस अब पार नहीं पा सकती।

शेड्यूल्ड कास्ट्स् फेडरेशन की ओर से समाजवादी पार्टी के साथ हाथ मिलाया है इसलिए शेड्यूल्ड कास्ट्स् फेडरेशन और समाजवादी दल को ही चुनें। शेड्यूल्ड कास्ट्स् फेडरेशन की ओर से चालीसगांव-मड़गाव क्षेत्र से जनरल सीट आयु. श्री टी. टी. पवार खड़े किए गए हैं। उन्हें ही अपना वोट देकर चुनाव जिताएं।

जनता : 1 दिसंबर, 1951

285

सत्ता में आनेवाले प्रत्येक दल को जनता के सर्वांगीण हितों के लिए ज्योतिबा फुले की नीति और प्रजातंत्रवादी दर्शन ही अपनाना होगा

''जनता'' के 17 नवंबर, 1951 के अंक में की गई घोषणा के अनुसार डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के मनमाड़ और नासिक में सार्वजनिक सभाएं आयोजित की गईं। नासिक में उनके कार्यक्रम की शुरुआत दिनांक 17 नवंबर, 1951 को शाम 6 बजे हुई। उन्होंने कहा–

बहनों और भाइयों,

मेरे मित्र आयु. भाऊराव गायकवाड़ ने मुझसे विनति की है कि मैं आपसे दो शब्द कहूं। मेरा यह चुनावी दौरा है और मैं चुनाव के बारे में ही कुछ कहने जा रहा हूं। मेरी आपसे विनति है कि इस क्षेत्र से चुनावों में उतरे शे. का. फे. और समाजवादी पार्टी के उम्मीदवार को ही आप अपना मत दें।

इस चुनाव में काँग्रेस को हराना बिल्कुल असंभव है ऐसा नहीं है। सब जानते हैं कि काँग्रेस में कितना असंतोष फैला हुआ है। आजाद सोच वाले नागरिक काँग्रेस पसंद नहीं करते। वह केवल गुलाम चाहती है। जिन लोगों को यह बात हजम नहीं होती वे काँग्रेस छोड़ देते हैं। देश में आज जितने दल हैं उनमें जनता को अत्यंत अप्रिय दल अगर कोई है तो वह है काँग्रेस।

इसके बावजूद मुझे डर है कि इस चुनाव में काँग्रेस ही जीतेगी। इसकी वजह एक ही है और वह है आज काँग्रेसविरोधी दलों में एकता नहीं है। कई पार्टियां हैं और हर पार्टी द्वारा अपने-अपने उम्मीदवार खड़े किए गए हैं। ये उम्मीदवार आपस में झगड़ेंगे और उनके झगड़ों के कारण काँग्रेस विरोधी ताकतों का बल कम होगा और काँग्रेस की विजय होगी।

काँग्रेस विरोधी सभी दलों को एकजुट कर एक चुनाव क्षेत्र से काँग्रेस के खिलाफ एक ही उम्मीदवार खड़ा रहे ऐसा कुछ करने की मेरी इच्छा थी। लेकिन इतना समय नहीं था इसलिए इस बारे में की गई मेरी कोशिश कामयाब नहीं हो सकी। हालांकि जिन पार्टियों में ज्यादा एकजुटता है उनमें कम से कम चुनावों तक ही सही एकता लाने के

जनता : 8 और 15 दिसंबर, 1951

उद्देश्य से फेडरेशन द्वारा समाजवादी पार्टी के साथ चुनाव-करार किया है। आप जानते हैं कि पंढरपूर जाने के कई रास्ते हैं। सभी एक ही राह से जाएं यह संभव नहीं होता। कुछ लोगों की श्रद्धा होती है कि फलां राह से जाएंगे तभी वैकुंठ की प्राप्ति होगी। अभी तक हमें राजनीति का कोई खास अनुभव नहीं है। जब अनुभव की प्राप्ति होगी तभी सभी दल इकठ्ठा आकर राह के बारे में विचार करेंगे। उसीमें से हमें काँग्रेस के खिलाफ पक्षों की एकजुटता के दर्शन होंगे। लेकिन आज हर किसी को अपना ही रास्ता सही प्रतीत हो रहा है। ऐसे हालात में राह की ओर ज्यादा ध्यान देना छोड़ कर किस दिशा में जाना है यह देख कर उस दिशा में जाने वाले दूसरों के हाथों में हाथ डाल कर आगे बढ़ा जाए तो उसका मतलब किसी को धोखा देना नहीं होगा। और किसी पर बेईमानी का आरोप भी नहीं लगाया जा सकता।

इसी नजरिए के साथ फेडरेशन और समाजवादी पक्ष ने चुनाव गठबंधन किया है। हम दोनों के बीच कुछ मामलों में मतभेद हैं, लेकिन हम दोनों की दिशा एक ही है। उच्च वर्ग के दबाव से जनता को मुक्ति दिलाने को लेकर हम दोनों दलों की एक राय है। इसलिए भले सभी मामलों में हमारी राय एक न हो लेकिन दोनों दलों का एक दिल से, संगठित होकर इस लड़ाई में एक-दूसरे का साथ देना संभव है इसका हम दोनों पार्टियों को यकीन होने के कारण ही हम संयुक्त रूप से चुनाव लड़ने जा रहे हैं।

मुझसे सवाल पूछा गया कि महाराष्ट की शेतकरी-कामगार पार्टी किसान-मजदूर पक्ष से आपने हाथ क्यों नहीं मिलाया? आज से पहले कभी इस विषय पर मैंने सार्वजनिक रूप से कुछ कहा नहीं था लेकिन आज मैं इस सवाल का जवाब देने वाला हूं। पहले ब्राह्मणेतर दल था। न सिर्फ अपने प्रांत में बल्कि मध्यप्रांत, वरदहाद, मद्रास में भी ऐसी पार्टी का अस्तित्व था। म. ज्योतिबा फुले ने इस पार्टी की शुरुआत की थी, इसलिए इस पार्टी के अनुयायी अपने को म. फुले के अनुयायी कहलाने लगे। लेकिन वे केवल नाममात्र के अनुयायी रहे। ज्योतिबा का कार्यक्रम, उनकी नीतियां आदि बातों को इन लोगों ने त्याग दिया। अपने अलग अस्तित्व को जमीन में अपने ही हाथों गाडकर वे काँग्रेस में भी शामिल हुए। कालांतर में ये ब्राह्मणेतर दल नामशेष हुआ। ज्योतिबा का अनुयायी कहलाने में मुझे पहले कभी शर्म महसूस नहीं हुई और आज भी नहीं होती है। आत्मविश्वास के साथ मैं कह सकता हूं कि केवल मैं ही आज तक ज्योतिबा से ईमानदारी और निष्ठा के साथ जुडा हुआ हूं। मुझे इस बात का भी यकीन है कि इस देश में जनता के सर्वांगीण हित का उद्देश्य लेकर भले कोई भी दल आए, उस दल का नाम कोई भी हो, उसे ज्योतिबा की नीतियों, उनके दर्शन और उनके कार्यक्रम के सहारे ही आगे बढ़ना होगा। प्रजातंत्र तक पहुंचाने वाला वही एक सही रास्ता है। समाज के 80 प्रतिशत लोगों को विद्या प्राप्ति से वंचित रखना और उन्हें सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक

गुलामी में बांध कर रखना खुली आंखों से जब दिखाई देता रहे तब स्वराज, स्वराज कह कर हल्ला मचाने से क्या फायदा? स्वराज का फायदा सबको मिलना चाहिए। पिछड़े वर्ग की सर्वांगीण उन्नति का कार्यक्रम लेकर आगे चलने के अलावा कोई भी दल आज जनता का नेतृत्व नहीं कर सकता यह बात सूरज की रोशनी की तरह सत्य और साफ है। मुझे लगता है कि समाजवादी पार्टी को भी इस बारे में सोचना चाहिए।

आज का किसान-कामगार पक्ष असल में ब्राह्मणेतर दलों की आवृत्ति बन कर आगे आया है। लेकिन ब्राह्मणेतर दल कहलाने में उस पार्टी को शरम क्यों आती है यह मेरी समझ में नहीं आ रहा है। इस पार्टी के नेताओं के साथ हमारे बहुत पुराने और घनिष्ठ संबंध हैं। इसके बावजूद इस दल के साथ फेडरेशन ने सहयोग क्यों नहीं किया इसका जवाब आज मुझे देना है।

इस पार्टी के बारे में एक बात जगजाहिर है कि यह पार्टी किसी जमाने में कम्युनिस्ट पार्टी बनना चाहती थी। नासिक जिले में ही दाभाडी में इस पार्टी की बैठक हुई और उसमें एक योजना को अपनाया गया था। उसे 'दाभाडी प्रबंध' कहा जाता है। यह प्रबंध पूरी तरह कम्युनिस्ट दर्शन पर आधारित है। आज इस देश में कम्युनिज्म को जगह देने के लिए मैं तैयार नहीं हूं। हो सकता है जवाहरलाल नेहरू के हाथों आंतरराष्ट्रीय राजनीति में हुईं बड़ी गलतियों के कारण कम्युनिज्म आ भी सकता है और फिर चीन और रूस के नियंत्रण में जाने के बाद इस देश की आजादी खत्म भी हो सकती है।

आज ही यहां के 'गावकरी' नाम के अखबार में मैंने एक बड़ा कष्टदायक समाचार पढ़ा। खबर है कि- नेपाल में प्रवेश पाने के लिए कम्युनिस्ट सेना जिस मौके की तलाश में थी वह मौका उसे नेपाल की आंतरिक स्थितियों के कारण मिल रहा है। आज भारत की सरहद पर कम्युनिस्ट सेना बिल्कुल तैयार होकर आकर खड़ी है। कब यह सेना हमारे देश में प्रवेश करेगी इसका कोई भरोसा नहीं है। आज यह डर साफ दिखाई दे रहा है। इतना ही नहीं, मैंने एक साल पहले ही इस संकट की सूचना जवाहरलाल नेहरू को दी थी। उस वक्त किसी ने मेरी बात नहीं सुनी। आज संयोगवश से मेरा डर सच साबित होने जैसे हालात पैदा हो रहे हैं।

हमें अपने देश की आजादी को बनाए रखना होगा। आजादी को कायम रखते हुए हमें देश को समृद्ध बनाना है। कम्युनिज्म को इस देश में अगर हम आसरा देंगे तो हमारी आजादी खत्म हो जाएगी। हमारा देश रूस का गुलाम हो जाएगा। पूर्वी यूरोप के राष्ट्रों का इतिहास हमें यही बता रहा है। आज हमारे देश के सामने जो बड़े महत्वपूर्ण सवाल हैं उन्हें हम अपनी आजादी खोकर हल नहीं कर सकते। कम्युनिज्म के कारण देश की आजादी मिट्टी में मिल जाएगी इस बात को हम नजरंदाज नहीं कर सकते।

कम्युनिज्म के अलावा अन्य रास्ते भी हैं जिन पर चल कर हम अपने देश की

आजादी को कायम रख सकते हैं। दलित, पीड़ित जनता को सुवी और समृद्ध भी बना सकते हैं इसका मुझे विश्वास है। प्रजातंत्र का यह मार्ग अगर अधूरा और असफल सिद्ध हुआ तो ही हम कम्युनिज्म के बारे में सोचेंगे।

कम्युनिज्म से हाथ मिलाने वालों से, उसके बताए मार्ग पर आगे बढ़ने वालों तथा उनके अनुयायियों से मैं एक सवाल पूछना चाहता हूं कि क्या उन्होंने इस बारे में सोचा है कि अगर इस देश में कम्युनिस्ट राज आएगा तो इस देश का क्या होगा? बताया जाता है कि शेतकरी-कामगार पार्टी के पीछे पूरा मराठा समाज है और इसीलिए मैं यह खास कर जानना चाहता हूं। कम्युनिज्म का मतलब है कि अपनी सारी संपत्ति सरकार के नाम करना। न सिर्फ सभी उद्योग, बल्कि पूरी खेती, जमीन, घर सब कुछ सरकार का हो जाएगा। और यह सब तानाशाही राजनीति के तहत अमल में लाया जाएगा। शेतकरी-कामगार पार्टी के पीछे खड़े मराठा समाज को क्या यह स्वीकार है? उनकी जमीन, उनकी खेती, उनके बागान, उनके घर-बार सब अगर सरकार के हो जाएंगे तो क्या यह उन्हें चलेगा?

प्रजातंत्र में ऐसा होना संभव नहीं। इसीलिए यहां तानाशाही की स्थापना की जाएगी। विधानसभाओं को नेस्तनाबूत करके प्रजातांत्रिक राजनीति को खत्म कर कम्युनिस्ट राजनीति यह करेगी। जो लोग 'दाभाडी प्रबंध' हमारा प्रण है कहने वालों के लिए अब यह प्रबंध गले के रोड़े जैसा लगने लगा है। शेतकरी-कामगार पार्टी के नेताओं के लिए अब इस रोड़े को निकाल फेंकना मुश्किल हो गया है। इस रोड़े को निकाल फेंकना राजनीतिक बेईमानी करने जैसा है ऐसा उन्हें लगता है। लेकिन कभी न कभी इस पार्टी को यह राजनीतिक रोड़ा निकाल कर फेंकना ही पड़ेगा। उम्मीद करते हैं कि ज्योतिबा के अनुयायी कहलाने वालों को जल्द ही पता चलेगा कि कम्युनिज्म की राह सही नहीं है।

286

एकांगी राजनीति कभी सफल नहीं हो सकती

महा. मुंबई दलित फेडरेशन के महासचिव द्वारा निम्नांकित परिपत्र जारी किया गया था –

''महा. मुंबई दलित फेडरेशन डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को रु. 25000 का चुनाव फंड अर्पण करेगा!''

दलित भाइयों और बहनों, मुक्त हस्त से डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर चुनाव फंड में चंदा दें! आज 10 तारीख की अपनी तनख्वाह में से राशि अपनी वार्ड कमेटी में जमा कीजिए! या शेड्यूल्ड कास्ट्स फेडरेशन के परेल के कार्यालय में लाकर दीजिए और शासक जमात में शामिल होइए!!!

आगामी चुनाव अपने जीवन-मृत्यु का प्रश्न है। भारत को आजाद होकर 5 साल हुए लेकिन दलित जनता के जीवन में, उनके रहन-सहन में, उनके दुख में किसी प्रकार का कोई बदलाव नहीं आया है। उल्टे, आजादी के इन दिनों में बहुजन जनता को बेहद परेशान किया गया। स्पृश्य गुंडों ने हर गांव में हुडदंग मचाया। गांवों की अस्पृश्य बस्तियों पर दिन दहाड़े हमले किए गए। घरों में आग लगाई। पीने के पानी में गंदगी डाली गई। सरकार में कोई बहुजनों की फरियाद सुनने वाला नहीं था। इतना ही नहीं, कहीं-कहीं तो हमारे कार्यकर्ता और नेताओं को सरेआम कत्ल किया गया। यह खुनी खेल कांग्रेस द्वारा खेला गया/सवर्ण हिंदू बर्बरता पर उतर आये।

इन सारे अन्याय-अत्याचारों की और दुख की आवाज इस देश के किसी न्यायालय में नहीं गूंजती यह ध्यान में रखें इस विकराल काल की दाढ़ से अपने को मुक्त करना हो तो कल के चुनावों में अपने हाड़-मांस की, रात-दिन आपकी आवाज का जवाब देने के लिए तैयार, आपके कंधे से कंधा लगा कर लड़ने को तैयार, अपने करीबी लोगों को क्या हमें चुनाव में जिताना नहीं चाहिए? उन्हें अगर जिताना है तो उनके लिए जरूरी आर्थिक मदद हमें देनी होगी। इसीलिए चुनाव कोष में उदारता से चंदा दें।

हम सबके पंचप्राण डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर मुंबई से ही लोकसभा का चुनाव लड़ रहे हैं। उन्हें जीतने न देने का प्रण काँग्रेस ने कर लिया है। इसलिए आपको अपना तन-मन-धन स्वार्थ त्याग से अर्पण कर अपने सम्मान को, जो कि यहां हमारे प्रमुख डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर हैं, को बनाये रखना होगा। इस बात को जानकर हममें से हर किसी

जनता : 10 और 24 नवंबर, 1951

को, बच्चे-जवान-बूढ़ों को इस काम के लिए हरसंभव कोशिश करनी होगी। मुंबई की जनता अपनी प्रतिष्ठा के अनुरूप और तुरंत काम में जुट जाएगी ऐसी हमें उम्मीद है।

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर हिमाचल प्रदेश और पंजाब का दौरा पूरा कर अब दिल्ली लौटे हैं। अब उनके पैर उनका पूरा साथ तो नहीं ही दे रहे हैं लेकिन इस दौरे के परिश्रम के कारण उनकी आंखों ने भी उन्हें अब परेशान करना शुरू किया है। उन्हें नेत्रविकार हुआ है। इसके बावजूद वह मुंबई और मध्यप्रांत के दौरे पर निकलना चाहते थे। लेकिन फेडरेशन के हाइकमांड की विनति के अनुसार थोड़ा आराम कर वह करीब 20 से 25 नवंबर, के आसपास मुंबई आएंगे। इतने कम समय में आप रात-दिन मेहनत कर अपने कोष का संकल्प पूरा कीजिए।

चुनाव कोष के लिए पुरुषों के लिए दो रुपए और महिलाओं के लिए एक रुपए के टिकट छाप कर वॉर्ड कमेटियों को दिए गए हैं।

प्रतिष्ठित नागरिक, बाबासाहेब के चाहने वाले और व्यवसाय-उद्यमी लोगों के बैठने की खास व्यवस्था की जाने वाली है इसलिए, वे उदारता से चुनाव कोष में सहायता दें।

साथ ही विनति है कि महा. मुंबई के विभिन्न शिक्षा संस्थान, व्यायाम मंडल, कला थथक आदि जो भी संस्थाएं हैं वे इस चुनाव कोष में अपनी क्षमता के अनुसार चंदा दें। कोई भी व्यक्ति अथवा संस्था सीधे डॉ. बाबासाहेब को गुलदस्ते, फूलमालाएं या चंदा नहीं दे सकेंगे।

बिना टिकट के किसी को भी सभापंडाल में प्रवेश नहीं मिलेगा। इस बारे में समता सैनिक दल को खास अधिकार दिए गए हैं।

सभा की तारीख, समय और जगह के बारे में जानकारी की जल्द ही घोषणा की जाएगी।

उसके अनुसार मुंबई के परेल में सेंट जेवियर कॉलेज के मैदान पर 22 नवंबर, 1951 के दिन कार्यक्रम आयोजित किया गया था। इस कार्यक्रम को मेले का स्वरूप प्राप्त हुआ था। हजारों अस्पृश्य महिलाओं और पुरुषों के जत्थे डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के भाषण सुनने के लिए दोपहर तीन बजे से ही इकठ्ठा हो रहे थे। चुनाव में मदद देने हेतु इस सभा का आयोजन टिकट लगा कर किया गया था। डॉ बाबासाहेब आंबेडकर, माईसाहब अम्बेडकर के साथ ठीक साढ़े दस बजे पधारे। तब समता सैनिक दल ने उन्हें सलामी दी। आखिर हजारों लोग बिना टिकट के ही अंदर घुस आए।

मुंबई शेड्यूल्ड कास्ट्स फेडरेशन के उपाध्यक्ष आयु. आर. वी. खरात ने शुरुआती भाषण किया। उन्होंने कहा कि डॉ. बाबासाहेब के नेतृत्व में फेडरेशन का झंडा ऊंचा ही रहेगा। आयु. भातनकर ने डॉ. बाबासाहेब को चुनाव के लिए इकठ्ठा हुई रकम फेडरेशन

की ओर से दी। सम्मानीय माईसाहब के हाथों समता सैनिक दल द्वारा आयोजित खेलों में सफलता पाने वाले सदस्य खिलाड़ियों को कप और मेडल्स दिए गए।

सभास्थल पर प्रिं दोंदे, आयु. चित्रे, आयु. भाऊराव गायकवाड़, कु शांताबाई दाणी, आयु. बोराले, शेड्यूल्ड कास्ट्स फेडरेशन की वार्ड कमेटी के अध्यक्ष और अन्य कार्यकर्ता उपस्थित थे। करीब तीस हजार महिला-पुरुषों की भीड़ से मैदान अरा पड़ा था। मैदान के बाहर भी सैंकड़ों लोग खड़े थे। कई अवबारों के प्रतिनिधि डॉ. बाबासाहेब का प्रेरणादायक भाषण सुनने के लिए आए थे। उन्होंने कहा-

''बहनों और भाइयों,

आज कहना पड़ेगा कि यह सभा एक तरह से एकांगी है। यह सभा केवल अस्पृश्यों की है। सभा एकांगी होने के कारण मैं अपना भाषण भी एकांगी ही करने वाला हूं। आम इलेक्शन मीटिंगों में जहां बड़ा समुदाय होता है वहां एकांगी भाषण देना अनुचित होता है।

पिछले चार सालों से मैं काँग्रेस सरकार में मंत्री की हैसियत से था। आज मैं इस्तीफा देकर काँग्रेस से निकल चुका हूं। ऐसे हालात में जो भी लोग मुझसे मिलते हैं वे मुझसे दो सवाल पूछते हैं . पहला, आपने इससे पहले काँग्रेस क्यों नहीं छोड़ी? आप अगर इससे पहले काँग्रेस से बाहर निकलते तो काँग्रेस के खिलाफ संगठित योजना पर अमल नहीं किया जा सकता था। काँग्रेस के खिलाफ जो भी समूह, उपसमूह हैं उनमें एकजुटता लाई जा सकती थी। दूसरी बात लोगों का कहना यह था कि चार सालों के कार्यकाल में काँग्रेस के साथ मिल कर आप क्यों काम नहीं कर पाए? काँग्रेस के साथ आपके घनिष्ट संबंध क्यों नहीं बन पाए?

इस संदर्भ में मैं स्पष्ट करना चाहता हूं। काँग्रेस के साथ चार सालों के संबंधों में, मैं बहुत करीब से देख और जान पाया कि काँग्रेस को अस्पृश्य अथवा पिछड़ी जाति के लोगों की उन्नति के बारे में क्या सोचते हैं, उनसे उन्हें कितना प्रेम है, कितनी अनिश्चितता है, उदात्त तत्वों के बारे में उनकी क्या निष्ठाएं हैं आदि सब मैं बहुत करीब से देख पाया। जो लोग अस्पृश्यों के उद्धार के बारे में कह रहे थे और आज भी कहते हैं, आगे भी कहते रहेंगे, उनके मन में अस्पृश्यों के बारे में कितना प्रेम है यह देखने का अच्छा मौका मुझे मिला और एक बात अच्छी तरह से समझ में आई कि काँग्रेस के जो सर्वेसर्वा हैं, जो राजनीति में परिवर्तन ला सकते हैं उनके पास शब्दों के अलावा कुछ भी नहीं है। इस मामले में मैं कुछ उदाहरण दे सकता हूं।

देश का संविधान बनाते समय मैंने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई, मेरा पूरा सहयोग था। कई लोग कहते हैं कि दफ्तर में जो बाबू लोग थे उन्होंने संविधान का ढांचा बनाया और

मैंने केवल उस पर हस्ताक्षर किए! (लोगों की हंसी की आवाज) ड्राफ्टिंग कमेटी में जो मेरे साथ सदस्य थे वह कितने दिन उपस्थित थे और कितने दिन लापता थे यह मैं आपको बता सकता हूं। आखिर बचे मैं और मेरी प्रमुख सचिव। कुछ लोगों की कहीं और नियुक्तियां हुईं। जब कभी मुझे अपनी आत्मकथा लिखने की फुर्सत मिलेगी तब मैं ये सारी बातें विस्तार से लिखूंगा। मैंने जब काँस्टीट्यूएंट एसेंब्ली में आखिरी भाषण दिया तब यह जानकारी इकठ्ठा की। मैं हाजिरी भी लेने वाला था लेकिन अपने सहयोगियों पर आरोप लगाना असभ्यता सूचक होता इसलिए अपने भाषण में मैंने वह परिच्छेद हटाया।

हमारी संविधान समिति में अस्पृश्यों की ओर से दो महत्वपूर्ण मुद्दे थे–

(1) राजनीतिक सुरक्षा – यानी कि, अस्पृश्यों के लिए आरक्षण होना चाहिए।

(2) कानूनन सरकारी नौकरी की सुविधा। ये दोनों मुद्दे विवादित साबित हुए।

खींचतान कर जैसे–तैसे आरक्षित जगहों के लिए दस सालों की मोहलत पाई। इससे कुछ लोगों के पेट में दर्द उठा। काँग्रेस वालों ने दी गई रियायतें वापिस लेने के लिए आंदोलन शुरू किया। इससे हुआ बस यही कि मुसलमान और ईसाइयों की आरक्षित जगहें गईं। लेकिन इससे अलग ही संकट हमारे सामने खड़ा हुआ। मांग कर पाए इन दस सालों में हद से हद तीन चुनाव होंगे, आगे क्या? यह सवाल बेताल की तरह डराने लगा।

काँग्रेस के लोगों से मैं पूछता हूं कि क्या आप यह आश्वासन दे सकते हैं कि आने वाले दस सालों में अस्पृश्यता का निर्मूलन हो ही जाएगा? सारे पुराने भेदभाव खत्म होकर सभी एक समाज के अंग बनेंगे? दस सालों में अगर आप में हमारा उद्धार करने की ताकत नहीं है, हमारे ऊपर होने वाले अत्याचारों को रोकने की ताकत नहीं है तो मैं पूछता हूं कि आरक्षित जगहों की रियायत दस सालों में वापिस क्यों लेना चाहते हो? दस सालों का आरक्षण भी काँग्रेस अगर नहीं देती तो उसकी हालत पीतांबर पहनी (अबला) औरत का भरी सभा में वस्त्रहरण करने वालों जैसी होती और इसी डर के कारण काँग्रेस ने इतनी मोहलत तो दी।

नौकरी की रियायत से पहले मियाद की सीमा नहीं थी लेकिन मुंशी के पेट में दर्द होने लगा। अस्पृश्यता के खत्म होने तक रियायत न देने की विनति करते हुए काँग्रेस के कुछ सदस्यों ने अध्यक्ष के नाम अर्जी भेज दी। सुझाव रखा गया कि इस धारा पर फिर विचार हो। असल में मेरी समझ में यह नहीं आ रहा था कि इस धारा का और काँग्रेस का संबंध ही क्या है! काँग्रेस में इस मुद्दे पर जोरदार बहस हुई आखिर मैंने जब इस्तीफा देने की बात कही तब उस धारा को वैसे ही रहने दिया गया।

इसमें एक और बात का इंतजाम मैंने कर रखा है। संविधान की एक धारा के अनुसार अस्पृश्य और अन्य अल्पसंख्यकों की सुरक्षा के लिए सरकार एक अधिकारी

की नियुक्ति करे और वह इन जमातों पर होने वाले अत्याचारों की रिपोर्ट संग्रहित कर उसे पार्लियामेंट में प्रस्तुत करे।

मुझे लगा था कि इस जगह पर एक अस्पृश्य की नियुक्ति होगी। क्योंकि जैसे कि तुकोबा (संत) जैसा कहते हैं . 'कळवळ्याची याती आणि लाभाविन प्रीती' (सजातीय से अपनापन ज्यादा होता है, भला करने में अपना लाभ नहीं देखा जाता) तनख्वाह पर किराए के आदमी को रख कर क्या होगा? इस काम के लिए तो अस्पृश्य की ही नियुक्ति की जानी चाहिए। आज अस्पृश्यों में ऐसे अधिकारी का मिलना कठिन नहीं। जिसकी इस पद पर नियुक्ति हुई है उसके बारे में मुझे कुछ नहीं कहना है। इसके बावजूद एक आशंका है कि अस्पृश्यों के जीवन की सच्ची रिपोर्ट कॉँग्रेस सरकार क्या उस अधिकारी को प्रकाशित करने देगी? कौन किस प्रकार परेशान करते हैं यह कभी भी स्पष्ट नहीं होगा।

कॉँग्रेस सरकार अस्पृश्यों को रियायतें देकर देखना चाहती। लेकिन कॉँग्रस यह सब क्यों करने लगी? अस्पृश्यों के दुख से उसका दिल कैसे पसीजेगा?

इससे पूर्व अंग्रेजों के शासन के दौरान मैं एक्जीक्यूटिव काउंसिलर और मजदूर मंत्री था। कई प्रमुख विभागों का अनुभव मेरे पास था। दोनों सरकारों के कामकाज का अनुभव मेरे पास है। इसीलिए मैं दोनों शासकों की शासन पद्धतियों की तुलना कर सकता हूं। यह बस कहने वाले किस्से नहीं हैं। मैं खुद इन किस्सों का हिस्सा रहा हूं। कॉँग्रेस राज में अस्पृश्यों का बहुत बुरा हाल हुआ।

उनकी बेहद उपेक्षा की गई। वे हर बार हमारे लोगों को प्रलोभन देकर खरीदने की कोशिश करते थे। इस्तीफा देते समय लिखे पत्रक में मैंने इन बातों का विस्तार से जिक्र किया है। इतना ही नहीं मंत्री था तब भी दिल्ली की एक सभा में कॉँग्रेस सरकार पर सार्वजनिक तौर पर मैंने यह आरोप लगाया था।

मेरा प्रमुख आरोप था - अस्पृश्यों को राजनीतिक रियायतों का उपभोग कॉँग्रेस ने करने नहीं दिया। मेरे इस आरोप का जवाब देने के लिए प्रधानमंत्री नेहरू को आज तक फुर्सत नहीं मिली है। मेरे इस्तीफे में मैंने इन आरोपों को एक बार फिर रखा लेकिन एक-दूसरे का पत्राचार पार्लियामेंट में पढ़ कर सुनाने के अलावा और अधिक कुछ कहने का साहस जवाहरलाल नेहरू ने नहीं दिखाया। जवाब देने के लिए उनके पास बहुत समय था। आगे आठ दिन के बाद कॉँग्रेस का अधिवेशन हुआ। उन्हें कई बार बोलने का मौका मिलने के बावजूद मेरे कथन का उचित जवाब नहीं दिया उन्होंने बल्कि मेरे सवाल टाल दिए। मैंने जो कहा उसमें सत्य के अलावा कुछ नहीं।

अंग्रेज सरकार ने भी अस्पृश्यों के लिए कुछ खास नहीं किया। मुस्लिम, ईसाई और

एंग्लो इंडियन लोगों पर ही उनकी कृपादृष्टि थी। 1942 में मैं जब भारत सरकार का काउंसिलर हुआ तब उनसे पहला सवाल यही पूछा कि इस प्रकार का भेदभाव क्यो? अंग्रेजों ने कोई बहाने बनाए बिना अपनी जिम्मेदारी कबूली। लेकिन काँग्रेस सरकार को कहकर भी बात समझ नहीं आई। उस समय अन्य जातियों की तरह अस्पृश्यों की पढ़ाई के लिए अंग्रेज सरकार ने तीन लाख रुपए मंजूर किए।

आगे अंग्रेज सरकार का मैं जब मंत्री बना तब इस रकम में इजाफा किया गया और उसमें अन्य आदिवासी जनजातियों का समावेश किया गया। अस्पृश्यों की असली उन्नति क्लर्की में नहीं है। असली उन्नति पानी हो तो उच्च शिक्षा की जरूरत है। सादी पढ़ाई कर क्लर्की करने में कोई फायदा है? क्लर्क अपनी जिंदगी में क्या कर सकता है? वह अपने समाज के लिए संविधान नहीं लिख सकता। उच्च शिक्षा लेकर बना व्यक्ति ही समाज में आमूलचूल और व्यावहारिक बदलाव ला सकता है? इसके लिए महत्वपूर्ण पद अस्पृश्यों को कब्जा करना होगा। उन्हें मौके के पद मिलने चाहिए। ऐसे छात्रों को विदेशों में शिक्षा पाने के लिए भेजने पर तीन लाख रुपया खर्च किया जाता था। मैं काउंसिलर था तब 20-30 छात्र इसका फायदा उठा सके। लेकिन आगे चल कर 1946 से उच्च शिक्षा पाने के लिए अस्पृश्यों को विदेश भेजना बंद हुआ! इस प्रकार काँग्रेस के कार्यकाल में अस्पृश्यों की शिक्षा का अंकुर तोड़ दिया गया।

दिल्ली सचिवालय में अस्पृश्य चपरासी भी नहीं थे! एक-दो क्लर्क थे। उन्हें चपरासी पानी तक नहीं देते थे। कुछ अस्पृश्य चपरासियों का मैंने इंतजाम किया लेकिन वहां का जमादार उन्हें रात की शिफ्ट देकर परेशान करने लगा। मैं वहां गया तब मैंने 24 या 25 प्रतिशत नौकरियां आरक्षित करवा दीं। लड़ाई की 'बेवीन बॉइज' योजना की तरह कुछ लोगों को पढ़ने के लिए इंग्लैंड भेजा जाता उसमें एक भी अस्पृश्य युवक नहीं होता था।

मुझसे पहले अन्य समाज के 500 युवकों को यह मौका मिला था। आगे 12.5 प्रतिशत अस्पृश्य युवकों को मौका मिलने लगा और अस्पृश्यों के करीब 100 बच्चे इसका लाभ ले पाए। उस समय तीन अस्पृश्य एक्जीक्यूटिव इंजीनियर्स की सेवाएं ली गईं लेकिन आगे चल कर यानी काँग्रेस के कार्यकाल में एक भी अस्पृश्य को ऊंचा पद मिला नहीं! (शेम! शेम!)

काँग्रेस सरकार ने अस्पृश्यों के लिए कुछ नहीं किया। दिल्ली की एक सभा में जब मैंने यह कहा तो होम मेंबर मिस्टर राजगोपालाचारी ने पार्लियामेंट में मेरे सारे आरोप झूठे होने की बात कही। लेकिन आगे उनका मन ही उन्हें कचोटने लगा। इसलिए उन्होंने अस्पृश्यों की नौकरियों के बारे में जानकारी पाने के लिए एक सर्कुलर निकाला। उसमें उन्हें सभी स्थानों से न में ही जवाब मिला होगा। काँग्रेस अस्पृश्यों का क्या और कितना भला कर सकती है इसका यह मजबूत सबूत नहीं है तो और क्या है?

विभाजन के बाद हिंदू-मुसलमानों के रेले चले थे। तब पाकिस्तान ने उच्चवर्णीय हिंदुओं को जाने दिया। लेकिन अस्पृश्यों की हालत पिंजरे में रखे जानवरों-सी हो गई। उन पर लगातार असहय अत्याचार होने लगे। काँग्रेस सरकार ने अस्पृश्यों को भारत में ले आने के लिए रत्ती भर कोशिश नहीं की। उस वक्त महारों की पलटनें पाकिस्तान में थीं। आयु. भाऊराव गायकवाड़ और आयु. रमेशचंद्र जाधव को भेज कर इस महार पलटन के सहयोग से एक-एक अस्पृश्य महिला और पुरुष को हम हिंदुस्तान में लगभग खींच कर ले आए। इस बारे में मेरे मन में दु:ख होता है इतना ही नहीं तो काँग्रेस के लिए घृणा पैदा होती है। जो अस्पृश्य आ नहीं पाए उन्हें मुसलमान होना पड़ा। मैं बस यह पूछना चाहता हूं कि क्या यह काँग्रेस की उदारता का सबूत है? पूर्व पंजाब से गए शरणार्थियों को भारत में और सिक्ख हिंदुओं को, कुछ अनुपात में कम से कम जमीनें तो दी गईं। लेकिन अस्पृश्य शरणार्थियों को क्या मिला? पत्थर? कुछ शरणार्थियों ने राजघाट के सामने भूख हड़ताल की। लेकिन अखबार वालों ने या काँग्रेस वालों ने उनकी सुध नहीं ली। सब कुछ वर्णन करना हो तो महाभारत बनेंगे।

काँग्रेस के लोगों को मानना पड़ेगा कि चार सालों में मंत्री था तब मैंने कोई बेइमानी नहीं की। बीमार होने के बावजूद अपने खून की हर बूंद मैंने सरकार के कामों पर खर्च की। (तालियों की गड़गड़ाहट) उनकी अंदरूनी लड़ाइयों में मैंने हिस्सा नहीं लिया और उनके बारे में मन में कोई गांठ भी नहीं बांधी। चार सालों के अनुभव के बाद मैंने सोचा कि इस पार्टी में रह कर या इसका मंत्री बन कर मैं एकाध सवाल तक नहीं पूछ सका। अब मुझे अपना अलग रास्ता बनाना पड़ेगा, यही सोच कर मैंने इस्तीफा दिया। (जय भीम! का नारा। तालियां।)

इतने सालों के अनुभव से एक विचार पक्का हुआ और वह यह कि हर किसी को अपना उद्धार खुद करना पड़ता है। चिड़िया और उसके बच्चों की स्कूल में पढ़ी कहानी आपको याद होगी। वही कहानी यहां लागू होती है। जो अपने खेत की कटाई करना चाहता है उसे खुद फैसला करना होता है, निश्चय करना होता है और काम में लग जाना पड़ता है। (तालियों की गड़गड़ाहट) हमें अगर मानवीय अधिकार पाने हों तो अपनी लड़ाई खुद लड़नी होगी। इसीलिए मैं काँग्रेस की राजनीति छोड़ कर फेडरेशन की लड़ाई का बिगुल फूंक रहा हूं। (तालियों की गड़गड़ाहट) कांग्रेस के साथ मैं रहा लेकिन कभी भी उनकी गुलामी नहीं की मेरी राजनीति स्वभिमान और आत्मसम्मान की ही रही।

आज की राजनीति में किसी एक पार्टी के साथ हाथ मिलाना पड़ता है। सौ में अस्पृश्य नौ हैं या दस हैं। ऐसी हालत में हमें सुलह करनी पड़ेगी। मिलजुल कर की राजनीति काम आ सकती है। अकेले की राजनीति सफल नहीं हो सकती। सोशलिस्ट पार्टी के उम्मीदवारों को यकीन होना चाहिए कि हमारे लोग इस सुलह के लिए राजी होकर चुनाव

में उसीके अनुसार कार्य करेंगे। तय अनुसार कार्य करने में ही हमारी इज्जत है।

मैं पार्लियामेंट के लिए खड़ा हूं। 30 सालों से राजनीति कर रहा हूं। कुर्सी पर बैठ कर सिगरेट पीना राजनीति नहीं, राजनीति इतना आसान काम नहीं है। मैंने बहुत किया लेकिन समाज की स्थिति मुझे चुप बैठने नहीं देती। अपने समाज को चार कदम आगे ले जाने की मेरी इच्छा है।

युवा अब राजनीति में आने के लिए उत्सुक हैं। उन्हें राजनीति का अनुभव होना चाहिए। अपने लोगों में वह हैं या नहीं इस बारे में मुझे पूरा यकीन नहीं है। अब ज्यादा दिनों तक उन्हें इंतजार न करना पड़े। जल्द ही उन्हें मौका मिलेगा।

किसी भी राजनीतिक संस्था के पास एक सहयोगी दल भी होना चाहिए। अस्पृश्यों की जब इसी विभाग में बैठकें हुआ करती थीं तब अन्य लोग उसे न होने देते, पत्थर फेंकते। सभाओं में शोरगुल मचाया जाता। उसके लिए समता सैनिक दल खड़ा किया गया। लेकिन आगे चल कर इस सैनिक दल में खराबी आई। विनयशीलता नहीं रही। मेरे दिल्ली जाने के बाद यह हुआ। आज इस दल का पुनरुत्थान हो रहा है यह अच्छी बात है। उन्हें अब हर चॉल में जाकर काम करना होगा। आज इतने सारे लोग इकठ्ठा हुए हैं। अखबार वाले कितना आंकड़ा बताएंगे पता नहीं! ऐसी सभाओं में केवल संख्या में उपस्थित रह कर अपना काम नहीं बनने वाला है। हरेक को अपने मतदान के अधिकार को भुनाना होगा। मुंबई में काम करने का असली दिन 3 जनवरी है।

अस्पृश्यों की तरह ही अन्य पिछड़े समाज भी हैं। उनके जीवन पर भी फेडरेशन अपनत्व भरी नजर डालेगा ही। मजदूरों की मुश्किलों की तरह ही हमारी भी कुछ मुश्किलें हैं। लेकिन केवल जातिविहीन योजना हम नहीं बना सकते। क्योंकि अस्पृश्यों की कुछ खास मुश्किलें हैं और उन्हें दलित फेडरेशन ही हल कर सकता है। इसके लिए शेड्यूल्ड कास्ट्स फेडरेशन के हाथ मजबूत करें।

287

हिंदू कोड बिल पास होना ही चाहिए

शनिवार दिनांक 24 नवंबर, 1951 के दिन शाम को समाजवादी पार्टी और शेड्यूल्ड कास्ट्स् फेडरेशन के संयुक्त तत्वावधान में मुंबई के दादर में महिलाओं की सभा में हिंदू कोड बिल विषय पर कार्यक्रम रखा था। इस सभा में डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर उपस्थित थे। अध्यक्ष थीं डॉ. काशीबाई अवसरे। इस अवसर पर बाबासाहेब ने कहा–

''खुद पंडित नेहरू ने मुझसे एक बार लोकसभा में हिंदू कोड बिल को हटाने की विनति की थी। काँग्रेस कोई राजनीतिक पार्टी है या सराय? वरना, एक ही संस्था में नेहरू, अनंगशयनम् अयंगार और पं. गोविंद मालवीय जैसे लोग इकठ्ठा कैसे रह सकते हैं?'' कोड बिल से हिंदू महिलाओं को कितना फायदा होगा। बाबासाहेब ने कहा, ''नेहरू बिल के पक्ष में हों या विपक्ष में, मैं इस बिल को मंजूर करवाए बगैर शांति से नहीं बैठने वाला हूं। पिछले 4 सालों में यह बिल कब का मंजूर होता, लेकिन नेहरू ने उसका खत्मा किया।''

डॉ. भी. रा. अम्बेडकर चरित्र : चां. भ. खैरमोडे, खंड 10वा, पृष्ठ 131

288

प्रजातंत्र में विपक्ष की भूमिका महात्वपूर्ण होती है

रविवार दिनांक 25 नवंबर, 1951 को शाम 4 बजे शिवाजी पार्क मुंबई में शेड्यूल्ड कास्ट्स् फेडरेशन और समाजवादी पार्टी की ओर से चुनाव प्रचार की विशाल सभा का आयोजन किया गया है। इस सभा में प. पू . डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर और साथी अशोक मेहता के भाषण होंगे। सभा से पहले भायवला से बड़ा जुलूस निकलेगा। जुलूस में आप सब बड़ी संख्या में शामिल हों। - इस आशय का परिपत्र ज. ग. भातनकर, महासचिव, मुंबई शेड्यूल्ड कास्ट्स फेडरेशन शाखा के नाम से जनता के 24 नवंबर 1951 के अंक में प्रकाशित हुआ । सभा में करीब दो लाख लोग शामिल हुए थे।

इस अवसर पर डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने कहा-

नेहरू ने परसों हुई सभा में मेरी आलोचना का जवाब देने की कोशिश की। सो उस बारे में अगर मैं बोलूं तो वह अनुपयुक्त नहीं होगा। काँग्रेस की मैं जिस प्रकार की आलोचना करता हूं उसी प्रकार की आलोचना मैंने अपने इस्तीफे में भी लिखी थी। उसके बाद कई दिन बीत गए। नेहरू ने कभी मेरी आलोचना का जवाब देने की कोशिश नहीं की। लोकसभा में भी मेरे निकल जाने के बाद शाम 6 बजे उन्होंने उनके और मेरे बीच हुए पत्राचार को ही पढ़ कर सुनाया। मेरे द्वारा जगह-जगह हुए, दौरे में भी उन्होंने इस संदर्भ में कोई खुलासा नहीं किया और, परसों के भाषण में उन्होंने कहीं कुछ नहीं कहा?

काँग्रेस पर मेरे दो मुख्य आरोप हैं। पहला आरोप यह है कि, काँग्रेस सरकार ने अस्पृश्यों की उन्नति के लिए कुछ काम नहीं किया। नेहरू का कहना है कि मेरा यह आरोप झूठा है। लेकिन यहां सवाल किसी की राय का नहीं है, वास्तविक स्थितियों का है। दुनिया नहीं मानती कि केवल जवाहरलाल नेहरू ही सत्यवचनी हैं और दुनिया में और कोई सत्यवचनी नहीं है। कम से कम मैं ऐसा बिल्कुल नहीं मानता। मेरी बात को नेहरू सिर्फ एक तरीके से स्पष्ट कर सकते थे . अस्पृश्यों लिए उनकी सरकार ने क्या किया है यह बता कर। असल में उन्हें काँग्रेस सरकार द्वारा अस्पृश्यों की उन्नति के लिए किए गए कामों का वास्तविक ब्यौरा देनेवाला परिपत्र जारी करना चाहिए। कम से कम उनके सरकारी दफ्तर में तो इस बारे में जानकारी उपलब्ध होगी। मुंबई आने से पूर्व और मेरे सवाल का जवाब देने से पहले उन्होंने अपने संबंधित विभागों से लेकर यह जानकारी

जनता, 1 और 8 दिसंबर, 1951

अपने साथ क्यों नहीं रखी? मैंने जो परिपत्र निकाले थे, समय-समय पर उन्हें खत भेजे थे वे उनके पास होंगे ही। मेरे पास उनकी प्रतियां तो हैं ही। इसलिए मेरा नेहरू से इतना कहना है कि उनमें जो सवाल उपस्थित किए गए हैं उनका वे जवाब दें।

मेरा दूसरा आरोप उनकी विदेश नीति को लेकर है। मंत्रिमंडल में था उस दौरान मैंने इस विषय में कुछ नहीं कहा ऐसा नेहरू का कहना है। पहली बात तो यह कि 15 अगस्त, 1947 से लेकर 26 जनवरी, 1950 तक संविधान के काम में मैं व्यस्त था। इसलिए उस दौरान नेहरू के साथ विदेश नीति पर चर्चा करने के लिए मुझे समय ही नहीं मिला और उस समय मैंने नेहरू के साथ बातचीत नहीं की इसलिए आज इस विषय में मेरा कुछ कहना गलत कैसे हो जाता है? ठीक है, उस वक्त मेरा इस बारे में बात न करना गलत होगा, लेकिन उसे आधार बना कर आज जो मुद्दे मैंने उठाए हैं उन्हें आप दरकिनार नहीं कर सकते। मैंने उसी समय यह बात क्यों नहीं उठाई या उसी वक्त मैंने इस्तीफा क्यों नहीं दिया यही अगर जवाहरलाल नेहरू सुझाना चाहते हैं तो मैं उन्हें यह बता दूं कि मंत्रियों को तारतम्य से बड़े-बड़े निर्णय लेने पड़ते हैं। हर मुद्दे पर अगर इस्तीफे देने पड़े तो बड़ी मुश्किल हो जाएगी।

मतभेद के बावजूद मैं मंत्रिमंडल में रहा, क्योंकि मुझ पर राष्ट्र का संविधान निर्माण करने की महत्वपूर्ण जिम्मेदारी थी। मेरे लिए यह बहुत महत्वपूर्ण कार्य था। मेरी कर्तव्यबुद्धि मुझसे कह रही थी कि उस जिम्मेदारी को निभाना। उस काम को लात मार कर बाहर निकल जाना चाहिए कहने वाले शख्स को पागल ही कहना पड़ेगा।

इसीलिए मैं कहता हूं कि इस प्रकार हास्यास्पद बातें कहने के बजाए कश्मीर का सवाल या फिर विदेश नीति के बारे में मेरे वक्तव्यों को कसौटी पर कस कर देखिए, उनके जवाब देने की कोशिश कीजिए।

नेहरू यानी काँग्रेस यह केवल भ्रम है। नेहरू सपने देखने वाले और भोले हैं। काँग्रेस वाले भी नेहरू के साथ नहीं हैं इस बात के कई उदाहरण दिए जा सकते हैं। काँग्रेस के अध्यक्षीय चुनाव के लिए टंडन के खिलाफ कृपलानी के बीच का मुकाबले का असली रूप पटेल के खिलाफ नेहरू का था। पहले नेहरू ने शंकरराव देव को हाथ में वरमाला लेकर खड़े रहने के लिए मनाया। फिर जब देखा कि इस वर के साथ ब्याहने के लिए कोई दुल्हन नहीं मिलेगी तब कृपलानी को खड़ा किया। आखिर कृपलानी भी हार गए। यानी यह नेहरू की ही हार थी। सरदार पटेल की मृत्यु के बाद नेहरू ही काँग्रेस के इकलौते नेता बन कर रहे।

इसके बावजूद काँग्रेस नेहरू के पीछे आकर खड़ी नहीं हुई। बेंगलोर काँग्रेस में नेहरू के हाथ में सारी सत्ता सौंपने की सूचना उन्हीं के एक दिल्ली के दोस्त ने दी। हालांकि उसे समर्थन देने के लिए भी कोई नहीं मिला। नेहरू द्वारा इस्तीफा देने की धमकी दिए

जाने के बाद भी टंडन द्वारा इस्तीफा देने की जरूरत नहीं होने की बात काँग्रेस कार्यकारिणी ने कही। इसका मतलब यही कि नेहरू के काँग्रेस से चले जाने से भी काँग्रेस को कोई फर्क नहीं पड़ने वाला था। लेकिन बाद में चुनाव सामने आए और अकस्मात् यह तस्वीर पलट गई। किसी मशहूर अभिनेत्री के कारण सिनेमा में और कुछ न होने के बाद भी उसकी मांग बढ़ती है। काँग्रेस वालों को चुनाव जीतने के लिए टंडन कोई खास अभिनेत्री नहीं लगी। इसीलिए मैं नेहरू से एक सवाल पूछना चाहता हूं कि, आज काँग्रेस वाले आपके साथ हैं सो किस कारण से, आपसे उन्हें प्रेम है इसलिए या फिर चुनाव जीतने के लिए आपका इस्तेमाल करना है इसलिए? मैं अगर नेहरू की जगह होता तो मेरे मन में यही सवाल पैदा होता। चार साल मैं काँग्रेस वालों के साथ था। उनके दल के दर कोने में होने वाली बातों की, लोग नेहरू के बारे में क्या बोलते हैं इस बारे में मुझे नेहरू से अधिक जानकारी है।

जो लोग यह कहते हैं कि देश में काँग्रेस ही एक सुसंगठित दल है और कोई दूसरा दल स्थिर सरकार नहीं दे सकता उन लोगों से मैं यह पूछना चाहता हूं कि काँग्रेस में जो अव्यवस्था मची है उसे अगर छोड़ भी दें तो भी क्या काँग्रेस के वरिष्ठ नेताओं की एक राय है? मुझे लगता है चुनावों के बाद ये विवाद और उभर कर सामने आएंगे। मेरा तर्क है कि खुद राजेंद्र प्रसाद और जवाहरलाल नेहरू में भी फिलहाल ठनी हुई है। आपस में गले मिलते हुए उनके जो फोटो छापे हैं वे केवल नागरी संस्कृति की झूठी औपचारिक सभ्यता है। हिंदू कोड को लेकर उनमें जो मतभेद हैं वे भी सामने आ चुके हैं। साथ ही पहले एक बार राष्ट्राध्यक्ष कौन बनेगा तय करते वक्त भी उनके बीच के मतभेद उभर कर सामने आए हैं, तब जवाहरलाल नेहरू ने राजाजी का और पटेल ने राजेंद्रप्रसाद का समर्थन किया था। चुनावों के बाद एक बार फिर इन बातों पर आपसी मतभेदों का उभरना तय है। काँग्रेस के बड़े नेता काँग्रेस के बारे में क्या कहते हैं इसी से काँग्रेस में कितनी गंदगी फैली है यह ध्यान में आता है। खुद टंडन जी ने काँग्रेस का टिकट लेने से साफ मना कर दिया है। बाबू संपूर्णानंद ने भी यही किया है। संपूर्णानंद ने कहा है कि काँग्रेस की राजनीति गटर की राजनीति बन गई है। छल-कपट और धोखेबाजी के सिवा उनके पास कुछ नहीं है।

जवाहरलाल नेहरू की राय का मुझे अभी अंदाजा नहीं लग पाया है। मैं इस सवाल का निश्चित तौर पर जवाब नहीं दे पाऊंगा कि वे कम्युनिस्ट हैं, सोशलिस्ट हैं या फिर पूंजीवादी हैं। हालांकि मैं यह मानता हूं कि वह आमतौर पर प्रगतिवादी हैं। इसीलिए उनके सहयोगी मी. किदवई जब काँग्रेस से निकले थे तब मैंने उनसे कहा था कि अगर आप नेहरू को लेकर पार्टी छोड़ेंगे और सोशलिस्टों जैसी प्रगतिशील पार्टियों के साथ सहयोग करेंगे तो मैं भी आपसे आकर मिलूंगा। लेकिन वे कीचड़ में धंसे हैं इसका कोई क्या

करे? किवदई में राजनीति अंशमात्र के लिए भी नहीं दिखाई दी।

जनतंत्र में किसी पार्टी के हाथ पूरी सत्ता नहीं होनी चाहिए। इसलिए विपक्ष की बहुत जरूरत होती है। इंग्लैंड, अमेरिका अथवा फ्रांस में दो या तीन दल होने के कारण जनतंत्र सफल हुआ है। इसी के लिए हम सोशलिस्ट और शेड्यूल्ड कास्टस् फेडरेशन मिल कर एक-एक मजबूत विरोधी मोर्चा खोलने की बात तय कर रहे हैं। हममें भले कुछ मुद्दों को लेकर मतभेद हों लेकिन हममें काफी समानताएं हैं और खास बात यह है कि हमें इस प्रकार देश हित की साधना करनी है। देश में भले हम अपनी सरकार की स्थापना न कर पाए हों, सत्ता में जो पार्टी है उस पर अंकुश रख सकें ऐसा मजबूत विरोधी दल हम खड़ा कर सकेंगे।

भाषा के आधार पर प्रांतों की रचना में भी हमें झगड़ना पड़ेगा। क्योंकि, मुंबई शहर को महाराष्ट्र से अलग करने के खेल-खेले जा रहे हैं। नेहरू की राय भी इस मामले में महाराष्ट्र के प्रतिकूल है। हैदराबाद के विलिनीकरण के लिए नेहरू का विरोध है। इसलिए यह एक बड़ी गड़बड़ी ही साबित होने वाली है।

289

सच्चाई को दरकिनार कर कृतज्ञ रहने को मैं मानवीय व्यक्तित्व की हत्या मानूंगा

''चुनाव प्रचार का एक बेहतरीन भाषण बाबासाहेब ने सोमवार दिनांक 26 नवंबर, 1951 के दिन शाम सर कावसजी जहाँगीर हॉल में आयोजित सार्वजनिक सभा में दिया। सभा के अध्यक्ष थे पुरुषोत्तमदास त्रिकमदास। इस समय बाबासाहेब आंखें और घुटनों की बीमारी से परेशान थे। आंखों पर पट्टियां लगा कर दो दिनों से आंखें बंद रखी हुई थीं। सभा में वह आए तब आंखों पर पट्टियां बंधी थीं और ऊपर से काला चश्मा पहना हुआ था। दो-तीन लोगों के कंधों पर अपना भार डाल कर। सभी समाजवादी और फेडरेशन के लोगों ने उनसे आग्रह किया कि वे बैठ कर भाषण दें। लेकिन बाबासाहेब ने खड़े रह कर ही भाषण दिया। वह खड़े हुए तब सभा में तालियों की गड़गड़ाहट हुई। हॉल के बाहर हजारों दर्शक खड़े थे उन्होंने भी तालियों की बौछार की। दवाई की गोलियां खाकर बाबासाहेब ने भाषण की शुरुआत की। साफ-सुथरे ढंग से राजकाज चलाना कैसे जरूरी है और ऐसा राजकाज चलाने में कांग्रेस पार्टी की सरकार कैसे असमर्थ है, और इसीलिए जनता दूसरी पार्टी को सत्ता पर ले आए आदि मुद्दे उन्होंने तर्क और प्रमाणों के साथ सुनाकर बाबासाहेब ने दर्शकों को डेढ घंटों तक बांधे रखा। उनका भाषण सुनने के लिए समाज के सभी स्तरों के लोग, कानूनविद्, अमीर, व्यापारी, समाजवादी, साम्यवादी और अन्य नागरिक उपस्थित थे। अस्पृश्य उम्मीदवारों की उपस्थिति तो अनगिनत थी। भाषण पूरा हुआ तब श्रोता उनके भाषण की तारीफ करते हुए ही हॉल से बाहर निकले।''[1]

डॉ. बाबासाहेब ने अपने भाषण में कहा-

बहनों और भाइयों,

स. का. पाटील अपने मित्रों से यह कहते फिर रहे हैं कि मेरे कहने पर अम्बेडकर को पहले मंत्रिमंडल में स्थान मिला और अब वे कृतघ्न होकर काँग्रेस और मंत्रिमंडल की आलोचना कर रहे हैं। सभा की शुरुआत में एक श्रोता ने मुझसे यह सवाल पूछा था कि क्या यह जानकारी सच है? असल में, मुझे काँग्रेस के मंत्रिमंडल में कैसे स्थान मिला यह एक बहुत ही आश्चर्य की बात है। क्योंकि संविधान सभा के सभी दरवाजे इतना ही नहीं खिड़कियां और दरारें तक मेरे लिए बंद थे। काँग्रेस वालों की प्रतिज्ञा थी कि हम किसी भी और व्यक्ति को संविधान सभा में आने देंगे लेकिन डॉ. अम्बेडकर

1. डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर चरित्र : चां. भ. खैरमोडे, खंड 10वां, पृ. 280, 281 और 283

को नहीं। लेकिन मैं बंगाल से प्रचंड बहुमत से विजय पाकर संविधान सभा में शामिल हुआ। मेरी हालत शेर की मांद में फंसे जानवर जैसी थी। मैं किसी से बात नहीं करता था। केवल एक बार मैंने भाषण दिया।

छह महीनों तक ऐसा ही हाल रहा। आगे एक दिन संविधान सभा का कामकाज पूरा होने के बाद अकस्मात् नेहरू ने मुझे अपने कमरे में बुलाकर पूछा कि क्या आप मंत्रिमंडल में शामिल होंगे? मैंने सभी पहलुओं पर गौर कर और अपने सहयोगियों की राय लेने के बाद यह सोच कर मंत्रीपद स्वीकारा कि सहयोग देने का यह अच्छा मौका है।

आगे सरदार पटेल और राजाजी दोनों कहने लगे कि हमारी सूचना के कारण आपको मंत्रिमंडल में शामिल किया गया। अब लगता है स. का. पाटील भी उन्हीं में शामिल हैं। इस पर मैं एक निष्कर्ष तक पहुंचा हूं कि मैंने कोई अच्छा काम किया होगा इसीलिए श्रेय लेने की यह होड़ मची हुई है।

अब लोग कहने लगे हैं कि मैं कृतघ्न हो गया हूं। लेकिन मैं ओ-कॉनल इस आइरिश देशभक्त के शब्दों में उन्हें जवाब देना चाहता हूं। वह इस प्रकार है, "No man can be grateful at the cost of his honour, no woman can be grateful at the cost of her chastity, and no nation can be grateful at the cost of its liberty." मेरा सच्चापन अगर एक ओर रख कर मैं कृतज्ञ रहूंगा तो मानवी व्यक्तित्व का ही वध होगा ऐसा मैं मानूंगा। मुझे मेरी ईमानदारी अधिक महत्वपूर्ण लगती है।

आज किसी भी सरकार की श्रेष्ठता वह कितना जनहित में काम करती है इस पर निर्भर करता है। अन्न-वस्त्रादि बातें तो महत्वपूर्ण हैं ही लेकिन राजकाज कितनी ईमानदारी से किया जाता है यह उन सबसे अधिक महत्वपूर्ण है। देश में पिछले चार सालों से अनाज की कमी, कपड़ों की कमी आदि संकट तो आते ही रहे हैं। लेकिन सबसे महत्वपूर्ण दोष अगर कोई हो तो वह है बेईमानी और घूसखोरी से भरा प्रशासन। राज्य का प्रशासन सही रखने के लिए तो बाहर से किसी मदद की जरूरत नहीं पड़ती। बस उसे सही रखने की इच्छा होना जरूरी है। राज्य प्रशासन को सही रखने में आज काँग्रेस के सामने अगर कोई अड़चन है तो वह यह कि काँग्रेस को ही उसे सही करने की इच्छा नहीं रही।

उत्तर प्रदेश, बिहार, बंगाल आदि प्रांतों में जनता ने ही नहीं काँग्रेस वालों ने ही काँग्रेसी मंत्रियों के खिलाफ कई आपत्तियां उठाई हैं। दुर्भाग्य की बात यह है कि उनमें से किसी भी प्रांत में उन भयानक आरोपों की न्यायालय द्वारा तो छोड़िए पार्टी द्वारा भी पूछताछ नहीं की गई है। 1910-11 के आसपास लॉर्ड ॲक्विथ जब इंग्लैंड के प्रधानमंत्री थे लॉर्ड रीडिंग और लॉड जॉर्ज का एक केबल काँट्रॅक्ट में हाथ होने की संभावना प्रकट हुई थी। लेकिन उन्होंने तुरंत एक जांच आयोग गठन किया और वे निर्दोष साबित हुए। इसके बावजूद ॲक्विथ ने उन दोनों से इस्तीफा दिलवाया क्योंकि उन्हें लगता था कि

अपने सहयोगियों से बड़ा देशहित है। इसी प्रकार का दूसरा उदाहरण पिछले साल एटली के कार्यकाल के दौरान हुआ था। लॉर्ड लिस्टोवेल व्यापार मंत्री थे। एक व्यापारी मित्र से ब्रैंडी की बोतल और सूट का कपड़ा लेने का उन पर आरोप था। बाद में पता चला कि आरोप तथ्याधारित न होकर वह एक मित्र द्वारा एक मित्र को भेंटस्वरूप दी गई थी। इसके बावजूद एटली ने उन्हें मंत्रिमंडल से निकाल दिया।

इंग्लैंड में राजकाज को साफ-सुथरा रखने की यह लगन देखिए और काँग्रेस की लगन देखिए। मंत्रियों के खिलाफ कितने गंभीर आरोप थे लेकिन उनका हुआ क्या?!

मैं कुछ और उदाहरण देता हूं। प्रतिनिधित्व का बिल बनाते हुए सरकारी अनुबंध जिनके पास हों उनके लिए पार्लियामेंट के दरवाजे बंद रहें इसका प्रावधान रखा गया था। लेकिन उसके कारण काँग्रेस के पार्लिमेंटरी दल में हल्ला मचा। आखिर मुझे वह हिस्सा हटाना पड़ा। दूसरा उदाहरण है। उसी बिल में मैंने हर उम्मीदवार के खर्चे पर नियंत्रण लगाया था। इस मुद्दे पर भी तूफान उठा। तीन दिनों तक चर्चा चल रही थी। पार्लियामेंट के काँग्रेस सदस्य नेहरू के पास मदद पाने के लिए दौड़े। उन्होंने नेहरू से कहा, ''आप जिस व्यक्ति को काँग्रेस का दुश्मन मानते हैं उस इंसान के लिए आपने यह महत्वपूर्ण बिल तैयार करने के लिए क्यों कहा? वह काँग्रेस का नाश करने पर तुले हुए हैं।'' मैंने उस बिल में यह प्रावधान कर रखा था कि किसी भी उम्मीदवार पर होने वाला चुनाव खर्च उसके नाम के साथ लिखा जाए। इसका असर यह होता कि चुनाव निधि का पैसा किसी भी उम्मीदवार के नाम पर दल के नाम से लुटाया नहीं जा सकता था। लेकिन आखिर मुझे यह धारा भी हटानी पड़ी। इसके दल में मैंने खूब कड़ी टक्कर दी लेकिन आखिर हार गया।

मुझे बताइए कि क्या यह मानसिकता प्रजातंत्र के साथ सही बैठती है? हर देश के चुनाव कानून में इस प्रकार की धारा है। प्रजातंत्र के प्रति निष्ठावान कोई भी पार्टी इसे सहन नहीं कर सकती। क्योंकि कोई भी कानून चाहे कितना भी अच्छा क्यों न हो प्रत्यक्ष व्यवहार में उस पर किस प्रकार अमल होता है उसका राजकाज में महत्व है।

ये राज्य प्रशासन के दोष हुए। दिल्ली से इधर आते हुए मुझे पता चला कि इस हिस्से में कुछ जगहों पर स्थानीय काँग्रेस नेता न्यायाधीशों पर दबाव डाल कर निर्णय को अपने अनुकूल बनाने का प्रयस करते हैं। हमारे संविधान में कहा गया है कि कानून की निगाह में सब एक समान हैं। इस प्रकार के हस्तक्षेप के कारण इस देश का क्या होगा कहा नहीं जा सकता।

मुझे लगता है काँग्रेस को इस देश में विरोधी पार्टी को मसल देने की बातें करने की जगह उनके बढ़ने के लिए प्रोत्साहन देने की व्यवस्था करनी चाहिए। जिन देशों में पार्लिमेंटरी प्रजातंत्र है क्या वहां कई पार्टियां नहीं हैं? तो फिर आपको यहां क्यों डर

लगता है? इस प्रकार दबाव नीति का इस्तेमाल करने वाली काँग्रेस आग के साथ खेल रही है। यही बात पैसे वालों की है। धनिक किसी पार्टी के चुनाव फंड में रकम देकर उस पर अपना अधिकार थोप रहे हैं। वे इस बात को ध्यान में रखें कि अंतिमतः यह घातक सिद्ध होगा। इसी प्रकार सरकारी अधिकारी सत्तापक्ष के सामने झुककर पेश आएंगे तो निष्पक्ष चुनाव नहीं होंगे। उन्हें अपना कर्तव्य निष्ठा के साथ और निष्पक्ष रह कर करना होगा।

कोई सरकार बिना गलती के काम नहीं करती। हर किसी से गलतियां तो होती ही हैं। लेकिन उसे दिखाने के लिए, जनता को मजबूत विरोधी पार्टी की आवश्यकता होती है। इंग्लैंड, कनाडा आदि देशों में प्रतिपक्ष को अधिकृत माना जाता है। उसके नेताओं को सरकार तनख्वाह देती है।

शेड्यूल्ड कास्ट फेडरेशन और समाजवादी के चुनाव सहयोग के बारे में लोगों को बुरा क्यों लगता है इस बारे में मुझे आश्चर्य होता है। मैं अस्पृश्य जाति का हूं। उसी प्रकार मुझे राजनीति में भी अस्पृश्य रहना चाहिए क्या ऐसी इन लोगों की इच्छा है? मैं काँग्रेस में नहीं गया क्या इसलिए उन्हें बुरा लगता है?

जिस काँग्रेस ने इस देश का राजकाज साफ–सुथरा रखने की कोशिश तक नहीं की उस काँग्रेस को फिर से जिताना चाहिए या नहीं इस बारे में आप खुद फैसला कीजिए।[1]

जनता : 11 दिसंबर, 1951

290

राजनीतिक अधिकारों के प्रति जागरुकता होने पर ही बड़ी संस्थाओं से लड़ा जा सकता है

मुंबई के शिवडी लेबर कैम्प महिला मंडल की ओर से दिनांक 19 दिसंबर, 1951 को रात 7 बजे पुराने सिद्धार्थ कॉलेज में डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के निवासस्थान पर उन्हें 501 रुपयों की थैली सम्मनीय माईसाहब अम्बेडकर के हाथों अर्पण की गई। उस अवसर पर डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने उपस्थित महिलाओं को सम्बोधित करते हुए कहा–

बहनों, आज आपकी ओर से दी गई इस राशि के लिए मैं आप सभी के प्रति कृतज्ञ हूं। अभी हम लोगों को पैसों की बहुत जरूरत है। इसीलिए राशि छोटी हो या बड़ी हमारे लिए बहुत ही महत्वपूर्ण है। लेकिन अपनी जिम्मेदारी यहीं खत्म नहीं होती। 3 तारीख को हमें बड़ी जिम्मेदारी निभानी है और वह इस भेंट से कई गुना मूल्यवान है।

यहां इकठ्ठा ज्यादातर महिलाएं मजदूरी करने वालों में से हैं। इसके बावजूद आज की इस घटना से साबित होता है कि समाज की पढ़ी–लिखी महिलाओं से अधिक उन्हें राजनीति में आनंद है। उनकी यह चेतना देखकर मुझे बेहद खुशी हो रही है।

अन्य समाजों की तुलना में अपनी जनसंख्या बहुत कम है। इसके बावजूद काँग्रेस जैसी बलशाली संस्था का हमारे उम्मीदवार सामना कर सकते हैं। इसका कारण हमारा समाज अपने राजनीतिक अधिकारों के प्रति जागरुक हुआ है यही है। अन्य समाज के 25 प्रतिशत लोग मतदान में हिस्सा लेते हैं। सो, हमारे 90 प्रतिशत लोग मतदान करेंगे और इसीलिए हमारे उम्मीदवार के लिए यह संभव होता है कि वह अन्य बढ़े दलों से टक्कर ले।

मुझे उम्मीद है कि जनवरी, की 3 तारीख को आप अपनी जिम्मेदारी पूरी तरह से निभाते हुए अपने उम्मीदवार को जिता देंगे।

जनता : 22 दिसंबर, 1951

291

अल्पसंख्यक समुदायों के मूलभूत अधिकार सुरक्षित रहने चाहिए

21 दिसंबर, 1951 को डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने मुंबई के मोहम्मद अली रोड़ पर बेग महमद बाग में मुसलमान भाइयों की प्रचंड सभा में उन्होंने कहा–

साथी हैरिस और कुछ अन्य मुसलमान भाई मेरे पास आए और उन्होंने मुझसे कहा कि आप मुसलमान भाइयों को भी सम्बोधित करें। काँग्रेस की तरफ उनका पलड़ा झुक रहा है। उन्हें लगता है कि काँग्रेस ने हम पर उपकार किए हैं।

मुझे इस बात से थोड़ा आश्चर्य हुआ और गुस्सा भी आया। इसीलिए, मुसलमान भाइयों को चार बातें बताने के लिए यहां आया हूं।

काँग्रेस ने मुसलमानों के लिए क्या किया है? आपको लगेगा कि 1947 के दंगे में काँग्रेस ने आपकी जान बचाई। लेकिन अगर आपको ऐसा लगता है तो आपको गलतफहमी हुई है। काँग्रेसवालों ने आपको आश्रय देने की जगह गुंड़ों को प्रोत्साहित कर दंगे की इस आग में तेल डालने का काम किया है। आपको भयभीत उन्होंने ही किया है। आपको उन्होंने इतना डराया है कि आपको लगने लगा है कि इस देश में काँग्रेस के अलावा आपका कोई तारणहार नहीं रहा है।

इस उदाहरण के आधार पर आपको सोचना चाहिए कि क्या काँग्रेस आपके कृतज्ञताभाव के काबिल भी है? जवाहरलाल नेहरू से कुछ और ही उम्मीदें मानकर आप उनकी महिमा गा रहे हैं। पंडितजी की नीति ढुलमुल है। उनसे उम्मीदें बांध कर आप आखिरकार पछताओगे। जनतंत्र में नेहरू घराने की प्रधान की परंपरा हमें कायम नहीं रखनी है। इतना ही नहीं, बल्कि आप जैसे अंधभक्तों का फायदा उठाकर इस परंपरा को कोई अगर कायम करना चाहता है तो जागरुक समाज यह होने नहीं देगा।

अगले चुनावों में काँग्रेस जीतेगी नहीं। काँग्रेस अब आखिरी सांसे ले रही है अंग्रेज की राजनीति घटिया किस्म की है। हमारे देश की अन्य जनजातियां जैसे अपने राजनीतिक अधिकार पाने के लिए जागरुक हुई हैं उसी प्रकार आपको भी अपनी पुरानी ताकत को बरकरार रखते हुए राजनीतिक अधिकार पाने के लिए लड़ना होगा। संविधान बनाते हुए काँग्रेस ने अल्पसंख्यकों के राजनीतिक भविष्य के बारे में सोच–विचार करने के लिए

जनता, 22 दिसंबर, 1951

नियुक्त की समिति की सभा जिस दिन थी, उससे पहले वाले दिन मैं काँग्रेस के प्यादे मौलादा आजाद से मिला और उन्हें अल्पसंख्यकों की सभी समस्याओं की ओर उनके भविष्य संबंधी जानकारी दी। लेकिन मौलाना दूसरे दिन सभा में उपस्थित ही नहीं रहे। मुसलमान बंधू और अन्य अल्पसंख्यकों के मसलों के बारे में वहां मेरे अलावा और कोई बोल नहीं पाया। सभी चुपचाप देखते रहे, केवल मैं ही अकेला इस पक्ष में बोला तो जवाहरलाल नेहरू ने मुसलमानों को आरक्षण देने के मुद्दे का विरोध किया। इसीलिए आपको राजनीतिक अधिकार नहीं मिले।

काँग्रेस कहती है कि उनकी सरकार सभी धर्मों को समान मानने वाली सरकार है लेकिन असल में यह उनका सफेद झूठ है। किसी भी जाति पर धर्म और रूढ़ियों पर किसी की प्रभुसत्ता न हो, हरेक के मौलिक अधिकार सुरक्षित रहें इसका मैंने संविधान में प्रबंध कर रखा है। ध्यान में रखने वाली बात यह भी है कि इसके बावजूद लखनऊ जैसे शहरों में मुसलमानों की संख्या अधिक होने के बावजूद तथा वहां पचास मुसलमानों के चुनाव जीतने जैसे हालात होने के बावजूद काँग्रेस ने केवल दस–बारह मुसलमान उम्मीदवारों को ही खड़ा किया है।

सोचिए और खुद तय कीजिए कि इस चुनाव में किसे वोट देना है। मैं तो कहता हूं कि आप सोशलिस्ट और दलित फेडरेशन की सहायता करें और देश का भविष्य सुधारें। इस देश को बनाने में आपका योगदान मील का पत्थर साबित होगा ऐसा मुझे पूरा–पूरा विश्वास है।

292

जरूरी है कि चुनाव निष्पक्ष हों

रविवार दिनांक 23 दिसंबर, 1951 के दिन समाजवादी पार्टी और शेड्यूल्ड कास्टस् फेडरेशन की ओर से मुंबई की चौपाटी पर सभा का आयोजन किया गया था। इस सभा में पांच लाख से भी अधिक भीड़ इकठ्ठा हुई थी। इस सभा को सम्बोधित करते हुए डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने कहा–

चुनाव से संबंधित कानून के पास होने के बाद विशुद्ध, स्वतंत्र और व्यवस्थित चुनाव होने के लिए दो सालों का समय लगने वाला था।

चुनाव संबंधी कानून बनने के बाद साल–दो–सालों में अगर चुनाव कराए जाते तो काँग्रेस के अलावा अन्य पार्टियों को एक प्रबल, काँग्रेस विरोधी पार्टी को संगठित करने का समय मिलता।

नेहरू मेरे इस आरोप का जवाब दें कि 1946 से काँग्रेस के पास अनियंत्रित सत्ता होने के बावजूद काँग्रेस सरकार लोगों का किसी प्रकार कल्याण नहीं कर पाई। अगले पांच सालों में वे क्या–क्या करने की सोचते हैं इसके बारे में भी वह बताएं। नेहरू के भाषण में इसका जवाब मिलता नहीं है। उसमें केवल हवाई बातें होती हैं कोई ठोस बात उसमें होती नहीं।

जेल जाकर या संघर्ष कर काँग्रेस ने आजादी पाई कहना बड़ा भ्रम पालने जैसा है। आजादी पाने के लिए मुख्यत: केवल सुभाष चंद्र बोस ही कारण बने। भारत की सेना की निष्ठा पर ही अंग्रेजों की सरकार खड़ी थी। बोस ने उस निष्ठा में ही बड़ा छेद किया, सेना में असंतोष फैलाया और आजाद हिंद सेना की स्थापना की। यह देख कर अंग्रेज चले गए।

काँग्रेस का 1942 का आंदोलन असफल रहा। 1942 का आंदोलन मैंने कभी छेड़ा ही नहीं था यह गांधी ने जो कहा था उसे काँग्रेस वाले भूल गए हैं। यह आंदोलन असफल रहा इसका एक और सबूत है कि आंदोलन के बाद गांधी ने वॅवेल का साक्षात्कार लेना चाहा तब वॅवेल ने इनकार किया था। 1921 से गांधी का इस प्रकार किसी वॉयसराय ने शायद अपमान नहीं किया होगा।

समाजवादी–शेड्यूल्ड कास्टस् फेडरेशन समझौते पर आधारित चलने वाले अखबारों

जनता, 29 दिसंबर, 1951

में छपी समीक्षा मैंने ध्यानपूर्वक पढ़ी है लेकिन मुझे उसमें कोई तथ्य दिखाई नहीं दिया। इन दोनों पक्षों के घोषणापत्र में कोई दोष दिखाने की किसी की हिम्मत नहीं हुई। काँग्रेस को सफलता न मिले इसलिए समाजवादी और शेड्यूल्ड कास्टस् फेडरेशन ने एक-दूसरे की सहायता करना तय किया है। हालांकि कुछ मामलों को लेकर हमारे बीच मतभेद है लेकिन देश को बर्बरता की खाई से निकालना हो तो कांग्रेस और कटट्रपंथी हिंदुओं को चुनाव में हराना ही हमारा एकमात्र लक्ष्य है। निष्पक्ष उम्मीदवार अगर मेरे पास आते तो मैं उन्हें समर्थन देता। लेकिन अब कोई निष्पक्ष उम्मीदवारों को वोट न दें।

आयु. अशोक मेहता ने पहले बोलते हुए विश्वास व्यक्त किया कि समाजवादी और शेड्यूल्ड कास्टस् फेडरेशन आगामी फरवरी में होने वाले चुनावों में मुंबई कार्पोरेशन पर अपनी जीत दर्ज करेंगे और मुंबई को एक नया शहर बनाएंगे। नेहरू समाजवादियों की राह का रोड़ा होने की राय भी उन्होंने प्रकट की। आयु. पुरुषोत्तम त्रिकमदास और कृष्णा हाथीसिंह के भी इस अवसर पर भाषण हुए।

293

सरकार आर्थिक भार सह कर अनाज कम कीमत पर उपलब्ध कराए

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने हैदराबाद में दिनांक 11 मई, 1952 को एक कार्यक्रम में बोलते हुए कहा–

कहा जा रहा है कि भावी योजनाओं के लिए मारक सिद्ध न हो इसलिए केंद्र ने घटक राज्यों को अनाज के लिए दी जाने वाली आर्थिक मदद देना बंद कर दिया है। लेकिन सरकार इतना इंतजाम तो करे कि जिससे आज की पीढ़ी बची रहे। आने वाली पीढ़ी के लिए वर्तमान पीढ़ी अपना आत्मनाश कर ले यह कहना सयानापन तो नहीं।

आर्थिक मदद को बंद कर सरकार ने बहुत बड़ी गलती की है। केंद्र अथवा राज्य सरकार द्वारा आर्थिक बोझ सह कर अनाज की कीमतें उतनी ही रखनी चाहिए जो कि आम जनता को उसे खरीदी करने के बस की हों।

केंद्र द्वारा घटक राज्यों को मदद देने का चलन दुनिया के सभी राष्ट्रों में है। भारत सरकार की अनाज से संबंधित नीति में स्पष्टता न होने के कारण घटक राज्य सरकारों को केंद्र को अनाज की मदद जरूर करनी चाहिए।

सिद्धांततः मैं सत्याग्रह के खिलाफ हूं यह कांग्रेस की नीति बहुत ही खतरनाक और देश की जनता के विरोध में है। लेकिन समाजवादी पार्टी को सत्याग्रह करने के लिए मजबूर किया गया। सरकार अपनी अड़ियल नीति के कारण लोगों को संविधानबाह्य तरीकों को अपनाने पर विवश करती है।

जनता : 17 मई, 1952

294

....सत्ताधारी पक्ष के साथ मतभेद होने के बावजूद देश का कभी अपमान नहीं होने देंगे

''भारत के संविधान निर्माण में डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के महत्वपूर्ण योगदान के लिए 1950 में अमेरिका के कोलंबिया विश्वविद्यालय ने उन्हें उपाधि देकर सम्मानित करने का आयोजन किया। भारत के किसी सही और लायक व्यक्तित्व का यह पहली बार विदेशी विश्वविद्यालय संस्थान द्वारा किया गया सम्मान होगा। विश्वविद्यालय ने उन्हें इस बात की सूचना दी। जिस विश्वविद्यालय से 1915 और 1917 साल में एम. ए. और पी.एच. डी. की उपाधियां उन्होंने हासिल की थी उसी विश्वविद्यालय द्वारा उनके कर्तत्व से प्रभावित होकर उनके सम्मान में उन्हें एक और उच्च उपाधि - डॉक्टर ऑफ लॉज - देकर अपना सम्मान कर रही है यह देखकर बाबासाहेब को बहुत खुशी हुई। जीवन में जो भी महत्वाकांक्षाएं थीं उन्हें जी-जान से मेहनत कर पूरा किया इस बारे में उन्हें संतोष हुआ। लेकिन इसी दौरान भारत के मंत्रिमंडल के सामने बड़े-बड़े सवाल उपस्थित हुए थे। उन्हें संवैधानिक तरीके से हल किया जाना था। इन महत्वपूर्ण कामों को दरकिनार कर कोलंबिया विश्वविद्यालय से उपाधि स्वीकारने के लिए जाना उन्हें ठीक नहीं लगा। साथ ही, छह हजार मीलों की लंबी यात्रा बीमारियों के कारण थकी हुई देह झेल पाएगी इस बारे में भी उन्हें विश्वास नहीं था। इसीलिए उन्होंने यूनिवर्सिटी को सूचना भेजी कि फिलहाल अमेरिका आने की फुर्सत नहीं है। यूनिवर्सिटी के तत्कालीन अध्यक्ष जनरल एसेनहावर थे। आगे वे अमेराका के अध्यक्ष बने। बाबासाहेब अगर उस वक्त जाते तो एसेनहावर के हाथों यह कार्यक्रम होता। कोलंबिया विश्वविद्यालय बाबासाहेब की अनुपस्थिति में उन्हें उपाधि देने के लिए तैयार था। लेकिन बाबासाहेब ऐसा नहीं चाहते थे। अपनी विद्वत्ता जिस विश्वविद्यालय से प्राप्त हुई वहां स्वयं जाकर उपाधि स्वीकारने की अपनी इच्छा के बारे में उन्होंने विश्वविद्यालय को बताया। फिर 1952 के अप्रैल माह में सभी प्रमुख कार्यों की जिम्मेदारियों से मुक्त होकर उन्होंने विश्वविद्यालय से पत्राचार किया। विश्वविद्यालय ने 5-6-1952 को उपाधि देने का समारोह आयोजित करने की घोषणा की। जिन विद्वानों का सम्मान करते हुए उपाधियां देनी थी उनके नामों की फेहरिस्त यूनिवर्सिटी ने मई माह के चौथे हफ्ते में जारी कर दी। उसमें बाबासाहेब का नाम था। उसमें उनका नाम पढ़ने के बाद उनके हजारों चाहने वालों ने बधाई देते हुए उन्हें फोन किए, तार और खत भेजे। बाबासाहेब को बेहद चाहने वालों में भारत के विख्यात दार्शनिक और भारत सरकार के उप राष्टपति डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन भी थे।

डॉ. बाबासाहेब ने तय किया था कि न्यूयॉर्क के किसी निपुण डॉक्टर से अपनी सेहत की जांच करवाएंगे। उस वक्त कोई भी अपने साथ न हो यह उनकी इच्छा थी। इलस्ट्रेटेड वीकली ऑफ इंडिया के मि. संवाददाता पोलेक्स से डॉ. बाबासाहेब ने कहा था, कि अपने खर्चे के लिए जितने डॉलर्स की जरूरत है उतनी रकम बँक से न मिलने के कारण अपनी पत्नी को वे न्यूयॉर्क नहीं ले जा सकते हैं।''[1]

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर अमेरिका जाएंगे

''कोलंबिया विश्वविद्यालय न केवल अमेरिका का बल्कि विश्व का सुप्रसिद्ध विश्वविद्यालय है। इस विश्वविद्यालय से ही डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने एम. ए .और पीएच. डी. की उपाधियां प्राप्त की थीं। पीएच डी का प्रबंध उपाधि योग्य होने की बात परीक्षकों द्वारा माने जाने के बाद उसे पहले प्रकाशित करना पड़ता है। प्रबंध प्रकाशित होने के बाद ही उपाधि अपने नाम के साथ लगाने की विश्वविद्यालय द्वारा इजाजत दिए जाने का नियम था लेकिन डॉक्टरसाहब की विद्वत्ता और प्रबंध लिखने के लिए उन्होंने जो परिश्रम किया था, उसे ध्यान में रखते हुए उन्हें खासतौर से प्रबंध प्रकाशित होने से पूर्व उपाधि अपने नाम के साथ लगाने की इजाजत दी गई थी।

दुनिया की अधिकता से बिकनेवाली *रीडर्सडाइजेस्ट* जैसी पत्रिकाओं और अखबारों द्वारा डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का अमेरिकी जनता को परिचय प्राप्त तो था ही, साथ ही दुनिया के एक महान विद्वान तथा, ग्रंथकार और प्रभावी वक्ता के तौर पर भी वे वहां मशहूर हैं। भारत के संविधान निर्माता के तौर पर पहले ही उनके नाम का डंका वहां बज रहा था। विश्व को जिन दार्शनिकों ने अपने बुद्धिप्रमाण्य ज्ञान, कर्तत्व और फिलोसोफी से प्रभावित किया उन गिने-चुने विश्वविख्यात दार्शनिकों में बाबासाहेब का नाम शीर्ष पर आना है।

अमेरिका में जगह-जगह उनके भाषण भी होंगे और अमेरिकी जनता पर उनके व्यक्तित्व की छवि उभरेगी।

डॉ. अम्बेडकर को कोलंबिया यूनिवर्सिटी की ओर से भारतीय संविधान निर्माण के लिए एल. एल. डी. की उपाधि से सम्मानित किया। उपाधि स्वीकारने के लिए शनिवार सुबह की उड़ान से कोलंबिया जाना था, इसलिए डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर मुंबई आए हुए थे। उस वक्त शे. का. फे. के अध्यक्ष और महासचिव उपस्थित थे। साथ ही मुंबई राज्य फेडरेशन के प्रांताध्यक्ष दादासाहब गायकवाड़ और सिद्धार्थ कॉलेज के रजिस्ट्रार श्री कमलाकांत चित्रे आदि लोग उपस्थित थे।

माईसाहब के साथ बाबासाहेब जब हवाई जहाज से उतरे तब प्रांताध्यक्ष ने फूलमालाएं पहनाकर उनका स्वागत किया। तुरंत वह अपने प्रिय राजगृह में चले गए।''[2]

---

1. डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर चरित्र : चां. भ. खैरमोडे, खंड 10वां, पृ. 280, 281 और 283
2. जनता : 24 मई, 1952

''रविवार, 1 जून, 1952 की रात में बाबासाहेब टी. डब्ल्यू. ए. के हवाई जहाज से न्यूयॉर्क के लिए निकलेंगे यह तय हुआ। तब उनके प्रशंसक, अनुयायी, मित्र, और पीपल्स एज्युकेशन सोसाइटी के कर्मचारियों आदि ने उन्हें 31 मई, 1952 की रात को क्रिकेट क्लब ऑफ इंडिया में उनके सम्मान में भोज का आयोजन किया। डॉ. वी. एस. पाटणकर (प्रिंसीपॉल) और आयु. के. वी. चित्रे, सचिव, पीपल्स एज्युकेशन सोसाइटी आयु. प्रभाकर पाध्ये, आयु. बी. एच. राव, आयु. डब्ल्यू आल्फ्रेड . चेयरमैन ऑफ दी यूनियन ऑफ जर्नलिस्टस् आदि लोग उपस्थित थे। डॉ. पाटणकर ने कहा, विदेशी विश्वविद्यालय उच्च उपाधियां देकर उनका सम्मान करती हैं और हमारे भारतीय विश्वविद्यालय, जहां से बाबासाहेब को पहली उपाधि मिली वह मुंबई विश्वविद्यालय भी उन्हें उच्च उपाधि देकर उनका सम्मान करने में क्यों हिचकिचा रहे हैं?

इससे यह स्पष्ट दिखता है कि भारत देश में ब्राह्मणवादियों द्वारा बनाई गई कुव्यवस्था और जातिवाद कैसे बर्बरता से भरा हुआ है। हमारे देश में अंधविश्वास, धर्मग्रंथों की पोंगापंथी कूट-कूटकर समाज व्यवस्था में भरी हुई है।

बाबासाहेब न्यूयॉर्क जाएंगे तो वहां भाषण देंगे और भारतीय अस्पृश्यों की समस्याओं को लेकर भारत सरकार की नीतियां कितनी उदासीन हैं इसके बारे में तथा अन्य प्रचलित ज्वलंत समस्याओं के बारे में अपने विचार प्रदर्शित कर भारत सरकार की अमेरिकी लोगों के सामने शायद खिल्ली उड़ाएंगे ऐसा डर कई लोगों ने व्यक्त किया था। इस आशंका को दूर करने के लिए उन्हें इस आशय के कुछ सवाल भी पूछे गए। इसलिए खाने के बाद बाबासाहेब ने धन्यवाद देने के लिए जो भाषण दिया उसमें उन्होंने इस आशंका को दूर किया।

उन्होंने अपने भाषण में कहा-

मेरे स्वभाव की प्रकृति गरम है। कई बड़े लोगों के दिखावा परस्त कार्यों की आलोयना कर मतैक्य स्पष्ट कर चुका हूं। लेकिन मैंने कभी देशद्रोह नहीं किया। इसका कारण मैं अपने देश से और अपने देशवासियों को अपनी जान से भी ज्यादा प्रेम करता हूं। मेरे देश के जो हालात हैं उनके बारे में मैं विदेशों में कभी भी नहीं बोलूंगा। अपने देश का मान कहां रखना है, और कैसे रखना है मैं अच्छी तरह जानता हूं। आज तक मैंने किसी भी अनजान विदेशी आदमी के सामने अपने देश के बारे में कुछ बुरा नहीं कहा। इसलिए बाहर जाकर बोलने की संभावना बिल्कुल नहीं है। जब कुछ लोगों को पता चला कि मैं विदेश जा रहा हूं तो उन्हें थोड़ा डर लगा कि मैं वहां अपने देश की सरकार के कामकाज के बारे में चर्चा करूंगा, वहां हमारे कामकाज के तरीकों के बारे में बता दूंगा। उन लोगों से मैं कहना चाहता हूं कि सत्तापक्ष से अथवा अधिकारी व्यक्ति से भले मेरे मतभेद हों, मैं देश की बुराई कभी नहीं करूंगा। मंत्रियों के साथ अथवा सरकार के साथ

मैं आमने-सामने भिड़ सकता हूं लेकिन विदेशियों के सामने या विदेश में, मैं कभी देश की बेइज्जती नहीं करूंगा मेरी पथदर्शक बुद्धि मुझे कभी भी यह अनुमति नहीं देती।

गांधीजी के साथ मैं गोलमेज परिषद में उपस्थित था। देश हित के लिए मैं उनसे आगे 200 मील चल रहा था यह भी मैं बताना चाहूंगा।[3]

दिनांक 31.5.2013 को टीडब्ल्यूए के हवाई जहाज से वे जाने वाले थे। मुंबई की शे. का. फे. की कार्यकारिणी ने उन्हें आदर सहित विदा करने के लिए एक परिपत्र किया था। वह परिपत्र पूरी मुंबई में बांटा गया। इसी प्रकार समता सैनिक दल ने उन्हें सलामी देने का निर्णय किया। उस दिन ग्यारह बजे हवाई अड्डे पर दोनों तरफ कतार बनाकर सैनिक खड़े थे। परिपत्र की सूचना का पालन करते हुए हजारों लोग फूलमालाएं लेकर बाबासाहेब के दर्शन हों, इसलिए और उन्हें माला पहनाने के लिए सैनिकों के पीछे खड़े थे।

बाबासाहेब को विदा करने के लिए जिलों के कई नेता उपस्थित थे। पुणे के आयु. आर. आर. भोले, दौंड के आयु. आर. जी. वंडाले, कोल्हापूर के आयु. दादासाहब शिर्के, नासिक से आयुष्मती शांताबाई दाणी, द. सातारा से आयु. पी. टी. मधाले, नगर से आयु. पी. जे. रोहम, सोलापूर से आयु. एस. बी. बाबर, आयु. एन. एस. कांबले, पू. खानदेश से आयु. जी. एम. शेंदूर्नीकर, वेडा से आयु. आंबाभाई परमार, अहमदाबाद से आयु. पी. एम. पटणी, नगर से आयु. जी. टी. रुपवते, नासिक से आयु. ए. जी. पवार, सोलापूर से आयु. के. आर. जाधव और बी. सी. कांबले (एम एल ए), आयु. जी. के. माने, आयु. आर. जी. भंडारे, आयु. जी. एन. बाबरीया और आयु. भाऊसाहब अम्बेडकर खास उन्हें विदा करने के लिए उपस्थित थे।

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर माईसाहब अम्बेडकर के साथ ठीक साढ़े दस बजे हवाई अड्डे पर आए। उनके आते ही लोगों ने तालियां बजाकर 'जय भीम' का गर्जन किया। हर संस्था ने उन्हें फूलमालाएं पहनाईं और गुलदस्ते दिए। पहले श्री ससालेकर जी. ओ. सी. ने सलामी दी। उसके बाद सैनिकों ने गार्ड ऑफ ऑनर दिया। उसके बाद डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने अपने परिचितों और अन्य उपस्थित लोगों के साथ चर्चा की। डॉ. बाबासाहेब तब बहुत ही प्रसन्न दिखाई दे रहे थे।

ठीक पौने दो बजे टी. डब्ल्यू. ए. के अधिकारी उन्हें लेकर हवाई जहाज के पास गए। लोगों ने एक बार फिर बाबासाहेब जिंदाबाद, जयभीम का जयघोष किया। डॉ. बाबासाहेब ने फिर सबको धन्यवाद। ठीक दो बजे हवाई जहाज ने उड़ान भरी।

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का अमेरिका में सम्मान

दिनांक 6 को न्यूयॉर्क में कोलंबिया विश्वविद्यालय का दीक्षांत महोत्सव संपन्न हुआ।

---

3. डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर चरित्र : चा. भ. खैरमोडे, खंड 10वां, पृ. 283, 284 और 286.

उस वक्त डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को एल.एल.डी. उपाधि प्रदान की गई।

कोलंबिया विश्वविद्यालय के 6 हजार आठ सौ अड़तालीस पदवीधारक थे। वे सब सत्रह स्कूलों और कॉलेजों के छात्र थे। डॉ. बाबासाहेब के बाद कनाडा सरकार के विदेश विभाग के सचिव आयु. पीवरसन और आयु. डैनियल मोंकेंट फ्रांस के सुप्रसिद्ध साहित्य इतिहासकार का भी सम्मान किया गया। उनके अलावा और आठ अमेरिकी नागरिकों को सम्मानित किया गया। इस अवसर पर सैंकड़ों लोग उपस्थित थे। पिछले एक सौ अठ्ठानब्वे सालों से विश्वविद्यालय अस्तित्व में था। ऐसे सुअवसर पर डॉ. बाबासाहेब को विशेष रूप से स्वागत किया गया। उपाधि प्रदान करते और उनका सम्मान करते समय कहा गया कि वे भारत के एक प्रमुख नागरिक हैं, विश्वविख्यात समाजसुधारक, सामाजिक क्रांति के पुरोआ और मानवीय हकों के लिए संघर्षरत वीर हैं। तब लोगों ने तालियों की गड़गड़ाहट की।[4]

डॉक्टर ऑफ लॉज इस उपाधि का साइटेशन लैटिन और अंगेजी इन दो भाषाओं में था। यह साइटेशन 5 जून को विश्वविद्यालय के वाइस प्रेसिडेंट एंड प्रोवोस्ट ग्रेसन कर्क ने समारोह के भव्य सभापंडाल में पढ़ कर सुनाया जो इस प्रकार था–

CITATION
COLUMBIA UNIVERSITY IN THE CITY OF NEW YORK
BHIMRAO RAMJI AMBEDKAR LL D

Born in India and schooled there under heavy hardships; B A of the univercity of Bombay at twenty and for three years a graduate student in this university, receiving doctorate in political science, subsequently a student of the Inns of Court and the University of London obtaining a doctorate in Economics; for the past three decades as barrister. University professor and member of the legislative council, as a framer of the Constitution, member of the cabinet and of the Council of State, one of India's leading citizens, a great social reformer and a valiant upholder of human rights.

In the exercise of the authority conferred upon me by the trustees, I gladly admit you to the degree of Doctor of Laws, honoris causa, in this university and confer upon you all the rights and privileges which attach there to, in token whereof I hand you this diploma.

Sd- Grayson Kirk

Vice President and Provost*

June 5, 1952.
*SURATORS UNIVERSITATIS COLUMBIAE NEO EBORACENSIS
OMNIBUSET SINGULIS QUORUM INTEREST SALUTEM
HIS LETTERS TESTAMUR NOS UNANIMI CONSENSU

---

4. जनता : 7 जून, 1952

Bhimrao Ramji Ambedkar

AD GRADUM

DOCTORIS IN LEGIBUS

HONORIS CAUSA PROVEXISSE EIQUE OMNIA IURAET PREVILEGIA QUAE AD ISTUM ATTINENTDEDISSE ET CONCESSISSE IN CVIVS REI PLENIVS TESTI MONIUM SIGILLO HVIVS UNIVERSITTIS ET PRAESIDIS CHIROGRAPHO DIPLOMA HOCCE MUNIENDUM CURAVIMVS DATUM NOVI EBORACI DIE.

MENSIS IVNII

QUINTO

ANNOUQUE DOMINI Sd. GRAYSON KIRK

MILLESIMO NONGENTESM PROPR AE SES

QUINQAGESIMO SECUNDO

Seal of the University of Columbia[5]

5. डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर चरित्र : चां. भ. खैरमोडे, खंड 10वां, पृ. 287 और 288.

295

सार्वजनिक फंड का सही उपयोग करें

दिनांक 14 जुलाई, 1952 को मुंबई के दामोदर हॉल में अस्पृश्य कार्यकर्ताओं का सम्मेलन आयोजित किया गया था। इस अवसर पर डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने कहा-

बहनों और भाइयों,

आपको यहां आमंत्रित किया गया है, क्योंकि 1938 में मुंबई में मेरे द्वारा स्थापित किया गया इमारत फंड के बारे में आपको जानकारी दी जा सके। आगे क्या किया जा सकता है यह भी तय किया जा सकता है इसलिए वह सभा बुलाई गई है। 1938 में इमारत फंड की स्थापना करने के बाद हर चॉल में इसका प्रचार-प्रसार किया गया। आज 14 सालों के बाद अस्पृश्य बंधुओं के लिए बनने वाली इमारत को कोई मूर्त रूप नहीं मिल पाया है। इसके कई कारण हैं। हालांकि प्रमुख कारण यही है कि 1942 में, मैं मुंबई छोड़ कर दिल्ली चला गया था। मेरी अनुपस्थिति में फंड का काम जोरों से नहीं चला। असल में, मेरे न होने पर काम रुक जाए यह अच्छी बात नहीं है। लेकिन यही हुआ है यह बात सच है। मेरी अनुपस्थिति में पिछले दस सालों में लोगों के मन में कई तरह के शक पैदा हुए। इमारत फंड का क्या हुआ? या आगे क्या होगा? इस बारे में किसी को कोई जानकारी नहीं थी। अब मैं आपको कुछ आंकड़े बताऊंगा। उससे पता चलेगा कि इमारत फंड का काम बंद नहीं हुआ था, लेकिन चुपचाप चल ही रहा था। मेरी राय में, अब तक इस फंड में काफी रकम जुड़ गई है। रकम इतनी है कि आप सोच भी नहीं सकते।

आज इस इमारत फंड में 1,11,228 रु. 4 आना और तीन पैसे जमा हुए हैं। अस्पृश्य समाज के इतिहास में इतनी बड़ी रकम जुटने का यह पहला अवसर है। एक लाख ग्यारह हजार दो सौ अठ्ठाइस रुपया चार आना और तीन पैसे। इसमें हम लोगों द्वारा दी गई रकम केवल 31709 रुपए 4 आना (इकत्तीस हजार सात सौ नौ रुपया चार आना) ही है। बाकी 75500 रुपया (पिचहत्तर हजार पांच सौ) रुपयों की रकम मैंने ऊंची जाति के अपने दोस्तों से इकठ्ठा की है। इसमें से 36535 रुपए की रकम जगह खरीदने के लिए खर्च हुई है। हालांकि, आज अगर वह जगह बेचने जाएं तो डेढ़ लाख रुपए कोई भी दे देगा इतनी वह जगह महत्वपूर्ण है। इस रकम में से एक और बड़ा खर्च हुआ। प्रेस की इमारत बनाने के लिए 35000 रुपए खर्च हुए। इन दोनों बातों के लिए कुल 71525 रुपए

जनता : 19 जुलाई, 1952

खर्च हुए हैं और 39693 रुपए 4 आना 3 पैसे की रकम इंपीरियल बैंक में बाकी बची है। अपने लोगों द्वारा जो रकम दी गई है उसमें से अलग-अलग जगहों से लोगों द्वारा, संस्थाओं द्वारा 25 रुपए या उससे अधिक रकम दी है ऐसे 25709 रुपए और 4 आने की रकम है। 25 रुपयों से कम रकम देने वालों की कुल 1000 रुपयों की रकम जमा है तथा जिसके बारे में कोई जानकारी नहीं है ऐसी 5000 रुपयों की रकम है। इन राशियों के बारे में जानकारी क्यों नहीं मिली? तो वह इसलिए कि, लोग जो रसीद-पुस्तक लेकर गए थे, उसे उन्होंने जमा नहीं किया। इसीलिए जानकारी मिल नहीं पाई। हो सकता है उन रसीद बुकों में और रकम जमा हुई हो और यह अधिक रकम लोग खा गए, इस प्रकार की भावना होना स्वाभाविक है। इस शक को दूर करने के लिए लोग जो रसीद बुक (पावती पुस्तक) लेकर गए हैं और जिन्होंने वे लौटाई नहीं हैं वे इकठ्ठा रकम के साथ उसे लौटा दें। पुस्तक न लौटाना या रकम न लौटाना धोखाधड़ी है और ऐसी धोखाधड़ी को कानून ने अपराध माना है, यह बात सब लोग ध्यान में रखें।

अब इस फंड का इस्तेमाल मुंबई में एक हॉल बनाने का मेरा विचार है। इस हॉल से जो आमदनी होगी उससे हम अपने छात्रों की पढ़ाई के खर्च का इंतजाम कर सकते हैं या और लोगों के हित के काम किए जा सकते हैं। इसी साल में या अगले साल तक हॉल बनकर तैयार हो जाना चाहिए।

इस हॉल को बनाने के लिए हमें पौने दो लाख रुपये कुल खर्च आएगा ऐसा अंदाजा है। आज इंम्पिरियल बैंक के हमारे खाते में 39,693 रुपये, 4 आना और 3 पैसा इसकी रकम है। फिलहाल इमारत की जमीन हमने कुछ लोगों को किराये पर दी है, जब हम उस जगह हॉल बनाने की सोचें, तब उनको नगद खाली करने के लिए नोटिस देना पड़ेगा। इससे हमारी किराये से मिलने वाली आमदनी बंद हो जाएगी।

जानकारों के अनुसार हॉल बनाने के लिए एक लाख रुपयों का खर्चा आएगा तथा हॉल में फर्नीचर आदि चीजें लगवाने में पौना लाख रुपयों का खर्च आएगा। हो सकता है थोड़ी कम या थोड़ी अधिक रकम खर्च हो।

इतनी बड़ी रकम कैसे जुटाई जाए यह एक समस्या है। मुझे अपने 60वें जन्मदिन पर 60000 रुपए देना लोगों ने तय किया है। उसमें अब तक करीब 11-12 हजार रुपए इकठ्ठा हुए हैं ऐसा सुनने में आया है। हीरक महोत्सव की प्रतिज्ञा आप लोगों ने की है उसे पूरी करने की इच्छा आपको पूरी करनी चाहिए। वरना ये केवल हवाई किला होकर रह जाएंगे। ऐसा नहीं होना चाहिए। 12 हजार रुपए आप लोगों ने इकठ्ठे किए हैं और बाकी के 48 हजार रुपए भी आप लोगों को इकठ्ठे कर लेने चाहिए। आप अगर मुझे 60 हजार रुपए देंगे तो मैं वे अपनी जेब में डाल कर ले नहीं जाऊंगा। मैं वे हॉल बनने के लिए ही दूंगा। मेरे जीते जी हॉल का काम होना चाहिए ऐसी मेरी बहुत इच्छा है।

इसीलिए आप रुपया जोड़ने के काम में लग जाएं।

कुछ लोग सार्वजनिक कामों के लिए पैसा देते हैं। लेकिन जो बिचौलिए होते हैं वे बीच में ही पैसा हड़प जाते हैं। इसलिए कुछ लोग इस शक के कारण पैसा ही नहीं देते कि हम जिस काम के लिए पैसे देंगे उससे पता नहीं काम होगा भी कि नहीं।

ऐसी बात अगर हो तो आप वह पैसा लाकर मुझे दे दीजिए। मैं उन्हें स्वीकारने के लिए तैयार हूं। अब तक मैंने कभी पैसा नहीं लिया। लेकिन अब इस काम के लिए पैसा लेने के लिए मैंने अपने आपको तैयार किया है। इसलिए जो लोग मेरे ही पास पैसा लाकर देना चाहते हों वे हर रोज शाम 7 से 8 बजे के बीच मेरे दादर के 'राजगृह' बंगले पर लाकर दें। वहां श्री उपशाम मास्तर आपको रसीद देंगे। वे इस फंड के ट्रस्टी हैं और हिसाब का काम भी वे ही देखते हैं। मैं अगले महीने-डेढ़ महीने तक ही मुंबई में हूं। सितंबर माह के पहले हफ्ते में, मैं मुंबई छोड़ कर दिल्ली जाने वाला हूं। इसलिए मेरे निकलने से पहले ही लोग मेरे पास पैसे लाकर दें।

आप अगर मुझे 60 हजार रुपए देंगे तो हमारे पास लगभग एक लाख रुपए इकठ्ठा होंगे। इसके बावजूद हॉल बनाने के लिए हमें पौने लाख यानी पिचहत्तर हजार रुपयों का कर्जा लेना होगा, और मैं वह लूंगा। सवा-दो, ढाई लाख रुपए का हॉल गिरवी रख कर इतनी रकम का कर्जा कोई भी देगा। हालांकि बाद में ये पिचहत्तर हजार रुपए भी आपको ही चुकाने हैं। मुंबई में हॉल की कितनी मांग है आप जानते हैं। हर माह बड़ी आसानी से हमें हॉल के जरिए एक हजार रुपए मिल सकते हैं। हर साल अगर 15-20 हजार रुपए लौटाए जाएं तो कुछेक सालों में ही हॉल हमारे नाम हो सकता है। एक और बात मैं आपसे कहना चाहता हूं। 'जनता' अखबार के लिए एक ट्रस्ट होना चाहिए, ऐसा मुझे लगता है। 'जनता' में अगर कोई नुकसान उठाना पड़ा तो उसकी भरपाई इस ट्रस्ट से की जा सकती है। अखबार की हम लोगों को बेहद जरूरत है। हम पर होने वाले जुल्म और अत्याचार और शिकायतें जनता तक पहुंचाने के लिए हमें ''जनता'' अखबार चलाना ही पड़ेगा। इस काम के लिए मैंने अलग से पैसा इक्ट्ठा किया है। वे 32 हजार रुपए (बत्तीस हजार रुपए) मैं फिलहाल हॉल के काम के लिए बिना ब्याज का वह मेरा पैसा कर्ज के रूप में देने के लिए तैयार हूं। लेकिन आगे ये पैसे आपको मुझे लौटाने होंगे। तीन स्त्रोतों से मेरे पास रुपए इकठ्ठा हैं। 1. इमारत फंड के 2. 'जनता' के, 3. फेडरेशन के पैसे। विभिन्न प्रांतों से वे मुझे मिले हैं। उन्हें केवल राजनीति पर ही खर्च करना है। इसीलिए इस काम के लिए मैं वे नहीं दे पाऊंगा।

पहले वाला इमारत फंड हमने मुंबई सरकार के ट्रस्ट कानून के अनुसार शेड्यूल्ड कास्टस् इंप्रूवमेंट ट्रस्ट, मुंबई के नाम से रजिस्टर किया है। इसलिए इन पैसों में कोई हेर-फेर होगा डरने की आवश्यकता नहीं है। हर साल सरकार की ओर से इस खाते

की जांच की जाने वाली है।

मुंबई में सभी लोगों के अपने हॉल हैं। मुंबई में घरेलु कामकाज करने वाले तिरले कुणबी (कुर्मी) समाज के लोगों ने भी परेल में 'वाघे हॉल' नाम से अपनी मालिकाना हक वाला हॉल बनाया है। वह लोग हमारी संख्या की तुलना में कम हैं। इसके बावजूद उन्होंने अपना खुद के मिलकियत का हॉल बनाया। इस बात से ईर्ष्या पालते हुए आप लोगों को तुरंत काम में जुट जाना चाहिए। मैं एक बार फिर बता दूं कि रसीद-बुक्स वापिस न आने के कारण हिसाब पूरे नहीं किए जा सके हैं। इसलिए, जो हिसाब पूरे नहीं हुए हैं उन सभी हिसाबों के रसीद-बुक्स और इकठ्ठा की गई रकम आप लोगों को लाकर देनी होगी। जो लोग ऐसा नहीं करेंगे उन्हें बख्शा नहीं जाएगा।

296

क्या शिक्षित युवा, समाज की उन्नति के लिए कुछ करेंगे?

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को दिनांक 20 जुलाई, 1952 के दिन महार समाज सेवा संघ द्वारा फूलमालाओं से स्वागत किया। इस अवसर पर संघ द्वारा इमारत फंड में 26 रुपयों का चंदा दिया और निवेदन किया-

कार्यकारी मंडल द्वारा परमपूज्य बाबासाहेब अम्बेडकर के आशिर्वाद से संगमनेर और कर्जत के सिद्धार्थ बोर्डिंग में पढ़ रहे 75 छात्रों के दो छात्रावासों की जानकारी दी। इनमें से कर्जत छात्रावास को अभी ग्रांट नहीं मिली है। इस छात्रावास को ग्रांट के बिना चलाना मुश्किल है।

संगमनेर के सिद्धार्थ बोर्डिग को थोड़ी-बहुत सरकारी मदद मिलती है। इसलिए उस छात्रावास के लिए अलग इमारत बनाने के बारे में विचार किया जा रहा है। आप अगर इस इमारत को आशिर्वाद देंगे तो उसे बनाने में हमारा उत्साह दोगुना होगा और इस मुश्किल काम को संघ पूरा कर सकेगा कार्यकर्ताओं ने यह जानकारी दी, तब डॉ. बाबासाहेब ने कहा-

आप सामाजिक कार्य कर रहे हैं इसका मुझे संतोष है। आपके संगमनेर छात्रावास के इमारत फंड के कार्य लिए मैं शुभकामनाएं देता हूं। लेकिन लोगों से एक सवाल पूछने का मेरा मन करता है कि जिस समाज के बच्चों को आप खुद मुश्किलें झेल कर शिक्षा प्रदान करते हैं क्या कभी यह सोचा है कि शिक्षा प्राप्त करने के बाद ये बच्चे अपने समाज की उन्नति के लिए क्या करने वाले हैं? क्या आप उनसे कोई प्रतिज्ञापत्र लिखवा रहे हैं? (जवाब ना में मिलने पर) बहुजन समाज की सेवा करने के लिए हमारे बीच से कुछ बच्चे तैयार होने चाहिए इस सोच के साथ मैंने सिद्धार्थ कॉलेज शुरू किया था। लेकिन कटु अनुभव ही मिल रहे हैं। इन बच्चों का व्यवहार ऐसा होता है कि, शिक्षा पाने के बाद कोई बड़ी नौकरी मिली कि बस! हो गया अपना काम! मैं कौन हूं? मुझे किसने शिक्षा-दीक्षा कैसे दी? मुझे शिक्षा देने के लिए उन्होंने कितने कष्ट सहे इस बात का थोड़ा-सा भी अहसास इन बच्चों को नहीं होता। पढ़ाई पूरी करने के बाद वे अपने समाज को भूल जाते हैं। ऐसे लोगों को क्या कहें यही मेरी समझ में नहीं आता। इसलिए आप जो इतनी मेहनत कर रहे हैं वह बेकार है ऐसा आजकल मुझे लगने लगा है। वरना हमें कुछ ऐसा करना होगा कि जिससे उन पर कोई बंधन रहेगा। किसके बच्चों को

जनता, 26 जुलाई, 1952

बोर्डिंग में लाया जाए? उन्हें शिक्षा कौन देगा? और इतना करने के बाद वे समाज की ओर देखते भी नहीं, क्या यह अहसानफरामोशी नहीं है? मैं अपनी जिंदगी आपके भले के लिए समर्पित कर रहा हूं लेकिन मुझे चिंता हो रही है कि मेरे बाद इस समाज का क्या होगा? मेरी इस चिंता को दूर करने वाले लोग आपके समाज में अब तक पैदा क्यों नहीं हो रहे हैं? सोचता हूं तो लगता है कि मैंने व्यर्थ ही अपना जीवन आप लोगों के लिए व्यतीत किया।

जल्द ही मुंबई में, मैं आपके लिए बड़ा हॉल बनानेवाला हूं। इसीलिए, उस दिन दामोदर हॉल में मैंने स्पष्ट किया कि मैंने कितने पैसे इकठ्ठा किए और आप लोगों ने कितने दिए। आप लोगों का कितना पैसा मेरे नाम पर बँक खाते में जमा है यह मैंने साफ-साफ आप लोगों को बता दिया है। इसके पीछे उद्देश्य बस इतना ही है कि मेरे पीछे मेरा बच्चा भी इस संपत्ति पर अपना अधिकार न जता पाए और आप लोगों को भी हर बात का साफ-साफ पता हो। इसके बावजूद आप सब लोग मिल कर इस हॉल को बनाने के लिए जी-तोड़ मेहनत करें। नगर जिला, नासिक जिला, फिर संगमनेर तहसील। आगे अपने गांव के बारे में, मैं खुद सोचूंगा इस तरह की सोच अब खत्म करनी होगी।

297

संघर्ष के सहारे मैंने अछूतों में ज्वलंत स्वाभिमान जगाया है

परमपूज्य डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर की अध्यक्षता में मुंबई राज्य और मध्य प्रदेश के प्रमुख कार्यकर्ताओं की परिषद सिद्धार्थ कॉलेज में रविवार दिनांक 17 अगस्त, 1952 को हुई थी। इस सभा में बाबासाहेब द्वार पहले ही घोषित किए जा चुके ''शेड्यूल्ड कास्ट्स इंप्रूवमेंट ट्रस्ट'' की ओर से मुंबई में बनाए जाने वाले हॉल के बारे में विचार हुआ।

बहुजनों के परमपूज्य डॉ. बाबासाहेब ने जैसे ही हॉल में प्रवेश किया और सबके अंतःकरण आनंद से भर आए। तालियों की गड़गड़ाहट के साथ गौरवान्वित होकर उनका स्वागत किया। इतने दिनों के बाद अपने नेता के पवित्र दर्शन होने के कारण सभी कार्यकर्ताओं को बेहद आनंद हुआ था। मुंबई राज्य के प्रमुख कार्यकर्ता, जिला अध्यक्ष आदि कई लोग सभा में उपस्थित थे। प्रांताध्यक्ष दादासाहब गायकवाड़, ज. से. बापूसाहेब राजबोज, बैरिस्टर बापूसाहब कांबले, दादासाहब शिर्के, आयु. आर. जी. खंडाले (दौंड), आयु. दादासाहेब पोवार (मनमाड़), पी. जी. रोहम (नगर), सावंतसाहेब (सातारा), आयु. बी. सी. कांबले, मुंबई शहर अध्यक्ष वरात, ज. से. भातनकर, आयु. बाबर (सोलापूर), जिलाध्यक्ष पी. टी. मधाले (सातारा) आदि प्रमुख कार्यकर्ता उपस्थित थे।

डॉ. बाबासाहेब ने कहा–

बहनों और भाईयों,

अस्पृश्यों के उद्धार के लिए एक व्यक्ति को एक युग में जितना कर पाना संभव था उतना मैंने किया है। मेरी कुछ कोशिश कामयाब रहीं कुछ नहीं रही होंगी, लेकिन मैंने अपना कार्य धैर्यपूर्वक जारी रखा है। 25 सालों में, मैंने आपके लिए जो किया, उतना किसी एक व्यक्ति द्वारा कभी कहीं नहीं किया गया। यह मैं अभिमान के साथ नहीं वरन् आत्मविश्वास के साथ कह रहा हूं। यह वास्तविकता है। मेरे कार्य की दिशा तीन तरह की थी।

पहली– अस्पृश्य समाज में स्वाभिमान पैदा करना। मुझे यह काम बहुत महत्वपूर्ण लगा। मेरे राजनीति में आने से पूर्व अस्पृश्य समाज किस हालत में था, किस स्तर पर था, कैसे मानवीयता से मरहूम था इसका केवल एक उदाहरण मैं आपको देता हूं। बीस–पच्चीस साल पूर्व जलगाव में हर साल ब्राह्मणभोज देने का रिवाज था। भोजन के

जनता : 23 अगस्त, 1952

बाद वे जूठी पत्तलें कूड़ेदान में फेंकते थे। वहां हमारे अस्पृश्य लोग बैठते थे। कूड़ेदान से वे उन पत्तलों को इकठ्ठा कर ले जाते। कभी-कभी उनमें इन जूठी पत्तलों को लेकर बड़े झगड़े होते अस्पृश्य समाज इस हालत में था। वह न केवल इंसानियत से मरहूम था, बल्कि अपनी स्थिति पर उन्हें कोई शर्म महसूस नहीं होती थी। मनुष्य के अध:पतन का वह सबसे निम्नकोटि का रूप था।

पिछले 25 सालों के संघर्ष के बाद अगर मैं उन्हें पूरी तरह से सुखी अगर नहीं बना पाया हूं। लेकिन उनके मन में मैंने ओजस्वी स्वाभिमान जरूर पैदा किया है। अन्याय से लड़ने का सामर्थ्य उनमें मैंने पैदा किया है। यह कोई साधारण काम नहीं है मैंने अपने समाज में यह बहुत बड़ी और महत्वपूर्ण विचारधारा प्रवाहित की है।

दूसरी बात - राजनीतिक हक प्राप्त होने की। उस समय हमें पूर्वी दिल्ली कॅबिनेट में झाडू लगाने तक का काम नहीं मिलता था। आज 25 सालों के बाद वहां अस्पृश्य समाज का मंत्री है।

तीसरी बात शिक्षा के क्षेत्र की। 25 साल पहले अस्पृश्य के लिए शिक्षा के सभी दरवाजे बंद थे। संघर्ष के बाद उन्हें मैंने खोल दिया है। अस्पृश्य बच्चों को उच्च शिक्षा का मौका मिले इसके लिए सरकार के साथ भिड़ कर उनके लिए स्कॉलरशिप्स और फ्रीशिप्स की सारी सुविधा उपलब्ध कराई है। इतना ही नहीं वरन् जिन्हें वे अपना कह सकें ऐसा प्रगतिशील सिद्धार्थ कॉलेज उनके लिए खुलवा दिया है। इस कॉलेज में 300 अस्पृश्य छात्र पढ़ रहे हैं। हर साल उनके लिए 2000 रु. के वजीफे दिए जाते हैं। उनके रहने के लिए कॉलेज से लगा बोर्डिंग बनाया गया है। इसी प्रकार औरंगाबाद में इसी कॉलेज की शाखा खोली है।

मेरी राय में एक और बात करना बाकी रह गया है। मुंबई शहर में अपने समाज को मालिकाना हक वाला एक हॉल बनाना है। इसके पीछे उद्देश्य बहुत अलग हैं। मुंबई में अन्य हॉल हैं। वहां नाटक, तमाशे, नौटंकियां आदि खेले जाते रहते हैं। इसी तरह के मनोरंजनात्मक कामों के लिए हॉल बनाने की मेरी इच्छा नहीं है। मेरे समाज को यही दिशा मिले और वे भी उच्च वर्गीयों की तरह सभी क्षेत्र में विकास करें यह मेरा उद्देश्य है।

हॉल बनाने के पीछे मेरा एक महत्वपूर्ण उद्देश्य है। गांव के अस्पृश्यों पर हर घड़ी स्पृश्यों से अत्याचार हो रहे हैं। आज ही मुझे एक खत मिला है कि औरंगाबाद के एक गांव में अस्पृश्य समाज की बस्ती को स्पृश्यों ने तार की दीवार से घेर लिया है और उनका जीवन असह्य बना दिया है। इस प्रकार की हजारों शिकायतें आए दिन मुझ तक पहुंचती हैं। उनके दुख आपसे अधिक मैं समझ सकता हूं। इन दुखों के निवारण के लिए एक केंद्रीय निधि की जरूरत है। रुपयों की जरूरत है।

दूसरी बात यह है कि ये सारी शिकायतें दर्ज करने वालों के लिए अपने समाज की एक केंद्रीय कचहरी होना जरूरी है। उस कचहरी में काम करने वालों को तनख्वाह देनी होगी। लेकिन ये बातें कैसे संभव हो सकती हैं? अगर यह हॉल बन गया तो साल में लाख रुपए किराए के रूप में हमें मिलेंगे। यह जगह बिल्कुल शहर के बीचोंबीच है। इसलिए हॉल बनाने के बाद यह बड़ी कठिनाई दूर होगी।

केवल मेरे नाम की जयकार करने से बेहतर है जो बात मेरी नजर में अमूल्य है उसे करने के लिए आप जी-जान से कोशिश करें। हॉल बनाने के काम को मैं बहुत महत्व देता हूं। उससे अस्पृश्य समाज पर गांवों में होने वाले अत्याचारों का हम तुरंत खात्मा कर सकेंगे। इसलिए तीन महीनों के अंदर-अंदर आप गांवों से एक लाख रुपया इकठ्ठा कर भेजिए। हर गांव से दस-दस रुपए जमा करें। मुंबई में शेड्यूल्ड कास्टस् इंप्रूवमेंट ट्रस्ट के सचिव श्री शांताराम अनाजी उपशाम के पास रुपये भेजें। दशहरे को मैं उस हॉल बनाने के काम की शुरुआत करना चाहता हूं क्योंकि इस दिन भारत का महान सपूत चक्रवर्ति बौद्ध सम्राट अशोका ने बुद्ध धम्म अपनाया था। हॉल के काम के लिए जमा रकम में एक लाख रुपए कम हैं। इसलिए हर गांव से दस-दस रुपए के हिसाब से हर तहसील से एक-एक हजार रुपए इकठ्ठा कर भेजने के काम में आज ही से लग जाइए।

298

सार्वजनिक धन के गलत इस्तेमाल जैसा कोई और नीच कृत्य नहीं

1. शे. का .फेडरेशन, 2. शे. का. इंप्रुवमेंट ट्रस्ट, 3. म्यु मजदूर संघ, 4. महार जाति पंचायत, 5. समता सैनिक दल इन पांच संस्थाओं की ओर से रविवार दिनांक 28 सितंबर, 1952 को शाम साढ़े पांच बजे नरे पार्क में मुंबई की अस्पृश्य जनता का सार्वजनिक सम्मेलन आयोजित किया गया था। इस सम्मेलन का मुख्य कार्यक्रम डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का भाषण था। साढ़े पांच बजने से पहले ही अस्पृश्य महिलाएं और पुरुषों से पार्क पूरी तरह भर गया था। ठीक साढ़े पांच बजे डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर माईसाहब अम्बेडकर के साथ सम्मेलन की जगह पधारे। उपस्थित जनता ने उत्साह के साथ तालियां बजा कर मन से उनका स्वागत किया। मंच पर तथा मंच के पास प्रतिष्ठित व्यक्ति विराजमान थे। बॅ. कांबले, आयु. बी. सी. कांबले . एम. एल. ए, आयु. बोराले . अध्यक्ष, म्यु मजदूर संघ, आयु. भंडारे . एम. ए. एल. एल. बी, आयु. जे. जी. भातनकर, आयु. शां. अ. उपशाम- सचिव शे. का. इंप्रुवमेंट ट्रस्ट, आयु. आर. जी. वरात। अध्यक्ष शे. का. फेडरेशन आदि लोगों का जिक्र किया जा सकता है।

पहले आयु. उपशाम ने सम्मेलन का उद्देश्य बताया। उन्होंने कहा, आज कई दिनों के बाद डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर जनता के बीच आए हैं। इससे पूर्व ही वे सबसे मिलना चाहते थे लेकिन बारिश के कारण उन्हें रुकना पड़ा। आज पांच संस्थाओं की ओर से यह सार्वजनिक सम्मेलन किया जा रहा है। लेकिन ये पांच संस्थाएं वैसे अलग-अलग नहीं हैं। एक ही पेड़ की पांच शाखाओं की तरह ये संस्थाएं हैं। इन शाखाओं का तना एक ही है। उसीसे उन्हें जीने का बल मिलता है। अस्पृश्य आंदोलन के विविध उद्देश्यों के लिए अगर ये संस्थाएं निकली हैं, लेकिन उन सबका आधार डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ही हैं। सो, आज के कार्यक्रम में बोलने की मैं आप सबकी तरफ से उनसे विनती करता हूं।

तालियों की गड़गड़ाहट के बीच डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर भाषण देने के लिए उठे। उन्होंने कहा-

बहनों और भाइयों,

आजकल कई लोगों का मन राजनीति में रमा हुआ है। मेरा मन लेकिन राजनीति में नहीं रमता। मेरा पूरा ध्यान हम लोगों द्वारा शुरू किए गए इमारत फंड में लगा हुआ है।

जनता : 4 अक्तूबर, 1952

मुंबई में कई तरह की इमारतें हैं। ब्राह्मण जातियों की इमारत हैं, मराठों की हैं, क्षत्रियों की हैं, इतना ही नहीं, कुणबियों (कुर्मियों) ने भी अपनी इमारत अथवा जाति का हॉल बनवा लिया है। उसी प्रकार अस्पृश्य समाज का भी एक हॉल या जातिगृह मुंबई में होना चाहिए ऐसी मेरी बहुत पुरानी इच्छा है। 1938 साल में इस काम के लिए मैंने मुंबई में इमारत फंड की स्थापना की। इस काम की जिम्मेदारी लेकर आज 10-15 साल बीत चुके हैं। इसके बावजूद इस कार्य को अब तक मूर्त रूप प्राप्त नहीं हुआ है। मैंने तय किया है कि कम से कम अब तो यह काम पूरा होना चाहिए। इस काम के पूरे होने से पहले अब मैं कोई और काम हाथ में नहीं लूंगा। यह काम बेहद आवश्यक है यह जान कर हर कोई पूरे मन से इसमें जुट जाएं। आज इस मद में मेरे पास जो रकम है वह इसप्रकार है - पहले की बची रकम 40 हजार रुपया, हीरक महोत्सव के लिए मुंबई के लोगों द्वारा इकठ्ठा किए गए और बचे हुए 18 हजार रुपए, इसमें बाहर गांव के 1 हजार रुपए हैं। मुंबई से बाहर वाले लोगों द्वारा इमारत फंड में भेजे गए 4 हजार रुपए और बिना ब्याज के मिले 32 हजार रुपए। बाकी रकम आप सभी को मिल कर जुटानी पडेगी। इस काम के लिए कर्ज लेने का मेरा ख्याल था। लेकिन अब मैंने वह ख्याल छोड़ दिया है। क्योंकि अगर कर्ज लेते हैं तो 10-12 प्रतिशत का ब्याज देना पड़ेगा। ब्याज के नाम पर इतनी बड़ी रकम देने का मेरा ख्याल नहीं है। आप सब लोग अगर चाहें तो बिना कर्ज के हम इस काम को पूरा कर पाएंगे। मुंबई में चॉल कमेटियां नियुक्त कर मुंबई के बाहर कुछ गांवों की या तहसीलों की कमेटियां बना कर आपको यह काम करना होगा। इस बारे में मैं दुबारा नहीं बताऊंगा। यही बताने के लिए मैं यहां आया हूं। पहली तारीख के बाद मैं दिल्ली जा रहा हूं। और शायद कई दिनों तक मैं लौट नहीं पाऊंगा। मैं यहां नहीं हूं तो यह काम रुकना नहीं चाहिए। मेरे होते हुए जिस तेजी से यह काम चल रहा है उससे अधिक तेजी से मेरे बाद भी यह काम चलता रहना चाहिए। आपके काम की रिपोर्ट मुझे दिल्ली में मिलती रहनी चाहिए और रिपोर्ट मुझे संतोष देने वाली होनी चाहिए। यहां जिन संस्थाओं के सहयोग से यह सम्मेलन किया जा रहा है वे सब इस काम को अपना काम समझ कर अपने-अपने विभागों में काम में लग जाना चाहिए।

आज दशहरा है। दशहरे को सोने का दिन कहते हैं। हालांकि सोना न आपके पास है न मेरे पास। आज का यह मौका बस सोने जैसा है। यहां से निकलने से पूर्व आप सब इमारत फंड इकठ्ठा करने के लिए सोने जैसी प्रतिज्ञा करें। आपकी प्रतिज्ञा की अगर कसौटी पर कसा जाए तो उसे 100 प्रतिशत ही निकलना होगा।

मेरी जनता गरीब है। लेकिन उन सब पर मेरा विश्वास है। मुझे यकीन है कि गरीब होने के बावजूद मेरी भावनाओं को आवाज दिए बगैर उनसे रहा नहीं जाएगा। हालांकि, पढ़े-लिखे लोगों से इस अवसर पर मैं दो शब्द कहना चाहूंगा। गरीब जनता द्वारा दिए

गए पैसों का हिसाब वे पक्का रखें। एक पैसे का भी घोटाला न हो इसका वे ख्याल रखें। सार्वजनिक पैसे का हिसाब ढंग से रख कर जनता को वह समय-समय पर दिखाना इससे जैसा पवित्र कार्य कोई और नहीं है। इसी प्रकार पैसों का गलत इस्तेमाल करने जैसा नीच काम कोई और नहीं है।

अपने समाज के पढ़े-लिवों पर से मेरा विश्वास उठ चुका है। इमारत फंड का सारा हिसाब मुझे मिलना चाहिए। आम लोगों पर, गरीब और अशिक्षित लोगों पर ही अब मुझे भरोसा है।

मैं जब तक मुंबई में हूं तब तक लोग मेरे बंगले पर पैसे लाकर दे सकते हैं। मेरे दिल्ली जाने के बाद श्री शांताराम अनाजी उपशाम, सचिव, शे. का. इंप्रूवमेंट ट्रस्ट, मुंबई को पैसे दें। फिलहाल वे मेरे बंगले पर पैसे लेने का काम करते हैं। मेरे दिल्ली जाने के बाद उनका ऑफिस भारत भूषण प्रिंटिंग प्रेस में रहेगा। यह कह कर उन्होंने अपना भाषण पूरा किया।

आखिर आयु. जे. जी. भातनकर ने डॉ. बाबासाहेब और आयुष्मति माईसाहब के प्रति आभार प्रकट किया और सभी संस्थाओं की ओर से उनका फुलमालाओं से स्वागत किया। सबके प्रति आभार प्रकट करने के बाद सभा का काम पूरा हुआ।

299

विश्वविद्यालयों में भावी जीवन का निर्माण होता है इस बारे में छात्रों में सजगता होना जरूरी है

15 दिसंबर, 1952 के दिन मुंबई के एलफिंस्टन कॉलेज में डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का भाषण आयोजित किया गया था। उन्होंने कहा–

इस कॉलेज में चार सालों तक मैंने पढ़ाई की लेकिन उस जमाने को मैं मीठी यादों वाला जमाना नहीं कह सकता। मैं इस कॉलेज का पहला ही अस्पृश्य छात्र था। सवर्ण छात्रों के साथ मिलने–बोलने का मेरा मन नहीं करता था। डर के कारण नहीं, मेरा मन सवर्ण छात्रों के साथ बातचीत करना ही नहीं चाहता था। मेरे कपड़े उनके कपड़ों की बराबरी के नहीं थे उनके व्यवहार में ऊच–नीचता का भेदभाव मुझे दिखता था। इसलिए, उनसे दूर रहना ही मुझे पसंद था। आजकल के छात्रों की तरह मेरा कॉलेज जीवन उत्साही नहीं था। मैं इसके लिए किसी को भी दोष नहीं देता। मेरे अध्यापकों ने और विद्यालय संचालकों ने मेरे साथ ठीक बर्ताव किया। उस जमाने के छात्रों में और आजकल के छात्रों में जमीन–आसमान का फर्क है।

आजकल के छात्र जिस विश्वविद्यालय में पढ़ते हैं उसके कामकाज पर ध्यान नहीं देते। छात्र क्या पढ़ेंगे यह भले विश्वविद्यालय तय करता हो, लेकिन अपने बौद्धिक विकास के लिए जो हम पढ़ रहे हैं वह आवश्यक और पोषक है या नहीं इस ओर हर छात्र को ध्यान देना होगा। उनके भविष्य का गठन यहीं से होता है। वह राष्ट्र का आदर्श नागरिक बनेगा या उसका जीवन विफल होगा यह उसका पाठ्यक्रम ही तय करता है। इसलिए विश्वविद्यालय के हर घटनाक्रम की ओर छात्र का सूक्ष्मता से ध्यान देना जरूरी है। लेकिन आजकल के छात्र इस ओर से बिल्कुल ही लापरवाह होते हैं उनमें पढ़ाई के प्रति गंभीरता और रुचि कम दिखाई पड़ती है।

महाविद्यालयों में शिक्षा प्राप्त करने वाले छात्रों की जिंदगी के 4 साल बीत जाते हैं और वे उपाधियां लेकर कॉलेज से निकलते हैं। इसके बावजूद उन्हें नीत्शे, प्लेटो, बेकन, स्पिनोजा जैसे महान दार्शनिकों के दर्शन के बारे में कुछ भी पता नहीं होता। जिस दर्शन ने नए विश्व को खड़ा किया या कहें कि आज का हर नागरिक जिस दर्शन के सहारे अपना रोजमर्रा का दिन जो रहा है उन दार्शनिकों के दर्शन की ओर आज के उपाधिप्राप्त

जनता : 20 दिसंबर, 1952

छात्रों का ध्यान न होना शर्मिंदा होने वाली बात है। इसी प्रकार आज के विश्वविद्यालय जेम्स और चार्लस् का दर्शन छात्रों के माथे जबरदस्ती जड़ रहे हैं। छात्रों को चाहिए के वे ऐसी बातें खुद पहचानें और आग्रह करें कि हमें सही शिक्षा चाहिए।

मानवी जीवन में वैचारिक और नैतिक मूल्य कभी भी स्थिर नहीं रहे हैं। समय के साथ–साथ उनमें बदलाव आते रहे हैं। न वे सिर्फ बदलते हैं बल्कि वे दिनों–दिन बेहतर होते जाते हैं। भारतीय छात्रों को भी चाहिए कि वे इन नित बदलते जीवनमूल्यों पर ध्यान दें और उन्हें अपने आचरण में लाने के लिए प्रतिबद्ध हों। उन्हें ध्यान देना होगा कि इन नए दर्शनों को विश्वविद्यालय पाठ्यक्रम में शामिल कर रहे हैं अथवा नहीं।

लेकिन खेद की बात यह है कि आधुनिक छात्रों का बौद्धिक और वैचारिक स्तर गिरता जा रहा है। भूतकालीन मानवीय प्रज्ञा से उनकी तुलना ही नहीं हो सकती। बौद्धिक स्तर में इस प्रकार गिरावट क्यों आ रही है इस बात पर छात्रों को सोचना चाहिए। उनकी इस अधोगति का कारण स्पष्ट है कि वे भूतकालीन ज्ञानियों और प्रतिभावानों की कृतियों का ध्यान से अध्ययन नहीं करते।

दूसरी तरफ, आजकल के छात्र फुटबॉल, क्रिकेट और खोखली राजनीति में डूबा रहता है। विद्यार्जन का बहुत बड़ा अर्थ है। हमारे प्राचीन गुरुकुल एकांत में विद्या पढ़ाया करते थे। वनों में उनके विश्वविद्यालय की स्थापना होती थी, जिसका प्रमुख कारण यह था कि छात्रों को पढ़ाई की नई दृष्टि प्राप्त हो। शिक्षा का मतलब है दुनिया को समझना और कुरितियों पर प्राप्त ज्ञान से कड़ा प्रहार करना। इस नए नजरिए से वे सही जीवनमूल्यों की खोज करें उनसे सीखें। लेकिन आजकल के छात्र खेल और राजनीति में खो जाते हैं और उस दिव्य दृष्टि को प्राप्त ही नहीं करते।

हिंदी विद्यालयों के अध्यापक बेमन से, अरुचि केवल जिम्मेदारी ली हुई है इसलिए विद्यादान करता है। उनके द्वारा स्वयंप्रेरणा से विद्यादान नहीं होता। अध्यापक के लिए जरूरी अंत:स्फूर्ति, विद्यादान का शौक और उसके लिए जरुरी निरंतर समर्पित अध्ययनभाव की उनमें कमी होती है। अध्यापन को एक पेशे का स्वरूप प्राप्त हुआ है, घंटा भरने के लिए उन्हें जो पढ़ना सिखाना पड़ता है उसके कारण ही शायद अध्यापक वर्ग में यह शिथिलता व्याप्त हुई है। इसी कारण अध्यापक अपने दल को विचार करने के लिए प्रेरण ा देने वाला ज्ञान देने में असमर्थ साबित हुए हैं।

विद्यालयों द्वारा अपनी फीस में अंटशंट बढ़ोतरी की है। फीस में इसी प्रकार वृद्धि होती रहे तो छात्रों के जीवन पर उसका बुरा परिणाम होगा। उनका भविष्य खतरे में पड़ जाएगा केबन ने कहा है, Knowledge is Power, ज्ञान महान शक्ति है। शिक्षा का मतलब यह नहीं है कि केवल ज्ञान प्राप्त कर नौकरी पा ले। छात्रों को इस ज्ञान की आराधना कर अपने देश का विकास और उद्धार करना हो तो उन्हें अपने विश्वविद्यालय के कामकाज

में जरूर ध्यान देना होगा और अपने हकों के लिए हमेशा लड़ते रहना होगा।

विश्वविद्यालयों का कामकाज चलाने वाले सिनेट में बैठे क्रियाशून्य बूढ़ों को हटाए बगैर विश्वविद्यालय के कामकाज में सुधार नहीं आने वाला। उल्टे इन्हीं लोगों के कारण विश्वविद्यालयों में खुले आम घूस आदि चल रही है। सिनेट के सदस्य का शिक्षा संबंधी साहित्य या वैज्ञानिक उपकरण खरीदने की शर्त पर ही किसी नए स्कूल को या कॉलेज को मान्यता प्राप्त होती है। इसीलिए, छात्र खुद ही विश्वविद्यालयों का कामकाज संभाले और अपना हित सिद्ध करें।

300

प्रजातंत्र में सफल कामकाज की कुछ पूर्व सुनिश्चित शर्तें

''जून 1952 से डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर की सेहत में सुधार आने लगा। उन्हें थोड़ा आराम महसूस होने लगा। पिछले 10-15 सालों में भगवान बुद्ध का चरित्र और कार्य के बारे में उन्होंने गहराई से अध्ययन किया था। जुलाई माह से इस विषय पर वे नोटस निकालने लगे। बीच-बीच में कभी-कभार वे अन्य ग्रंथ पढ़ कर अपने लेखन के लिए कुछ नोटस् भी बना रहे थे। विभिन्न संस्थाओं से उन्हें भाषण के आमंत्रण मिलते थे लेकिन स्वास्थ्य ठीक न होने के कारण उन्होंने कोई आमंत्रण नहीं स्वीकारा था। पिछले साल भर से पुणे के लोग उनका भाषण रखने की कोशिश में जुटे हुए थे। लेकिन बाबासाहेब ने उनके आमंत्रण के लिए भी हामी नहीं भरी थी। अक्तूबर में बाबासाहेब एक बार फिर मुंबई आए तब पुणे के दो वकील उनसे मिलने आए। उन्होंने विनम्रता से एक बार फिर बाबासाहेब से आग्रह किया कि पुणे में किसी अच्छे विषय पर बाबासाहेब भाषण करें। इस बार बाबासाहेब ने उनकी विनती का सम्मान करते हुए उनकी बात मान ली। बाद में पत्राचार से विषय तय किया गया। 'असली प्रजातंत्र किसे कहा जाए और उसे बनाए रखने के लिए क्या करना चाहिए?' आदि मुद्दों पर बाबासाहेब ने अपने विचार प्रकट करना तय किया। बाबासाहेब के ये विचार पूरे भारत की जनता को पता चलें ऐसी व्यवस्था हम करने वाले हैं ऐसा उनसे मिलने आए वकीलों ने कहा था। उसके बारे में विस्तार से जानने की इच्छा बाबासाहेब ने व्यक्त की तब उन्होंने बताया कि बाबासाहेब का भाषण वे प्रकाशित करेंगे। बाबासाहेब को उनकी यह बात पसंद आई। भाषण की तारीख 22 दिसंबर, 1952 तय की गई। बाबासाहेब ने अपना भाषण दिसंबर के पहले सप्ताह में तैयार किया। उसे आयुष्मान नानकचंद रत्तु ने टाइप किया।''[1]

दिनांक 22 दिसंबर, 1952 की शाम को पुणे डिस्ट्रिक्ट लॉ लाइब्रेरी के हॉल में कार्यक्रम का आयोजन किया गया।

पहले डिस्ट्रिक्ट लॉ लाइब्रेरी की ओर से पुणे के विख्यात वकील स्व. ल. र. बनाम तात्यासाहब गोखले के तैलचित्र का डॉ बाबासाहेब के हाथों अनावरण हुआ। उसी प्रकार आयु. ए. बी. सेठना और हरि विठ्ठल तुलपुले द्वारा लाइब्रेरी को दिए गए पुस्तक-संग्रह का उद्घाटन डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के हाथों हुआ। इस समारोह में न्यायाधीश, मैजिस्ट्रेट, वकील और बाहर के कई अन्य लोग उपस्थित थे। दर्शकों से हॉल खचाखच

1. डॉ. भी. रा. अम्बेडकर चरित्र : चां. भ. खैरमोड़े, खंड 11 पृ. 20-21

भरा हुआ था। हॉल के बाहर भी कई श्रोता खड़े थे। अध्यक्ष स्थान पर थे, सेशन्स जज श्री पी. सी. भट। अध्यक्ष के भाषण के बाद श्री सेठना और तुलपुले इन अवकाशप्राप्त वकीलों का डॉ. बाबासाहेब ने पुष्पमालाएं पहनाकर सम्मान किया। इसके बाद ज्युडिशल क्लर्क्स एसोसिएशन की ओर से डॉ. अम्बेडकर को पुष्पमालाएं पहनाई गई। बाबासाहेब अम्बेडकर का वह भाषण 5 से 7 बजे के दरमियान हुआ।[2]

बाबासाहेब ने कहा–

''आज की शाम मैं आपके सामने जिस विषय पर बोलने वाला हूं उसे अपने शब्दों में बताना हो तो इस प्रकार कहा जा सकता है . 'प्रजातंत्र में सफल कामकाज की कुछ पूर्व सुनिश्चित शर्तें'। किसी भी तरह की रोकथाम के बगैर प्रजातंत्र का शासन शुरू होने के लिए आवश्यक कुछ पूर्व सुनिश्चित शर्तें क्या हैं? इस विषय पर मैं अपने विचार रखना चाहता हूं।

मुख्य विषय पर आने से पहले मैं इस विषय की भूमिका आपको बताना चाहता हूं। पहला प्राथमिक मुद्दा यह है कि प्रजातंत्र के प्रकार हमेशा बदलते रहे हैं। हम प्रजातंत्र के बारे में बोलते हैं लेकिन प्रजातंत्र का स्वरूप हमेशा बदलता आया है। ग्रीक लोगों ने अथेनीयन प्रजातंत्र के बारे में बताया। लेकिन हर कोई यह जानता है कि मक्वन और पत्थर के बीच जितनी समानता है उतनी समानता अथेनीयन प्रजातंत्र और आधुनिक प्रजातंत्र में है। अथेनीयन प्रजातंत्र में 50 प्रतिशत लोग गुलाम थे और केवल 50 प्रतिशत लोग ही आजाद थे। गुलाम लोगों का शासन में कोई स्थान नहीं था। इसीलिए हमारा प्रजातंत्र अथेनीयन प्रजातंत्र से निश्चित रूप से अलग है। एक प्राथमिक विचार के तौर पर और एक बात की ओर मैं आपका ध्यान दिलाना चाहता हूं। एक ही देश में हमेशा के लिए प्रजातंत्र एक–सा नहीं होता। इंग्लैंड के इतिहास पर नजर डालिए। सन् 1688 के विद्रोह से पहले इंग्लैंड में जिस प्रकार का प्रजातंत्र था, उसी प्रकार का प्रजातंत्र विद्रोह के पश्चात् रहा ऐसा कोई नहीं कह सकता। इसी प्रकार 1688 और 1832 के दरमियान जब पहले सुधार कानून को मंजूरी मिली थी तब का प्रजातंत्र और 1832 में उस कानून को मंजूरी मिलने के बाद बदला प्रजातंत्र एक–सा था यह कोई नहीं कह सकता। प्रजातंत्र का स्वरूप हमेशा बदलता रहता है।

तीसरी बात की ओर मैं आपका ध्यान दिलाना चाहता हूं और वह यह कि न सिर्फ प्रजातंत्र का स्वरूप बदलता है बल्कि प्रजातंत्र के उद्देश्यों में भी बदलाव आते रहते हैं। प्राचीन अंग्रेजी प्रजातंत्र का उदाहरण लेते हैं। उस प्रजातंत्र का क्या उद्देश्य था? राजा पर अंकुश रखना और साथ ही कानून की भाषा में जिसे परमाधिकार कहा जाता है उस

2. जनता, 27 दिसंबर, 1952

परमाधिकार पर अमल करने से राजा को रोकना यही तब प्रजातंत्र का उद्देश्य था। तब राजा की यह तक कहने की हिम्मत हुई थी कि– 'कानून बनाने वाली एक संस्था के रूप में भले संसद का अस्तित्व होगा, लेकिन एक राजा होने के नाते मुझे कानून बनाने का परमाधिकार प्राप्त है और मेरा कानून ही सर्वश्रेष्ठ कानून है।' राजा की इस स्वयंसत्ता पद्धति के कारण ही प्रजातंत्र अस्तित्व में आ सका।

अब प्रजातंत्र के उद्देश्य क्या हैं? राजा की स्वयंसत्ता पद्धति पर अधिक से अधिक अंकुश लगाए रखना लोकतंत्र का उद्देश्य न होकर आम जनता का, सामान्यजनों का कल्याण करना ही उसका मुख्य उद्देश्य है। प्रजातंत्र के उद्देश्यों में जो प्रमुख बदलाव आया है वह यही है और इसीलिए मैंने अपने विषय को जो नाम दिया है उसमें आपके ध्यान में आएगा कि 'प्रजातंत्र में सफल कामकाज की कुछ पूर्व सुनिश्चित शर्तें' शब्दों का चुनाव मैंने बड़े ध्यानपूर्वक किया है। हमारी समझ के अनुसार प्रजातंत्र के मायने क्या हैं? विषय की शुरुआत से पहले ही हमारे मन में इस विषय के बारे में साफ जानकारी होना षरूरी है। आपको इस बात का अहसास है कि राजनीतिशास्त्र के लेखकों ने, विचारकों ने और समाजविज्ञानियों जैसे कई लोगों ने प्रजातंत्र की परिभाषाएं दी हैं। अपने मुद्दे के स्पष्टीकरण के लिए मैं केवल दो ही परिभाषाओं का स्पष्टीकरण यहां करने वाला हूं। ब्रिटिश संविधान पर वॉल्टर बेगहॉट द्वारा लिखित चर्चित ग्रंथ से आप में से कितने लोग वाकिफ हैं मैं नहीं जानता। लेकिन वह ग्रंथ प्रजातंत्र का सहीं ढांचा बताने की पहली आधुनिक कोशिश है। वॉल्टर बेगहॉट द्वारा लिखित इस ग्रंथ के बारे में अगर आप जानते हों तो आपको पता होगा कि उसमें 'विचार–विमर्श से चलने वाला शासन' इस प्रकार प्रजातंत्र की व्याख्या की गई है। उसने प्रजातंत्र की परिभाषा इसी विचार के आधार से की है।

दूसरा उदाहरण मैं अब्राहम लिंकन का दे रहा हूं। दक्षिण के राज्यों पर विजय पाने के बाद गेट्टीसबर्ग में किए अपने प्रसिद्ध भाषण में उसने प्रजातंत्र की व्याख्या की है कि, 'लोगों का, लोगों द्वारा और लोगों के लिए चलाया गया शासन है प्रजातंत्र।' ठीक है! प्रजातंत्र के मायने समझाने के लिए अन्य कई परिभाषाएं दी जा सकती हैं। मैं खुद व्यक्तिगत प्रजातंत्र की व्याख्या थोड़े अलग ढंग से करता हूं। मुझे लगता है कि वह काफी हद तक सही भी है। मेरी प्रजातंत्र की परिभाषा इस प्रकार है . 'लोगों के आर्थिक और सामाजिक जीवन में बिना खून–खराबे के क्रांतिकारी बदलाव लाने वाली शासनव्यवस्था को प्रजातंत्र कहते हैं।' यह मेरी प्रजातंत्र की व्याख्या है। लोगों के सामाजिक, आर्थिक जीवन में मौलिक बदलाव लाने के लिए प्रजातंत्र अगर उसे चलाने वाले लोगों के काम आ रहा हो और उसके द्वारा लाए जाने वाले बदलाव अगर लोग बिना किसी खून–खराबे के स्वीकारने के लिए तैयार हों तो मैं मानता हूं कि वहां प्रजातंत्र है। प्रजातंत्र की यह सच्ची कसौटी है। हो सकता है यह काफी कठिन कसौटी हो, लेकिन आप जब किसी बात का मूल्यांकन करते हैं तब उसे कठिन से कठिन कसौटी पर कस कर आजमाते हैं।

इस प्रकार किसी भी प्रकार के हालात में, आज मैं अपनी प्रजातंत्र की व्याख्या प्रस्तुत कर रहा हूं और ऐसा प्रजातंत्र कैसे सफल होगा यह मेरे भाषण का विषय है। दुर्भाग्य से जिन्होंने प्रजातंत्र के विषय में लिखा है उन्होंने कोई भी राय आग्रह के साथ नहीं रखी है। उनकी दलीलों से प्रजातंत्र को सफल बनाने की उनकी राय के अनुसार पूर्व सुनिश्चित शर्तों की हमें झलक मिलती है। इसके लिए आपको इतिहास पढ़ना पड़ेगा और इतिहास पढ़ने के परिणामस्वरूप दुनिया के अलग-अलग हिस्सों में जहां प्रजातंत्र का शासन है वहां प्रजातांत्रिक जीवन में आई बुराइयों की खोजबीन करनी होगी।

मेरी राय में प्रजातंत्र को सफलता से लागू होने की पहली शर्त यह है कि समाज में भयानक विषमता नहीं होनी चाहिए। शोषित वर्ग नहीं होना चाहिए। दमित वर्ग नहीं होना चाहिए जैसे भारत देश के समाज व्यवस्था में यह बबर्रता का रूप धारण कर चुकी है। एक के पास विशेषाधिकार और दूसरा वर्ग केवल कोल्हू का बैल इस प्रकार के वर्ग समाज में नहीं होने चाहिएं। समाज की इस व्यवस्था में, पद्धति में और विभाजन में खून से सनी क्रांति के बीज होते हैं और शायद इस रोग को नष्ट करना प्रजातंत्र के लिए असंभव होता है। गेट्टीसबर्ग के, जिसका मैंने पहले जिक्र किया था, अपने भाषण में अब्राहम लिंकन ने कहा था कि, 'ढहा घर फिर खड़ा नहीं हो सकता।' इसका अर्थ लोग स्पष्ट तरीके से समझ नहीं पाए हैं। स्पष्ट है कि उसने यह दक्षिण और उत्तर के राज्यों के संघर्ष के संदर्भ में कहा है। उसने कहा है, 'दक्षिणी राज्यों में से आप और उत्तर के राज्यों में से हम इस प्रकार के विभाजनों में अगर हम विभाजित होकर रहेंगे तो विदेशी आक्रमणों का हम संगठित होकर सामना नहीं कर पाएंगे।' उसने जब 'ढहा घर फिर खड़ा नहीं हो सकता,' कहा था तब उसके मायने उसकी नजर में पहले बताया अर्थ ही था लेकिन मुझे ऐसा लगता है कि उसकी संज्ञा अथवा उसके वाक्य से इससे गहरा अर्थ प्रकट होता है। मेरी समझ में उसका मतलब आता है कि प्रजातंत्र के सफल होने की राह का सबसे बड़ा रोड़ा समाज के विभिन्न वर्गों के बीच पैदा हुई गहरी खाई ही है। क्योंकि, प्रजातंत्र में होता क्या है? प्रजातंत्र में कुचले लोगों को, शोषितों को और मानवी अधिकारों से वंचितों को और जो बोझ ढोने वाले बैल की जिंदगी जी रहे हैं उनके लिए विशेषाधिकार प्राप्त लोगों के समान मतदान का अधिकार प्राप्त होता है विशेषाधिकार प्राप्त लोग, उन लोगों से कम होते हैं जिनके पास विशेषाधिकार नहीं होते। प्रजातंत्र में बहुसंख्यकों का कानून ही निर्णायक माना जाने के कारण अल्पसंख्यक विशेषाधिकारी लोग अगर अपने खास अधिकारों का स्वेच्छा से और राजीखुशी त्याग नहीं करते तो विशेषाधिकारी लोग और आम जनता के बीच पैदा होने वाली खाई के कारण प्रजातंत्र का खत्मा होगा और उसी में से कुछ और अलग पैदा होगा जो निहायत अलग किस्म का होगा।

दुनिया के अलग-अलग हिस्सों में प्रचलित प्रजातंत्र व्यवस्था का अगर आप अध्ययन

करेंगे तो आपको पता चलेगा कि सामाजिक विषमता ही प्रजातंत्र के विनाश के कारणों में से एक प्रमुख है। मुझे इस बारे में कोई संदेह नहीं।

प्रजातंत्र के सफल कामकाज के लिए आवश्यक दूसरी बात है विपक्ष का अस्तित्व। सत्ता को कोसने वाले लोग न सिर्फ मैंने इस देश में देखे हैं, बल्कि इंग्लैंड जैसे देशों में भी मैंने ऐसे कई लोग देखे हैं। यहां आने से पहले मैं एक छोटी-सी किताब पढ़ रहा था जिसे हॅन्सार्ड सोसायटी ने प्रकाशित किया है और उस पुस्तक का विषय है - इंग्लैंड की प्रणाली। इस किताब में एक पूरा अध्याय इस विषय के लिए समर्पित है कि क्या प्रणाली अच्छी है? और, क्या प्रणाली को सहन किया जा सकता है? इस विषय पर काफी मतभिन्नता है। मुझे फिलहाल ऐसा लगता है कि पक्ष पद्धति के विरोध में होने वाले सभी और इस संदर्भ में जो विरोधी पक्ष के विरोध में हैं ऐसे सभी लोग प्रजातंत्र की संकल्पना को लेकर गलतफहमी के शिकार हैं। इसलिए प्रजातंत्र यानी क्या? मैं उसकी व्याख्या नहीं करता। मैं प्रजातंत्र के कार्य के बारे में सवाल पूछ रहा हूं। मुझे लगता है कि प्रजातंत्र के मायने हैं, ना कहने की शक्ति। विरासत के अधिकार या स्वयंसत्ता से प्राप्त अधिकारों का प्रतिरोध यानी प्रजातंत्र। देश पर जिनकी सत्ता है उनके अधिकारों के बारे में कभी अस्वीकार करने का प्रयोग करना यानी प्रजातंत्र है। स्वयंसत्ता शासनव्यवस्था में अस्वीकार या नकारने का अधिकार नहीं होता। एक बार राजा की नियुक्ति होने के बाद आनुवंशिकता के या दैवी अधिकार के आधार पर वह शासन करता है। हर पांच साल के बाद जनता के सामने जाकर उसे यह सवाल पूछने की जरूरत नहीं पड़ती - ''क्या आपको लगता है कि मैंने पिछले पांच सालों में अच्छा काम किया है? और अगर ऐसा लगता है तो क्या आप मुझे फिर से नियुक्त करेंगे?'' राजा की सत्ता को चुनौती देने का अधिकार किसी को नहीं होता। लेकिन प्रजातंत्र में जो सत्ता में होते हैं उन्हें हर पांच साल के बाद जनता के सामने जाकर जनता से पूछना पड़ता है कि क्या जनता की राय में वे, उनके हित की सोचने के लिए, उनकी रक्षा करने के लिए, उनके नियत जीवन में बदलाव लाने के लिए सत्ता और अधिकार पाने के लिए योग्य या लायक हैं? इसी को मैं नकारने का अधिकार कहता हूं। सत्ताधारी पांच सालों के अंत में जनता के सामने जाएं और दरमियान के समय में उनसे सवाल पूछने वाला कोई न हो ऐसे पंचवर्षीय नकारने के अधिकार से प्रजातंत्र संतुष्ट नहीं होता। लोगों की सत्ता की पंचवर्षीय दीर्घकालीन नकारने के अधिकार के प्रति ही सरकार जवाबदेह नहीं होती तो तत्काल नकारने की शक्ति की संसद में बहुत जरूरत होती है। इसीलिए शासन को वहीं और तत्काल चुनौती दे सकने वाले लोगों की प्रजातंत्र में बहुत आवश्यकता होती है। मैं जो कह रहा हूं वह अगर आपकी समझ में आ रहा हो तो आप यह सही तरीके से जान जाएंगे कि प्रजातंत्र यानी किसी को अखंडता से राज्य पर शासन करने का मिला हुआ अधिकार नहीं है। राज्य करने का अधिकार लोगों की मान्यता से बंधा होता है। संसद में उसे चुनौती दी जा सकती है। इससे आप समझ जाएंगे कि विपक्ष

की संकल्पना कितनी महत्वपूर्ण है। सत्ताधारियों द्वारा उनके पक्ष को न मानने वाले लोगों के लिए किए गए का समर्थन करने को ही विपक्ष कहते हैं।

दुर्भाग्य से अपने देश के सभी अखबार किसी एक कारण के लिए या अन्य कुछ कारणों के लिए मेरी राय के अनुसार विज्ञापनों द्वारा कमाई करने के साधन हैं। ऐसे अखबारों ने शासन को विपक्षी दलों से अधिक प्रसिद्धी दी है। क्योंकि विरोधी पार्टियों से उनकी कमाई नहीं होती पैसा नहीं मिलता। शासन से उन्हें कमाई होती है। इसलिए सहज ही सत्ताधारी पार्टी के सदस्यों द्वारा किए, भाषणों से दैनिक अखबारों के कॉलम भरे जाते हैं और विरोधी पार्टी के सदस्यों के भाषण की खबरें अखबार में कहीं आखिरी पन्ने पर आविरी कॉलम में दी जाती हैं। मैं प्रजातंत्र की आलोचना नहीं कर रहा हूं। प्रजातंत्र के लिए जरूरी पूर्व सुनिश्चित शर्त के बारे में मैं आपको बता रहा हूं। विरोधी पक्ष प्रजातंत्र की पूर्व सुनिश्चित जरूरत है। शायद आप जानते हों कि इंग्लैंड में विरोधी पक्ष न केवल मान्यताप्राप्त है बल्कि विरोधी पक्ष के नेताओं को विरोधी पक्ष चलाने के लिए सरकार से तनख्वाह दी जाती है। उनके साथ उनका सचिव होता है, टाइपिस्ट और शॉर्टहैंड वाले कर्मचारी दिए गए है। बैठने और काम करने के लिए उन्हें हाऊस ऑफ कॉमन्स में एक कमरा दिया जाता है। इसी प्रकार कनाडा में विरोधी पार्टी (विपक्ष) के नेता को वहां के प्रधानमंत्री की तरह तनख्वाह मिलती है। क्योंकि इन दोनों देशों में प्रजातंत्र के बारे में धारणा है कि अगर सरकार गलत राह पर जा रही हो तो उसे यह बताने के लिए किसी न किसी की आवश्यकता जरूर होती है और यह काम तुरंत और निरंतरता से करना पड़ता है। इसीलिए विरोधी पार्टी (विपक्ष) के नेता पर निधी खर्च करने में उन्हें आपत्ति नहीं होती।

मेरी राय में प्रजातंत्र की सफलता के लिए पूर्व सुनिश्चित एक और शर्त होती है और वह है कानून और प्रशासन के संदर्भ में सबके प्रति समानता। कानून के संदर्भ में सबके साथ समानता न बरती जाने के कई उदाहरण मिलते हैं। इस वक्त इस बारे में विस्तार से किसी को कुछ बताने की जरूरत नहीं है। लेकिन प्रशासन में समानता का मामला बहुत ही महत्वपूर्ण है। सत्ताधारी पार्टी द्वारा अपनी पार्टी के सदस्यों के फायदे के लिए प्रशासन से काम करवाने के कई मामलों के बारे में आपमें से कई लोगों को जानकारी हो सकती है। वुद मुझे इस तरह के कई उदाहरण याद हैं। मान लीजिए कि लाइसेंस के बिना न किया जा सके ऐसा कोई व्यवसाय है। इस प्रकार के कानून के बारे में विवाद नहीं हो सकता। वह सब पर लागू है। उस कानून में भेदभाव नहीं हो सकता।

निर्णय लेते समय मंत्री महोदय पहले व्यक्ति को लाइसेंस देते हैं और दूसरे को देने से मना करते हैं। लाइसेंस प्राप्त करने के लिए दोनों व्यक्तियों की योग्यता समान होने के बावजूद मंत्री महोदय ऐसा करते हैं। इससे शासन का भेदभावपूर्ण व्यवहार दिखाई देता है क्योंकि यहां समान न्याय नहीं है। लाइसेंस का सवाल यानी यह अथवा वह विशेषाधिकार

बहाल करना। यह निश्चित रूप से एक अदना सा मामला है। परिणामस्वरूप इस प्रकार के भेदभाव के शिकार लोगों की संख्या भी बहुत कम होती है। लेकिन थोड़ा आगे जाकर देखें तो अगर इस प्रकार का भेदभाव शासन में बढ़ा तो क्या होगा? खयाल कीजिए कि किसी दल के सदस्य पर किसी अपराध के कारण बहुत सारे सबूतों के साथ अपराध दर्ज किया गया है और उस क्षेत्र का पक्षप्रमुख जिले के न्यायाधीश से जाकर कहे कि अपराधी उसके दल का होने के कारण उस पर मामला दर्ज करना ठीक नहीं होगा और आगे कहता है कि मेरे कहे के मुताबिक अगर आप नहीं मानें तो मामले को मंत्री महोदय के पास ले जाकर आपका यहां से तबादला कर दिया जाएगा। ऐसा अगर होने लगे तो शासन में किस तरह का अन्याय और कैसी अफरातफरी मचेगी इसके बारे में केवल सोचना भर काफी होगा। अमेरिका में ऐसे वाकये हो रहे थे। उन्हें (spoils system) कहा जाता था। नाश पद्धति यानी कोई दल सत्ता में आने के बाद उसके पूर्व की सरकार द्वारा नियुक्त किए गए कर्मचारियों को, क्लर्क और चपरासियों को भी काम से हटा देना। उनकी जगह नए पक्ष को सत्ता में आने के लिए जिन्होंने मदद की उन लोगों की नियुक्ति करना। इसी कारण अमेरिका जैसे देश को कई सालों तक अच्छा प्रशासन नहीं मिला। आखिर उन्हें अहसास हुआ कि ऐसी बातें प्रजातंत्र के लिए फायदेमंद नहीं हैं। इसलिए उन्होंने नाश पद्धति को खत्म कर दिया। इंग्लैंड में प्रशासनिक क्षेत्र को शुद्ध, निष्पक्ष, और राजनीतिक नीतियों से अलग रखने के लिए राजनीतिक कार्यालयों और प्रशासनिक कार्यालयों में अलग-अलग पहचान बनाई। प्रशासकीय सेवाएं स्थायी होती हैं। सत्ता में कोई भी हो, सभी पक्षों की वह एक-सी सेवा करती है।

इस प्रकार मंत्रीमहोदय द्वारा किसी भी प्रकार की दखल के बिना वह प्रशासन चलाती रहती है। इसी प्रकार का प्रशासन जब अंग्रेज हमारे देश में थे तब निश्चित रूप यहां अस्तित्व में था। मैं जब भारत सरकार का सदस्य था तब की एक घटना मुझे अच्छी तरह स्मरण में है। आप शायद जानते हों कि उस समय दिल्ली की कुछ सड़कों को और मंडलों को वॉइसराय के नाम दिए गए थे। लिनलिथगो ही एक ऐसे गवर्नर जनरल थे कि जिनका नाम दिल्ली की किसी सड़क को या संस्था को नहीं दिया गया था। उनके स्वीय सचिव मेरे मित्र थे। तब मेरे पास सार्वजनिक निर्माण विभाग था। कई काम मेरे तहत आते थे। वह एक बार मेरे पास आकर बोला, ''डॉक्टर महोदय, लॉर्ड लिनलिथगो का नाम किसी संस्था या सार्वजनिक निर्माण को देने के बारे में क्या आप कुछ कर सकते हैं?'' उन्होंने आगे कहा, ''हरेक का नाम किसी संस्था अथवा सार्वजनिक निर्माण को दिया गया है। लेकिन केवल उन्हीं का नाम नहीं दिया जाना बहुत ही खटकने वाली बात है।'' मैंने कहा, ''मैं सोचूंगा।'' उस वक्त मैं जमुना नदी पर गर्मी के मौसम में दिल्ली शहर को पानी की आपूर्ति करने के लिए बांध बनाने की योजना पर सोच रहा था। क्योंकि, गर्मियों में दिल्ली में पानी की किल्लत होती है। यह बात मैंने अपने प्रिअर नामक यूरोपियन सचिव से कही।

मैंने कहा, ''महोदय, देविए, गवर्नर जनरल के सचिव द्वारा कही गई बात के बारे में आप जानते ही हैं। इसलिए इस मामले में हम कुछ कर सकते हैं ऐसा क्या आपको लगता है?'' क्या आप जानते हैं उन्होंने क्या कहा? उन्होंने कहा कि, ''महोदय, आपको यह नहीं करना चाहिए। इस देश में इस प्रकार की बातें करना असंभव है।'' कोई अधिकारी किसी मंत्री के खिलाफ बोले यह बात मेरी नजर में असंभव है लेकिन उस जमाने में ऐसी बातें संभव थीं। क्योंकि अंग्रेजों की ही तरह हमने भी यह उचित निर्णय लिया था कि शासन को प्रशासन में दखल नहीं देनी चाहिए। क्योंकि शासन का कार्य प्रशासन के कामकाज में दखल देना नहीं बल्कि नीतियां तय करना होता है। यह बेहद बुनियादी बात है और मुझे डर लगता है क्योंकि हम उस न्याय से अब अलग हो गए हैं। हमारे पास की इस बात को या तो हम पूरी तरह से त्याग देंगे या फिर उसे समाप्त कर देंगे।

मेरी राय के अनुसार सफल प्रजातंत्र की चौथी पूर्व सुनिश्चित शर्त यह है संवैधानिक नैतिकता। हमारे संविधान को लेकर कई लोग अतिउत्साही लगते हैं। मुझे सचमुच इस बात का डर लगता है। लेकिन मैं वैसा नहीं हूं। जो लोग भारतीय संविधान को समाप्त कर नया मसौदा बनाना चाहते हैं ऐसे लोगों में शामिल होने के लिए मैं सचमुच तैयार हूं। लेकिन हम यह बात भूल जाते हैं कि हमारा संविधान वैध प्रावधानों का ढांचा या कंकाल भर है। इस कंकाल का मांस होता है संवैधानिक नैतिकता। इंग्लैंड में इसे संविधान के संकेत कहा जाता है। और लोगों ने इस खेल के नियमों का पालन करना ही चाहिए। इस संदर्भ में मुझे इस वक्त याद आ रहे एक-दो उदाहरण मैं आपको बताता हूं। आपको यह याद होगा कि जब अमेरिका के 13 उपनिवेशों ने विद्रोह किया तब वॉशिंग्टन उनका नेता था। तत्कालीन अमेरिकी जीवन में केवल नेता कह कर वॉशिंग्टन का जिक्र करना यानी असल में उसकी योग्यता का अवमूल्यन करना था। क्योंकि अमेरिकी लोगों के लिए वॉशिंग्टन प्रत्यक्ष परमेश्वर ही था। आप अगर उसकी जीवनी पढ़ेंगे तो आपको पता चलेगा कि वहां का संविधान जब बन कर तैयार हुआ तब उसे अमेरिका का पहला राष्ट्रपति चुना गया। उसका कार्यकाल खत्म होने के बाद क्या हुआ? दूसरी बार चुनाव लड़ने से उसने मना किया। मुझे रत्ती भर भी शक नहीं कि अगर वह दस बार राष्ट्रपति पद के लिए खड़ा रहता तो भी हर बार बिना किसी विरोध के चुनाव जीत जाता। लेकिन दूसरी बार उसने मना किया। जब उससे पूछा गया कि ऐसा आपने क्यों किया, तो उसने बताया कि मेरे मित्रों, जिस उद्देश्य के साथ हमने अपना संविधान बनाया वह शायद आप भूल गए हैं। हमें आनुवंशिक राजसत्ता नहीं चाहिए। उसी प्रकार हमें आनुवंशिक राजा अथवा तानाशाह नहीं चाहिए। इसीलिए हमने यह संविधान तैयार किया है। इंग्लिश राजा की राजनिष्ठा का त्याग और उससे इनकार कर आप अगर इस देश में आए हैं और सालोंसाल और निरंतरता से आप मेरी पूजा करने लगे तो आपके सिद्धांतों का क्या होगा? इंग्लिश राजा की जगह अगर आपने मुझे बिठा दिया तो क्या आप कह सकते हैं कि आपने इंग्लिश राजा के खिलाफ

जो विद्रोह किया उसके प्रति आप न्याय कर रहे हैं? मुझ पर आपकी जो श्रद्धा है, मेरे प्रति आपकी जो निष्ठा है वह शायद आपको मुझे दूसरी बार चुनावों में खड़ा करने के लिए आपसे कह रही है। इसके बावजूद क्या मेरी तरह के किसी व्यक्ति को जिसने कि इस बात की प्रतिज्ञा की है कि आनुवंशिक अधिकार अपने पास नहीं होने चाहिएं आपकी भावनाओं की बलि चढ़े यह निश्चय ही ठीक नहीं रहेगा। आखिर केवल दो बार ही उसे चुनावों में खड़े करने में लोगों को सफलता मिली। वह दुबारा खड़ा भी रहा लेकिन तीसरी बार जब लोग उसके पास गए तब उसने लोगों को हड़का दिया। मैं एक और उदाहरण आपको बताता हूं। जिसके वैवाहिक जीवन के बारे में अभी हाल ही में टाइम्स ऑफ इंडिया में छपा था उस 8वें विंडसर एडवर्ड को आप जानते ही हैं। राउंड टेबिल कॉन्फरंस के लिए मैं जब वहां गया था तब इस विषय पर विवाद मचा हुआ था कि राजा को अपनी इच्छा के अनुसार किसी स्त्री के साथ शादी करने की इजाजत है क्या? वासकर वह (राजा) उसके साथ प्रतिलोम विवाह करने के लिए तैयार था। ताकि वह रानी न बन पाए या फिर अंग्रेज निजी अधिकारों को वारिज कर उसे पदत्याग के लिए मजबूर करें। मा. बाल्डविन राजा की शादी के खिलाफ थे। उसने राजा को इजाजत नहीं दी। उसने कहा आपने अगर मेरी बात नहीं मानी तो आपको पदत्याग करना होगा। मा. चर्चिल 8वें एडवर्ड के मित्र थे। वे इस बात में एडवर्ड को बढ़ावा दे रहे थे। लेबर पार्टी के लोग सोच रहे थे कि क्या इस मुद्दे के सहारे मा. बाल्डविन को हराया जा सकता है? क्योंकि कंजर्वेटिव पार्टी के बहुत से लोग अपनी निष्ठा के कारण राजा को अपना समर्थन देना चाहते थे। मुझे यह भी याद है कि प्रो लास्की 'हेरॉल्ड' में लेखमाला इसलिए लिख रहे थे कि लेबर पार्टी इस निर्णय से बचे। उनका कहना था कि – ''हमारे संकेतों के अनुसार राजा को प्रधानमंत्री की सलाह माननी ही होगी। हमने हमेशा यह बात मानी है और राजा अगर प्रधानमंत्री की बात नहीं मानता तो प्रधानमंत्री को उसे हटा देना चाहिए। हमने जब इस संकेत को माना है तो अब राजा का अधिकार बढ़ाने वाले मुद्दे पर बाल्डविन को हराना गलत होगा।'' लेबर पार्टी ने उनकी बात मानी। बाल्डविन को हराने वाली कोई बात उन्होंने नहीं की। उन्होंने कहा, 'खेल के नियमों का उन्हें पालन करना होगा।' इंग्लैंड का इतिहास अगर आप पढ़ें तो आपको ऐसे कई उदाहरण मिलेंगे जहां सत्ता में होने वाले या विरोध में होने वाले विरोधियों को ऐसे मुद्दों पर पकड़ कर नुकसान पहुंचाने के मोहक मौके पार्टी प्रमुव के सामने थे, जिनसे उन्हें कुछ समय के लिए सत्ता की प्राप्ति होती।

लेकिन उन्होंने अपने को ऐसे मोह के शिकार होने से बचाया। क्योंकि, उन्हें अहसास था कि ऐसी बातों से उनके संविधान को और प्रजातंत्र को नुकसान पहुंचेगा।

मेरी राय में जनतंत्र में सबसे महत्वपूर्ण बात यह होती है कि जनतंत्र के नाम पर बहुमत वालों द्वारा अल्पमत वालों के साथ अन्याय नहीं किया जाना चाहिए। बहुमत वाले

अगर सत्ता में हों तब भी अल्पमत वालों को अपने बारे में सुरक्षितता महसूस होनी चाहिए। अल्पमत वालों पर दबाव डाला जाता है या उनके खिलाफ दांव-पेंच लड़ाए जाते हैं ऐसा उन्हें नहीं लगना चाहिए। हाऊस ऑफ कॉमन्स में इस बात का बहुत ज्यादा ख्याल रखा जाता है। 1931 में जब रैम्से मैकडोनल्ड ने लेबर पार्टी से इस्तीफा दिया और राष्ट्रीय सरकार की स्थापना की उस समय के इंग्लैंड के आम चुनावों के परिणाम शायद आप में से कई लोगों को याद हों। चुनाव जब होने थे, तब लेबर पार्टी के सदस्यों की संख्या 150 के आसपास थी। लेकिन चुनावों के बाद लेबर पार्टी को केवल 50 जगहें मिलीं और प्रधानमंत्री बाल्डविन की पार्टी को 650 जगहें मिलीं। उस समय मैं इंग्लैंड में था। ऐसी तूफानी सफलता पाने वाली कंजर्वेटिव पार्टी के साथ काम करने वाली 50 सदस्यों की लेबर पार्टी में से किसीके द्वारा यह शिकायत की गई हो ऐसी कोई घटना मेरे सुनने में नहीं आई कि उनके भाषण की आजादी का विरोध हो रहा है, या किसी भी प्रकार का प्रस्ताव रखने के अधिकार से उन्हें वंचित किया जा रहा है। आपको भी शायद इस बात की जानकारी हो। अपनी संसद का उदाहरण लीजिए। हमारे विरोधी पार्टी द्वारा लगातार जो निंदा करने वाले प्रस्ताव और स्थगन प्रस्ताव रखे जाते हैं उसका मैं कभी समर्थन नहीं करता। संसद में हमेशा स्थगन प्रस्ताव लाते रहना यह कोई अच्छी बात नहीं है। असल में आपके देखने में यह बात आई ही होगी कि इंग्लैंड जैसे देश में संसद में निंदा या स्थगन प्रस्ताव चर्चा के लिए कम ही स्वीकारे जाते हैं। मुझे सचमुच इस बात पर बहुत आश्चर्य हुआ। इंग्लैंड की संसद के चर्चा-वृत्तांतों में सभापति द्वारा स्थगन प्रस्ताव को अस्वीकृत किए जाने की बात मेरे पढ़ने में बहुत कम आई है। अर्थात्, वह शासन का आदेश होना चाहिए। मैं जब मुंबई विधानसभा का सदस्य था उस वक्त श्री मोरारजी, आयु. मुन्शी, आयु. वेर और हमारे कुछ अन्य मित्रवर सत्ता में थे। उन्होंने उस वक्त चर्चा के लिए एक भी स्थगन प्रस्ताव को स्वीकृति नहीं दी थी। उस वक्त हमारे मित्र आयुष्मान मावलणकर सभापति थे। उन्होंने एक तो, ऐसे स्थगन प्रस्तावों को नियमों के खिलाफ ठहराते हुए सत्तापक्ष की मदद की या जैसा कि खुद उन्होंने माना है, मंत्री महोदय के विरोध होने की बात कही। ऐसे प्रस्तावों को मंत्री महोदय द्वारा अगर विरोध किया जाए तो क्या होता है यह आप भलीभांति जानते हैं। मंत्री महोदय जब किसी स्थगन प्रस्ताव का विरोध करते हैं तब जो सदस्य स्थगन प्रस्ताव लाते हैं उन्हें स्थगन प्रस्ताव को 30 या 40 सदस्यों का- या जो भी संख्या तय हुई हो उतने सदस्यों का समर्थन है यह दिखाना पड़ता है। जिन अल्पमत वाली पार्टियों का कुल प्रतिनिधित्व 4, 5 या 6 हो उन दलों द्वारा प्रस्तुत किए स्थगन प्रस्ताव को अगर सत्ताधारी पार्टी द्वारा बार-बार या हमेशा विरोध किया जाए तो अल्पमत वाली पार्टियों को अपनी शिकायतें रखने का मौका ही नहीं मिलेगा। परिणामस्वरूप अल्पमत वाली पार्टियों में कानून के खिलाफ जाने की, विद्रोह की भावना पैदा होती है। इसलिए, यह आवश्यक है कि जनतंत्र के अनुसार जब काम चलता रहता है और जिन बहुमत के लोगों पर वह

निर्भर होता है, तब बहुमत वालों को अन्यायकारी तरीके से पेश नहीं आना चाहिए।

एक और मुद्दे का जिक्र कर मैं भाषण पूरा करने जा रहा हूं। मेरी राय में समाज की नैतिकता को जागृत और क्रियाशील रखना प्रजातंत्र के लिए आवश्यक होता है। दुःख की बात है कि हमारे राज्य विज्ञान के विद्वानों द्वारा प्रजातंत्र के इस पहलु के बारे में सोचा ही नहीं गया है। 'नीतिशास्त्र राजनीति से अलग होता है। हम राजनीति सीख सकते हैं और नीतिशास्त्र के बारे में बिना कुछ सीखे भी काम चल सकता है। क्योंकि राजनीति नीतिशास्त्र के बगैर भी काम कर सकती है।' मेरी राय में यह एक आश्चर्यचकित करने वाला वाक्य है। आखिर जनतंत्र में क्या होता है, कैसे काम चलता है? प्रजातंत्र के बारे में बोलते हुए 'मुक्त शासन' का जिक्र होता है। हम मुक्त शासन के क्या मायने समझते हैं? समाज जीवन के भव्य नजरिए से लोगों को कानून के हस्तक्षेप के बगैर प्रगति करने के लिए मुक्त करना और अगर कानून बनाना ही हो तो कानून बनाने वाले को इतना यकीन होना चाहिए कि कानून के फल होने के लिए समाज में जरूरी नैतिक वास्तविकता मौजूद है। प्रजातंत्र के इस पहलु का जिक्र करने वालों में मेरी जानकारी के मुताबिक लास्की ही इकलौता व्यक्ति है। अपनी एक किताब में उसने पूरे यकीन के साथ कहा है कि 'प्रजातंत्र में नैतिक सुस्थिति हमेशा स्वीकारनी पड़ती है।' नैतिकता अगर न हो तो अपने देश में फिलहाल जैसे हो रहे हैं उसी प्रकार प्रजातंत्र के टुकड़े-टुकड़े हो जाते हैं।

निर्देश करने लायक आखरी मुद्दा है कि प्रजातंत्र को प्रजा की निष्ठा की बहुत जरुरत होती है। अन्याय सभी देशों में होता है इसमें कोई दो राय नहीं। लेकिन हर जगह उसकी तीव्रता एक-सी नहीं होती। कुछ देशों में अन्याय की तीव्रता बहुत कम होती है तो अन्यत्र कहीं लोग अन्याय के बोझ तले पिचके होते हैं। इस बारे में इंग्लैंड के ज्यू लोगों का उदाहरण दिया जा सकता है। क्रिश्चियनों ने जो अन्याय किया उनमें ज्यू लोगों को सबसे अधिक नुकसान उठाना पड़ा। हालांकि इस अन्याय से मुक्ति पाने के लिए केवल ज्यू लोगों को ही संघर्ष करना पड़ा। इस अन्याय का कारण भी असामान्य था।

पुराने ईसाई कानून के मुताबिक लड़कों को पिता की संपत्ति में विरासत का अधिकार नहीं मिलता था। वजह यह थी कि बच्चे ईसाई नहीं ज्यू हुआ करते थे। राज्य के हिस्से का मालिक मृत्युपत्रों के अनुसार राजा हुआ करता था इसलिए मृत ज्यू व्यक्ति की संपत्ति वह स्वीकार कर लेता था। राजा को यह बात पसंद थी। राजा खुश था। मृत ज्यू के बच्चे जब संपत्ति का हिस्सा पाने की अर्जी लेकर राजा के पास जाते तब राजा उन्हें थोड़ी संपत्ति दिया करता था, और बाकी सब अपने पास रखा करता था। स्पष्ट है कि लेकिन, जैसा कि मैंने पहले ही आपको बताया, किसी भी अंग्रेज व्यक्ति ने ज्यू लोगों की मदद नहीं की। ऐसे हालात में ज्यू लोगों ने अपना संघर्ष जारी रखा। लोकनिष्ठा के अभाव का यह उदाहरण है। लोकनिष्ठा का मतलब है सभी अन्यायों के खिलाफ आंदोलन के लिए

खड़े रहने की कर्तव्यनिष्ठा। अन्याय किसके साथ हो रहा है यह बात तब महत्वपूर्ण नहीं रह जाती। इसका मतलब है कि हर किसी को, भले वह अन्याय से पीड़ित हो या न हो, अन्याय से पीड़ित व्यक्तियों की मदद करने की तैयारी करनी होगी। वर्तमान युग के उदाहरण के तौर पर हम दक्षिण अफ्रीका को ले सकते हैं। वहां अन्याय के बोझ तले पिचकी जनता भारतीय है। सच है ना? वहां के गोरों पर अन्याय नहीं होते। लेकिन इसके बावजूद रेवरंड स्कॉट नामक एक गोरा उनका दुख दूर करने के लिए जी-जान से जुटा हुआ है। हाल ही में पढ़ने में आया कि वहां के गोरे वंश के युवा दक्षिण अफ्रिका के भारतीय लोगों के मुक्ति आंदोलन में सहभागी हो रहे हैं। इसी को प्रजानिष्ठा कहते हैं। मैं आपको धक्का लगे इसलिए यह सब नहीं कह रहा हूं। कई बार लेकिन मुझे लगता है कि हम सचमुच बहुत ही भुलक्कड़ हैं। हम दक्षिण अफ्रीका के अन्याय के बारे में बोल रहे हैं मैं कई बार खुद ही आश्चर्यचकित हो जाता हूं कि विलीनीकरण तथा अन्य बातों के खिलाफ बोलने वाले हम जैसे लोगों के पास हर गांव में क्या दक्षिण अफ्रीका नहीं है? हमारे हर गांव में दक्षिण अफ्रीका है और ऐसा होने के बावजूद कोई सवर्ण जाति वाला - इक्का-दुक्का ही सही वर्गीकृत जातियों की समस्या लेकर लड़ता हुआ दिखाई नहीं देता है। यहां ऐसा क्यों होता है? क्योंकि यहां लोकनिष्ठा नहीं। ''मैं और मेरा बहुमत वालों का देश केवल इसी विश्व में हम खोए रहते हैं।'' इस प्रकार की कोई बात अगर होती है तो अन्याय के नीचे पिसने वाले अल्पसंख्यकों को अन्याय निवारण के लिए दूसरों से मदद नहीं मिलेगी। इसी बात से प्रजातंत्र के लिए खतरा पैदा करने वाले विद्रोह की मानसिकता बढ़ती जाएगी।

आखिर, सज्जनों और महिलाओं, मुझे यहां बुलाने के पीछे आपकी क्या प्रेरणा थी अथवा क्या उद्देश्य था यह मैं नहीं जानता। मैं अभी आपके सामने जिस विषय पर बोला हूं वह विषय इस देश के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है इस बारे में मुझे कोई शक नहीं है। हमारी सर्वसाधारण धारणा यह है कि हमें आजादी मिली है। अंग्रेज चले गए हैं। प्रजातंत्र का पोषण करने वाला संविधान मिला है और अधिक क्या चाहिए? इससे अधिक कुछ किए बिना अपना काम पूरा हुआ है यह सोच कर हमें अब आराम करना चाहिए। संविधान तैयार हुआ है, इसलिए हमारा काम पूरा हो चुका है ऐसी भावना के खिलाफ मुझे आपको चेताना पड़ रहा है। कर्तव्य अभी खत्म नहीं हुआ है। अब तो सिर्फ शुरुआत हुई है हमें और भी बहुत कुछ जिम्मेदारियां निभानी हैं। आपको यह याद रखना होगा कि प्रजातंत्र का पौधा हर जगह जड़ें नहीं पकड़ता। अमेरिका में वह पनपा, इंग्लैंड में पनपा। फ्रांस में कुछ हद तक पनपा। अन्य जगहों पर असल में क्या हुआ जानने के लिए इस उदाहरण से आपको कुछ हद तक धैर्य प्राप्त होगा। इसी प्रकार आपमें से कुछ लोगों को यह याद होगा कि पहले महायुद्ध के परिणामस्वरूप और ऑस्ट्रिया और हंगरी साम्राज्य के विभाजन के स्वरूप विल्सन ने स्वनिर्णय के आधार से ऑस्ट्रिया से अलग छोटे-छोटे

राष्ट्रों को बनाया उनकी शुरुआत भी प्रजातांत्रिक संविधान से और प्रजातांत्रिक शासन से हुई और उनके संविधान में मौलिक अधिकारों का भी समावेश था। ये मौलिक अधिकार उन पर वरसाइल्स के शांति की सुलह से उनके लिए बंधनकारी बनाए गए थे। मेरे मित्रों, क्या आप जानते हैं कि उस प्रजातंत्र का क्या हुआ? क्या प्रजातंत्र का छोटा-सा अंश भी वहां देखने मिलता है? वे सब वत्म हो गए हैं। समाप्त हो गए हैं। कुछ और विद्यमान उदाहरण लीजिए सीरिया में प्रजातांत्रिक शासन था। कुछेक सालों में ही वहां सेना ने क्रांति की। सीरिया का प्रमुख कमांडर वहां का राजा बना और प्रजातंत्र खत्म हुआ। एक और उदाहरण लीजिए, मिश्र का क्या हुआ मिश्र में? 1922 से लेकर अगले 30 सालों तक वहां प्रजातांत्रिक शासन व्यवस्था थी। लेकिन फारुक को रातों-रात सत्ता छोड़ देनी पड़ी और नजीब इजिप्त का तानाशाह बना। उसने तुरंत वहां का संविधान जला दिया।

ये सभी उदाहरण हमारी आंखों के सामने हैं। इसीलिए मुझे ऐसा लगता है कि अपने भविष्य के बारे में हमें बहुत ही सावधान और बहुत ही समझदार बनना होगा। अपना प्रजातंत्र सुरक्षित रखने के लिए और अपनी राह के पत्थर और शिलाएं दूर हटाने के लिए क्या हम कुछ कार्यक्रम हाथ में ले रहे हैं या नहीं इस बारे में हमें गंभीरतापूर्वक सोचना होगा। आपके सामने रखे मेरे कुछ विचारों से आपमें अगर जागरूकता आई हो और अगर आपको लगने लगे कि समस्याओं को लेकर हमें लापरवाह रहना नहीं चाहिए तो मुझे लगेगा कि मैंने अपना कर्तव्य पूरा किया है।''[3]

भाषण के बाद कुछ लोगों ने प्रश्न पूछे। बाबासाहेब अम्बेडकर ने उनके जवाब दिए।[4]

---

3. यशस्वी संसदीय लोकशाहीच्या प्राथमिक शर्ती : अनुवादक सचिन तासगावकर
4. जनता, 27 दिसंबर, 1952

301

हक पाने के लिए महिलाएं मन की दुर्बलता को त्याग कर, कमर कस कर आगे आएं

कोल्हापूर में दिनांक 25 दिसंबर, 1952 को महिलाओं की विभिन्न नौ संस्थाओं की तरफ से डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को राजाराम फिल्म थिएटर में आयोजित एक बडे समारोह में प्रशस्ति अर्पण किया गया। महिलाओं की प्रार्थना के अनुसार उन्होंने अपने हिंदू कोड बिल में महिलाओं को क्या-क्या हक दिए गए हैं और उनके लिए क्या-क्या प्रबंध किए गए हैं इस बारे में संक्षेप में लेकिन बड़े सरल ढंग से विवेचन किया। समारोह में अनगिनत महिलाएं और कुछ पुरुष भी उपस्थित थे।

कार्यक्रम की शुरुआत मधुर स्वर में गाए महाराष्ट्र गीत से हुई। उसके बाद विमलाताई बागल ने अपने परिचयात्मक भाषण में हिंदू कोड बिल मंजूर नहीं किए जाने के बारे में खेद व्यक्त करते हुए कहा कि इस बिल के पास होने तक हम महिलाओं को बाबसाहब का साथ देना होगा।

उसके बाद प्रशस्रि पढ़ कर सुनाने के बाद उन्होंने उसे डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को समर्पण किया। इस अवसर पर ''करवीर भगिनी मंडल'', ''शुक्रवार पेठ भगिनी मंडल'', ''महिला सेवा मंडल'', ''वनिता समाज'', ''नामदेव महिला मंडल'', ''शारदा भगिनी मंडल'', ''स्त्री मंडल'', ''शिवाजी पेठ भगिनी मंडल'', 'मराठा महिला' मंडल संस्थाओं की ओर से डॉ. अम्बेडकर को पुष्पमालाएं अर्पित की गईं। मेजर दादासाहब निंबालकर ने भी डॉ. बाबासाहेब और डॉ. माईसाहब अम्बेडकर को फूलमालाएं पहनाईं।

उसके बाद डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने कहा-

आज के युग में संपत्ति ही आजादी का आधार है। जब तक महिलाओं को संपत्ति में वारिस नहीं माना जाता तब तक उनकी गुलामी खत्म नहीं होने वाली। हिंदू कोड बिल में मैंने उस प्रकार का इंतजाम भी किया था। हालांकि, वह बिल मंजूर नहीं हुआ। अब इसके बाद कौन-सा बिल आता है, उसका स्वरूप क्या है, उसमें महिलाओं के हकों की, आजादी की क्या व्यवस्था रखी गई है इस ओर महिलाओं को बहुत ध्यान देना होगा। इतना ही नहीं अपने अधिकारों की लड़ाई लड़ने के लिए उन्हें अपने मन की दुर्बलता को त्यागना होगा और कमर कस कर खड़े रहना होगा तभी उनकी स्थिति में सुधार हो सकता है। कुछ प्रगति हासिल की जा सकती है। दही बनाने के लिए दूध में जामन डाल

जनता, 3 जनवरी, 1953

कर रखने के बाद अगर किसी महिला को पता चले कि दही जमने के बजाय फट गया है तो उसका जो हाल होगा वैसा ही मेरा हाल हुआ है। चार सालों तक कलम घिस कर मैंने उस बिल को जो स्वरूप तैयार किया था उसी स्वरूप में नया बिल आएगा या नहीं यह कहा नहीं जा सकता। जो तैयार किया है उसमें आमूलचूल परिवर्तन होगा ऐसा भी नहीं लगता। मेरे बिल की आलोचना करते हुए कहा गया कि वह हिंदू धर्मशास्त्र के अनुसार नहीं है। ऐसा कहने वालों को मैं चुनौती देना चाहूंगा कि वे इस बिल में से मनुस्मृति के आधार के बगैर लिखी कौन-सी धारा है यह वे मुझे बता दें।

साथ ही, महिलाओं के लिए उसमें तलाक की व्यवस्था भी की गई थी। ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य इन त्रिवर्णी समाज को अगर छोड़ दें तो बाकी समाज में तलाक का चलन है ही। भारत के 90 प्रतिशत शूद्रों में तलाक प्रचलित है। लेकिन कानून में तलाक का प्रावधान रखने पर उपर्युक्त त्रिवर्णियों ने मुझ पर आलोचना की झड़ी लगा दी।

इस बिल में महिलाओं के हित के सभी मामलों का प्रावधान है। उनमें कुछ महत्वपूर्ण प्रावधान इस प्रकार हैं। शादी या गोद लेने के मामलों में जाति का बंधन नहीं होना चाहिए यह प्रमुख प्रावधान था। इसका मतलब जबरदस्ती दूसरी जाति में विवाह अथवा गोद लेने का विधान हो यह नहीं था। एक दूसरे से प्रेम के कारण अगर किसी को दूसरी जाति के व्यक्ति से शादी करनी हो या दूसरी जाति के बच्चे को गोद लेने की इच्छा हो तो परम्पराओं के कारण उन पर जो पाबंदी थी उसे इस बिल के सहारे मैंने हटा दिया था।

पति को ही परमेश्वर मानने वाली आर्य महिलाएं हैं। पति चाहे कैसा भी बर्ताव क्यों न करे, कितना भी बुरा पेश क्यों न आए, वह कितना भी बुरा क्यों न हो, उसके साथ जीवन बिताना भले कितना भी कष्टकारी क्यों न हो आर्य महिला अपने पति को छोड़ कर जा नहीं सकती। पति को लेकिन छूट है, इसीलिए जिस पत्नी को अपने पति के साथ घर चलाना अच्छा नहीं लगता हो उसे इस बिल में तलाक लेने की सहूलियत दी गई है।

इसी प्रकार स्त्री-धन का भी प्रबंध किया गया था। पति की मृत्यु के बाद उसकी संपत्ति पत्नी को मिलने पर आज तक पाबंदियां थीं, जिन्हें मैंने हटा दिया है। पति की कुल संपत्ति की मालिकियत उसके बाद उसकी पत्नी को ही मिलनी चाहिए तथा किसी महिला की मौत के बाद उसकी संपत्ति उसकी बेटी को ही मिलनी चाहिए यह मेरा हठवाद है। पिता के गुजर जाने के बाद भाइयों के बीच पिता की संपत्ति का बंटवारा होता है। उनके साथ उनकी बहन को भी उसमें हिस्सा क्यों नहीं मिलना चाहिए? सभी तरह से महिलाओं के हित में जाने वाले इस बिल को मंजूर करवाने के लिए महिलाओं ने कोई कोशिश नहीं की इसका मुझे खेद है। पुरुष होने के बावजूद मैं महिलाओं के

अधिकारों के लिए लड़ा। लेकिन महिलाओं ने क्यों थोड़ी भी उत्सुकता नहीं दिखाई यह बात मेरी समझ में नहीं आती। इस बिल को समर्थन देने की बात तो दूर, कुछ महिलाओं ने मुझसे मिल कर यह बताने की कोशिश की कि यह बिल अच्छा नहीं है। मैं दिल्ली में था तब महिलाओं का एक प्रमुख प्रतिनिधिमंडल मुझसे मिलने आया। उनसे जब मैंने पूछा कि क्या आपने वह बिल पढ़ा है? तो उन्होंने बताया कि नहीं पढ़ा। उनमें से जो प्रमुख महिला थीं उन्हें बुला कर मैंने पूछा कि जब आपने बिल पढ़ा ही नहीं है तो विरोध क्यों कर रही हैं, तो उन्होंने बताया 'मेरे पति ने मुझसे कहा कि उस बिल का विरोध करो वरना मैं दूसरी शादी करूंगा। इसलिए, सौत को सहने से मेरे लिए यही बेहतर है कि मैं इस बिल का विरोध करूं। लेकिन यह महिलाओं की मानसिक दुर्बलता है। इसी दुर्बलता के कारण वह बिल मंजूर नहीं हो पाया। महिलाओं में ताकत होती तो वह बिल नामंजूर नहीं रह पाता।

चुनाव जीत कर पार्लियामेंट में आई महिलाओं ने भी इस बिल को लेकर जागरुकता नहीं दिखाई। उन सभी महिला सदस्यों का पूरा ध्यान यूनो, आइएलओ, कोरिया आदि मामलों पर ही लगा रहा। मेरे बिल का समर्थन करने के लिए वे तैयार नहीं थीं। बिल का समर्थन करने पर यूनो या अन्य कहीं जाने का मौका नहीं मिलेगा इसका उन्हें डर था। इस प्रकार की लोभी मानसिकता के कारण ही हमारे देश का नुकसान हो रहा है। सार्वजनिक अथवा राजनीतिक क्षेत्र में काम करने वाला हर व्यक्ति आज इसी ताक में रहता है कि मैं कमिश्नर कब बनूंगा या मुझे फलां पोस्ट कब मिलेगी। इसी लोभ से उसके सभी काम चलते रहते हैं। महिलाओं में मुझे यह दोष बहुत दिखाई देता है। महिलाओं के मन पर परंपरा की पकड़ अधिक कसी हुई होती है। इसीलिए उनमें यह दुर्बलता दिखाई देती है। उन्हें ऐसा डर मन से निकाल देना चाहिए।

इंग्लैंड की महिलाओं ने मतदान का हक पाने के लिए आंदोलन किए हैं। उसी प्रकार महिलाएं अगर अपनी स्थितियों में सुधार चाहती हों, आजादी पाने में यह बिल मंजूर होना चाहिए ऐसा अगर उन्हें लगता हो तो उन्हें आंदोलन करना होगा। उसके बगैर महिलाओं पर अत्याचार करने वाले पुरुष उनकी स्थितियों में सुधार नहीं लाएंगे। इंग्लैंड में महिलाएं अपनी इच्छा से तलाक लेकर अपना जीवन बिता सकती हैं। इसके पीछे उन्हें मिला विरासत का अधिकार है। उसी प्रकार मलबारी समाज में पिछले 50-60 सालों से तलाक ज्यादातर नहीं होते क्योंकि वहां भी महिलाओं को विरासत का अधिकार मिला हुआ है। इसीलिए पुरुष उसके साथ अच्छा व्यवहार करता है। इसीलिए पुरुषों की तरह ही अपने को भी विरासत का अधिकार मिले इसके लिए महिलाओं को आंदोलन करना होगा। घर में बैठ कर अथवा सभा-सम्मेलनों में प्रस्ताव पारित कर ये काम नहीं होने वाला है। उसके लिए आंदोलन करने के लिए महिलाएं खुद आगे आएं।

हिंदू कोड बिल की शुरुआत 1939 में हुई। तब से पिछले ग्यारह सालों से इस बिल के स्वरूप पर चर्चाएं हो रही हैं, ऐसे में उस बिल के टुकड़े-टुकड़े कर उसके स्वरूप को लेकर अफवाहें क्यों फैलाई जा रही हैं यह बात समझ में नहीं आ रही है।

आने वाले बिल की हर धारा को ठीक से पढ़ कर देखें। केवल अंतरजातीय विवाह के बारे में क्या लिखा है यह देख कर काम नहीं चलेगा। केवल वही एक धारा नई और अन्य कानून पुराने ही रहने से नुकसान हो सकता है। विजातीय विवाह से उत्पन्न संतति को अपने पुराने शास्त्रों के अनुसार संपत्ति में विरासत का अधिकार नहीं मिल सकता। इसीलिए, इस प्रकार पैदा हुई संतति को कानूनी वारिस ठहराकर उसे मालिकियत देने का प्रावधान भी कानून में होना चाहिए। इस बिल को लेकर एक बार फिर महिलाओं को आदेश देकर उन्होंने भाषण समाप्त किया।

आखिर आयुष्मती उर्मिलाताई सबनीस ने धन्यवाद प्रकट करते हुए आश्वासन दिया कि जिन छत्रपति ताराबाई ने करवीर राज्य की स्थापना की उस करवीर की महिलाएं इस आंदोलन में अग्रणी होंगी।

302

राजनीति से लोगों में आभा और जागृति पैदा होनी चाहिए

दिनांक 25 दिसंबर, 1952 के दिन डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर कोल्हापूर की नगरपालिका में आए। इस अवसर पर आयोजित सभा में शुरुआत में नगराध्यक्ष श्री भाऊसाहब पाटील ने भाषण में बाबासाहेब के कार्य की प्रशंसा की और नगरपालिका के काम के बारे में जानकारी भी दी।

इस अवसर पर बाबासाहेब ने कहा–

अब डरे हुए लोगों की राजनीति नहीं चलेगी। जो सही है ऐसा लगता है उसे खुल कर कहना होगा। उसमें लुकाछिपी या बहानेबाजी नहीं चलेगी। लोगों में तेज और जागृति पैदा करने वाली राजनीति होनी चाहिए। कोल्हापुर की जनता में आग है लेकिन बार–बार उसे उत्प्रेरित करना होगा, हवा देनी होगी। वरना, जिस हालत में अभी वह है उसी हालत में छोड़ दें तो उस पर राख जमेगी और वह बुझ जाएगी। साथ ही, जो रास्ता आपको सही लगता है उस पर निडरता से आगे बढ़िए। सरकार के कानून का अथवा जेल का डर मन में मत पालिए। जेल में डाल भी दिया तो उसमें बुरा मानने की कोई जरुरत नहीं है। जो कानून मैंने बनाया है उसके तहत वो मुझे भी बंद कर सकते हैं। लेकिन उससे डरने जैसी कोई बात नहीं है। क्योंकि राजनीति क्रिकेट के खेल की तरह है। उसमें जो एक बार हारता है वह दोबारा जीतेगा नहीं यह कैसे कहा जा सकता है? लेकिन हारे हुए को निराश होकर खेल छोड़ नहीं देना चाहिए।

आज उच्च वर्णीय लोगों के हाथों में सत्ता आई है वह अपना चातुवर्ण्य का श्रेष्ठधर्म ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य को भारत के राजनीति में स्थापित करने पूरी–पूरी ताकत लाएंगे। अति पिछड़े, अस्पृश्य, आदिवासी तथा महिलाओं को इस राजनीतिक प्रक्रिया से दूर रखने का षड्यंत्र बनाकर उन्हें फिर से अपना गुलाम बनाने की कोशिश करेंगे। वे इस भ्रम में हैं कि अंग्रेज तो गए, अब राज हमारे ही हाथ में है। शान से वे जिस कुर्सी पर बैठना चाहते हैं उस कुर्सी के पाये कभी निम्न वर्गीय समाज काट ही देगा। उच्चवर्गीय नहीं चाहते कि निम्न वर्गीय प्रशासन सत्ता में आए लेकिन वह आएगा जरूर। उसके लिए रशिया और फ्रांस देशों की तरह क्रांति भी होगी।

उक्त कार्यक्रम से पूर्व कोल्हापूर जिला शे. का. फेडरेशन की ओर से नगरपालिका के सभागृह बाबासाहेब को गण–मान्य इस अवसर पर शहर के कई जलपान के लिए आमंत्रित किया गया। लोग उपस्थित थे।

जनता : 3 जनवरी, 1953

303

भारत के हर गांव में दक्षिण अफ्रिका है

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने दिनांक 25 दिसंबर 1952 को बेलगांव जिले के निपाणी गांव में दक्षिण महाराष्ट्र के दौरे के साथ सभा को संबोधित किया था। उन्होंने कहा –

बहनों, और भाइयों–

कई दिनों से दक्षिण महाराष्ट्र के दौरे की बात चल रही थी जो आज साकार हुई है। वैसे, मैं आपके गांव आया या नहीं आया इस बारे में आपको बुरा–भला नहीं लगना चाहिए। मैं जहां भी रहूं आपको अपने आसपास के बारे में, अपने सवालों के बारे में खुद ही सोचना होगा। क्योंकि, अपने सवाल खुद ही हम तत्परता से हल कर सकते हैं।

1885 में काँग्रेस की स्थापना हुई। लेकिन हम काँग्रेस के आंदोलन से चार हाथ दूर ही रहे। क्योंकि, यह आंदोलन हम पर सामाजिक गुलामी थोपने वाले ब्राह्मणवर्ग द्वारा छोड़ा गया था। काँग्रेस का संगठन ब्राह्मणों का ही संगठन है यह हम जान चुके थे। पेशवाई के ब्राह्मणों की नीति से हम अच्छी तरह से वाकिफ हैं। पगड़ी देख कर न्याय करने वाले इन समाज सुधारकों में यदि हम शामिल होते तो हमें वे बरामदा ही देते। हम दीवनखाने में कभी प्रवेश नहीं कर पाते। अंग्रेजों के राज में खोए अपने स्वत्व को साबुत रखने के लिए काँग्रेस को स्वराज चाहिए था। लेकिन तब मराठा भी काँग्रेस के आंदोलन में शामिल नहीं थे। काँग्रेस ब्राह्मणों की थी तब मराठा नेता घबराए हुए थे। उन्हें अपने भविष्य के बारे में डर था। एक परिषद बुला कर उन्होंने मांग की कि हम मराठा वर्ग को आरक्षित जगहें दें। उनकी मांग के अनुसार उन्हें सात आरक्षित जगहें मिलीं। सभी ब्राह्मणेतरों का उन्होंने एक संगठन बनाया। आगे चल कर ये सभी ब्राह्मणेतर काँग्रेस में गए। क्योंकि, गांधीजी ने इस व्यवस्था को तोड़ दिया और मराठा नेताओं को लालच दिए। प्रलोभन से वे काँग्रेस में शामिल हो गए।

इसी प्रकार हमारे चमार बंधु अपने फायदे के लिए काँग्रेस में गए। स्वराज्य में हमें कुल 27 आरक्षित सीटें मुंबई राज्य में मिली हैं। उसमें 25 काँग्रेसी चमार जीतकर आये। उन्होंने आज तक लोकसभा में या एसेंब्ली में अस्पृश्यों के बारे में एक सवाल तक नहीं पूछा है।

एक मादा सिंह के दो पिल्ले हुए। उन्हें छोड़ कर वह जंगल घूमने गई। उसे पास में

---

3 जनवरी, 1953

ही दो लोमड़ी के दो बच्चे दिखाई दिए। वह उन्हें उठा कर ले आई और अपने शावकों के साथ रखा। अपने शावकों के साथ वह उन्हें भी दूध पिलाया करती थी। सभी शावक बड़े होकर एक बार एक जगह वड़े थे अचानक वहां एक हाथी सिर हिलाते हुए आया। उसे देखते ही लोमड़ी के बच्चे भाग खड़े हुए तब मादा सिंह के बच्चों को शक हुआ। उन्होंने अपनी मां से इस बारे में पूछा। उनके मन में दोबारा शक पैदा न हो इसके लिए वह उन्हें ले जाकर जंगल में छोड़ आई।

कहानी बताने का मतलब यही है कि हम पिछले चुनावों में हारे नहीं हैं। हमारे लोगों ने खुद पैदल आकर मतदान किया। जिन लोगों को लगता है कि हमारे लोगों ने हमें वोट नहीं दिए वे अगर इस बात को साबित कर दें तो मैं राजनीति छोड़ दूंगा।

अब हम अकेले हैं। हम अल्पसंख्यक हैं। हम अपनी ताकत के अनुसार लड़ते आये हैं। दूसरों से हाथ मिला सकें तो हम राज्य पाएंगे। लेकिन निराश होने की जरूरत नहीं है। आज कॉंग्रेस की सरकार एक ही थाली में दोनों मुंह घुसाये हुए हैं। इस प्रकार ब्राह्मण और मराठों के सहारे चल रही है। हमें देखना यही है कि चना कौन खाता है। मराठों का घोड़ा नया है। दूसरी बार मराठा सारा चना खा जाएंगे। आगे चल कर ब्राह्मणों के लिए कुछ नहीं बचेगा और वे दुबारा हमारी तरफ झुकेंगे। मराठों को 'नली' मिली अब हमारा 'घुडसा' बाकी है। यह कोई अपनत्व का भाव नहीं है। इसके कारण पेशवाई आएगी।

हमारी सरकार घटना से मिले अधिकार लेने वाली है। जवाहरलाल नेहरू ने नागपूर की 'हरिजन' परिषद में भाषण किया। उसमें अब अस्पृश्यों को रियायतों की कोई जरूरत नहीं, उनमें सुधार हो चुका है। मुझे लगता है इस नेहरू को ठाणे शहर के पागलों के अस्पताल में रखना होगा। जिसे अपने देश के लोगों के हालात के बारे में पता नहीं है उसे प्रधानमंत्री पद पर बैठाया जाए यह देश है। इस प्रकार हमें दी गई सुविधाएं वापिस ली जा रही हैं।

हमारे प्रधानमंत्री को दक्षिण अफ्रिका की समस्या आंखों के सामने दिखाई देती है। भारत में हर गांव में दक्षिण अफ्रिका है। दक्षिण अफ्रिका का सवाल वर्णभेद का है। उनके लिए वहां के अंग्रेज आगे बढ़ कर काम कर रहे हैं। लेकिन ये हमारे सवाल को टालने के लिए तैयार हो गए हैं। इसलिए ऐसे प्रधानमंत्री को पागल कहें या सयाना यह सवाल है। पेशवा के सरदार बापू गोखले ने मुसलमानों पर आक्रमण किया। उसमें सिदनाक महार भी था। उसका तंबू पेशवाओं के पास हुआ करता था। उसे तंबू गाडने में पेशवा लोगों ने अड़ंगा खड़ा किया। खबर जब पेशवा तक पहुंची तब दरबार लगा हुआ था। सिदनाक सरदार ने अपनी तलवार नीचे रखी और वह निकलने लगा। तब हंबीरराव मोहिते तपाक से खड़ा हो गया और उसने कहा, यह कोई शादी का भोज नहीं है, यह वीरों का भोज है। यहां कोई भेदभाव नहीं। इसलिए हमें राजनीति में श्रेष्ठ हिस्सा चाहिए।

मैं अगर काँग्रेस में होता तो नेहरू प्रधानमंत्री बनता क्या? कभी नहीं।

हमारी फेडरेशन में कई बजरबट्टू इकठ्ठा हुए हैं। उनसे मेरा कहना है कि जो फेडरेशन छोड़ना चाहते हैं वे अभी छोड़ कर चले जाएं। उनके लिए फेडरेशन में जगह नहीं है। दो पत्थरों पर वे मैं पैर न जमाएं। फेडरेशन का पेड़ जल्दी फल नहीं देगा। उसमें फल देर से आएंगे लेकिन वह चिरकाल तक टिकी रहेगी। जो पेड़ जल्दी आता है और जिसमें जल्दी फल लगते हैं वह पेड़ जल्दी मर भी जाता है। इस प्रकार का पेड़ हमारे काम का नहीं। इसलिए जिन्हें जल्दी फल चाहिए वे उस तरफ जाएं।

हमारे लोगों ने अब तक अपार कष्ट सहे। उनके लिए मैं कुछ करना चाहता हूं। उन्हें मैं ऐसे ही छोड़ देने वाला नहीं हूं। हमारे कार्यकर्ताओं को कुर्सी की राजनीति नहीं खेलनी राजनीति वह एक ऐसी मास्टर की है, जिससे आप हर समस्या का ताला खोलकर उसका हल निकाल सकते हैं। यह ऐशोआराम और काला पैसा कमाने का साधन नहीं है। राजनीति करने वाले व्यक्ति में ईमानदारी और नीतिमत्ता का सदगुण होना बहुत ही जरूरी है। आगे चल कर लोहे के चने चबाने पड़गे। जिन्हें वे नहीं पचने वाले वे अभी से छोड़ कर चले जाएं। फेडरेशन में कम लोग हों तो भी मुझे चलेगा। आंदोलन छेड़ा तब मैं, कुर्सी और टेबल इतना ही था। उससे मैं हताश नहीं हुआ था। इस चुनाव में भले हम हारें हमें निराश नहीं होना चाहिए, अपना आंदोलन जारी रखना होगा। समय आने पर मैं आपको आवाज दूंगा और आप मेरे साथ हामी भरना।

304

दलित अपने पर होनेवाले अन्याय-अत्याचारों का जी-जान से विरोध करेंगे

नई दिल्ली में दिनांक 29 जनवरी, 1953 के दिन गुरु रविदास की 555वीं जयंति का कार्यक्रम आयोजित किया गया था। इस कार्यक्रम में बड़ा जनसमुदाय उपस्थित था।

इस अवसर पर डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने कहा-

तेरहवीं सदी में गुरु रविदास हुए। उन्होंने दलित जनता के उद्धार के लिए बहुत प्रयास किए। दलितों पर होने वाले अत्याचार अन्याय अगर नहीं रुके तो हो सकता है कभी दलित जनता देश के हित-अहित के बारे में सोचे बगैर अपने ऊपर होने वाले अन्याय के प्रतिरोध में कदम उठाएगी। अपने न्याय के लिए हमें प्रवर संघर्ष करना होगा। दलित जनता के हकों पर दिनोंदिन अतिक्रमण हो रहा है और उन पर होने वाले अत्याचार बढ़ रहे हैं। यह हालात अगर तुरंत नहीं बदलते हैं तो हमें अपने उद्धार के लिए तुरंत दूसरा रास्ता अपनाना पड़ेगा। अपनी हितरक्षा के लिए हम अगर निडर और समर्थ नहीं बन रहे हैं ऐसा अगर आपको लगता है तो आप गलत सोच रहे हैं।

जनता : 31 जनवरी, 1953

305

बुद्ध दर्शन अपनाकर दुनिया युद्ध से दूर और शांति के करीब होगी

नई दिल्ली में रविवार दिनांक 15 फरवरी, 1953 के दिन इंडो-जापानी सांस्कृतिक संगठन के सचिव आयु. मूर्ती और उनकी पत्नी का आयु. राजभोज ने समारोह आयोजित कर डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का सम्मान किया। इस समारोह में डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर, आयुष्मति माईसाहब अम्बेडकर, रोहिणीकुमार चौधरी, ज. भोसले, विधायक कृष्णा और अन्य पंद्रह-बीस विधायक उपस्थित थे। इस अवसर पर आयुष्मान बापूसाहब राजभोज ने अपनी जापान यात्रा के कुछ संस्मरण बताए। वहां बौद्ध धर्म के विकास का जो दर्शन हुए थे उसका वर्णन किया। आयुष्मान मूर्ती और उनके संगठन को बहुत मदद मिलने की बात कही और उनके प्रति कृतज्ञता प्रकट की।

इस अवसर पर पूजनीय डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने एक छोटा-सा लेकिन विचारपूर्ण भाषण दिया। उन्होंने कहा-

दुनिया के आगे, खासकर एशिया उपमहाद्वीप के आगे आज दो ही मार्ग हैं। एक बुद्ध का मार्ग और दूसरा मार्क्स का मार्ग। समय रहते दुनिया अगर बुद्ध के बताए मार्ग का अनुसरण नहीं करती है तो कम्युनिस्ट दर्शन की विजय होगी। आज दुनिया के लिए बुद्धदर्शन का ही एकमात्र आधार बचा है। उसका जितना प्रसार होगा उतनी दुनिया युद्ध से दूर और शांति के करीब पहुंचेगी। केवल बुद्ध के विचार ही दुनिया को तबाह होने से बचा सकते हैं।

पूजनीय डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के भाषण का उपस्थित लोगों पर बहुत असर हुआ। बौद्ध दर्शन के बारे में एक नए नजरिए को लेकर ही कुछ लोग वहां से निकले।

जनता : 14 मार्च, 1953

306

संगठन की शक्ति ईमानदारी, निष्ठा तथा अनुशासन में अंतरनिहीत है

शेड्यूल्ड कास्टस् फेडरेशन कार्यकारिणी की बैठक 1953 के मार्च में बुधवार दिनांक 25 और गुरुवार, दिनांक 26 को दिल्ली में अलीपुर रोड़ के डॉ. बाबासाहेब के घर पर तय की गई थी। फेडरेशन के अध्यक्ष आयु. एन. शिवराज की सेहत ठीक न होने के कारण वह दिल्ली नहीं आ सके थे। इसीलिए डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर की अध्यक्षता में उस बैठक का कामकाज हुआ।

इस बैठक में सांसद बापूसाहब राजभोज, उपसचिव आयु. दादासाहब गायकवाड़ (मुंबई), आयु. तिलकचंद कूरिल (उत्तर प्रदेश), विधायक ए. रत्नम (मद्रास), विधायक पी. एम. स्वामीदोराई (मैसूर), आयु. दशरथ पाटील, आयु. हरिदास आवले, और आयु. रेवाराम कवाड़े (मध्य प्रदेश), आयु. गंगाराम (मध्य भारत), सरदार हरवंत सिंह (पंजाब), विधायक मियांसिंह गिल (पेप्सू), मिल्कीराम (जम्मू और कश्मीर), आयु. बालमुकुंद (पंजाब) और स्वामी दर्शनानंदजी (दिल्ली) आदि सदस्य और आमंत्रित उपस्थित थे।

डॉ. बाबासाहेब ने मार्गदर्शन करते हुए कहा–

''बहुजन समाज की उन्नति केवल बहुजन समाज के संगठन ताकत पर पर निर्भर करती है जितना संगठन तगड़ा और मजबूत होगा उनको जल्दी न्याय मिलेगा। सरकार की ओर से बहुजन समाज को जो रियायतें मिली हैं वे हमेशा के लिए नहीं हैं। कभी न कभी उनसे छिन जाएंगी। इसीलिए, इन रियायतों पर या कि सरकार की कृपा की मानसिकता पर निर्भर रह कर दलित समाज की उन्नति नहीं होगी। उसके लिए स्थिर, मजबूत और देशव्यापी संगठन की जरुरत है। इसीलिए, इसी कार्य की ओर अब शेड्यूल्ड कास्ट्स फेडरेशन के सभी कार्यकर्ताओं को अपना ध्यान केंद्रित करना होगा। समाज के हर घटक के साथ निकट संबंध स्थापित कर उन्हें फेडरेशन के ध्वज के साथ लाकर खड़ा करना है इस बात का निश्चय करके ही अपने काम की शुरुआत कीजिए। इसके अलावा दलित समाज के सामने अब कोई दूसरा रास्ता नहीं है।''

कार्यकर्ताओं में मुख्यरूप से अनुशासन और ईमानदारी इन दो गुणों का होना जरुरी है। फेडरेशन की नीतियों के खिलाफ खुले आम अथवा गुप्त तरीके से काम करने वालों

जनता, 14 अप्रैल, 1953

के लिए संगठन में कोई स्थान नहीं है। साथ ही, एक और बात को ध्यान में रखिए कि किसी भी संगठन की ताकत उसके सदस्यों की संख्या पर निर्भर नहीं करती, वरन् सदस्यों की ईमानदारी, संगठन के साथ उनकी निष्ठा और अनुशासन के पालन पर वह निर्भर करती है। जिन्हें फेडरेशन की नीतियां पसंद नहीं हैं वे बेशक फेडरेशन छोड़ कर चले जाएं, लेकिन जो फेडरेशन के साथ रहना चाहते हैं वे पार्टी के अनुशासन को कभी भंग न करें और अन्य राजनीतिक पार्टियों के साथ या गुटों के साथ फेडरेशन की नीतियों के खिलाफ जाकर एकजुट और करार के बारे में बात न करें। साथ ही वे अपने हर व्यवहार में फेडरेशन के साथ ईमानदारी बरतें।

307

मैंने तय किया है कि अपने जीवन के आखिरी दिन बौद्ध धर्म के प्रचार-प्रसार में बिताऊंगा

दिनांक 27 मई, 1953 को बुद्ध जयंति थी। उसी बहाने सुबह 8 बजे वरली के अम्बेडकर मैदान में डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर इस बात का मार्गदर्शन करेंगे कि सामुदायिक प्रार्थना कैसे करनी चाहिए। शाम 5 बजे परेल के नरे पार्क (जी. आई. पी. रेलवे वर्कशॉप के सामने का मैदान) में उनका सार्वजनिक व्याख्यान आयोजित किया गया है। इस कार्यक्रम की घोषणा बौद्ध धर्म प्रचार समिति के सचिव आयु. आर. डी. भंडारे ने दिनांक 23 मई, 1953 को की थी।

उसके अनुसार मुंबई के नरे पार्क में 27 मई, 1953 की शाम को इस कार्यक्रम के लिए प्रचंड जनसमुदाय हाजिर हुआ था। कार्यक्रम की शुरूआत में आर. डी. भंडारे ने भगवान बुद्ध के फोटो को फूलमाला पहनाई। उसके बाद डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर अपने भाषण में बोले-

बहनों और भाइयों,

आज बुद्ध जयंति के बहाने हम सब एकत्रित हुए हैं। अन्य कई जगहों पर जिस प्रकार मनाई जाती है उसी तरह आज इस जगह भी बुद्ध जयंति मनाई जा रही है लेकिन इस कार्यक्रम का अलग महत्व है। 1942 साल से ही मैं सरकार से मांग कर रहा था कि इस दिन को छुट्टी घोषित की जाए। उस समय के गृहमंत्री आयु. मैक्सवैल की भी मंशा थी। लेकिन मेरी इच्छा पूरी नहीं हो सकी। युद्धकाल के कारण आयु. मैक्सवेल की इच्छा भी पूरी नहीं हो सकी। उन्हें चिंता थी कि बुद्ध के जन्मदिन की छुट्टी की अगर घोषणा की जाए तो युद्ध के लिए मुसलमानों से जो मदद मिल रही है वह नहीं मिलेगी। उसके बाद फिर से मुझे काँग्रेस के मंत्रिमंडल में लिया गया। मंत्रिमंडल में शामिल होने के बाद मेरी मांग कम से कम नेहरू पूरी करें इसलिए मैं उनके पीछे पड़ा। मेरी इस मांग के लिए महाबोधि सोसाइटी के अध्यक्ष शामाप्रसाद मुखर्जी ने भी सहायता की। तैंतीस करोड़ हिंदू भगवानों के जन्मदिनों की छुट्टियां, मुस्लिम, ईसाई, पारसी, जैन आदि धर्मों के भगवानों के जन्म दिनों की छुट्टियां अगर मिलती हैं तो फिर बुद्ध जयंति के दिन क्यों न छुट्टी हो? मैंने नेहरू जी से मांग की कि या तो इन सभी छुट्टियों में से

जनता, 30मई, 1953

कम कर एकाद छुट्टी हमें भी दीजिए या फिर एकाध छुट्टी और बढ़ाइए। जवाहरलाल नेहरू के मन में बुद्ध के बारे में बहुत आदर है। संयोगवश से नेहरू सरकार ने बुद्ध जयंति की छुट्टी की घोषणा इसी वर्ष की है। लेकिन मुंबई सरकार ने नहीं दी। अपनी मुंबई सरकार बहुत सुसंस्कृत है। मुंबई सरकार यानी कल्चर ही कल्चर है। चाहे तो आप उसे 'एग्रीकल्चर' कहिए। ऐसी सरकार द्वारा छुट्टी न दिए जाने के कारण पांच बजे शुरू होने वाली यह सभा साढ़े सात बजे शुरू हो रही है।

बुद्ध का नाम लेते ही कुछ हिंदू लोगों को डर लगता था, कोई अपने ऊपर बम फेंक रहा है इस प्रकार का कोई डर उन्हें लगता था। उनमें से कई लोगों को ज्ञानप्राप्ति हुई है और आज वे बुद्ध का सम्मान कर रहे हैं। मैं कोई भविष्यवक्ता नहीं हूं, आगे क्या होगा यह मैं नहीं बता सकता, लेकिन एक बात निश्चित तौर पर कह सकता हूं कि बुद्ध का धर्म इस पृथ्वी पर फिर से अवतरित होगा। आज मैं नहीं बता सकता कि वह किस मार्ग से आएगा।

मैं बौद्ध धर्म का एक उपासक हूं। मैंने केवल बोध नहीं लिया है और न ही मैं केवल बोलता रहता हूं। मैं प्रत्यक्ष कृति करके दिखाऊंगा। मेरी जिंदगी के आखिरी दिनों में अब मैंने तय किया है कि मैं बुद्ध का प्रचार करूंगा। बुद्ध धर्म प्रचार की खेती मैं करूंगा और देखूंगा कि उसमें कौन-सी फसल उगती है। कई लोग मुझसे पूछते हैं कि बौद्ध धर्म के बारे में आपको आस्था क्यों है? डॉ. राधाकृष्णन जैसे बुद्धजीवी कहते हैं कि बौद्ध धर्म में ऐसी क्या विशेष बात है? उसमें और हिंदू धर्म में फर्क क्या है? हिंदू दार्शनिक कहते हैं कि बुद्ध ने उपनिषदों से ही सब कुछ लिया है। मुझे ऐसे लोगों के बारे में बहुत अचरज लगता है। जिन्होंने ब्राह्मणों के 138 उपनिषदों का अध्ययन किया होगा, उन्हें पूरा पढ़ा होगा उन्हें लगेगा कि उसमें ब्रह्म और आत्मा के अलावा और है ही क्या?

उपनिषदों के इस कारखाने की ब्रह्म और आत्मा इन दो बातों के बारे में बोलना हो तो बुद्ध ने इनमें से एक भी बात नहीं मानी। बुद्ध ने साफ तौर पर कहा कि मुझे ईश्वर नहीं चाहिए, परमेश्वर नहीं चाहिए। इस धरती पर जन्म लेने वाला हर आदमी सुख से और शांति से जिएं, बस मैं यही चाहता हूं। बुद्ध ने केवल शांति के बारे में ही बताया हो ऐसी बात नहीं है, बुद्ध सच्चा विचारक थे। उनके जैसा विचारक अब तक दुनिया में कोई हुआ ही नहीं।

बुद्ध को वेद बिल्कुल पसंद नहीं थे। उन्होंने यह साफ तौर पर कहा था। वर्णव्यवस्था भी बुद्ध को मान्य नहीं थी। बौद्ध साहित्य में बुद्ध ने चातुर्वर्ण्य पर हर बार प्रहार किए हैं और इसीलिए उसे कट्टर हिंदू धर्म से कठोर विरोध का सामना करना पड़ा। इस देश में तीन महत्वपूर्ण पंथ हैं। हिंदू, जैन और बौद्ध। जैनों के बारे में मैं कुछ भी कहना नहीं

चाहता। बुद्ध ने जातिभेद पर कठोर प्रहार किए। मैं ब्राह्मणों से द्वेष नहीं करता लेकिन – 'ब्राह्मण झाला भ्रष्ट, तरी तो तिन्ही लोकी श्रेष्ठ' यानी भ्रष्ट ब्राह्मण भी तीनों लोकों में श्रेष्ठ होता है यह मैं नहीं मानता, ब्राह्मण कहते है कि हम अगर भ्रष्ट भी हुए तो भी तीनों लोक में सबसे श्रेष्ठ ही हैं। ऐसे उसके विचार थे।

जातिवाद की जड़ें हमेशा के लिए उखाड़ फेंकने के लिए हमें हिंदू धर्म का त्याग करना जरुरी है। जो लोग आराम से जी रहे हैं वे शायद नहीं जानते कि उनके नीचे क्या सड़ रहा है। जातिवाद की समाज–रचना को अगर उखाड़ फेंकना हो तो हमें बौद्ध धर्म की सीख पर ही अमल करना होगा। यह बात मैं केवल ऊपरी तौर पर नहीं कह रहा बल्कि मन की गहराई से कह रहा हूं। पांडव जिस प्रकार वनवास के लिए गए थे तब उन्होंने अपने सारे अस्त्र एक शमी के पेड़ पर रवे और चुपचाप वनवास पर निकल गए थे। बाद में उन्ही शस्त्रों के सहारे उन्होंने पाराक्रम किए। उसी प्रकार हम भी अपने आयुध बाहर निकालेंगे। मैं अपना प्रचार केवल आप तक सीमित नहीं रखूंगा। पूरे हिंदू धर्म को इस नए क्षेत्र में लाने की कोशिश करूंगा। कहां तक सफलता मिलती है यह देखना है। मानवता की रक्षा के लिए भारत ही क्या पूरी दुनिया को आखिर इसी धर्म की ओर देवना पड़ेगा। इसीलिए बौद्ध धर्म का बाइबिल मैंने लिखी है जो जल्द ही प्रकाशित होगा।

उसे पढ़ने के बाद बौद्ध धर्म को स्वीकारना है अथवा नहीं इस बात का फैसला करना आपके हाथ में होगा। मेरा पूरा–पूरा विश्वास है कि केवल बुद्ध का धम्म ही विश्व को विनाश से बचा सकता है और समुच्चे जीवित प्राणियों का कल्याण कर सकता है। एक बार आपने जो मार्ग अपनाया उसे आपको याद रखना होगा। बुद्ध का एक विहार मैं मुंबई में बनाने वाला हूं। बुद्ध धर्म को पुनर्जीवित करने के लिए आइए, हम सब मिल कर इस मंगल अवसर पर प्रतिज्ञा करते हैं।

308

छवि बिगाड़ने वाली पोषाकें ना पहनें

चेंबूर, मुंबई के अस्पृश्य संगठन मंडल की ओर से डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को हीरक महोत्सव के उपलक्ष्य में इमारत फंड में 1001 रु. दिए गए। इस अवसर पर डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर शुक्रवार दिनांक 29 मई, 1953 के दिन चेंबूर विभाग गए। हैंडबिल नहीं छपे होने के बावजूद इस कार्यक्रम के लिए प्रचंड जनसमुदाय उपस्थित था।

इस अवसर पर डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने अस्पृश्यों को किस तरह के कपड़े पहनने चाहिए और किस प्रकार के गहने पहनने चाहिए इस पर विचार प्रकट किए–

बहनों और भाइयों,

एक हजार एक रुपये के साथ आज तक आपने इमारत फंड में चार हजार से अधिक रकम दी है। मेरे मित्र शे. का. इंप्रुवमेंट ट्रस्ट के सचिव आयु. उपशाम ने मुझे यह जानकारी दी है। आपकी बस्ती के हिसाब से यह बहुत बड़ी रकम है। आपकी तरफ से इतनी रकम दिए जाने के बारे में मैं अपना संतोष व्यक्त करता हूं। जिस प्रकार आपने कर्तव्य पूरा किया है उसी प्रकार अगर अन्य लोग भी कर्तव्य निभाएंगे तो मुंबई में ही एक लाख रुपयों से अधिक राशि का फंड इकट्ठा होगा जिसके आधार पर मुझे उम्मीद है कि हम बहुत बड़ी इमारत खड़ी कर सकेंगे।

आजकल हमारे समाज के युवाओं और युवतियों की पोषाक मुझे पसंद हैं। हमेशा अपने पास कम से कम दो पोषाकें होना जरूरी है। व्यवसाय के वक्त पहनने वाली एक पोषाक और व्यवसाय के बाद पहनने वाली दूसरी पोषाक। हमारे कई लोग विभिन्न दफ्तरों और कंपनियों में काम करते हैं। वहां उन्हें खाकी वर्दी मिलती है। इसे केवल काम के वक्त ही पहनना चाहिए। घर लौटने के बाद उन्हें अपने योग्य कपड़े पहनने चाहिए। नौकरी–व्यवसाय के वक्त पहने जाने वाले कपड़े सभा, समारोह अथवा शादी–ब्याह जैसे निजी कार्यक्रमों में पहनना अच्छा नहीं है।

इधर हमारे समाज के लोगों की पोषाक में बहुत बदलाव आए हैं इस बात का मुझे संतोष है। हालांकि बूढ़ी औरतों के पहनावे में बदलाव होना अभी बाकी है। जंपर, पोलका जैसे नई तरह के कपड़े पहनना अगर उन्हें पसंद नहीं है तो ना पहनें, लेकिन पुराना चोली–लुगड़े (साडी–ब्लाउज) जैसी पोषाक भी पहननी हो तो उसे ढंग से पहनें।

जनता, 14 अप्रैल, 1953

जरूरी नहीं कि पोषाक महंगी हो। सादी लेकिन व्यवस्थित पोषाक होना जरूरी है। पेशवा युग में हम लोगों पर कपड़े और गहने पहनने पर बहुत सारे प्रतिबंध लगाए गए थे। अस्पृश्य लोगों को हमेशा फटे–पुराने और मैले कपड़े ही पहनने चाहिए और चांदी के ही गहने पहनने चाहिए, सोने के गहने वे ना पहनें ऐसी हम पर पाबंदियां थी। लेकिन अब ये पाबंदियां नहीं हैं। इसके बावजूद हमारी महिलाएं पुराने जमाने के, भारी भरकम वेला, पायल, फुल्या, मछली, जोड़वी जैसे गहने ही पहनती हैं। उन्हें ऐसे गहने पहनना छोड़ देना चाहिए। नाक में छेद कर भारी भरकम नथ उसमें पहनना भी अब छोड़ देना चाहिए। अपनी पोषक (कपड़ों) से हम किसी खास जाति के हैं इसकी पहचान नहीं होनी चाहिए। कई बार इसके कारण मुश्किलें पैदा होती हैं।

कॉलेज की पढ़ाई के दौरान एक बार शादी में शरीक होने के लिए हमें गांव जाना पड़ा। हमारे साथ हमारे रिश्तेदारों के अलावा कुछ पुराने तरीके से जीने वाली महिलाएं भी थीं। मैं, मेरे बंधु और हमारे परिवार के लोगों की पोषाकें व्यवस्थित थीं। बंदरगाह पर उतरते ही वहां के कुलियों ने हमारा सामान उठाया और वे चल दिए। आधा रास्ता पार करने के बाद उनके ध्यान में एक बात आई कि हमारे साथ चलीं उन पुराने ढंग के रहन–सहन वाली औरतों की और हमारी जाति एक ही है। यह बात समझ में आते ही उन्होंने हमारा सामान नीचे रखा और मजदूरी लिए बगैर ही वे वहां से नौ दो ग्यारह हो गए। आखिर दो–चार चक्कर लगा कर हमें अपना सामान ले जाना पड़ा।

हरेक को अपने घर में दस आने कीमत वाली बुद्ध की तस्वीर लगानी चाहिए।

309

चरित्र के बिना शिक्षा महत्वहीन

रावली कैंप महिला मंडल की विनति का सम्मान करते हुए पहले से तय कार्यक्रम के अनुसार डा. बाबासाहेब अम्बेडकर आयुष्मति माईसाहब अम्बेडकर के साथ 3 जून, 1953 को शाम 7 बजे रावली कैंप पहुंचे।

इस अवसर पर बहुत बडी संख्या में जनसमुदाय इकठ्ठा हुआ था। पहले कई बहनों और संस्थाओं द्वारा डॉ. बाबासाहेब और आयुष्मति माईसाहब अम्बेडकर को फूलमालाएं पहनाकर सम्मानित किया।

इस अवसर पर डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने कहा–

बहनों और भाइयों,

यहां की महिलाओं ने इमारत फंड में 1001 रुपया देना कबूल कर आज जो राशि दी है उसके लिए मैं तहे दिल से आभार व्यक्त करता हूं। मैं पहली बार इस बस्ती में आया हूं। इन महिलाओं ने जिस प्रकार मदद दी उसी तरह एक सोसाइटी भी इमारत फंड में मदद देने वाली है। इस सोसाइटी की कुछ राशि महापालिका में बाकी है। वही राशि वे इमारत फंड में देने वाले हैं। वह रकम आज तक इस बस्ती द्वारा दी गई सभी राशियों से ज्यादा है. उसे लेने के लिए एक बार फिर मुझे इस बस्ती में आना है और मैं जरूर आऊंगा।

अब मैं आपको एक महत्वपूर्ण बात बताने जा रहा हूं। परसों, यानी 27 मई, 1953 के दिन हमने बड़ी धूमधाम से बुद्ध जयंति मनाई। मुझे लगता है कि हमने यह बहुत अच्छा काम किया है। लेकिन कुछ अखबारों ने उसे अलग ही रूप दिया। जिस कार्यक्रम में 30000 लोग उपस्थित थे वहां आखों पर काली पट्टी बांधे हुए इन अखबारों ने केवल 3 हजार लोग ही उपस्थित होने की खबर छापी। कुछ अखबारों ने तो बुद्ध जयंति की खबर को अपने अखबार में जगह ही नहीं दी। वे हमेशा ऐसा ही करते हैं। डॉ. अम्बेडकर का कार्य कहते ही एक तो उसे प्रकाशित होने ही नहीं देना और अगर प्रकाशित किया भी तो वे उसे गौण या फिर उसे दुष्प्रचार के रूप में प्रकाशित करते हैं। बुद्ध जयंति के बारे में अखबारों में जो आलोचना प्रकाशित हुई है उसका मैं योग्य और विस्तार से जवाब देने वाला हूं। अखबार में छपी आलोचना आप अपने ऊपर असर होने

जनता, 13 जून, 1953

नहीं देना। मैं जो कुछ बता रहा हूं उसे पहले अच्छी तरह समझें उसके बाद ही उसमें विश्वास करना है या नहीं, इसका फैसला करें।

अखबारों में एक रोना हमेशा रोया जाता है – ''चाहे कुछ करो, अस्पृश्यता मिटने वाली नहीं है। राजनीति से कहिए या धर्म के कारण कहिए अस्पृश्यता नहीं जाने वाली।'' ऐसे लोगों को मुझसे अगर चर्चा करनी हो तो मैं उसके लिए तैयार हूं। लेकिन मुझे लगता है कि ये लोग पैदाइशी अंधे हैं। उन्होंने इतिहास नहीं पढ़ा है। आज तक दुनिया में जितने सारे परिवर्तन हुए उन्हें उनकी जानकारी नहीं है। इसीलिए वे इस प्रकार मूर्खतापूर्ण टीका-टिप्पणी करते हैं।

आज यहां बैठा विशाल महिला-पुरुषों का जनसमूह ही पिछली बार क्या हाल था और आज क्या हाल है यह समझा सकता जा है। लोग क्या कह रहे हैं उस पर आप ध्यान ना दें। वे जो भी कुछ लिखते हैं वह आपके बीच गलतफहमी फैलाने के लिए लिखते हैं। सभी अखबार मेरी आलोचना करते हैं। मुझे उसकी परवाह नहीं है। उनकी आलोचना से मेरा सम्मान कम नहीं होगा। हर साल मैं देख रहा हूं कि मेरा सम्मान बढ़ता ही जा रहा है।

नासिक सत्याग्रह की बात लीजिए। अब सच बातें आपसे कहने में हर्ज नहीं। आयु. भाऊराव गायकवाड़ आदि कुछ पांच-छह लोग ही मेरी मदद के लिए मेरे साथ थे। रात 12 बजे हमने सभा की। सत्याग्रह के लिए कितने लोग नाम देते हैं यह हमें देखना था। तब हमने क्या देखा, सुबह तक हमें सत्याग्रह के लिए एक भी आदमी नहीं मिला। लोगों के मन में डर था कि सत्याग्रह करेंगे तो क्या होगा? सुबह हमने तय किया कि हम एक जुलूस निकालेंगे। संयोगवश से कहिए या दुर्भाग्य से जुलूस में शामिल लोगों पर अन्य लोगों ने पत्थर फेंके। इस कारण पहले हमें दस-पंद्रह सत्याग्रही मिले। बाद में लोगों के ध्यान में आया कि सत्याग्रह करने में स्वाभिमान है। यह बात समझ में आते ही सत्याग्रही मिलने में कोई दिक्मत नहीं आई। बाद में हम एक-दो नहीं चार-पांच सालों तक सत्याग्रह चला सके। पुरानी बातों के बारे में सोचें तो कहना चाहूंगा कि अब काफी सुधार हुआ है।

शिक्षा की बात को ही लीजिए। मुझे स्कूल में लेना है या नहीं इस बारे में सोचने के लिए अध्यापकों की तीन दिनों तक सभाएं हुई थीं। तब सरकार से मुझे 3 रुपयों की स्कॉलरशिप मिलती थी। इस लड़के को अगर स्कूल में नहीं लिया तो सरकार के खफा होने का डर है सोच कर आखिर मुझे हाईस्कूल में प्रवेश देने की बात तय हुई थी। उस समय ठेठ गांव का बच्चा था। उसमें मैं ब्राह्मणों की तरह जूते पहनता था। पहले दिन मैं जब हाईस्कूल पहुंचा तब मेरे 40 साल के भाई की कमीज पहनकर गया था। पैरों तक की कमीज पहने हुए बच्चे का मेरा अखतार था। तब एल्फिन्स्टन में कई बच्चे

पढ़ा करते थे। समाज का महार बच्चा केवल मैं अकेला था। आज सिद्धार्थ कॉलेज में देखिए। दूसरों से हमारे बच्चों की पोषाकें अच्छी होती हैं। पहले साल सिद्धार्थ कॉलेज में केवल 15-20 ही अस्पृश्य बच्चे थे। आज देखिए, अस्पृश्यों के 300 बच्चे सिद्धार्थ कॉलेज में पढ़ रहे हैं।

दूसरी बात धर्म की है। इंसान को हमेशा स्वार्थसाधना ही नहीं करनी चाहिए, थोड़ा-बहुत परमार्थ भी उसे करना चाहिए। इसीलिए धर्म की जरूरत है। आप सबके लिए मैं यह कर रहा हूं। मुझे यह धर्म से मिली सीख है। पेट पाला तो सब कुछ हो गया ऐसा ना समझिए। पेट पालना कोई बड़ी बात नहीं, वेश्या भी अपना पेट पालती है। कबीर कह गए हैं, 'कबीर कहे कूच उद्दम कीजे। आप खाए औरन और को दीजे।' उनके कहे अनुसार कुछ काम कीजिए, खुद खाइए और औरों को भी खिलाइए। स्वार्थ और परमार्थ दोनों साध लीजिए। पहले घर संभालिए, फिर समाजकार्य में भी योगदान दीजिए। अपना घर उजाड़कर सामाजिक योगदान न दें।

एक लोहित नाम के ब्राह्मण ने बुद्ध से दो सवाल पूछे थे। पहला सवाल यह था कि विद्या ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य इन तीन वर्गों को ही पढ़ानी चाहिए। चौथे वर्ग को यानी शूद्रों को विद्या सिखानी नहीं चाहिए इस तत्व को तुम क्यों नहीं मानते हो? बुद्ध ने कहा - चार वर्ग बनाए गए हैं व्यवसाय की दृष्टि से। ज्ञान कोई रोजगार का सवाल नहीं है। जीवन के लिए ज्ञान अत्यंत आवश्यक है। ज्ञान न होने के कारण अपना बहुत नुकसान होता है। उदाहरण देता हूं, नासिक में एक किसान के पास जमीन के कागजात थे। सब कुछ व्यवस्थित था। असल में उसे केस जीतना चाहिए था। लेकिन वकील द्वारा धमकाए जाने के कारण निर्णय उसके खिलाफ हुआ। किसान के अज्ञान के कारण यह हुआ।

भारत में जातिवाद बना रहा इसके दो प्रमुख कारण हैं। पहला कारण- सबको शस्त्र रखने की इजाजत नहीं थी। दूसरी वजह थी। अज्ञान। मैं अपने पूर्वजों को जम कर गालियां देता हूं कि उन्होंने अपने ऊपर होने वाले अत्याचार का प्रतिरोध क्यों नहीं किया? लेकिन उसके लिए उपरोक्त स्थितियां ही कारण थीं।

'तव्याचा जाय बुरसा, मग तो सहजच होय आरसा' (तवे पर का मैल हट जाता है तो वह आईना बन जाता है।) इस न्याय के अनुसार अब हमें खुद अपनी कमियों को दूर करने की कोशिश करनी चाहिए। किसी और ने अगर सहायता नहीं भी की तो हमें अपने में खुद ही सुधार करना होगा। और अगर हम इस प्रकार सुधर जाएंगे तो औरों को हमें बुरा कहने का मौका ही नहीं मिलेगा। अपने ऊपर लगा कलंक हमें खुद हटाना होगा। मान लीजिए हमारे लोग पढ़-लिख गए। अफसर बने तो औरों को उनके मातहत काम करना ही पड़ेगा। अपनी और उनकी स्थिति एक-सी हो तब वे हमें नीचा मानेंगे ही नहीं।

हरएक की काया-वाचा-मने त्रिशुद्धि होनी होगी। इस प्रकार पवित्र हुए व्यक्ति को अपवित्र कौन कहेगा। उनसे ज्यादा अगर आपके कपड़े अच्छे होंगे तो वे आपको कम क्यों आंकेंगे? अपनी उन्नति की कोशिश अब हमें खुद करनी होगी।

हमने धर्म के लिए सत्याग्रह किया। धर्मांतरण का प्रस्ताव किया। सब कुछ किया। अब हमें अपना मन पवित्र करना होगा। सद्‌गुणों की ओर हमारा झुकाव होना चाहिए। हमें इस प्रकार धार्मिक बनना होगा। हम पढ़े-लिखे तो हमने सब कुछ पाया ऐसा नहीं है। शिक्षा का महत्व है इसमें कोई शक नहीं। शिक्षा के साथ मनुष्य का चरित्र भी होना चाहिए। चरित्र के बगैर शिक्षा की कीमत केवल शून्य है। ज्ञान तलवार की तरह है। मान लीजिए किसी के हाथ में तलवार है उसका अच्छा या बुरा इस्तेमाल करना है यह उस व्यक्ति के चरित्र पर निर्भर करेगा। उस तलवार के सहारे वह किसी की हत्या कर सकता है या किसीका बचाव भी कर सकता है। ज्ञान का भी यही हाल है। अच्छे चरित्र का कोई पढ़ा-लिखा आदमी अपने ज्ञान का उपयोग औरों की अच्छाई के लिए करेगा, लेकिन अगर उसका चरित्र अच्छा न हो तो वह अपने ज्ञान का उपयोग किसी का बुरा करने के लिए भी इस्तेमाल कर सकता है। चरित्र धर्म का बहुत महत्वपूर्ण अंग है।

पढ़े-लिखे लोगों का केवल अपना पेट भरने वाले होना काफी नहीं है। जो लोग अपने स्वार्थ से परे थोड़ा भी नहीं देव सकते वे परमार्थ नहीं कर सकते उनके पढ़े-लिखे होने का फायदा ही क्या है? शिक्षा का उपयोग ज्ञान के कारण आपको आछा बुरा दिखाई देने लगता है। इसलिए ज्ञानी होना चाहिए।

ज्योतिबा फुले को मैं अपना गुरु मानता हूं। माली समाज में उनका जन्म हुआ। कई मराठा भी उनके शिष्य थे। लेकिन आज बड़े अजीब हालात हैं। आज कोई भी (मराठा, कुर्मी, माली, तेली, नाई और अन्य जातियां) ज्योतिबा का नाम नहीं लेते हैं। आज मांग, चमार लोग केवल जूठन के अधिकारी हो गए हैं। उन्नति के असली मालिक केवल हम हैं। आज हमारे साथ अन्याय हो रहा है। हम आंदोलन करते हैं इसलिए अन्य लोग हमारी ओर गुस्से से देखते हैं।

लेकिन हमारा आंदोलन निष्काम बुद्धि से और फल की आस के बगैर चल रहा है। हमे आशा है कि एक दिन ऐसा आएगा कि इस वृक्ष के हम भी मालिक बनेंगे। आज जो लोग बिना कुछ किए ऐश करते हैं, बिना खुद कमाए खा रहे हैं, आगे चल कर उन्हें खुद के किए पर शर्म आएगी।

एक और बात कह कर मैं अपनी बात पूरी करता हूं कि हरेक अपने घर में बुद्ध का फोटो लगाएं।

310

हमारे कार्यकर्त्ताओं को चाहिए कि वे राजनीतिक, धार्मिक और आर्थिक समस्याओं का बारीकी से अध्ययन करें

जुलाई, 1953 में मराठवाड़ा शेड्यूल्ड कास्टस् फेडरेशन की ओर से मराठवाड़ा क्षेत्र के* कार्यकर्ताओं की हुई बैठक में डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने मार्गदर्शन किया।

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने अपने भाषण में कहा–

चुनाव ही राजनीति है ऐसा कार्यकर्ता मानने लगे हैं। यह भी माना जा रहा है कि चुनावों के बगैर राजनीति के कोई मायने नहीं हैं। इसीलिए चुनावों के समय सभी टिकट पाने के लिए कोशिशों में लगे रहते हैं और चुनाव खत्म होते ही सब इत्मीनान से बैठ जाते हैं। लेकिन राजनीति कुल समाज–जीवन का एक छोटा अंग है। राजनीति यानि सबकुछ नहीं होता। सच पूछो तो राजनीति बाकी बचा हुआ अनाज है। समाज की उन्नति केवल राजनीति से नहीं होती। समाज की उन्नति के कई कारण होते हैं। सामाजिक, आर्थिक मसले कम महत्वपूर्ण नहीं होते। समाज की सर्वांगीण प्रगति के लिए इन सभी बातों की ओर एकसमान ध्यान देना जरूरी है यह बात कार्यकर्ताओं को समझनी है।

कार्यकर्ता जब राजनीति को ही महत्वपूर्ण मानते हैं तब उन्हें लगता है कि चुनाव के समय टिकट पाने के लिए जद्दोजहद करना, टिकट न मिलने पर समाज में फूट डालना, चुनाव हारने पर निराश होकर आराम से सो जाना और जीत जाएं तो एसेंब्ली में जाकर मुंह सिल कर बैठे रहना – राजनीति में इतना ही कार्य होता है।

हैदराबाद क्षेत्र में आज लगभग दो सालों से एसेंब्ली का कामकाज चल रहा है। इस क्षेत्र से आरक्षित जगहों पर कुल 31 उम्मीदवार अस्पृश्य समाज से चुन कर आए हैं। लेकिन इन दो सालों में वहां जाकर उन्होंने क्या किया? एसेंब्ली में तीन तरह से काम चलता है। एसेंब्ली में प्रस्ताव रखना, बिल रखना और बजट का अध्ययन कर उस पर बोलना। क्या इनमें से एकाध बात तो इन उम्मीदवारों में से किसी ने की है? कम से कम मेरे देखने में तो कुछ नहीं आया है। एसेंब्ली के कामकाज की खबरें अखबार में नहीं आतीं शायद इसलिए मुझे उनके बारे में कुछ पता न हो। कहने का मतलब सिर्फ यही है कि एसेंब्ली में चुन कर जाने के बाद हमारे उम्मीदवारों को कम से कम ये बातें तो करनी ही चाहिए। कार्यकर्ताओं के सामने अगर राजनीति ही प्रमुख उद्देश्य रहा हो तो वहां भी उन्होंने कोई काम नहीं किया है। कम से कम मेरे देखने में तो यही आया है।

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के भाषण : संपादक मा. फ. गांजरे, खंड 7, पृष्ठ 99–103

*भाषण का स्थान दर्ज नहीं है।

ये लोगो निश्चय के साथ अगर यह तय करें कि वे एकता से कार्य करेंगे तो मुझे यकीन है कि काँग्रेस सरकार ही नहीं और अन्य पार्टियां भी हमारे लोगों से डरेंगी।

हमने जो आरक्षित जगहें पाई हैं वे अस्पृश्य समाज के हित के लिए हैं। जिन लोगों को हमारे हित की खातिर हमने संसद भेजा, जिन पर हमें भरोसा है, उन लोगों को क्या अस्पृश्य समाज के हित के लिए संघर्ष नहीं करना चाहिए? गांधी से जो मेरा विरोध था या काँग्रेस और देश के लोगों का जो विरोध मैंने सहा है उसकी वजह एक ही है। वजह यही है कि, अस्पृश्य लोगों के हित में वे लोग कुछ नहीं कर सकते। सरकार ने और इस देश के लोगों ने हमारा कहना सुना, हमारी मांगें अगर मंजूर कीं तो विरोध की या लड़ने की कोई वजह बाकी नहीं रहेगी, लेकिन ऐसा नहीं होता और हमें लड़ना पड़ता है।

अगर कोई राजनीति में आना चाहता है तो पहले उसे राजनीति के बारे में अच्छा अध्ययन करना होगा। पढ़ाई के बगैर दुनिया में कुछ भी कर पाना संभव नहीं है। हमारे समाज के हरेक कार्यकर्ता को राजनीतिक, धार्मिक और आर्थिक समस्याओं का बारीकी से अध्ययन करना चाहिए। जो नेता बनना चाहते हैं उन्हें नेता के कर्तव्य-कर्म, नेता की जिम्मेदारियों का ध्यान रखना चाहिए। क्योंकि, हमारे समाज के नेताओं पर बहुत बड़ी जिम्म्मेदारियां हैं। अन्य समाज के नेताओं-सी हमारे समाज के नेताओं की हालत नहीं है। अन्य समाज के नेता सभा में जाते हैं, लंबे-चौड़े भाषण देते हैं, तालियां बटोरते हैं और आखिरकार गले में माला पहनकर घर लौटते हैं। इतना ही काम अन्य समाज के नेताओं के आगे होता है। अपने समाज के नेताओं को इतना भर करके नहीं चलेगा। अच्छी तरह पढ़ना, सोचना, समाज की उन्नति के लिए खुद रात-दिन मेहनत करना यह हमारे नेताओं को करना पड़ेगा तभी वह लोगों का थोड़ा-बहुत भला कर पाएंगे। वही सच्चे नेता बन पाएंगे।

आपको लगता है नेता बनना बहुत आसान है। लेकिन मेरी मानो तो नेता बनना बहुत कठिन काम है। खुद मुझे नेता होना बहुत मुश्किल काम लगता है। मेरा नेता होना दूसरों की तरह नहीं है। जब मैंने आंदोलन छेड़ा तब किसी भी तरह का संगठन नहीं था। खुद मुझे ही सभी काम करने पड़ते थे। संगठन करना था तो मुझे ही करना पड़ता था। अखबार शुरू करना था तो वह भी मुझे ही करना पड़ा। इसीलिए, 'मूकनायक', 'बहिष्कृत भारत', 'जनता' आदि अखबार मुझे ही चलाने पड़े। प्रेस चलानी थी तब खुद मुझे ही प्रेस चलाने की सारी तैयारी करनी पड़ी। संक्षेप में, मुझे हर बात का शून्य से निर्माण करना पड़ा। जो हुआ वह सब परिपूर्ण है ऐसा मेरा कहना नहीं है। मेरा कहना तो यह है कि जो हुआ वह जो होना चाहिए उसका शतांश भी नहीं है। अभी बहुत कुछ करना बाकी है। आगे राह बड़ी लंबी है जो हमें चल कर तय करनी है। अब तक जो भी हुआ है वह मानो आंदोलन का पौधा लगाया गया है। उसे सींच कर वृक्ष बनाना है।

कहने का मतलब यही कि हमारे नेताओं पर बहुत बड़ी जिम्मेदारी है।

लोगों में जागरूकता पैदा करना, उनका संगठन खड़ा करना बेहद महत्वपूर्ण काम है। हर नेता को यह काम करना होगा। हमारे कार्यकर्ताओं में बहुत धैर्य का होना जरुरी है। जिसमें धैर्य नहीं वह नेता नहीं बन सकता। जो आदमी मरने के लिए तैयार होता है वह कभी नहीं मरता है और जो मृत्यु से डरता है वह पहले से मरा हुआ होता है। इस देश के हिंदू हमें बहुत तकलीफें देंगे। हमारी राह में कई रोड़े पैदा करेंगे। लेकिन जो भी हो, हमने जो राह अपनाई है, जिसे हम इंसानियत कहते हैं, उसे पाने की कोशिश हमें कभी नहीं छोड़नी है। इसीलिए हमारे हर कार्यकर्ता का धैर्यवान होना जरुरी है। हमें ध्यान में रखना होगा कि सम्मानजनक व्यवहार करना हमारा परमकर्तव्य है। हमारा आंदोलन उसी के लिए है। इसलिए कठिन परिश्रम के लिए आप सब खुद को तैयार करें।

दूसरी महत्वपूर्ण बात यह है कि हमारे लोगों में अंधविश्वास बहुत हैं। जो भी उठता है पंढरी-पैठण-आलंदी के लिए निकल लेता है। मैं आपसे यह पूछना चाहता हूं कि पंढरी-पैठण-आलंदी जाकर हमने क्या हासिल किया है? पंढरपूर जाकर किसी का क्या भला हुआ है? या फिर, आलंदी जाकर किसी का उद्धार हुआ है क्या? आप एकनाथ को बहुत बड़ा मानते हैं, बताइए उसने क्या किया? भागवत ग्रंथ लिखा लेकिन उसकी कथा मैं आज आपको बताता हूं। वह मरा तब उसका जनाजा एक रास्ते से जा रहा था। उसी राह से एक गृहस्थिन महार को साथ लेकर ससुराल जा रही थी। उसने एकनाथ की लाश देखी। अपने साथ चल रहे महार से उसने कहा - मुझे अपशगुन हुआ है। उसने जो कहा वह एकनाथ की लाश ने सुना और वह उठ कर बैठी। उसने उस महिला से कहा, 'मैं आज नहीं मरता, क्योंकि, मेरे कारण तुम्हें अपशगुन हो रहा है।' इतना कह कर वह अपने घर चला गया। आगे, एकनाथ और उसकी पत्नी ने नदी में कूद कर जान दे दी। आज तक इस बात की किसी ने खोज नहीं की कि उन्होंने अपनी जानें क्यों दीं? अब आप ही बताइए, क्या कभी किसी की लाश को जिंदा होते हुए आपने देखा है?

दूसरी बात ज्ञानेश्वर की। उसने क्या किया? उसने भगवतगीता पर ज्ञानेश्वरी नाम का एक ग्रंथ लिखा। उस ग्रंथ का सारांश क्या है? दुनिया ब्रह्ममय है। अगर पूरी दुनिया ब्रह्म है तो महार-मांगों में भी ब्रह्म होना चाहिए। इसलिए ज्ञानेश्वर महार-मांगों में क्यों नहीं रहा? ब्राह्मणों द्वारा फिर से स्वीकृत होने के लिए उसने क्यों कोशिश की? ब्राह्मणों द्वारा उन्हें जब जाति से बाहर कर दिया गया तब उन्हें ब्राह्मणों से कहना चाहिए था कि आप अगर मुझे अपनी जाति में नहीं लेना चाहते तो ठीक है, मैं महार-मांगों के बीच जाकर रहूंगा, क्योंकि यह दुनिया ब्रह्ममय है। क्यों नहीं ज्ञानेश्वर ने ऐसा कहा? आम लोगों को बरगलाने के लिए यह सब भुलावे हैं और आप सब लोग इस झूठ के शिकार हैं। उसके भुलावे में आ गए हैं आप। इसलिए अगर आप पंढरी-जेजुरी-आलंदी जाएंगे या

किसी अन्य देवता के भुलावे में आएंगे तो आपको जाति से बाहर करने की आज्ञा मुझे देनी पड़ेगी। उसके बगैर आपका पागलपन नहीं हटेगा। आपमें सुधार भी नहीं आएगा। आज का युग सोचने का युग है। कोई कैसा भी झूठ फैलाए, आपको पहचानना आना चाहिए कि यह झूठ है। क्योंकि, अब दुनिया में व्यवहार करते समय आपको विचारपूर्वक ही चलना होगा।

अपना संगठन हमें मजबूत बनाना होगा। सभी आपसी मतभेदों को भुलाना होगा। एक विचार के साथ चलना होगा। क्योंकि, बिना संगठन के दुनिया में हमें कोई नहीं पूछेगा। मैं जानता हूं कि चुनाव के समय हमें और किसी से हाथ मिलाना होगा। अगर हमारा संगठन ही नहीं होगा तो कोई हमारे पास नहीं आएगा। हमें कोई नहीं पूछेगा। राजनीति ही करनी हो तो वह अच्छे से करनी होगी। उसके लिए लोगों में जागरुकता पैदा कर मजबूत संगठन बनाना होगा। मुझे नेताओं का डर नहीं है। नेता अगर ठीक से पेश नहीं आए तो उन्हें निकाल देने में मैं नहीं डरूंगा, इसीलिए हर विभाग में सालाना एक बार तो परिषद का आयोजन किया जाना जरूरी है। उसी प्रकार, सभा, सम्मेलन, चर्चा सत्र, कैंप्स आदि का आयोजन करते रहना चाहिए। इसलिए उस बहाने हमारे कार्यकर्ता एक साथ होंगे। आंदोलन के बारे में अध्ययन करेंगे। जोशखरोश से काम होगा।

आखिर मैं इतना ही कहना चाहता हूं कि मैं व्यक्तिगत तौर पर किसी कार्यकर्ता से प्रेम नहीं करता। प्रेम केवल कार्य से ही होता है। जो काम करता है वही मुझे पसंद आता है।

311

शेर बनें ताकि आपका रास्ता काटने की किसी में हिम्मत न हो

दिनांक 9 अगस्त, 1953 के दिन औरंगाबाद के गड़डीगुडम छावनी क्षेत्र के पास शेड्यूल्ड कास्टस् फेडरेशन की समिति की ओर से आयु. दाभाडे, कांबले, मल्हारराव ने डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को अल्पाहार कराया। इस अवसर पर मुंबई राज्य शेड्यूल्ड कास्टस् फेडरेशन के प्रांताध्यक्ष कर्मवीर दादासाहब गायकवाड़, मध्यप्रांत शेड्यूल्ड कास्टस् फेडरेशन के उपसचिव आयु. बाबू हरिदास आवले, नासिक के रामपाला, विधायक नेरलीकर, उपसचिव मराठवाड़ा, पी. ई. एस. कॉलेज के रजिस्ट्रार आयु. वराले. आयु. बी. एस. मोरे, नगर के आयु. पी. जे. रोहम आदि कार्यकर्ता उपस्थित थे।

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को बताया गया कि गांव की अस्पृश्य जनता की ओर से सरकार द्वारा जमीनें वापिस ली जा रही हैं। इस अवसर पर डॉ. बाबासाहेब ने कहा–

आप कुछ करते नहीं इसीलिए सरकार ऐसा करती है। उन्होंने उपनिषद की एक कहानी उदाहरण के तौर पर बताई – भेड़ को कोई भी काटता है इसलिए भेड़ शिकायत करने पहुंची। तब भगवान ने उससे कहा कि तुम्हारा मांस थोडा नरम है। इसीलिए मैं तुम्हें खाना पसंद करता हूं। भगवान ने सवाल किया कि क्या कोई शेर को, सियार को खाता है? नहीं। इसलिए, तुम भी उसी की तरह बनो। कोई तुम्हें परेशान नहीं करेगा। मुसलमान को कोई परेशान करता है क्या? नहीं, क्योंकि उसके पास छुरा है यह लोग जानते हैं। खाट पर बैठे रह कर नहीं चलेगा। आप भी अर्जियों अथवा निवेदनों पर निर्भर मत रहिए। हिम्मतवान बनें। खाली पेट रहने के बजाय बंजर जमीन पाएं।

उपस्थित मेहमानों के प्रति आभार प्रकट करने के बाद यह कार्यक्रम संपन्न हुआ।

जनता : 15 अगस्त, 1953

312

अस्पृश्यता नष्ट करने के लिए तत्पर न होने वाले राजनीतिक दलों से सावधान रहिए

मेरठ में 5 अक्तूबर, 1953 को एक आम सभा में अस्पृश्यों को सम्बोतिधत करते हुए डॉ. बाबासाहेब ने कहा–

जातिवाद और अस्पृश्यता नष्ट करने के लिए चिंतित न होने वाले राजनीतिक दलों से सावधान रहिए।

भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी रशियन उद्देश्यों के आधार पर अगर बनाई गई है तो अगले म्युनिसिपल चुनावों में उस पार्टी के साथ सहयोग करने के लिएशेड्युल्ड कास्टस् फेडरेशन तैयार है। हालांकि, अन्य पार्टियों की ही तरह भारतीय कम्युनिस्ट भी जातिवाद और अस्पृश्यता हटा नहीं पाए हैं। उनमें भी कुछ ऐसे ब्राह्मणवादी तत्व और जातिवाद मानने वाले घुस गए है, जिससे भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी तथा अन्य कम्युनिस्ट दल ग्रसित हुए है।

इस अवसर पर डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को एक सहयोग राशि की थैली सुपूर्द की गई।

जनता : 10 अक्तूबर, 1953

313

सच्चे और श्रेष्ठ धर्म की पुनःर्स्थापना करने का कठिन कार्य अब भावी पीढ़ी के जिम्मे आन पड़ा है

मुंबई के जेवियर कॉलेज के मैदान पर दिनांक 24 जनवरी, 1954 को अखिल भारतीय साईं भक्त सम्मेलन का उद्‌घाटन करते हुए डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने कहा, आज मूर्तिपूजा, साधुसंत और चमत्कार करने वाले व्यक्ति की पूजा ही धर्म बन गया है। अपने धर्म में अब न तो भगवान बचा है न रिश्ते बचे हैं। आज का समय मानव के पूरे अध:पतन का समय है। इसीलिए सच्चे और श्रेष्ठ धर्म की पुनर्स्थापना करने का कठिन काम भावी पीढ़ी पर आ पड़ा है।

साईबाबा से प्रत्यक्ष मिलने का या उन्हें देखने का मौका मुझे नहीं मिला है। उनके बारे में मैंने थोड़ा-बहुत सुन रखा है, बस इसीलिए आप अगर साईबाबा के बारे में जानने वाले व्यक्ति को बुलाते तो बहुत अच्छा रहता। साईबाबा के बारे में मेरा ज्ञान बिल्कुल शून्य है। और जितना जानता हूं वह भी केवल सुनी-सुनाई बातें ही हैं। साईबाबा को गुजरे जमाना बीत गया है फिर भी उनके भक्त में निरंतर बढ़ोतरी होती रही है। साईबाबा को एक धर्मगुरू के रूप में ही ज्यादातर लोग जानते हैं। भारत में धर्म में कई बदलाव आए हैं। पहले यही माना जाता था कि मनुष्य की आत्मा को मुक्ति दिलाने वाला साधन है, धर्म। समय के अनुसार से धार्मिक नजरिया, उद्देश्य और साधना आदि के कारण मूल धारणा में आमूलचूल बदलाव आया। धर्म के नैतिक मूल्यों का आदर करते हुए एक-दूसरे के लिए आदर भाव निर्माण कर विश्वबंधुत्व का निर्माण करने का साधन माना जाने लगा। धर्म की तीसरी स्थिति है मानवीय जीवन की रोजमर्रा की जरूरतों की जो व्यक्ति पूर्ति करता है उसकी भगवान की तरह पूजा करना। किसी को सोना चाहिए था, किसी को संतान, कोई संकटों से मुक्ति चाहता था। फिर अपनी इच्छाओं की पूर्ति करने वाला व्यक्ति भगवान बना। उसके बाद कुछ चमत्कार कर दिखाने वाले व्यक्ति की पूजा हो रही है यह भी आजकल हम देख रहे हैं।

कहना पड़ेगा कि धर्म के मामले में हम गलत राह पर निकल गए हैं। इतना ही नहीं, आजकल धर्म के नाम पर आजकल रुपया इकठ्ठा कर उसे गलत बातों पर खर्च किया जाता है। दुनिया में आज दरिद्रता और दुख के होते हुए भी इस प्रकार धर्म के

जनता, 30 जनवरी, 1954

नाम पर पैसा इकठ्ठा कर उसे ब्राह्मणों पर और उत्सवों पर खर्च करना एक भयंकर अपराध है। गौतम बुद्ध ने इस सवाल पर कुछ उपाय बताए हैं। उन्होंने अपने नीतिशास्त्र में पंचशील, अष्टागमार्ग और निर्वाण के बारे में बहुत अच्छे ढंग से समझाया है। इनके अलावा उन्होंने अपने अनुयायियों को निम्नांकित दस तत्वों का अनुसरण करने के लिए कहा है - 1. प्रज्ञा, 2. शील, 3. नेखम्म, 4. दान, 5. वीर्य, 6. खन्ति, 7. सच्च, 8. अधित्थान, 9. मैत्री, 10. उपेख्खा।

प्रज्ञा अर्थात् जिससे अज्ञान का अंधकार नष्ट होता है वह - ज्ञानरूपी प्रकाश। शील यानी नैतिक विचार, कोई बुरा काम नहीं करना और अच्छा काम करते रहना। नेखम्म यानी भौतिक सुखों से अलिप्त रहना। दान यानी किसी प्रकार की अपेक्षा किए बगैर दूसरों के लिए तन-मन-धन अर्पण करना। वीर्य यानी धैर्य, कसौटी। शुरू किया गया काम बिना हारे पूरा करना। खन्ति यानी सहनशीलता। द्वेष का जवाब द्वेष से न देना। सच्चा यानी सत्य। हर कोई सत्य बोले, झूठ कभी न बोले। जो बोलो वह सत्य ही बोलो। अधित्थान यानी मनोनिग्रह। मैत्री यानी प्रेम - मित्र के लिए, दुश्मन के लिए, मानव मात्र के लिए हो अथवा प्राणिमात्र के लिए। उपेक्षा यानी उपेक्षा। मन जिसमें सुख-दुख से परे पहुंचता है और किसी भी परिणाम से विचलित नहीं होता और कर्तव्यपरायण बना रहता है। बुद्ध की उम्मीद थी कि ऊपर बताए में से अधिकाधिक गुण इंसान आत्मसात करे। इसीलिए पाली साहित्य में कहा गया है कि गौतम बुद्ध ने इस प्रकार 'दान पारमिता' भले सिखाई हो, दान सत्पात्री होना चाहिए यह उनका आग्रह था। दान देने के लिए दाता तैयार अगर हो भी तो दान जिसे दिया जाना है उसे उस बात से कमतरी महसूस नहीं होनी चाहिए। पददलितों को एक दिन अपने पैरों पर खड़े रहने में समर्थ करे वही सच्चा दान है। साधू-संतों द्वार बताए गए तत्वों के अनुसार धन का विनियोग करना अत्यंत आवश्यक है। दरिद्रता, अज्ञान, रोग इतना है कि आज के युग में उसे नष्ट करने के लिए इस प्रकार पैसा खर्च किए बगैर उसे धनिकों पर खर्च करना गलत साबित होगा। उन पैसों का उपयोग अस्पताल खोलने, शिक्षा का मार्ग प्रशस्त करने, बेकारी दूर करने के लिए छोटे-छोटे व्यवसायों का निर्माण करने, गरीब और अनाथ महिलाओं के लिए पेट पालने के व्यवसाय का प्रशिक्षण उपलब्ध करने पर किया जाए। जमा रकम का उपयोग अगर इस प्रकार किया जाए तो उसे अपने काम की वाहवाही होगी। इतना ही नहीं तो साईबाबा की कीर्ति दसों दिशाओं में फैलती रहेगी।

314

आज देश में नैतिकता बची ही नहीं है, जिस देश की कोई नैतिकता नहीं उसका भविष्य संकटमय है

मुंबई के फेमस स्टुडियो में रविवार दिनांक 31 जनवरी, 1954 के दिन आचार्य अत्रे की 'महात्मा फुले' फिल्म का मुहरत समारोह बड़ी धूमधाम से संपन्न हुआ। समारोह की अध्यक्षता कर रहे थे डॉ. बाबासहब अम्बेडकर और खास आशिर्वाद देने के लिए सातारा से कर्मवीर भाऊराव पाटील आचार्य अत्रे के आमंत्रण को स्वीकार कर आए थे।

आचार्य आयु. अत्रे ने उपस्थित मेहमानों के प्रति धन्यवाद करते हुए कहा, 'मुझे बहुत खुशी है कि, ज्योतिबा फुले का क्रांतिकारी जीवन रुपहले पर्दे पर साकार करने का मेरा पुराना सपना आज साकार हो रहा है। पुणे शहर के जिस हिस्से में करीब 100 साल पहले फुले ने काम किया उसी हिस्से में मैं कई वर्षों तक रहा। इसलिए, उनके काम का और परंपरा का मेरे मन पर गहरा असर हुआ है। सबसे बड़ी खुशी की बात यही है कि इस फिल्म की शुरुआत डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के हाथों हो रही है। महात्मा फुले दर्शन के सबसे बड़े अनुयायी अगर कोई हैं तो वह केवल डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ही हैं। राजनीति की, धर्म के क्षेत्र की, सामाजिक विषयों की डॉ. अम्बेडकर की भूमिका पूरी तरह से क्रांतिबा फुले जैसी ही है। इसीलिए क्रांतिबा फुले के बारे में उस युग में जो गलतफहमियां पैदा हुईं वही गलतफहमियां आज डॉ. अम्बेडकर के काम को लेकर पैदा हो रही हैं। रयत शिक्षण संस्था के संस्थापक कर्मवीर भाऊराव पाटील इस पिल्म को आशिर्वाद देने के लिए आज यहां उपस्थित हैं।

आज के दिन की यह दूसरी बड़ी बात है। उन्होंने अपना संपूर्ण जीवन महात्मा फुले दर्शन के प्रचार-प्रसार के लिए अर्पण किया है।'

'अंग्रेजी में फुले का जीवन परिचय लिखने की डॉ. अम्बेडकर की इच्छा है यह मैं जानता हूं। लेकिन साधनों के अभाव में यह काम अधूरा पड़ा है। मेरा काम पूरा होने के बाद सारा सामान उनके हवाले करने का मेरा इरादा है। फुले के जीवन के बारे में जनसामान्य के बीच अज्ञान फैला हुआ है। इस फिल्म के सहारे फुले के जीवन के बारे में लोगों को पूरी जानकारी देने की मेरी कोशिश रहेगी।'

जनता, 6 फरवरी, 1954

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने कहा–

इस काम को हाथ में लेने के लिए मैं आयु. अत्रे का अभिनंदन करता हूं। क्योंकि ज्योतीराव फुले असल में आद्य समाज सुधारक हैं। पहले विवाद चलता था कि पहले राजनीति या कि पहले समाज सुधार। रानडे, गोखले, आगरकर का आग्रह था कि पहले सामाजिक सुधार होने चाहिए। लेकिन तिलक के मत में पहले राजनीतिक सुधार होना ही सही था। तिलक इस मामले में अपने विरोधियों पर विजय नहीं पा सके। लेकिन आगे चल कर गांधीजी ने उन पर विजय पाई जो पहले समाज में सुधार लाने के समर्थक थे। हालांकि समाज सुधार होने से पहले ही देश को राजनीतिक आजादी मिली। इसका कुछ अच्छा असर नहीं हुआ है। आज देश का कोई चरित्र नहीं बचा है और जिस देश की कोई नैतिकता नहीं उस देश का भविष्य बहुत ही कठिन होता है। जवाहरलाल नेहरू, आपके राज्य के मुख्यमंत्री हों या मोरारजी देसाई हों, आपके भविष्य में अंध:कार ही भरा हुआ है। देश के मंत्री देश का उद्धार नहीं कर सकते बल्कि जिसे धर्म समझ में आया है वही देश का उद्धार कर सकता है। महात्मा फुले ऐसे ही धर्मसुधारकों में से एक थे। इस प्रकार इस महान समाजसुधारक के जीवन पर बनने वाली यह फिल्म उपयुक्त साबित होगी।

315

निष्ठा का पालन न किया जाए तो धर्म की तरह ही राजनीति भी लफंगों का बाजार साबित होगी

शेड्यूल्ड कास्ट्स् फेडरेशन के प्रभावी नेता,अस्पृश्य जनता के नेता और भारतीय संविधान के शिल्पी डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर और आयुष्मति माईसाहब अम्बेडकर दोनों दि 20 अप्रैल1954 के दिन सुबह 10 बजे हवाई जहाज से दिल्ली से नागपूर आए। उनके स्वागत के लिए अस्पृश्य समाज हजारों की संख्या में उपस्थित था और डॉ. अम्बेडकर माईसाहब के साथ हवाई जहाज से उतरते ही 'अम्बेडकर जिंदाबाद थोड़े दिन में भीमराज' आदि नारों के साथ उनका स्वागत किया गया।

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर भंडारा द्विमतदाता संघ के संसदीय उपचुनावों में आरक्षित सीट के उम्मीदवार के तौर पर खड़े थे और भंडारा चुनाव क्षेत्र में चुनाव प्रचार के लिए वे नागपूर आए हुए थे।

हवाई अड्डे पर उनके स्वागत के लिए पच्चीस हजार से भी अधिक अस्पृश्य महिलाएं एवं पुरुषों का और छोटे-बड़ों का .... उपस्थित था। समता सैनिक दल के सैंकड़ों वर्दीधारी स्वयंसेवक व्यवस्था के लिए और डॉ. बाबासाहेब को सलामी देने के लिए कतारबद्ध खड़े थे। हवाई जहाज नागपुर हवाई अड्डे पर उतरने के बाद बाबासाहेब और माईसाहब हवाई जहाज से उतरते ही माईसाहब जहाज इन्होंने उनका पुष्पमाला से स्वागत किया बाबासाहेब और माईसाहब

S/C MSS No. 329 - 330

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर भंडारा संसदीय उपचुनावों में उम्मीदवार बनने के बाद मध्य प्रदेश की कई पार्टियों ने डॉ. बाबासाहेब को अपने समर्थन की घोषणा की। डॉ. बाबासाहेब के आने के बाद इन पारटियों के कार्यकर्ताओं को विशेष तौर पर आमंत्रित किया गया। इस कार्यक्रम में मध्यप्रदेश जनसंघ के दत्तोपंत ठेंगडी, प्र. स. पार्टी के आयु. आवारी, हथकरघा, बुनाई संघ के आयु. रा. बा. कुंभारे, शरणार्थियों की ओर से आयु. हंसराजनी, कम्युनिस्ट पार्टी के आयु. वर्धन, प्रा. शि. संघ और सं. महाराष्ट्र परिषद

जनता : 24 अप्रैल, 1954

संस्था से आयु. भोसले, और शे. का. फे. चे. आयु. राजभोज , दादासाहब गायकवाड, मुं. वि. सभा के और शे. का. फे. के सदस्य आयु. बापू चंद्रसेन कांबले, बॅ. खोब्रागडे, नागपूर कार्पोरेशन के उपनगराध्यक्ष आयु. धरमदास में श्राम और हरिदास आवले आदि प्रतिष्ठिता कार्यकर्ता उपस्थित थे।

दिनांक 20 अप्रैल, 1954 को अपने स्वागत समारोह में डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने कहा–

मुझे लग रहा है कि राष्ट्र विनाश के मार्ग पर आगे बढ़ रहा है। इसीलिए मैं चुनाव में खड़ा हो रहा हूं। काँग्रेस के साथ सुलह के लिए तैयार होता तो मेरा लोकसभा में टिका रहना असंभव नहीं था। लेकिन धर्म की तरह ही अगर राजनीति में भी निश का पालन नहीं किया गया तो वह लफंगों का बाजार ही रहेगा। विरोधी पार्टी की सीटों पर से लोगों के सामने अलग दृष्टिकोण रखने के लिए ही मैं यह चुनाव लड़ रहा हूं।

काँग्रेस सरकार को कार्य करने के लिए बहुत समय दिया गया लेकिन अब तक वे कोई भी सवाल हल नहीं कर पाए हैं। अब केवल भक्तिभाव रख कर नहीं चलेगा। अब जागरुकता से घटनाओं पर ध्यान रखना होगा। पहले देश फिर प्रधानमंत्री और काँग्रेस इस तरह से देखना होगा। आज लोगों का कर्तव्य है कि वे वर्तमान सरकार बदल लें।

आज दुनिया में भारत का कोई दोस्त नहीं रहा है। हिटलर की जर्मनी को जैसे घेर लिया गया था वैसा ही कुछ यहां हो रहा है। पाकिस्तान को अमेरिका से मिल रही सैनिकी मदद बहुत गंभीर बात है। उसका बड़ा गंभीर असर होगा। पाकिस्तान को इस प्रकार की मदद जब मिल रही है तब यहां-वहां बिखरे अन्य खंडित मुस्लिम राष्ट्र भी एक होंगे और उनके 'इस्लामी संयुक्त राज्य' की स्थापना होगी, यह तो समझने वाली बात है। ये इस्लामी संयुक्त राज्य अपने पूरे राष्ट्र को घेर लेंगे। मैं आपको यह चेतावनी भी देना चाहूंगा कि अफगानिस्तान ने भी अमेरिकी मदद स्वीकारी है और प्रस्तावित अफगाण-पाक फेडरेशन की खबरों के बारे में जो इनकार किया जा रहा है वह केवल गुमराह करने वाली बात है। दूसरी ओर एशिया को काबीज कर उसे कम्युनिजम राष्ट्रों के साथ लाने के लिए रशिया और चीन भी तैयार खड़े हैं और दांव-पेंच लड़ा रहे हैं।

इसलिए, अगर आप प्रभावी बनना चाहते हैं तो आपको हाथ में बंदूकें लेनी होंगी। नरम, लिजलिजे भाषणों से काम नहीं चलेगा। आपको कोई एक कठोर भूमिका अपनानी होगी। बात इसी पर निर्भर है कि आप पार्लिमेंटरी सरकार चाहते हैं या नहीं। पार्लिमेंटरी सरकार चाहिए तो जहां पार्लिमेंटरी सरकार है और बाह्य आक्रमणों के खिलाफ सुरक्षा के लिए जो सिद्ध हैं हमें उनसे के लिए सहयोग करना होगा। अगर नहीं तो हम कल ही रशिया और चीन के साथ दोस्ती करेंगे।

316

चुनावों द्वारा सीटें पाना एक साधन है, साध्य नहीं

दिनांक 20 अप्रैल, 1954 शेड्यूल्ड कास्ट्स फेडरेशन के कार्यकर्ताओं को हितोपदेश करते हुए डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने कहा,

पिछले चुनावों में शेड्यूल्ड कास्टस् फेडरेशन की हुई हार के कारण मेरे सहयोगी हताश हुए होंगे शायद और हो सकता है कुछ लोग यह भी सोच रहे हों कि चुनाव नहीं होने चाहिए। लेकिन, मैं उनसे कहूंगा कि इस प्रकार हतबल या निराश नहीं होना चाहिए। राजनीति इसी प्रकार सीढ़ी-दर-सीढ़ी आगे बढ़ती रहती है। मैंने कभी भी हार की परवाह नहीं की; करता भी नहीं और कभी करूंगा भी नहीं। केवल चुनावों में जीत पाना ही फेडरेशन का उद्देश्य नहीं है। लोगों को उनके अधिकारों के प्रति जागृत करना और संघर्ष करने के लिए प्रेरित करना यह इस चुनावों में उम्मीदवार खड़े करके मैं कर रहा हूं। चुनावों के द्वारा सीटें पाना एक साधन भर है। फेडरेशन का साध्य और उद्देश्य अस्पृश्य जनता का उद्धार करना है और जब तक अस्पृश्य समाज का सभी अंगों से विकास नहीं होता तब तक शेड्यूल्ड कास्टस् फेडरेशन पार्टी की जरुरत है और फेडरेशन तब तक जीवित रहेगी यह मैं जोर देकर कहता हूं। जो छोटे-मोटे तूफान उठे होंगे वे हवा बहना बंद होने पर थम जाएंगे। उनके बारे में चिंतित होने की जरुरत नहीं है। फेडरेशन पार्टी के बगैर भारतीय राजनीति में अस्पृश्यों के लिए स्वाभिमान का स्थान नहीं बचेगा। फेडरेशन की पराजय के कारण ही दिनों-दिन हमें अपने उद्धार के लिए नए-नए कार्यक्रम बनाने पड़ते हैं। जो फेडरेशन के कार्यकर्ता हैं उन पर बड़ी जिम्मेदारी है। उन सबसे मैं यह कहना चाहता हूं कि फेडरेशन की पराजय हवा से उजड़े पेड़ की तरह है। लेकिन इस तरह उजड़ने से उस पेड़ की जड़ें ही मिट गई होंगी यह सोचना गलत होगा। इसलिए कहता हूं कि आंखें खुली रख कर काम करते रहिए।

जनता : 24 अप्रैल, 1954

317

हमारा देश दो हिस्सों में बंटा है - एक ऊंचे लोगों का, दूसरा छोटे लोगों का

भण्डारा संसद के उप-चुनाव में खड़े हुए चारों उम्मीदवारों का चुनाव अब चरम पर पहुंच गया था। दिनांक 21 अप्रैल, 1954 को नागपुर से भण्डारा चुनाव प्रचार के लिए आये। शाम को उनकी सार्वजनिक सभा हुई। बीस-बीस, पच्चीस कोस से बाबासाहेब के दर्शन के लिए इक्ट्ठा हुए।

शाम 7 बजे डॉ. बाबासाहेब नए तालाब के पास विशाल मैदन में आए। इस मैदान में बड़ा शामियाना लगाया गया था। दूर-दूर से आए लोग डॉ. बाबासाहेब के स्वागत के लिए बहुत ही उत्सुक थे बाबासाहेब के सभास्थल पर आते ही इन नारों से वातावरण गूंजने लगा 'बाबासाहेब जिंदाबाद', बाबासाहेब कौन हैं? हमारे राजा हैं।'

कार्यक्रम की शुरूआत भजन से हुई। भजनों का कार्यक्रम चल ही रहा था तभी साथ में कई संस्थाओं और व्यक्तियों की तरफ से डॉ. बाबासाहेब को पुष्पमालाएं अर्पण किए गए। डॉ. बाबासाहेब के साथ माईसाहब आयु. कांबळे, उपसचिव आयु. राजभोज दादासाहब गायकवाड़ आदि लोग मंच पर उपस्थित थे। म. प्र. शेड्यूल्ड कास्ट फेडरेशन के अध्यक्ष आयु. दशरथ पाटील, आयु. निनावे वकील, आयु. भाऊसाहब दलाल आयु. ना. ह. कुंभारे, आयु. आवले, बॉ. खोब्रागडे आदि लोग मंच पर उपस्थित थे।

मंच से उपस्थित जनसमुदाय की ओर देखते ही सबको जवाहरलाल नेहरू की सभा की याद आ रही थी। कम से कम दो लाख लोग बड़े उत्साह के साथ इस समारोह में उपस्थित थे। भंडारा में इससे पूर्व कभी इतनी बड़ी सार्वजनिक सभा नहीं हुई थी।

पुष्पमालाएं अर्पण करने का कार्यक्रम पूरा होने के बाद डॉ. बाबासाहेब को शुभकामनाएं देने वाला उन्हें चुनाव में बहुमत से जिताने वाले एक गीत का बुलंद आवाज में सुस्वर गायन हुआ।

इस सभा में डॉ. बाबासाहेब के प्रति अपना आदर व्यक्त करने के लिए कारंजा के आयु. महादेव बोरकर ने 501 रु. आयु. चंद्रभान श्यामकुंवर ने 101 रु. अर्पण किए।

पहले नागपुर प्रदेश शे. का. फे. के अध्यक्ष बॅ. खोब्रागडे ने शुरुआती परिचयात्मक भाषण से उपचुनावों की भूमिका संक्षेप में स्पष्ट की।

तरुण भारत, नागपूर: 23 अप्रैल, 1954

उनके बाद डॉ. बाबासाहेब खड़े हुए और एक बार फिर उपस्थित दो लाख के जनसमुदाय ने उनकी जयकार की। उन्होंने करीब डेढ घंटे तक भाषण दिया।

उन्होंने कहा जिन दो लोगों को संसद में भेजना है उनमें से एक मैं हूं। मैं उम्मीदवार बन कर खड़ा हूं। मुझे चुनावों में खड़े रहने की जरूरत नहीं है, क्योंकि मैं पहले ही ऊपर की लोकसभा अर्थात् राज्यसभा का सदस्य हूं। खेद की बात यह है कि मैंने देखा है कि इस उच्च सभा यानि राज्यसभा में कोई कामकाज नहीं होता। केंद्र सरकार की लोकसभा की बैठकें बारंबार लेकर उससे लोकहित का कामकाज करवाने की इच्छा नहीं है।

इसीलिए आखिर मैंने संसदीय चुनावों में खड़े होने का निर्णय लिया।

दो जगहों के लिए चार उम्मीदवार खड़े होने के कारण स्पष्ट है कि चुनावों में कांटे की टक्कर होने वाली है। अपना वोट किसे देना चाहिए इस बारे में निश्चित तौर पर बताने के लिए मैंने यह दौरा शुरू किया है। सेहत के कारण हर जगह जाना मेरे लिए संभव नहीं है, इसलिए गिने चुने स्थानों पर जाकर ही मैं अपना चुनाव प्रचार करने वाला हूं। किन्हीं कारणों से आज जो लोग यहां उपस्थित नहीं हैं उन तक आप मेरी बात पहुंचाएंगे ऐसी मुझे उम्मीद है।

संसद के 500 में से 400 सदस्य कांग्रेस के हैं। ऐसी स्थितियों के बावजूद हरेक चुनाव क्षेत्र में उम्मीदवार खड़ा होता है तब उसका विरोध करना प्रजातंत्र के लिए लज्जास्पद है। वे चुनाव लड़ते हैं मारवाड़ियों के पैसों के बल पर। कांग्रेस ने दो उम्मीदवार चुनाव में उतारे हैं। उनका उद्देश्य क्या है? कांग्रेस वाले बताते हैं कि नेहरू के हाथ मजबूत करने के लिए इन्हें जिता कर संसद में भेजिए। लेकिन क्या नेहरू इस प्रकार का समर्थन पाने के हकदार हैं? इस बारे में जरूर सोचना पड़ेगा।

आजादी के बाद सात सालों की मियाद मिली। इतने समय में कर्तव्यपरायण पुरुष आसमान धरती पर ला सकते हैं। लेकिन जवाहरलाल नेहरू ने क्या किया? हमने अंग्रेजों से आजादी की मांग क्यों की? अंग्रेजों के राज में जो अनेक समस्याएं पैदा हुईं थीं उन्हें हम हल करेंगे ऐसा तब इन नेताओं का कहना था। आज का प्रमुख मुद्दा विषमता का है लेकिन इस बारे में कोई बोलता तक नहीं। वैसे देखा जाए तो हमारा देश दो हिस्सों में बंटा है। एक हिस्सा ऊंचे लोगों का और दूसरा छोटे लोगों का है। सभी मंत्री उच्च वर्ग के हैं। एकाध अपवाद हो सकते हैं। आम लोगों को आजादी का रत्तीभर फायदा नहीं मिला है।

पिछले साल एक सभा का उद्घाटन करते हुए जवाहरलाल नेहरू ने बताया कि मेरी नजर में अस्पृश्यता सामाजिक समस्या है ही नहीं। वे मजदूर हैं और अन्य मजदूरों के साथ उनकी समस्याएं भी हल हो जाएंगी। लोकलाज की खातिर ही सही गांधीजी कहा करते थे कि अस्पृश्यता हिंदू धर्म का कलंक है और उसे धोना पड़ेगा। ये (नेहरू) इतना तक नहीं कहता।

सर्वोदय मुझे ढोंग लगता है। एक आदमी कैसे सर्वोदय ला सकता है समझ में नहीं आता। व्यवहार में 'मात्स्य न्याय' है। सबका हित देखना होगा। उनके इस कथन पर क्या आप भरोसा कर सकते हैं? सर्वोदय के साथ मुझे विश्वामित्र की याद आती है। ब्रह्मदेव के साथ होड़ लगाकर प्रतिसृष्टि का निर्माण किया। उसका वर्णन करते हुए मुक्तेश्वर ने कहा है कि विश्वामित्र की दुनिया में जन्मजात एक-दूसरे के दुश्मन नेवला और सांप प्रेम से क्रीड़ा कर रहे थे। चूहे बिल्ली का दूध पी रहे थे और सिंह और हाथी प्रेम से साथ रह रहे थे। वास्तव में ऐसा कभी संभव नहीं। लेकिन कवि मुक्तेश्वर आगे बताते हैं कि यह सब कपटजाल था। सर्वोदय मजदूरों के साथ अमीरों का हित देखने वाला होगा उन्हें प्रेम के साथ इक्ट्ठा बसाने वाला होगा तो कहना पड़ेगा कि यह तो कपटजाल है।

घूसखोरी क्यों होती है? तो इसके पीछे वजह यह है कि जवाहरलाल नेहरू में कोई दम नहीं है। खुद नेहरू ईमानदार हैं। मुझे उनके बारे में कुछ नहीं कहना है लेकिन उनका एक ही दोष है कि वे अगर किसी को एक बार दोस्त मान लेते हैं तो हमेशा के लिए शरण दे देते हैं। मेनन का जीप मामला तो मशहूर ही है। मंत्रिमंडल में मैं जब था तब मैंने जवाहरलाल नेहरू से कहा था कि हर जगह आप वकीलों की नियुक्ति क्यों करते हैं? हर साल इन दूतावासों पर 8 करोड़ रुपए खर्च किए जाते हैं। आप नहीं जानते हों तो मैं बता दूं कि अमेरिका और कनाडा की सरकारों ने मांग की है कि 'अपने वकीलों को वापिस बुला लो' तुर्कीस्तान के वकील ने अनाज की खरीदारी में घपला किया। विदेशों में जिन लोगों ने अपना और अपने देश का नाम बदनाम किया उन्हें वापिस लौटने पर यहां क्या सजा मिलती है? ऐसे एक आदमी को उसके भारत लौटने पर अपराधी ठहराया गया और फिर दूसरे देश में वकील बना कर भेजा गया। जवाहरलाल नेहरू लोगों को परख नहीं सकते। अपने पसंदीदा लोग और देश के हित में क्या कोई फर्क नहीं? लेकिन जवाहरलाल नेहरू की समझ में यह फर्क नहीं आता। क्या ऐसे आदमी का हमें समर्थन करना चाहिए?

300 साल पहले पंडितजी के पूर्वज भारत में आए। लेकिन आज भी उन्हें लगता है कि हम पहले कश्मिरी हैं फिर भारतीय। तब मुझे आश्चर्य लगता है कि जो आदमी पहले अपने को गर्व के साथ भारतीय नहीं कहलाता उसे भारत का प्रधानमंत्री बनने का अधिकार ही क्या है?

कश्मीर के लिए पूरे भारत का कहां तक खून चूसें यह वे नहीं सोचते। कश्मीर के राजा की सालाना 9 लाख की तनख्वाह है। 3 लाख रुपए ही कश्मीर की सरकार देती है। 6 लाख भारत सरकार देश की जनता से वसूली कर की रकम में से देती है। मैं अगर चुनाव जीत गया तो जाकर उनसे पूछने वाला हूं कि पिछले सात सालों में कश्मीर की अपनी सेना पर कितना खर्च हुआ है? उन्होंने जान बूझ कर इस बात को गुप्त रखा

है। मेरी राय में यह खर्च 200 करोड़ से अधिक होगा। एक तरफ भारत की जनता जब भूखों मर रही है तब इतना पैसा वहां खर्च क्यों करें तो कैसे यह विचार कभी उनके मन में नहीं आता।

किसी अन्य द्वारा सुझाई गई अच्छी बात को स्वीकारने के लिए भी जवाहरलाल नेहरू तैयार नहीं हैं और कोई नई बात सूझे ऐसी उनकी अपनी बुद्धि नहीं है।

आजकल लोग फिल्मी स्टारों के पीछे पागल होते हैं उसी प्रकार जवाहरलाल नेहरू के पीछे पागल हुए हैं। हालांकि फिल्म के स्टार के पीछे पागल होने वाला युवक घर आकर अपनी घरवाली से प्रेम करता है और सुखी होता है। नेहरू के बारे में लेकिन ऐसा नहीं होता। जो लोग उन्हें पसंद करते हैं वे उन्हीं से चिपके बैठे रहते हैं।

महाभारत में बताया गया है कि द्रोण और भीष्म कहते कि पांडव सही हैं लेकिन ऐन लड़ाई के समय वे कौरवों की तरफ से लड़ें। लोगों ने सवाल पूछे तो भीष्म ने दो टूक जवाब दिया कि ''अर्थस्य पुरुषो दास:''। आज अमीर मारवाड़ी दिल खोल कर काँग्रेस को पैसों की मदद दे रहे हैं। इसके क्या परिणाम होंगे यह तो आप भी सोच सकते हैं। ''अर्थस्य पुरुषो दास:'' का सूत्र यहां भी लागू दिखाई पड़ता है।

काँग्रेस के कितने सदस्य पार्लिमेंट में भाषण करते हैं यह उनसे पूछिए। बोरकर अगर यहां होते तो मैं उनसे पूछता कि आप क्या करने वाले हैं? वह क्या कर सकते हैं? क्या वह कानून जानते हैं? भत्ते में मिलने वाले 30 रुपए पाने के लिए वे बस से जा रहे हैं। इससे आगे वे क्या जानते हैं? पार्लिमेंट के काम के लिए पूनमचंद जी कितने लायक हैं मैं नहीं जानता। काँग्रेस को लगता है कि लोगों का काँग्रेस पर विश्वास है। लेकिन हमारे नाम से किसी भी आदमी को वोट दीजिए कहना क्या विश्वासघात करना नहीं है? काँग्रेस के लोग इतने बेशरम हो गए हैं कि धिक्कार है उन काँग्रेसियों का। हम अक्सर बोर्ड देखते हैं जिनमें लिखा होता है 'चोरों से सावधान!' मैं आपसे कहता हूं कि काँग्रेस से सावधान हो जाइए। क्योंकि, वह चोर है।

अस्पृश्य वर्ग के मतदाताओं पर मेरा पूरा विश्वास है। आपको किसी प्रकार की घूसखोरी के शिकार नहीं होना चाहिए। अपने वोट को एक अमूल्य चीज मानिए। आप निम्न जात के? ध्यान में रखें कि हमारे पास कोई अधिकार नहीं हैं। ब्राह्मणों की तरह धार्मिक सामर्थ्य भी अपने पास नहीं है। इसीलिए हमारा वोट राजनीतिक क्षेत्र की हमारी एक अनमोल चीज है। उसे बेचिए मत। हम अल्पसंख्यक हैं। इसलिए अगर एक-एक दाना चुन कर भरें तभी हमारी बोरी भरेगी। जिसे मतदान का अधिकार प्राप्त है उसे अवश्य मतदान करना चाहिए। तभी मैं जीतूंगा।

मैं आरक्षित जगह पर खड़ा हूं। हालांकि, जिन स्पृश्यों को लगता है कि मेरी नीतियां

केवल अस्पृश्यों के हित में न होकर देश के हित में हैं वे भी मुझे अपना वोट दें। जरुरी नहीं कि मैं उनसे यह कहूं।

मुझसे पूछा जाता है कि दूसरे मत का क्या करेंगे? उसके बारे में बताना जरुरी है। हम काँग्रेस का विरोध करते हैं। इसलिए काँग्रेस के फायदे में जाए ऐसी कोई बात हमें नहीं करनी चाहिए। इसलिए अगर आप मेरे साथ और मैं दोनों अपने ही हैं को भी अपना वोट देंगे तो मेरा डिपॉजिट जब्त होगा। अगर आपको लगता है कि मैं जीतूं तो आपको बोरकर को अपना वोट बिल्कुल नहीं देना चाहिए। फिर दो लोग बचते हैं आयु. राका और आयु. मेहता।

मैं समाजवादी पार्टी से नाराज हूं। उनके काम में कोई अनुशासन नहीं। मुझे उम्मीद थी कि देश की अन्य पार्टियों की तरह वे उसूलों की बुनियाद पर अपनी पार्टी का संगठन करेंगे। इसीलिए पिछले चुनावों में मैंने उनकी मदद की। लेकिन इस कारण हमारा बहुत अधिक नुकसान हुआ है। हमारे लोगों ने वोट दिया इसीलिए उनके उम्मीदवार जीत पाए। लेकिन इस पर धन्यवाद का एक शब्द भी उन्होंने हमें दिया नहीं। इसीलिए मुझे उनके बारे में न तो बुरा लगता है और न ही आदर महसूस होता है। त्रावणकोर–कोचिन में वे कम्युनिस्टों के साथ उनकी बराबरी में कंधे से कंधा लगाकर लड़े और चुनावों के बाद उन्होंने पगड़ी घुमा कर बताया कि तुम्हारा और हमारा कोई ताल्लुक नहीं। उन्हें बस मंत्रीपद पाने की जल्दी मची है।

सुचेता कृपलानी ने मुझे खत लिख कर विनति की है कि अशोक का समर्थन करूं। अशोक मेहता का भी खत आया है इसलिए और अशोक, यह रांका से अधिक राजनीति में सधे हुए हैं और विद्वान हैं इसलिए उन्हें अपना दूसरा वोट दें। इसलिए नहीं कि वे सोशलिस्ट पार्टी के उम्मीदवार हैं, बल्कि इसलिए कि वे अशोक हैं इसलिए आप उन्हें अपना वोट दें।

काँग्रेस के खिलाफ खड़े उम्मीदवारों को आप बहुमत से जिताएंगे ऐसी मैं उम्मीद करता हूं।

इसके बाद आयु. राजभोज ने धन्यवाद ज्ञापन किया। उसके बाद धीरे–धीरे सभा का विसर्जन हुआ।

इस सभा में बहुत लोग इकठ्ठा हुए थे। गर्मी का मौसम था तो लोग प्यास से बेचैन थे। पानी के लिए होटल में लोगों की भीड लगी तो होटल मालिक ने पानी के एक गिलास की कीमत दो आने कर दी। इसके बावजूद लोगों की भीड़ बढ़ रही थी। होटल की खाने की चीजें भी फटाफट बिकीं और होटल मालिक को उनकी अधिक कीमत मिली।[१]

---

1. जनता : 1 मई, 1954

318

दीपमाला के न बुझनेवाले दीपक की तरह हमारा दल छोटा होने के बावजूद अन्य दलों का मार्गदर्शन करेगा

पुलगाव की एक सार्वजनिक सभा में एक संकल्प किया गया था कि डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर भंडारा चुनाव के लिए आएंगे तब अस्पृश्य समाज के लोग अपनी एक-एक दिन की मजदूरी इकठ्ठा कर करीब पांच हजार रुपयों की थैली उन्हें अर्पण करेंगे।

मध्य भारत की खास कर गांवों की जनता कई दिनों से जिन महान मानव श्रेष्ठ के दर्शनों की आस लगाए बैठी है उन महानायक परमपूज्य डॉ. बाबासाहेब का, बहुजनोंद्धारक का, अप्रतिम देश सेवक का शुभागमन रविवार दिनांक 25 अप्रैल, 1954 को वर्धा जिले के पुलगाव के नाचणगाव रोड पावर हाऊस के भव्य मैदान में होगा। इस अवसर पर परमपूज्य डॉ. बाबासाहेब को पांच हजार रुपयों की थैली अर्पण करने का निश्चय पुलगाव नगर शेड्यूल्ड कास्टस् फेडरेशन के नेतृत्व में स्थापन हुई। आगमन समिति की ओर से किया गया है। इसलिए इस सुनहरे मौके का फायदा लेते हुए इस मंगल कार्य के लिए हर अस्पृश्य बंधू-भगिनी अपनी ओर से या औरों की तरफ से मुक्त हस्त से, अपनी खुशी से तन-मन-धन से मदद करें और रकम इकठ्ठा करने का अधिकार जिन्हें है उन कार्यकर्ताओं के पास ही उनका अधिकारपत्र देखने के बाद अपनी राशि उन्हें देकर रसीद लेने की कृपा करें। इस मंगल कार्य के लिए सब ओर से जनता हजारों की तादाद में उपस्थित रह कर डॉ. बाबासाहेब के अमृतसमान भाषण को सुनने का फायदा लें।' इस प्रकार ह. दा. आवले, आर्गनाइजिंग और सुपरवाइजिंग सचिव, मध्य भारत शेड्यूल्ड कास्टस् फेडरेशन, नागपूर और आगमन स्वागत समिति, पुलगाव ने 3 अप्रैल, 1954 को जनता में प्रकाशित किया था।

उसके अनुसार रविवार दिनांक 25 अप्रैल, 1954 को पुलगाव (जिला वर्धा) में मध्य प्रदेश इलेक्ट्रिसिटी बोर्ड के भव्य मैदान में डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के सम्मानार्थ एक महासभा का आयोजन किया गया था। भंडारा विभाग के संसदीय उपचुनावों के लिए डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर इस क्षेत्र में चुनाव प्रचार के दौरे पर आए हुए हैं। अपने महान नेता के दर्शनों के लिए वरहाद के दूरदराज के इलाकों से लोग खास इस कार्यक्रम के लिए आए थे।

इस अवसर पर शेड्यूल्ड कास्टस् फेडरेशन के कार्यकर्ता और डॉ. बाबासाहेब के

जनता :12 दिसंबर, 1953, 1 और 15 मई, 1954

प्रशंसकों की ओर से पांच हजार रुपयों की थैली डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को अर्पण की गई। इस अवसर पर शे. का. फेडरेशन के उपसचिव आयु. पी. एन. राजभोज, गुजराथ के आयु. परमार, महाराष्ट्र के आयु. गायकवाड़, मराठवाड़ा के आयु. बी. एस. मोरे के भी सभा में भाषण हुए।

उनके बाद डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का भाषण हुआ। उन्होंने कहा–

बहनों और भाइयों,

भंडारा जिले के इस हिस्से में मैं चुनाव–प्रचार के दौरे पर आया हुआ हूं। यह हिस्सा चुनाव क्षेत्र में शामिल नहीं है, लेकिन कुछ लोगों ने मुझे आश्वासन दिया है कि यहां से 5000 रुपये की थैली (सहयोग राशि) अर्पण की जाने वाली है। यहां के कार्यकर्ताओं ने बताया कि पहले 2000 रुपए दिए हैं और अब 1500 रुपए अर्पण किए जाएंगे। ऐसे अवसर पर चुनावों के बारे में कुछ बताना अप्रासंगिक है। लेकिन जिस विषय पर मैं बोलने वाला हूं वह महत्वपूर्ण है।

1952 में हुए चुनावों में सभी हिस्सों में फेडरेशन की हार हुई। तब काँग्रेस को बहुत खुशी हुई। इस बार काँग्रेस के खिलाफ लड़ने वाला दल एक ही था। केवल अन्य फेडरेशन पार्टियां अपनी भूमिकाएं भूल गईं। हम चुनाव हारे तब कुछ लोगों ने मुझसे कहा, अम्बेडकर को चाहिए कि इस पार्टी को खत्म कर दे और खूंटी से टांग दें। क्योंकि इस पार्टी में कोई दम नहीं है। बाहर के लोगों की तरह ही हमारे बीच के कुछ लोग भी यही कहते थे। लेकिन मुझे ऐसा नहीं लगता, अभी हुई कुछ सभाओं में से जो 2–3 लाख से अधिक लोग इकठ्ठा हुए हैं उससे फेडरेशन की जरूरत साफ तौर से समझ में आती है। (तालियां) फेडश्रेष्ठान की क्या आवश्यकता है यह जानने के लिए आज की स्थितियों में देश का कामकाज किस प्रकार चल रहा है यह जानना जरुरी है। इंग्लैंड में जब कोई पार्टी सत्ता में आती है तब वह सभी लोगों के साथ समभाव से पेश आती है। कन्जर्वेटिव पार्टी अगर सत्ता में हो तो लाइसेंस और ग्रांट देते हुए वह व्यक्ति किस राजनीतिक पार्टी का है इस बात पर अधिकारी वर्ग बिल्कुल गौर नहीं करता है। यही नीति अन्य देशों में भी है। लेकिन भारत के शासक अन्य पार्टियों के बारे में बिल्कुल लापरवाह हैं। जिन लोगों ने छोटी–बडी संस्थाएं चलाई हैं उन्हें मैं जो कह रहा हूं उस प्रकार के कटु अनुभव हुए होंगे। अंग्रेजों के राज में अधिकारी वर्ग किसी के भी बारे में मन में बिना कोई गांठ पाले न्याय करता था, लेकिन आज सफेद टोपी पहनने वाला काँग्रेस का बगुला जिले का मानो राजा है। वह किसी व्यक्ति को लेकर न्यायाधीश के पास जाता है और उसके बारे में सिफारिश करता है। उसने अगर नहीं सुनी तो वह मिनिस्टर के पास जाता है। न्यायाधीश अगर ईमानदार हुआ तो उसकी नौकरी तो गई समझिए।

इन सभी बातों का एक ही कारण होता है। इस देश में सत्ता पार्टी पर अंकुश रखने

वाला कोई दूसरा मजबूत दल नहीं है। स्थितियां अगर ऐसी ही रहीं तो यहां जर्मनी की तरह हिटलरशाही अथवा रशिया की स्टैलिनशाही आकर रहेगी। इसलिए हमारे अल्पसंख्यक होने के बावजूद विरोध की अग्नि प्रज्वलित रखेंगे। इस काम में दूसरों का सहयोग मिले चाहे न मिले। कभी न कभी हमारी भावना, कार्यशक्ति आदि का अन्यों पर असर होगा और वे हमारी बात मानेंगे। किसी दीपमाला के सभी दीयों के बुझ जाने के बाद भी एकाध दीया जलता रहे और सबका मार्गदर्शन करता रहे उसी तरह हमारी पार्टी छोटी होने के बावजूद अन्य सभी पार्टियों का मार्गदर्शन करेगी।

इलेक्शन मानो क्रिकेट का मैच है। क्रिकेट में हारी टीम कोने में चुपचाप नहीं बैठती। दूसरे साल वह फिर नए जोश के साथ मैदान में उतरती है उसी प्रकार का आशावाद हमें भी रखना होगा। दो साल पहले लखनऊ में भाषण देते हुए मैंने कहा था, काँग्रेस जलता हुआ घर है। इसका आप लोगों को अब तक अहसास हो चुका होगा। अब इस घर की छत बस नेहरू के रूप में बची है। कुछ ही दिनों में वह भी जल जाएगी। अपने पास आर्थिक बल नहीं है। केवल राजनीतिक सामर्थ्य है। शरण जाना मनुष्य को शोभा नहीं देता। बुरे समय में भले मनुष्य किसी की शरण जाए लेकिन समय फिरते ही वह फिर से हाथ में तलवार लेकर वार करने के लिए खड़ा होता है। हमारा हाल 1952 के चुनावों की तरह फिर नहीं होगा। मनुष्य भले कितना भी दीर्घायु क्यों न हो उसके ढलने के दिन कभी न कभी आते ही हैं। लेकिन उसके बाद हमारा उत्कर्ष ही होगा। इसलिए मैं हमेशा जोर देकर कहता रहता हूं कि संगठन को मजबूत रखो।

319

आज भी आदिवासी जंगली युग में ही जीते हैं देश को आजादी मिलने से उनके जीवन में कोई बदलाव नहीं आया

भंडारा में होने वाले संसदीय उपचुनावों के प्रचार कार्य के लिए दि 29 अप्रैल, 1954 के दिन डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर चंद्रपुर जिले के वडसा गांव आए। वहां की सभा में उन्होंने कहा–

आपने अस्पृश्यों के लिए क्या किया? इस सवाल का जवाब देते हुए वहां की प्रचंड चुनाव सभा में बबासाहब ने तत्कालीन ब्रिटिश सरकार से अस्पृश्यों के लिए जो शैक्षिक सहूलियतें उपलब्ध करवाई थीं उनका जिक्र किया और बताया कि लेविन कमिशन के अनुसार हर साल शिक्षा पाने के लिए विदेशों में भेजे जाने वाले छात्रों की कुल संख्या में से साढ़े बारह प्रतिशत अस्पृश्य छात्रों का चुनाव का प्रबंध किए जाने की बात बताई। उन्होंने आगे कहा, 'भज्ञरत में अस्पृश्यों के बारे में जो बातें कभी नहीं हुआ करती थीं वे अब हो रही हैं। इस बारएक साथ 16 छात्रों को शिक्षा पाने के लिए विदेश भेजा जा रहा है।'

प्रजातंत्र में लोगों के प्रतिनिधि के तौर पर जब कोई अधिकार और जिम्मेदारी के ओहदे पर स्थानापन्न होता है उसके दोषों को जाहिर कर और उसके कारण होने वाली गलतियों को टाल कर अर्थात् कि देश का कल्याण करने का कर्तव्य हर नागरिक को पूरा करना होगा। इसके लिए सही ढंग से समीक्षा करने का हक हर नागरिक को प्राप्त हुआ है। नेहरू कोई चमत्कारी पुरुष का अवतार नहीं हैं। अधिकार और जिम्मेदारी के ओहदे पर आसीन व्यक्ति की गलतियां दिखाने के लिए मैं उसके काम की समीक्षा करूंगा।'' संविधान परिषद के समय के अपने विभिन्न अनुभव बताते हुए बाबासाहब ने अपनी राजनीति के बारे में विचार कितने गहरे हैं यह लोगों को बता दिया। संविधान परिषद के दौरान के अपने अनुभव बताते हुए उन्होंने यह भी कहा कि लोग खुद पहचान लें कि हममें से राजा भोज कौन है और गूगा तेली कौन है। कश्मीर के बारे में कहा, हमारे प्रधानमंत्री भारत के भविष्य की जगह अगर कश्मीर के मोह में ही पंसे रहना चाहते हैं तो वे प्रधानमंत्री का पद खाली कर बेशक कश्मीर के राजा बन जाएं।

आखिर में उन्होंने कहा, आदिवासी अभी भी जंगली युग में ही हैं। आजादी के कारण उनके जीवन में किसी भी तरह का बदलाव नहीं लाया गया है। सर्वोदय की कल्पना कवि मुक्तेश्वर द्वारा वर्णित शुक्राचार्य की सृष्टि की प्रतिसृष्टि ही है।

दै : तरुण भारत, नागपूर. 2 मई, 1954

320

व्यवहार और सिद्धांत में तालमेल न हो तो वरिष्ठ वर्ग के विनाश में देर नहीं लगेगी

2 मई, 1954 के दिन डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने मुंबई के सिद्धार्थ कॉलेज में यूथ एसेंब्ली का उद्घाटन किया। इस अवसर पर उन्होंने कहा–

पिछले कई सालों से मैं छात्र आंदोलनों का निरीक्षण कर रहा हूं और मेरे ध्यान में आया है कि शिक्षा के मसलों पर या छात्रों की मुश्किलों की ओर किसी भी छात्र परिषद ने ध्यान नहीं दिया है। छात्रों की अलग–अलग संस्थाएं विभिन्न राजनीतिक पार्टियों के पहियों से बंधी रहती हैं। इतना ही नहीं वरन् कुछ छात्र संगठन कम्युनिस्ट देशों के साथ तो कुछ संगठन जनतंत्रवादी राष्ट्रों को समर्थन देने के लिए ही पैदा हुए हैं ऐसा मुझे लगता है। इसलिए शिक्षा के मसलों पर ध्यान दिए बगैर केवल विवादों में लगे रहते हैं और बहक कर किसी और दिशा में चले जाते हैं।

स्वतंत्रता, समता और मातृभाव के बारे में हम खूब कहते हैं, इतना ही नहीं इन तीन बातों पर हम लंबे व्याख्यान भी दे सकते हैं। लेकिन इन तीनों में से एकाध ही सही हमारे भारतीय समाज में है कि नहीं इस बारे में सोचने का हमारे मन में नहीं आता। जैसे मानों सिद्धांत और व्यवहार के बीच सामंजस्य बिठाना हमारी जिम्मेदारी ही नहीं हो।

भारत की बहुसंख्य जनता अज्ञान और भोली कल्पनाओं में घिरी है। यहां की समाज रचना ही गलत कल्पनाओं को जन्म देती है। इसीलिए व्रत रखना, मनौती मानना, भगवान और भोंदूबाबा की शरण जाना ही धर्म करना है ऐसा इन लोगों को लगता है। जनता को इन सभी मूर्ख कल्पनाओं से छुटकारा दिलाना होगा। छात्र आंदोलन में शामिल होकर जनता का अज्ञान और गलत धारणाएं दूर करें। तभी हमारी शिक्षा का जनता को कुछ तो लाभ मिलेगा। हमें अपने ज्ञान का केवल परीक्षा में उत्तीर्ण होने के लिए इस्तेमाल नहीं करना है। हमें अपने ज्ञान का उपयोग कर अपने बंधु–बांधवों में सुधार लाना है, उनकी सम्पूर्ण प्रगति के लिए इस ज्ञान का इस्तेमाल करना है। तभी भारत की उन्नति होगी।

दुनिया की कई जटिल समस्याएं हल नहीं हुई हैं। मनुष्य लगातार उन्हें हल करने की कोशिश में लगा हुआ है। इसीलिए विभिन्न सिद्धांत बनाए जाते हैं, हमारे सामने आज कार्ल मार्क्स एक सवाल बन कर खड़ा है। हमें सोचना है कि आज की समस्याओं को

प्रबुद्ध भारत, जयंती विशेषांक, 14 अप्रैल, 1956

हल करने के लिए कार्ल मार्क्स के सुझाए उपायों से अलग कोई उपाय क्या काम आ सकते हैं? हमारी सभी समस्याएं हल करने के लिए कार्ल मार्क्स के सिद्धांत समर्थ हैं या नहीं यही आज की समस्या है। इस समस्या का हल आज की पीढ़ी को जितनी जल्दी हो सके ढूंढ निकालना है।

इस देश में बहुसंख्य लोग अज्ञान और दरिद्रता जीवन जी रहे हैं। उच्च वर्ग हमेशा इस वर्ग को निचोड़ रहा है, इसीलिए मैं कहना चाहता हूं कि, उच्चवर्ग समय रहते जाग जाए और बहुसंख्य अस्पृश्य लोगों की आशा-आकांक्षाओं, भावनाओं को समझें। समय रहते अगर वे चेत नहीं गए, उन्होंने अगर अपने आप को सुधारा नहीं तो उनका विनाश होने में देर नहीं लगेगी।

321

आपके बनाए विहार में बुद्ध की प्रतिमा की स्थापना कीजिए

पुणे जिले के देहू रोड इलाके में संत चोखोबाराय और बुद्ध वाचनालय बनाया जा रहा है। इस विहार के लिए आज तक कुल 1200 रु. इकठ्ठे हुए हैं। इस रकम में विहार का कलश और आधे से अधिक कामकाज होना है। इस विहार में मूर्ति की स्थापना करने के लिए डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर लोणावला आए थे। उस वक्त मंदिर के कुछ सदस्यों ने उनसे मुलाकात की। इस अवसर पर डॉ. बाबासाहब बने बौद्ध धर्म के बारे में विस्तार से जानकारी दी। बौद्ध धर्म के प्रसार की बेहद जरूरत है यह लोगों को समझाते हुए कहा–

आपने चोखोबाराय का मंदिर बनाया है। उन चोखोबा की जो अपने जीवनकाल में कुछ कर नहीं पाए थे, जिनका रूप आपमें से किसी ने देखा नहीं है। ऐसे चोखोबा के बारे में आस्था रखना हित में नहीं है। इसलिए हम अब जिस भावना से प्रेरित हुए हैं उस भावना को आज के युग में पैरों तले रौंद नहीं सकते।

अपने कार्य का एक हिस्सा अगर मैं इस बात के लिए रखता तो इस बात के लिए लोगों में आदर पैदा होता और मेरे उद्देश्य की बातें दुनिया भर में फैलती। लेकिन मेरे साथ कई काम जुडे हुए हैं सो मैं इस काम के लिए थोड़ा समय भी नहीं दे पाया।

धर्म, प्रचलित रूढ़ियों की शिकार दलित जनता अंधविश्वास के कारण अधोगति को प्राप्त हुई है। हिंदू धर्म के तैंतीस करोड़ देवताओं की पूजा करते हुए हजारों बारिश उन्होंने झेलीं। धर्म के प्रति गर्व के कारण आज तक यह भोली जनता उसी बात का पालन करती आई है। लेकिन सत्य, अहिंसा, परोपकार के त्रिवेणी संगम का झरना बहाने वाली नदी पर शंकराचार्य ने बांध बनाया। और आज वही नदी समंदर बन गई है। उस समंदर में कुछ अंधभक्त लोग पूजनीय भावना मन में लिए स्नान कर अपने पापों का क्षालन कर रहे हैं। जिस धर्म में इंसानियत नहीं उस धर्म के भगवान के बारे में भी अपनापन महसूस होना ठीक नहीं। इसीलिए अबसे आगे हमें अलग भाव से या उद्देश्य से अगले कार्य की रूपरेखा बनानी होगी। इसीलिए मुझे आपको यह सलाह देने का मन हो रहा है कि आपके बनाए मंदिर में आप बुद्ध की मूर्ति की स्थापना कीजिए।

आखिर विहार समिति द्वारा मूर्ति की स्थापना डॉ. बाबासाहेब के ही हाथों करने की इच्छा उनके सामने प्रकट की। तब मूर्ति की स्थापना के लिए उपस्थित रहने का आश्वासन उन्होंने दिया। साथ ही अपने मित्र से बुद्ध मूर्ति दिलाने का भी वचन दिया।

जनता : 8 मई, 1954। जनता के अंक में डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर की मुलाकात की तारीख नहीं दर्शायी है – संपादक

322

समाज को गुमराह करनेवाले नेताओं पर कड़ी नजर रखना जरुरी है

1 जुलाई, 1954 को मुंबई के कामा हॉल में मुंबई प्रदेश शेड्यूल्ड क्लास फेडरेशन के सभी वार्ड कमेटियों की बैठक में डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने उन्होंने कहा,

बहनों, और भाइयों,

वैसे देखा जाए मेरा यहां कोई स्थान है, ऐसा मुझे नहीं लगता क्योंकि, मैं यहां किसी वार्ड मेंबर की हैसियत से नहीं आया हूं। आगामी हीरक महोत्सव के लिए आपने कितना पैसा इकठ्ठा किया है और करने जा रहे हैं यह देखने के लिए मैं आया हूं। मैंने यह भी देखा है कि कई शेड्यूल्ड कास्टस् फेडरेशन शाखाओं के कार्यकर्ताओं ने आज तक पैसा इकठ्ठा किया, बिल बुक्स ले जाकर पैसा उगाहा लेकिन सही अधिकारी के पास पैसा पहुंचाया ही नहीं। किसके पास कितना पैसा है और उसका व्यय किस प्रकार किया जा रहा है इसका कोई हिसाब नहीं है। इसलिए मुझे लगता है कि इन बातों के बारे में पहले जानकारी होनी चाहिए।

आज पहाड़ों में भी चींटियां छेद कर रही हैं और आगे भी करती रहेंगी इसका आप लोगों को अहसास नहीं है। आज आपका ये हाल है, आगे आपका क्या होगा? आपका भविष्य क्या है? अपना भविष्य क्या है, यह आप लोग जानते नहीं हैं। आपके भविष्य के बारे में मुझे थोड़ा अंदाजा है, लेकिन आज मैं उस बारे में बोलने वाला नहीं हूं। कोई ऐसा दिन आएगा जब मैं आप सब लोगों को इकठ्ठा कर आगे क्या होने वाला है और उसके लिए क्या किया जाना चाहिए इसके बारे में विस्तार में बताऊंगा। कम से कम आज मैं इस बारे में कुछ बोलना नहीं चाहता। हालांकि, अपने भविष्य की ओर आप ध्यान दें।

अपने सार्वजनिक कार्य के लिए ऐसे किसी हॉल की जरूरत है, जिसके किराए से हमारा थोड़ा-बहुत सार्वजनिक खर्च पूरा होता रहेगा। इस मद में पैसों की बेहद जरूरत है। आपने 87 हजार रुपये जोड़े लेकिन मैंने एक लाख से अधिक इकठ्ठा किए हैं। अभी हमें 25 हजार और रुपयों की जरूरत है। यह रकम जोड़ने के लिए आप जगह-जगह चाल कमेटियों की स्थापना कीजिए। जिन पर रसीद बुक या उससे मिले पैसे बाकी हों उनसे मिल कर, उनके पीछे पड़ कर उनसे सार्वजनिक कार्य का पैसा उगाहें और सही व्यक्ति के पास वह पैसा पहुंचा दें। सार्वजनिक काम करते हुए, पैसा लेते या देते हुए इस बात का खयाल जरूर रखें कि कहीं कोई हमारे साथ धोखा तो नहीं कर रहा? इस तरह

---

3 जुलाई, 1954

का पैसा उगाहने और उसे सही जगह पहुंचाने को आप अपना कर्तव्य मानिए। क्योंकि आजकल समाज का पैसा खा जाने का चलन बहुत बढ़ा है और कम से कम मैं इस बात से बहुत ही ऊब चुका हूं। ऐसे लोगों को समाज में से ढूंढ कर निकालना चाहिए और समाज को कौन किस तरह धोखा दे रहा है इस बात पर पैनी नजर रखनी चाहिए।

समाज के लिए काम करने वाले लोग बहुत कम होते हैं जो समाज के प्रति अपनी भी कोई जिम्मेदारी है समाज का कोई ऋण हमें लौटाना है यह जो लोग सोचते और कार्य करते वे कम ही लोग होते हैं। ऐसे काम के बारे में बहुत कम लोगों को आस लगी रहती है। सभी अगर कार्यकर्ता होते तो इमारत फंड के लिए इतनी मेहनत नहीं करनी पड़ती। सामाजिक कार्य के बारे में बहुत कम लोगों को लगन होती है। अन्य सभी लोग गोबर के कीड़े की तरह अपने ही आनंद में मगन रहते हैं। इसलिए ऐसे लोगों को उनके गोबर के कीड़े की तरह जीने का अहसास दिलाने को हर सुशिक्षित आदमी अपना कर्तव्य माने।

कम से कम आज समाज के सामने ऐसी स्थितियां आन खड़ी हैं कि कोई काम कर रहा है और कोई मेवा खा रहा है। खेत की रक्षा के लिए हमने सुरक्षा का विशेष प्रबंध तो किया, लेकिन जिनके हाथ सुरक्षा का प्रबंध सौंपा आज वे ही डाके डालने लगे हैं। इसे कहें तो क्या कहें। ऐसे कठिन हालात का अहसास हर किसी को होना जरुरी है।

समाज को इस प्रकार धोखा देने वाले नेता पर कड़ी नजर रखनी चाहिए। उनका षड्यंत्र समय पर ही उजागर करें और जनता को जागृत करें। उसकी सामाजिक गतिविधियों पर ध्यान रखा जाना चाहिए। संक्षेप में कहना हो तो, आज से तीन-चार महीनों के बाद हीरक महोत्सव के लिए मैं यहां दोबारा आने वाला हूं। इसलिए, इमारत फंड जितना जल्दी इकठ्ठा किया जाए उतना ही अच्छा है। इस काम में देरी करने का कोई मतलब मुझे नजर नहीं आ रहा। इसीलिए कहता हूं कि जगह-जगह चाल कमेटियां बना कर उनके जरिए पैसा इकठ्ठा कीजिए। जिनके पास इकठ्ठे किए हुए पैसे और रसीद बची हों उनसे वे सब ले आइए। मैं आपके साथ हूं ही।

323

आपकी कुटिया बचेगी तो लोग शरण में आएंगे

1954 में 26-27 अक्तूबर, को मुंबई प्रदेश अखिल भारतीय शेड्यूल्ड कास्ट्स् फेडश्रेष्ठान का अधिवेशन मुंबई के पुरंदरे स्डेडियम पर आयोजित किया गया था। अधिवेशन के पहले ही दिन डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने अधिवेशन में उपस्थित रह कर कार्यकर्ताओं का मार्गदर्शन किया। उसी दिन आयु. आर. डी. भंडारे ने डॉ. बाबासाहेब की अनुमति से 'शेड्यूल्ड कास्ट्स् फेडरेशन की कार्यकारिणी और शाखाओं का विसर्जन कर नए चुनाव लिए जाएं' यह प्रस्ताव रखा और उस प्रस्ताव का पुणे के आयु. आर. आर. भोले ने समर्थन किया। तालियों की गड़गड़ाहट में यह प्रस्ताव भारी बहुमत से पारित हुआ। इस प्रस्ताव के कारण फेडरेशन के कार्यकर्ताओं का गुस्सा कुछ हद तक कम हुआ इसमें दो राय नहीं। परिषद के विद्यमान पदाधिकारियों की नियुक्ति 1945 में हुई थी। तब से वे अपने पद पर कुंडली मार कर बैठे थे, जिस कारण अन्य कार्यकर्ताओं में बेचैनी फैली हुई थी। छह माह के भीतर नए चुनाव होने वाले हैं।

पहले दिन यानी 26 अक्तूबर, 1954 को परिषद का मार्गदर्शन करते हुए डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने कहा-

मित्रों,

जिस कारण से इस सभा का आयोजन किया जाना था, वह बात शायद इस सभा के व्यवस्थापकों को समझ नहीं आयी। अगर वे समझते तो आज जो यह सभा खुले में होने के बजाय कहीं गुप्त स्थान पर इसका आयोजन वे करते। मैं कार्यकर्ताओं को कई बातें बताना चाहता हूं लेकिन वे गुप्त तरीके से बताना चाहता हूं। अब जो मुझे कहना है वह मैं साफ तौर से नहीं कहूंगा। उसका केवल अभिप्राय ही बताऊंगा। शेड्यूल्ड कास्ट्स् फेडरेशन में जो गंदगी मची है उसे उघाड़ने का मेरा मन था। महापालिका की नालियां जब भर जाती हैं उसी प्रकार शेड्यूल्ड कास्ट्स् फेडरेशन में गंदगी मची हुई है। गुप्त तरीके से इस गंदगी को हटाना चाहिए था। शेड्यूल्ड कास्ट्स् फेडरेशन की राजनीति को 1919 से शुरुआत हुई। उससे पहले भी अस्पृश्य आंदोलन का काम चल रहा था। यह कोई आज-कल की संस्था नहीं है। यह काँग्रेस जितनी ही नहीं, उससे भी पुरानी संस्था है। कहा जा सकता है कि गांधीजी से काँग्रेस की शुरुआत हुई। साल भी 1919 ही था। दुर्भाग्य की बात यह थी कि उसी साल से हमें काँग्रेस का विरोध करना पड़ा है। तब

जनता : 6 नवंबर, 1954

काँग्रेस का विरोध करना ही हमारा काम तय हुआ था। उन्हीं के कारण हमारे अधिकारों पर गाज गिर रही थी। तब से शेड्यूल्ड कास्टस् फेडरेशन टिका हुआ है। शेड्यूल्ड कास्टस् फेडरेशन पत्थर का लेकिन मजबूत किला है। काँग्रेस का किला पैसों पर खड़ा है। बालगंगाधर तिलक फंड और गुजराती बंधुओं की थैलियों की मदद पर यह किला खड़ा है। लेकिन शेड्यूल्ड कास्टस् फेडरेशन का किला अस्पृश्य जनता की भावनाओं पर खड़ा है। मेरी इच्छा है कि यह किला टूटना नहीं चाहिए। पिछले दस सालों से शेड्यूल्ड कास्टस् फेडरेशन की ओर मेरा ध्यान नहीं रहा। 10 साल की इस गैरहाजिरी में शेड्यूल्ड कास्टस् फेडरेशन में बहुत अधिक मतभेद निर्माण हुए हैं। इससे पूर्व इस तरह के मतभेद नहीं थे। हर आदमी द्वारा फेडश्रेष्ठान में गुटबाजी की जा रही है। हरेक ने अपने अपने छोटे-छोटे गुट बना लिए हैं। हर गुट दूसरे का वर्चस्व बरदाश्त नहीं कर पाता। इसीलिए मैं कहता हूं कि हमारे लोग अभी राजनीति में मंजे नहीं हैं। राजनीति क्या है यह वे ठीक ढंग से नहीं जानते। हमारे समाज में आपसी मतभेद बहुत ज्यादा होते हैं। वे तुरंत खत्म भी नहीं होते। मतभेदों के पेड़ उनके पेटों में बढ़ने लगते हैं। उनके मतभेद उनके बच्चों के पेट में भी बढ़ने लगते हैं। इस प्रकार मतभेद बढ़ते ही जाते हैं। हम लोगों में यह गुणधर्म बड़े पैमाने पर है। काँग्रेस जैसी पार्टी में भी मतभेद हैं। साथ ही उनके पास कुछ अच्छे गुण भी हैं यह अनुभव के कारण कहना पड़ता है। उनका एक गुण बहुत महत्वपूर्ण है और वह है बहुमत द्वारा जो बात तय होती है उसे वे मानते हैं। उस बात के विरोधी भी फिर उस बात का समर्थन करने लगते हैं। राजनीति में यह गुण बहुत आवश्यक है। मेरी राय में, अगर काम चल निकले तो ही मैं संस्था में रहूंगा, यह मानसिकता बहुत बुरी है। हम करे सो कायदा वाली मानसिकता नहीं होनी चाहिए।

संस्था में बड़ा कौन? डॉ. अम्बेडकर के बाद कौन? आदि मतभेद बहुत बढ़ चुके हैं। दलित फेडरेशन की सभाएं नहीं होतीं। इलेक्शन नहीं होते, आदि बातें मैं हमेशा कार्यकर्ताओं से सुनता रहता हूं। यह सब सच होने के बावजूद क्या, उन्होंने इस बारे में कुछ सोचा है? इस बात के लिए जजरी पैसा हमारे पास नहीं है। इसलिए परिषद का आयोजन करना, इलेक्शन करना हमारे लिए संभव नहीं है। आयु. भोले अगर हमें रुपया मुहैय्या कराएंगे तो सालभर में क्यों, हम हर छह माह में परिषदों का आयोजन किया करेंगे। उसके लिए पैसे देकर भोले पुणे में बैठक बुलाएं। काँग्रेस जैसी संस्था के पास पैसा है। हमारे पास पैसों की कमी है। कुछ लोगों का कहना है कि हमें सरकार की आलोचना नहीं करनी चाहिए। उनको सहयोग देना चाहिए। हमें अपने हक हासिल करने हैं। यही हमारा पहला काम है। वे अगर हमारी झोली में नहीं आते हैं तो हम आलोचना करेंगे ही। सरकार की आलोचना ही नहीं करनी हो तो दलित फेडरेशन की आवश्यकता भी होगी क्या ? सरकार क्या चीज है, भगवान भी अगर हमारे सामने आएं तो भी हम उसपर टीका-टिप्पणी करेंगे ही। जिन्हें यह बात पसंद नहीं है वे इत्मीनान से फेडरेशन

छोड़कर जा सकते हैं। क्या हमने सरकार से सहयोग नहीं किया ? मैं क्या चार सालों तक उनके साथ नहीं था? हम समय-समय पर उन्हें सहयोग देते आए हैं। सरकार अगर हमारे लिए कुछ नहीं करने वाली है तो हम हमेशा उसकी आलोचना करते रहेंगे। हम क्यों चुप रहें?

लोग कहते हैं कि शे. का. फेडरेशन आक्रोश व्यक्त नहीं करता। हमला यानी क्या? आक्रोश व्यक्त की राजनीति क्या हम निभा पाएंगे? हमने अगर आक्रोश व्यक्त किया तो उससे आपको ही दिक्कतें आने वाली हैं। हम अगर कारागार में जाकर बैठे तो लोग आपको ही परेशान करते रहेंगे। अम्बेडकर की सहायता करते हो बच्चू? तुम्हें देख लेंगे, कह कर आपको परेशान करने लगेंगे। इससे बेहतर है कि आप कष्ट करें। कष्ट करना मेरा तो धर्म ही है। मुझे अभी तक आराम नहीं मिला है और मैं आराम करता भी नहीं। दूसरी बात यह, कि अपना मन साफ होना चाहिए। उससे आपसी मतभेद खत्म होते हैं। शे. का. फेडरेशन में प्रमुख विवाद इस बात को लेकर है कि अम्बेडकर के बाद कौन? मैं इसका मतलब ही समझ नहीं पाया हूं। मेरे मरने से पहले ही यह विवाद पैदा हुआ है। इसलिए मेरे सामने अब यह सवाल पैदा हुआ है कि मुझे जल्द ही मर जाना चाहिए कि मुझे जिंदा रहना चाहिए? यह विवाद तो मिटाना ही होगा। मैंने इसका एक इलाज ढूंढ़ निकाला है। इस विवाद को मिटाने के लिए शे. का. फेडरेशन के नेताओं और सदस्यों के चुनाव होने चाहिए। तभी यह विवाद मिटेगा। जो काम करता है वही सच्चा नेता होता है। सच्चा नेता कौन है यह लोग जानते हैं। इस पद्धति पर अमल करने के लिए हमें चार आने का चंदा नहीं चाहिए। शे. का. फेडरेशन में पैसा खाने की मनोवृत्ति बहुत पनपी है। इसीलिए, काँग्रेस की तरह हमें चार आने का बंधन नहीं चाहिए। हर अस्पृश्य समाज का स्त्री-पुरुष, बच्चा शे. का. फेडरेशन का सदस्य है। वह कहे या न कहे हम ऐसा ही मानते हैं। इस प्रकार हर गांव के लोग अपने गांव से पांच लोगों को चुनें। इस प्रकार सभी तहसील के गांवों के पांच के हिसाब से लोग अपने अध्यक्ष, सचिव आदि का चुनाव करें। इससे शिकायत का मौका ही नहीं मिलेगा। यह चुनाव सब पर लागू रहेगा। जितना पैसा इकठ्ठा होगा उसे बैंक में रखा जाएगा।

लोगों के लिए जो कष्ट उठाते हैं वही नेता बनते हैं। लोग यह बात जान जाते हैं, इसलिए काम करना होगा। मैं अब राजनीति से बाहर निकलने वाला हूं। मैं अब केवल सलाह-मशविरा देने वाला हूं। इसके लिए मैं हमेशा तैयार हूं। मेरी इच्छा है कि मैं भले शेड्यूल्ड कास्टस् फेडरेशन से बाहर निकला तब भी फेडरेशन को जिंदा रखना होगा। यह नहीं समझना कि इलेक्शन में आपकी पूछ नहीं है। ऐसा भी नहीं कि हम इलेक्शन जीत ही लेंगे। किदवई मेरा दोस्त था। वह काँग्रेस का प्राण था। उसके बाद काँग्रेस अनाथ हो गई है। उनकी ही तरह जवाहरलाल नेहरू भी काँग्रेस के प्राण हैं। उनके बाद काँग्रेस

कुछ नहीं। जनता आपके ही पीछे आने वाली है। बाकी लोगों के घर टूटे तो भी अपनी कुटिया साबूत रखिए। लोग आपकी कुटिया में ही आश्रय पाने के लिए आएंगे। आपकी कुटिया अगर बनी रही तभी आपकी जय होगी। शेड्यूल्ड कास्टस् फेडरेशन का किला अस्पृश्य जनता की भावनाओं के बल पर खड़ा है। उसे टूटने नहीं देना चाहिए। यह समाज ब्राह्मणेतर दलों के साथ सहयोग कर रहा था। हम ज्योतिबा के शिष्य हैं। उनसे हमने सहयोग किया। लेकिन आगे चल कर यह समाज कॉँग्रेस से जाकर मिला। उसके बाद उनकी मति भ्रष्ट हुई। अपने उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए हमें दूसरों से संबंध रखना होगा। किससे संबंध रखने हैं यह मैं बाद में बताने वाला हूं। जो लोग हमारा भला करेंगे वे हमारे मित्र होंगे। राजनीति में झगड़े होते हैं उन्हें भूल जाने की आदत डालनी चाहिए। वरना इन झगड़ों के पेड़ मन में उगते हैं। इस प्रकार की मानसिकता अच्छी नहीं। मेरा हृदय साफ है। मेरे भी लोगों से मतभेद होते हैं, लेकिन मैं जल्दी उन्हें भूल जाता हूं। मनुष्य का मन फूल की तरह साफ होना चाहिए। मारवाड़ी की मूंछ की तरह हमें अपनी नीति रखनी होगी। अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए कभी ऊपर तो कभी नीचे इस प्रकार मारवाड़ी की मूंछ की स्थिति होती है। उसी प्रकार हमें अपनी नीति बनानी होगी। इस बात को ध्यान में रखें। हमेशा टेढ़ी बात करना या किसी को बार-बार दुख पहुंचना, राजनीति में नहीं चल सकता। इतना कह कर मैं आपसे विदा लेता हूं।

324

तीन गुरु और तीन उपास्य आदर्शों की प्रेरणा से मेरा जीवन बना है

गुरुवार, दिनांक 28 अक्तूबर, 1954 को डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को उनके हीरक महोत्सव के उपलक्ष्य में मुंबई के पुरंदरे स्टेडियम में आयोजित भव्य, अपूर्व समारोह में 1लाख 18 हजार रुपयों की थैली अर्पण की गई। यह सारा पैसा डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर अपने स्वास्थ्य के लिए खर्च करें यह विनती हीरक महोत्सव समिति के सचिव आयु. शां. अ. उपशाम और आयु. आर. डी. भंडारे ने किया। उनकी इस विनति का सभा में उपस्थित 30 हजार दर्शकों ने तालियों के साथ स्वागत किया। लेकिन, ''अपना पसीना बहा कर, मेहनत से कमाया हुआ गरीब जनता का पैसा मेरे जैसे बैरिस्टर को स्वीकारना बेशर्मी है'', कह कर डॉ. बाबासाहेब ने वह सारी राशि मुंबई में बनाई जा रही इमारत के फंड में देने की घोषणा कर दी।

अभूतपूर्ण स्वागत

एक-सौ पचास से भी अधिक संस्थाओं की ओर से डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को फूलमालाएं और गुलदस्ते अर्पण किए गए। उनके साथ माईसाहब अम्बेडकर भी थीं। अध्यक्ष थे आयु. आर. डी. भंडारे सिद्धार्थ कॉलेज के प्रिंसिपाल आयु. पाटणकर, प्रो. वी. जी. राव, रा. ब. बोले, आयु. दादासाहब गायकवाड़, आयु. आर. आर. भोले, 'जनता' के संपादक आयु. यशवंतराव आंबेडकर, प्रो. बोराले, आयु. अनंत हरी गद्रे, आयु. ब. ह. वराले, आयु. डी. जी. जाधव, शांताबाई दाणी आदि लोग वहां उपस्थित थे।

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने अपने भाषण में कहा-

बहनों और भाइयों,

आपने जो यह एक लाख अठ्ठारह हजार रुपयों की राशि दी है, वह बहुत ही हल्की है। (हंसी) मुझे थोड़ा शक हुआ। इसलिए यह इतनी बडी राशि की घोषणा मैनेजिंग ट्रस्टी ने की है इसीलिए उसकी जिम्मेदारी मैं उन्हीं को सौंपता हूं।

सच पूछो तो मेरा हीरक महोत्सव मना कर उसी के उपलक्ष्य में यह राशि दी गई है ऐसा अभी-अभी बताया गया है। हीरक महोत्सव केवल निमित्त हुआ है। ये पैसे आपके ही हैं और एक हॉल बनाने के लिए जमा किए गए हैं। उसे मूर्त रूप देने के लिए केवल मैंने सूचना दी थी कि वे मुझे अपनी उम्र के साठवें साल में दिए जाएं। कई साल पहले

जनता, 6 नवंबर, 1954

इस फंड को इकट्ठा करने की शुरुआत हुई थी। 1942 में मेरी एक्जीक्यूटीव कौंसिल में नियुक्ति हुई तो मुझे मुंबई छोड़ कर जाना पड़ा। उस समय रुपया इकट्ठा करने के काम में थोड़ी सुस्ती आ गई थी। 1952 में लौटने के बाद एक बार फिर मैंने वह काम हाथ में लिया। लेकिन दुर्भाग्य से इमारत के लिए जो जगह खरीदी थी उसमें किराएदार रखे जाने के कारण इमारत का काम शुरू नहीं किया जा पा रहा था। किराएदारों को निकालना मुश्किल हो गया था। बताने में अब कोई हर्ज नहीं है कि मैंने थोड़ा पद का इस्तेमाल कर मुंबई का कानून बदलवा लिया है। उस कानून के कारण अब किराएदार निकल जाएंगे और इमारत का कामकाज शुरू किया जा सकेगा। मैंने जो किया वह जनता के लिए किया और यह राशि जो इकठ्ठा हुई है वह भी आपकी ही है। अपने समाज के इन गरीब महिला और पुरुषों ने पसीना बहाकर कमाए हुए, उनकी मेहनत के ये पैसे हैं। और मैं बैरिस्टर हूं। एक्जीक्यूटिव कौंसिल का सदस्य था। स्वास्थ्य के कारण गरीब जनता का पैसा लेना बेशर्मी होगी। इसलिए यह सारा पैसा, जैसा कि मैंने पहले ही बताया है, इमारत बनाने के काम में खर्च होगा। मैं यहां घोषणा करता हूं कि मुझे इसमें से एक पैसा भी नहीं चाहिए। (तालियों का घोष)

मित्रों, आज यहां बैठा हूं तो मेरे जीवन में अब तक जो घटनाएं घटी हैं वे सभी फिल्म की तरह आंखों के सामने आकर खड़ी हैं। मैं कहां पैदा हुआ, मेरे पिताजी मुझे कहां-कहां लेकर गए, मेरे साथ क्या-क्या हुआ यह सब कुछ मेरी आंखों के आगे खड़ा हुआ है। लेकिन मुझे यहां एक बात बतानी है और वह यह कि मेरी उम्र के 60 साल पूरे हुए इसका क्या सबूत है? (हंसी) मैं किस साल पैदा हुआ इसका कोई रिकार्ड नहीं है। क्योंकि मेरे पिताजी सिक्स पायोनियर बटालियन में थे। बाद में वे सेवन पायोनियर बटालियन में गए। तब उन्हें मेरा अपने बेटे के रूप में कोई महत्व महसूस नहीं हुआ था। उन्होंने मेरे पैदा होने की तारीख लिख कर नहीं रखी। कितनी छोटी बात है ये। लेकिन वे नहीं कर पाए। आज जो पैदा होने की तारीख है वही सच है ऐसा कोई कह नहीं सकता।

हालांकि मेरे बारे में दो-तीन बातें साफ तौर पर कही जा सकती हैं। राजपूताने में महू में मेरा जन्म हुआ। इसलिए मेरा कोकण के साथ कोई रिश्ता नहीं रहा। पिताजी कोंकण के ही हैं। लेकिन नौकरी के कारण उन्हें राजपूताने में जाना पड़ा। इस कारण मेरा जन्म महू में हुआ यह बात पक्की है। दूसरी बात कि मेरा जन्म ठीक बारह बजे हुआ। उस वक्त मेरे पिताजी नौकरी पर थे और मेरी मां की जच्चगी चल रही थी। मेरा पिंड बहुत बड़ा था। कहते हैं मेरे पैदा होते समय मेरी मां को बहुत तकलीफ हुई। मेरे पिताजी को चिंता थी। लेकिन आखिर एक दाई ने आकर उनसे कहा कि, अंदर जाओ, बेटा हुआ है।

तीसरी बात यह कि, मैं मूल नक्षत्र में पैदा हुआ था। ज्योतिषि ने बताया कि यह बच्चा बहुत बुरा है। इसकी मां जल्दी मरेगी। इस कारण अन्य भाई-बहन मुझसे नफरत

करने लगे। वे कहते, यह बच्चा मां के लिए बुरा है। आखिर हमारी मां जल्द ही गुजर गई। मेरे जन्म के बारे में इस प्रकार तीन बातें बताई जा सकती हैं।

मेरे बचपन के बारे में खुद मुझे बड़ा आश्चर्य महसूस होता है। मेरे 12-13 साल का होने तक सभी लोगों को पूरे यकीन के साथ लगता था कि यह बच्चा अपने कुल के लिए कलंक साबित होगा। यह कुछ नहीं कर पाएगा। क्योंकि, मेरे बारह-तेरह साल के होने तक लंगोट के अलावा कोई कपड़ा नहीं पहनता था। (हंसी) साथ ही हर घर के दरवाजे पर जाकर पूछता था कि - क्या आपके घर की लकड़ियां तोड़नी हैं? पहले शिक्षा में मेरी कोई दिलचस्पी नहीं थी। मां के गुजर जाने के बाद मेरी बुआ ने मेरा लालन-पालन किया। मुझे लगता था, पढ़ कर करूंगा क्या? छह महीनों तक मैंने माली का व्यवसाय किया। मिलिट्री कैंप में बाग हुआ करते थे। वहां के माली के बेटे से संगत की। मिट्टी-पत्थर उठाए। जमीन साफ की। नल से बाग को पानी देना था, लेकिन वह मुझसे नहीं हुआ। तब मैंने घर के ऊपर लगे सारी खपरैलें निकालीं और उनसे नालियां बना दीं। अब लगता है कि क्या थी मेरी जिंदगी भी।

जब हम सातारा में थे तब अन्य सुबेदार नाईक भी थे। उनके घरों के आगे एक कूड़ेदान था। गोबर-कूड़ा उसमें पड़ा रहता। उस कूडेदान के किनारे एक गूलर का पेड़ था। मैं पेड़ पर चढ़ने में एकदम निपुण था। बंदर भी शायद पेड़ पर इतनी जल्दी नहीं चढ़ पाते होंगे। अब मेरे पैर कमजोर हो गए हैं। मैं उस पेड़ पर चढ़ता और कंबल बिछा कर सो जाता। मन भर जाता तो ऊपर से ही कूडेदान में बिखरी राख में छलांग लगा कर उतरता। उस वक्त सातारा में प्लेग फैला हुआ था। लोग कहते कि कई लोग प्लेग से मरे लेकिन इसको पता नहीं क्यों प्लेग नहीं होता। ऐसा मेरा हाल था। एक बार कसाई तीन रुपयों में बकरी देने के लिए तैयार नहीं था। तब हमने वसूली की और तीन रुपयों में दो बकरियां लेकर आए। तब हम लंबे बांस लेकर बकरियों को चारा खिलाते थे। किसी ने बताया कि ये बकरियां सींगवाली हैं, सींगवाली बकरियां अच्छी नहीं होतीं, बिना सींग वाली बकरियां अच्छी होती हैं। मेरा बचपन ऐसा ही बीता। उस समय इस व्यवस्था में अंधविश्वास कूट-कूटकर भरा पड़ा था।

घर में कई लोग मेरे लाड़ करते। मेरी बुवा का मैं बहुत लाला था। उसने सबको हड़का कर रखा था। 'बिन मां का बच्चा है, उसे डराया धमकाया मत करो' इसीलिए, मैंने मिली आजादी का पूरा फायदा उठाया। सबको यही लगता था कि इस बच्चे के हाथों कुछ अच्छा नहीं होने वाला। आज अगर मेरा यह सब देखने के लिए वे यहाँ होते तो कितना अच्छा होता। इस प्रकार मेरा बचपन गुजरा। आप अब समझे होंगे कि फिर मेरे जीवन में कितनी क्रांति आई। मैं अगर चरवाहा बनता या मेहनत-मजदूरी का काम करता तो आज इस पद तक नहीं पहुंच पाता। मेरे पिताजी हमेशा मुझसे कहा करते थे।

अच्छा काम सीखो। इन सारी यादों को बटोर कर एक चरित्र लिखने का मेरा खयाल है। (तालियों की गड़गड़ाहट) लेकिन चरित्र नहीं एक छोटी-सी किताब लिख रहा हूं, 'माझं बालपण' (मेरा बचपन), उसमें ये सारी बातें मैं विस्तार से लिखूंगा।

ऐसी कोई बात नहीं कि मुझमें कुछ गुण पैदाइशी थे और इसीलिए मैं इस पद तक पहुंच पाया। मेरा जीवन जिस प्रकार चल रहा था उसी प्रकार अगर चलने दिया होता तो मैं एक नीतिपरक आदमी बनता। लेकिन मुझे अपनी याद थी। मेरी जिंदगी में जो मोड़ आया वह क्यों आया, कैसे आया इसकी वजह मैं बताने वाला हूं।

मेरे तीन गुरू हैं। हरेक के गुरु तो होते ही हैं। मेरे भी हैं। मैं कोई संन्यासी अथवा बैरागी नहीं हूं। मेरे गुरु हैं। मेरे पहले आदर्श हैं बुद्ध। मेरी उम्र दस-बारह साल की हुई होगी उस समय मेरे पिताजी कबीरपंथी साधु थे। मुझे यह तभी से याद है। मेरे पिताजी का घर धर्मासन कहा जा सकता है। विद्यासन भी कहा जा सकता है। मेरे पिताजी विद्या के भक्त थे और धर्म के चहेते। मेरे बचपन में रामायण-महाभारत आदि सभी ग्रंथ उन्होंने मुझसे रटवा लिए थे। उनके अभ्यास करवाते थे। रामायण-महाभारत पढ़ कर मेरे मन पर बहुत गहरा असर हुआ। मेरे पिताजी मुझसे कहते, 'हम गरीब हैं इसलिए डरने की कोई बात नहीं है। तुम विद्वान जरूर बनोगे, क्यों नहीं बनोगे?' एक बार मैंने कोई परीक्षा पास की थी। उस वक्त चॉल के लोगों ने मेरे पिताजी की इच्छा न होते हुए भी केलुस्कर की मदद लेकर मेरा सम्मान करने का कार्यक्रम रखने की सोची। मेरे पिताजी कहते, नहीं कराना है सत्कार। बच्चों का सत्कार करो तो उन्हें लगता है कि वे नेता बन गए हैं। (हंसी और तालियां) लेकिन तब मेरा सत्कार हुआ। और दादा केलुस्कर ने मुझे बुद्ध के चरित्र की एक किताब भेंट में दी। उस चरित्र को पढ़ने के बाद मुझमें एक अलग ही प्रकाश ने जन्म लिया। हनुमान, सीता, राम वनवास गए। धोबी के कहने पर सीता का त्याग किया, कृष्ण की सोला हजार पत्नियां आदि बातें कुछ भयंकर ही लगीं। ये बातें फिर मेरे मन में जड़ें ही नहीं पकड़ पाईं। लेकिन बुद्ध धर्म के बारे में अध्ययन के बाद आज तक मेरे मन पर पकड़ है। मुझे पक्के तौर पर लगने लगा है कि दुनिया का कल्याण केवल बुद्ध धर्म ही कर पाएगा। हिंदू लोगों को अगर अपना राष्ट्र जिंदा रखना हो तो बौद्ध धर्म को ही स्वीकारना होगा यह मैं हमेशा कहता आया हूं।

मेरे दूसरे आदर्श हैं कबीर। मेरे पिताजी कबीर पंथी थे। सो कबीर के जीवन और दर्शन का मुझ पर बड़ा गहरा असर हुआ। मेरी राय में कबीर को बुद्ध के दर्शन का सही मतलब समझ आया था। मैंने किसी को बड़ा नहीं कहा है। गांधी को मैंने कभी महात्मा नहीं कहा। गांधी हमेशा छल-कपट में विश्वास करते थे। क्योंकि कबीर ने कहा है - मनुष्य होना कठिन है! तो साधु क्या बनें! जो इंसान नहीं बना वह महात्मा कैसे बनेगा?

और मेरे तीसरे आदर्श हैं ज्योतिबा फुले। ब्राह्मणेतरों के सच्चे गुरु वही हैं। दर्जी,

कुम्हार, नाई, कुर्मी, माली, मछुआरे, मानंग, चमारों को इंसानियत के पाठ उन्होंने ही पढ़ाए हैं। पुरानी राजनीति में हम ज्योतिबा की राह से ही जा रहे थे। आगे चल कर मराठा हमसे अलग हुए। कोई काँग्रेस में जूठन खाने गया। उन्हीं में से हमारे रा. ब. बोले हिंदू महासभा में गए। वह यहां उपस्थित हैं ही। कोई कहीं भी जाए, लेकिन हम ज्योतिबा की राह पर ही चलेंगे। साथ में कार्ल मार्क्स को लेंगे या किसी और को लेकिन ज्योतिबा का मार्ग नहीं छोडेंगे। इस प्रकार ये मेरे तीन जीवन आदर्शों के हैं। इनकी सीख से मेरा जीवन बना है।

इनके अलावा मेरे तीन उपास्य प्रेरणा भी हैं। किसी के मरीआई, खंडोबा जैसे भगवान होते हैं मेरे भी तीन भगवान हैं। मेरी पहली प्रेरणा है विद्या। विद्या के बगैर इंसान को शांति या इंसानियत मिलना संभव नहीं है। विद्या सभी को मिलनी चाहिए। वह महासागर की तरह है। बुद्ध ने एक बार कहा है कि बुद्‌ध धम्म शुद्ध धर्म है। यहां भेदभाव नहीं है। श्रमण, भिक्षु, ब्राह्मण, भंगी सब एक हैं। मेरे संघ में आने से पूर्व उनका जो भी नाम रहा हो। सब एक हैं। नाम चाहे जो हो – नदी, नाला, यमुना हो, ब्रह्मपुत्रा हो, गंगा हो, गोदावरी हो, सभी नदियां अपने उदगम से निकल कर सागर में जाकर मिलीं। सबका पानी जब मिल गया तब यह बता नहीं पाएंगे कि यह गंगा का पानी है या गोदावरी का। मेरा संघ महासागर की तरह है। यहां जाति–पांति नहीं। आप सभी एक हैं।

आपकी विद्या पाने की चाह है तो उसे सफल कीजिए। जिस प्रकार इंसान को अगर जिंदा रहना हो तो उसे अनाज की जरूरत होती है उसी प्रकार उसे विद्या की जरूरत होती है। ज्ञान के बगैर वह क्या कर सकता है? ब्रह्मदेश में 90 प्रतिशत लोग सुशिक्षित हैं। आज भारत में 90 प्रतिशत लोग निरक्षर हैं। ब्राह्मणों ने हमें विद्या नहीं दी, इसीलिए ऐसा हुआ है। धर्म के कानून ने हमारी शिक्षा की राह में रोड़े अटकाए। हमारी विद्या छीन ली। हमारे लोग समझते कि पत्थर ही विद्या है, इसीलिए हमारी धार्मिक मान्यताएं नीचे लुढ़कती गईं। पत्थरों की पूजा करने वाले भक्त हममें हर जगह हैं। तुकाराम ने एक जगह कहा है इसका अर्थ यह हुआ कि अगर भगवान को गंगा उपवास करके **S\kC 354**——————————इसी से संतान हुआ करती तो उसे शादी करके या पती की क्या जरूरत ही नहीं पड़ती। 'नवस सायासे कन्या–पुत्र होती, तरी कासया करणे लागे पती! इसकी वजह है। उनके पास विद्या नहीं थी। विद्या बहुत बड़ी चीज है। मुझे विद्या के प्रति पागलपन की हद तक लगाव है। ब्राह्मणों के घरों में नहीं होंगी उतनी किताबें आज दिल्ली के मेरे घर में हैं। मेरे पास कुल 32,000 किताबें हैं। किसी ब्राह्मण के पास इतनी किताबें? दिखा दें वो। ठाकुर एंड कंपनी के हजारों रुपयों की उधारी के बिल मुझ पर हैं। उधार का माल मुझे कहीं भी मिलता है। जहां मेरी उधारी बाकी रह जाती है वहां मैं अपनी गाड़ी ले जाकर खड़ी कर देता हूं। इतना मुझे विद्या के बारे में पागलपन है। इस प्रकार हर किसी को विद्या से प्रेम होना चाहिए। किसी की रांड होती है। वह दूसरे गांव में रहती है। मान लीजिए रात बारह बजे उसे उसकी

याद आती है। फिर वह रात में ही उठ कर चल देता है। न शमशान देखता है न और कुछ। बस निकल पड़ता है। उसके घर पहुंचता है। इतना प्रेम जब पुस्तकों से होगा तभी वह विद्या का सच्चा पुजारी बनेगा। मैं 24 घंटे विद्या की पूजा करता रहता हूं।

मेरी दूसरी प्रेरणा है – स्वाभिमान। मैंने किसी से कोई याचना नहीं की। मेरा लक्ष्य था कि मेरा पेट तो भरना चाहिए और अपने लोगों की सेवा भी करनी होगी। डॉ. परांजपे की विनती से एक महाविद्यालय में इकॉनॉमिक्स का प्रोफेसर बना। तब उन्होंने मुझसे तेरह भाषण देने के लिए कहा। मैंने कहा केवल चार भाषण दूंगा। ठीक लगे तो रखिए या फिर मेरे लिए अपनी राह खुली है। क्योंकि, मुझे अपने लोगों की सेवा करने के लिए समय की जरूरत थी। पोयबावड़ी के नाके की खोली में मैंने टुकड़ा चावल की रोटी खाई। लेकिन समाज सेवा को छोड़ कर भारी तनख्वाह की राह पर नहीं गया। राह अपने आप बनती चली गई। लोगों ने थैलियां स्वीकार कर घर बनाए। मेरी जानकारी वाले एक नेता से मैंने सुना है कि 47 हजार के प्रॉमिसरी नोट लिख कर दिए और लोगों ने जब लाख रुपयों की थैली अर्पण की तब वह कर्जा लौटाया। मैं ऐसा नहीं करना चाहता। मैं अपना पेट खुद भर कर जो भी समाज की सेवा करनी थी वह की। में नौकरी करना ही नहीं चाहता था। गवर्नर जनरल कोई भी आए, मेरी उससे दोस्ती हुआ करती थी। लेकिन मैंने किसी से मुझे फलां बनाइए, मुझे फलां जगह दीजिए जैसी कोई याचना नहीं की। हां, औरों के लिए मैंने कुछ अर्जियां दी होंगी। लेकिन अपने लिए चिठ्ठी लिखी हो तो कोई दिखा दे। एक्झीक्यूटिव काउंसिलर होने की मेरी बड़ी तीव्र इच्छा थी। वह पूरी हो गई। अब मुझे ना पेंशन, ना तनख्वाह और ना प्रोविडंट फंड। कुछ भी नहीं। अंग्रेजी राज्य में एक बार काउंसेलरशिप ली। एक बार कॉँग्रेस के राज में। लेकिन वहां भी कॉँग्रेस के साथ मेरी नहीं पटी। मैं जज बन सकता था। लेकिन अपने को इस प्रकार फंसा कर करना क्या था? इसलिए, मैं बस यही बताना चाहता हूं कि दीनता नहीं होनी चाहिए। यह मानें कि मैं कुछ हूं। मैं भगवान को भी कमतर आंकता हूं इतना मेरा स्वाभिमान तेजस्वी है। मेरे स्वाभिमान का सामना कौन ईश्वर या देवता है वह भी नहीं कर सकता।

और मेरी तीसरी प्रेरणा है चरित्र। मुझे याद नहीं आता कि कभी मैंने अपनी जिंदगी में किसी के साथ दगाबाजी की हो, किसी को धोखा दिया हो या स्वार्थ के लिए पाप किया हो। इस बारे में मुझे गर्व महसूस होता है। मैं कई बार विलायत गया। लेकिन अब तक मैंने कभी शराब नहीं पी, सिगरेट नहीं पी। मुझे किसी चीज की लत नहीं। किताब और कपड़ा ये दो बातें बहुत प्रिय हैं। चरित्र संवर्धन का गुण मुझमें बड़े पैमाने पर है। यह बताने में मुझे बहुत गर्व महसूस होता है। इस प्रकार मेरे तीन गुरु और तीन प्रेरणा हैं। मैं इन्हीं से बना हूं। इन्हीं की शक्ति से मैं इस पद तक पहुंच सका हूं। मैं केवल कारण हूं। मैं केवल एक पुतला हूं जिनमें इनके कारण जान है। इसीलिए इनका अनुकरण कीजिए। आपने मेरा सम्मान

किया, वह केवल व्यक्ति के लिए न होकर इन तीन उच्च मानवमूल्य के आदर्श के प्रति कृतार्थता के कारण किया यह कह कर मैं इस राशि को स्वीकार कर रहा हूं।

1919 साल से अर्थात् जब गांधी ने कदम रखा तभी से मैं राजनीति में हूं। इसके बावजूद मेरी कभी उनसे बनी नहीं। कई तरह की कोशिश हमने कीं। महाड का पानी का सत्याग्रह, नासिक का मंदिर प्रवेश का सत्याग्रह कई तरह के सत्याग्रह किए हैं। चवदार तालाब का पानी पीन के या कालाराम मंदिर में जाने से हमें अमरत्व नहीं मिलने वाला। वह हमारे अधिकार की लड़ाई मात्र थी। लेकिन किसी ने सहानुभूति नहीं दिखाई। अखबारों में हमारे व्यंग्यचित्र छपा करते थे। हमारे कार्यक्रमों के लिए संवाददाता नहीं आते थे। मैं बहिष्कृत भारत का संपादक था। 1919 से 1942 तक मैं संपादक रहा। एक बार केसरी में विज्ञापन भेजा। साथ में विज्ञापन की फीस के तौर पर 3 रुपयों का मनीऑर्डर भी भेजा। मनीऑर्डर वापस आ गया। जगह नहीं होने के कारण बताया गया था। टाइम्स ऑफ इंडिया को फोन किया। उन्हें लगा, कहां से ये भिखारी लोग परेशान करने आ गए। उन्होंने जवाब ही नहीं दिया। और अब हमेशा पीछे पड़े रहते हैं, रिपोर्ट दीजिए। ऐसे हालात थे। हमारे आंदोलन ने ऐसे-ऐसे दिन देखे हैं। मैं महार लोगों का असल में बहुत ऋणी हूं। महार लोगों के कारण ही मैं यह सब कर पाया। यह मेरा तीस सालों का अनुभव है। महार युद्धवीर हैं, लड़ सकते हैं, त्याग कर सकते हैं। अन्य कोई भी जाति यह नहीं कर पाएगी। इसलिए, मेरी नजर में उनके मेरे ऊपर बहुत उपकार हैं। मैं यहां जातिवाचक उच्चारण कर रहा हूं इसलिए कोई मुझ पर आरोप कर सकता है। लेकिन मुझे अभिमान है कि मैं इस जाति में पैदा हुआ। इस स्थिति में अस्पृश्य समाज पहुंचा इसका बहुत सारा श्रेय आप पागलों की तरह है। महिलाओं का भी इसमें बहुत बड़ा हिस्सा है। 30 साल पहले महिलाएं बेहद और गलिच्छ तरीके से रहा करती थीं। तब महिलाएं मुझे 'बामण है' कहा करती थीं। वे कहतीं 'हमें बामण नहीं बनना'। आज ऐसे हालात नहीं हैं। लेकिन अभी हम शिखर तक नहीं पहुंचे हैं। मध्य पर पहुंचे हैं। ऊपर चढ़ रहे हैं। पैर कब फिसलेगा कह नहीं सकते। अभी संकट की स्थित बदली नहीं है मैं या वह नेता यह झगड़ा अब खत्म करना होगा। सार्वजनिक कार्य में मदद कीजिए। हजारों संस्थाएं दान-धर्म कर जाति का उद्धार करती हैं। कोकणस्थ ब्राह्मण, देशस्थ ब्राह्मण, प्रभू आदि ब्राह्मणों की संस्थाएं हैं। उन्होंने अपने छात्रों को विलायत भेजा है। बड़े पदों पर बैठाया है। इन बातों को ध्यान में रखते हुए महीने का एक रुपया अगर देना तय किया तो साल के अंत तक कितना तो काम हो सकता है। मेरे अब ज्यादा से ज्यादा आठ-दस साल ही बचे हैं। बाबासाहेब हैं, इसलिए हमें कुछ नहीं करना कह कर नहीं चलेगा। मैं अब राजनीति से अलग होने वाला हूं। आपको खुद अपना जीवन उज्जवल बनाना है। त्याग, समर्पण, आदि, बल निःस्वार्थ भाव लगा कर काम कीजिए। मुझे इसी जन्म में आप अपने साथ क्या करते हैं यह देखने दीजिए। मरने के बाद मुझे कैसे पता चलेगा कि आपने अच्छा किया या बुरा किया? मैं आपको सचेत कर यह कह रहा हूं।

325

राष्ट्र की सुरक्षा के लिए जरुरी है हैदराबाद देश की सद्र-राजधानी बने

14 नवंबर, 1954 के दिन दोपहर 12.15 बजे डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर और आयुष्मती माईसाहब अम्बेडकर का हैदराबाद के बेगमपेट हवाई अड्डे पर आगमन हुआ। उनके स्वागत के लिए सिकंदराबाद शे. का. फे. के अध्यक्ष आयु. यादगीरवार, मराठवाड़ा शे. का. फे. के सह सचिव आयु. वी. एल. सुरवसे, बीड़ जिला शे. का. फे. के अध्यक्ष आयु. वी. जे. आरक, औरंगाबाद जिला शे. का. फे. के. सहसचिव आयु. ए. एम. सालवे, औरंगाबाद कॉलेज के रजिस्ट्रार आयु. बी. एच. वराले, हैदराबाद राज्य के अर्थमंत्री श्री विनायकराव विद्यालंकार आदि सज्जन उपस्थित थे।

शुरुआत में शे. का. ट्र. फं. होस्टेल के छात्र-छात्राओं ने और दिवंगत व्यंकटराव होस्टेल के छात्रों ने डॉ. बाबासाहेब और माईसाहब को फूलमालाएं अर्पण कीं। उपस्थित जनसमुदाय ने डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर की जयश, अम्बेडकर जिंदाबादश्ए शेड्यूल्ड कास्ट फेडरेशन की जय हो, की घोषणाएं दीं। बाद में उन्हें परसियस होटल ले जाया गया।

उसके बाद वे मराठवाड़ा साहित्य परिषद और मराठी ग्रंथ संग्रहालय संस्थाओं में गए। इन दोनों संस्थाओं के प्रमुख द्वार पर उनका स्वागत-सत्कार किया गया। करीब डेढ़ घंटे तक उन्होंने विभिन्न विषयों पर चर्चा की।

भाषाओं के आधार से प्रांत बनाना विषय पर उन्होंने कहा-

भारत के सभी भाषाई प्रांतों में अगर सबसे अधिक दुर्भाग्यपूर्ण प्रांत कोई होगा तो वह है महाराष्ट्र। महाराष्ट्र अन्य सभी प्रांतों से ठगा गया। सबने महाराष्ट्रीयन का जमकर दमन किया। महाराष्ट्र पर गुजराती-मारवाड़ियों की निर्बाध वर्चस्व है। तो हैदराबाद में मराठवाड़ा पर तेलुगु लोगों का वर्चस्व है। बरहाड़ तो हिंदी भाषियों को अपना उपनिवेश लगता है। इसके पीछे वजह है महाराष्ट्रियों का कमजोर होना। उनमें अब कोई जान नहीं बची है। आते-जाते दिल्ली जीतने की वे केवल गप्प ही हांकते रहते हैं। 50-60 रुपयों की क्लर्की के बगैर वे और कुछ नहीं कर सकते। महाराष्ट्र की परंपरा अच्छी है लेकिन केवल दिव्य परंपरा होने से क्या हासिल हुआ। हमारे तथाकथित नेता मर्दानगी की बातें बहुत करते हैं लेकिन उनमें से कोई भी महाराष्ट्र की उन्नति के लिए त्याग करने के लिए

जनता : 27 नवंबर, 1954

तैयार नहीं है। हरेक को यही लगता है कि जवाहरलालजी क्या कहेंगे? फलानां क्या कहेंगे? इसी डर ने सबको पछाड़ा हुआ है। यह कैसा प्रजातंत्र है? इसे क्या विवेक कह पाएंगे? आज जिनके हाथ सत्ता है, उन्हें प्रजातंत्र की जानकारी भी नहीं है। उनके मन में जो आता है वही वे करते हैं। उन्हें अगर लगे तभी संयुक्त महाराष्ट्र बनेगा। सभी तरह से मुंबई महाराष्ट्र का ही शहर है। मुंबई पर आज पारसी, गुजराती, मारवाड़ी आदि बाहरी लोगों की पकड़ है, लेकिन यह केवल मुंबई की नहीं देश के सभी बड़े शहरों की बात है। मद्रास, कलकत्ता आदि सभी बड़े शहरों का यही हाल है। मद्रास में आंध्रवासियों के हाथ में 30 प्रतिशत से अधिक व्यापार है। दूसरों की तुलना में आंध्र की जनसंख्या भी अधिक है। लेकिन इतना सब होने के बावजूद मद्रास भौगोलिक दृष्टि से आंध्र से जुड़ा हुआ नहीं है। कोलकाता का उदाहरण भी देखने लायक है। कोलकाता पर बंगाली लोगों के अलावा असामी, उड़िया आदि अन्य प्रांतों के लोगों का ही आर्थिक और व्यावसायिक राज है। बंगाली बाबू वहां केवल क्लर्की और मजदूरी करते हैं। इसके बावजूद कोलकाता बंगाल का ही है। फिर मुंबई महाराष्ट्र की क्यों नहीं? मुंबई महाराष्ट्र की नहीं यह कहना भी अन्याय और अंधेपन का परिचायक है।

मुंबई महाराष्ट्र को मिलेगी, लेकिन अगर उनको कुछ अलग लगा तो वह वैसे ही करेंगे और आपसे कहेंगे, आप होते कौन हैं हमसे पूछने वाले? आपको जो करना है वह कीजिए। उनकी बात सच भी है। क्योंकि उन्हें पता है कि क्लर्कों की यह जात हमारा क्या बिगाड़ लेने वाली है? साथ ही आज का प्रजातंत्र और हर पांच सालों के बाद आने वाले चुनाव उन्हीं के पक्ष में हैं। हमारे प्रजातंत्र में चुनावों के टिकट बिकते हैं। जो ज्यादा पैसा देता है, चालाकियां करता है वह चुनाव जीत लेता है और 5 सालों तक मौज करेगा। जिनके पास भरपूर पैसा नहीं है वे चुपचाप बैठे रहें और जो भी होता है उसे प्रजातंत्र के नाम से आशिर्वाद दें।

राष्ट्र की सुरक्षा और सत्ता में समान हिस्सा हो इस हिसाब से दक्षिण में भारत की सह-राजधानी होना आवश्यक है। मुझे लंबे समय से लगता है कि हैदराबाद, सिकंदराबाद और बोलाराम का सभी हिस्सा केंद्र सरकार अपने कब्जे में ले और यहां देश की सह-प्रति-राजधानी बनाए। दिल्ली में बैठ कर सरकार अगर शासन चलाना चाहती है तब मुझे उसकी सैन्य क्षमता पर हंसी आती है। हमारे राष्ट्र को अगर सैनिकी राष्ट्र बनाना होगा तो दक्षिण भारत में सह-राजधानी होना सुरक्षा के नजरिए से आवश्यक है। आज केंद्र सरकार में उत्तर भारतीयों की संख्या अधिक है। अध्यक्ष और प्रधानमंत्री की दो प्रांतों के बड़े-बड़े व्यक्तियों के बीच अदला-बदली चलती रहेगी। दक्षिण भारत के सामान्य जन छोटी-मोटी नौकरी के लिए दिल्ली नहीं जा सकते और इसीलिए प्रशासन में उन्हें हिस्सेदारी मिलना संभव नहीं। सभी भारतीय एक हैं यह भले सच हो लेकिन व्यवहार

में यह भावना बेमतलब है। राजनीति में ऐसी उदारता नुकसान ही करती है। भोले-भाले लोगों का इससे नुकसान ही होता है। इसीलिए, हैदराबाद में उप-राजधानी हुई तो दक्षिण भारतीयों को सरकारी कामकाज में हिस्सा मिलेगा। सत्ता में यहां के लोग भी हिस्सा ले पाएंगे। हमारे दिमाग में व्यवहार की ये बातें नहीं आतीं।

अंग्रेजी के 'लिटरेचर' शब्द का मराठी अनुवाद – 'साहित्य' ('सामग्री' के अर्थ में) ग़लत है। साहित्य खाना बनाने का हो सकता है, हजामत का साहित्य हो सकता है। लेकिन अंग्रेजी के लिटरेचर के अर्थ में साहित्य शब्द न्याय नहीं करता। ज्ञानेश्वरी, एकनाथी भागवत, तुकाराम की गाथा आदि हम पड़ते हैं। ज्ञानेश्वर बड़ा विद्वान था। लेकिन मेरी एक आशंका यह है कि ज्ञानेश्वरी में ज्ञानेश्वर ने वेदांत पर भाष्य किया है। ब्रह्म सत्य है और सर्वव्यापी है ऐसा उन्होंने कहा है। यह वही ब्रह्म है जिसे पुराणों ने सृष्टिनिर्माता कहा, जिसने अपनी बेटी सरस्वती के साथ व्याभिचार कर शादी की थी। लेकिन ज्ञानेश्वरी के अंत में उन्होंने चातुर्वर्ण्य का जोरदार समर्थन किया है। ज्ञानेश्वर तथा उसके अन्य भाइयों और बहन को ब्राह्मणों ने जाति से बहिष्कृत किया था। वे फिर से जाति में जाना चाहते थे, इसीलिए उन्होंने प्रचलित की कल्पनाओं का समर्थन किया। समाज की परम्पराओं के आगे उन्होंने घुटने टेके। ब्रह्म अगर सर्वव्यापी है तो ज्ञानेश्वर कह सकते थे कि अगर आप मुझे बहिष्कृत करते हैं तो मैं महारों की बस्ती में जाकर रहूंगा। उनमें भी ब्रह्म है, लेकिन ऐसा कहने के बजाय उन्होंने भैंसे के मुंह से वेदपाठ करवाया तबसे लेकिन भैंसा बेचारा गूंगा हो गया है।

इंग्लैंड के प्रजातंत्र के पीछे सैंकड़ों सालों की परंपरा है। वहां के आम लोगों की, समाज की सभी अपप्रवृत्तियां नष्ट होने के बाद उन्हें वयस्क मतदान (Aclult Voting) का अधिकार मिला। हमारे यहां लोगों का अज्ञान ही व्यस्क मतदान का अधिष्ठान बना हुआ है। लोगों के पास और उनके प्रतिनिधियों के पास किसी प्रकार का ज्ञान नहीं हैं। इसलिए इस पोले प्रजातंत्र के खाके का फायदा मौकापरस्त, चालाक और हितैशी लोग फायदा उठाते हैं। उपाधि पाने के लिए मैट्रिक के बाद चार सालों तक पढ़ाई करनी पड़ती है। धीरे-धीरे क्रम से हम उपाधि प्राप्त करते हैं। लेकिन लोकसभा या विधाानसभा का सदस्य बनने के लिए या मंत्री बनने के लिए हमारे लोकतंत्र में कोई क्रम नहीं है। कुछ भी कर के कोई भी चुनाव जीत जाते हैं और हजार चक्कर चला कर रातोंरात मंत्री बन जाते हैं। हमारी राजनीति की यही परम्परा है। इस प्रकार चुनाव जीतने वाले के हाथों प्रजातंत्र की परंपरा का निर्माण कैसे होगा? आने वाले 20 सालों तक समाज के शेक्षिक, बौद्धिक और वैचारिक स्तर में सुचारू रूप से बढ़ोतरी करनी होगी। लोगों को समझा कर यकीन दिलाने की पद्धति (persuasive method) का हमें अधिक इस्तेमाल करना होगा। हो सकता है, यह तानाशाही जैसा लगे लेकिन यह जरुरी है।

यहां श्रोताओं से एक ने पूछा कि रूस में 40 सालों से तानाशाही बरकरार रही है, उसका शिकंजा अधिकाधिक मजबूत होता गया है। उसी प्रकार क्या वह भारत में भी हमेशा के लिए कायम नहीं होगी? इस सवाल पर डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने कहा–

जखिम तो है। लेकिन बताइए कि जोखिम कहां नहीं है? हमारा लोकतंत्र क्या जखिम से मुक्त हैघ् रूस में आज भी तानाशाही का होना मुझे ठीक नहीं लगता। इस दीर्घ कालावधि का उपयोग कर रशिया को असल में असली प्रजातंत्र और व्यक्ति की आजादी को स्थापित करना चाहिए था। लेकिन वहां ऐसा नहीं हुआ। तानाशाही में यह जखिम होता है यह मैं मानता हूं लेकिन प्रजातंत्र के लिए जरूरी जागरूकता और परंपरा हमारे यहां हैं कहां? अंधविश्वास रुढ़ीवादिता आदि दोषों के कारण आज हमारा समाज अंधा बन गया है।

कुंभ के मेले में नंगे साधुओं के पैरों तले कुचल कर हजारों नागरिक मर गए धर्म के प्रति इतना अंधविश्वास और पागलपन विश्व में किसी देश में हमें दिखाई नहीं देगा। यह घटना क्या दर्शाती है? मैं अगर मंत्री होता और अगर अधिकार होते तो मैं उन साधुओं को सेना भेज कर भगा देता। जरूरत पड़ने पर गोलियां भी बरसाता। पहाड़ों पर रहने वाले साधुओं को अगर लोगों के बीच आना हो तो उन्हें कपडे पहन कर ढंग से आना चाहिए। लेकिन हमारे शासकों ने ऐसे समय क्या किया? लोगों के अंधविश्वास को धार्मिक लोकप्रियता के लिए उन्होंने बस भुनाया।

326

अधूरी शिक्षा काम की नहीं

अपनी हैदराबाद यात्रा के दौरान 14 नवंबर, 1954 को डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर शाम को शेड्यूल्ड कास्टस् ट्रस्ट फंड की ओर से चलाए जाने वाले होस्टल गए थे। उनके स्वागत में होस्टल को लता-पुष्पों से सजाया गया था। होस्टल के चालक आयु. शेरसिंह ने संक्षेप में होस्टल की रिपोर्ट प्रस्तुत की।

उसके बाद डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने छात्रों के बड़े समूह के समक्ष भाषण किया।

जिन लोगों ने यह बोर्डिंग खोला है, उनको धन्यवाद देना होगा। छात्रों को ऐसा व्यवहार नहीं करना चाहिए जिससे कि लोग उन्हें बुरा कहें। अपने को मिले मौके का समय रहते सही उपयोग कर लेना चाहिए। मेरे समय हालात बहुत मुश्किल थे। दस बाय दस का हमारा एक कमरा थी। उसमें सामान, परिवार के दस लोग, एक बकरी और दो पैसे की एक ढिबरी थी। ऐसे हालात में मुझे पढ़ना पड़ा है। मैं बहुत पढ़ा हूं इसलिए लोग मुझसे डरते हैं। साल भर काम करने के बावजूद लोगों से जो काम हो नहीं सकता वह मैं दो मिनट में कर देता हूं (तालियां)। इसकी वजह है कि मैं खूब पढ़ा हूं। इसी प्रकार आप लोगों को भी पढ़ने की कोशिश करनी होगी। अधूरी शिक्षा किसी काम की नहीं। परीक्षा में कोई भी उत्तीर्ण हो सकता है। केवल परीक्षा में पास होकर उपाधियां हासिल करने से कोई फायदा नहीं। छात्रों को रचनात्मक कार्य करना होगा। पत्थर तोड़ने और क्लर्की करने में कोई फर्क नहीं है।

इस देश में ब्राह्मण समाज को गलतफहमी थी कि सिर्फ हम ही विद्या प्राप्त कर सकते हैं। लेकिन यह सफेद झूठ है। किसी यूरोपियन ने कहा है कि दुनिया में छह विद्वान हैं। उनमें से एक हैं डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर। विद्या एक तलवार की तरह है। इस तलवार के सहारे कोई किसी की गर्दन काटता है तो कोई किसी की रक्षा करता है ।इसके लिए धर्मशील बनना चाहिए। हर रोज सुबह-शाम सामूदायिक वंदना कर बौद्ध तत्व का पालन करना होगा। हर हफ्ते चर्चा के विषय तय कर उन पर बोलने वाले किसी विद्वान को बुलाकर उनका व्याख्यान सुनना चाहिए। दुनिया में कैसे जीना चाहिए यह आपको सिखाया जा रहा है। इसलिए छुट्टियों में घर जाने के बाद स्वास्थ्य और सफाई के बारे में अपने माता-पिताओं को बता कर उनमें सुधार लाने की आपको कोशिश करनी होगी। आपके बोर्डिंग को फिलहाल जो मदद मिल रही है वह एक तालाब के पानी जैसी है। कभी ना कभी यह स्त्रोत सूख जाएगा। इसके लिए सरकार की ओर से स्थायी मदद की व्यवस्था की जानी चाहिए।

जनता : 20 नवंबर, 1954

327

बौध धर्म दर्शन पर चर्चा में, मैं किसी भी प्रकांड पंडित को परास्त कर सकता हूँ

आयु. फुंग, वीचार्न ऑफ थाईलैंड की अध्यक्षता में दिनांक 4 दिसंबर, 1954 को रंगून में तीसरे जागतिक बौद्ध धर्म अधिवेशन की शुरुआत हुई। इस अवसर पर अमेरिका, इंग्लैंड, सिलोन, मलाया, जर्मनी, फ्रांस, इंडोनेशिया आदि राष्ट्रों के प्रतिनिधियों ने बौद्ध धर्म और उसकी सीख विषय पर भाषण किए। अध्यक्ष ने डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर की पहचान भारत के प्रतिनिधि, नेता और के सात करोड़ दलितों के नेता के तौर पर कराते हुए उनका सम्मान किया।

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने करीब 50 मिनट भाषण किया। पहले उन्होंने इस परिषद् में आमंत्रित करने के लिए आयोजकों के प्रति आभार व्यक्त किया।

उन्होंने कहा,

यहां इकट्ठा हुए बुद्ध के अनुयायी हैं। दुनिया के इतने बड़े राष्ट्रों में बौद्ध धर्म भले ही प्रचलित रहा हो, उसका प्रसार जितनी तेजी से होना चाहिए, उतनी तेजी से हुआ नहीं है यह मुझे खेद के साथ कहना पड़ रहा है। आज यहां जिन राष्ट्रों के प्रतिनिधि उपस्थित हैं उन सभी राष्ट्रों में सिलोन और ब्रह्मदेश ये दो राष्ट्र बौद्ध धर्म मानने वाले राष्ट्रों में आगे हैं ऐसा लगता है। लेकिन मुझे लगता है कि इन दो राष्ट्रों का बौद्ध धर्म के प्रसार का तरीका प्रशंसायोग्य नहीं है।

यहां की अमीर महिलाएं खूब सारा धन दान में देती हैं। धर्म के नाम से इकट्ठा होने वाले हजारों रुपए वे धार्मिक उत्सव के प्रसंगों पर बेकार खर्च करते हैं। घरों में, बाहर, पेड़-पौधों पर बिजली के लट्टू जलाते हैं। इस श्रृंगार-सजावट में जितना पैसा खर्च होता है वह सब बौद्ध धर्म के प्रसार के काम पर खर्च होना चाहिए यह अपनी राय मैं यहां साफ तौर पर बता देता हूं। ऐश्वर्य और शोभा ये दो बातें भगवान बुद्ध को बिल्कुल पसंद नहीं थीं। जिन देशों में इस धर्म का नाम भी नहीं है वहां धर्म प्रसार की संस्थाएं स्थापित कर उनके जरिए भगवान गौतम बुद्ध की शिक्षा का बीज बोएं। ये सिलोनी बंधु ऐसा क्यों नहीं करते इस बारे में मुझे बड़ा अचरज लगता है। इसी प्रकार ब्रह्मदेश के लोग भी धार्मिक उत्सवों पर हजारों रुपए खर्च करते हैं। वे रुपए भी अगर

जनता : 18 दिसंबर, 1954

धर्म प्रसार के काम में खर्च किए जाएं तो अल्पावधि में ही हम बौद्ध धर्म का भरपूर प्रसार कर सकेंगे।

भारत के बारे में बोलना हो तो मुझे बड़े दुख के साथ कहना पड़ेगा कि जिस देश में गौतम बुद्ध का जन्म हुआ, उसी देश में उसके धर्म का लोप जैसी घटना क्यों घटे? यहां उपस्थित प्रतिनिधियों के राष्ट्रों में से बहुत कम राष्ट्रों को इस बात का अहसास होगा कि भारत में ब्राह्मणों ने अपने वर्चस्व को कई वर्षों तक बनाये रख। लेकिन आज मैं ब्राह्मणों को चुनौती देता हूं कि उनमें से कोई भी प्रकांड पंडित बौद्ध धर्म दर्शन के बारे में चर्चा करे। मुझे यकीन है कि उसे मैं हरा दूंगा। (तालियां)

प्राचीन समय में हिंदू धर्म में यज्ञ में गायों की बलि चढ़ाने से स्वर्ग प्राप्ति होती है, ऐसा ब्राह्मण बताया करते थे। मैं खुले आम उनसे पूछना चाहता हूं कि इस प्रकार जितनी समयावधि में स्वर्ग की प्राप्ति होती होगी, उससे भी अधिक जल्दी स्वर्ग की प्राप्ति हो सकती है, बशर्ते अपने पिता की बलि चढ़ाई जाए। फिर ये लोग क्यों अपने पिता की बलि नहीं चढ़ाते? किसी समय इस प्रकार व्यवहार करने वाले ब्राह्मण आज गोहत्या प्रतिबंध का प्रचार कर रहे हैं। गौतम बुद्ध के अहिंसा सिद्धान्त की यह सबसे बड़ी विजय थी।

ब्राह्मणों के अलावा अन्य पक्ष भारत में बहुत हैं। धर्मों के बारे में उनकी स्थितियां भी बड़ी दयनीय हो गई हैं। ब्राह्मणों ने इस देश में हजारों भगवान और देवियां निर्माण की हैं। किस भगवान की उपासना करने से किस भगवान की भक्ति करने से मोक्ष या मुक्ति मिलेगी यह उनकी समझ में भी नहीं आता। अपने बौद्ध धर्म में मोक्ष, स्वर्ग आदि मूर्ख कल्पनाओं के लिए स्थान नहीं है। अपना बौद्ध धर्म बताता है कि अगर मानवी जीवन सुख से, संतोष के साथ बिताना हो तो मानव को चाहिए कि वह आचरण शुद्ध रखे, अहिंसा, समता और बंधुत्व को धारण करें। इसके अलावा कोई दूसरा मार्ग नहीं है। इन बातों को गौतम बुद्ध के धर्म के सिद्धांत कहा जाता है और मैंने यही सिद्धांत अपने छह करोड़ अनुयायियों से कहे हैं। पैसों की कमी के कारण मैं आज उनके लिए कुछ भी कर नहीं पाया। लेकिन जब मेरे पास अल्पावधि में ही योग्य साधन उपलब्ध होंगे तब बौद्ध धर्म का प्रसार मैं भारत में जरूर करूंगा। (तालियां)

पार्लियामेंट में था तभी बौद्ध धर्म के पुनरुत्थान के लिए कुछ बातें मैंने कर दी हैं। मैं भारतीय संविधान का शिल्पकार हूं। मैंने वह संविधान बनाया है। एक बात यह कि उसमें पाली भाषा के उत्थान का प्रबंध मैंने कर रखा है, और, दूसरी बात यह कि, राष्ट्राध्यक्ष के राजवाड़े के ऊपर गौतम बुद्ध के उपदेशों में से पहला चरण –धम्मचक्र परिवर्तन– लिखा दिया है। ब्रह्मदेश के अध्यक्ष डॉ. जी. पी. मल्लशेखर के ध्यान में मैंने यह बात

ला दी है। देख कर उन्हें भी बड़ा अचरज लगा।

तीसरी बात यह कि, भारतीय पार्लियामेंट के निशान पर भारत सरकार के प्रतीक के रूप में अशोक चक्र को संविधान में मान्यता दिला दी है। यह सब करते हुए मुझे हिंदू, मुसलमान, ईसाई और पार्लियामेंट के अन्य सदस्यों की ओर से कोई विरोध नहीं हुआ। इतना सुस्पष्ट और हर मुद्दे का विश्लेषण करने वाला मैंने पार्लियामेंट में किया था।

इस तीसरे अंतर्राष्ट्रीय अधिवेशन में इकट्ठा आए अठ्ठाईस राष्ट्रों में से क्या किसी एकाध राष्ट्र ने तो ऐसा किया है? इतना करके मैं रुका नहीं, मुंबई शहर में मैंने सिद्धार्थ नाम से एक बड़े कॉलेज की स्थापना की है। इसी प्रकार अजंठा–वेरूल जाते समय रास्ते में पड़ने वाले औरंगाबाद शहर में भी दूसरे कॉलेज की स्थापना की। मुंबई के कॉलेज में 2900 और औरंगाबाद के कॉलेज में 500 छात्र पढ़ रहे हैं।

इन छात्रों से गौतम बुद्ध के जीवन पर एक शोध प्रबंध लिखवा कर सबसे अच्छे शोध प्रबंध को रु. 1000 पुरस्कार स्वरूप देने की मेरी मंशा है। शोध प्रबंध लिखवाने का उद्देश्य यह है कि वे बौद्ध धर्म का गहराई से अध्ययन करें ताकि बौद्ध धर्म का व्यवस्थित प्रसार हो। इस प्रतियोगिता में पारसी, मुसलमान, हिंदू आदि धर्मों के छात्र भी हिस्सा ले सकते हैं।

साथ ही, मेरी इच्छा है कि अगर काफी पैसा इकट्ठा हो जाए तो दिल्ली, मुंबई, कोलकाता, मद्रास इन शहरों में बुद्ध विहार स्थापित कर हर रविवार को लोगों की उपासना के लिए सुविधा मुहैय्या कराई जाए। मेरे द्वारा स्थपित किए गए दोनों कॉलेजों के लिए भारत सरकार से 22 लाख रुपयों का कर्ज मैंने लिया है। मेरी मृत्यु तक मैं यह कर्ज चुका पाऊंगा इस बारे में मुझे थोड़ा शक है। (हंसी)

इस प्रकार इस धर्म को लेकर मेरी कोशिश जारी है। दुनिया में भारत ही एक ऐसा देश है जहां बौद्ध धर्म का प्रसार बहुत कम समय में किया जा सकता है। किसान जमीन की पहचान करने के बाद ही उसमें बीज बोता है। उसी प्रकार भारत में बौद्ध धर्म का प्रसार करने के लिए कुछ आवश्यक अनुकूल बातें हैं। मेरी आप सभी से विनती है कि उसका हम सभी राष्ट्रों को आर्थिक सहायता का उपयोग करना चाहिए। मैं इस सभागार में वचन देता हूं कि कोई सहायता करे अथवा न करे मैं अपनी राह पर आगे बढ़े बगैर नहीं रहूंगा। (तालियां)

डॉ. बाबासाहेब का भाषण दुनिया के 28 देशों के प्रतिनिधि शांति से और एकाग्रता से सुन रहे थे।

328

ब्रह्मदेश में अस्पृश्यता न होने के कारण ही आप व्यापार और व्यवसाय में उन्नति कर पाए

रंगून में रहनेवाले आंध्र प्रदेश शेड्यूल्ड कास्टस् फेडरेशन के लोगों द्वारा 4 दिसंबर, 1954 को डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के सम्मान में विशाल सभा का आयोजन किया था। इससे पहले भी एक बार इन लोगों ने रंगून की जनता को डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के दर्शन का लाभ मिले इसलिए कोशिश की थी लेकिन उस समय डॉ. बाबासाहेब की तबीयत ठीक न होने के कारण उनकी कोशिश कामयाब हो नहीं पाई थी। लेकिन, दी वर्ल्ड फेलोशिप ऑफ बुद्धिस्ट कॉन्फरंस के समय वहां की जनता की प्रार्थना स्वीकार करते हुए सार्वजनिक सभा में उपस्थित होने के लिए डॉ. बाबासाहेब ने हामी भरी। उस दिन वहां के सबसे बड़े और भव्य होटल में वहां के लोगों ने डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को टी पार्टी (चाय और जलपान) दी। उस अवसर पर व्यापार-व्यवसाय के कारण वहां स्थायी रूप से बसे पांच सौ प्रतिष्ठाप्राप्त भारातीय नागरिक भी उपस्थित थे। डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का होटल में प्रवेश होते ही इन सभी नागरिकों ने खड़े कर तालियों की गूंज के साथ स्वागत किया।

जलपान के बाद डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने सबको सम्बोधित कर केवल 15 मिनट का भाषण दिया। उन्होंने कहा- यहां आप सभी भारतीय लोग एक-दूसरे के साथ प्रेम और संगठन की भावना से पेश आते हैं यह देख कर मुझे संतोष हुआ। अपने देश में ऐसा दृश्य देखने को नहीं मिलता। ब्रह्मदेश का उदाहरण अपनी आंखों के सामने रखा तो आपके अभ्युदय में देर नहीं लगेगी। यहां के शेड्यूल्ड कास्टस् के लोगों ने मुझे इतने बड़े होटल में जलपान कराया, जिससे उनका मेरे प्रति प्रेम प्रकट होता है। हालांकि मैं यह भी जानता हूं कि इस प्रकार किया है तो उनकी आर्थिक स्थिति भी बेहतर होगी। उसके बगैर इतना महंगा आयोजन नहीं किया जा सकता। मैं यहां बस इतना ही कहना चाहता हूं कि आप इसी प्रकार बंधुभाव के साथ रहें।

पिछली बार मैं आपसे मिल नहीं सका। उस वक्त मैं बीमार था। अभी भी मेरी तबीयत पूरी तरह से ठीक नहीं है, इसके बावजूद आपको निराशा न हो इसलिए मैं यहां उपस्थित हुआ। इस देश में रहने वाले हमारे लोगों की आर्थिक स्थिति मुझे ठीक लग रही है। मैंने सुना है कि आपमें से कोई सादा मजदूर भी हर रोज दस कैटस्-रुपए कमाता है। आप में से कुछ लोग चावल के व्यापारी हैं। कोई टिंबर मर्चंट हैं, लकड़ियां बेचते हैं। आप अपने-अपने

जनता, 29 जनवरी, 1955

कार्यों में प्रतिभा सम्पन्न हैं यह सुन कर अच्छा लगा। मेरा अब तक का जीवन मुंबई में बीता है। मुंबई की अपनी जनता को भी मुझसे बहुत प्रेम है। वे सभा वगैरह का आयोजन करते हैं। लेकिन आपकी तरह ताजमहल होटल में उन्होंने कभी मुझे पार्टी नहीं दी है। इससे लगता है कि आपकी और उनकी माली हालत में बहुत अंतर है। यह बात साफ है कि वे क्यों ऐसा नहीं कर पाते हैं। वहां अस्पृश्यता है। इस देश में उसका नामोनिशां नहीं।

यहां मैं आपको एक बात बताना चाहता हूं। जिस देश में 'अस्पृश्यता' यह शब्द भी नहीं है वहां आप अपने को 'शेड्यूल्ड कास्टस्' क्यों कहलाते हैं? शेड्यूल्ड कास्टस् यानी पददलित। आप ब्रह्मदेश के लोगों को खुद क्यों बताते हो कि हम नीच-जात हैं। इसलिए पहली बात तो यह करो कि शेड्यूल्ड कास्टस् फेडरेशन इस आपकी संस्था को ही समाप्त कर दीजिए। आप अगर अपना संगठन चाहते हों तो मैं आपको नया नाम सुझाऊंगा लेकिन खुद को शेड्यूल्ड कास्ट् न कहलाइए। आप जैसा व्यवहार अगर भारत की सरकार हमारे साथ करे तो मैं भी भारत में शेड्यूल्ड कास्टस् फेडरेशन इस संस्था को ही बंद कर दूंगा। लेकिन हमारे साथ इस प्रकार का समानता का बर्ताव नहीं किया जाता और इसीलिए अपने हित रक्षा के लिए हमें शेड्यूल्ड कास्टस् फेडरेशन संस्था बनाए रखनी पड़ी है।

एक और बात मैं आपसे कहना चाहता हूं कि आप इस देश में 20-25 सालों से अधिक समय से रह रहे हैं। तो फिर आपने इस देश की नागरिकता क्यों नहीं ली? भारतीय नागरिकता जारी रखने में आपका क्या फायदा है? जिस देश के नागरिकों की नस-नस में विषमता भरी हुई है, जिस देश पर अस्पृश्यता का बड़ा कलंक लगा हुआ है, जिस देश के लोग अस्पृश्यों की आर्थिक उन्नति नहीं होने देते, उस देश की नागरिकता बनाए रखना मूर्खता है। आप लोगों को ब्रह्मी सरकार का शुक्रिया अदा करना चाहिए, जिन्होंने अपने संविधान में यह सुविधा दे रखी है कि लगातार आठ साल या उससे अधिक समय के लिए उस देश (ब्रह्मदेश) में रहने वाले हर इंसान को देश का कानूनन नागरिक बनने की सुविधा भी दे रखी है जो कि अभिनंदन करने योग्य है।

अपनी भारत सरकार और सिलोन की सरकार का नागरिकता को लेकर कितना बड़ा झगड़ा चल रहा है। सीलोन की सरकार भारत के लोगों को नागरिकता देने के लिए बिल्कुल तैयार नहीं है। कहना पड़ेगा कि उस हिसाब से ब्रह्मी सरकार बहुत अच्छी है। इसीलिए बिना देर किए आप लोग पहले इस देश की नागरिकता लीजिए। इस देश में अस्पृश्यता नहीं होने के कारण आप लोग व्यापार और अन्य व्यवसाय में प्रगति कर पाए हैं। इसलिए आपको भी अपनी नीतियों में सुधाार करना होगा।

उनके बाद शेड्यूल्ड कास्टस् फेडरेशन के प्रमुख आयु. राव ने वहां की जनता की ओर से डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को चांदी की थाली में रखकर प्रशस्ति पत्र अर्पित कर उनका सम्मान किया।

329

पंढरपूर में बौद्ध विहार था यह मैं साबित कर सकता हूँ

25 दिसंबर, 1954 के दिन देहू रोड के बुद्ध विहार में डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के हाथों भगवान बुद्ध की मूर्ति की विधिविधानपूर्वक स्थापना की गई। मूर्ति की कीमत करीब ढाई हजार रुपए है। डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर खास कर यह मूर्ति रंगून से ले आए हैं। इस समारोह में 40 हजार से अधिक लोग उपस्थित थे।

एडवोकेट शंकरराव खरात, ऑर्गनाइजिंग सेक्रेटरी, महाराष्ट्र प्रदेश शे. का. फे. के हाथों ध्वज फहराया गया।

उपस्थित जनसमुदाय का मार्गदर्शन करते हुए डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने कहा–

आज इस जगह, छोटे से विहार में भगवान बुद्ध की मूर्ति की स्थापना की गई है। हमेशा की तरह जब कोई मंदिर का निर्माण होता है तब उसमें भैरोबा, खंडोबा, मरीआई आदि कई तरह के भगवानों की मूर्तियां रखी जाती हैं। हमारे लोगों के मन भक्तिभाव से परिपूर्ण होने के कारण वे विष्णू, शिव जैसे भगवान की मूर्तियों की स्थापना करते हैं। यहां का प्रसंग थोड़ा अलग और नया है। इस मंदिर में मरीआई, खंडोबा, महादेव नहीं लाए गए हैं, यहां आज नए देवता को लाकर उनकी स्थापना की गई है। सभी के लिए यह प्रसंग नया है। हम में से कुछ लोगों ने भगवान बुद्ध का नाम भी नहीं सुना होगा।

कुछ लोग कहते हैं कि यह नए भगवान कहां से लाए हैं? ये भगवान कहां से लाए हैं, उसकी उत्पत्ति कैसे हुई? यह जानना अत्यंत आवश्यक है। बुद्ध भगवान का यह धर्म इस देश में बहुत ही प्राचीन समय से चला आ रहा है। प्राचीन समय में यह धर्म इसी देश में निर्माण हुआ। चीन, जापान, सयाम, इंग्लैंड आदि बाहरी किसी देश से यह धम्म नहीं लाया गया है। यह यहीं का वृक्ष है। इस भगवान को कौन यहां लेकर आया इस बारे में कई सवाल पूछे जाते हैं । इस बारे में पहला खुलासा इस प्रकार किया जा सकता है कि इस देश के पुरातन देवता हमें जगह-जगह मिलते हैं, उन्हीं में से यह भी एक हैं। यह भगवान यहीं के हैं।

कई ऐतिहासिक कारणों से इस धर्म का यहां लोप हुआ होगा। इस धर्म के शत्रु इस देश में रह ही नहीं पाते। मराठी में शत्रु को बोलते हुए कहते हैं – 'मेरे भगवान जलती ज्योति हैं। मेरे भगवान कोई कच्चे नहीं हैं। तुम पर छोड़ूंगा तो वह तुम्हारा सत्यानाश करेंगे।' मैं आज आपको बतात हूं कि यह धर्म भी वैसा ही है। यह देखने के लिए मैं

जनता, 1 जनवरी, 1955

शायद जिंदा नहीं बचूंगा लेकिन यह होकर रहेगा। मुझे इस बारे में रत्ती भर का संदेह नहीं है। एक व्यक्ति कुछ लोगों को कुछ समय तक धोखे में रख सकता है। एक व्यक्ति सभी लोगों को हमेशा धोखा नहीं दे सकता।

बौद्ध धर्म को 1956 में ढ़ाई हजार साल पूरे होंगे। साढ़े बारह सौ सालों तक यह धर्म जिंदा था। इस बात को साबित करने के लिए मैं आज ऐतिहासिक सबूत देने जा रहा हूं। पुराने जमाने में इस देश पर मुसलमानों ने हमले किए। मुसलमान मूर्तिपूजक नहीं होते। उनके द्वारा बौद्ध धर्म के लोगों पर हमले हुए और यह धर्म कमजोर हुआ। अफगानिस्तान के 100 प्रतिशत लोग बौद्ध धर्मीय थे। वहां बौद्ध धर्म प्रचलित था। 7000 बौद्ध भिक्षु वहां पर थे। मुसलमानों ने उन पर आक्रमण किए तब उनके सामने दो ही उद्देश्य थे। पहला, इस देश के लोग इस्लाम को अपनाएं। दूसरा, जो इस धर्म को स्वीकार नहीं करेंगे उन्हें मौत के घाट उतारना। उन्होंने इन सात हजार भिक्षुओं का कत्ल किया।

यह धर्म जब जिंदा था तब बहुत ही लोकप्रिय था। इस देश में नालंदा विश्वविद्यालय था। ज्ञान देना इस धर्म का तत्व था। एक आचार्य और दस छात्र साथ बैठते और ब्राह्मण शास्त्र सिखाते ऐसी इस धर्म की स्थिति नहीं थी।

बौद्ध धर्मीय लोगों ने पहले विश्वविद्यालय की स्थापना की। नालंदा विश्वविद्यालय में तेरह हजार छात्र और एक हजार अध्यापक थे। ब्राह्मण धर्म एकांगी था। अनेक कारणों से उसका मुसलमानों से बचाव हुआ। बौद्ध धर्म के खिलाफ भी ब्राह्मणों की कारगुजारियां जारी थीं। इसीलिए यह धर्म अस्त हुआ।

बौद्ध धर्म पर मैं अंग्रेजी भाषा में एक किताब लिख रहा हूं। दो महीनों के बाद यह किताब प्रकाशित होगी। इस किताब को मराठी में भाषांतरित कर प्रकाशित किया जाएगा।

मेरे कुछ मित्र मुझसे पूछते हैं –आपका बौद्ध धर्म अगर इतना अच्छा था तो उसका ह्रास क्यों हुआ? मैं उनसे पूछता हूं कि अगर मान लें कि यह धर्म बुरा था इसलिए इसका ह्रास हुआ तो चीन, जापान, कंबोडिया, सिलोन आदि देशों में यह धर्म क्षीण क्यों नहीं हुआ? वहां यह धर्म अभी तक टिका हुआ क्यों है? इन देशों में अगर यह धर्म खत्म नहीं हुआ तो उसे कोई दूसरा घुन लगा होगा। उसके खिलाफ साजिश रची गई होगी। बताने का मतलब यह है कि उसके उदय से लेकर वह साढ़े बारह सौ सालों तक वह चल रहा था। इतिहासकारों ने इस इतिहास को छुपा रखा है। इस बार मैं पूरे भारत के बारे में नहीं बोलने वाला हूं। मैं सिर्फ महाराष्ट्र के बारे में बोलने वाला हूं। हमारा महाराष्ट्र भी 100 प्रतिशत बौद्धधर्मीय था। सबूत के तौर पर महाराष्ट्र के पुरातनकालीन उकेरी हुई मूर्तियां के उदाहरण दिए जा सकते हैं। भारत की दो हजार मूर्तियों में से डेढ़ हजार मूर्तियां महाराष्ट्र में हैं। ये मूर्तियां जहां हैं वे ठिकाने बौद्ध भिक्षुओं के रहने की जगहें थीं। यही

उनकी पनाहगाहें थीं। महाराष्ट्र में जो भी पुरातनकालीन मूर्तियां हैं वे सब की होने की बात बताई जाती है। लेकिन कहां विराट नगरी और कहां पांडवों की राजधानी!

इन विहारों में 25 भिक्षु होते हैं। पंद्रह हजार विहारों में करीब 35 हजार भिक्षु रहा करते थे। लोगों से भिक्षा मांग कर अपना गुजारा करते थे। वे एक हजार दो सौ पचास सालों तक इस प्रांत में थे। हम टूटा घर फिर से बनाते हैं। उस पर टीन लगाते हैं, नई छत डालते हैं, यानी उस घर का जीर्णोद्धार करते हैं। बाप-दादाओं के समय से हम भगवान की पूजा करते आए हैं। उसी भगवान को हमें फिर से पूजना है। मेरी साफ राय है कि इस देश में धर्म अब बचा नहीं है। हिंदू लोगों की धर्म की व्याख्या बहुत अलग है। मंदिरों में जाना, घंटा बजाना, पूजा करना और पुजारी को दो पैसे का दान देना इतना ही धर्म रह गया है। मानो ब्राह्मण के बाप से लिया गया ऋण चुकाना। हमसे यह हो नहीं पाया। विष्णू की पूजा करने से विष्णू प्रसन्न नहीं हुआ। भगवान शिव के मंदिर जाने के बाद भी वह प्रसन्न नहीं हुआ। मरीआई, म्हसोबा, खंडोबा भी प्रसन्न नहीं हुए। व्यक्ति के और समाज के जीवन के लिए आवश्यक होने के कारण धर्म की जरूरत तो है ही। धर्म को नीति का बंधन चाहिए। कुछ लोग मुझसे पूछते हैं कि धर्म से क्या लेना-देना है? लेकिन मेरा उनसे यही सवाल है कि हमने अगर डल्ली खाना छोड़ दिया है। अगर पेट ही भरना है तो आप भी डल्ली, सागोती क्यों नहीं खाते? धर्म दुराचार पर नियंत्रण रखता है। आपको बताने लायक बहुत कुछ है। लेकिन आप लोगों की भाषा में मैं क्या बता पाऊंगा? यहां उदाहरण के तौर पर मैं एक ही बात बताता हूं। बैलगाड़ी में दो पैर, दो बैल, गाड़ी, और चलाने वाला आदमी आदि बातें होती हैं। मैंने बचपन में बैलों को हांकने का काम किया है। गाड़ी में तेल डाला जाता है। पहिए में कील होगी तो बैल गाड़ी खींचेगा। इसी प्रकार इंसान के पापी, दुराचारी बर्ताव पर कसी हुई लगाम है धर्म। धर्म के बंधन के बगैर कार्य टिका नहीं रह सकता।

किसी भी धर्म को अपनाते समय उसे अच्छी तरह से जांच-परख कर ही लेना चाहिए। हम बाजार में जाते हैं। सोना खरा है अथवा नहीं इसकी परख कर लेते हैं। उसी प्रकार धर्म एक बाजार है। यह विष्णू की, राम की, शिव की दूकान है। यहां पुजारी धूप-कपूर जलाते हुए बैठे हैं। कृष्ण, राम, विष्णू शिव का धर्म इसी प्रकार का धर्म है। धर्म इंसान का उद्धार करता है। धर्म किसी को धोखा देने के लिए नहीं होता। हमारी अवनति जातिभेदों के कारण हुई है। जो धर्म जातिभेदों से भरा है जिस धर्म में असमानता है वह धर्म हम कैसे अपनाएं? जिस धर्म में समानता का अधिष्ठान है वह धर्म हमें चाहिए। बौद्ध धर्म में सभी को समान अवसर, सभी को समान अधिकार दिए गए हैं। उसमें एकता है, भेदभाव नहीं।

यहां आपको एक सूक्त याद दिलाना चाहता हूं। ब्राह्मणों के बच्चे थे, उनमें दर्शन को

लेकर कोई विवाद था– 'ब्रह्म घर है और आत्मा ब्रह्म की छाया है। सूरज और सूरज का प्रतिबिंब, घर और घर की छाया, इसी प्रकार ब्रह्म और आत्मा की बात है।' असल में ये सब पुराणों की बातें हैं। ब्रह्म की छाया ही अगर आत्मा है तो अस्पृश्यों को शनिवार वाड़े के हौज से पानी भरने क्यों नहीं दिया जाता? विवाद का कोई अंत नहीं हो रहा यह देख कर बच्चे बुद्ध के पास गए। उन्हें ब्राह्मणों का दर्शन रास नहीं आया था। भगवान बुद्ध ने उनसे पूछा– क्या यह ब्रह्म सत्य है? क्या आपने ब्रह्म को देखा है? ब्रह्म कुछ समय के लिए है या फिर हमेशा के लिए? उसका रंगरूप कैसा है? वह कुछ बोलता है क्या? उसमें रस है या सुगंध? वह गुलाब के फूलों सा है या कि चंपा के फूलों–सा? वह मीठा है, खट्टा है या तीखा है?

मनुष्यमात्र के पास सत्य का पता करने के लिए पांच इंद्रीयां हैं। आंख, कान, नाक, जीभ, त्वचा। आंखों से देखा जा सकता है। कान से सुना जा सकता है। नाक से गंध का पता चलता है। जीभ से स्वाद का पता चलता है। पांचों इंद्रियों का साक्ष्य जिसे प्राप्त है वह है सत्य। ब्रह्म को सत्य मानना यानी बिना देखे किसी लड़की से प्रेम करने जैसा है। भगवान बुद्ध का धर्म समानता का धर्म है। हाल ही में लक्ष्मण शास्त्री जोशी द्वारा मेरे बारे में लिखे गए लेख के बारे में मुझे पता चला है। मेरे बारे में वैसे कोई लिखता नहीं है और अगर किसी ने लिखा तो वह अच्छा ही होगा यह कहा नहीं जा सकता। जोशी ने अपने लेख के अंत में लिखा है कि डॉ. अम्बेडकर का अवतार कार्य अब खत्म हो चुका है। लेकिन असल में मेरा अवतार कार्य अभी खत्म नहीं हुआ है, वरन् अभी उसकी शुरुआत हो रही है। लक्ष्मण शास्त्री जैसा विद्वान आदमी अगर इस प्रकार लिखने लगे तो क्या कहा जा सकता है? हमने महाड में सत्याग्रह आंदोलन किया। आप हिंदू लोग हमें हिंदू कहते हो ना! इसलिए आप लोग हमें पानी पीने देते हो या नहीं यही देखने के लिए हमने सत्याग्रह किया था। हमें मंदिर में प्रवेश दिया जाता है कि नहीं यह देखने के लिए मंदिर–प्रवेश आंदोलन किया। इतने दिनों से हमने इस प्रकार जमीन की निराई–गुडाई कर उसे फसल बोने लायक बनाया है। अब मेरी उम्र बहुत कम ही बची है। दुर्भाग्य से सामाजिक कार्य मुझसे पूरे नहीं हो पाए हैं। अन्य सभी कामों से अब मैं अवकाश प्राप्त करने जा रहा हूं। मुझे बौद्ध धर्म के प्रसार का काम करना है। आज का प्रसंग देख कर कुछ लोग हमारा मजाक भी उड़ाएंगे। लेकिन अच्छा काम हमेशा कठिन होता है। महार जाति धैर्यवान है। उसके सिर पर अन्य जातियां हैं। लंगोट, कमर और लाठी यही उसकी पोषाक है। जैन साधु नग्न घूमते हैं। उनके ही जैसे हम भी नंगे घूमेंगे।

मैं आपसे दो बातें कहना चाहता हूं। इस धर्म को स्वीकार करेंगे उसी दिन आपको कई काम छोड़ने पड़ेंगे। एकादशी को पंढरपूर जाना, द्वादशी को अन्य क्षेत्र में जाना बंद करना होगा। मुझे अच्छी तरह से याद है। नासिक जिले में त्र्यंबक में कुंड था। इस कुंड

में केवल अंजुली भर जल था। यात्री उसमें कपड़ा भिगो कर उसी से बदन पोंछ लेते थे। इस प्रकार की खिचड़ी बौद्ध धर्म में मैं होने नहीं दूंगा। साफ पानी में गंदा पानी उढेलना नहीं चाहिए। भगवान बुद्ध का जो धर्म वही हमारा धर्म है यह अब हमने तय किया है। आप पंढरपूर जाते हैं, पांडुरंग के अभंग गाते हैं। पुणे के इतिहास अनुसंधान मंडल के लोगों में पंढरपुर का विट्ठल कौन था इस विषय पर हुज्जत चल रही है। मैं उनसे एक सवाल पूछना चाहता हूं कि विट्ठल का घपला छोड़ कर पहले इस सवाल का जवाब दीजिए कि पंढरपूर का पांडुरंग कौन है? इसका जवाब पहले दीजिए। वह कहां का है? उसे कौन भगा कर ले गया? किसने उसे डुबोया? पांडुरंग यानी पंढरपुर में बौद्ध धर्म का विहार था यह मैं उन्हें साबित करके बताऊंगा। (तालियों की गड़गड़ाहट) पुंडलिक शब्द से पांडुरंग शब्द बना। पुंडलिक का अर्थ है कमल। बौद्ध धर्म में मूर्तिपूजा नहीं थी। अज्ञानी लोग दर्शन क्या जाने। कमल को पाली भाषा में पांडुरंग कहते हैं। आपको धोखा देने के लिए ब्राह्मणों ने बुद्ध के नाम का लोप कर दिया। ये मतलबी लोग महाराष्ट्र के उत्कीर्ण कला के नमूने पांडवों के होने की बात बताते हैं। श्पांडवश यहां क्यों आए थे? पांडव दिल्ली से बाहर 80 मील से परे कहीं नहीं गए। अलवर स्टेट में उन्होंने 1500 शिल्पकला के नमूने छोड़े कैसे? उनके पास न तो छैनी थी न फावड़ा। भगवान बुद्ध ने कहा कि 'यहां आओ और देखो'! केवल मैं कहता हूं इसलिए आप धर्म अपना लो ऐसा नहीं है। तुम्हारी अविद्या अगर नष्ट हुई तो ही तुम इस धर्म का स्वीकार करो। आपको एक बात बताना बाकी रह गया है। यह विहार जो बनाया गया है वह बेहद छोटा है। उसे अगर जिस हाल में वह है उसी हाल में आप रखेंगे तो आपको कलंक लगेगा। इस विहार के लिए एक हॉल की जरूरत है। प्रदक्षिणा करने के लिए जगह की जरूरत है। आप सब लोग चंदा कर इस विहार को भव्य रूप देने की कोशिश कीजिए। लेकिन, भगवान के नाम पर इकठ्ठा किया जाने वाला पैसा खाइए मत। उस विहार में रोजाना बुद्धि का दिया गया मानव मूल्यों का उचित संदेश देने वाली बुद्धिवंदना, भिक्षरण, पंचशील, आर्य अष्टांगिक मार्ग तथा उनके संदेशों का वाचन होगा, छात्रों को पढ़ाई करने के लिए भी यह बुद्ध विहार खोला जाएगा।

आज के प्रसंग के अनुकूल जो भी कुछ कहना था वह मैंने कह दिया है। आज का यह प्रसंग इतिहास में दर्ज होने वाला है। बारह सौ सालों के बाद बुद्ध की प्रतिमा की स्थापना करने का पहला सम्मान हमें मिला है। इसका सारा श्रेय हमें ही है। इसीलिए हमें धन्यता महसूस करनी चाहिए।

330

हिंदु धर्म में भगवान, आत्मा आदि की जगह है लेकिन मनुष्य के जीवन के लिए कोई स्थान नहीं

मुंबई की बौद्धधर्म सलाहकार समिति की ओर से दिनांक 14 जनवरी, 1955 के दिन वरली में डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का भाषण आयोजित किया गया था। सभा में 50 हजार से अधिक जनसमुदाय उपस्थित था–

इस सभा में संत गाडगे महाराज, आयु. अनंत हरी गद्रे, आयु. संत मोडके महाराज, कांबले, करमालेकर और शे. का. फेडरेशन के अन्य कार्यकर्ता उपस्थित थे।

इस अवसर पर डॉ. बाबासहब अम्बेडकर ने कहा–

कई दिन पहले मैंने निर्णय लिया था कि किसी भी कार्यक्रम में केवल भाषण देने के लिए उपस्थित नहीं रहना है। क्योंकि केवल भाषण देने से मैं अब ऊब गया हूं। मेरा सारा जीवन भाषण देने में गया है। ऐसा नहीं कि मेरे व्याख्यानों का समाज पर कोई असर नहीं हुआ हो। आज अस्पृश्य समाज में हुई जागरूकता मुझे दिखाई देती है। मैं गर्व के साथ कह सकता हूं कि उनमें हुई जागरूकता मेरे व्याख्यानों का ही फल है।

जागृति भले समाज की उन्नति का प्रमुख अंग है फिर भी केवल जागृति से कुछ नहीं होता। समाज की उन्नति के लिए विधायक कार्यक्रम की षरूरत होती है। किसी एक पुरुष द्वारा समाज में जागृति पैदा की गई और उसके बाद समाज का मार्गदर्शन करने वाला अगर कोई दूसरा पुरुष नहीं हुआ तो वह समाज एक खंभे वाले तंबू की तरह खस्ताहाल हो जाता है।

मुझे अब कुछ रचनात्मक करना होगा लेकिन उसके लिए पैसों की जरूरत पड़ती है। मैं एक बड़ा याचक हूं। समाज के अन्य लोगों का अंतरंग अगर साफ होगा और अगर इन साफदिल लोगों को मेरा काम अगर मंगलमय लगा और उन्होंने अगर पैसों की मदद की तो वह हमें चाहिए ही, लेकिन हम उनकी मदद पर निर्भर नहीं रह सकते। हमें अपने बल पर खड़े रहना चाहिए।

'लाश जिसकी होती है उसे वही कंधे पर ढोता है।' इस कहावत के अनुसार हमें अपने काम का बोझ खुद ही उठाना होगा। अपने कार्य के लिए हमें ही दिल खोलकर से दान देना चाहिए।

जनता, 22 जनवरी, 1955

आज की शुरुआत मैं धर्मोपदेश के साथ करने वाला हूं। बौद्ध धर्म के बारे में मैं बताना चाहता हूं। बौद्ध धर्म की मेरी घोषणा आज की नहीं, मैं 14 वर्षों का छात्र था तभी से है। चौदह साल की उम्र में ही बौद्ध धर्म से मेरा परिचय हुआ । चौदह साल का था तभी से रामायण, महाभारत कृष्णलीलामृत, शिवलीलामृत, श्रीधराख्यान आदि सभी मराठी ग्रंथ मेरे पिताजी ने मुझसे दस-दस बार पढ़वा लिए थे। उस वक्त पिताजी के बर्ताव से मैं ऊब गया था।

एलफिन्स्टन हाइस्कूल में था तब मैंने कोई परीक्षा उत्तीर्ण की थी। तब मैं जिस 'बटाटायाची चॉल' में रहता था वहां के लोगों ने मेरे पास होने के उपलक्ष्य में अभिनंदन करने के लिए एक सभा आयोजन करने की सोची। दादा केलुस्कर की मध्यस्थता से वहां के लोगों ने बहुत कोशिशें कर मेरे पिताजी को इसके लिए मनाया। एक टेबल और कुर्सी के साथ सभा की शुरुआत हुई लेकिन सभा में केवल गिने-चुने लोग ही उपस्थित थे। बाकी लोग लंगोटी पहन कर अपने अपने घरों की दहलीज पर पान चबाते हुए बैठे थे। सभा का महत्व किसी को नहीं था।

लेकिन आज के हालात अलग हैं। आज अस्पृश्य समाज में काफी जागृति हुई है। बचपन में मेरे अभिनंदन के लिए जिस सभा का आयोजन किया गया था उसके अध्यक्ष दादा केलुस्कर थे। उस वक्त मैं अपनी अल्पमति से सभा में जो भी बोला था मुझे कुछ याद नहीं है। भाषण के बाद आयु. केलुस्कर ने मुझे गौतम बुद्ध का चरित्र उपहारस्वरूप दिया था। मैंने उससे पहले रामायण-महाभारत जैसे कई ग्रंथ पढ़े थे। उसी प्रकार यह किताब भी मैंने पढ़ी। लेकिन मेरे ध्यान में आया कि इस किताब से मिली सीख अन्य किताबों से मिली सीख में बहुत अधिक अंतर है। आगे चल कर इस किताब की ही तरह मैं अन्य किताबें पढ़ता रहा और धीरे-धीरे मेरे दिमाग में बातें साफ होती गईं। बौद्ध धर्म कैसा है, हिंदू धर्म कैसा है, दोनों धर्मों में कितना और कैसा फर्क है। दोनों का दृष्टिकोण कितना अलग है इसका मुझे पता चलने लगा।

मेरे पिताजी कहते कि हम गरीब हैं, लेकिन हमारी महत्वाकांक्षा बहुत बड़ी होनी चाहिए। महाभारत के द्रोणाच्रार्य गरीब थे। द्रोण के बच्चों को उनकी माता बाजरे का आटा पानी में मिला कर उसे ही दूध के नाम पर पिलाती थीं। कर्ण भी गरीबी से ही ऊपर उठा। बड़े पुरुष हमेशा गरीबी से ही ऊपर उठते हैं। मिली हुई गौतम बुद्ध के चरित्र की किताब मैंने पढ़ी तो मेरा मन डांवाडोल होने लगा। अन्य धर्मग्रंथों का पठन मुझे गलत लगने लगा। पिताजी की मृत्यु के बाद ऐसे धर्मग्रंथों के पठन का संकट मेरे ऊपर से टल गया।

उच्च शिक्षा पाने के लिए मैं अमेरिका गया। वहां भी बौद्ध धर्म का मैंने काफी अध्ययन किया। बौद्ध धर्म समझने के लिए और बुद्ध धर्म-चरित्र के कारण मेरे मन में उठे बवंडर को शांत करने के लिए मैंने वहां खूब किताबें पढ़ीं। बहुत चिंतन किया। तभी

मुझे हिंदू धर्म और बौद्ध धर्म का अंतर पता चला। बौद्ध धर्म के बारे में मेरा पागलपन काफी पुराना है।

लोग कहते हैं कि राजनीति में मेरा नुकसान हुआ है। अब बौद्ध धर्म के कारण भी मेरा नुकसान होना है। मैं उस नुकसान को भुगतने के लिए तैयार हूं। धर्म मेरा निजी मामला है। बौद्ध धर्म मुझे समझ आया, ठीक लगा। मैंने उसे लिया। राजनीति के झूठे चुनाव मुझे नहीं चाहिएं। झूठे चुनावों के कारण मैं महामंत्री भी बन सकता हूं। लेकिन मैं यह नहीं चाहता। राजनीति यानी क्रिकेट का खेल नहीं है। वह एक संप्रदाय है। रामानंदी, कबीरपंथी इंसान को अगर कहा जाए कि तू अपना पंथ छोड़ तो वह अपना पंथ नहीं छोड़ता। उसी प्रकार मेरा धर्म अटल था। मैंने एक बार स्वीकारा तो फिर मुझे उसी मार्ग से आगे बढ़ना होगा।

मैंने बौद्ध धर्म स्वीकारा है। आप भी स्वीकारें। केवल अस्पृश्य समाज द्वारा ही इस धर्म के स्वीकार से काम नहीं चलेगा। मेरी इच्छा है कि पूरे भारत द्वारा और समूची दुनिया के द्वारा इस धर्म को स्वीकार किया जाना चाहिए। (तालियां)

मैंने बौद्ध धर्म क्यों स्वीकारा इसके कारण मैं आपको बताता हूं। इसके कारणों की मीमांसा करना सही रहेगा। गौतम बुद्ध को पहले पांच शिष्य मिले। उन्हें पंचवर्गीय भिक्षु कहते हैं। कुल 40 शिष्य बनने के बाद बुद्ध को लगा अब शिष्यों को सम्मति देनी चाहिए। धर्मप्रचार के लिए दूर-दूर तक भेजा जाए। उस वक्त बौद्ध धर्म की व्याख्या गौतम बुद्ध ने अपने शिष्यों को इस प्रकार बताई। 'बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय, लोकानुकंपाय, हिताय, सुखाय, देव मनुस्सानं, धम्म आदी कल्याणं, अंति कल्याणं।'

बौद्ध धर्म बहुजनों के हित के लिए, सुख के लिए, उनसे प्रेम करने के लिए है। इस धर्म का स्वीकार केवल इंसानों द्वारा करके ही काम नहीं चलेगा। देवताओं के द्वारा भी इसका स्वीकार किया जाना चाहिए। (तालियां) जिस प्रकार गन्ना जड़ में, बीच में और ऊपरी सिरे पर भी मीठा होता है उसी प्रकार बौद्ध धर्म शुरू में कल्याणकारी है, मध्य में कल्याणकारी है और अंत में भी कल्याणकारी है। इस धर्म के आदि, मध्य और अंत सभी हितकारी और कल्याणकारी हैं।

लेकिन कोई मुझे बताए कि हिंदू धर्म - जिसे मैं ब्राह्मण धर्म मानता हूं - क्या बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय है ब्राह्मण और अन्य विद्वान लोग बताते हैं कि ब्राह्मण धर्म की संस्कृति 10 हजार साल पुरानी है। पुरानी संस्कृति है, लेकिन आज भी हिंदू धर्म में 7 करोड़ से अधिक अस्पृश्य लोग हैं। समाज से बहिष्कृत किए जाने के कारण जंगल में रहने वाले और चोरियां करके अपनी उपजीविका कमाने वाले कई लोग भी इस धर्म में हैं। बताइए, क्या ऐसे हिंदू धर्म को 'बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय' धर्म कहा जा सकता है?

दुनिया के कुछ कम्युनिस्टों को छोड़ दिया जाए जो धर्म जिसे नहीं चाहिए ऐसा एक भी व्यक्ति इस दुनिया में दिखाई नहीं देता। हमें भी धर्म चाहिए। लेकिन वह सत्धर्म होना चाहिए, जिसमें सभी लोग समान होने चाहिएं। सबको समान मौके मिलें। यही सच्चा धर्म है। बाकी सभी अधर्म ही कहलाएंगे।

हिंदू धर्म की शिक्षा के अनुसार अगर दुनिया में सर्वत्र ब्रह्म ही है तो फिर महारों, मांगों में, चमारों में भी उसे होना चाहिए। तो फिर हिंदू धर्म में ऐसी असमानता क्यों?

1910 में जब हिंदू-मुसलमानों में जातीयता को लेकर बखेड़ा शुरू हुआ तब हिंदू किसे कहा जाए? हिंदुओं की परिभाषा क्या है? जैसे मुश्किल सवाल उपस्थित हुए। तब देश के 11 विद्वानों ने 11 अलग-अलग परिभाषाएं दीं। और तब हिंदू शब्द में समाहित मनमुटाव और अराजकता सामने आई और पता चला कि वह कितना हास्यास्पद है। किसी की बात दूसरे की बात से नहीं मिल रही थी। सावरकर की हिंदू शब्द की व्याख्या देखिए -

‘आसिंधुः सिंधु पर्यंता यस्य भारत भूमिका।
पितष्टभुभुः पुण्यभुश्चैव सवै हिंदुः इति उच्च्यते’
राधाकृष्णन कुछ और ही कहते हैं -
‘प्रामाण्यं बुद्धिर्वेदषु साधनानाम् अनेकता उपास्या नाम नियमः’

तिलक की नजर में वेदों को प्रमाण मानने वाला हिंदू है। फिर धर्माचरण में उसकी साधना भले कुछ भी हो। किसी हिंदू व्यक्ति द्वारा वेदों को प्रधानता देकर पीर की भी पूजा की जाए तब भी कोई हर्ज नहीं, वह हिंदू ही है। क्या कहें तिलक की इस परिभाषा को? फिर बताइए, ऐसा धर्म क्या ‘बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय’ हो सकता है? (तालियां)

बौद्ध धर्म की स्थापना होती देख कर कई लोगों ने आवाजें उठानी शुरू की है। अखबारों में टीका-टिप्पणी की जा रही है। लेकिन उनकी तरफ ध्यान देने के लिए फिलहाल मेरे पास समय नहीं है।

एक बार सबका लिखना हो जाने दीजिए। देखते हैं मेरे खिलाफ कौन-कौन और क्या-क्या लिखते हैं। उनका लिखना बंद हो जाए तो फिर मैं अपनी लेखनी (कलम) उठाऊंगा।

धर्म हर मनुष्यमात्र के जीवन के लिए आवश्यक है और पोषक है। अन्य धर्मों की तरह क्या आत्मा है? वह कहां है? यह मैं नहीं जानता। अंगूठे जितना है या कलेजे के पास बैठा है पता नहीं। मैंने अभी तक भगवान को देखा नहीं है। हिंदू धर्म भगवान, आत्मा को मानता है। लेकिन उसमें इंसान के लिए जगह कहाँ है?

बौद्ध धर्म में कोई भेदभाव नहीं है। सब ओर समानता दिखाई देगी। बौद्ध धर्म में आत्मा, भगवान के बारे में नहीं सोचा गया है बल्कि इंसान-इंसान के साथ किस प्रकार पेश आए इस पर सोचा गया है। इस धर्म में नीति के बारे में बताया गया है इसलिए यह सत्धर्म है। बाकी के धर्म झूठ हैं। ब्राह्मण और पुजारियों ने मिल कर हिंदू धर्म बनाया है। बौद्ध धर्म में मोक्ष दिलाने के लिए ईसाई लोगों की तरह धर्मगुरू नहीं हैं, आत्मा को सद्गति देने वाले, पूजा की विधियां और यज्ञादि करने वाले ब्राह्मण तो बिल्कुल भी नहीं हैं।

जो धर्म इंसान का कल्याण होने में उसकी मदद करेगा वही धर्म है। बौद्ध धर्म का स्थापना जीवन में कल्याण की साधना के लिए अत्यंत आवश्यक है। यही इस धर्म की महानता है।

अमेरिका में ईसाई धर्म पुरातन युग से है लेकिन अमेरिका जैसे प्रभावी राष्ट्र में दो हजार से अधिक बौद्ध भिक्षु हैं। पीढ़ियों से चला आ रहा ईसाई धर्म त्याग कर उन्होंने बौद्ध धर्म अपनाया।

अमेरिका में फौज का सिपाही भी बौद्ध धर्म के अनुयायी हैं। इतना ही नहीं तो बौद्ध धर्म के प्रति आस्था के तौर पर सैनिक अपनी वर्दी पर बौद्ध धर्म का चिन्ह लगाते हैं। अमेरिकी सरकार को उन्होंने बाध्य किया कि वे बौद्ध धर्म के चिन्ह के इस्तेमाल संबंधी कानून बनाने पर विवश किया। हाल ही में अमेरिका में एक विशाल विहार बनाया गया है। पूरी दुनिया से इस विहार निर्माण के लिए 20 लाख रुपयों का चंदा मिला।

जर्मनी के बारे में तो पूछिए मत। वहां बौद्ध धर्म प्रचार संस्था हजारों में हैं। योरोप में एक भी ऐसा देश नहीं है जहां बौद्ध धर्म का प्रसार नहीं होता। भगवान गौतम बुद्ध पूरी दुनिया में प्रसिद्ध युगपुरुष हैं। वहां के लोग राम, विष्णु, कृष्ण को नहीं जानते।

दुनिया अगर भारतीय को जानती है भगवान बुद्ध के कारण। भारतीय देश को इसी युगपुरुष की जन्मभूमि के तौर पर पहचाना जाता है। अनजाने ही ईसाई धर्म को स्वीकार करने वाले हिंदी विद्वान लोग पश्चाताप से विह्वल होकर आज मान रहे हैं कि तुलनात्मक नजरिए से बौद्ध धर्म ईसाई धर्म से श्रेष्ठ है।

हमें कल्याणकारी बौद्ध धर्म चाहिए। हमारे पुरखे अज्ञानी थे। महार की, भीख मांगना यही उनके काम थे। उनकी धर्म में कोई दिलचस्पी नहीं थी। लेकिन हम आत्मनिर्भर बने हैं। हम और अन्य वर्गों के साथ खड़े रहना चाहते हैं। धर्म में उन्नति का मार्ग खुला होना चाहिए।

मेरे अन्य मित्रों को लगता है कि धर्म के कारण आर्थिक मामलों को नजरअंदाज करना होगा मैं कुछ आर्थिक मसलों पर काम करने जा रहा हूं। धार्मिक मसलों के कारण

आर्थिक मुद्दों को नजरंदाज करना होगा ऐसा अगर किसी 'आदमी' का कहना हो तो वह मुझे अपनी आर्थिक योजनाएं बताए। मुझे अगर वह योजना ठीक लगी तो मैं अपनी सारी ताकत उस पर काम में लगा दूंगा।

ईसाई धर्म और बौद्ध धर्म में फर्क है। ईसाई धर्म में ईसा ने बताया है कि गरीबों, आप दरिद्रता से ना डरें। मरने के बाद सारी दुनिया आपकी ही है। (हंसी) बौद्ध धर्म में आर्थिक मसले को इस प्रकार टाला नहीं गया है।

एक बार अनाथपिंडिक ने भगवान बुद्ध से आर्थिक मसलों के बारे में सवाल पूछा था। तब भगवान ने जवाब दिया था, "संपत्ति मानवी जीवन के लिए अत्यंत आवश्यक है। संपत्ति इकठ्ठा करें लेकिन उसका इस्तेमाल दूसरों को परेशान करने के लिए, दूसरों को गुलामी में जकड़ने के लिए कभी ना करें। संपत्ति शुद्ध साधनों से कमाई जाए और उसका अच्छा उपयोग हो।" धर्म और अर्थ यह दोनों बातें इंसान के लिए अत्यंत आवश्यक हैं। जीवनोपयोगी वस्तुओं के लिए धर्म और अर्थ दोनों की जरूरत है।

शाक्य लोगों में रूढ़ि थी कि साल में कम से कम एक बार तो मालिक को खेती करनी चाहिए। उसके अनुसार भगवान ने पिता से सवाल पूछा, "दूसरों की मेहनत का फल हम खाएं तो क्या यह सही है?" हमें अपना अनाज खुद कमा कर खाना चाहिए। धर्म और अर्थ ये दोनों बातें साथ साथ करनी होंगी। इसलिए अपनी योजना से आर्थिक हानि होगी यह वे मुझे साबित करके बताएं। केवल अर्थ के बारे में सोचने से भी हानि होगी अर्थ के साथ धर्म भी होना चाहिए।

कम्युनिजम कैसे जिंदा रहा? वह कैसे टिका रहा? यह शक्ति की बात है। शक्ति और जबरदस्ती के कारण वह टिका हुआ है। उन्हें प्रॉपर्टी, मालमत्ता चाहिए। रूस में प्रॉपर्टी के लिए गृहकलह मचा हुआ है। रूस के कड़े अनुशासन का पालन करने वाले जमींदारों के लुप्त होते ही लोग उछल कर खड़े हो जाएंगे।

अराजकता मचेगी और फिर सामाजिक व्यवहारों में अराजक मचेगा। बुद्ध का धर्म कम्युनिज्म में है। बौद्ध धर्म के भिक्षुओं की तरह कम्युनिस्टों को तय जीवनोपयोगी चीजें रखने का अधिकार है। वे वस्तुएं हैं - लोटा, पानी छानने के लिए कपड़ा और उस्तरा।

भगवान बुद्ध के निर्वाण को अब 2 हजार साल बीते हैं। लेकिन आज भी यह धर्म जोरदार ढंग से फैल रहा है। इसका कोई शासक नहीं और सर्वाधिकारी नहीं। अंतकाल में उनके शिष्य ने भगवान से पूछा, "भगवंत, आपके चले जाने के बाद इस धर्म का क्या होगा? इसके लिए कोई शासक, कोई हाकिम रखिए।" तब भगवान ने जवाब दिया कि, मेरी गैरहाजिरी में धर्म ही आपका शासक होगा। उसका अगर आप पालन नहीं करेंगे तो क्या फायदा? विशुद्ध मन से अपनाया गया धर्म ही आपका शासक होगा।"

दुनिया के कामकाज धर्म से चल रहे हैं । किसी जच्चा को बताया जाए कि यह बच्चा तुम्हारा दुश्मन है, तुम उसे दूध मत पिलाना, उससे तुम कमजोर बनोगी, जल्द बूढ़ी हो जाओगी, तुम्हारी सुंदरता घटेगी, यह बच्चा तुम्हारे लिए काल साबित होने वाला है। तो क्या बच्चे की मां इन बातों को मानेगी? कितना भी दुख होने पर, बीमारी में भी वह बच्चे को दूध पिलाएगी। बच्चे की परवरिश उसका धर्म है। दुनिया के सभी कामकाज धर्म के सहारे चलते हैं।

पुणे के लोग खुद भूखे रह कर खाना (खाने के डिब्बे) पहुंचाने का काम करते हैं। बिरयानी, पुलाव जैसा खाना डिब्बों में बंद रहता है। लेकिन वे लोग कर्तव्य से और ईमानदारी से डिब्बे पहुंचाते हैं। इसीलिए सबको धर्म का पालन करना चाहिए। धर्म का सत्धर्म होना जरूरी है। अधर्म नहीं उसे सुकर्म होना चाहिए। दुष्कर्म नहीं।

धर्म को लेकर लोगों के मन पर कितना गहरा प्रभाव है यह हमें खुद जाकर देखना चाहिए। हाल ही में मैं ब्रह्मदेश होकर आया। वहां की कुछ बातें आश्चर्यकारक हैं। वहां वर्गों में कम या ज्यादा का भेदभाव नहीं होता। किसी भी प्रकार की ऊंच-नीच की भावना को, वासना को वहां स्थान नहीं। जातिभेद नहीं। वहां सच्चा प्रजातंत्र है। उनके घर टेबल अथवा चारपाई की तरह लगते हैं। 15-20 फूट के। ऊपर लकड़ियां और चटाइयां लगी रहती हैं। अपने यहां दीवारें बनाने के लिए ईंटें, गारा, चूना, लोहा आदि काम में लाया जाता है। उनके घर का दरवाजा भी चटाई का ही बना रहता है। लात मारने से भी उनके घर टूट कर गिर सकते हैं।

वहां के लोग शाम 6 बजे खाना खाते हैं। शाम 6 बजे से 11 बजे तक घूमते-फिरते हैं। वहां चाय की दूकानें बंद होने के बाद सामान वहीं छोड़ते हैं। लेकिन वहां सामान की चोरी नहीं होती। हमारे यहां लोहे और सीमेंट से बनी दीवारें भी चोर तोड़ देते हैं। (हंसी)

दूसरी महत्वपूर्ण बात यह कि ब्रह्मी लोग पैसा सम्भाल कर नहीं रखते। खाना और दान-धर्म करना यही वहां पैसे का उपयोग है। बैंक में उनका पैसा नहीं है। बुद्ध का कहना है कि नित्य कुछ भी नहीं है।

मंडाले पर्वत पर बुद्ध विहार है, वह देखने के लिए मैं गया। विहार देखने के लिए मैं 1080 सीढ़ियां चढ़ा। अर्थात् मन का निश्चय था इसलिए। वैसे चढ़ने में मुझे दिक्कत होती है। इस विहार में बुद्ध की 14 फुट ऊंची मूर्ति है। यह मूर्ति पूरी सोने की बनी हुई है। वहीं ऊंची जगह पर एक पैगोडा बना हुआ है। उसमें करीब आधे करोड़ रुपयों का सोना है। सुबह से रात 11 बजे तक लोग प्रार्थना करने के लिए आते-जाते रहते हैं। रात 11 बजे के बाद वहां कोई नहीं बैठता। मूर्ति करीब 600 साल पुरानी है। लेकिन किसी ने आज तक रत्ती भर सोना भी नहीं चुराया है। लेकिन हमारे यहां देवी के गहने ब्राह्मण

पुजारी ही चुरा कर ले जाते हैं। (हंसी)

वहां के लोग झूठ नहीं बोलते। चोरी नहीं करते। क्योंकि बौद्ध धर्म यही बताता है।

यहां जब तक हिंदू धर्म है तब तक महारवाड़ा, मांगवाड़ा रहेंगे ही। इस धर्म की नीति ही ऐसी है। सब्जी-रोटी जैसे कार्यक्रम धर्म और रूढ़ियों में बदलाव नहीं ला सकते। समाज सुधार की खाल ओढ़ने वाले ब्राह्मण, धर्ममार्तंड जब तक यहां हैं तब तक यह सब ऐसे ही चलता रहेगा। मेरा यह कहना है कि, रोटी-सब्जी, सत्यनारायण के कार्यक्रम करने वाले भी बौद्ध धर्म में आएं।

एक बार विशाखा नामक शिष्या ने बुद्ध से सवाल पूछा कि, धर्म क्या है? उसे जवाब मिला कि, मलिन मन को साफ करना ही धर्म है। अस्पृश्यता सड़क पर पड़ा पत्थर नहीं है कि समाजसुधार करने वाले उसे उठा कर फेंक देंगे। हमारा मनोधर्म जब बदलेगा तभी धर्म भी बदलेगा।

दुनिया में सबसे पहले निम्न लोगों को धर्म की जरूरत महसूस होने लगी। रोमन, इटालियन साम्राज्य में गरीबों ने ही पहले ईसाई धर्म स्वीकारा।

विद्वानों का दावा है कि इस देश की संस्कृति एकरूप है। लेकिन उनका इतिहास झूठा है। यहां संस्कृति के दो प्रवाह हैं। एक ब्राह्मण धर्म का और दूसरा बौद्ध धर्म का। ब्राह्मण धर्म का गंदा पानी बौद्ध धर्म के साफ पानी में मिला। हिंदू धर्म के गंदे पानी को नाली बना कर बहा देंगे और साफ पानी को अपनाएंगे।

श्रीकृष्ण ने गीता में क्या कहा है? मारो, हत्या करो। गरीबों के उद्धार के बारे में कुछ बताया है? उसका कोई फायदा नहीं है। मैं गीता के बारे में लिखने वाला हूं।

इस धर्म के बारे में जानकारी पाने के लिए मैंने कई ग्रंथों का अध्ययन किया है। अपनी किताब में मैं इस धर्म का कैसे लोप हुआ इस बारे में लिखने वाला हूं। धर्मांतरण की मुझे कोई जल्दी नहीं है। अभी आप सभी को मैं भेड़ों की तरह नहीं ले जाना चाहता। मैं इसीलिए एक किताब लिख रहा हूं।

बौद्ध धर्म की दीक्षा लेने के बाद उसके नियमानुसार चलना होगा। तलवार की धार पर चलने वाले पांच अनुयायी भी मिले तो बहुत हुआ।

बाद में कर्मयोगी संत गाडगे महाराज और दूसरों ने डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को फूलों की मालाएं अर्पण कीं और सभा विसर्जित हुई।

331

प्रजातंत्र के दो दुश्मन हैं – तानाशाही और आदमी–आदमी में भेद करने वाली संस्कृति

यह सभा ब्रह्मदेश के सुप्रीम कोर्ट के न्यायाधीश यू चॅन ट्यून (Hon'ble Justice U Chan Htoon, Judge of the Supreme Court of the Union of Burma) के सम्मान में दिनांक 3 अप्रैल, 1955 को मुंबई के बुद्ध भवन, सिद्धार्थ कॉलेज में आयोजित की गई थी। इस अवसर पर डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने कहा–

बहनों और भाइयों, जनतंत्र के दो प्रमुख शत्रु हैं – एक है तानाशाही और दूसरी है इंसानों के बीच भेद करने वाली संस्कृति। अमेरिकी स्वतंत्रता के बारे में बकल ने कहा है कि तानाशाही के कारण निर्माण हुई शक्ति या सामाजिक संगठन स्थायी नहीं हो सकता। क्योंकि, तानाशाही का स्वरूप ही मूलतः अबाधित नहीं होता। उस प्रेरणा को हटा लिया जाए तो वह संगठन डिग जाता है। इसीलिए कम्युनिज्म की सत्ता अबाधित नहीं है। इसी प्रकार, इंसानों में भेद करने वाली नीति, हेतुतः सामाजिक, आर्थिक भेद करने वाली संस्कृति दोनों से जनतंत्र के स्वरूप को खतरा है।

हिंदु धर्म के बारे में बोलना हो तो उसे मोटे तौर पर मुख्यतया तीन प्रमुख हिस्सों में बांटा जा सकता है। पहला होगा पद–दलित निम्नवर्ग– धर्म ने इस वर्ग की सामाजिक और आर्थिक घुटन की व्यवस्था की है, दूसरा वर्ग ब्राह्मणेतरों और अन्य पिछड़ों का वर्ग है– यह वर्ग तुलनात्मकता से स्थितिप्रज्ञ वर्ग है। इस वर्ग में बदलाव लाने की राह का प्रमुख रोडा है इसकी अशिक्षा। शिक्षा के अभाव के कारण इस वर्ग में नए अहसास जगाने में अधिक देर लगेगी। तीसरा और आखिरी वर्ग है ब्राह्मण और तत्सम जातियों का। इस वर्ग के लिए इस धर्म में विशेष हक और अधिकारों की योजना है। यह वर्ग अपने अधिकारों पर तथा उपभोगों पर अतिक्रमण के बाद कालानुरूप बदलाव तो दूर की बात है, प्रतिकार किए बगैर नहीं रह सकता। क्योंकि, धर्म ने उन्हें जो उच्च स्थान दिया है उसे वे कायम रखना चाहते हैं। इसीलिए वे इस प्रकार का धर्म कायम रखना चाहते हैं। उनकी नजर होने वाले बदलावों की ओर स्थिर नजरिए से देखती है और वेदों से परे देखते हुए उनका बौद्धिक प्रतिपादन – उनके विचार अकलुषित नहीं रह सकते। लेकिन मैं बहुजन समाज की उपेक्षा नहीं कर सकता। इसीलिए अपनी सारी आलोचना को ध्यान में लेते हुए इस देश में बौद्ध धर्म के भविष्य को लेकर आशावादी हूं।

ब्रह्मा के मुंह से ब्राह्मण, बाहुओं से क्षत्रिय, पेट से वैश्य और पैर से शूद्र के जन्म पर आधारित हिंदू धर्म की रचना इंसानियत को अपमानित करने वाली, बुद्धि का भेद करने वाली और ईश्वर से द्रोह करने वाली है। इस प्रकार की धर्मरचना में इंसानों के बीच कभी भी समता नहीं आ सकती। व्यक्ति का विकास कभी पूरा नहीं हो सकता। इसीलिए, पूरी तरह सोचने–विचारने के बाद मुझे लगता है निम्न वर्ग को ऐसी सोच के

जनता : 9 अप्रैल, 1955

खिलाफ विद्रोह करना होगा, नहीं, उसे त्यागना ही होगा। इसका मतलब है कि इस प्रकार की सोच रखने वाले धर्म का त्याग कर समता और मानवीय एकता की सीख देने वाला बुद्ध का धर्म उसे अपनाना चाहिए। इसलिए अपने सभी बंधुओं को आखिरी बार मैं कह रहा हूं कि मुक्ति प्राप्ति के लिए बौद्ध धर्म की दीक्षा लें। पश्चिमी इतिहास को देखें तो पता चलता है कि राज्य और धर्म (State & Church) को अलग रख कर जितने युद्ध हुए वे उनके इतिहास की सबसे बड़ी गलतियां हैं। मानव के जीवन से धर्म को इस प्रकार अलग नहीं किया जा सकता। बल्कि धर्म मानवीय जीवन का सर्वांग है, अधिष्ठान है। सभी मामलों की वह अंत:प्रेरणा है। इस मामले को कोई विचारवान नजरंदाज नहीं कर सकता। 'रोम का ह्रास' ('Fall and Decline of Roman Empire') गिबन की लिखी इस किताब का कुछ हिस्सा पढ़ें तो एक बात साफ तौर से ध्यान में आती है कि ईसाई धर्म की आहट सुनाई देते ही अभिजात वर्ग के अत्याचारों से तंग आकर छत के बिना शाम के भोजन की तलाश में सड़कों की खाक छानते फिरनेवाले गुलामों ने ही उसे पहली बार जीवनमुक्ति (salvation) के तौर पर अपनाया। रोम में गुलामों ने ही ईसाई धर्म का पहला पगचिह्न बनाया। यह एक बहुत बड़ा ऐतिहासिक तथ्य (historical reality) है इसीलिए, आसपास के वातावरण का अवलोकन कर अपने पर होने वाले अन्याय (injustice) और अत्याचार (torture) से ही बौद्ध धर्म के बीजारोपण हुए बगैर नहीं रहेगा।

मैंने पहले ही स्पष्ट कर दिया है कि हिंदू धर्म विषमता पर (Discrimination) आधारित है। दूसरा बड़ा पूर्वी धर्म है इस्लाम। बंधुभाव (Brotherhood) के लिए यह धर्म मशहूर है। लेकिन यह बंधुभाव केवल उनके धर्म तक ही सीमित है। बौद्ध धर्म सभी मानवों को समानता के अधिकार देता है। केवल इसी धर्म में मानव जीवन का योग्य आदर (Respect for human being) है। उसमें इस प्रकार का भेदभाव (Discrimination) नहीं है। बौद्ध धर्म ही सच्ची समता का धर्म है। मुझे बुरा लगता है मैंने इस कार्य को संपन्न करने के लिए मेरी ओर से देरी हो गई। वरना आज मुझे इस बीज की बुआई के फल देखने को मिलते। इस बारे में मुझे रत्ती भर का शक नहीं है कि मेरे समाज के 90 प्रतिशत लोग मेरे कथन से सहमत होंगे। आलोचक चाहे कुछ भी कहें मुझे इस बारे में कोई शक नहीं है कि इस देश में बौद्ध धर्म फिर से पुनर्जीवित होने वाला है इस बारे में मेरे मन में तिलमात्र की संदेह नहीं है।

कुछ लोग आलोचना करते हैं कि आजकल के युग में धर्म की जरूरत ही क्या है? मुझे लगता है कि ऐसे लोग मानवीय समाज की धारणा के लिए धर्म की कितनी आवश्यकता है यही बात भूल जाते हैं। मानवीय समाज को धर्म ने दो देन दी हैं–पहली, मानवीय जीवन में एकता साबित रखने के लिए मानसिक प्रेरणा का निर्माण करना। धर्म के कारण ही मानवीय एकता के लिए पोषक विशिष्ट प्रकार के माहौल का निर्माण होता है। दूसरी, मानवीय समूह में धर्म ही समानता का निर्माण कर सकता है। इन दो महत्वपूर्ण कसौटियों के कारण वर्तमान स्थितियों में समता का निर्माण कर अच्छी तरह से जनतंत्र को कामयाब करना हो तो धर्म बेहद जरूरी है।

332

केवल बुद्ध ने मानवीय विवेक को जागृत किया

भगवान बुद्ध का जन्म, बुद्धत्व प्राप्ति और उनका परिनिर्वाण - ये तीनों घटनाएं वैशाख पूर्णिमा के दिन ही घटित हुई हैं इसलिए यह दिन विशेष रूप से मनाया जाता है। 1955 में यह दिनांक 5 मई को था। डॉ. बाबासाहब अम्बेडकर ने यह दिन सोपारा में जहां बुद्ध अवशेष मिले थे वहां मनाना तय किया।

सोपारा पूर्व भारत के पश्चिम किनारे पर बसा महत्वपूर्ण बंदरगाह था। हजारों साल पूर्व अरबी यात्रियों द्वारा लिखे यात्रावर्णनों में सोपरिरा का जिक्र कुबेर नगरी के तौर पर किया है। हाल ही में सोपारा के पास अनुसंधानकर्ताओं को अशोक के शिलालेख मिले हैं। सोपारा के कारण ही बोरीवली के पास स्थित कान्हेरी गुफाओं में उस जमाने में बुद्ध विहारों की स्थापना हुई होगी। अनुसंधानकर्ताओं को उत्खनन करते समय सोपारा में खास बनाई गई इमारत में जतन से रखा गया बुद्ध का दांत मिला था। 1955 की वैशाख पूर्णिमा मनाने के लिए डॉ. बाबासाहेब ने इसी स्थान को चुना था। गिने-चुने लोग ही वहां उपस्थित थे। उस अवसर पर डॉ. बाबासाहब ने आम के पेड़ के नीचे आसन बिछा कर धर्म के बारे में जो विचार प्रकट किए उनका सारसंक्षेप यहां दिया जा रहा है।

''आज मैं आप लोगों को भगवान बुद्ध के धर्म का सारांश बताने वाला हूं। बुद्ध द्वारा बताए गए धर्म को अगर छोड़ दें तो सभी धर्मों का निर्माण ईश्वर और आत्मा इस जोड़ी के सहारे ही किया गया है। भक्ति की तथाकथित पुण्यकर्मों का गट्ठर लेकर जाने वाले जीव की उससे मुलाकात होती है। परमात्मा और आत्मा के बीच का संबंध पक्का करने के लिए एक काल्पनिक आधार बनाया है। आत्मा ईश्वर में विलीन होती है। इस कच्ची बुनियाद पर खड़ा यह परमात्मा-आत्मा का खोखला महल है। भक्ति के प्रकार हम जानते ही हैं। पूजन-अर्चन, धूप-दीप, मंत्र-तंत्र, जाप-तप, कर्म-कांड आदि मार्गों का भक्ति के लिए आधारित किया जाता है। इनके अलावा जीव-हिंसा और नरबलि जैसी अघोरी प्रथाएं भी हैं। भूतों को प्रसन्न करने के लिए कई मूर्खता करने जैसी विधियां भी हैं।

सबके मूल में एक ही कल्पना होती है और वह यह है कि जीव पापी होता है इसीलिए उसे जन्म लेना पड़ता है। पापक्षालन के लिए जीव अगर अपनी देह को तकलीफ दे, तप-त्याग करे तो ही ईश्वर से उसकी मुलाकात हो सकती है। इस प्रकार जीव का

प्रबुद्ध भारत, 3 मई, 1958, प्रस्तुत संक्षिप्त वृत्त आयु. वी पागराऊत ने लिखा है - कार्यकारी संपादक, जनता।

उद्धार हो सकता है। जीवन-मष्ट्त्यु के फेर से जीव को मुक्ति मिल सकती है। कमो-बेश इसी प्रकार की भ्रामक कल्पनाएं आत्मा और ईशवर का संबंध जोड़ने के लिए और उनका अस्तित्व साबित करने के लिए सब दूर फैलाई गई हैं। बौद्ध धर्म में आत्मा के लिए कोई स्थान नहीं है और ईश्वर भी नहीं है।

बौद्ध धर्म के अलावा अन्य किसी भी धर्म को लीजिए, हर धर्मानुयायी और उनके प्रमाण ग्रंथ यही बताते हैं कि उस धर्म की स्थापना ईश्वर द्वारा की गई है। जिनके द्वारा ईश्वर ने धर्म बताया जाता है वे धर्मप्रवर्तक ईश्वर के प्रेषित अथवा दूत माने जाते हैं। ईसाई धर्म के संस्थापक ईसामसीह, यहूदी धर्म के प्रणेता मोझेस और इस्लाम धर्म के प्रवर्तक मोहम्मद में से हरेक ने अपने को ईश्वर का संदेश लोगों तक पहुंचाने वाल दूत होने की बात कही है । प्रेषित की भूमिका ईश्वर-मानव संबंधों में पोस्टमेन से अलग नहीं दिखाई देती। भेजे गए मानव होते हुए भी ईश्वर के आदेश वह मानवों को बताता है इसलिए उसके द्वारा व्यक्त किए गए विचार, उसके मुंह से निकलने वाली बातें और उसके वचन संशयातीत माने जाते हैं।

इस प्रकार प्रेषितों द्वारा बताए गए ईश्वर प्रणीत वचनों पर सोचने-विचारने की राह ही रोक दी गई। जिज्ञासा को संतुष्ट करने के लिए और सच-झूठ की कसौटी पर उनकी पड़ताल करने के साधन ही समाप्त कर दिए गए।

भगवान बुद्ध ने धर्म के बारे में बताते हुए यह कभी नहीं कहा कि मैं कह रहा हूं केवल इसलिए बौद्ध धर्म स्वीकारें। उल्टे, उन्होंने कहा है कि आपकी बुद्धि को ठीक लगे तभी इसको स्वीकार करना। इस प्रकार उन्होंने मनुष्य की बुद्धि का आह्वान किया है। बौद्ध धर्म जांच-परख के बाद बताया गया धर्म है। रोग की पुष्टि के बाद दी गई दवा है। भगवान बुद्ध ने पहले मानव जाति के रोग को जाना। इस जांच से पाया जवाब कि दुनिया में दुख और दरिद्रता ये दो महाभयंकर रोग हैं। इसी को बौद्ध धर्म का अधिष्ठान कहा जा सकता है। अब यह सवाल पैदा होता है कि दुख और दरिद्रता के रोगों को कौन-सा धर्म नष्ट करता है? जो धर्म दुख और दरिद्रता को हमेशा के लिए नष्ट करने का प्रभावी और असरदार मार्ग नहीं बताता वह धर्म हो ही नहीं सकता। क्योंकि धर्म सभी मनुष्यों द्वारा सोच-समझकर स्वीकारा तथा समाजधारण के लिए है।

अन्य धर्मों में मरने के बाद क्या होगा इसी बात पर ज्यादा विचार किया गया है। वे केवल यही हर वक्त सोचते रहे। मरने के बाद स्वर्ग मिलेगा या नर्क यह डर लोगों की गर्दन पर सिंदबाद की गर्दन पर सवार बूढ़े की तरह बैठा कर आलसी, धूर्त और लोगों को लूट कर खाने वाले लोगों ने धर्म को एक हथियार की तरह इस्तेमाल किया। मृत्यु के बाद के हालात का काल्पनिक, रंगीन चित्र बना कर भय निर्माण करना और लोगों को मुश्किल में डालना और अपनी वंश परंपरा को, अपनी अय्याशी को जारी रखने

का एक व्यवसाय ही चालाक और धूर्त लोगों को मिला। मरने के बाद जो होना है सो होगा लेकिन जो कष्टमय है उसे सुखमय करने का सवाल मृत्यु के बाद वाले काल्पनिक सवालों के बारे में सोच-विचार कर कैसे मिलेगा? इस प्रकार अगर सोचा जाए तो अकेले बुद्ध ही यथार्थवादी थे। उन्होंने दुख के कारण ढूंढे। वे तीन प्रकार के हैं - आध्यात्मिक, आधिभौतिक और आधिदैविक।

आध्यात्मिक अर्थात् निजी। व्यक्ति द्वारा अपने कर्मों के कारण जो दुख अपनी तरफ खींच लिया है वह, अपने कर्मों से निर्मित दुख है। शराबी व्यक्ति शराब पीकर अपने शरीर को हानि पहुंचाता है, अपने परिवार को नष्ट कर देता है उसे आध्यात्मिक दुख कहा जा सकता है।

आधिभौतिक अर्थात् सामुदायिक दुख। असमान बर्ताव और अन्याय के कारण जो संकट आते हैं, जैसे कि अस्पृश्यों के हिस्से आने वाले सामाजिक दुख, समान मौके न मिलना आदि इसमें शामिल हो सकते हैं।

आधिदैविक अर्थात् प्राकृतिक दुख। रेल, हवाई जहाज, पानी के जहाज, मोटर आदि के कारण होने वाली दुर्घटनाएं, तूफान, महामारी, बाढ़ आदि विपत्तियों के कारण निर्माण होने वाले दुख। इन दुखों को दूर करने के लिए साधन बताया है - पंचशील। किसी की जान न लें, चीजें आदि न चुराएं, झूठ ना बोलें, व्यभिचार न करें और शराब या तत्सम अन्य किसी नशीली चीजों का सेवन ना करें। इन पांच नियमों का पालन करने से दुखों का निर्माण ही नहीं होगा।

आधिभौतिक दुखों से छुटकारा पाने के लिए श्रेष्ठ अष्टांग मार्ग का अवलंब करें - 1. सम्यक दृष्टिवा, 2. सम्यक संकल्प, 3. सम्यक वाचा - चुगली न करें, 4. सम्यक कर्म, 5. सम्यक आजीवन बुरे कर्मों से पैसा कमा कर उपजीविका न कमाना 6. व्यायाम कसरत - अच्छे विचारों को बढाएं और बुरे विचार मन में आने न दें, बुरे विचार आएं तो उनका नाश करना, 7. सम्यक स्मृति - शरीर के सुख-दुखादि वेदनाओं का बार-बार अवलोकन करना, 8. सम्यक समाधि - किसी भी दुष्ट मानसिकता से मन को अलग रख कर मन को हमेशा प्रसन्न और शांत रखना।

इसमें से सम्यक दृष्टि का महत्वपूर्ण स्थान है। हम जो काम करते हैं उससे केवल अपना ही लाभ हो इस बात पर ध्यान केंद्रित करने के बजाय अपना हित साध्य करते हुए किसी की हानि तो नहीं हो रही, किसी को नुकसान तो नहीं पहुंच रहा इस बात का खयाल रखा जाए तो दुनिया के आधिभौतिक दुख खत्म होंगे।

इन्हीं के साथ दस पारमिता भी बताई गई हैं। पारमिता अर्थात् जितना हम कर पाते हैं उतना। इन पारमिताओं में प्रज्ञा श्रेष्ठ है। हर पारमिता को प्रज्ञा की कसौटी पर कसना

ही चाहिए। प्रज्ञा को अंग्रेजी में विज्डम कहा जाता है। प्रज्ञा का इस्तेमाल न कर आदमी मूर्खों की तरह कैसे बर्ताव करता है इसका एक उदाहरण मैं आपको बताता हूं।

एक छोटे से गांव में एक पादरी रहता था। संकट आने पर घुटने टेक कर प्रार्थना करनी चाहिए इतना ही उसे पता था। एक बार उस गांव के झोंपडियों में आग लग गई। पादरी वहां गया और सबको इकट्ठा कर प्रार्थना करने लगा। जाहिर है कि आग से सभी झोंपड़ियां जल कर खाक हुईं। प्रज्ञा का अगर उसने थोड़ा इस्तेमाल किया होता तो तुरंत बाल्टी उठा कर चल देता और औरों को प्रार्थना में न लगाता तो शायद आग से कई झोंपड़ियां बचाई जा सकती थीं।

शील और नैष्कर्म का परस्पर संबंध है। संकटग्रस्त लोगों को बचाने के लिए प्रयत्नों की शिकस्त करने को दान पारमिता कहते हैं। लोगों के कल्याण के काम उत्साह के साथ और तत्परता से करने को वीर्य पारमिता कहते हैं। क्रोध अपने आप आता है लेकिन क्षमा का गुण कोशिश कर प्राप्त करना पड़ता है। सत्य न हो तो लाचारी और चापलूसी की मानसिकता बनती है। अधिष्ठान यानी दृढ़निश्चय। जिस प्रकार बड़े मामलों में रखा जाता है उसी प्रकार छोटे-छोटे मामलों में भी उसे रखना चाहिए। सब पर एक-सा प्रेम करने को मित्रता और शुभ कार्य में रुकावट पैदा न करने को उपेक्षा पारमिता करते हैं।

पंचशील, आर्य अष्टांगिक मार्ग और ये दस पारमिता दुख का निरोध कर दुख का नाश करने में समर्थ हैं। दुनिया के दुख का निवारण हो यही बुद्ध धर्म का सार है। हम भारतीयों को अपने दर्शन पर बहुत गर्व है। लेकिन पिछले एक हजार सालों से एक भी सिद्धान्त शास्त्री अथवा दार्शनिक पैदा नहीं हुआ है। तत्वानुसार चिंतन कर कोई सिद्धांत प्रस्तुत करने के लिए विद्वानों की जो मानसिकता होनी चाहिए वह अब नहीं रहने के कारण विद्वान विचार-विनिमय और विचारों के लेन-देन से अलग हुए। इससे विद्वानों की बुद्धि छोटे-छोटे दड़बों में बंद होकर कुंठित हुई। इस कारण सत्य की खोज और सत्य को ग्रहण करने का कार्य बंद होकर पंडितों के बजाय किताबी कीड़ों का वर्ग निर्माण हुआ।

ज्ञान की कुंजी
बताएं एक बारी में
ऐसी कल्पना नष्ट हुई

कई सारे ग्रंथ पढ़ कर फायदा क्या? गधे की पीठ पर किताबें लादने से उसे जितना लाभ होगा उतना ही लाभ ऐसे पठन से हो सकता है। ग्रंथ पढ़कर उसका आशय ग्रहण करने की शक्ति होनी चाहिए। नित नई कल्पनाएं सूझनी चाहिएं। सिद्धांत समझना, ग्रहण करना आना चाहिए।

आज चाहे कोई भी विषय या विज्ञान लीजिए, साहित्य, दर्शन, अर्थविज्ञान, स्वास्थ्य विज्ञान, विज्ञान, राजनीति, युद्धनीति आदि किसी भी ज्ञान की शाखा को ही लीजिए।

भारतीय के तौर पर जो भी कुछ है वह पूर्णता को अभी पहुंचा नहीं। वैसे भी ज्ञान कभी भी पूर्णत्व को प्राप्त नहीं करता। आज परिपूर्ण लगने वाला ज्ञान का अंग या शाखा भविष्य में अपूर्ण लगेंगी ही क्योंकि हर दिन उसमें बढ़ोतरी होती रहती है, उसमें और भी कुछ-कुछ जुड़ता रहता है। मेरे कहने का उद्देश्य यही है कि इस देश के विद्वानों ने नालंदा, तक्षशिला, विक्रमशिला, उज्जयिनी, अवन्ती इन वैश्विक कीर्ति प्राप्त तत्कालीन विश्वविद्यालय के आचार्यों ने जो ज्ञानसंचय किया उसमें पिछले हजार सालों में नया कुछ तो जुड़ा ही नहीं साथ ही 'जो-जो अपने को पता हो वह सब दूसरों को सिखा कर सबको सयाना बना देना चाहिए' इस उक्ति के विरुद्ध आचरण करने के कारण जो ज्ञान मूल में था उसका भी लोप हुआ। शिष्य को ज्ञान देते हुए गुरु को कुछ अपने लिए बचा कर रख चाहिए। गुरु अगर सौ इलाज जानता हो तो निन्यानबे चीजें चेले को देकर एक गुरुचाबी अपने हाथ में रखें इस प्रकार की सोच फैलने से ज्ञान का ह्रास होकर केवल विकृत रूप बाकी रहा। मनुष्य को निर्वाण का पद प्राप्त आना चाहिए। धम्मपद में कहा गया है - निब्बाणं परम सुखं। अपने पास बहुत सारी संपत्ति है इसलिए सुख की प्राप्ति नहीं होती। केवल पांडित्य से व्यक्ति सुखी नहीं होता। वह दुखी नहीं होता लेकिन सुखी भी नहीं होता क्योंकि अति लोभ, खून, चोरी, पर स्त्रीगमन आदि विकार मनुष्य को जन्म के साथ ही मिलते हैं इसलिए उन पर नियंत्रण रखना आना चाहिए।

भगवान कहते हैं मानव जलती हुई आग है। इसी आग के कारण विकार पानी की तरह उबलते रहते हैं। अग्नि को चेताया जा सकता है या उसे शांत किया जा सकता है। विकारों को नष्ट किया जा सकता है लेकिन उन्हें जड़ से उखाड कर फेंका नहीं जा सकता। अग्नि का उपयोग करने के लिए उसे मंद रख कर अनाज उस पर पकाना पड़ता है उसी प्रकार मानव का उपयोग समाज के लिए हो इसके लिए बीच की स्थिति है निर्वाण। इससे मनुष्य दस विकारों के अधीन न जाकर तर्कशुद्ध विचारों के साथ समाज के लिए उपयोगी कार्य कर सकता है।

जिन्होंने धर्म के सिद्धांतों के बारे में चर्चा की उन्होंने उसे इतना गुप्त रखा कि भगवंत को बताना पड़ा। महिलाएं, झूठे धर्ममत और भट-ब्राह्मणों की पोथियां ये तीन चीजें ही गुप्त रखी हैं। इसके बावजूद - श्रुतीविभिन्ता: स्मष्टतिविभिन्ता:

धर्मस्व तत्वं नि हितं गुहायां

महाजनो येन गतस्य पंथ:

धर्म के सिद्धांतों की - पीछे से चली आई आगे चली गई, ऐसी स्थिति बनाई गई। श्रुति कुछ और बताती हैं, स्मृतियां कुछ और ही उपदेश करती हैं। धर्म के तत्व बहुत ही गहन और गूढ़ हैं फिर करें क्या? तो, चार बड़े लोग जिस राह से जाते हैं उसी राह को अपनाओ। भगवान बुद्ध ने कहा है कि केवल मैं कहता हूं इसलिए नहीं वरन् आपकी

बुद्धि को, आपके विवेक को अगर ठीक लगे तो ही धर्म का यह मार्ग स्वीकारें। अंधे बन कर चार लोगों के पीछे आप चलने का आदेश और दूसरी ओर बुद्धि का आह्वान। दो विचारधाराओं में कितना बड़ा अंतर है!

कोई भी सवाल पूछे जाने पर बड़े-बड़े ऋषि-मुनियों ने कानों पर हाथ रखे। याज्ञवल्क्य ऋषि से पूछा आप आत्मा के बारे में बताते हैं तो आत्मा है कहां? जवाब मिला - नेति, नेति! यानि कि, मुझे पता नहीं। अच्छा, फिर आत्मा का मृत्यु के बाद क्या होता है? जवाब मिलता है - नेति, नेति! ठीक है, यह पता नहीं भी होगा लेकिन आत्मा का आकार तो पता होगा इसलिए एक और सवाल पूछा कि - क्या आत्मा ताड़ के पेड़ जितनी है? तब भी जवाब मिलता है - नेति, नेति! - अर्थात् सिर्फ और सिर्फ 'ना'।

आत्मा का स्थान क्या है, उसका आकार कैसा है, आगे उसका क्या होता है इस बारे में बिल्कुल भी जानकारी न होने के बावजूद आत्मा के बारे में इतना बेमतलब का बोला गया है कि केवल बार-बार यह शब्द सुन कर ही एक काल्पनिक वस्तु के अस्तित्व के बारे में बढ़-चढ़ कर हामी भरी जा रही है। प्रियतमा का नाम पता नहीं, गांव के बारे में पता नहीं, रंग-रूप या उम्र का पता नहीं लेकिन मैं उसे चाहता हूं - ऐसा बताने वाले पागल रसिक की तरह ही हालत आत्मा के अस्तित्व पर विश्वास करने वालों की होती है।

सच कहो, तो आत्मा नहीं है यह साबित करने की जरूरत ही नहीं है। जो कहते हैं कि आत्मा है उनकी जिम्मेदारी बनती है कि वे उसे दिखा दें। आत्मा नहीं है यह सत्य है। आत्मा है यह प्रचार ही भ्रम है।

आत्मा का अस्तित्व साबित करने के लिए पुनर्जन्म की कहानी गढ़ी गई। शरीर नाशवान है, आत्मा एक शरीर छोड़ कर दूसरे शरीर में प्रवेश करती है आदि कोपलकल्पित कहानियाँ कही जाती हैं। शरीर काटने पर शरीर का हर अंग दिखाई देता है, लेकिन यह आत्मा दिखाई नहीं देती, क्यों? अच्छे-अच्छे शल्यक्रियाविशारद हैं, जाकर उनसे पूछिए, उनसे कहें कि बताइए आत्मा कहां है? शरीर से निकाल कर दिखाइए।

बौद्ध दर्शन में पुनर्जन्म माना जाता है ऐसा तुरंत कहा जाएगा। लेकिन उस सिद्धांत का आत्मा के साथ कोई ताल्लुक नहीं है। बौद्ध पुनर्जन्म सिद्धांत अर्थात् पुनर्निर्माण। प्रकृति की पुनरावृत्ति। पिता के चेहरे जैसा चेहरा लेकर पुत्र पैदा होता है इसलिए वह पिता नहीं है। पिता के सभी गुणों का वास पुत्र में नहीं होता। क्योंकि, पिता के साथ में माता के गुण भी उसमें आते हैं। साथ ही वातावरण का असर भी होता है। एक आम से दूसरा आम पैदा होता है। इसी तर्ज पर चलने वाली घटनाओं को पुनर्निर्माण कहते हैं। हालांकि जमीन के साथ पानी हवा खाद के असर से जैसे एक आम के पेड़ पर मीठे फल पैदा होंगे वैसा ही फल दूसरे पेड़ पर पैदा होगा इसका भरोसा नहीं। अगर अच्छा

असर हुआ तो फल अच्छा आएगा, बुरा असर हुआ तो फल भी बुरा ही आएगा। बीज शुद्ध हो तो फल अच्छा ही होगा। इसीलिए किसी प्रांत में विशिष्ट फूलों की फलती है अन्य जगह ले जाने पर वह जिंदा भी नहीं रहते। जैसे चाय नीलगिरी के बागानों में कॉफी असम अच्छे संतरे नागपुर में ही पैदा होते है, नारियल समंदर किनारे ही बढ़ते हैं, हापुस आम रत्नागिरी का ही स्वाद और रस में बेहतरीन होता है। मसालों के लिए जावा द्वीप मशहूर है। इसलिए कुल पुनर्निर्माण के काम को ही पुनर्जन्म कहा गया है। लेकिन पुनर्जन्म शब्द का सहारा लेकर कहा जा रहा है कि आत्मा को बौद्ध दर्शन में मान्यता है, वह गलतफहमी ही है।

ब्राह्मण और बौद्ध धम्म कर्म का अर्थ अलग-अलग लगाते हैं। कर्म महत्वपूर्ण बात है। इस दुनिया का कामकाज कैसे चल रहा है? ब्राह्मण ग्रंथ बताते हैं कि भगवान चलाते हैं। उसे ब्रह्मा भी कहते हैं। अन्य धर्म भी ईश्वर, अल्ला, गॉड के नाम से इसी कल्पना की पुष्टि करते हैं। बौद्ध धर्म में ईश्वर नहीं है। बौद्ध धर्म बताता है कि दुनिया हरेक के कर्म के अनुसार चलती है। इसलिए बौद्ध धर्म ने मनुष्यों पर जिम्मेदारी डाली है। जैसा करोगे वैसा ही पाओगे ऐसी चेतावनी दी। इसे कर्मविपाक कहते हैं। क्रमविपाक यानी हमारे कर्मों से निर्माण होने वाले फल। बौद्ध धम्म में कर्म का मतलब पिछले जन्म में किए पाप-पुण्यों की गठरी ऐसा नहीं लगाया जाता। कुछ कर्म ऐसे होते हैं जिसके परिणाम तुरंत भोगने नहीं पड़ते। उस कर्म का, क्रिया का असर कुछ समय बाद होता है। लेकिन जन्मांतर से नहीं, क्योंकि बौद्ध धर्म पुनर्जन्म को नहीं मानता।

इसलिए कहा जा सकता है कि बौद्ध धर्म ने मनुष्य के अच्छे गुणों को बढ़ाने के लिए अवसर रखे हुए हैं। मनुष्य को अपनी प्रगति के लिए, अपनी उन्नति के लिए खुद ही कोशिश करनी पड़ेगी ऐसा कहा है। मेरे माथे पर यही लिखा है, यही मेरा विधिलिखित है, यह ब्रह्मा की खींची लकीर है, कह कर निराश होने की जरूरत नहीं है। अपने उद्धार की कोशिश करना चाहिए यह राजमार्ग बौद्ध धर्म बताता है। संचित, पूर्व जन्म के कर्मों का फल यह मनुष्य को निष्क्रिय बनाने वाला, उसके धीरज को खत्म करने वाला सफेद झूठ है।

पूर्व जन्म की कल्पना के कारण पापकर्म करने को बढ़ावा मिलता है। पिछले जन्म में किया हुआ पुण्य है, सो इस जन्म में पाप करने में हर्ज ही क्या है ऐसा विचार थोड़े अच्छे घर के व्यक्ति के मन में आता है। लेकिन इस प्रकार सोचने वाला आदमी मानव जाति के लिए नुकसानदेह होता है। पतित भी दो तरह के होते हैं। एक वह जिसे यह अहसास होता है और हमेशा उसका मन उसे कुरेदता रहता है कि वह पतित है, दूसरा पतित वह होता है जिसे अपने पाप कर्मों के बारे में बुरा नहीं लगता। हमेशा पिटने वाला पिटने से नहीं डरता कुछ उसी तरह।

जिस पतित व्यक्ति को अपनी स्थिति का अहसास होता है और जिसे हमेशा उसका मन कचोटता रहता है वे अपनी स्थिति से उबरने की कोशिश करते रहते हैं। अपने अहसासों के कारण वह अपना उद्धार कर सकता है। लेकिन दूसरी तरह के पतितों में सुधार संभव ही नहीं होता। क्योंकि उसका मन ही उस तरह का होता है।

इस प्रकार अपने अध:पतन के बारे में जिन्हें बुरा लगता है उनका मार्गदर्शन करने के लिए समाजसेवकों की जरूरत है। समाज को वैचारिक भूमिका देने के लिए और सांस्कृतिक कार्य करने के लिए सेवकों की जरूरत होती है। गरीब समाज उन्हें मेहनताना नहीं दे सकता। लेकिन उनके उदरनिर्वाह का प्रबंध किया जा सकता है। ऐसे कार्यकर्ताओं को बैठ कर खाने वाला नहीं कहा जा सकता। क्योंकि, समाजसेवा करने केलिए हजारों आकर्षणों को छोड़ना पड़ता है।

बौद्ध भिक्षुओं का संगठन ऐसे ही लोगों के लिए भगवान बुद्ध ने बनाया है। यह बेहद कठिन कार्य है। उसको स्वीकार कर भगवान बुद्ध द्वारा बताए गए मार्ग से आगे बढ़ने से आज दुनिया का कल्याण हो सकता है। मानवता का हित हो सकता है।

333

बौद्ध धर्म और हिंदु धर्म में जमीन-आसमान का फर्क है

''भारतीय बौद्धजन समिति के तत्वावधान में और आयु. मंगलदास पक्वासा, पूर्व राज्यपाल, मुंबई की अध्यक्षता में 8 मई, 1955 को शाम 7 बजे, नरे पार्क, सेंट्रल रेल वर्कशॉप के सामने, परेल, मुंबई - 12 इस स्थान पर बड़ी धूमधाम से भगवान गौतम बुद्ध जयंति उत्सव आयोजित किया जाना है। जुलूस के लिए तीन मार्ग तय किए गए हैं। उसके अनुसार विभिन्न जगहों के लोग इस जुलूस में शामिल होने की कृपा करें। शाम 4.30 बजे जुलूस निकलेगा और शाम सात बजे तक नरे पार्क आएगा, इसका जुलूस में शामिल लोग खयाल रखें। अन्य लोग सीधे नरे पार्क मैदान पर शाम सात बजे तक पहुंच जाएं।'' समिति के सचिव ने 'जनता' के 7 मई 1955 के अंक में इस बात की जानकारी प्रकाशित की है।

इस घोषणा के अनुसार दिनांक 8 मई, 1955 को मुंबई के नरे पार्क में बुद्ध जयंति के अवसर पर कार्यक्रम का आयोजन किया गया था। कार्यक्रम में 80 हजार लोग उपस्थित थे। सभा को संबोधित करते हुए डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने कहा-

अध्यक्ष महाराज, बहनों और भाइयों,

आज मैं यहां अचानक ही आ गया हूं। इस सभा में मेरी उपस्थिति की उम्मीद नहीं थी। आज-कल में मुझे दिल्ली जाना पड़ेगा ऐसा मेरा अनुमान था। संयोग की बात है कि 12 तारीख तक का टिकट उपलब्ध न होने के कारण मैं यहीं रहा। इस मौके का फायदा उठाते हुए मुझसे विनती की गई कि मैं इस सभा में उपस्थित रहूं। उनकी विनती का सम्मान करते हुए मैं आज उपस्थित हूं।

पूर्व गवर्नर अध्यक्ष हैं सो मुझे इस सभा में नहीं आना चाहिए था। मेरे आने से सभा को महत्व प्राप्त होगा ऐसा मुझे नहीं लगा था। लेकिन लोगों का कहना न मानना योग्य नहीं होता। यहां इतनी बड़ी संख्या में लोगों की उपस्थिति देख कर मुझे खुशी हुई। आप सब लोगों को आंदोलन के प्रति गर्व है। वह माफगांव के अड्डे पर रहता है, मैं भायखला की पीली चाल में रहता हूं। कोई कार्यक्रम अगर होना है तो वह मेरे ठिकाने पर ही हो ऐसी मंशा रखते हैं। अपनी-अपनी गली में कोई न कोई समारोह-कार्यक्रम करते हैं। इस रूढ़ि को भुला कर एक राय से इस कार्यक्रम का आयोजन किया इसके

जनता : 14 मई, 1955

लिए मैं आपका अभिनंदन करता हूं। आपने नई शुरुआत की है, हर साल बुद्ध जंयती इसी प्रकार मनाते रहेंगे ऐसी उम्मीद करता हूं।

आज मैं अन्य बातों का जायजा लेने वाला हूं। पिछले एक महीने से मैं मुंबई में हूं। मुंबई के अखबार मैं पढ़ता हूं। कुछ मुझे इनकी कटिंग्स भी भेजते हैं। बौद्ध धर्म स्वीकारने को लेकर कई लोगों की राय पढ़ने में आती हैं। लगभग हर अखबार में आलोचना आती है, कहा जाता है कि – अस्पृश्य लोगों को इस काम के लिए बरगलाया जा रहा है, उनके अज्ञान का फायदा उठाते हुए डॉ. अम्बेडकर उन्हें बहका रहे हैं, उस धर्म को अपनाने के बाद आपका नुकसान होगा, डॉ. अम्बेडकर पागल है, उसके जाल में मत फंसना, अगर उसकी बातों में आओगे तो खड्डे में जाओगे वगैरेह बातें कही जाती हैं। सार्वजनिक काम में आलोचना करने का अधिकार सबको है ऐसी बात नहीं कि मुझे इस बात का खेद है। मेरा जीवन लोगों की आलोचना सहने में बीता। छोटे बच्चे को नजर न लगे इसलिए जैसे उसकी मां काजल का टीका लगाती है उसी प्रकार ये लोग मुझे हमेशा कालिख लगाते हैं। मुझे इस बात का कुछ बुरा नहीं लगता।

हममें से कई लोग अज्ञानी और कुछ लोग ज्ञानशील हैं। उनपर अखबारों में लिखे का असर होता होगा। इसलिए अखबारों में जो लिखा जाता है उस पर टीका-टिप्पणी जरूरी है। हालांकि, मैं एक बात आपको बताना चाहता हूं कि सोचिए, आलोचना करने का हक किसे पहुंचता है? कौन किसकी आलोचना करे? जिसके पास सहानुभूति है उसी को आलोचना करने का अधिकार भी है।

सुरक्षा करने वाले को ही आलोचना करने का अधिकार है। जान से मार डालने वालों को आलोचना करने का अधिकार नहीं।

भगवान बुद्ध का चचेरा भाई देवदत्त शिकारी था। उसे शिकार करने का शौक था। तीर-कमान लेकर वह पंछियों का शिकार करता था। भगवान बुद्ध अहिंसा के पुजारी। देवदत्त की करनी भगवान को पसंद नहीं थी। वह कहते- निरपराध जानवरों की जान मत लेना। अन्य लोग उनसे कहते, तुम नामर्द हो। तुम क्षत्रीय नहीं हो।

एक बार देवदत्त ने शिकार के लिए जाना तय किया। तब बुद्ध ने कहा, मैं भी तुम्हारे साथ शिकार पर चलूंगा। लेकिन मैं एक तरफ बैठा रहूंगा। आप लोग शिकार करें। वे शिकार के लिए निकले। भगवान बुद्ध एक पेड़ के नीचे बैठे। देवदत्त वहां से चला गया। कुछ समय बाद जब आकाश से एक पंछी नीचे गिरा। भगवान बुद्‌ध वहां बैठे थे। उन्होंने गिरता पंछी देखा। उस पंछी को तीर लगा था। भगवान ने उसके सीने में गड़ा तीर निकाला, उसे पानी पिलाया। अपनी छाती से चिपकाकर उसे गरमाहट दी। उसे होश में ले आए। तब तक देवदत्त पंछी को खोजता हुआ वहां आया। उसने भगवान बुद्ध से पूछा, एक उड़ते पंछी को मैंने तीर मार कर गिराया। वह कहां गिरा क्या तुम्हें

पता है? वह तुम्हारे आसपास ही गिरा होगा। भगवान ने कहा, पंछी मेरे पास है। उसके पेट में बाण था जिसे मैंने निकाल दिया। उसके जख्म को धोया, गरमाहट देकर उसे होश में ले आया।

देवदत्त ने कहा, यह मेरा पंछी है। इस बात को लेकर विवाद हुआ। देवदत्त ने कहा, शिकार का यह नियम है कि जो जानवर को मारता है वह उसका मालिक होता है। मैंने इसे मारा है इसलिए मैं इसका मालिक हूं। बुद्ध ने कहा, जो मृतप्राय जीवन की रक्षा करता है वही उसका मालिक होता है। मैं इसका मालिक हूं। जो मारनेवाला होता है वह उसका मालिक नहीं होता। दोनों में लंबे समय तक विवाद हुआ। दोनों ने बात पंचायत के सामने जाना तय किया। दोनों ने अपना पक्ष पंचायत के सामने बयान दिया। पंचायत ने बुद्ध के पक्ष में निर्णय दिया। जो रक्षा करता है वही असली मालिक होता है। यही असली नीति है।

इसीलिए अखबार वालों से मैं यह पूछना चाहता हूं कि आप हमारे रक्षक हैं या भक्षक? आप हैं कौन? हजारों सालों से हम समाज में रह रहे हैं। कोई सामने आकर बताए कि हमने अस्पृश्यों के लिए कुछ किया। अस्पृश्यों के उद्धार के लिए जिन्होंने अपनी एक उंगली तक उठाने का कष्ट नहीं किया उन्हें आलोचना करने का कोई अधिकार नहीं है। मैं ऐसे लोगों से कहना चाहता हूं कि, मुंह बंद करके बैठें। हमें अगर गड्ढे में गिरना हो तो हम गिरेंगे। अब तक आप लोग हमें गड्ढे में ढकेलते आए हैं अब हमें खुद जाकर गड्ढे में गिरने की आजादी दीजिए। गड्ढे में गिरने का अधिकार, गलतियां करने का अधिकार हमें दीजिए। आपने किसी प्रकार की मदद नहीं दी। क्या आपने कभी अस्पृश्यों के बच्चों को विलायत भेजा? उन्हें ये जो स्कॉलरशिप्स मिलती हैं वे मैंने दिलाई हैं। ये ऊसर जमीनें क्या आपने अपनी मर्जी से दी हैं? हम अपने पैरों पर खड़े रहेंगे। हिंदुओं ने हमारे लिए क्या किया? उन्होंने एक ही सुधार किया, वह यह कि रेल से सफर करते हुए वे हमारे डिब्बे में बैठते हैं। वह भी इसलिए कि उन्हें पता नहीं होता। (हंसी)

पेशवा के समय में कौन किस प्रकार के कपड़े पहने इस बारे में कानून थे। मेरी मां बताया करती थी, महार अगर कपड़ा खरीदना चाहते थे तो उन्हें उसे दूर से ही देखना होता था दूर से ही कीमत पूछनी होती थी। दुकानदार दुकान में ही कपड़ा हिलाया करता उस आदमी ने अगर कपड़ा खरीदा तो लोटे में पानी ले आता, कपड़े पर छिड़कता, नया कपड़ा कीचड़ में घसीटता क्योंकि, महार नया कपड़ा नहीं पहन सकते! मिट्टी में घसीटी हुई साड़ी में दो उंगलियां फंसा कर उसे दो फाड़ करते। फिर महार पैसे रखता और कपड़ा लेकर जाता। हम लोग लंगोट पहनते हैं। पेशवा का ही वह हुकूम था। ब्राह्मण दोनों तरफ से झालरवाली धोती पहनते, ब्राह्मणेतर केवल पीछे की तरफ झालर बना सकते थे। भंडारी लोग बड़ा रूमाल कूल्हों पर लपेटते – ऐसे नियम थे।

अंग्रेज सरकार के आने पर मुंबई पर उनका अधिकार बना। सुनारों पर पेशवाओं की नजर थी। सुनारों का कहना था कि वे ब्राह्मण हैं। पेशवे कहते हम ब्राह्मण हैं। सुनार ब्राह्मणों की तरह धोती पहनते। उन्हें इस प्रकार धोती नहीं पहननी चाहिए, उनके कारण भ्रष्टाचार हुआ इस प्रकार सभी अखबारों में छप गया। अंग्रेजों ने धर्म डुबाया कह कर सब लोग हल्ला मचाने लगे। अंग्रेज बौखला गए। पेशवा की शिकायत उन्होंने सुनी। पेशवा ने कहा, हमारे प्रजाजनों पर पहले प्रतिबंध थे। आपके आने के बाद वे कासोटा पहनने लगे हैं। तब ईस्ट कंपनी भारत में आई ही थी। वालकेश्वर में महाजन लोग रहते थे। मुख्य अधिकारी ने शिकायत सुनी। उन्होंने महाजनों को बुलाकर पूछताछ की। बात सामने आई कि सुनार झालरवाली धोती पहनने लगे थे। हुकम हुआ, सुनार ऐसी धोती नहीं पहनेंगे। पंचों ने उन पर पचास रुपयों का जुर्माना लगाया। अब लोग कोट-पतलून पहनने लगे हैं।

गाड़ी में बैठने लगे हैं इसके अलावा इनमें कोई सुधार नहीं हुआ है। फिर ये लोग क्यों आलोचना करते हैं? ये कैसे हमारे हितचिंतक हुए? वे कहते हैं कि आपने अगर बौद्ध धर्म अपनाया तो आपको मिलने वाली स्कॉलरशिप्स बंद हो जाएंगी। मिलों में काम करने वालों को स्कॉलरशिप्स की अहमियत क्या पता चलेगी? जो स्कूलों में पढ़ते हैं उनके लिए स्कॉलरशिप्स की अहमियत होती है। पत्रकारों को ऐसा क्यों लगता है? कहते हैं, स्कॉलरशिप्स नहीं मिलेंगी। अरे उसे दिलाने के लिए मैं अभी जिंदा हूं ना! (तालियां) मेरे मरने के बाद जो होना है सो होता रहेगा। जब तक मैं जिंदा हूं तब तक डरने की कोई वजह नहीं। सिक्ख अस्पृश्यों को स्कॉलरशिप मिलती है। स्कॉलरशिप धर्म पर निर्भर नहीं है। वे दीनता पर निर्भर करती है। और आपने दी ही कितने दिन? 'यावच्चंद्रदिवाकरौ' ऐसा तो नहीं? चांद-सूरज जब तक हैं क्या तब तक स्कॉलरशिप्स मिला करेंगी? वे साल भर के लिए होती हैं या फिर दो साल, तीन सालों के लिए होती हैं। कुंकुम लगाना है तो पति जिंदा रहेगा या नहीं इसका भरोसा होना चाहिए। सरकारी नौकरी कितने सालों तक टिकेगी? मैंने कुछ कहा और पांच सालों के बाद मुन्शी साहब के पेट में दर्द होने लगा। उन्होंने मुसलमानों को दी गई रियायतें वापिस लीं। ईसाइयों को भी रियायतें मिली हुई थीं। लेकिन उनका एक आदमी था जो गवर्नर बनना चाहता था। उन्होंने बताया कि मुझे कुछ नहीं चाहिए। फिर उनके कागजात मेरे पास आए। मैंने उसे फाड़ कर फेंक दिया। और लोग सोने का हार पहनते हैं, तो क्या हम गले में फांसी लटका लें? मैंने लिख कर दिया, नहीं हो सकता। आज तक हमने उसे रखा लेकिन अब उसका कोई फायदा नहीं।

हममें से एक व्यक्ति इंजीनियर बनने के काबिल है। लेकिन अब तक उसे इंजीनियर नहीं बनाया गया है। हमारे मुख्यमंत्री भी इसमें शामिल हैं। राजा ही अगर प्रजा को मारने

लगे तो प्रजा किसके पास जाए? भूस के लड्डू, जिसने खाए वह फंसा, जिसने नहीं खाए वह भी फंसा।

मैं पढ़े-लिखे लोगों से कहना चाहता हूं। महार लोग क्या किया करते थे? रात में उठ कर वे घूमते। सुबह का कुछ बचा-खुचा रात में खाते। फलटण गांव में महार थे। उनके पास 24 बीघा जमीन थी। वहां एक मंदिर था। उसमें भंडारा हुआ करता था। हमारे एक मंत्री थे। इस भंडारे में वह एक गाड़ी भर लड्डू, जलेबी, रोटियां आदि दिया करते थे। महार लोग मंदिर के दरवाजे के पास बैठते और झूठन लेकर जाते। इतना मिलने के बाद महारों को जमीन पाने की जरूरत ही क्या थी? कुछ दिनों के बाद खाना देना बंद कर दिया गया तब इन महारों ने कहा, 'हमारी इतनी जमीन थी। मराठों ने वह हडप ली।' मंदिर से झूठन मिला करती थी वह भी बंद हुई। ऐसी उनकी हालत थी।

जलगाव में श्राद्ध होता तो महार भिखारियों की तरह कचरे पर बैठते। लोग मुझसे कहते - ये तो ईसाई बना, इसका निवाला छिन गया। इसका अब कैसे होगा? मेरा एक ब्राह्मण विरोधी था। वह हर रोज का हिसाब बताता। जानवरों का मांस, सींग, चमड़ा, हड्डियां आदि की दो-चार हजार की कीमत बताता और कहता, 'डॉ. अम्बेडकर ने महारों का इतना नुकसान किया।' यह *केसरी* में छप कर आता। हालांकि मैंने कभी इसका जवाब नहीं दिया।

एक बार संगमेश्वर में सभा थी। महारों की सभा में इस ब्राह्मण ने मेरी पूछताछ की। मैं खाना खाने बैठा था। मैंने कहलवाया, खाना खाने के बाद आता हूं। यह भी कहलवाया कि अगर उनके पास समय हो तो वह अंदर आ सकते हैं। उस आदमी ने कहा, काम थोड़ा है लेकिन महत्वपूर्ण है। उसने कहा, "आप इन सभी लोगों से कहते हैं कि मांस मत खाइए, मरे जानवरों को मत उठाइए, महारों का आप यह जो नुकसान कर रहे हैं क्या यह ठीक है?" मैंने कहा, ठीक है। पूछा, आपके सवाल का जवाब मुझे अभी देना है या सभा में दूं? उसने कहा, सभा में जवाब दीजिए। मैंने लोगों से कहा, इन्हें सवाल पूछने हैं, आप उनके सवालों पर ध्यान दीजिए। उन्होंने हिसाब लगा कर बताया कि आपका आंदोलन नुकसानदायी है। उसका हिसाब सही था। उनका कहना था कि उनका एक हजार रुपयों का नुकसान हो रहा है। उनका यही सवाल था। मैंने उनसे कहा, मैं आपको एक हजार रुपए देने के लिए तैयार हूं। आप अगर मरे जानवर ढोएंगे तो एक हजार रुपयों का इनाम भी दूंगा। लेकिन उनके साथ आपको काम करना होगा।

स्वाभिमान बहुत जरुरी है। कोई महिला कामाठीपुरा जाए तो सोने-चांदी के गहने लाती है और सुबह होटल वाले को पुकार कर कहती है - ए, आधा प्लेट कीमा, एक स्लाइस रोटी लाओ। चार बजे चाय। शाम को पौडर लगा कर बैठना। वहां का जीवन सुखमय होता है। लेकिन वेश्या का कोई मान नहीं। उसकी कोई इज्जत नहीं इस बात

को ध्यान में रखें।

हमें स्वाभिमान की जिंदगी चाहिए। उसमें अगर दरिद्रता मिले तो भी कोई परवाह नहीं। मैं 48 नंबर की चॉल में 50 नंबर के कमरे में रहता था। सोने के लिए जगह नहीं। तकिया और धोती लेकर ऊपर छत पर सोने जाता था। खाने-पीने को मिलता है तो वह कोई महत्वपूर्ण बात नहीं है। स्वाभिमान की जिंदगी का महत्व है। कीड़ेमकोड़ों की जिंदगी हम नहीं जिएंगे। मेरे बौद्ध धर्म में जाने को लेकर कुछ लोग कहेंगे, पॉलिटिक्स का कीड़ा गया। लेकिन पॉलिटिक्स का यह कीड़ा नहीं जाएगा। रहेगा और इन लोगों को लेकर ही जाएगा।

बौद्ध धम्म के बारे में मेरी कल्पना अलग है। इस धर्म के लोग वकील, बैरिस्टर, प्रधानमंत्री होंगे ऐसा प्रावधान होना चाहिए। यह धर्म हमें पावन करेगा। पथभ्रष्ट करने वाले लोगों की कोशिशों पर ध्यान ना दें।

ये लोग कहते हैं कि हिंदू धर्म और बौद्ध धर्म में कोई फर्क नहीं है। सो इसमें जो अच्छी बातें हैं उनका अनुसरण क्यों नहीं करते? अच्छी बातों का अनुसरण हमें क्यों नहीं करने देते? कोई यह न बताएं कि बौद्ध धर्म बुरा है। कोई यह कह नहीं सकता कि यह धर्म बुरा है। पूरे भारत देश को बौद्ध धर्म अपनाना चाहिए। बौद्ध धर्म और हिंदु धर्म एक ही हैं यह सरासर गलत है। उसमें जमीन-आसमान का फर्क है। इसे साबित करने के लिए मैं पांच-सात मुद्दे आपके सामने रखने वाला हूं। हिंदू धर्म में कई भगवान हैं। तैंतीस करोड़ भगवान हैं। उनका भगवानों के बगैर काम नहीं चलता। सृष्टि कैसे बनी? कोई कहता है, किसी ने अंडा डाला लेकिन किसी को भी यह पता नहीं है। भगवान ने कहा, सृष्टि का निर्माण कैसे हुआ, कहा नहीं जा सकता। यह महत्वपूर्ण मसला नहीं है। किसी चीज से उसका निर्माण किया गया या जब कुछ भी अस्तित्व में नहीं था तब किया गया यह दो विकल्प हो सकते हैं, तीसरा कोई विकल्प नहीं है।

यह बात असंभव है कि दुनिया में जब कुछ भी नहीं था तब उसका निर्माण किया गया। ईश्वर सृष्टि का निर्माणकर्ता नहीं था। हिंदू धर्म में ईश्वर है, बौद्ध धर्म में नहीं है। यही प्रमुख भेद है। बौद्ध धर्म में आत्मा नहीं, हिंदू धर्म में है। एक बार अर्जुन ने कृष्ण से पूछा, आत्मा कैसी है? जवाब मिला, आत्मा ऐसी है जिसे लोहे से काटने से भी घाव नहीं बनता। लोहे से लोहा काटा जा सकता है। क्या ऐसा हो सकता है कि, आत्मा ऐसी चीज है कि जिस पर लोहे से घाव नहीं किया जा सकता। श्रीकृष्ण ने जवाब में यह भी कहा कि आत्मा को जलाया नहीं जा सकता। उसका कहना है कि आत्मा को क्लेश ही होते। बुखार-खांसी आते हैं जुकाम भी होता है यह सब झूठ है। इसमें कोई सत्यता नहीं। भगवान ने एक बार पूछा, आत्मा कितनी बड़ी है? उसकी साइज क्या है? लंबाई-चौड़ाई कितनी है? आत्मा होती कहां है? याज्ञवल्क्य से हजारों सवाल पूछे गए। ब्राह्मणों ने ग्रंथ

बना कर ब्रह्म है इस बात को लोगों के गले में ठूंसा है।

तीसरी बात – हिंदू चारवर्णों को मानते हैं। लेकिन बौद्ध धर्म में चातुर्वर्ण्य या जाति भेद नहीं हैं। एक बार लोहित ब्राह्मण ने भगवान से पूछा, तुम शूद्रों को विद्या क्यों देते हो? असल में होना यह चाहिए कि जो योग्य है उसे विद्या मिले और जो योग्य नहीं है उसे नहीं मिले। लेकिन ब्राह्मण धर्म ऐसा नहीं है। एक बार बुद्ध ने अपनी माता से पूछा, संकट के समय हत्या करना ठीक कैसे हो सकता है? बौद्ध धर्म में ऐसा नहीं कहा गया है। वैश्य क्योंकर दगाबाजी कर सकते हैं? बौद्ध धर्म में जातिभेद, असमानता, चातुर्वर्ण्य नहीं हैं। जातिवाद समाप्त करने के बारे में प्रस्ताव पारित किए जाते हैं। लेकिन वे बस उससे आगे नहीं बढ़ते। उस पर अमल करने के लिए कहो तो वे नहीं करते। जातिवाद के कारण अपरिमित हानि हुई है। जातिवाद को समाप्त कीजिए। सभी नेक राह अपनाएं। लेकिन वे ऐसा नहीं चाहते।

भाइयों और बहनों, शिवाजी के अष्ट प्रधान ब्राह्मण थे। उसकी कहानी अलग है। वे मराठों को अपने साथ भोजन करने नहीं देते थे। शिवाजी ने बालाजी आवजी को यह बात बताई। उसने कहा, जब तक आप राज्याभिषेक नहीं करवा लेते तब तक आपका दरजा स्तर बढ़ेगा नहीं। आखिर शिवाजी ने कहा, जो भी करना हो आप ही कीजिए। तब मोरोपंत पिंगले मुख्य प्रधान था। उसने कहा, 'क्यों रे बच्चू, तू हमारा राजा बनेगा!' उसने शिवाजी की बेइज्जती की। आखिर बालाजी आवजी राजपुताने की ओर गया। वहां उसने शिवाजी की वंशावली बनाई। काशी से ब्राह्मणों को लाकर राज्याभिषेक करवाया।

जातिवाद के गोबर के कीड़े गोबर में ही रहेंगे। उनकी उससे उबरने की इच्छा नहीं। उनकी अकल जागेगी तब वे हमारे पास आएंगे। उन्हें लगता है, हिंदु समाज से केवल दो ही लोग जाएंगे। डॉ. अम्बेडकर और उनकी पत्नी। लेकिन बौद्ध धर्म को लेकर बहुत बार मतपरिवर्तन हुए हैं। अगले साल सारनाथ में बुद्ध के शिष्य जमा होंगे। उनके ऊपर उत्तर प्रदेश सरकार 35 लाख रुपए खर्च करने वाली है। भारत सरकार दो करोड़ रुपए खर्च करने वाली है। उत्तर प्रदेश पिछड़ा देश है। उसे पूर्वी गोंडबन–आर्यावर्त कहते हैं। उत्तर प्रदेश सरकार के पैंतीस लाख रुपए यानी केवल कोंपलें हुईं। कोई कुछ करे या न करे बौद्ध धर्म इस देश में आएगा। कोई उसकी राह में नहीं आ सकता। इस बाढ़ में सभी बह जाएंगे। इस देश की सभी जनता अज्ञानी थी। ब्राह्मणों ने किताबों में क्या लिखा है इसका उन्हें पता नहीं था। 2–4 आने में ये किताबें मिलती हैं। यहां आने से पहले मैं भागवत पढ़ रहा था। उस पर ज्ञानवान व्यक्ति ऐसी किताबें कैसे लिख सकते हैं?

आप अज्ञानी हैं। आपमें से जो पढ़े–लिखे बच्चे हैं वे भी अज्ञानी हैं। दो–तीन दिनों पहले मैं उपनिषद पढ़ रहा था। उसमें से छांदोग्य उपनिषद में गुरु–शिष्य संवाद है। शिष्य अपनी शंका पूछता है। लेकिन उसका शक हटाने के लिए भी ज्ञान चाहिए। गुरु जवाब

देते हैं कि, तुम्हारे पास ज्ञान नहीं इसलिए तुम्हें शक करने का भी अधिकार नहीं है। तो बताइए, हमारे विद्वानों को इसका क्या ज्ञान हो सकता है?

बुद्ध ने आनंद से यही कहा कि केवल मैं कहता हूं इसलिए आप इस धर्म को ना अपनाएं। व्यवहार में यह धर्म चल सकता है ऐसा अगर आपको लगे तभी आप इस धर्म को अपनाएं। अपनाएंगे तब आपको एक जान, एक चित्त बन कर रहना होगा। इसी राह से अपना उद्धार होगा।

बौद्ध धर्म में दो तरह के लोग हैं। इस धर्म का अनुसंधान करना मेरा मार्ग नहीं। हमारा मुख्य कार्य है प्रचार करना हम लोगों को बुद्धिस्ट बनाना चाहते हैं। यही हमारा कर्तव्य है। दो-चार दिनों पहले हमने एक संस्था की स्थापना कर उसे रजिस्टर करवाया है। आपसे विनती है कि आप इस सभा के सदस्य बनें। उच्च वर्ग के लोग चंदा देंगे ऐसी उम्मीद नहीं है। कार्य की शुरुआत होना जरुरी है। इसीलिए सबको समिति के सदस्य बनना होगा। इसके लिए एक रुपया देना होगा। हमें विहार बनाने होंगे। वहां महिलाएं और पुरुष जाकर भक्तिभाव से पूजा करेंगे। हममें कुछ मुफ्तखोर लोग भी हैं। ऐसा अब यहां नहीं चलेगा। बिना रसीद के कोई पैसे न दें। आयु. बी. एस. गायकवाड़, आयु. का. वि. सवादकर, श्री बालू कबीर आपसे फॉर्म भरवा कर आपको रसीद देंगे।

334

विद्या, प्रज्ञा, करुणा, शील और मैत्री इन पांच तत्वों के आधार से हर छात्र अपना चरित्र बनाए

औरंगाबाद के मिलिंद महाविद्यालय के बोधि मंडल की तरफ से 12 दिसंबर, 1955 के दिन सभा बुलाई गई थी। इस सभा में मार्गदर्शन करने के लिए डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को बुलाया गया था। उन्होंने अपने भाषण में सबसे पहले आयु. शंकरराव देव द्वारा दिनांक 7 दिसंबर, के दिन महाविद्यालय में हुए भाषण में कहे गए एक वाक्य पर टिप्पणी की। आयु. शंकर राव देव ने भाषण में कहा था कि, ''महाविद्यालय का केवल 'मिलिंद 'नाम देकर नहीं चलेगा। अक्रोध से क्रोध को जीतने वाली बौद्ध शिक्षा का अगर पालन किया गया तो ही यह नाम सार्थक होगा।''

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने आयु. देव के इस कथन पर कहा–

मिलिंद ग्रीक था। उसे अपनी विद्वत्ता को लेकर घमंड था। उसे यह भी लगता था कि ग्रीकों की तरह के विद्वान दुनिया में और कहीं नहीं हो सकते। उसने दुनिया को चुनौती भी दी थी। उसे लगा कि किसी बौद्ध भिक्षु के साथ विचार-विमर्श करना चाहिए। लेकिन उसके साथ चर्चा के लिए कोई भी तैयार नहीं हुआ। मिलिंद औसत दर्जे का आदमी था। वह दार्शनिक नहीं था और न ही विद्वान था। उसे बस इस बात का पता था कि राज्य कैसे चलाया जाना चाहिए। लेकिन ऐसे मिलिंद के साथ विचार-विमर्श के लिए कोई भी तैयार नहीं हुआ। महती प्रयासों के बाद से नागसेन नामक भिक्षु को तैयार किया गया। सफलता मिले या न मिले, मिलिंद की चुनौती को स्वीकारना चाहिए ऐसा उसे लगा।

नागसेन ब्राह्मण था। उम्र के सातवें साल में उसने अपने माता-पिता का घर छोड़ दिया था। ऐसे नागसेन ने भिक्षुओं का आग्रह माना। फिर मिलिंद और नागसेन के बीच तर्क-वितर्क हुआ और उसमें मिलिंद हार गया। इस चर्चा पर बहस की एक किताब प्रकाशित हुई है। इस किताब का पाली भाषा में नाम है – 'मिलिंद पन्ह'। इसका मराठी में अनुवाद भी उपलब्ध है जिसका नाम है – 'मिलिंद प्रश्न। इस किताब को अध्यापक और छात्र सभी अवश्य पढ़ें ऐसी मेरी इच्छा है। उसमें यह बताया गया है कि अध्यापक में कौनसे गुण होने चाहिएं। इसीलिए मैंने और मेरी सोसाइटी ने इस कॉलेज का नाम 'मिलिंद महाविद्यालय' रखा है। इस जगह का नाम दिया है– 'नागसेन वन।' उस बहस

जनता : 17 दिसंबर, 1955

में मिलिंद हारा और उसने बौद्ध धम्म स्वीकारा इसलिए मैंने यह नाम नहीं दिया है। इस कॉलेज का मैंने जो नाम रखा है वह मेरी राय में आदर्श नाम है।

किसी शिक्षा संस्था को केवल पैसे दिए इसलिए किसी अमीर का नाम देना सर्वथ: अनुचित है।

बौद्ध धर्म के साथ जुड़े मिलिंद इस नाम का महाविद्यालय के नाम के लिए चुनाव करने के पीछे एक और कारण है। वह है, विद्या सभी इंसानों के लिए उसी प्रकार आवश्यक है जिस प्रकार अनाज आवश्यक होता है। प्रत्येक को लाभ मिलना चाहिए। इस उदार विचार को अगर पहली बार किसी ने उद्घोषित किया हो तो वह हैं भगवान गौतम बुद्ध। जिन अनगिनत लोगों को कितने ही शतकों तक अज्ञान में दबा कर रखा गया उन्हें सुविज्ञ बनाने की शुरुआत करते हुए बुद्ध का अथवा उसके शिष्य का नाम याद आना सहज स्वाभाविक है।

मुंबई के सिद्धार्थ कॉलेज में 2900 और इस कॉलेज में 600 छात्र हैं। मैंने इस कॉलेज का भार बहुत वहन किया है।

कॉलेज का नाम मिलिंद दिए जाने को लेकर धम्मपद का एक श्लोक श्री शंकरराव देव ने आपको बताया। वह इस प्रकार है–'अक्रोधेन जेयत् क्रोधं'। उन्होंने कहा है कि क्रोध को अक्रोध से जीतना चाहिए। मैं बहुत गुस्सैल हूं यह पूरी दुनिया जानती है। आयु. देव कहते हैं, इंसान को अपने मन से क्रोध को निकाल देना चाहिए। आयु. देव कहते हैं इंसान को क्रोध को निगलना चाहिए। मुझे लगता है कि आयु देव का पठन कुछ अधूरा है। उन्होंने ठीक से पढ़ा नहीं है। (तालियां) भगवान बुद्ध ने राग यानी क्रोध पर जो व्याख्यान दिया है उसे अगर वह पढ़ते तो इस प्रकार के उद्गार वह नहीं निकालते। इंसान अगर क्रोधी हो तो उसकी आलोचना नहीं करनी चाहिए। क्रोध दो तरह के होते हैं- द्वेषमूलक और प्रेममूलक। कसाई कुल्हाड़ी लेकर जाता है। उसका गुस्सा द्वेषमूलक होता है। मां अपने बच्चे को अगर चपत लगाती है तो उसके गुस्से को कोई क्या कहेगा? उसका गुस्सा प्रेममूलक होता है। बच्चा सदाचारी हो इसलिए माता बच्चे को मारती है। मेरा गुस्सा भी प्रेममूलक है। आप समता से पेश आए इसलिए मैं राजनीति में अपशब्द कहता हूं। मेरी आलोचना करने वाले लोगों की मैं बिल्कुल परवाह नहीं करूंगा। (तालियां) मैंने जो कुछ भी किया है सब संघर्ष से ही किया है।

पहले केवल ब्राह्मण जाति के लोग ही विद्या प्राप्त करते थे। हम विद्या प्राप्त नहीं कर पाए। हम विद्या चाहते थे लेकिन ब्राह्मणों ने उसे हमें लेने नहीं दिया। भगवान बुद्ध ने यह परिपाटी तोड़ी।

एक बार भगवान बुद्ध से लोहित नाम के एक ब्राह्मण ने सवाल पूछा कि तुम सबको

विद्या क्यों सिखाते हो? इस पर भगवान ने उससे कहा, कि जिस प्रकार मनुष्य प्राणी को अनाज की षरूरत है उसी प्रकार सबको विद्या की जरूरत होती है। इस जमीन पर सोच–विचार का यह तरीका सबसे पहले भगवान बुद्ध ने ही शुरू किया। (तालियां) विद्या एक तरह की तलवार है। यह दोधारी तलवार है। उससे दुष्टों का संहार किया जा सकता है और दुशें से अपनी रक्षा भी की जा सकती है। कहा भी गया है कि –

स्वदेशे पूज्यते राजा।

विद्वान सर्वत्र पूज्यते।।

आप सब लोग विद्या सीखने के लिए आए हैं। लेकिन मेरी राय में केवल विद्या ही पवित्र नहीं हो सकती है। विद्या के साथ भगवान बुद्ध द्वारा बताई गई प्रज्ञा परिपक्वता चरित्र अर्थात् सदाचरण से संपन्न आचरण, करुणा अर्थात् सभी मानव जाति के बारे में प्रेम का भाव और मैत्री अर्थात् सभी प्राणि–मात्र के लिए आत्मीयता ये चार पारमिताएं भी होनी चाहिएं। तभी विद्वत्ता का उपयोग है। विद्या के साथ अगर मानव के पास करुणा नहीं होगी तो वह कसाई ही है ऐसा मुझे लगता है। करुणा अर्थात् मनुष्य का मनुष्य से प्रेम। मनुष्य को इससे भी आगे जाना चाहिए। उसे मैत्री प्राप्त करनी होगी। यह सोच भगवान बुद्ध ने ही रखी। मैं अपने जैसा विद्वान भारत में देखना चाहता हूं।

सभी धर्मों में श्रेष्ठ धर्म अगर कोई होगा तो वह है भगवान बुद्ध का बौद्ध धर्म। अन्य धर्म निरर्थक हैं। मेरे धर्म में ईश्वर का कोई स्थान नहीं है। लोग बताते हैं कि ईश्वर ने सृष्टि का निर्माण किया। उसने निराकार से साकार और साकार से निराकर निर्माण किए। लेकिन इस दुनिया में साकार चीजें पहले थीं और हैं। ईश्वर अगर होता तो वह इस बात की ओर ध्यान नहीं देता ऐसा नहीं ही होता। इसीलिए ईश्वर है, यह कल्पना ही झूठी है। भगवान अगर होगा भी तो रोजमर्रा की जिंदगी में उसका बेकार अड़ंगा क्यों रहे? मेरे धर्म में आत्मा का भी स्थान नहीं है। बौद्ध धर्म की नींव दुख दूर करना है। वही धर्म मेरी राय में सर्वश्रेष्ठ है जो मनुष्य का दुख दूर करता है। अन्य धर्म मनुष्य और ईश्वर के काल्पनिक संबंधों के आधार से बने हुए हैं।

दुनिया में कुछ लोग डरपोक होते हैं। इंसान को अकेले चलने का साहस दिखाना होगा। मैं अकेले चलने का साहस करता हूं। (तालियां) मेरे पीछे भले हजारों लोग न हों मैं उनकी परवाह नहीं करता। या उनके बारे में बेकार की चिंता भी नहीं करता।

एक डॉ. पिक्विक और उसके चार दोस्त थे। उसने अपने दोस्तों से कहा, मैं आपको मेला दिखाता हूं। अपने दोस्तों के साथ वह एक गांव में गया। वहां उन्होंने दो–तीन कमरे किराए पर लिए। उस गांव में चुनाव थे। डॉ. पिक्विक की कंपनी से सैम वेलर नाम के एक लड़के को उसके साथ उसकी सेवा के लिए रखा गया था। चुनावों की धूमधाम देखने

के लिए वह उस कमरे से बाहर देखने की कोशिश करने लगा। दरवाजा खोलने और बंद करने लगा। डरपोक डॉ. पिक्विक ने उससे पूछा कि तुम यहां क्या कर रहे हो? उसने जवाब दिया, 'सर, वहां विशाल जन-समूह इकठ्ठा हुआ है।' सैम वेलर बाहर निकलने की कोशिश करने लगा। तब डॉक्क्टर ने उसे चेताया कि, 'विशाल जन-समूह के साथ जाना। छोटे विशाल जनसमूह के साथ नहीं जाना।' उसके बाद एक बार फिर बताया - 'यह बड़ा विशाल जनसमूह जहां जाए वहां जाना, अथवा उसके पीछे जाना।' लेकिन मैं आपसे केवल इतना कहना चाहता हूं कि ऐसे विशाल जनसमूह के पीछे नहीं जाना।

विद्या, प्रज्ञा, करुणा, चरित्र और मैत्री इन पांच तत्वों के अनुसार मिलिंद महाविद्यालय के हरेक छात्र को अपना चरित्र बनाना होगा। इस राह से अकेले ही जाना पड़े तब भी धैर्य और निष्ठा बनाए रख कर जाना होगा। 'महाजनो येन गतः सपन्थः' जैसी दूसरों के विवेक से चलने वाली बुद्धि का त्याग कर विवेक के सहारे, अपने को जो राह ठीक लगती है उसी राह से आगे बढ़ना चाहिए।

335

मराठवाड़ा के विकास के लिए उचित यही होगा कि मराठवाड़ा आजाद हो

मिलिंद महाविद्यालय, औरंगाबाद के वार्षिकोत्सव के अवसर पर अध्यक्ष के नाते डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने 21 दिसंबर, 1955 को भाषण दिया। उन्होने कहा–

बहनों और भाइयों,

मुंबई शहर के औद्योगिक क्षेत्र के अधिकतर कामगार और लगभग सभी कचहरियों के कर्मचारी महाराष्ट्रीयन है और शहर के विकास के लिए वह लगातार मेहनत करता है।

मिल मजदूर बन कर काम करने वालों में और कचहरियों में काम करने वालों में पारसी लोगों की संख्या बहुत कम है। महाराष्ट्रीयनों के बगैर मुंबई शहर का विकास संभव नहीं है यह मेरी पक्की राय है।

महाराष्ट्र मेरी कल्पना में पश्चिम महाराष्ट्र, मध्य महाराष्ट्र और पूर्व महाराष्ट्र इन तीन हिस्सों का मिला हुआ राज्य है और उसी क्रम से मुंबई, औरंगाबाद और नागपूर को इन हिस्सों की राजधानियां होना चाहिए। पूर्व महाराष्ट्र यानी राज्य पुनर्रचना महामंडल द्वारा सुझाया गया विदर्भ का हिस्सा होगा उसमें नागपूर, भंडारा, वर्धा, यवतमाल, अकोला अमरावती, बुलढाणा, चांदा जिलों का समावेश रहेगा। मध्य महाराष्ट्र में मराठवाड़ा के औरंगाबाद, परभणी, नांदेड, बीड़, उस्मानाबाद इन पांच जिलों के साथ नासिक, डांग, अहमदनगर, पूर्व और पश्चिम खानदेश, सोलापूर जिले के कर्नाटक से सटे मराठी क्षेत्र का समावेश होगा और बचा हुआ बाकी हिस्सा पश्चिम महाराष्ट्र में जाएगा। इसमें ठाणे, कुलाबा, रत्नागिरी, पुणे, उत्तर भाग और दक्षिण सातारा, कोल्हापूर, बेलगांव और कारवार इन जिलों का समावेश किया जाए।

आर्थिक और सांस्कृतिक क्षेत्र में ये तीन हिस्से कार्यक्षम रहेंगे और इस प्रकार के आयोजन से उस क्षेत्र के लोगों की आकांक्षाएं भी पूरी होंगी।

अखंड संयुक्त महाराष्ट्र की मांग मेरी नजर में अयोग्य है। क्योंकि, संयुक्त महाराष्ट्र में मराठवाड़ा जैसे जिलों के पिछडे हुए लोगों की प्रगति नहीं हो सकती। इस कारण संयुक्त महाराष्ट्र में गुलगपाड़ा मचने की संभावना है। इसलिए, पिछड़े मराठवाड़ा की प्रगति हो ऐसी इच्छा हो तो उनके लिए अलग मराठवाड़ा बना कर देना ही उचित होगा। मेरी कल्पना के अनुसार अगर महाराष्ट्र के तीन राज्य बनाए गए तो राजकाज के नजरिए से वे कार्यक्षम होंगे और जनता को अपनी उन्नति का मौका मिलेगा।

शैक्षिक नजरिए से मराठवाड़ा पिछड़ा इलाका होने के कारण मराठवाड़ा के लिए अलग विश्वविद्यालय की आवश्यकता है।

जनता : 24 दिसंबर, 1955

336

मुंबई को महाराष्ट्र से अलग करने का विरोध

दिल्ली में 18 जनवरी, 1956 के दिन डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने कहा–

केवल पंद्रह प्रतिशत गुजराती लोगों के लिए मुंबई को महाराष्ट्र से अलग करने वाला कृत्य सही नहीं है।

अन्य कई राज्यों में 15 प्रतिशत से अधिक अल्पसंख्य लोगों के होते हुए भी किसी ने उनके लिए अलग राज्य नहीं बसाए। मुंबई के लोगों का स्तर किस मोर्चे पर कम है जिसके कारण मुंबई का कामकाज केंद्र के सुपूर्द करने की नौबत आई है?

मुंबई शहर की अतिरिक्त आमदनी बिजली के कारण होती है। यह बिजली महाराष्ट्र के लोगों से खरीदी जाती है और उसका इस्तेमाल मुंबई में होता है। बिजली से होने वाले इस उत्पादन का हिस्सा महाराष्ट्र को मिलना चाहिए।

मेरी सूचना है कि महाराष्ट्र के चार हिस्से किए जाएं। मुंबई का अलग राज्य बनाने के लिए महाराष्ट्रीयों द्वारा आपत्ति उठाने की कोई वजह नहीं थी। कुछ लोगों को जोड़ कर उनके सहारे गरीब और पिछड़े लोगों के बारे में आस्था नहीं होने वाली सरकार की स्थापना करने का कोई मतलब नहीं है। मेरे सुझाव के अनुसार चार राज्यों की स्थापना की जाए और मुंबई की अधिक आय इन राज्यों में बांटी जाए।

जनता : 28 जनवरी, 1956

337

बौद्धों तथा जैनियों की अहिंसा में बहुत फर्क है

नई दिल्ली के बुद्धविहार में महाबोधि सोसाइटी द्वारा दिनांक 5 फरवरी, 1956 के दिन डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का भाषण आयोजित किया गया था। उन्होंने कहा–

कम्युनिझम को जवाब नहीं दे पाने वाला कोई धर्म अस्तित्व में नहीं रह पाएगा। मेरी राय में कम्युनिझम का प्रतिकार करने के लिए उपयुक्त होगा तो केवल बौद्ध धर्म ही।

जो लोग सभी धर्मों में आस्था रखते हैं और सभी धर्मों से थोड़ा कुछ चुनते हैं उनसे मैं सहमत नहीं। भारत में इस तरह की मानसिकता देखने में आती है। हरेक अपनी तरफ से चुनाव करे और उस पर निर्भर रहे।

हर धर्म अन्य से अलग होने की ही संभावना है। बौद्ध धर्म द्वारा जिस अहिंसा का उपदेश दिया जाता है और जैन धर्म द्वारा जिस अहिंसा का उपदेश दिया जाता है उनमें जमीन–आसमान का फर्क है। जैन धर्म ने अहिंसा को अति तक पहुंचाया।

डॉ. बाबासाहेबांची भाषणे मा. फ. गांजरे, खंड 7, पृ. 188

338

रोटी से अधिक महत्व स्वाभिमान का है

18 मार्च, 1956 के दिन आगरा में डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का भाषण आयोजित किया गया था। सभा में अध्यक्ष पर थे उत्तर प्रदेश शे. का. फे. के अध्यक्ष आयु. तिलकचंद कुरील। मंच पर आयु. श्रीकृष्णदत्त पालीवाल और उत्तर प्रदेश के कई मशहूर सामाजिक कार्यकर्ता और नेता उपस्थित थे। सभा में करीब दो लाख का जनसमुदाय उपस्थित था।

ठीक साढ़े छह बजे समारोह के आयोजन स्थल रामलीला मैदान में डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का आगमन हुआ।

रामलीला मैदान में प्रवेश करते ही 'अम्बेडकर की जय हो' के नारों से आसमान गूंज उठा। केवल आगरा ही नहीं वरन् आसपास के गांव-शहरों से उनका भाषण सुनने के लिए हजारों की संख्या में अस्पृश्य जनसमुदाय वहां इकट्ठा हुआ था। मोटर से उतरने के बाद लाठी के सहारे लोगों का सहारा लेकर उन्हें मंच तक जाना पड़ा लेकिन भाषण देते वक्त एक स्टूल के सहारे वे खड़े रहे। इस अवसर पर उन्हें पांच हजार रुपयों की और एक हजार रुपयों की इस प्रकार से दो थैलियां दी गईं। उन्होंने में कहा-

25 साल पहले राजनीति में प्रवेश करते समय मेरे जीवन के तीन उद्देश्य थे। पहला, अस्पृश्यों के हर घर में ज्ञान की गंगा का प्रवाह पहुंचाना। इस उद्देश्य में मुझे काफी हद तक सफलता मिली है। कहा जा सकता है कि शिक्षा के क्षेत्र में आज अस्पृश्य लोग आगे भले न हों, मुझे आत्मविश्वास है कि कुछ ही दिनों में वे अच्छी प्रगति हासिल कर सकते हैं। मेरे कार्य का दूसरा महत्वपूर्ण उद्देश्य था सरकारी नौकरियों में अस्पृश्यों को व्यापक प्रतिनिधित्व दिलाना। मेरी कोशिश से प्राप्त सफलता आज आपके सामने है। इन दोनों उद्देश्यों में आज मुझे सफलता प्राप्त हुई है। लेकिन दूरदराज के गांवों में रहने वाले मेरे अनगिनत दलित बंधुओं की स्थिति में सुधार लाने के मेरे तीसरे उद्देश्य में मुझे अभी बहुत कम सफलता मिली है। इसीलिए, मेरी बची हुई जिंदगी और मेरा पूरा सामर्थ्य मैंने इन अस्पृश्य भाइयों के सर्वांगीण सुधार के लिए व्यतीत करने का निश्चय किया है।

जब तक वे खेती छोड़ कर शहरों में रहने नहीं आते तब तक उनके जीवन की

जनता, 24 मार्च, 1956

स्थितियों में सुधार नहीं आने वाला। हमारे गांवों में रहने वाले इन अस्पृश्यों का अपने पुरखों के गांवों में रहने का मोह अभी खत्म नहीं हुआ है। उन्हें लगता है, यहीं अपनी रोजी-रोटी है। लेकिन, रोटी से अधिक महत्व सम्मान का होता है। जिन गांवों में उनके साथ कुत्तों जैसा व्यवहार किया जाता है, पग-पग पर उन्हें अपमानित किया जाता है जहां उन्हें अपमानित होकर - स्वाभिमान शून्य जीवन जीना पड़ता है ऐसे गांव किस काम के! गांवों के अस्पृश्य अपने गांवों से निकल कर वहां चले जाएं जहां परती जमीन हो। उस पर कब्जा कर अपनी मालिकियत कायम करें। जमीन पर कब्जा करते समय अगर किसी ने टोका तो उनसे साफ-साफ कहें कि हम जमीन छोड़ेंगे नहीं। हम सरकार को सही लगान देने के लिए तैयार हैं। नए गांव बसा कर स्वाभिमान से परिपूर्ण इंसानियत भरा जीवन जिएं। नए समाज का निर्माण करें। वहां के सभी काम करें। ऐसे गांवों में कोई उन्हें अस्पृश्य कह कर उनके साथ बुरा व्यवहार नहीं कर सकेगा। मेरा स्वास्थ्य ठीक होते ही मैं अस्पृश्यों द्वारा परती जमीन पर कब्जा करने की मुहीम चलाने वाला हूं।

अपने गरीब और अज्ञानी बंधुओं की सेवा करना पढ़े-लिखों का पहला कर्तव्य होता है। बड़े ओहदों पर जाने के बाद अक्सर पढ़े-लिखे अशिक्षित बंधुओं को भूल जाते हैं। अपने समाज के बारे में अपनत्व का भाव न होने के कारण ऐसा होता है। उनके मन में अपने बंधुओं के प्रति तिलमिलाहट नहीं होती यही इसकी वजह है। धर्मभावना का अभाव भी एक और कारण है। वे अगर अपने अनगिनत बांधवों की ओर ध्यान नहीं देंगे तो समाज का ह्रास होगा।

अन्य किसी भी धर्म से बौद्ध धर्म श्रेष्ठ है। मेरी इच्छा है कि आप सभी मेरे साथ इस वर्ष बौद्ध धर्म को स्वीकार करें। इस बारे में मैं आप पर जबरदस्ती नहीं करूंगा। यह आपकी मर्जी का सवाल है। लेकिन मेरे बौद्ध धर्म स्वीकार करने के बाद मैं अस्पृश्य नहीं रहूंगा। आप सब जब बौद्ध बनेंगे तब आपके पास आरक्षित जगहों का अधिकार नहीं रहेगा। साथ ही हमें यह भी ध्यान में रखना होगा कि विधानसभा और लोकसभा में आरक्षित जगहों की मियाद संविधान के अनुसार केवल दस सालों की है। जल्द ही यह मियाद पूरी हो जाएगी। जिंदगीभर आरक्षित जगहें थोड़े ही रहने वाली हैं? आखिर हमें अपने सामर्थ्य के सहारे आगे बढ़ना है। आखिर हमें अपने ही पैरों पर खड़े रहना होगा। आरक्षित जगहों के सहारे हम प्रगति हासिल नहीं कर सकते।

बौद्ध बनने के बाद, मैं आपका नेतृत्व नहीं कर पाऊंगा और मैं फेडरेशन में भी नहीं रह पाऊंगा। इसीलिए मेरी इच्छा है कि दलित वर्गीयों में से ही किसी ऐसे व्यक्ति को आगे आकर मेरी जगह और नेतृत्व की कमान सम्हालें। वरना एक खंभे के सहारे टिके तंबू की तरह अपना संगठन बिखर जाएगा।

बौद्ध बनने के बाद, लेकिन मैं राजनीति से अलग नहीं होऊंगा। केवल शेड्यूल्ड कास्टस् फेडरेशन के टिकट पर उम्मीदवार बन कर मैं चुनाव नहीं लडूंगा। मैं अपने बलबूते चुनाव लडूंगा। भले फिर मेरी विजय हो या मुझे हार का सामना करना पड़े। मुझे उसकी फिकर नहीं। मैं आप लोगों को हक और अधिकार दिलवाने जीवन के अंतिम सांस तक लडूंगा।

अर्थ मंत्री के पास तो नोन–तेल बेचने तक की अकल नहीं है। जो मिट्टी से जुड़ा काम तक करने की योग्यता नहीं रखते वे आज एम. पी. और एम. एल. ए. बन कर महीने की 400 रुपयों की तनख्वाह और 21 रुपयों का भत्ता ले रहे हैं।

339

बौद्ध धर्म की लहर कभी भी वापस लौटेगी नहीं

दिनांक 24 मई, 1956 के दिन मुंबई में बड़े पैमाने पर बुद्ध जयंति मनाई जाने वाली है। हमारे एकमात्र नेता डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने बहुजन समाज को सीधा मार्ग बताते हुए बौद्ध धर्म स्वीकारने का आदेश दिया है। सत्य, अहिंसा, समता अगर प्राप्त करनी हो तो बौद्ध धर्म स्वीकार करो यह उनका आदेश है। उनकी आज्ञा को सिर आंखों पर मानते हुए भारत की अखिल अस्पृश्य जनता धर्मांतर करने के लिए तैयार हुई है। भारतीय बौद्धजन समिति के पास कई ऐसे खत आए हैं, जिनमें डॉ. बाबासाहेब कब और कहां धर्मांतर करने वाले हैं। सार्वजनिक रूप से या कि सामूदायिक रूप से धर्मांतर का कार्यक्रम होगा? समारोह कहां और कैसे होगा? आदि के बारे में पूछताछ की गई है। इस संदर्भ में डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के साथ समिति का पत्राचार हुआ। सभी लोगों की जानकारी के लिए भेजे खत का आशय यहां दिया जा रहा है –

''मैंने पहले एक बार सार्वजनिक निवेदन किया था कि आगामी बैसाख पूर्णिमा के दिन धर्मांतरण करने का इरादा घोषित किया था। उसके अनुसार अस्पृश्य वर्ग के तथा अन्य वर्गों के सैंकड़ों लोग धर्मांतरण करने के लिए तैयार हुए हैं। यह बात सुन कर संतोष हुआ। धर्मांतरण करने के लिए तैयार सभी लोगों का मैं तहेदिल से अभिनंदन करता हूं। आपकी सामूदायिक धर्मांतरण की इच्छा पूरी हो इसलिए मैं कई जगहों के दौरे भी करूंगा आप ही की तरह मेरे पास उत्तर भारतीयों के भी सैंकड़ों खत आए हुए हैं। उनकी शाखाएं स्थापना कर उनके जरिए प्रचंड संख्या में सभी को धर्मांतरण का अवसर मिले इसलिए यह कार्यक्रम चार-पांच महीने आगे बढ़ाया जाए। इस प्रकार की विनती उनकी ओर से आने के बाद मैंने अपने धर्मांतरण का कार्यक्रम अक्तूबर में करना तय किया है। इतने दिन आप रूके उसी प्रकार और कुछ दिन रुकेंगे ऐसी मैं उम्मीद करता हूं। आने वाले बैसाख माह की पूर्णिमा को सभी पिछले साल की तरह ही 2500वी बुद्ध जयंति मनाएं।

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के खत का मजमून भारतीय बौद्धजन समिति की सभा शाखाएं समझें और विनती है कि वे अपने-अपने क्षेत्र में 2500वीं जयंती धूमधाम से मनाएं। इस प्रकार मुंबई की भारतीय बौद्ध जनसमिति की ओर से एक सूचना का पत्र का वि सवादकर, बा कृ कबीर, भ. स. गायकवाड़, चिटणीस ने जारी की। प्रबुद्ध भारत के दिनांक 12 मई, 1956 के अंक में वह प्रकाशित की गई है।

प्रबुद्ध भारत : 2 जून, 1956

इसी के अनुसार मुंबई में 24 मई, 1956 के दिन 2500वीं भगवान बुद्ध जयंति महोत्सव के उपलक्ष्य में भारतीय बौद्धजन समिति की ओर से नरेप् ाार्क में विशाल सभा का आयोजन किया गया। इस सभा में मुंबई के ही नहीं बाहर से आए लोग भी शामिल हुए थे। करीब पौन लाख महिला, बच्चे और पुरुष उपस्थित थे।

शाम साढ़े छह बजे सभास्थल पर डॉ. आबासाहेब अम्बेडकर का आगमन हुआ। उस समय सैनिक दल के करीब एक हजार स्वयंसेवकों ने उन्हें अनुशासनबद्ध सलामी दी। उस वक्त माहौल डॉ. बाबासाहेब की जयकार से गूंज उठा।

मंच पर बौद्धजन समिति के सभी सचिव, मुंबई प्रदेश शेड्यूल्ड कास्ट फेडरेशन के अध्यक्ष आयु. आर. डी. भंडारे, प्रो. वी. जी. राव, अंतुमामा गर्दे, विधायक कांबले, आयु. निकुंभ, मुं. प्र. शे. का. फे. के महासचिव वी. एस. पगारे आदि प्रतिष्ठित व्यक्ति और आयुष्मती माईसाहब अम्बेडकर उपस्थित थे। सभा के अध्यक्ष मुंबई के पूर्व मुख्यमंत्री आयु. बालासाहब खेर का बुद्ध की वंदना के बाद बौद्ध धर्म और बुद्ध चरित्र पर भाषण हुआ।

ठीक साढ़े सात बजे डॉ. बाबासाहेब ने महत्वपूर्ण भाषण की शुरुआत की। करीब सवा घंटे तक उन्होंने अपने बौद्ध धर्म संबंधित विचार लोगों के सामने रखे। डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने कहा,

अध्यक्ष महोदय बहनों, और भाइयों,

आज बैसाख पूर्णिमा के दिन बुद्ध के 2500वें परिनिर्वाण दिन पर ब्रह्मदेश सरकार के आमंत्रण के अनुसार मुझे रंगून में होना चाहिए था। लेकिन मैं आज यहां मुंबई में इस सभा में उपस्थित हूं।

पिछले पांच सालों से मैं बौद्ध धर्म पर एक किताब लिखने में लगा हुआ था। मेरी धर्म दीक्षा से पहले वैशाख महीने में उसका प्रकाशन हो यह मेरी इच्छा थी। इसी उद्देश्य को मन में रख कर मैं मुंबई आया। लेकिन एक विचित्र बीमारी से ग्रस्त हुआ और वह किताब मुझसे पूरी नहीं हो पाई। इस किताब में 700 पृष्ठ हैं और वह ग्रंथ अंग्रेजी भाषा में होने के कारण हम में से कई उसे समझ नहीं पाएंगे। इसीलिए, जल्द ही मैं उसका मराठी में अनुवाद करवाने वाला हूं। केवल इसी काम के कारण मैं रंगून नहीं जा पाया। हालांकि, उपस्थित जनसागर को देख कर मुझे बहुत खुशी हो रही है।

मैं 14 वर्ष का था तभी मुंबई की एक सभा में आयु. दादासाहब केलुस्कर द्वारा पुरस्कार स्वरूप मुझे भगवान बुद्ध के चरित्र की किताब दी गई थी। तभी से मेरे मन पर बौद्ध धर्म का असर है।

मैं जब छोटा था तभी से मेरे पिताजी हमसे रामायण–महाभारत आदि ग्रंथ पढ़वाते थे। पढ़े बगैर हमें छुटकारा नहीं मिलता था। लेकिन रामायण–महाभारत पढ़ने की जबरदस्ती हम पर क्यों? यह पूछने की हममें से किसी की हिम्मत नहीं थी। जिन पुराणों में शूद्र और

अस्पृश्यों का वर्णन हर जगह दिखाई देता है उन पुराणों के जीवन चरित्र पढ़ने में हासिल ही क्या होने वाला था? मेरे जितना धर्मशास्त्रवेत्ता कोई नहीं। मैंने जब पिताजी से पूछा कि हम पर इन ग्रंथों को पढ़ने की जबरदस्ती क्यों? तो उन्होंने जवाब दिया कि– भले हम अस्पृश्य हों, रामायण–महाभारत के पुराण–पुरुषों के जीवन चरित्र पढ़ने के बाद हमारे मन की कुंठाएं भाग जाती हैं। उन्होंने जो बताया उसे हालांकि मैं ठीक से समझ नहीं पाया था।

महाभारत का द्रोणाचार्य अत्यंत पराक्रमी राजगुरु था। कौरवों और पांडवों को उन्होंने शस्त्रविद्या सिखाई। इसके बावजूद महायुद्ध में द्रोणाचार्य ने सच का साथ देने के बजाय कौरवों का साथ दिया, वे उन्हीं की तरफ से लड़े। क्योंकि वे कौरवों की नौकरी करते थे। असल में जिस कुंतीपुत्र कर्ण की हलके कुल में पैदा होने के लिए अवहेलना की जाती थी वही कर्ण असल में वीर था और नैतिकता जानने वाला महापुरुष था।

रामायण के राम का हम एकवाणी, एकपत्नी कह कर संबोधन करते हैं। लेकिन बाली और सुग्रीव में से एक की पत्नी दूसरे को देकर उसने एक का बाण मार कर वध किया। एक पत्नीव्रत की हांकने वाले राम की पत्नी का जब रावण ने अपहरण किया और उसे अशोकवन में ले जाकर रखा तब रावण से युद्ध करने से पहले राम पहले अशोक वन जाते और उसका हालहवाल पूछते। लेकिन मारुती (हनुमान) के बार–बार बताने के बावजूद रामचंद्र ने सीता, की तरफ जाकर उसका हाल नहीं पूछा। रावण के साथ द्रोह कर लंका का राज्य जीतने में उनकी मदद करने वाले विभीषण का पहले राज्याभिषेक करना यह कार्य राम की नजर में अधिक महत्वपूर्ण था। इसलिए ऐसे पुराणपुरुषों से हमारा क्या लाभ होने वाला है?

बौद्ध धर्म की तरफ में मेरा झुकाव बहुत पहले से है। वास्तव में 1951 की जनगणना में आपको सर्वधर्मीय और सर्वपंथीय लोग दिखाई देंगे। लेकिन पूरे भारत में एक भी बौद्धधर्मीय आदमी इस जनगणना में आपको दिखाई नहीं देगा। भारत में अगर एक भी बौद्धधर्मी नहीं तो आज 2500 सालों पहले हुए भगवान बुद्ध की हमें इतनी उत्कट याद क्यों आती है?

बौद्ध धर्म को खोदकर निकाल हम क्यों उसकी पूजा कर रहे हैं? भगवान बुद्ध का धर्म है। बौद्ध धर्म का प्रसार केवल भारत में ही नहीं पूरी दुनिया में है। धर्म प्रसार के क्षेत्र में राम और कृष्ण की पहुंच अधिक नहीं है।

कई लोग बौद्ध धर्म की शरारतपूर्ण आलोचना करते हैं। सावरकर उन्हीं में से एक हैं। असल में मैं नहीं जानता कि वे कहना क्या चाहते हैं? बुद्ध बुरे व्यक्ति थे? ऐसा उनका कहना है क्या? अगर वह कहना चाहते हैं कि बौद्ध धर्म का प्रसार करने वाले राजा बुरे थे तो उन्हें अपनी राय साफ शब्दों में रखनी चाहिए। मैं उन्हें जवाब देने के लिए तैयार हूं। केसरी में प्रकाशित किए गए– 'बौद्धों की आततायी अहिंसा का शिरच्छेद' में उन्होंने कुछ साफ तौर पर कहा नहीं है। सावरकर ही नहीं लेकिन किसी को भी बौद्ध धर्म के बारे में

कुछ पूछना हो तो वे स्पष्ट शब्दों में मुझसे पूछें। उन्हें जवाब देने की हिम्मत मुझमें है।

भगवान बुद्ध का जो विशाल भिक्षुसंघ था उसमें 75 प्रतिशत लोग ब्राह्मण थे। क्या सावरकर यह जानते हैं? सावरकर यह न भूलें कि सारीपुत्त मोग्गलायन जैसे विद्वान ब्राह्मण थे। सावरकर से मैं एक सवाल यह पूछना चाहता हूं कि पेशवा कौन थे? क्या वे भिक्षु थे? लेकिन उनके हाथ से अंग्रेजों ने कैसे राज्य छीन लिया? सो, सावरकर जैसे नादान और गैरजिम्मेदार लोगों की बातों पर हमें ध्यान नहीं देना चाहिए। कुछ लोग कहते हैं कि सावरकर ने गरल वमन (जहर उगला) किया। लेकिन मेरा कहना है कि सावरकर ने अपने पेट के नरक को वमन किया। कोई भले कितनी ही दुर्भावना से प्रेरित आलोचना करें मेरा मार्ग निश्चित है। मैं बौद्ध धर्म स्वीकार करने जा रहा हूं। आपको ठीक लगे तो आप भी स्वीकारें। अब तक हिंसा के मार्ग से और अमानवीय अत्याचार से बौद्ध धर्म की लहर को उन्होंने लौटाया है। लेकिन अब बौद्ध धर्म की लहर आएगी। वह कभी भी लौटने वाली नहीं है। इस असीम सागर में ज्वार आएगा, भाटा कभी नहीं आएगा। भगवान बुद्ध के संगठन में कुछ त्रुटियां रह गईं। कुछ कमियां रह गई थीं। उन कमियां से बाहर का पानी अंदर आया और बौद्ध धर्म का प्रवाह थोड़ा दूषित हुआ था। लेकिन अब मैं उस धर्म की मरम्मत कर वे छिद्र बंद करने वाला हूं।

बुद्ध चरित्र पर मैंने जो किताब लिखी है उसमें बुद्ध के स्थान का विवेचन किया है। ईसाई धर्म में ईसा अपने को ईश्वर का पुत्र मानता है। बाइबिल में वह यह भी कहता है कि मैं आपको ईश्वर का संदेश बता रहा हूं। मरने के बाद आप जब स्वर्ग में जाएंगे तब मुझे आपकी सिफारिश भगवान के सामने करनी पड़ेगी। तब मैं सोचूंगा कि जब मैं पृथ्वी पर था तब आप क्या मुझे ईश्वर का पुत्र मानते थे? इस्लाम धर्म के मुहम्मद पैगंबर का भी यही हाल है। मुहम्मद भी खुद को ईश्वर का दूत मानता है। लेकिन भगवान बुद्ध के उपदेश में कहीं ऐसा नहीं कहा गया है। भगवान ने कहा है कि केवल मैं कहता हूं इसलिए नहीं लेकिन आपकी विचारशक्ति को अगर ठीक लगे तभी आप इस धर्म को ग्रहण कीजिए। बुद्ध द्वारा ढूंढ कर निकाला गया मार्ग स्व-प्रयत्नों से, स्व-कष्टों से और स्वाध्याय से तैयार किया गया है। किसी दूसरे की पूंजी पर भगवान का धर्म आधारित नहीं है।

मार्क्सवादियों से क्या कहें? वे भगवान बुद्ध का दर्शन जरूर पढ़ें। दुखी, पीड़ित लोगों को दुख से मुक्ति दिलाने का सही मार्ग भगवान बुद्ध ने ढूंढ निकाला। हजारों पीड़ितों को उन्होंने स्वप्रकाश से दुखमुक्त किया। आलार-कालाम के ज्ञान से भगवान को संतोष नहीं मिला। क्योंकि उनकी शिक्षा अधूरी थी। सांख्य दार्शनिक कपिल महर्षि ने दर्शन के सहारे बताया कि धरती जड़ है। हिलती नहीं। फिर उसका विकास कैसे होता है? वह तरह-तरह के रूप कैसे धारण करती है? कपिल ने बताया कि धरती के पेट में जब रज, तम और सत्व गुण संतुलित होते हैं तब वह जड़ लगती है। लेकिन जब इन त्रिविध गुणों का संतुलन

बिगड़ जाता है तब धरती अस्थिर होती है। तब वह अलग-अलग रूप धारण करती है। कपिल ने बस इतना ही बताया। लेकिन इससे लौकिक दुखों का निवारण नहीं होगा यह भगवान बुद्ध के ध्यान में आया और इसीलिए उन्होंने चार आर्य सत्यों का आश्रय लिया।

मेरा हाल बाइबिल के मोझेस की तरह होने की संभावना है। पैलेस्टाईन के गुलामों को सुखी करने के लिए मोझेस को बहुत परिश्रम करने पड़े। मोझेस इजिप्त से गुलाम खरीद लाता था और उन्हें पैलेस्टाइन में आजाद कर सुखी बनाता था। इस कोशिश में उसे बहुत कष्ट सहने पड़े। इजिप्त से बाहर जाते समय मोझेस का बहुत बुरा हाल हुआ। हो सकता है मुझे भी बहुत अधिक यातनाएं सहन करने की नौबत आएगी। इसके बावजूद मैं अपने अस्पृश्य समाज को लेकर बौद्ध धर्म का स्वीकार करूंगा यह तय है।

इस अक्तूबर में, मैं अपना धर्मांतरण मुंबई में करने वाला हूं। उससे पूर्व इस धर्म के बारे में मैं एक किताब प्रकाशित करने वाला हूं। भगवान के बौद्ध धर्म में जो त्रुटियां हैं उन पर इस किताब में, मैं विस्तार से विचार करने वाला हूं। बौद्ध धर्म में उपासक को दीक्षा नहीं दी जाती थी। संघ दीक्षा पर उसका विपरीत असर होता है। उपासक के मन की पूरी तैयारी नहीं हुई रहती। लेकिन मेरे धर्म में उपासकों को भी धम्म दीक्षा दी जाएगी। उससे पूर्व धम्म दीक्षा पर मैं एक किताब लिखने वाला हूं। यह किताब हर व्यक्ति को खरीदनी पड़ेगी और उस किताब के कुछ सवालों के जवाब भी हर व्यक्ति को देने पड़ेंगे। तभी बौद्ध धर्म में उसे प्रवेश मिलेगा। बौद्ध धर्म में प्रवेश पाने के लिए हरेक को शुभ्र वस्त्र धारण करने होंगे।

धर्म नष्ट क्यों होता है इसका मिलिंद पन्ह इस किताब में खुलासा मिलता है। धर्म को तीन प्रमुख कारणों से ग्लानि आती है। पहला कारण है- धर्मतत्व अगर अबाधित न हो या पूरी तरह सोचे बगैर धर्म का गठन किया गया हो तो धर्म को ग्लानि आती है। दूसरी वजह है धर्म में उपस्थित दृढ़ धार्मिता। जिस तरफ वाकपुट लोगों की संख्या अधिक होती है उस धर्म पंथ की हमेशा विजय होती है। तीसरी वजह है कि के सिद्धान्त सामान्यजनों को समझ में आने वाला होना चाहिए।

पूरा अफगानिस्तान किसी समय बौद्ध भिक्षुओं का देश था। भगवान बुद्ध की दुनिया की सबसे अधिक भव्य और ऊंची मूर्ति अफगानिस्तान में है। लेकिन धर्मांध मुसलमानों ने 7 हजार बौद्ध भिक्षुओं की मुंडियां तोड़ कर सड़क पर उनकी ढेरी लगा दी। इसीलिए वहां से बौद्ध भिक्षु डर कर भाग गए।

अब अगर बौद्ध धर्म की लहर आए तो वह कभी नहीं लौटेगी। धर्म की स्थापना के लिए मंदिरों की बहुत जरूरत है। लेकिन मैं स्वकष्ट से एक ऐसा मंदिर बनवाना चाहता हूं जो आपने कभी देखा नहीं होगा। लेकिन उसके लिए लाचार होकर मैं किसी अमीर के आगे हाथ नहीं फैलाऊंगा। आप अगर रुपया इकठ्ठा कर के देंगे तो मैं मंदिर बनाऊंगा और अच्छा मंदिर बनाऊंगा। अपने अथक प्रयास से बनाऊंगा, दूसरों की सहायता से नहीं।

340

स्वतंत्र विचार, स्वतंत्र मनोवृत्ति और निर्भिक नागरिक बनें

10 जून, 1956 को दिल्ली के अम्बेडकर भवन के मैदान में एक सभा का आयोजन किया गया था। इसमें तीस हजार से भी अधिक जन समुदाय उपस्थित था। दिल्ली की भारतीय बौद्धजन समिति की शाखा की ओर से 2500वां बुद्ध महापरिनिर्वाण दिन, जयंति और संबोधी दिन मनाने के लिए इस सभा का आयोजन किया गया था। कंबोडिया के आदरणीय वीर धर्मवीर महाथेरा सभा के अध्यक्ष थे। डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने कहा,

बहनों और भाइयों,

ब्राह्मण धर्म अन्याय, निर्ममता, गरीबों के शोषण का जनक है। वर्णव्यवस्था में ब्राह्मण सबसे ऊपर वाली पायदान पर हैं। उनके बाद क्षत्रीय, उनके बाद वैश्य और इन सबका बोझ अपने सिर पर लिए सबसे निचली पायदान पर शूद्र हैं। शूद्रों को अगर अपनी उन्नति करनी हो तो उसे ऊपरी तीन वर्णों के साथ संघर्ष करना पड़ेगा। इन तीनों वर्णों का जरा भी मन नहीं होता कि वे शूद्रों के कल्याण की चिंता करें। वैश्यों और क्षत्रियों से धर्म ने ब्राह्मणों को अधिक श्रेष्ठ बनाया है इसलिए वे ब्राह्मण वर्ग के धार्मिक गुलाम हैं। सीधे-सादे शब्दों में कहना हो तो शूद्रों की उन्नति की राह के रोड़े बने हुए ये तीन वर्ण उसके दुश्मन हैं।

जिस समाज में धार्मिक स्तर पर लोगों को नोचा-खसोटा जाता हो, वहां किसी प्रकार की उन्नति की आप कैसे उम्मीद कर सकते हैं? इसी कारण शूद्रों को हमेशा पैरों तले दबाए रखा गया और जब-जब उन्होंने विरोध में लड़ने के लिए कमर कसी तब-तब उनके सिर को गर्दन से अलग किया गया।

इसके ठीक विपरीत बौद्ध धर्म की ओर देखें, इसमें जातिवाद और विषमता का कोई स्थान नहीं। सभी अधिकार समान- धर्म में सबको समान अधिकार। कोई उच्च नहीं कोई निम्न नहीं। खुद बुद्ध ने अन्याय के खिलाफ लड़ कर 'बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय' धर्म की स्थापना की।

पहले आर्य (ब्राह्मण) पूजा करते समय हजारों पशुओं की बलि चढ़ाया करते थे। पशु हत्या का इतिहास (गाय और भैंसों का कत्ल) अगर देखा जाए तो अंग्रेजों ने और मुसलमानों ने इस देश की जितनी गायें मार कर खाई होंगी उससे अधिक गायें उस युग के ब्राह्मणों ने खाई हैं।

प्रबुद्ध भारत, 21 जुलाई, 1956

पहले चार तरह के ब्राह्मण थे। समयांतर से उनकी सत्रह अलग उपजातियां बनीं। ब्राह्मण धर्मग्रंथों से पता चलता है कि गोमांस के हिस्से को लेकर, गायों-भैंसों की चमड़ी पर मालिकियत को लेकर हमेशा ब्राह्मणों में युद्ध हुआ करते थे। ब्राह्मणों के देवताओं को प्रसन्न रखने के लिए जो पशुहत्या नहीं करते थे उन्हें ब्राह्मण धर्मानुयायी नहीं माना जाता था। इसी कारण बौद्ध धर्म अस्तित्व में आया। बौद्ध धर्म ने मानव को सोचने की आजादी देकर पूरी तरह सोच कर योग्य मार्ग अपनाने की आजादी दी है। नैतिकता पर आधारित अहिंसा का उपदेश बौद्ध धर्म में दिया गया है। इस बारे में आश्चर्य का कोई कारण नहीं है। लोगों ने अहिंसा का गलत अर्थ लगाया। इंसान को पशुहत्या नहीं करनी चाहिए या हाथ में तलवार लेकर देश की रक्षा के लिए लड़ना नहीं चाहिए यह अहिंसा नहीं है। अहिंसा दो बातों पर आधारित है। आवश्यकता के लिए हत्या और हत्या करने की इच्छा हुई इसलिए हत्या! राष्ट्र पर अगर हमला हुआ, देश अगर संकटों से घिरा तो तलवार हाथों में लेकर, राष्ट्र की रक्षा के लिए हथेली पर सिर लेकर युद्ध क्षेत्र में कूद जाना और दुश्मनों का सफाया करना, उनकी हत्या करना हर नागरिक का कर्तव्य है। इसका मतलब है कि यह हिंसा आवश्यक थी। उसे बौद्ध दर्शन में उच्चतम स्तर की अहिंसा कहा जाता है। दूसरी, मारने की इच्छा मन में पैदा होना। यानी कि, अपने संतोष के लिए पशुबलि देना, पशुहत्या करना - इसे हिंसा कहा गया है।

बौद्ध दर्शन को जैसे का तैसा अपनाकर उसी में अपने जातिवाद आदि के तत्व घुसेड़कर हिंदू दार्शनिक उसे अपना दर्शन कहते हैं। ब्राह्मण धर्म के लेखक कहते हैं कि वेद प्रजापति ने दिए हैं। भगवान बुद्ध ने सवाल पूछा कि प्रजापति किस जगह से पैदा हुआ? हिंदुओं के वेद और गीता का अध्ययन करें तो ध्यान में आता है कि भगवतगीता और कुछ नहीं बल्कि 'धम्मपद' ही है। लेकिन ब्राह्मण धम्मपद की नकल करते हुए उसमें जातिव्यवस्था घुसेड़ना नहीं भूले। खुद श्रीकृष्ण ने अपने शिष्यों को उपदेश किया कि ब्राह्मणेतरों को कोई ज्ञान नहीं देना अथवा धर्मोपदेश नहीं देना।

प्रार्थना करने से या किसी के पैर पकड़ने से वे तुम्हें कुछ नहीं देंगे। लड़ना हो तो अपने अंदर पहलवानों-सी ताकत होनी चाहिए। पहलवान बहुत खाता है, उसे हजम भी करता है और उससे शक्ति प्राप्त करता है। उसी प्रकार आपकी मानसिक ताकत बढ़नी चाहिए। सत्य और सही मार्ग का आश्रय तो मानसिक शक्ति प्राप्त होती है। डरपोक कभी भी लड़ नहीं सकते। अस्पृश्यता की गंदगी हटाने के लिए मैंने कई सालों से अथक मेहनत की है। लेकिन अभी तक मैं अपने उद्देश्य में सफल नहीं हुआ हूं। मेरा मन मजबूत है। इसलिए मैं आखिर तक लड़ूंगा। जुल्मों के खिलाफ लड़ने के लिए मानसिक बल और नैतिक साहस चाहिए। वह आपको प्राप्त हो इसके लिए मैं आपको नई राह बताता हूं। आप अगर बुद्ध मार्ग का अनुसरण करें तो दुनिया में आपको प्रतिष्ठा प्राप्त होगी, इतना ही नहीं आपको बलप्राप्ति भी होगी और आपके बालबच्चों का भविष्य

उज्ज्वल बनेगा। समानता और स्वाभिमान से जीने की राह दिखाने के लिए वे आपके प्रति कृतज्ञ रहेंगे।

मैंने सुना है कि लोग अन्याय के खिलाफ लड़ें नहीं, इसलिए उन्हें अपने दल में ले आने के लिए काँग्रेस उन्हें पैसा बांट रही है। सरकार मुझसे भी पैसा लेने के लिए कह रही थी। उद्देश्य उनका यह था कि मेरा मुंह बंद रहे। लेकिन आप जानते हैं कि मैंने कभी पैसा नहीं लिया। अपना पेट पालने के लिए मैं मेहनत करके पैसा कमाऊंगा। अस्पृश्यों के अधिकारों की और हित की रक्षा के लिए आखिर तक लड़ता रहूंगा। इसीलिए मैं आपसे विनती करता हूं कि ध्यान रहे कि भले कुछ भी क्यों न हो जाए कोई आपका स्वाभिमान न खरीद पाए कांग्रेस के पैसा देकर खरीदने के षडयंत्र को कुचल दो। समाज में गर्दन हमेशा ऊंची रहे इसलिए हमेशा खबरदार रहें। सब-कुछ दांव पर लगा कर अपना और समाज का स्वाभिमान कायम रखें। मैं कोई दूत नहीं हूं। या ईश्वर का प्रतिनिधि भी नहीं हूं। मैं भगवान बुद्ध का विनम्र शिष्य हूं। मैं आपको यह मार्ग दिखा रहा हूं। यह मार्ग अगर आपको सही लगता हो तो आप उसका अनुसरण करें। लेकिन इस मार्ग को अपनाने से पहले उसके बारे में सभी पहलुओं पर सोचिए। भगवान बुद्ध ने अपने अनुयायियों से कहा कि किसी भी बात का स्वीकार पूरी तरह से सोच समझ कर ही कीजिए। बिना सोचे-समझे किसी बात को ना स्वीकारें। प्रकृति में मानव स्वतंत्र है, इसीलिए मैं आपसे कहूंगा कि स्वतंत्र विचार-प्रणाली का स्वतंत्र रूप से निडर नागरिक बनें।

341

एक समय में पूरे अफगानिस्तान में बौद्ध धर्म था

दिल्ली में डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के घर पर बुद्ध जयंति के अवसर पर 'बौद्धजन महासभा' (अखिल भारतीय बौद्धजन समिति की दिल्ली की शाखा) की ओर से 23 जून, 1956 के दिन आयोजन किया गया था। इस सभा में दिल्ली तथा आसपास के क्षेत्र से चुनिंदा अस्पृश्य और बौद्धजन उपस्थित थे।

भव्य जुलूस

सभा से पहले दिल्ली में बुद्ध की प्रतिमा तथा छोटे बच्चों द्वारा अभिनीत बुदध के जीवन-प्रसंगों के सजीव दष्टश्यों के साथ भव्य शोभायात्रा निकाली गयी था।

शोभायात्रा में हिस्सा लेकर उसे सफल बनाने में सहयोग देनेवाले कार्यकर्ताओं और बाल अभिनेताओं को डॉ. बाबासाहेब के हाथों चांदी का तमगा और भगवान बुद्ध की प्रतिमाएं प्रदान की गईं।

इस समारोह में प. पू. बाबासाहेब अम्बेडकर ने संबोधित किया और कहा-

बहनों और भाइयों

बौद्ध धर्म यथार्थवादी धर्म है। केवल काल्पनिक बातों पर बुद्ध ने अपने धर्म का निर्माण नहीं किया। इसीलिए ईश्वर और आत्मा या इस प्रकार की अजीब बातों को बुद्ध नहीं मानते थे। बुद्ध अपने धर्म को धम्म कहते है। धम्म अर्थात् सदाचरण, सद्विरोध ... हुआ....विचार शुद्ध आचरण। मानव जिसे अनुभव नहीं कर सकता या जिसका अस्तित्व सिद्ध नहीं किया जा सकता ऐसी किसी बात पर बुद्ध का विश्वास नहीं था।

हर धर्म के दो पहलु होते हैं। एक विचारों पर आधारित सिद्धान्त और दूसरा नीति-नियमों से संबंधित। इनमें से एक को दूसरे से अधिक महत्वपूर्ण नहीं कहा जा सकता। ब्राह्मण धर्म की ये दो बातें अगर देखें तो पता चलेगा कि यह धर्म नाशक है। क्योंकि, हिंदू धर्म का वैचारिक गठन मानव-मानवों के बीच की विषमता पर आधारित है। ब्राह्मण भ्रष्ट रहे या सर्वश्रेष्ठ रहे वही श्रेष्ठ है, यह इनकी सीख है। ब्राह्मणों से क्षत्रीय कनिष्ठ, क्षत्रीय से वैश्य और वैश्यों से शूद्र कनिष्ठ। आखरी तीन वर्णों को पढ़ने का अधिकार नहीं। ब्राह्मण को अध्ययन का अधिकार होने के कारण स्पष्ट है कि सभी वर्गों

प्रबुद्ध भारत : 21 जुलाई, 1956

के लिए सोचने के अधिकार ब्राह्मणों के पास थे। अकेले क्षत्रिय पर देश की रक्षा का भार था। कैसी आत्मघाती व्यवस्था थी! एक वर्ग के हाथ में तलवार देकर अन्य सभी वर्गों को उस पर निर्भर रहने के लिए कहा। परिणामस्वरूप जब-जब क्षत्रीय परास्त हुए तब-तब दुश्मन ने पूरे देश पर कब्जा कर लिया।

मेरे इस कथन के लिए इतिहास साक्षी है। 1939 से 1945 के दूसरे विश्वयुद्ध के दौरान वाले समय में यूरोप में भी कमोबेश 100 लड़ाइयां लड़ी गईं। उनमें से कुछ में यूरोप की हार हुई तो कुछ में जीत। लेकिन हिटलर पूरे यूरोप में कभी भी अपना आधिप्त्य स्थापित नहीं कर पाया। आखिर हिटलर की हार हुई और यूरोप का संरक्षण हुआ। क्योंकि भारत की तरह वहां किसी एक वर्ग को सुरक्षा की जिम्मेदारी नहीं सौंपी गई थी। मुसलमानों ने जब-जब भारत पर आक्रमण किया और राजपूतों का कत्लेआम किया तब मानो जैसे पूरा देश ही अकर्मण्य असहाय हुआ।

देश में एक वर्ग ऐसा है जो केवल नफा कमाना और संपत्ति इकठ्ठा करना चाहता है। उन्हें हम बनिया, वाणी अथवा उत्तर की ओर उसे लाला के नाम से पहचानते हैं। देश के कल्याण की या किसी की भलाई की चिंता वे कभी नहीं करते। संपत्ति इकट्ठा करने में उनके जैसा महालोभी कोई और नहीं होगा। देश अगर युद्ध में हारता है तो कोई बात नहीं लेकिन वे युद्ध के सामान में भी नफा कमाएंगे।

बौद्धजन समिति चाहती है कि हर पूर्णिमा के दिन इस प्रकार के कार्यक्रमों का आयोजन किया जाए। पूर्णिमा के शांत वातावरण में पूर्ण चंद्रमा की शीतलता में मनुष्य को अपने कार्य का सिंहावलोकन शान्ति और गंभीरता के साथ करने का मौका मिलता है, पूर्णिमा की यही खासियत है।

पुराने जमाने में डायरी, कॅलेंडर्स नहीं हुआ करते थे। तब समय का हिसाब रखने के लिए लोग पूर्णिमा के दिन व्रत रखते थे। अन्य धर्मियों की तरह बौद्ध धर्म यह सीख नहीं देता कि, व्रत रखने से अपने सारे पाप धुल जाएंगे और स्वर्गलाभ होगा। बौद्ध धर्म में जिन्हें जाना नहीं जा सके चीजें अथवा वर (बख्शीश) का कोई स्थान नहीं है। जिन चीजों को आदमी अनुभव कर सकेगा, छू सकेगा, जिनके बारे में बोल सकेगा और जिनका नाश किया जा सकेगा ऐसी ही चीजों के अथवा बातों के बारे में बुद्ध ने उपदेश किया है।

हर किसी को धर्म जांचना-परखना आना चाहिए। बाजार में हम सुनार की दूकान में सोने का अलंकार खरीदने के लिए जाते हैं। तब आप क्या करते हैं? आप यही देखते हैं ना, कि सोना असली या नकली? इसकी पहचान के लिए सोने को कसौटी पर कसा जाता है। उसी प्रकार धर्म को भी कसौटी पर कस कर परखना चाहिए। धर्म के सिद्धान्तों

की जांच कर, सिद्धांत और आधारों की हम जांच-पड़ताल कर देखेंगे कि कौन-सा धर्म मनुष्य को सुख और संतोष दे सकता है।

इस नजरिए से देखें तो ब्राह्मण धर्म मानव समाज के अस्तित्व के लिए नाशक ही नहीं भयंकर जहरीला भी है। महाराष्ट्र में देवगिरी का रामराव यादवों का प्रधानमंत्री हेमाडपंत नामक ब्राह्मण था। उसने आचारविधि कर्मकांड के सात सौ तरीके अपनी किताब में लिख कर रखे हैं। एक साल में कुल 365 दिन ही होते हैं। फिर ये 700 विधि किसलिए? हेमाडपंत ब्राह्मण थे इसलिए उसने ये सात सौ 'आचार' के तरीके लिख कर ब्राह्मणों के पेट पालने का प्रबंध कर रखा है।

ऐसी ही एक और बात है, सत्यनारायण कथा की। सत्यनारायण की यह कथा और कुछ नहीं बस ब्राह्मणों के भोजन का प्रबंध के लिए किसी ब्राह्मण के उर्वर दिमाग से निकली खोज है। सत्यनारायण पूजा का समारोह देखें तो आप पाएंगे कि सत्यनारायण को अर्पण करने के लिए जो मेवा-मिठाई और फल होते हैं वे केवल ब्राह्मणों के ही खाने के काम में आते हैं। किसी सार्वजनिक भोजन समारोह में किसी जाति के साथ बैठ कर भोजन किया जाए अथवा नहीं यह तय करने का अधिकार भी ब्राह्मणों का ही होता है।

अपने से नीच समझ कर ब्राह्मण अगर किसी जाति द्वारा तैयार किया हुआ भोजन खाने से इनकार कर दे तो उस खाने के बदले में करीब 20 रुपए और कुछ फल वह प्राप्त कर सकता है। खाना खाने के बदले में ब्राह्मण वे चीजें मांग ही लेता है लेकिन शूद्र द्वारा तैयार किया हुआ भोजन करता नहीं। उसके बदले में अपने घर में पका कर खाया जा सके ऐसा सारा सामान ब्राह्मण उस शूद्र के घर से ले जाता है। शूद्र भले ही कितनी सफाई से उन्हीं चीजों का प्रयोग कर खाना बनाए, लेकिन वह नहीं चलता। क्योंकि वह जो सामान लेकर जाता है उसमें उसके पांच-दस दिनों का इंतजाम हो सकता है।

अगर 'नारायण' खुद सच हो तो 'सत्य' शब्द और क्यों जोड़ा गया है? इनका यह 'नारायण' है ही नहीं। ब्राह्मण पंडितों की ही तरह वह लूटने वालों का रक्षा करने वाला है, बस। इनके बताए सारे आचारविधि निरर्थक हैं। यह मौखिक बातें और लफंगेबाजी हजारों वर्षों में पंडितों ने चलाई है।

कुछ लोग गंगास्नान के लिए जाते हैं। गंगा किनारे ब्राह्मण बैठे ही हुए होते हैं! स्नान करने जाने वाले प्रत्येक से वे दक्षिणा (पैसा) लेने के लिए तैयार बैठे होते हैं। गंगा नदी सदियों से बहती है। वह नहाने का पैसा नहीं मांगती। न किसी से लेने के लिए कहती है। ब्राह्मण को एक आना देने के बाद वह कुछ मंत्र बुदबुदाएगा और फिर गंगास्नान के लिए आपको इजाजत मिलेगी इसकी क्या कोई जरूरत है? भोले-भाले लोगों को लगता

है कि इस प्रकार ब्राह्मणों को दक्षिणा देकर गंगा नदी में स्नान करने से सभी पाप धुल जाते हैं। कितने मूर्ख हैं वे सारे! गंगा नदी और लोगों के बीच ब्राह्मणों को दलाल माना जाता है। यह बहुत बड़ा आश्चर्य है।

पाप अगर ब्राह्मणों को दान देने से और गंगा नहाने से धुल जाता हो तो एक मनुष्य के मन में दूसरे मनुष्य के बारे में सहानुभूति बिल्कुल नहीं बचेगी। एक-दूसरे से कोई प्रेम नहीं करेंगे। ऐसे हालात में कानून की जरूरत ही नहीं पड़ेगी और सरकार का भी कोई महत्व नहीं बचेगा। लेकिन इसे स्वीकारने के लिए कोई भी तैयार नहीं है।

मैं जब मंत्री था तब एक बार हरिद्वार गया था। मंत्री था इसलिए मुझे वहां ऐसा एक छोटा मंदिर दिखाया गया जिसके चारों तरफ पानी था। उसे 'हर की पौड़ी' कहते हैं। वहां के पानी में मनुष्य की हड्डियां और अन्य सभी गंदी वस्तुएं इकट्ठा हुई थीं। कोई नाला भी उससे साफ होगा ऐसा लग रहा था। ऐसी उस हर की पौड़ी में हर महिला-पुरुष नहा रहे थे। उस पानी में मृतक की अस्थियां डालने से वह स्वर्ग जाएगा और उस पानी में उसके सगे-संबंधियों के नहाने से उनके सारे पाप धुल जाएंगे जैसी मूर्ख श्रद्धा क्यों प्रचलित होगी मेरी समझ में नहीं आता। मुझे लगता है कि इन सभी बातों के बारे में सोचा जरूर जाना चाहिए।

सोना कसौटी पर खरा उतरे बगैर कोई उसे खरीदता नहीं। धर्म भी मानव के लिए उपयोगी है अथवा नहीं इस कसौटी पर कसा जाना चाहिए। जब तक धर्म की ऐसी परीक्षा नहीं होती तब तक वह स्वीकार्य नहीं होता। हमारे पुरखे अशिक्षित थे इसलिए ब्राह्मणों के हर शब्द पर उन्होंने भोलेपन से विश्वास किया। अब जमाना बदल गया है। अब आपको अच्छी तरह सोच-विचार के बाद ही धर्म स्वीकार करना चाहिए।

हिंदू और बौद्ध धर्म में महान अंतर है। मैं वह सब आपको समझा देता हूं। मिलिंद राजा द्वारा भिक्षु आचार्य नागसेन के साथ की गई चर्चा प्रश्न-उत्तर रूप में 'मिलिंद पन्ह' ग्रंथ में दी गई है। इस अवसर पर मुझे उसकी याद आ रही है। लोग मुझसे पूछते हैं कि भारत से बौद्ध धर्म समाप्त क्यों हुआ? ऐसा ही एक सवाल मिलिंद राजा ने भिक्षु नागसेन से पूछा था। मिलिंद राजा ने कहा, धर्म का ह्रास क्यों होता है? तब आचार्य नागसेन ने जवाब दिया था कि धर्म के ऱ्हास के तीन कारण होते हैं -

1. जो धर्म तात्कालिक (सामयिक) होता है वह समाप्त हो जाता है। जब तक धर्म लोगों के मन पर छाया रहता है तभी तक वह जिंदा होता है।
2. धर्मोपदेशक अगर विद्वान नहीं हों और चर्चा के समय अगर वे अपने धर्म का बेहतर ढंग से प्रतिपादन कर सफल नहीं हो सकें तो धर्म लोप हो जाता है।
3. जब आम आदमी सच्चे धर्म पर निर्भर नहीं रहता, केवल नकल करता है तब

धर्म लोप हो जाता है, क्योंकि नकल कभी चिरंतन नहीं हो सकती।

भारत से बौद्ध धर्म के लोप होने के जो कारण हैं उनसे इन कारणों का सीधा संबंध नहीं है। मैं इस बारे में किसी के भी साथ चर्चा करने के लिए तैयार हूं।

मैं आपको बताता हूं कि दुनिया के अखिल मानवों के कल्याण के लिए बौद्ध धर्म ही हमेशा के लिए रहेगा। मुसलमानों ने इस देश पर आक्रमण कर बौद्ध विहारों को ध्वस्त किया। बुद्ध मूर्तियों को तोड़ा। मूर्तियां तोड़ने के कारण उन्हें बुत शिकन यानी मूर्तियां तोड़ने वाले कहा जाता है। इसमें से बुत शब्द मूर्ति के लिए है। यह शब्द मूल बुद्ध शब्द का विकृत (अपभ्रंश) रूप है। मुसलमानों के बौद्ध धर्म पर आक्रमणों के बारे में मैं एक किताब लिख रहा हूं।

किसी जमाने में पूरा अफगानिस्तान बौद्ध देश था। आक्रमणकारी मुसलमानों को वहां कुछ लोग पीत वस्त्र धारण कर यहां से वहां जाते हुए दिखाई दिए। मुसलमान उप सेनापति ने उन्हें इस्लाम धर्म स्वीकारने का संदेश भेजा। लेकिन भिक्षुओं ने वैसा करने से इनकार किया। एक दिन यह उप सेनापति जंगल से गुजर रहा था तब उसे वहां के पेड़ पर इंसानों के मुंड लटकते दिखाई दिए। उसे आश्चर्य लगा। करीब सात सौ भिक्षुओं का कत्ल करके उनके मुंड वहां के पेड़ों पर लटकाए हुए थे। यह देख कर अपने आदेश का गलत ढंग से पालन किए जाने का अहसास उसे हुआ और उसे बहुत खेद हुआ। तब तक अपनी जान और धर्म को बचाने के लिए सभी भिक्षु आगे चीन, तिब्बत और अन्य देशों में भाग गए। वही भिक्षु आगे जापान भी पहुंचे।

मुसलमानों ने बौद्ध और हिंदू धर्म पर आक्रमण किया था यह सच बात है। उन्होंने हिंदू और बौद्ध दोनों धर्मों के मंदिर ध्वस्त किए। हालांकि बौद्ध धर्म का जितना संबंध है उस बारे में बस इतना ही कहा जा सकता है कि कई भिक्षुओं का कत्ल होने के बाद बचे हुए भिक्षुओं द्वारा दूसरे देशों में पालायन करने के कारण बौद्ध अनुयायी अंधकार में टटोल रहे थे। क्योंकि भिक्षु पैदाइशी भिक्षु नहीं होते उन्हें तैयार किया जाता है। उन पर कई तरह के संस्कार किए जाते हैं। ऐसे भिक्खु मुस्लिम आक्रमणों के बाद देश में नहीं बचे थे।

हर तरह के संकट से होकर भिक्षुओं को गुजरना पड़ता है। भिक्षुओं की शिक्षा के अलग- अलग पायदान होते हैं। अठारह वर्ष के छात्र को ज्येष्ठ भिक्षु के पास उच्च विद्यार्जन के लिए भेजा जाता था। वहां अच्छी तरह से पढ़ाई करने के बाद उम्र के पच्चीसवें साल वह 'श्रामणेर' बनने की योग्यता हासिल करता। 'श्रामणेर' आगे पांच सालों तक कठिन जीवन बिताने के बाद उसकी भिक्षु के रूप में 'उपसंपदा' की जाती थी। यानी कि पच्चीस वर्ष की उम्र तक अच्छी तरह अध्ययन करने के बाद अच्छा आचरण रखने में कामयाब होने के बाद ही कोई भिक्षु बन सकता था।

ब्राह्मण पुरोहितों के लिए ऐसी कोई कसौटियां नहीं थीं। ब्राह्मण के घर पैदा होने भर से वह पुरोहित बन जाता था। उस पर विद्याध्ययन, अच्छा बर्ताव या अन्य किसी तरह की कोई शर्त नहीं थी। इसलिए ब्राह्मण धर्म पर भले हमला हुआ हो, उनके मंदिर नष्ट किए गए हों तब भी ब्राह्मण जन्म लेते रहे और वे ब्राह्मण धर्म के कहलाते रहे।

भिक्षुओं का अस्तित्व न रहने के कारण आम लोग ऐसे ब्राह्मणों के चंगुल में फंसे। ब्राह्मणों को खुला मैदान मिला। वे अपने धर्म का प्रचार और प्रसार करने लगे।

ईश्वर क्या है? गरीब लोगों को लूट कर धर्म के नाम पर जो लूटने वाले थे, उन्होंने ही ईश्वर का डर पैदा किया है।

इस सभा में महिलाएं भी उपस्थित हैं यह अच्छी बात है। लेकिन अपने चेहरे पल्लू से ढंके रखना अच्छी बात नहीं है। निर्भयता से जीवन जीना सीखें। अस्पृश्य महिलाओं में सुधार के बगैर अस्पृश्य समाज में पूरी तरह सुधार संभव नहीं।

342

बौद्ध धर्म से ही दुनिया का उद्धार होगा

भारतीय बौद्धजन समिति के प्रवर्तक और अध्यक्ष, भारत की बहुजन जनता के कंठमणी, विदेशों में भी कीर्ति प्राप्त संविधान विशारद, अखिल भारतीय शेड्यूल्ड कास्ट्स् फेडरेशन के संस्थापक और कर्णधार परमपूज्य डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर द्वारा आगामी 14 अक्तूबर, 1956 के दिन सुबह 8 बजे नागपूर में बौद्ध धर्म की दीक्षा लेने की घोषणा की है।

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का

संदेश

२६, अलीपुर रोड,

दिल्ली. दिनांक २३ सितंबर, १९५६

बौद्ध धर्म स्वीकारने का दिन और समय अब मैंने तय किया है। इस बार, दशहरे के दिन दिनांक १४ अक्तूबर, १९५६ के दिन नागपूर में, मैं धर्मांतरण करूंगा।

दशहरे के दिन सुबह ९ से ११ बजे के बीच मेरा धर्म दीक्षा विधि समारोह संपन्न होगा। शाम को सभी लोगों के लिए मेरा व्याख्यान होगा।

बी. आर. आंबोडकर

२३ सितंबर, १९५६

डॉ. बाबासाहेब ने '*प्रबुद्धभारत*' के संपादक के नाम एक विशेष संदेश भेज कर अपने बौद्ध धर्म स्वीकारने के लिए ऊपर्युक्त दिन, तिथी और समय के बारे में सूचना दी है।

विजयादशमी का मुहरत धम्मदीक्षा के लिए तय करने का औचित्य है। महान बौद्ध सम्राट अशोक के विजय दिवस के रूप में ही विजयादशमी मनाई जाती है। इधर के तीन सौ सालों में बरसात के मौसम की समाप्ति के बाद मराठा विजयादशमी के दिन ही सीमोल्लंघन करते थे। अस्पृश्य और दलित समाज के सिर पर पिछले हजार सालों से जो काले बादल छाए थे वे इस ढाई हजारवें बौद्ध वर्ष की विजयादशमी के दिन धम्मचक्र नवप्रवर्तन कर डॉ. बाबासाहेब नष्ट करने वाले हैं। हिंदू धर्म की सीमा में बंद अस्पृश्य समाज इस दिन शतकों से गुलामी में बंद रखने वाले धर्म की चहारदीवारी लांघकर नई आजादी का स्वाद चखने के लिए तैयार होने वाले हैं। यही असली सीमोल्लंघन है। यह संपन्न होने के बाद वापस लौटना नहीं है। इसी भीम निश्चय के साथ हर अस्पृश्य–दलित

का कदम आगे बढ़ने वाला है।

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का बौद्ध धम्मदीक्षा समारोह ब्रह्मदेश के महास्थविर पूज्य भिक्षु चंद्रमणी संपन्न करेंगे। उसी वक्त लाखों लोग बौद्ध धर्म की दीक्षा लेने के लिए नागपूर आ रहे हैं।

नागपुर शहर के पूर्व दिशा से रायपूर, दुर्ग, गोंदिया, भंडारा जिलों के, पश्चिम से वर्धा, अमरावती, अकोला, बुलढाणा जिलों से, दक्षिण से मराठवाड़ा, चांदा, बल्लारशहा जिलों के तथा उत्तर से उत्तर प्रदेश, मध्य भारत, भोपाल, होशंगाबाद, बैतूल, शिवणी आदि जगहों से आने वाले बौद्ध धर्म स्वीकारने के इच्छुक लोगों के जत्थे 'बुद्धं सरणं गच्छामि' की घोषणा करते हुए नागपूर में आएंगे।

इस अवसर पर वर्धा तथा अन्य जगहों से सवर्ण हिंदुओं का एक बड़ा समूह बौद्ध दीक्षा ग्रहण करने के लिए आने वाला है। दीक्षा लेते समय सफेद वस्त्र पहनने चाहिए और दीक्षा लेने वाले की उम्र 18 साल से अधिक होनी चाहिए इन दो नियमों का कड़ाई से पालन किया जाएगा।

उसी दिन शाम को नागपूर में ही डॉ. बाबासाहेब का बौद्ध धर्म स्वीकार करने पर ऐतिहासिक भाषण होना है। दुनिया के धार्मिक इतिहास की इस क्रांतिकारी घटना का प्रत्यक्ष अवलोकन करने का मौका और उसमें हिस्सा लेने का अविस्मरणीय मौका आपको मिला हुआ है। बताया जाता है कि भगवान बुद्ध के बाद पहली बार एक ही समय एक ही दिन एक जगह इतनी बड़ी संख्या में बौद्ध धर्म स्वीकारे जाने की बात का जिक्र कहीं भी नहीं मिलता है।

नागपूर की खासियतें

डॉ. बाबासाहेब ने 1930 में ऑल इंडिया डिप्रेस्ड क्लासेस लीग की और 1942 में अखिल भारतीय शेड्यूल्ड कास्टस् फेडरेशन की नींव नागपूर में ही रखी। साथ ही उनका बौद्ध धर्म स्वीकारने का कार्यक्रम भी नागपूर में ही होगा।

प्रतिज्ञा-पत्र

डॉ. बाबासाहेब ने 1935 में प्रतिज्ञा की कि, 'मैं हिंदू धर्म में पैदा हुआ यह मेरे हाथ में नहीं था लेकिन हिंदू बनकर मरूंगा नहीं।' 21सालों के बाद उस प्रतिज्ञा की पूर्ति हो रही है।

आर. डी. भंडारे''[१]

1. प्रबुद्ध भारत, 29 सितंबर, 1956

बॉक्स २. बौद्ध धर्म अपनाने के संदर्भ में डॉ. बाबासाहेब के विचार

''भगवान बुद्ध इस देश में रहते थे, उनका धर्म आज भी इस देश का धर्म बनेगा इस बारे में मुझे कोई संदेह नहीं।

इंसानियत, समदृष्टि, बंधुभाव, प्रेम से यह सच्चा धर्म बना है। इस धर्म को आप स्वीकारें।

मैंने धर्मांतरण के जिस कार्य की शुरुआत की है उसे ठीक तरह से समझो। उसका महत्व जानो, उसे परखो। उसके बाद ही निर्णय लो। लेकिन एक बार निर्णय लेने के बाद जो पुराना है उसे फेंक दो। पिछले २० सालों से मैं आपके बारे में सोच रहा हूं। मानव जिन विभिन्न् धर्मों का अध्ययन कर सकता है वह मैंने किया है और आखिर मेरा यह अनुभव रहा है कि दुनिया के लिए योग्य बुद्ध धर्म के अलावा कोई दूसरा धर्म नहीं है। दुनिया में केवल बुद्ध धर्म ही रहेगा।''[२]

बॉक्स ३. ''जो बौद्ध धर्म को स्वीकार करना चाहते है वे मेरे साथ आएं। जिस व्यक्ति का मन स्वतंत्र नहीं वह व्यक्ति आजाद नहीं। मैंने हिंदू धर्म का त्याग करने का पक्का निर्णय किया है। जो हिंदू धर्म का त्याग करना चाहते हैं वे हमारे साथ आएं। मुझे जो कर्तव्य करना है वह मैं करने जा रहा हूं। मेरे जीवन में कई सारे काम करने बाकी रह गए हैं। जितने काम हो सकेंगे, मैं करूंगा। मेरे पिता को हिंदू धर्म में ही मृत्यु ने ग्रसा। मेरा परिवार भी इसी धर्म में रहते हुए मरा। मेरा हिंदू धर्म में रहना, अब मुझे भी स्वीकार नहीं। व्यावहारिकता रहित मार्ग मुझे बदलना ही होगा।''[३]

इस बौद्ध धर्म दीक्षा कार्यक्रम की पूरी जिम्मेदारी डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर द्वारा स्थापन की गई भारतीय बौद्धजन समिति की नागपूर शाखा को सौंपी गई थी। उसके अनुसार समिति के सचिव वा. मो. गोडबोले ने धर्मदीक्षा का कार्यक्रम सफल होने की दिशा में दिनांक 21 सितंबर, 1956 के दिन समिति की ओर से परिपत्र जारी किया और वह भारत के अम्बेडकर आंदोलन में सम्मिलित कई लोगों को भेजा था। वह परिपत्र इस प्रकार था–

"MASS CONVERSION

Revered Dr. BABASAHEB AMBEDKAR, the Founder and President of the Buddhist Society of India & **The Bhartiya Bouddha Jana Samiti &** shall embrace Buddhism at the ceremony to be held at Nagpur at 8 a.m. On the Vijaya Dashmi Day, **Sunday, the 14th October, 1956. Venerable Bhikkhu Chandramani Maha Thera of Burma,** now in India] shall perform the ceremony.

---

2. प्रबुद्ध भारत, 29 सितंबर, 1956
3. प्रबुद्ध भारत, 29 सितंबर, 1956

People desirous of getting themselves converted shall be able to do so at the very ceremony , and shall be required to wear clean white garments.

APPEAL FOR FUNDS

In this benevolent ceremony the people of India, it is hoped, shall participate in lacs; and shall render every possible aid to the **local branch of the Bhartiya Bouddha Jana Samiti** to whom the Revered Baba has entrusted the task of managing this great ceremony. While rendering the financial aid the local benevolents shall insist on having receipts of the Samiti concerned. Outsiders will kindly remit money by money order-

Those who want to volunteer themselves to assist the management of the celebrations shall see the undersigned on or before the the 30th September, 1956.

(W. M. GODBOLE)

Secretary.

Bhartiya Bouddha Jana Samiti

(Nagpur&Branch), Kothari Mansion,

Sitabuldi, Nagpur." [4]

दिनांक 21 सितंबर, 1956

इसी प्रकार समिति की ओर से दिनांक 14 अक्तूबर, 1956 के दिन आयोजित सामुदायिक धर्मांतर के लिए सार्वजनिक परिपत्र निकाला गया था। उसे 'प्रबुद्ध भारत विशेष अंक, दिनांक 12 अक्तूबर, 1956' में प्रकाशित किया गया था। वह इस प्रकार था –

॥ नमो तस्स भगवतो अरहतो सम्मा सम्बुद्धस्स ॥

सामुदायिक धर्मांतरण

भारतीय बौद्धजन समिति के संस्थापक और अध्यक्ष परमपूज्य डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का बौद्ध धम्म-दीक्षा ग्रहण विधि ब्रह्म देश के पूज्य भिक्षु चंद्रमणि महास्थविर के हाथों नागपूर में रविवार दिनांक 14 अक्तूबर, 1956 को यानी दशहरे के दिन होगा, जिसके बारे में पहले ही सार्वजनिक रूप से परिपत्र प्रकाशित किया गया है।

भारत के इतिहास में ही नहीं वरन् अखिल बौद्ध जगत के इतिहास में इस महान मंगल समारोह की छाया अबाल-वृद्ध, महिला-पुरुष, अबौद्ध-बौद्ध सब पर है। ऐसे भव्य समारोह में जनता लाखों की संख्या में भाग लेगी इसमें कोई शक नहीं। परमपूज्य बाबा के इस महान समारोह की व्यवस्था का भार भारतीय बौद्ध जन समिति की नागपूर शाखा को सौंपा गया है। जनता की, खास कर नागपूर निवासी जनता की सहायता से इस बार

4. बोधिसत्व डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर की धम्म दीक्षा का अविस्मरणीय इतिहास, वामनराव गोडबोले, पृ. 266.

का वहन होने वाला है। पूरे जीवन में इस प्रकार का परम पवित्र दूसरा प्रसंग नहीं, इस बात को जानते हुए नागपूरवासी जनता तन-मन-धन से मदद करेगी ऐसी आशा है। नागपूर के हर मोहल्ले में भारतीय बौद्धजन नागपूर शाखा के चंदा-पुस्तिकाएं भेजी जा रही हैं। आर्थिक मदद देते हुए रसीद अवश्य प्राप्त करें। बाहर गांव के लोग मनीऑर्डर के जरिए समिति के सचिव को चंदा भेजें। इस महान समारोह के स्वागत समारोह के सदस्यत्व की फीस हैं 25 रुपये दिनांक 10 अक्तूबर, 1956 को या उससे पहले फीस अदा कर कोई भी व्यक्ति स्वागत समिति का सदस्य बन सकता है।

धम्म का यह पवित्र काम अखंड होता रहेगा। इसके लिए परमपूज्य बाबासाहेब ने भारतीय बौद्धजन समिति की स्थापना की है। सालाना 1 रुपये का चंदा देकर इसकी सदस्यता लेना आप सबका परमकर्तव्य है। समिति के सीताबर्डी के कार्यालय में सदस्यत्व पाया जा सकता है। मुंबई केंद्रीय समिति के सचिव आयु. भ. स. गायकवाड़ सदस्यता दर्ज करने का काम कर रहे हैं। सो, हर कोई 1 रुपये देकर अपना नाम दर्ज करा लें। जिन्होंने पिछले साल का चंदा दिया था वे भी इस साल का चंदा अदा कर रसीद लें।

इस समारोह के लिए किसी भी प्रकार का टिकट नहीं है। जो दीक्षा ले रहे हैं उनके लिए या दर्शकों के लिए किसी को न टिकट खरीदना होगा न फीस देनी होगी। विनती है कि इस समारोह के लिए सभी उपस्थित रहें।

दीक्षा लेनेवालों के लिए सूचना

जो दीक्षा लेना चाहते हों उनके लिए यह आवश्यक है कि वे शुभ्र वस्त्र परिधान कर आएं। पंडाल में महिलाओं के और पुरुषों के बैठने की अलग व्यवस्था की गई है। दीक्षा लेनेवालों के नाम 11 अक्तूबर 1956 से समिति के कार्यालय में तथा दीक्षा स्थल पर दर्ज कर लिए जाएंगे। नाम दर्ज करने वालों को दो टिकट मुफ्त दिए जाएंगे। उन्हें सम्भाल कर रखें। पंडाल के दीक्षार्थी विभाग में प्रवेश के लिए हर रोज वे टिकट काम आएंगे। जो लोग साफ सफेद वस्त्र धारण कर आएंगे केवल उन दीक्षार्थियों को ही दीक्षार्थी विभाग में प्रवेश करने दिया जाएगा।

स्वयंसेवकों के लिए सूचना

स्वयंसेवक सफेद हाफ शर्ट और सफेद हाफ पैंट पहन कर आएं। आज से ही वे अपने अधिकारियों से अपने काम के बारे में जानकारी हासिल कर लें और तत्परता से अपना कार्य करें। दीक्षा समारोह के समय उनकी जहां नियुक्ति की जाएगी वहीं से वे दीक्षा लें। दीक्षा लेनेवालों को क्या कहना है यह लाऊड स्पीकर से सुनाई देगा। उसमें बताए अनुसार खुद बोलें।

बाहर गांव से आने वाले स्वयंसेवकों के जत्थे के प्रमुख स्वयंसेवक दल के प्रमुख आयु. क. वि. उमरे, सच्चिदानंद माणके और आर. आर. पाटील से मिल कर अपनी

जिम्मेदारी सम्हालें।

...जनता के लिए सूचना

यह धार्मिक काम परमपवित्र है। समारोह के सभी कार्यक्रमों में शांति और सफाई परिपूर्ण रूप में रहेगी इसी प्रकार का बर्ताव सभी करेंगे ऐसी हरेक से उम्मीद की जाती है। अपने मोहल्ले से निकलते समय मोहल्ले के आने वाले सभी महिला-पुरुष एक जगह इकट्ठा हों। पैदल चलते हुए, बीच-बीच में सौम्य स्वर में 'बुद्धं सरणं गच्छामि', 'धम्मं शरणं गच्छामि' जपते हुए और बीच-बीच में 'भगवान बुद्ध की जय', 'डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर की जय,' 'बाबासाहेब करें पुकार, बौद्ध धर्म को करो स्वीकार' कहते हुए चलें। जो लोग साथ में झंडे ले आना चाहते हैं वे बौद्ध धर्म के झंडों के बारे में समिति के कार्यालय से पता करें और वैसे झंडे तैयार करें।

सुबह और शाम के बीच वाले समय में भी शांतिपूर्वक भोजन आदि कार्यक्रम निपटाएं। लाखों लोग उपस्थित होंगे इसलिए 'क्यू' लगाने की जरूरत पड़ेगी वहां कतार में खड़े रह कर ही आगे बढ़ें। आपकी शांति पर ही समारोह की सफलता निर्भर करती है। पंडाल के बाहर वाले 'पूछताछ दफ्तर' में पूछताछ करें।

कार्यक्रम

स्थान : माता कचेरी (श्रद्धानंद पेठ) के पास वाला विशाल मैदान

कार्यक्रम - दिनांक 12 अक्तूबर, 1956 से 16 अक्तूबर, 1956 तक कार्यक्रम चलेगा। कार्यक्रम के बारे में विस्तृत जानकारी अलग से परिपत्र निकाल कर दी जाएगी।

अध्यक्ष - आयु. रेवाराम कवाडे सचिव - आयु. वा. मो. गोडबोले

उपाध्यक्ष - आयु. सम मेश्राम सहसचिव - आयु. मा. डो. पंचभाई

उपाध्यक्ष - आयु. एच. डी. आवले सहसचिव - आयु. पंजाबराव शंभरकर

उपाध्यक्ष - आयु. मारोतराव साखरकर सहसचिव -आयु. क. वि. उमरे

उपाध्यक्ष - आयु. एच. एल. कोसारे सहसचिव - आयु. बा. ना. वैद्य

खजांची - आयु. द.ल. पाटील सदस्य - आयु. डब्ल्यू. एस. कामले

सदस्य - डॉ. रामटेके आदि 25

नागपूर में होनेवाले डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर की बौद्धदीक्षा विधि में लाखों की संख्या से उपस्थित रहें

१४ अक्तूबर के दिन अपने परिसर में समूह के रूप में बुद्ध वंदना मनाएं

दिनांक 14 अक्तूबर, 1956 के दिन - उस दिन दशहरा भी है - बौद्ध धम्म के पुनरुत्थान के एकमात्र भारतीय प्रणेता डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर नागपूर में बौद्ध धम्म

की दीक्षा लेने वाले हैं इसके बारे में अब तक सबको पता चल चुका है। डॉ. बाबासाहेब के, भारतीय अस्पृश्य समाज के ही नहीं पूरे भारत देश के जीवन का यह सर्वश्रेष्ठ और अभूतपूर्व समारोह है। इस समारोह में सभी अस्पृश्य और अन्य भारतीय भाई–बहन लाखों की संख्या में उपस्थित रहें यह मेरी उनसे विनती है।

नागपूर शहर में इस समारोह की बहुत बड़े पैमाने पर तैयारी शुरू हो चुकी है। सभी दलित कार्यकर्ता तन–मन–धन के साथ समारोह के प्रबंधन की कोशिशें कर रहे हैं। करीब पांच लाख से अधिक लोगों के इस समारेह में उपस्थित होने का अंदाजा है।

भारत के सभी राज्यों से आने वाले बहुजन बंधु–भगिनी इस कार्यक्रम में उपस्थित रहेंगे। गुरुत्वाकर्षण के नियमों के अनुसार पूरे भारत की बहुजन जनता नागपूर में इकठ्ठा होनेवाली है। रेल, मोटर, बैलगाड़ी आदी की कतारें नागपूर के रास्तों में लग गई हैं। नागपूर में इकट्ठा होनेवाली इस प्रचंड जनसमुदाय के कारण आपसे अनुरोध है कि आप कम से कम सामान अपने साथ लाएं। साथ ही, जहां रहना है वहां जरूरत पड़ सकती है इसलिए छोटा बिछौना भी साथ लेते हुए आएं।

जिन बहुजन बांधवों की नागपूर आने की इच्छा होते हुए भी किसी अड़चन के कारण आना संभव नहीं हो पा रहा हो उनका ध्यान हम भारतीय बौद्ध महासभा की ओर से जारी किए गए इस परिपत्र की ओर हम दिलाना चाहते हैं –

जाहीर आदेश

बहनों, और भाइयों,

हमारे पूजनीय नेता डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर नागपूर में दिनांक 14 –10–1956 के दिन दशहरे के सुमहूरत पर बौद्ध धम्म की दीक्षा ले रहे हैं। नागपुरवासियों ने इस कार्य में अपना सहयोग देते हुए तैयारियों में अब तक लाखों रुपया खर्च किया है। उनके इस महान कार्य के कारण मुंबई वासियों को नई प्रेरणा मिली है और महामुंबई में चार लाख सदस्यत्व दर्ज करने का कार्यक्रम वहां शुरू किया जा चुका है। इस कार्यक्रम को सफल बनाने के लिए हर बालिग व्यक्ति को एक रुपए की सदस्यता की फीस अदा करते हुए 'भारतीय बौद्ध महासभा' की सदस्यता लेना है। अन्य सभी लोगों के साथ अपनी कमरे में रहनेवाले सभी पुरुष–महिला बालिगों को सदस्य बनाने की जिम्मेदारी आपकी है। आपकी चॉल में स्थानीय शाखा खुल चुकी है। उसके जरिए ही आप इस जिम्मेदारी को पूरा करें। भारतीय बौद्ध महासभा का यह आदेश साकार करने के लिए आप सभी सहयोग करें।

का. वि. सवादकर

भ. स. गायकवाड़

वा. कृ. कबीर

सचिव, भारतीय बौद्ध महासभा

दिनांक १४ अक्तूबर के कार्यक्रम को कैसे सफल बनाएं

भारतीय बौद्ध महासभा की सभी शाखाओं के अधिकारियों, शाखा प्रमुख, तथा अन्य स्थानीय कार्यकर्ताओं को सार्वजनिक सूचना के तौर पर बताया जाता है कि, अपने पूजनीय नेता डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर नागपूर में रविवार दिनांक 14-10-56 के दिन बौद्ध-धम्म की दीक्षा ले रहे हैं। उनके बौद्ध-धम्म स्वीकारने के समय शुभेच्छा व्यक्त करने के लिए सभी शाखा अपनी ओर से अपने परिसर में सामूहिक बुद्धवंदना का कार्यक्रम करें। बुद्ध वंदना के कार्यक्रम अति-शांत वातावरण में ही संपन्न होने चाहिएं। वंदना में सभी महिलाएं और पुरुष हिस्सा लें। वंदना सुबह 9 बजे से 11 बजे के बीच की जाए। शाम 4 बजे सभी केंद्राधिकारी और शाखा प्रमुख तथा अन्य स्थानीय कार्यकर्ता सिद्धार्थ कॉलेज, आनंदवन में होनेवाली सभा में उपस्थित रहें।

आपके विनम्र

का. वि. सवादकर

मा. स. गायकवाड

वा. कृ. कबीर

सचिव, भा. बौ. महासभा

दिनांक 13-10-56 तक एकत्रित होने वाला चंदा दिनांक 15-10-56 को शाम 6 बजे (बुद्ध भूषण प्रेस) भा. बौ. महासभा की कचहरी में भरें। अन्य कार्यों के लिए उसे इस्तेमाल न करें।

दी गई सूचना के अनुसार भारत के विभिन्न जगहों से मिलने वाली दलित भाइयों की शुभेच्छाएं डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के बौद्ध दीक्षा के दिन व्यक्त करने के लिए, समुदाय की बुद्ध वंदना के कार्यक्रम करें। इस कार्यक्रम में सभी लोग उपस्थित रहें। सुबह 9 बजे से पहले ही सब लोग नहा-धो कर, सफेद स्त्र पहन कर तैयार हो जाएं। सुबह 9 बजे से 11 बजे तक सामूहिक वंदना करें। शाम को अपने परिसर में सब इकठ्ठा होकर सभा करें। इस कार्यक्रम का महत्व और बौद्ध-धम्म की आवश्यकता इस विषय पर व्याख्यान आयोजन करें। ये सभाएं बेहद शांत, एकता और बंधुभाव से भरे वातावरण में करें। यह सूचना भा. बौ. महासभा के सचिव द्वारा जारी किए गए परिपत्र के अनुसार विभिन्न जिलों के बहुजन बहनों और बांधवों के लिए हैं। मुझे यकीन है कि इन सूचनाओं का बेहतर तरीके से पालन किया जाएगा।

नागपूर में डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का बौद्ध दीक्षाविधि होने के बाद मुंबई, पुणे आदि अन्य जगहों पर अन्य दलित भगीनी बंधुओं के सामूहिक धर्मांतरण के समय डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर उपस्थित रह पाएंगे या नहीं इस बारे में जानकारी बाद में दी जाएगी।

जो भगीनी और बंधुगण नागपूर के डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के धर्मांतरण दीक्षा समारोह में उपस्थित नहीं रह पाए उनके लिए कार्यक्रम की तस्वीरों सहित विस्तष्टत जानकारी 'प्रबुद्ध भारत' के अगले अंक में दी जाएगी। 'प्रबुद्ध भारत' का अगला अंक खास ''बौद्ध-धम्म दीक्षा अंक'' के नाम से ही प्रकाशित होगा। पाठक अपनी प्रति सुरक्षित कर लें।''[5]

'नवयुग' मुंबई के संवाददाता ने बौद्ध धम्मदीक्षा के इस कार्यक्रम के लिए उपस्थित रहने वालों के मुंबई से नागपूर तक की यात्रा का वर्णन और नागपुर में संपन्न समारोह का वर्णन इस प्रकार किया है-

''जिनके बाप-दादाओं को सड़क पर थूकने की मनाही थी और उनका थूक रास्ते पर न गिरे इसलिए गले में मटका बांध कर घूमना पड़ता था, जिनके बाप-दादाओं को सड़क पर ब्राह्मण को आता देख कर उस पर अपना साया भी न गिरे इसलिए सड़क किनारे उगे झाड-झंखाडों में कूदना पड़ता था, जिन्हें आज तक गांवों के मरे जानवरों को ढोना पड़ता है, जिन्हें आज तक बेगार के लिए सताया जाता था, उन पांच लाख अस्पृश्य बंधुओं ने जीर्ण-शीर्ण हिंदू धर्म का त्याग कर दिनांक 14 अक्तूबर, 1956 को नागपूर में श्रद्धानंद पेठ में खास बनाए गए भव्य पंडाल में बौद्ध-धर्म की दीक्षा ली।

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर अपने लाखों अनुयायियों के साथ दिनांक 14 अक्तूबर, 1956 के दिन नागपूर में बौद्ध-धम्म को स्वीकार करने वाले हैं यह समाचार पूरे महाराष्ट्र में प्रसारित होते ही अस्पृश्य समाज में हड़बड़ी मच गई। वैसे देखा जाए तो डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर की घोषणा में विशेष कुछ नहीं था। 1935 में सभी अस्पृश्य बंधु धर्मांतरण करें इस आशय का प्रस्ताव डॉ. बाबासाहेब जिस संगठन के नेता थे उस संगठन ने जारी किया था। डॉक्टरसाहब भारत के केवल एक विद्वान व्यक्ति नहीं हैं, वरन् हजारों सालों से वर्णाश्रम धर्म द्वारा इंसानियत को धता बता कर दलित बनाई गई करोड़ों बहुजन जनता के जिम्मेदार नेता हैं। बहुजन समाज के लिए उनकी सहानुभूति केवल ओढ़ी हुई नहीं है। बहुजन समाज के लिए उनके मन में जो प्रेम और लगन है वह अपने को उनसे अलग मान कर सोचने वाले 'अस्पृश्य समाज का उद्धार होना चाहिए' विचार की तरह रजोगुण वाले अहंकार से पैदा नहीं हुआ। अस्पृश्य समाज के उद्धार का कार्य डॉक्टरसाहब ने पराएपन के भाव से कभी नहीं किया। वे खुद उसी समाज के हैं, इसलिए चातुर्वर्ण्य पर आधारित हिंदू धर्म में मानव की धीमी प्रगति के सभी नियमों के खिलाफ मानव पशु कैसे बनता जाता है यह

5. प्रबुद्ध भारत : 13 अक्तूबर, 1956

उन्होंने बहुत करीब से देखा था। दुनिया में और कहीं भी इंसान को अस्पृश्य मानने का रिवाज नहीं है। पत्थरों में भी भगवान का साक्षात्कार पाने वाले भारत में ही हजारों सालों से उसके दर्शन होते हैं। हिंदू धर्म के 'उच्च, उदात्त, विशाल' दर्शन का अनुभव डॉक्टरसाहब को अथवा उनके हजारों अस्पृश्य बंधुओं को शायद ही कभी मिला हो। वास्तविक जीवन में अस्पृश्यों को न्याय, दया, करुणा का अनुभव अपवादस्वरूप ही मिलता है। समता का अनुभव पाने के लिए तो साक्षात् शारिरिक मृत्यु को ही अपनाना पड़ता है। सनातनियों का दावा है कि इससे आत्मिक समता की प्राप्ति होती है। बेचारे अस्पृश्य बंधुजनों की देह को जिंदा रहते हुए कभी समानता का अनुभव नहीं ही होता वरन् मृत्यु के बाद भी उसके पार्थिव को स्पृश्यों की स्मशानभूमि में जलाना भी संभव नहीं होता।

ऐसे हिंदु धर्म से अलग होने का निर्णय डॉ. अम्बेडकर ने 1935 में लिया। अस्पृश्यों को उनके इस निर्णय पर आश्चर्य क्यों होगा? उन्हें अगर अचरज होता ही है तो इस बात पर कि बाबासाहब ने यह निर्णय इससे पूर्व ही क्यों नहीं लिया? और निर्णय लेने के बाद भी 1956 तक डॉक्टरसाहेब क्यों रुके? अपने करोड़ों अनुयायियों की गंभीर जिम्मेदारी और इन अनुयायियों के सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक सवालों के साथ जुड़ी हुई सारी उलझनों के कारण ही शायद डॉक्टरसाहब को यह निर्णय करने में इतनी देर लगी हो।

डॉ. अम्बेडकर के इस निर्णय को लेकर उनसे मतभेद हो सकते हैं। लेकिन इस निर्णय पर अमल करने को लेकर उन्हें जो देर हुई उसके विपरीत मतलब निकालना तो अधमता ही है। डॉक्टरसाहब के इस कार्य को 'राजनीतिक स्टंट' कहने वाले विद्वानों की भी कमी नहीं है। 14 अक्तूबर को नागपूर में इस तथाकथित स्टंट का असली रूप जिन्होंने देखा उनका इस कुत्सित समीक्षा को लेकर क्रोधित होना स्वाभाविक है और पांच लाख लोगों द्वारा बौद्ध धम्म की दीक्षा लिए जाने से ही उस समीक्षा का पोंगापन साबित हो चुका है। भगवान बुद्ध के बाद सनातन वर्णाश्रम धर्म पर डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने ही ऐसा करारा प्रहार किया इसके लिए प्रत्यक्ष इतिहास ही साक्ष्य है। इसीलिए, डॉ. बाबासाहेब के लाखों अनुयायियों के मुंह से आज एक ही नारा निकल रहा है –

'बाबासाहेब करें पुकार!

बौद्ध धम्म का करो स्वीकार!'

अस्पृश्य समाज के तथा सवर्ण हिंदू समाज के लिहाज से भी इस युगांतरकारी सामाजिक घटना को प्रत्यक्ष घटित होते हुए देखने का अवसर मुझे मिला इसके लिए मैं अपने आपको सौभाग्यशाली मानता हूं।

एक दिन पहले ही नागपूर पहुंचना बेहतर होगा सोच कर मैं 12 तारीख की रात को ही नागपूर एक्स्प्रेस से निकला। टिकट खरीदकर अंदर पहुंचा तो बोरीबंदर स्टेशन पर खड़िया से लिखा एक बोर्ड मैंने देखा – ''नागपूर के लिए स्पेशल ट्रेन रात सवा नौ बजे

चलेगी।'' स्टेशन में हजारों की भीड़ जुटी थी। सबके मुंह से -

''आकाश-पाताल एक करो
बुद्ध धर्म का स्वीकार करो''
''परमपूज्य डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर की जय''
''भगवान गौतम बुद्ध की जय''

नारे गूंज रहे थे। महिलाएं, बच्चे, बूढ़े, युवा सब हड़बड़ी में लग रहे थे। अस्पृश्य समाज के सुशिक्षित लोग - प्रोफेसर, डॉक्टर, वकील आपस में जोर-शोर से बौद्धिक चर्चाओं में लगे थे। अस्पृश्य समाज के सैंकड़ों रेल, गिरणी, मील महापालिका कामगार उत्साह के साथ नारे लगा रहे थे। उस समय देखा एक दृश्य मैं कभी नहीं भूल सकता। सठोत्तर की उम्र में पहुंची, हाथों पर कोहनी तक गोदना किए हुए और पल्लू को कमर पर साड़ी में खोंसे हुए एक मजबूत महिला एक युवति को हाथ पकड़ कर नागपूर एक्सप्रेस की ओर खींच कर ले जा रही थी। जाते हुए वह नारे भी लगा रही थी। हंस रही थी। पूछताछ करने पर पता चला कि यह महिला वड़ाला में रहती है। वह खुद, उसका बेटा और बहू यानी पूरा परिवार ही नागपूर जा रहा था - बौद्ध धर्म को स्वीकार करने के लिए। कई कार्यकर्ताओं ने, समता सैनिक दल के लोगों ने उससे विनती की कि आप स्पेशल ट्रेन से चलिए लेकिन बुढ़िया बिल्कुल नहीं मानी। आखिर बुढ़िया ट्रेन में चढ़ी और डिब्बे के दरवाजे पर खड़ी होकर नारे लगाने लगी।

स्टेशन पर आए अन्य लोगों की ओर भी मैं कौतुहल से देख ही रहा था। उनमें हो रही आपसी बातचीत ध्यान से सुन रहा था। एक पढ़ी-लिखी ब्राह्मण महिला नौकरी पर जा रहे अपने पति को विदा दे रही थी। नारों से वह पश्रेष्ठाान लगी। कॉलेज जाने वाले कुछ युवक आपस में आंखों से ही शायद कह रहे थे - आज यह क्या नया ही चल रहा है? उनमें से ही एक ने खबर दी कि ''डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर बौद्ध धर्म अपना रहे हैं।'' फर्स्ट क्लास के डिब्बे के नजदीक कोई सम्माननीय कॉंग्रेस के नेता खड़े थे। नारे सुनते हुए उनके चेहरे पर शिकन थीं। उनके कुछ चाहने वाले उनके इर्दगिर्द खड़े थे। नेता उनसे बोले - ''अरे बौद्ध बनिए या कुछ और बनिए, डॉ. अम्बेडकर ने चुनाव का समय ही इस काम के लिए चुना है, देखिए!''

रेल के एक डिब्बे में शे. का. फे. के महाराष्ट्र के प्रमुख नेता और कार्यकर्ता बैठे थे। बड़े जोश से उनकी बातचीत चल रही थी। मुंबई के विधायक बी. सी. कांबले और के. आर. पवार वकील, पुणे के आयु. शंकरराव खरात वकील, सिद्धार्थ कॉलेज के प्रोफेसर करडक, अहमदनगर के आयु. डी. टी. रूपवते वकील आदि लोगों को मैं सरसरी तौर पर पहचानता था। लेकिन उनकी बातचीत में रुकावट न आए इसलिए मैं अलग डिब्बे

में जाकर बैठा। गाड़ी में नींद कहां ले पाते। हर स्टेशन पर लोग आते। नारे लगातार लग रहे थे। कार्यकर्ता एक-दूसरे के गले मिल रहे थे। हंस रहे थे। उनके उत्साह की कोई सीमा नहीं थी। मनमाड़ स्टेशन में तो इतनी भीड़ थी कि प्लॅटफॉर्म पर पांव रखने लायक जगह भी नहीं थी। गाड़ी में भी जगह नहीं थी। इसके बाद निकलने वाली स्पेशल ट्रेन से आइए कह कर कार्यकर्ता लोगों को समझाने की कोशिश कर रहे थे। कुछ लोग उनकी सुन रहे थे कुछ बिना सुने ही डिब्बे में चढ़ रहे थे। नारे लगना जारी था।

तेरह तारीख को दोपहर सवा तीन बजे गाड़ी नागपूर स्टेशन पहुंची। स्टेशन परिसर में करीब 100 स्वयंसेवक थे। महाराष्ट्र शे. का. फे. के अध्यक्ष आयु. दादासाहब गायकवाड़ खुद स्टेशन पर हाजिर थे। स्वयंसेवक सबका खयाल रख रहे थे। स्टेशन से बाहर निकलने में मुझे करीब बीस मिनट का समय लगा!

स्टेशन के बाहर हाथ में थैली लिए, बदन पर एक मैला कुर्ता पहने और सिर पर सिलवट भरी टोपी पहने हजारो लोग थे। पूछताछ करने पर पता चला कि आसपास के गांवों से हजारों लोग आए हैं। वे नागपूर की भाषा में बातचीत कर रहे थे। मैंने स्वयंसेवक से पूछा, उनके रहने का इंतजाम कहां किया गया है? उसने बताया, ''गांव के सभी प्राथमिक विद्यालयों की इमारतों में ठहरने का उनके इंतजाम किया गया है। हालांकि वह इंतजाम काफी नहीं है ऐसा लग रहा है।''

आपकी उम्मीद के अनुसार समारोह में हिस्सा लेने कितने लोग आएंगे?

''यह कैसे बताएं? दो-चार लाख तो आएंगे ही।''

मुंबई से आए स्वयंसेवकों में बेहतरीन अनुशासन दिखा। ऐसे समारोहों का शायद उन्हें अच्छा अनुभव था। स्टेशन से बाहर निकलते ही उनका अनुशासित 'मार्च' शुरू हुआ। बीच बीच में वे नारे भी लगा रहे थे। मैंने टैक्सी की और होटल में आकर अपना सामान रखा। नहाया और संवाददाता का पैड लेकर निकल पड़ा।

नागपूर शहर की तो काया ही पलट गई थी। जहां देखो वहां लोग थे। झुंड के झुंड चले जा रहे थे। चातुर्वर्ण्य के बाहर के जनता-जनार्दन का यहां पर ब्रह्मी विशाल स्वरूप मैं कभी नहीं भूल सकता। अपने असाधारण नेता की पुकार पर ये लोग नागपुर में जुट थे। अपने नेता की आज्ञा को वंदनीय और शिरोधार्य मानते हुए उनके पीछे-पीछे बौद्ध-धम्म की दीक्षा लेने का निश्चय उनके चेहरे पर साफ दिखाई दे रहा था। वे गंभीर थे पर आनंदी थे। भारत के चारों कोनों से लोग नागपूर में इकठ्ठा हुए हैं। दूर से आने वाले लोग रेल, मोटरें, रिक्शा, बैलगाडियां आदि वाहनों का इस्तेमाल कर रहे थे। वाहनों के चालकों की आमदनी बढ़ गई थी। लेकिन मेरे अचरज ने तब सीमा लांघी जब मैंने देखा कि पुणे से पढंरपुर जाने वाले तीर्थयात्रियों की तरह लोग पुणे से पैदल नागपूर के

लिए निकल पड़े थे। 75-100 कि.मी. की दूरी से भी ये लोग नागपूर पहुंच रहे थे, अपने पास जो भी था उसे बेच कर उन्होंने अपना जेब खर्च जोड़ा था। कई लोगों को गांव के लोगों ने चंदा जोड़ कर भेजा था। उनके उत्साह की कोई सीमा नहीं थी। उनके 'जय भीम' और अन्य नारों में कोई रुकावट नहीं थी। किसी समय बौद्ध पंडित नागार्जुन के कारण पावन बना नागपूर शहर आज तमाम अस्पृश्य समाज का धर्मक्षेत्र बना था।

नागपुर शहर में वाहनों की कोई सुविधा नहीं। मुंबई की तरह मीटर लगी टैक्सियां नहीं हैं और पुणे की तरह ऑटोरिक्शे नहीं हैं। घंटे के हिसाब से टैक्सी लेनी पड़ती है और घंटेभर के तीन रुपए देने पड़ते हैं। टैक्सी ड्राइवर झगड़ने पर उतारू। अगर साइकिल रिक्शा लें तो पुणे-मुंबई के लोगों के बीच और गांव का वातावरण बुद्धमय होने के नाते वह शोभा नहीं देता। बुद्ध की जयकार के नारे आसपास लग रहे हों और एक आदमी हांफते हुए दूसरे को ढोकर ले जा रहा है यह कुल वातावरण के साथ मेल खाने वाला दृश्य नहीं। मैंने आखिर एक टैक्सी तय की और सभी दीक्षार्थियों के निवासों में जाने का कार्यक्रम तय किया। प्राथमिक विद्यालयों में इनका प्रबंध किया गया था। हर जगह स्वयंसेवक थे और वे पानी वगैरेह काम फुर्ती से कर रहे थे। कई लोग होटलों में जाकर कुछ खा लेते थे। तो कई जगहों पर तीन पत्थरों का चूल्हा जला कर महिलाएं रोटियां सेंकती हुई नजर आईं। कई जगहों पर दस-दस पांच-पांच लोगों के समूह बैठे-बैठे आपस में चर्चा करते हुए नजर आए। लेनिन ने कहीं कहा है कि जो बात सीखने के लिए वैसे सालोंसाल लग सकते हैं वही बात लोग क्रांति के दौरान कुछ दिनों में ही सीख जाते हैं। इन दो दिनों में नागपुर में आये लाखों लोगों ने दर्शन, धर्म, सामाजिक स्थितियां आदि के बारे में जितना ज्ञान पाया उतना उन्हें अब तक के जीवन में कभी नहीं मिला होगा, कहें तो अत्युक्ति नहीं होगी।

अखंड चर्चा

स्थानों सभी में निरंतर चर्चा चल रही थी। कामगार-किसान वर्ग के ही ज्यादातर लोग थे और कितनी तरह से चर्चाएं चल रही थीं। कहीं बिल्कुल गंभीरता से, अब अपने गांव के लोग और 'बामण' क्या कहेंगे इस बारे में कहीं चर्चा चल रही थी। कहीं किसी बूढ़े आदमी के पंढरपूर की वारी के लिए जाने को लेकर कुछ युवक उनसे हंसी-मजाक कर रहे थे। कहीं युवा अपने साथ आए बूढ़े लोगों को इस बात की तसल्ली दे रहे थे कि अब अपने गांव के सभी भूत भाग जाएंगे। एक जगह तो एक युवक अपनी मां से हंस कर कह रहा था, 'अब देखता हूं देवि तुम्हारे अंदर आती कैसे है!' उसकी युवा बहन हंसते हुए उसका साथ दे रही थी। मां भी हंस कर आश्वासन दे रही थी कि अब इसके बाद मेरे अंदर देवी नहीं आएगी। 15-20 लोगों के समूह में, मैं स्वयंसेवकों की मदद से घुस गया और उनकी बातचीत में शामिल हुआ। एक कट्टर अम्बेडकरवादी युवक कहानी बता रहा था यह कहानी जैसे वह बता रहा था उसी तरह यहां प्रस्तुत करने का मोह मैं संवरण नहीं कर पा रहा हूं।

''हमारे गांव के महारवाड़े के एक किनारे पर म्हसोबा है और दूसरे सिरे पर मरीआई है। हमने एक बार तय किया कि रात उठ कर जाएंगे और मरीआई को म्हसोबा के पास डाल कर आएंगे। हालांकि पहले हमारे गांव के ये लोग (कुछ बूढ़े पुरुष-महिलाओं की ओर इशारा कर) हमारे खिलाफ थे लेकिन हमने तो मजाक करना तय किया था। इसलिए हमने अफवाह फैलाई कि हमने मरीआई को उठा कर म्हसोबा के पास चल कर जाते हुए देखा है। उसका वर्णन किया। उसने किस तरह मलवट भरा था (पूरे माथे पर सिंदूर लगाना) वह भी बताया। महारवाड़े में उसका असर भी हुआ। उस रात मरीआई के दो-चार पत्थर उठा कर हम कुछ दूर चले थे तो हमें किसी की आहट सुनाई दी। मरीआई का पत्थर हमने वहीं छोड़ा और भाग खड़े हुए। दूसरे दिन महारवाड़े में हंगामा हुआ। पंचाक्षरी आया और मंत्र बुदबुदाने लगा। इतने में हममें से एक के दिमाग में युक्ति आई और उसने कहा, अरे, मरीआई केवल रात में चलती है। उसे निकलने में देर हुई। थोड़ा चली होगी और सुबह हुई होगी। सुबह होते ही वह जहां थी वहीं पत्थर बन कर अहिल्या की तरह पड़ी रही।'' कहानी खत्म हुई और सब खिलखिलाकर हंसने लगे। वृद्ध महिला और पुरुष भी हंसने वालों में शामिल थे। आखिर एक बूढ़े ने कहा, ''अब गांव जाएंगे तो उस मरीआई को और म्हसोबा - दोनों को नदी में फेंक देंगे। अब बाबा की आज्ञा ही है। बाबा बताता है तो अपने को मरीआई की भी क्या जरूरत? और म्हसोबा की भी क्या जरूरत?''

''रिनाइजंस'' को प्रत्यक्ष देखने का मौका मुझे मिल रहा था। इंसान बस सत्कर्मरत रहे, ईश्वर की उसे कोई जरूरत नहीं। ईश्वर कोई है नहीं, सब झूठ है। इस निर्णय को लाखों लोगों ने, सभी तरह के भ्रम पालने वाले भारतीयों ने स्वीकारा। यह क्या कोई साधारण बात है? जादू की छड़ी घुमाने से होने वाले असर की तरह डॉ. अम्बेडकर द्व ारा इस बात को सिद्ध किया गया है यह मुझे प्रत्यक्ष दिखाई दे रहा था।

इसके बाद मैंने पंडाल के बारे में खुद जाकर जानकारी की। नागपूर के दक्षिण अंबाजरी रोड पर अंध विद्यालय से परे पड़ने वाले फैले मैदान में बौद्धकालीन शिल्प के अनुसार भव्य स्तूप खड़ा किया गया था। लगभग 4 से 5 लाख लोग बैठ सकेंगे इतना भव्य पंडाल था।

इस पंडाल के सामने सड़क पर बायीं तरफ कतार में दुकानें सजी हुई थीं। बाकी समय उजाड़ पड़े रहने वाले इस मैदान में आज जैसे कोई मेला लगा हुआ था। पंडाल खड़ा करने का काम पिछले आठ-दस दिनों से चल रहा था। सैंकड़ों अस्पृश्य बंधु उस जगह श्रमदान कर रहे थे। उनके श्रमदान से करीब 50-75 हजार रुपयों की बचत हुई ती। अब दीक्षा समारोह के लिए केवल 25-30 हजार रुपयों की रोकड़ का खर्च बैठने की बात समारोह के कार्यवाही से पता चली। वैसे दीक्षा समारोह पर करीब एक लाख रुपए खर्च होने का अंदाजा है। पता चला है कि, स्तूप जैसे मंच से डॉ. बाबासाहेब का दीक्षा समारोह संपन्न होगा वहां एक स्थायी स्मारक भी बनाया जाने वाला है।

नया धर्मक्षेत्र

नागपूर बहुजन समाज का नया धर्मक्षेत्र बनने वाला है अब यह साफ पता चलता है। डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के सामाजिक और राजनीतिक कार्य से नागपूर शुरू से जुड़ा रहा है। 1930 में नागपूर के पास कामठी में ही डॉक्टरसाहब ने संयुक्त निर्वाचन-क्षेत्र का विरोध कर विभक्त निर्वाचन-क्षेत्र की मांग की थी। पहला शे. का. फे. का अधिवेशन नागपूर में ही हुआ और डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर नागपूर में ही बौद्ध-धम्म की दीक्षा ले रहे हैं। नागपूर के पास ही रामटेक के पहाड़ पर बौद्ध महापंडित नागार्जुन की गुफा है। पुराने जमाने में यह क्षेत्र बौद्धों का तीर्थक्षेत्र था, अब एक बार फिर इस नगर को वही महत्व प्राप्त होना है। पंडाल के आसपास ही मुझे इस बात का पता चला कि डॉक्टरसाहब और उनकी सुविज्ञ पत्नी डॉ. माईसाहब अम्बेडकर आ चुके हैं और बर्डी के श्याम होटल में रुके हैं। डॉ. साहब को दीक्षा देने के लिए ''काशिया'' (प्राचीन इतिहास में कुशीनारा नाम से पहचाने जाने वाले) गांव से सुप्रसिद्ध ब्रह्मी बौद्ध भिक्षु चंद्रमणि महास्थविर आज नागपुर आए हुए हैं। उनके साथ और भी पांच-छह बौद्ध भिक्षु आए हुए हैं। 3 बजे के आसपास नारों की आवाज सुन कर मेरी नींद खुली।

खिड़की के पास जाकर मैं देखने लगा। रास्ते से इतने लोग जा रहे थे, वे चींटियों की तरह दिखाई दे रहे थे, वातावरण शांत दिखने लगा। गंभीर स्वरों में घोषणाएं की जा रही थीं। पंडाल में मौके की जगह पाने के लिए लोग जल्दी-जल्दी जा रहे थे। सुबह छह बजे मैं भी उस भीड़ में शामिल हुआ और पंडाल की ओर निकला। ज्यादातर लोगों ने साफ सफेद कपड़े पहने हुए थे। सभी को उस तरह की सूचनाएं दी गई थीं।

मैंने पंडाल में प्रवेश किया। मुंबई समता सैनिक दल ने बेहतरीन प्रबंध किए थे। कहीं भी किसी तरह की हड़बड़ी नहीं थी। श्रद्धा से भरे अंतःकरण से लोग पंडाल में प्रवेश कर रहे थे और स्वयंसेवकों द्वारा बताई जगह पर जाकर बैठ रहे थे। सुबह सात बजे ही आधा पंडाल लोगों से भरा हुआ दिखाई दिया। करीब दो-ढाई लाख लोग होंगे। संवाददाताओं में से अभी कोई नहीं आए थे। उनके लिए मंच के पास ही बैठने का प्रबंध किया हुआ था। लाऊडस्पीकर का बढ़िया प्रबंध था। ऐसे कार्यक्रमों में होती हैं वैसी, 'बच्चा या बच्ची खो गई है' इस आशय की घोषणाएं लाऊडस्पीकर से की जा रही थीं। लोगों का आना लगातार जारी था।

इतने में लाऊडस्पीकर से एक महत्वपूर्ण घोषणा हुई। दीक्षार्थियों को प्रवेशपत्र दिए गए थे लेकिन संख्या इतनी बढ़ी कि प्रवेशपत्र खत्म हो गए। तब लाऊडस्पीकर से सूचना दी जा रही थी कि जो यह बताए कि दीक्षा लेनी है उसे पंडाल में प्रवेश दें और दीक्षार्थियों के साथ बैठाएं। लोगों की संख्या बढ़ती ही जा रही थी। जनता के उत्साह के आगे किए गए सारे प्रबंध कमतर साबित हो रहे थे। लेकिन उसी उत्साह से सभी बातें ढंग से पूरी भी हो रही थीं।

मानवी प्रेमभावना

स्तूप के आकार के विशाल मंच की ओर मैंने देखा। भगवान बुद्ध की धीरगंभीर प्रतिमा पूरी मानवजाति को अपना आशिर्वाद दे रही थी। डॉ. बाबासाहेब की प्रतिमा लाखों लोगों को उत्साह और आश्वासन दे रही थी। बौद्ध धर्म का झंडा शांति से हवा में फहरा रहा था। मंच पर भी भगवान बुद्ध की एक प्रतिमा रखी हुई थी। उसके सामने अगरबत्तियां जल रही थीं। चंदन की सुगंध वातावरण को थोड़ा गंभीर बनाए हुए थी। इंसान-इंसान के और करीब आ रहा था। सबके मन में एक ही मानवता की भावना ऊंचान पर थी। दोस्त आपस में मिल रहे थे। एक-दूसरे का मुस्कान के साथ स्वागत कर रहे थे। क्रोध, द्वेष, जलन ये सब पंडाल से गायब हो गए थे। लाऊडस्पीकर से घोषणा की जा रही थी - 'भगवान बुद्ध की जय।'

सुबह के नौ बज गए। लोगों के समूह में अभी बढ़ोतरी ही हो रही थी। मैदान लगभग पूरा भरा हुआ था। अखबारों के संवाददाता अंदाज लगाने लगे। सबकी यही राय थी कि करीब पांच लाख लोग वहां इकठ्ठा हुए थे। फिर सीटियां गूंजीं। एक ही हड़बड़ी मची। लाऊडस्पीकर से लोगों को शांति बनाए रखने की घोषणा लगातार दिए जा रहे थे। तीन-चार मोटरें मंच की ओर आ रही थीं। लाऊडस्पीकर से दी जा रही घोषणा मानने की मानसिक स्थिति में लोग नहीं थे। उस वक्त एक ही नारा सबके मुंह पर था - 'परमपूज्य डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर की जय!' ठीक सवा नौ बजे थे और मोटर से उतरे बाबासाहेब दो लोगों के कंधों पर हाथ डाले धीरे-धीरे मंच की ओर बढ़ रहे थे। ''पुरःस्सर गदासवे झगड़ता तनु भागली'' (संकटों से जूझते हुए शरीर थका) का वह मूर्तिमंत उदाहरण थे। लाखों लोगों के मन में एक ही विचार गूंज रहा था। डॉक्टरसाहब ने अपना शरीर तिल-तिल घिस कर अस्पृश्य समाज के लिए अच्छे हालात का प्रबंध किया था। डॉक्टरसाहब के दुश्मनों को भी यह बात माननी पड़ेगी। अब तक डॉक्टरसाहब और उनकी पत्नी मंच पर विराजमान हो चुके थे। नारों का पहला उफान गुजर चुका था। वातावरण फिर शांत हो चला था। और मुख्य समारोह की शुरुआत होने जा रही थी। डॉ. अम्बेडकर ने शुभ्र श्रेष्ठामी धोती पहनी थी और बदन पर शुभ्र सफेद शॉल थी। उनकी पत्नी ने भी शुभ्र वस्त्र धारण किए थे। शेड्यूल्ड कास्टस् फेडरेशन के ज्यादातर नेता मुख्यतः मंच पर दिखाई दे रहे थे।''[६]

(धर्मांतर की ऐतिहासिक घटना के बारे में ऊहापोह करने वाला आयु. बी. सी. कांबले का लेख 'प्रबुद्ध भारत' में दिनांक 27-10-1956 को प्रकाशित हुआ था। उसे भी यहां देना अप्रस्तुत नहीं होगा - संपादक)

---

6. नवयुग : मुंबई रविवार दिनांक 21 अक्तूबर, 1956

उन्होंने लिखा है –

दिनांक २३ सितंबर, १९५६ का ऐतिहासिक निवेदन

बौद्ध दीक्षा विधि समारोह के बारे में जानकारी की शुरुआत दिनांक 23-9-1956 से देनी पड़ेगी।

इस तारीख को डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने दिल्ली के 26, अलिपुर रोड के अपने घर से एक अनुरोध प्रेषित किया था।[७] वह निवेदन बिल्कुल छोटा था। करीब 4-5 पंक्तियों का मजमून उसमें था। भारत में बौद्ध-धम्म का पुनरुत्थान करने के लिए प्रत्यक्ष बौद्ध-धम्म के स्वीकार का जो इतिहास लिखा जाएगा उसमें इतिहासकारों को इस अनुरोध को विशेष महत्व देना होगा। इतना ही नहीं, वरन् भारतीय भूमि में बौद्ध-धम्म के पुनश्च बीजारोपण के, उसके कारण भारत भर में होने वाले प्रसार के मूलांकुर इस निवेदन में मिलेंगे।

यह निवेदन अखबारों में प्रकाशित हुआ था। दैनिक खबरें देने वाले अखबारों ने इस छोटे से अनुरोधों को अपनी सहूलियत के अनुसार एक कॉलम में जैसे भेजा था वैसे ही छापा। रोजमर्रा की कई खबरों जैसी ही यह एक और खबर हो जैसे उन्होंने इस खबर को छापा। सामान्य खबर की तरह ही इस खबर को लेकर अखबारों ने पूरे भारत को जानकारी दी कि डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर बौद्ध-धम्म का स्वीकार करने जा रहे हैं।

धर्म पुरुषों की प्रथम वाणी

हालांकि, कहना पड़ेगा कि डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के इस छोटे-से अनुरोध में कितना विचित्र सामर्थ्य है, भारतीय समाज रचना के बारे में सोचें तो वह कितना असामान्य है इसका अहसास भारतीय अखबारों को हुआ ही नहीं। इस अनुरोध की खबर रोजमर्रा की खबरों जैसी नहीं थी। रोजमर्रा की खबरें और इस अनुरोध में काफी अंतर था। धर्मसंस्थापकों द्वारा अथवा किसी धर्म का पुनरुत्थान करने वाले महापुरुषों द्वारा धर्म की स्थापना के लिए अथवा धर्म पर छायी हीनता को दूर करने के लिए अपनी पहली वाणी का उच्चारण किया उस प्रकार की प्रथम वाणी की खबर देने वाला निवेदन था वह।

बौद्ध दीक्षा का निर्णय लेने से पूर्व

इस अनुरोध पर हस्ताक्षर करने से पहले तथा बौद्ध दीक्षा की विधि, उसे संपन्न करने का स्थान और तारीख तय करने से पूर्व डॉ. अम्बेडकर कितने घंटों तक सोचते रहे थे इसका कोई अंदाजा नहीं लगा सकता। इस निर्णय को लेने से पूर्व उनकी नजर के सामने भारत की दलित जनता पर, अन्य भारतीयों पर तथा दुनिया के अन्य लोगों के ऊपर इस घटना के क्या

---

7. यह अनुरोध पृष्ठ क्रम सं. 482 पर है

संभावित परिणाम हो सकते हैं इसके चित्र उनके मानस पटल पर जरूर उभरे होंगे। विभिन्न धर्म के इतिहास के पन्ने उनकी आंखों के सामने खुलते चले गए होंगे। ईसाई, इस्लाम, बौद्ध आदि प्रमुख धर्मों का दुनिया में कैसे प्रसार हुआ, उनमें से कुछ का अस्त क्यों हुआ आदि बातों पर उन्होंने बार-बार सोचा होगा। भारतीय बहुजनों को खास कर अस्पृश्य माने गए समाज के सामने बौद्ध धर्म की शरण जाने के अलावा भी कोई और असरदार मुक्ति का मार्ग है क्या इसकी उन्होंने बार-बार खोज की होगी। आखिर उनकी सद्विवेक बुद्धि केंद्रित होकर परम निश्चय के साथ इकलौते सन्मार्ग के तौर पर बौद्ध धर्म की दीक्षा लेने वाले निवेदन पर उन्होंने हस्ताक्षर किए होंगे। मनोविश्लेषण के तौर पर सोचें तो 23 सितंबर, 1956 का दिन डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के जीवन का अद्वितीय, हर्षपूर्ण और अपने निर्णय की कसौटी पर खरे उतरने का अहसास कराने वाला दिन साबित हुआ होगा।

बौद्ध जगत पर असर

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का बौद्ध धर्म की दीक्षा लेने से संबंधित असर का भारतीय बहुजन वर्ग पर और दुनिया के बौद्ध धर्मावलंबियों पर हुआ यह निश्चित तौर पर कहा जा सकता है। ब्रह्मदेश, श्रीलंका, जापान, नेपाल आदि देशों में इस निवेदन का बहुत ही हर्ष के साथ स्वागत किया गया। बौद्ध दीक्षा विधि से संबंधित अखिल बौद्ध दुनिया से जो संदेश प्राप्त हुए हैं उससे यह बात बिल्कुल स्पष्ट होती है। इन संदेशों के अलावा बौद्ध लोगों ने इस दीक्षा विधि के बारे में जो बंधुभाव व्यक्त किया वह उनकी कृतियों में भी दिखाई दिया। ब्रह्मदेश के पूज्य भिक्षु चंद्रमणि महास्थविर की उम्र 80 वर्ष की है। लेकिन अपने स्वास्थ की परवाह किए बगैर डॉ. बाबासाहेब को दीक्षा देने के लिए खुद आने की बात उन्होंने मानी और वे आए भी। उनके हाथों ही डॉ. बाबासाहेब और माईसाहब अम्बेडकर का बौद्ध दीक्षा विधि संपन्न हुआ। उनके अलावा अन्य बौद्ध भिख्खु भी समारोह में उपस्थित थे -

1. थेरो पन्नातिस, सांची विहार (भोपाल)
2. वेनरेबल भिख्खु एच सिद्धतिस, (सिलोन)
3. वेनरेबल भिख्खु एम सौधरत्तना, सारनाथ (बनारस)
4. भिख्खु जी प्रज्ञानंद, बुद्ध विहार, (लखनऊ)
5. नेर श्रमनेर, धम्मोदय विहार (प. बंगाल)
6. रेवरंड परमसंधी

पांच करोड़ बौद्ध

अलग-अलग देशों से तथा देश के विभिन्न हिस्सों से इतने भिक्षु आए यह कोई सामान्य घटना नहीं है। बौद्ध दुनिया के लिए डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर की बौद्ध दीक्षा के बारे में

उत्सुकता महसूस होना दो कारणों से स्वाभाविक माना जा सकता है। पहला कारण यह कि डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का दीक्षाविधि यानी उनके साथ खड़े पांच करोड़ अस्पृश्य बंधुओं का दीक्षा विधि है इस गणित को मानकर चलने में डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के अनुयायियों की निश के कारण कोई हर्ज नहीं यह बात वे जानते हैं। दूसरी बात यह कि, भारत में मजबूत जड़ें फैली लेकिन अब बिल्कुल सूख गई बौद्ध-धम्म की बेल भारत के प्रत्येक गांव में डॉ. बाबासाहेब के जो अनुयायी हैं उनकी दीक्षाविधि से ही फिर से पल्लवित हो सकती है यह भी वे जान चुके थे। इसलिए इस नजरिए से दुनिया भर के बौद्ध धर्मानुयायियों को डॉ. बाबासाहेब की बौद्ध-धम्म में दीक्षा के बारे में आकर्षण और उत्सुकता महसूस होना स्वाभाविक बात थी।

मूर्तिमान प्रज्ञा की प्राप्ति

हालांकि, कहने में हर्ज नहीं कि इसके अलावा उन्हें एक और बात का आकर्षण था। बौद्ध धम्म में प्रज्ञा का स्थान सर्वश्रेष्ठ है। बौद्ध धम्म की शिक्षा में शांति, न्याय और प्रज्ञा इस तरह का क्रम है। बुद्ध यानि प्रज्ञावान। और प्रज्ञा का अर्थ है ज्ञानवान और जीवन से मुक्त! डॉ. बाबासाहेब की अलौकिक बुद्धमत्ता की ओर नजर डालने पर लगता है कि उन्हें मूर्तिमान प्रज्ञा कहना अत्युक्ति नहीं होगी। इस प्रकार के प्रज्ञावान व्यक्ति दुर्लभ होते हैं। लाखों या करोड़ों रुपए खर्च करने के बाद भी ऐसे व्यक्ति से उनकी राय या उनका समर्थन प्राप्त करना मुश्किल होता है। ज्ञान अपूर्व मूल्य की चीज है। विज्ञान का ज्ञान गुप्त रूप से स्पष्ट करने की बात अब सब जानते हैं। उसकी रक्षा के लिए कितने पहरे बैठाए जाते हैं। विदेशी राजदूतावासों में सलाह-मशविरे होते हैं। और ऐसे ज्ञानी लोगों को गुप्त तरीके से भगा ले जाने के लिए अकूत धन लुटाया जाता है। डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का ज्ञान अतुलनीय है। उनका मन के बारे में जो ज्ञान है वह मन की सूक्ष्म रचना के बारे में और मनुष्यत्व को पूर्णत्व की ओर ले जाने के लिए मन को सुसंस्कृत बनाने वाला ज्ञान है। दुनिया के किसी भी धर्मप्रसारक को मात दे सके ऐसा उनका ज्ञान है। इसलिए ऐसे डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने बौद्ध धम्म को अपनाया है और अपना ज्ञान बौद्ध धर्म को समर्पित करने वाले बौद्ध धर्म के वे लगभग अकेले समर्थक बने हैं। आज के वह बुद्ध ही हैं। डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर की बौद्ध दीक्षा के कारण बौद्ध दुनिया के लिए अपूर्व ज्ञान समर्थक ऐन जरूरत के समय मिला है। इस नजरिए से भी सभी बौद्ध जनों के लिए डॉ. बाबासाहेब के ऊपर दिए गए अनुरोध के कारण बहुत हर्ष होना सहज है।

भारत की दलित जनता की प्रतिक्रिया अपरिमित आनंद की है। खासकर नागपूर और मुंबई तथा इन दो शहरों के बीच पड़ने वाले प्रदेश में उत्साह का मानो सागर ही लहराने लगा है। 'प्रबुद्ध भारत' दलितों का मानों अधिकृत गजट ही है। उसमें दि 29 सितंबर, 1956 और 13 अक्तूबर, 1956 के अंक में लगातार बौद्ध दीक्षा विधि की खबर दलित

जनता की हर झोंपडी तक पहुंचाई गई। नागपूर के सिद्धार्थ, धर्मदीप, धर्मदूत, बोधीसत्व जैसे मशहूर बनते जा रहे साप्ताहिकों ने मध्यप्रदेश विभाग की खबरों में इस खबर को छापकर जानकारी प्रसारित की। नागपूर शाखा के भारतीय बौद्धजन महासभा की समिति द्वारा छपे हुए पत्रक बांट कर सभी दलित बंधू भगिनियों को बौद्ध-दीक्षा-विधि कार्यक्रम के बारे में लोगों को विस्तृत जानकारी दी।

कार्यक्रम का ब्यौरा

समिति के पहले प्रकाशित हुए पत्रक में स्वागत समिति के अध्यक्ष आयु. रेवाराम कवाड़े और आयु. वा. मो. गोडबोले द्वारा निम्नांकित कार्यक्रम की घोषणा की गई -

सामुदायिक धर्मांतरण कार्यक्रम की पत्रिका

शनिवार, दिनांक १३-१०-१९५६ के दिन शाम 5-8 परित्राण शाम को 8-10 महाबोधि सोसाइटी के महा सचिव आयु. डी. वलीसिन्हा का भाषण और भगवान बुद्ध का चरित्र और भारत के प्रसिद्ध बौद्ध स्थानों के बारे में मॅजिक लँटर्न शो।

रविवार, दिनांक १४-१०-१९५६ (अशोका विजयादशमी) सुबह 8 से 11 बजे तक परमपूज्य डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर और आयुष्यमती माईसाहब अम्बेडकर और अन्य दीक्षार्थियों की पूज्य भिक्षु चंद्रमणि महास्थविर के हाथों बौद्ध धर्म दीक्षा। सुबह 11 से 11.25 बजे तक कोलकाता की महाबोधि सोसाइटी की ओर से परमपूज्य डॉ. बाबासाहेब को भगवान बुद्ध की प्रतिमा भेंट की जाएगी। शाम 6 से 8 औरंगाबाद के बोधिमंडल, मिलिंद महाविद्यालय की ओर से 'युगयात्रा' इस मराठी नाटक की प्रस्तुति।

सोमवार दिनांक १५.१०.१९५६ सुबह 8 से 11 बजे तक परमपूज्य डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का सार्वजनिक भाषण शाम 8 से 10 बजे तक मॅजिक लँटर्न शो।

इसके अलावा स्वागत समिति द्वारा अंग्रेजी भाषा में एक पत्रिका प्रकाशित की थी। इसके अलावा स्वागत समिति द्वारा प्रकाशित की गई तीसरी पत्रिका 13-10-1956 के 'प्रबुद्ध भारत' के अंक में विशेष परिशिष्ट के रूप में प्रकाशित की गई है। इतने साधनों के साथ बौद्ध दीक्षा विधि समारोह की समयोचित जानकारी भारत के अस्पृश्य वर्ग को और दूसरों को पहुंचाई गई है।

इस जानकारी के प्रकाशित होने के साथ-साथ जिन्हें बौद्ध दीक्षा विधि समारोह के लिए जाना था उन्होंने अपनी तरह से प्रबंध किए। रेलवे में काम करने वाले अस्पृश्य बंधुओं ने तो अपने रेल रियायत वाले पास बनवा लिए। भारतीय बौद्ध महासभा के सचिव आयु. सवादकर, आयु. कबीर और आयु. गायकवाड़ ने पत्रक छपवाकर जिन्हें नागपूर आना था उनके आने-जाने के रियायती टिकट अगर वे नाम दर्ज करें तो दिलाने का प्रबंध किए जाने की बात स्पष्ट की। मुंबई प्रदेश दलित फेडरेशन की ओर से भी इसी प्रकार का प्रबंध किए

जाने की बात कही। इन संयुक्त कोशिशों के कारण मुंबई से एक खास रेलगाड़ी दिनांक 13 अक्तूबर, 1956.[8] के दिन बौद्ध दीक्षा विधि से पूर्व की रात छोड़ी गई। यह विशेष गाड़ी खचाखच भरी थी। 13 अक्तूबर, 1956 को रात नागपूर एक्सप्रेस द्वारा कर्नाटक से आए कर्नाटक शे. का. फे. के अध्यक्ष आयु. डी. ए. कट्टी और मुंबई से सिद्धार्थ कॉलेज के रजिस्ट्रार आयु. तलवटकर भी चले। उन्हें उसी गाड़ी में संयोग से नासिक के आयु. ए. जी. पवार वकील मिले। 'नवयुग' की ओर से खास भेजे गए प्रतिनिधि भी इस ट्रेन से जा रहे थे। विशेष ट्रेन से मुंबई प्रदेश शे. का. फेडरेशन के महासचिव आयु. दहीविलकर बुवा, आयु. आर. जी. खरात, इसके अलावा मुंबई की वार्ड कमेटियों के अनगिनत कार्यकर्ता आए थे। सबका जिक्र इस जगह करना केवल असंभव है। इतनी प्रचंड भीड़ वहां थी।

यात्रा में गाड़ी से ये दीक्षार्थी लोग 'बाबासाहेब करे पुकार बौद्ध धर्म का करो स्वीकार' 'भगवान बुद्ध की जय', 'डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर की जय' ये और ऐसे नारे बार-बार दे रहे थे। जगह जगह के स्टेशन इन नारों से गूंज उठे थे। मुंबई से नागपूर तक रात-दिन जागृत जनता ही चली है ऐसा वह अभूतपूर्व दृश्य था। इन लोगों में माता-बहनों की संख्या करीब एक तिहाई थी। नागपूर रेलवे स्टेशन पर दिनांक 13 और 14 अक्तूबर, 1956 के दिन आने वाली सभी रेलगाड़ियां बौद्ध धर्म में दीक्षा लेने की इच्छा रखने वालों से ही भर-भर कर आ रही थी।

नागपूर शहर के दक्षिण की ओर लगभग शहर के बाहर अंबाझरी नाम का रास्ता है। इस रास्ते से लगे करीब 14 एकड़ क्षेत्र का विस्तृत मैदान बौद्ध दीक्षा विधि के लिए तैयार किया गया था। इस मैदान के चारों ओर टाटों से अस्थायी चारदीवारी बनाई गई थी। मैदान के चारों ओर करीब 2000 से 3000 विद्युत्दीपों की (बल्बस्) व्यवस्था की गई थी। महिलाओं के लिए आधे हिस्से में छोटे पंडाल में अलग व्यवस्था की गई थी। पुरुषों के लिए मैदान का बचा हुआ पूरा हिस्सा था ही। नागपूर का अंबाझरी रोड बाकी समय तो खाली ही पड़ा रहता है लेकिन इस समारोह के कारण इस रोड पर अलग-अलग तरह की दुकानें सजी थीं। लाल हाफ शर्टस् पहने नागपूर के समता सैनिक दल द्वारा मैदान से पहले ही चार फर्लांग की दूरी तक के रास्ते का इंतजाम रखा गया था। मुंबई का समता सैनिक दल भी मैदान में उपस्थित समुदाय का खयाल रख रहे थे। इतनी भीड़ थी लेकिन मध्यप्रदेश के केवल 10-11 पुलिस वाले दिखाई दे रहे थे। शांति और व्यवस्था का सारा इंतजाम स्वयंसेवकों द्वारा ही किया गया था।

नागपूर का धमाल

नागपूर शहर दिनांक 14 की रात तीन बजे ही जाग गया कहें तो अत्युक्ति नहीं होगी। करीब 4 लाख लोग बाहर से आए हुए थे। उनकी रहने की व्यवस्था नागपूर शहर के जितने स्कूलों, हाइस्कूलों की खाली इमारतों में (छुट्टियों के कारण ये इमारतें खाली पड़ी थी)

8. यह तारीख 12 अक्तूबर, 1956 होनी चाहिए - संपादक

की गई थीं। इन संस्थाचालकों को जितना धन्यवाद दें कम है। लेकिन इतने लोगों के लिए स्कूल-हाइस्कूल कहां तक काफी होते? सुबह 3 बजे से ही शोभायात्रा और नारों की शुरुआत हुई और नागपूर शहर जाग गया। सुबह से अंबाझरी रोड पर बड़ी भारी भीड़ जुटी थी। नागपूर के लोग ही कह रहे थे कि इस प्रकार का समुदाय और उत्साह आज तक नागपुर के किसी समारोह में देखने में नहीं आया। व्यापारी शहर नागपूर पर इस भीड का असर हुआ। रिक्शे खान-पान की चीजे आदि के दाम दुगुने हुए। इस समारोह की व्यवस्था और जिम्मेदारी भारतीय बौद्ध महासभा, नागपूर शाखा ने ली थी। इस जिम्मेदारी को मुख्य रूप से आयु. कवाडे, आयु. गोडबोले. आयु. पंचभाई आदि ने निभाया। उन्हें धन्यवाद देना उचित रहेगा।

हृदयस्पर्शी प्रसंग

इस बौद्ध दीक्षा विधि का मन को छू लेने वाला परमोच्च प्रसंग यहां दर्ज करना होगा। डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने जब कहा कि मनुष्यमात्र को नीच मानने वाले हिंदू धर्म का मैं त्याग करता हूं ऐसा कहा तब उनका गला भर्रा आया था और उनकी आंखों में आंसू चमक रहे थे। डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को उस समय कौन-सा दुख साल रहा था? उनके जैसे घोर निश्चयी महापुरुष की आंखों में आंसू क्यों आए थे? हो सकता है उन्हें लगा हो कि मैंने ज्ञान प्राप्त करने की पराकाष्ठा की, अपने चारित्र्य को श्रेष्ठ रखा, निजी लाभ की परवाह नहीं की, कई ग्रंथ लिख कर भारत के विचारों का भंडार बढ़ाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया, सच्चाई के साथ जीवन बिताया यानि ज्ञान, सच्चापन और शील की कसौटी पर मैं किसी से कम नहीं हूं पिछले तीस सालों से हिंदू धर्म की समाजरचना में ही रहा। लेकिन केवल अपने दलित बंधुओं को इज्जत और स्वाभिमान की राह बताता हूं इसलिए हिंदु धर्म ने कई तरह की कारस्तानियां मेरी राहें बंद करने का काम निरंतर करते रहे। उन्होंने इंसानियत तक को भुला दिया। सो, मैंने या मेरे बुंधुओं ने ऐसा क्या काम किया है कि वे हमें उनके बीच रहने और इंसान की तरह जीने नहीं देते? जो हो, इन घोर स्थितियों से जो राह अपने दलित बांधवों को दिखाई वह पूरी तरह स्वाभिमान भरी और सर्वोत्कृष्ट है इसमें कोई शक नहीं।[९]

भारत सरकार फिल्म बनाएगी

अस्पृश्य समाज के इतिहास की यह एक महत्वपूर्ण घटना होने के कारण भारत सरकार की ओर से इस पूरे समारोह की डॉक्यूमेंट्री फिल्म बनाई जाएगी और साथ ही डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का भाषण भी रिकार्ड किया जाएगा।

दुनिया की नजरें टिकी समारोह पर

नागपूर में रहने वाला तथा नागपूर में बाहर से हजारों की संख्या में आया अस्पृश्य समाज इस भव्य धम्मचक्र प्रवर्तन समारोह की भूख-प्यास भूल कर राह देख रहा है

9. प्रबुद्ध भारत, डॉ. अम्बेडकर बौद्ध दीक्षा विशेषांक, 27 अक्तूबर, 1956

इसमें कोई दो राय नहीं। पूरे विश्व की नजरें आज इस समारोह पर टिकी हैं और सभी देशों के संवाददाता यहां आए हुए हैं।[१०]

बौद्ध दीक्षा समारोह

बौद्ध दीक्षा विधि समारोह के लिए करीब 14 एकड़ क्षेत्र का विशाल मैदान तय किया गया था। इस मैदान के चारों ओर टाटों से अस्थायी चारदीवारी बनाई गई थी। कुल तीन पंडाल थे। बीच वाला पंडाल करीब 40×20' का था। उस पर बौद्धकालीन याद दिलाने वाला स्तूप बनाया गया था। इस केंद्रीय पंडाल में ही डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का बौद्ध-दीक्षा-विधि संपन्न हुआ। इसके दोनों तरफ जो पंडाल थे उनमें से एक महिलाओं के लिए और दूसरा प्रमुख नागरिकों के लिए था। केंद्रीय पंडाल के सामने अखबारों के संवाददाताओं के लिए बैठने का विशेष प्रबंध किया गया था। स्वदेशी और विदेशी कुल मिला कर कुल 30 संवाददाता और फोटोग्राफर्स वहां मौजूद थे। पंडाल पर और विस्तीर्ण फैले मैदान में जगह-जगह पर बौद्धधम्म के झंडे लहरा रहे थे जो नीले, लाल, हरे पट्टे वाले थे।

५ लाख से अधिक की उपस्थिति

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर महास्थविर भिक्षु चंद्रमणि के साथ सुबह साढ़े नौ बजे समारोह स्थान पर आए। तब तक पूरा पंडाल लोगों से भर गया था। करीब 5 से 6 लाख का जन समुदाय उपस्थित था और उनमें से 3 से 4 लाख लोग बाहर से ही थे।

वातावरण 'भगवान बुद्ध की जय' 'बाबासाहेब करें पुकार, बौद्ध धर्म का करो स्वीकार' जैसे नारों से गूंज रहा था।

मंच पर सामने की तरफ एक मेज पर भगवान बुद्ध की कांसे की मूर्ति रखी गई थी जिसके दोनों ओर एक एक सिंह था। सामने धूप जल रही थी।

बाबासाहेब के पिताजी की निर्वाण तिथि का स्मरण

समारोह की शुरुआत कु. इंदुताई वराले द्वारा गाए स्वागत पद से हुई। उसके बाद डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के पिता दिवंगत रामजी मालोजी अम्बेडकर की निर्वाण को तारीख भी उसी दिन यानी 14 अक्तूबर, 1956 को[११] इसलिए अभिवादन करने के लिए वहां उपस्थित पांच लाख से अधिक लोगों ने कुछ मिनटों के लिए मौन धारण किया।

---

10. दैनिक तरुण भारत, नागपूर : 15 अक्तूबर, 1956
11. चां. भ खैरमोडे लिखित डॉ. भी. रा. अम्बेडकर चरित्र खंड 1 पृ. 63 तथा धनंजय कीर लिखित Dr. Ambedkar : Life and Mission ग्रंथ में पृ. क्र. 24 पर बताया गया है कि डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के पिता रामजी सुबेदार दिनांक 2 फरवरी, 1913 को गुजर गए थे। इसके अनुसार उनकी बरसी 14 अक्तूबर, के दिन नहीं पड़ती है। दीक्षा विधि से पूर्व उनकी स्मृति को अभिवादन उनकी बरसी होने के कारण नहीं वरन् उनके कार्य के कारण डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के जीवन की महत्वपूर्ण, क्रांतिकारी घटना के अवसर पर उनकी स्मृति को अभिवादन किया गया होगा - **संपादक**

बाद में डॉ. बाबासाहेब और माईसाहब ने पूज्य चंद्रमणि के सामने खड़े होकर भगवान बुद्ध की मूर्ति के सामने हाथ जोड़ कर –

नमो तस्स भगवतो अरहतो सम्मासबुद्धस अर्थ –जीवन्मुक्त, संपूर्ण और जागृत भगवान बुद्ध को मेरा नमन।

पाली भाषा में यह उन्होंने लगातार तीन बार कहा। उसके बाद पूज्यभन्ते चंद्रमणि ने अम्बेडकर दंपति से आगे उद्धर्षत **सरणंत्तयं (** तीन अनुसरणे**), पंचसीलानी** (पांच शील) कहने के लिए कहा और उनसे कहलवा लिया –

सरणंत्तयं (तीन अनुसरणे)

बुद्धं सरणं गच्छामि।।

धम्मं सरणं गच्छामि।।

संघं सरणं गच्छामि।।

दुतियम्पि, बुद्धं सरणं गच्छामि।।

दुतियम्पि, धम्मं सरणं गच्छामि।।

दुतियम्पि, संघं सरणं गच्छामि।।

ततियम्पि, बुद्धं सरणं गच्छामि।।

ततियम्पि, धम्मं सरणं गच्छामि।।

ततियम्पि, संघं सरणं गच्छामि।।

(**अर्थ** –मैं बुद्ध का अनुसरण करता हूं

मैं उसके धम्म का अनुसरण करता हूं

मैं उसके संघ का अनुसरण करता हूं)

दुबारा, मैं बुद्ध का अनुसरण करता हूं

दुबारा, मैं उसके धम्म का अनुसरण करता हूं

दुबारा, मैं उसके संघ का अनुसरण करता हूं

तिबारा, मैं बुद्ध का अनुसरण करता हूं

तिबारा, मैं उसके धम्म का अनुसरण करता हूं

तिबारा, मैं उसके संघ का अनुसरण करता हूं।

पंचसीलानि

पाणातिपाता वेरमणि –

सिक्खापदं समादियामि।।1।।

अदिन्नादाना वेरमणि–

सिक्खापदं समादियामि।।2।।

कामेसु मिच्छाचारा वेरमणि

सिक्खापदं समादियामि।।3।।

मुसावादा वेरमणी –

सिक्खापदं समादियामि।।4।।

सुरा–मेरय–मज्ज–पमादट्ठाना वेरमणि –

सिक्खापदं समादियामि।।5।।

अर्थ–

1. मैं जीवहिंसा से अलिप्त रहने की प्रतिज्ञा लेता हूं।
2. मैं चोरी करने से अलिप्त रहने की प्रतिज्ञा करता हूं।
3. मैं कामवासना के अनाचार से अलिप्त रहने की प्रतिज्ञा करता हूं।
4. मैं झूठ बोलने से अलिप्त रहने की प्रतिज्ञा करता हूं।
5. मैं मदिरा तथा उत्तेजना में डालने वाले सभी पदार्थों के सेवन से अलिप्त रहने की प्रतिज्ञा करता हूं।

बुद्ध के चरणों में

उसके बाद दंपति ने भगवान बुद्ध की प्रतिमा पर कमलफूलों का हार अर्पण किया। डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने अपना मस्तक भगवान बुद्ध के चरणों में तीन बार रख कर वंदना की।

उसके बाद डॉक्टरसाहब ने कहा,

''बहनों और भाइयों, हम दोनों ने आपके सामने भिक्खु चंद्रमणि के हाथों बौद्ध धम्म का स्वीकार किया है। भन्ते चंद्रमणि भारत के सबसे वरिष्ठ भिक्षु हैं। हमारा बौद्ध धम्म का अनुग्रह पाली भाषा में हुआ। उस अनुग्रह का मराठी में अनुवाद कर एक बार फिर अनुग्रह ले रहे हैं।''[१२]

---

12. प्रबुद्ध भारत – अम्बेडकर बौद्ध दीक्षा विशेषांक, 27 अक्तूबर, 1956, पृष्ठ क्रमांक 34

इसके बाद डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर की भारी आवाज लाऊडस्पीकर से सुनाई दी –

बहनों, और भाइयों,

अनुग्रह आपने मराठी में भी जाना। अब मैं आप सब लोगों को बौद्ध धर्म की दीक्षा देने वाला हूं। जो लोग हिंदू धर्म का त्याग कर बौद्ध धर्म को स्वीकार करना चाहते हैं वे कृपा कर खड़े हो जाएं और मेरे बाद मेरे कहे शब्दों का पुनरुच्चार करें –

पूरा समाज, यानी करीब पांच लाख लोग खड़े रहे। हम संवाददाता ही केवल अपवाद थे। डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने इन सभी लोगों को गंभीरतापूर्वक बौद्ध धर्म की दीक्षा दी।

उसके बाद डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने दीक्षा विधि के एक हिस्से के तहत 22 प्रतिज्ञाएं दीक्षार्थियों से कहलवा लीं।[१३] वे इस प्रकार हैं –

बौद्ध जनों की प्रतिज्ञाएं-

1. ब्रह्मा, विष्णु, महेश को मैं भगवान नहीं मानूंगा या उनकी उपासना नहीं करूंगा।
2. मैं राम या कृष्ण को भगवान नहीं मानूंगा या उनकी उपासना नहीं करूंगा।
3. गौरी, गणपति आदि हिंदू धर्म के किसी भी भगवान को मैं भगवान नहीं मानूंगा या उनकी उपासना नहीं करूंगा।
4. भगवान ने अवतार लिया इस पर मेरा विश्वास नहीं है।
5. मैं मानता हूं कि बुद्ध विष्णू का अवतार है यह झूठा और भ्रामक प्रचार है।
6. मैं श्राद्धपक्ष नहीं करूंगा और पिंडदान भी नहीं दूंगा।
7. बौद्ध धर्म से मेल न खाने वाले किसी आचारधर्म का मैं पालन नहीं करूंगा।
8. ब्राह्मणों के हाथों कोई क्रिया-कर्म नहीं करवाऊंगा।
9. सभी मनुष्यमात्र समान हैं ऐसा मैं मानता हूं।
10. समता स्थापित करने की मैं कोशिश करूंगा।
11. भगवान बुद्ध के बताए अष्टांग मार्ग का मैं अनुसरण करूंगा।
12. बुद्ध की बताई दस पारमिताओं का मैं पालन करूंगा।
13. मैं सभी प्राणिमात्र पर दया करूंगा।
14. मैं चोरी नहीं करूंगा।
15. मैं झूठ नहीं बोलूंगा।
16. मैं व्यभिचार नहीं करूंगा।

---

13. नवयुग, 21 अक्तूबर, 1956

17. मैं शराब नहीं पिऊंगा।

18. प्रज्ञा, शील और करुणा इन तीन तत्वों के सहारे मैं अपना जीवन यापन करूंगा।

19. मनुष्यमात्र के उत्कर्ष के लिए हानिकारक और मनुष्यमात्र को असमान और किसी को नीच मानने वाले अपने पूर्व हिंदू धर्म का मैं त्याग करता हूं और बुद्ध धम्म को स्वीकार करता हूं।

20. बौद्ध धम्म सद्धम्म है इसका मुझे पूरा-पूरा यकीन है।

21. मैं मानता हूं कि मेरा नए सिरे से जन्म हो रहा है।

22. आज के बाद मैं बुद्ध की दी हुई शिक्षा के अनुसार ही चलूंगा।

यह समारोह करीब 50 मिनटों तक चलता रहा। डॉ. बाबासाहेब और आयुष्यमती माईसाहब का दीक्षा विधि 9.40 से 9.45 बजे के बीच पांच मिनटों में संपन्न हुआ। बौद्ध धम्म की दीक्षा लेने के बाद बाबासाहाब को पुष्पमालाएं पहना कर उनका स्वागत किया गया। 10 बजे सामुदायिक दीक्षाविधि संपन्न हुई। सरणों की तीन बार घोषणा के बाद डॉ. बाबासाहेब की जय का निनाद वातावरण में गूंजा।

इस समय अखिल महाबोधि समिति के उपसचिव आयु. वली सिन्हा ने डॉ. बाबासाहेब को एक चिकनी मिट्टी की बुद्ध प्रतिमा भेंटस्वरूप दी।

बौद्ध धम्म की दीक्षा जिन्होंने ली उनमें इन प्रमुख व्यक्तियों का समावेश था - बॅ. राजाभाऊ खोब्रागडे (श. का. फ. के. उपसचिव), महाराष्ट्र शाखा के अध्यक्ष आयु. भा. कृ. गायकवाड़, आयु. आर. डी. भंडारे (अध्यक्ष, मुंबई प्रदेश फेडरेशन), शांताबाई दाणी, आयु. सी. एन. मोहिते, आयु. गो. ति. परमार (गुजरात शाखा के अध्यक्ष), आयु. वा. कां. परमार, आयु. डी. जी. जाधव, आयुष्यमति सरोजिनी जाधव, पुणे के आयु. वि. रा. रणपिसे, आयु. ससालेकर, आयु. हरिदास आवले, आयु. सदानंद फुलझेले, आयु. अहोटे, आयु. वी. एस. पगारे, आयु. उपसाम, आयु. बी. एस. मोरे, आयु. बी. एच. वराले, आयु. धोंडिराम पगारे, आयु. यशवंतराव अम्बेडकर (बाबासाहेब के पुत्र), आयु. मुकुंदराव आंबेडकर, आयु. बी. सी. कांबले आदि।

इसी समय न्या. भवानीशंकर नियोगी, आयु. कुलकर्णी (बुद्ध समिति के सचिव), औरंगाबाद के मिलिंद कॉलेज के प्राचार्य आयु. एम. वी. चिटणीस, आयु. बी. एस. कबीर आदि सवर्ण हिंदुओं ने भी बौद्ध धम्म की दीक्षा ली।

सुबह 11 बजे तक यह समारोह चल रहा था। बाद में रात औरंगाबाद के मिलिंद महाविद्यालय के छात्रों ने 'युगयात्रा' नाटक प्रस्तुत किया। आयुष्यमती माईसाहब अम्बेडकर इस कार्यक्रम में उपस्थित थीं।

बड़ों के शुभ संदेश

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर की बौद्ध दीक्षा विधि के उपलक्ष्य में ब्रह्मदेश के प्रधानमंत्री यू. बा. स्वे. और पूर्व प्रधानमंत्री यू. नू, पूर्व पाकिस्तान बुद्धिस्ट कॉन्फरंस के पूज्य प्रियदर्शी सिहाबिर, आंध्रा बुद्धिस्ट एसोसिएशन के अध्यक्ष पी. बी. सेनागुप्ता, कोलकाता बौद्ध धर्मकुंवर सभा के डॉ. अरविंद बारुआ एम. ए. पी.एच. डी, बार. एट. लॉ, कोलंबो के. एच. डब्ल्यू. अमरासुरिया, रंगून के महाथेरो पन्नलोक, कोझिकोडे के महाबोधि बुद्धिस्ट मिशन के भिक्षु धर्मानंद आदि कई थेरो, बौद्ध भिक्षु और महापुरुषों के संदेश आए।

दीक्षा विधि पूरी होने के बाद डॉ. बाबासाहेब का अभिनंदन और उनके लिए अभीष्टचिंतन करने वाले संदेश पढ़ कर सुनाए गए। उनमें से चुनिंदा संदेश संक्षेप में आगे दिए जा रहे हैं-

ब्रह्मदेश के प्रधानमंत्री यू. बा. स्वे. और पूर्व प्रधानमंत्री यू. नू. अपने संदेश में कहते हैं-

''प्रधानमंत्री यू. बा. स्वे और पूर्व प्रधानमंत्री यू. नू. दोनों को दिनांक 14 अक्तूबर, 1956 को नागपूर में होने वाले डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर की दीक्षा विधि समारोह का आमंत्रण प्राप्त होने की खुशी है। दोनों पर काम की बहुत जिम्मेदारियां होने के कारण दिनांक 14 अक्तूबर को वे उपस्थित नहीं रह पाएंगे इसका उन्हें खेद है। लेकिन, यू. बा. स्वे. और यू. नू. दोनों की ओर से इस कार्यक्रम के लिए तथा डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के लिए अतिशुभ की कामना करते हैं और डॉ. अम्बेडकर को धन्यवाद देते हैं। डॉ. अम्बेडकर का बौद्ध धम्म दीक्षा विधि समारोह अपूर्व है। भारत और ब्रह्मदेश में भी उनके बारे में लोगों के मन में आदर की भावना है।''

कोलंबो के एच. डब्ल्यू. अमारसूरिया अपने संदेश में कहते हैं-

''दिनांक 14 अक्तूबर, 1956 के दिन डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर और उनके अनुयायी, उनके प्रशंसक बौद्ध धम्म दीक्षा लेने वाले हैं यह पढ़ कर महती आनंद हुआ। 14 अक्तूबर, का दिन दुनिया के सभी बौद्ध लोगों को स्वर्णाक्षरों में लिखा जाएगा इसमें कोई शक नहीं। पहले से तय कार्यक्रमों के कारण 14 तारीख को मैं नागपूर आ नहीं पाऊंगा इसका मुझे खेद है। डॉ. बाबासाहब अम्बेडकर का मैं हार्दिक अभिनंदन करता हूं। आम तौर पर अखिल बौद्ध जनों के बीच बौद्ध शासन को ऊंचा दर्जा प्राप्त करवा लेने के लिए और खास कर वैज्ञानिक बुनियाद पर भारत में बौद्ध शासन फिर से स्थापित करने के लिए डॉ. अम्बेडकर दीर्घायु हों।''

डॉ. अरविंद बारुआ (एम. ए. पीएच डी. बार एट-लॉ) कोलकाता से भेजे संदेश में कहते हैं-

''डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर तथा उनके अनुयायी बौद्ध दीक्षा लेकर बौद्ध जगत में

समाविष्ट हो रहे हैं। मैं उनका मन से स्वागत करता हूं। डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने बौद्ध दीक्षा लेने के बारे में लिया निर्णय युगप्रवर्तक है। उनके बारे में मेरे मन में परम आदर है। बौद्ध धम्म को फिर उच्च पद तक ले जाने में तथा आज की धर्मग्लानी को दूर करने के लिए डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर जैसे दैदीप्यमान व्यक्तित्व की दुनिया के बौद्ध जनों के लिए आज बेहद जरूरत है। उनके बहुआयामी व्यक्तित्व से तथा उनके ज्ञान से उन्हें दुनिया के बुद्ध शासन का आदर प्राप्त करेंगे इसका मुझे यकीन है। मेरी बिनती है कि वे इस महान कार्य के लिए आगे आएं।

14 अक्तूबर, 1956 के दिन नागपूर में हो रहे इस शुभ प्रसंग पर मैं अंत:करण से डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर की महान सीख से निष्ठा और उनके अनुयायियों के साथ विशुद्ध बंधुभाव व्यक्त करता हूं।''

रंगून के महाथोरो, यू पन्नलोक अपने संदेश में कहते हैं-

''14 अक्तूबर, 1956 के दिन डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर और उनके अनुयायी बौद्ध दीक्षा लेकर भगवान बुद्ध की सीख के तीन आश्रयों की छत्रछाया में आएंगे यह सुन कर हर्ष हुआ। मैं उन सभी के लिए शुद्ध और मुक्त जीवन की कामना करता हूं। मैं प्रार्थना करता हूं कि, भगवान बुद्ध के अष्टांमार्ग का सब अनुसरण करें और मानवमात्र का दु:ख समाप्त कर सच्ची शांति का प्रतीक निर्वाण उन्हें प्राप्त हो।''[१४]

सोमवार, दिनांक 15 अक्तूबर, 1956 के दिन सुबह 10-12 बजे के बीच डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का बौद्ध धर्म को स्वीकार करने के बारे में स्फूर्तिदायक और अत्यंत भावनाकुल होकर कहे गए, जानकारी से भरा भाषण हुआ। लाखों लोग उनका भाषण धूप में खड़े रह कर या जहां भी जगह मिले वहां बैठ कर एकाग्र मन से सुन रहे थे।[१५]

उन्होंने में कहा-

''सभी बौद्धजनों और उपस्थित मेहमानों,

कल और आज सुबह बौद्ध दीक्षा लेने और देने का जो समारोह यहां हुआ उसके बारे में लोगों को थोड़ा मुश्किल लग रहा होगा। उनके हिसाब से कल का कार्यक्रम आज और आज का कार्यक्रम कल होना चाहिए था। यह जानना जरूरी है कि हमने इस कार्य की जिम्मेदारी क्यों ली? उसकी क्या जरूरत थी? इससे हासिल क्या होगा? ये बातें जानने के बाद ही हमारे काम की नींव मजबूत होगी। यह सब जानने का काम असल में कल ही होना चाहिए था लेकिन कुछ बातें इतनी अनिश्चित होती हैं कि वे अपने समय से होती रहती हैं। यह विधि भी इसी प्रकार संपन्न हुई यह सच है हालांकि, कार्यक्रमों

---

14. प्रबुद्ध भारत - डॉ. आंबेडकर बौद्ध दीक्षा विशेषांक, 27 अक्तूबर, 1956 पृष्ठ क्र. 31-29
15. डॉ. भी. रा. अम्बेडकर चरित्र, लेखक चां. भ. खैरमोडे, खंड 12, पृ. 57

के दिनों की अदला-बदली होने से बहुत नुकसान नहीं हुआ है।

कई लोग मुझसे पूछते हैं कि आपने इस काम के लिए नागपूर शहर को ही क्यों चुना? किसी और जगह यह कार्यक्रम क्यों नहीं किया? कुछ लोग कहते हैं कि आर एस एस की - राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की- बड़ी पलटन नागपूर में होने के कारण उनके सीने पर सवार होकर इस काम को पूरा करने के इरादे से हमने इस सभा का आयोजन नागपूर में किया। इस कथन में कोई सच्चाई नहीं। इस कारण हमने यह कार्य नागपूर में नहीं रखा है। हमारा काम इतना बड़ा है कि जीवन का हर एक मिनट लगाने पर भी समय कम पड़े। अपनी नाक खुजा कर औरों को अपशगुन करने के लिए मेरे पास समय नहीं है।

इस जगह को चुनने के पीछे कोई और कारण है। जिन्होंने बौद्ध धम्म के बारे में पढ़ा हो वे जानते होंगे कि भारत में बौद्ध धम्म के प्रसार का काम नाग लोगों ने किया। नाग लोग आर्यों के भयंकर दुश्मन थे। आर्य और अनार्यों में भयंकर लडाइयां हुआ करती थीं और आर्यों द्वारा नागों को जला कर मार डाले जाने का जिक्र पुराणों में मिलता है। अगस्ती मुनी सिर्फ एक नाग मनुष्य को बचा पाए थे। हम सब उसी के वंशज हैं। जिन लोगों को इतनी मुसीबतें सहनी पड़ीं उन्हें फिर ऊपर आने के लिए किसी महापुरुष की जरूरत थी। उन्हें गौतम बुद्ध में वह महापुरुष मिला। भगवान बुद्ध का उपदेश नाग लोगों ने पूरे भारत में फैलाया। इसलिए हम नाग लोग हैं। नाग लोगों का प्रमुख स्थान नागपूर और उसके आसपास था ऐसा पता चलता है। इसीलिए इस शहर को 'नाग-पुर' यानी नागों का गांव कहा जाता है। यहां से करीब 27 मीलों की दूरी पर नागार्जुन का टीला है। पास से बहने वाली नाग नदी है। यानी, नदी का नाम यहां रहने वाले लोगों के नाम से पड़ा है। नागों की बस्ती से बहने वाली नदी नाग नदी बनी। इस स्थान को चुनने के पीछे असली वजह यही है। नागपूर को चुना इसीलिए। इसमें किसी को खिजाने का कोई इरादा नहीं था। ऐसी कोई भावना भी नहीं थी। आर. एस. एस. का कारण मेरे मन में दूर-दूर तक नहीं था। कोई ऐसा मतलब इससे बिल्कुल ना निकालें।

अन्य कारणों से हो सकता है विरोध महसूस हो। यह जगह विरोध के कारण चुनी नहीं गई है यह मैंने पहले ही साफ तौर पर बता दिया है। मैंने जो यह कार्य शुरू किया है उसके कारण कई लोगों ने और अखबारों ने मेरी कड़ी आलोचना की है। कुछ लोगों और अखबारों द्वारा की गई आलोचना कड़ी है। उनके मतानुसार मैं अपने गरीब-बिचारे अस्पृश्य लोगों को गलत दिशा में ले जा रहा हूं। आज जो अस्पृश्य हैं वे बाद में भी अस्पृश्य ही रहेंगे और अस्पृश्यों को मिले अधिकारों से बस वे वंचित रह जाएंगे ऐसा बता कर उन्हें बरगलाने की कोशिश की जा रही है। हममें जो अज्ञानी हैं उनसे पगडंडी से जाने के लिए कहा जाता है। हममें से कुछ युवा और बुजुर्गों पर उसका असर होता भी होगा। उसके कारण लोगों के मन में शक पैदा हुआ हो तो उस संशय को हटाना अपना कर्तव्य है और ऐसे शक को हटाना अपने संगठन की नींव को और मजबूत करना है।

कुछ समय पूर्व हम लोगों ने मांस न खाने को लेकर एक आंदोलन किया था। उसके कारण स्पृश्य लोगों पर बड़ा संकट आया था। वे जिंदा भैंस का दूध पिएंगे और भैंस मरेगी तब उसे हम कंधों पर ढोकर ले जाएं, यह कैसा न्याय है? क्या यह विचित्र नहीं है? हम उनसे पूछते हैं कि तुम्हारी बुढ़ी माँ मरती है तब हम उसे क्यों नहीं ढोकर ले जा सकते? वे अगर मृत भैंस हमें देते हैं तो उन्हें मृत बुढ़िया भी हमें ही देनी चाहिए। कुछ समय तक कोई आदमी 'केसरी' में विज्ञापन देकर हमारे लोगों को बरगलाने की कोशिश किया करता था। उसके द्वारा दिए गए विज्ञापनों में कहा होता था कि, फलां गांव में हर साल 50 मवेशी मरते हैं। उनके चमड़े की, सींगों की, हड्डियों की, मांस की, पूंछों की, खुरों की मिल कर कुल 500 रुपयों की कीमत मिलेगी। मृत मांस मिलेगा। मृत मांस छोड़ने से वे लोग इतनी बड़ी आय से भी वंचित हो जाएंगे। इस आशय का प्रसार उस दौरान केसरी में से हुआ करता था। वैसे तो उनके प्रसार का जवाब देने की जरूरत नहीं थी लेकिन हमारे लोगों को लगता कि इन बातों का हमारा साहब जवाब नहीं देता। इसलिए साहब आखिर करता क्या है?

एक बार मैं संगमनेर में सभा के लिए गया था। सभा के बाद शाम को खाने का इंतजाम किया गया था। उस वक्त केसरी के उस संवाददाता ने मुझे एक चिठ्ठी भेजी और पूछा, "अजी आप अपने लोगों को मृत मवेशी न ढोने की सलाह देते हैं। उनके यहां किस कदर गरीबी है क्या आप जानते हैं ? उनकी पत्नियों के पास साड़ी-चोली नहीं, उनके पास खाने के लिए अनाज नहीं है, उनकी अपनी खेती नहीं है। उनकी ऐसी विपरीत स्थिति होने के कारण हर साल उन्हें मिलनेवाले सींगों के, मांस के करीब 500 रुपयों की उनकी आमदनी को छोड़ देने के लिए आप कह रहे हैं, क्या इसमें उन लोगों का नुकसान नहीं?"

मैंने उनसे पूछा, आपके सवाल का जवाब मैं कहां दूं? यहां बरामदे में दूं या कि भरी सभा में दूं? लोगों के सामने ही सवाल-जवाब होना बेहतर है। मैंने उनसे यह भी पूछा कि आपका बस यही सवाल है या कोई और सवाल भी हैं? उन्होंने कहा, इतना ही पूछना है, बस इसी का जवाब दीजिए। मैंने उनसे पूछा, आपके कितने बाल-बच्चे हैं? उन्होंने बताया, मेरे पांच बच्चे हैं। भाई के भी 5/7 बच्चे हैं। मैंने कहा, इसलिए आपका परिवार बड़ा है। इसलिए आप और आपका परिवार मिल कर उस गांव के मरे मवेशियों को ढोएं और 500 रुपयों की आमदनी लें। आप यह फायदा जरूर लें। मैं खुद हर साल आपको अलग से 500 रुपए देने का प्रबंध करता हूं। मेरे लोगों का क्या होगा, उन्हें अनाज, वस्त्र मिलेगा या नहीं वह मैं देख लूंगा, आप इस मौके का फायदा जरूर लें। इतने बड़े फायदे की बात आप क्यों छोड़ रहे हैं? आप यह काम क्यों नहीं करते? इस काम को करने से अगर हमारा फायदा होता है तो आपका भी फायदा ही होगा, अगर नहीं क्यों नहीं? मरे हुए मवेशियों को आप ढोएं बेशक।"

कल ब्राह्मण का एक लड़का आकर मुझसे बोला, पार्लियामेंट, एसेंब्लियों में आप लोगों

को आरक्षित जगहें दी गई हैं। वे आप लोग क्यों छोड़ते हैं? मैंने उनसे कहा, आप महार बनिए और पार्लियामेंट/एसेंब्लियों में उन जगहों को लें। नौकरी खाली हो तो जगहों को भरा जाता है। उनके लिए ब्राह्मणों की, अन्य लोगों की कितनी अर्जियां आती हैं। जैसे नौकरियों की जगहें भरी जाती हैं उसी प्रकार आप इन आरक्षित जगहों को खुद महार बन कर क्यों नहीं भरते?

मेरा उनसे सवाल है कि अगर हमारा नुकसान होता है तो आप क्यों रोते हैं? असल में मनुष्य को अपनी इज्जत प्यारी होती है, लाभ नहीं। सदगुणी एवं सदाचारी महिला को व्यभिचार में कितना फायदा है इसका पता होता है। हमारी बंबई में व्यभिचारी महिलाओं की एक बस्ती है। वे महिलाएं सुबह नाश्ते के लिए पड़ोस के होटल में जाती हैं और कहती हैं - (डॉक्टरसाहब ने यहां आवाज बदल कर नकल करते हुए कहा) 'अरे सुलेमान, खिमा की कटोरी और पावरोटी लेकर आना।' सुलेमान लेकर आता है और साथ में चाय, पाव, केक भी लाता है। लेकिन मेरी दलितवर्गीय बहनों को सादी चटनी-रोटी तक नसीब नहीं होती। लेकिन वे इज्जत से रहती हैं। सदाचार का पालन करते हुए जीती हैं।

हम झगड़ रहे हैं इज्जत के लिए। मनुष्यमात्र को पूर्णावस्था में ले जाने की हम तैयारी कर रहे हैं। इसके लिए जो जरुरी हो वे सभी त्याग करने के लिए हम तैयार हैं। अखबारों के ये लोग मेरे पीछे पिछले 40 सालों से लगे हुए हैं। उन्होंने आज तक मेरी कितनी आलोचना की। मेरा उनसे कहना है, सोच लो। कम से कम अब तो बच्चों-सी भाषा छोड़ कर बुजुर्गों की भाषा में बोलिए।

बौद्धधर्मीय होने के बावजूद हम राजनीतिक अधिकार प्राप्त करेंगे इसका मुझे पूरा-पूरा विश्वास है। (डॉ. बाबासाहेब की जयकार और तालियों की गूंज) मेरे मरने के बाद क्या होगा यह कहा नहीं जा सकता। इस आंदोलन के लिए बहुत बड़ा काम करना पड़ेगा। हमारे बौद्ध धम्म अपनाने से क्या होगा, कठिनाई आने पर उन्हें कैसे टाला जा सकता है, उसके लिए क्या तिकड़में और युक्तियां की जा सकती हैं। इस बारे में मैंने पूरा सोच लिया है। मेरी पोटली में सब कुछ भरा हुआ है। किस प्रकार से वह भरा है मैं जानता हूं। आज तक जो हक पाए हैं वे मैंने ही अपने लोगों के लिए हासिल किए हैं। जिसने एक बार हक हासिल करवा दिए वह फिर से हासिल करवाएगा ही। अधिकार और सहूलियतें मैंने ही उपलब्ध कराई हैं और मुझे यकीन है कि मैं फिर यह आपके लिए उपलब्ध करा सकता हूं। इसलिए, कम से कम अब आपको मुझ पर विश्वास कर आगे बढ़ना होगा। विरोध में प्रचार करने वालों की बातों में कोई दम नहीं है यह मैं आपको साबित करके दिखाऊंगा।

एक बात का बल्कि मुझे बड़ा आश्चर्य लगता है ।सब ओर इतना विवाद हो रहा है लेकिन किसीने मुझसे यह नहीं पूछा कि मैंने बौद्ध धर्म ही क्यों स्वीकारा। किसी भी धर्मांतरण आंदोलन का प्रमुख सवाल यह होता है कि किसी भी अन्य धर्म की जगह वही धर्म क्यों स्वीकारा गया? धर्मांतरण करते हुए कौन-सा धर्म स्वीकारना है और क्यों इस प्रश्न पर काफी

सोच–विचार होना चाहिए। हिंदू धर्मत्याग का आंदोलन हमने 1935 में येवले में एक प्रस्ताव पारित कर हाथ में लिया। मैंने पहले ही प्रतिज्ञा की थी कि 'हिंदू धर्म में मैं जन्मा हूं लेकिन इसी धर्म में रहते हुए मैं मरूंगा नहीं। कल मैंने दिखा दिया कि मैं सच बोल रहा था। मुझे इतनी खुशी हो रही है–आनंदातिरेक ही हुआ है लगभग। लगता है कि हमें नर्क से छुटकारा मिला है। मैं अपने कोई अंध भक्त नहीं चाहता। जो बौद्ध धर्म को अपनाना चाहते हैं उन्हें जागरुकता के साथ उसे अपनाना चाहिए, उन्हें वह धर्म सही लगना चाहिए।

मनुष्य के उत्कर्ष के लिए धर्म बहुत जरुरी बात है। मैं जानता हूं कि कार्लमार्क्स को पढ़ कर एक पंथ का निर्माण हुआ है उनकी राय में धर्म की कुछ हैसियत नहीं। वे धर्म को महत्वपूर्ण नहीं मानते। उन लोगों को सुबह ब्रेकफास्ट (नाश्ता) मिला, उसमें पाव, मलाई, मक्खन, मुर्गी की टांग आदि होने से, दोपहर में पेटभर भोजन मिला, आराम की नींद मिले, फिल्म देखने को मिले तो बस्स। उनका दर्शन बस यही है। लेकिन मेरी राय उनसे अलग है। मेरे पिता गरीब थे। इसलिए ऐसा सुख मुझे नहीं मिला है। किसी ने जीवन में उतनी मेहनत नहीं की होगी जितनी मैंने की है। इसीलिए, सुख–संतोष के बगैर इंसान का जीवन कितना कष्टमय होता है मैं जानता हूं। आर्थिक उन्नति के लिए आंदोलन की जरूरत है यह मैं मानता हूं। मैं ऐसे आंदोलन के खिलाफ नहीं हूं। इंसान को आर्थिक उन्नति प्राप्त करनी ही होगी।

लेकिन मेरी राय में और इसमें एक महत्वपूर्ण फर्क है। भैंसा, बैल और मनुष्य में फर्क है। भैंसे और बैल को हर रोज चारे की जरूरत होती है। मनुष्य को भी अन्न की जरूरत होती है। दोनों में फर्क यह है कि भैंसे या बैल के पास मन नहीं है। मनुष्य के पास शरीर के साथ मन भी है। इसलिए उसे दोनों के बारे में सोचना होगा। मन का विकास होना चाहिए। मन सुसंस्कृत बनना चाहिए। उसे सुसंस्कारित बनाना चाहिए। जिस देश के लोग यह कहते हैं कि खाना न हो तो मनुष्य सुसंस्कृत नहीं हो सकता उस देश के साथ अथवा उन लोगों के साथ ताल्लुक रखना भी मुझे पसंद नहीं। जनता से संबंध रखते हुए मनुष्य का शरीर जिस प्रकार निरोग होना चाहिए उसी प्रकार सुदृढ शरीर के साथ मनुष्य का मन भी सुसंस्कारित होना चाहिए। वरना मानव जाति का विकास हुआ है ऐसा कहा नहीं जा सकता।

मनुष्य का शरीर या मन क्यों रोगी बनता है? क्योंकि, या तो उसे शारीरिक पीड़ा होती है अथवा उसके मन में उत्साह नहीं होता। मन में उत्साह न हो तो प्रगति कैसे होगी? उत्साह न होने के क्या कारण होते हैं? पहला कारण यही कि मनुष्यों को ऐसे रखा गया है कि उन्हें ऊपर आने का मौका ही नहीं मिलता या उसे प्रगति की कोई उम्मीद नजर नहीं आती। फिर उसके मन में उत्साह कहां से आएगा? वह रोगी बन जाता है। जिस व्यक्ति को अपनी कृति का फल मिलता है उसे उत्साह होता है। वरना पाठशाला में शिक्षक कहने लगे कि, कौन है रे ये? ये तो महार है। और ये महार पहली श्रेणी में परीक्षा पास करेगा? उसे पहली श्रेणी चाहिए

ही क्यों? तुम बेटा तृतीय श्रेणी में ही रहना। प्रथम श्रेणी में आना तो ब्राह्मण का काम है।

ऐसे हालात में उस बच्चे में उत्साह कहां होगा? उसकी उन्नति कैसे होगी? उत्साह पैदा करने की जड़ मन में है। जिसका शरीर और मन तंदुरुस्त होगा, जो हिम्मत वाला होगा, विपरीत हालात से भिड़ कर पार पा सकता है। ऐसा विश्वास जिसके पास होगा, उसी के मन में विश्वास पैदा होता है और उसकी प्रगति होती है। हिंदू धर्म में कुछ ऐसी कुत्सित भावनाएं पैदा की गई हैं कि उत्साह महसूस ही नहीं होता। मनुष्य को हतोत्साहित करने वाली स्थितियां हजारों सालों तक टिकी रहीं तो उससे ज्यादा से ज्यादा क्लर्की करने वाले पैदा होंगे। इससे बेहतर और क्या हो सकता है? इन क्लर्कों की रक्षा करने के लिए बड़ा क्लर्क चाहिए।

मनुष्य के उत्साह अगर कोई कारण है तो वह है उसका मन। आप मिल मालिकों को जानते हैं। वे मिलों में मैनेजरों की नियुक्ति करते हैं और उनके जरिए मिल का काम करवा लेते हैं। मिल के मालिक किसी न किसी तरह के नशे के आदि होते हैं। उनके मन का सुसंस्कारपूर्ण विकास नहीं हुआ होता। अपने मन को उत्साह महसूस हो इसके लिए हमने आंदोलन किया और तब जाकर हमें पढ़ने का मौका मिला। मैंने लंगोट पहनकर पढ़ने की शुरूआत की। स्कूल में मुझे कभी पीने के लिए पानी तक नहीं मिला। पानी के बगैर मैंने स्कूल में कई दिन बिताए। मुंबई के एलफिन्स्टन कॉलेज में भी ऐसा ही हाल था। ऐसे हालात में और क्या निर्माण होना था? क्लर्की ही निर्माण होगी।

मैं दिल्ली के एक्जीक्यूटिव कौंसिल में था, तब लॉर्ड लिनलिथगो भारत के वायसरॉय थे। मैंने उनसे कहा, आप आम खर्च तो करते ही हैं और मुसलमानों के लिए अलीगढ विश्वविद्यालय को तीन लाख रुपए शिक्षा के लिए खर्च देते हैं। उसी प्रकार बनारस के हिंदू विश्वविद्यालय के लिए भी आप तीन लाख रुपया देते हैं। लेकिन हम न तो हिंदू हैं न मुसलमान। हमारे लिए अगर कुछ करना हो तो उनकी तुलना में हजार गुना अधिक करना होगा। कम से कम हमारे लिए आपने मुसलमानों के लिए जितना किया है उतना तो कीजिए। तब लिनलिथगो ने बताया, आप इस बारे में जो कुछ लिख कर लाना चाहते हैं वह ले आइए। उनके अनुसार मैंने एक मेमोरेंडम लिखा। आज भी वह मेरे पास है। यूरोपियन लोग बड़े सहानुभूति वाले थे। उन्होंने मेरा कहा माना। लेकिन बात अड़ी इस बात पर कि यह खर्च किस मद में दिखाया जाए। उन्हें लगता था कि हमारी बेटियां पढ़ी-लिखी नहीं हैं। उन्हें पढ़ाना चाहिए। उनके लिए बोर्डिंग्स खोलें और उस पर वे पैसे खर्च किए जाएं। हमारी बेटियों को अगर पढ़ा भी दिया जाए तो अलग-अलग व्यंजन बनाने के लिए घर में सामान कहां है? इसलिए, आखिर उनकी शिक्षा का असर क्या होगा? अन्य मदों की रकमें सरकार ने खर्च की और शिक्षा के लिए रखी रकम की राह में रोड़ा अटका के रखा।

इसलिए, एक दिन मैं लिनलिथगो के पास गया। शिक्षा के लिए रखी रकम के बारे

में बोलना था। मैंने कहा, अगर आप गुस्सा न हों तो मुझे एक सवाल पूछना है। मैं अकेला क्या 50 ग्रैज्युएटस् की बराबरी का हूं या नहीं? उन्हें यह बात माननी ही पड़ी। मैंने उनसे पूछा, बताइए इसकी वजह क्या है? उन्होंने कहा, कारण हमें पता नहीं है। मैंने कहा कि मुझमें इतनी विद्‌वत्ता है कि मैं राजमहल के शिखर पर जाकर बैठ सकता हूं। मुझे, मेरे जैसे ही लोग चाहिएं। क्योंकि, शिखर से सब दूर निगरानी की जा सकती है। हमारे लोगों की रक्षा करनी हो तो इस प्रकार शिकार करने वाले लोग का निर्माण होने चाहिए। क्लर्क टाइप के लोग क्या करेंगे? लिनलिथगो को मेरी बात सही लगी। उस साल 16 बच्चों को विदेश में उच्च शिक्षा के लिए भेजा गया। यह बात अलहदा है कि कुछ मटके कच्चे होते हैं कुछ पक्के उसी तरह उन 16 में से कुछ कच्चे निकले कुछ पक्के। आगे राजगोपालाचारी ने इस योजना को रद्द कर दिया।

हमारे देश में ऐसे हालात हैं जो हमें हजारों सालों तक निरुत्साही बना कर रख दें। जब तक ऐसी स्थितियां हैं तब तक अपनी उन्नति के बारे में उत्साह होना संभव नहीं। इस बारे में इस धर्म में रह कर हम कुछ नहीं कर सकते। मनुस्मृति में चातुर्वर्ण्य के बारे में बताया है। चातुर्वर्ण्य व्यवस्था मनुष्यमात्र की प्रगति के लिए अत्यंत घातक है। मनुस्मृति में लिखा है कि शूद्र केवल सेवा-चाकरी करें। उन्हें शिक्षा क्यों चाहिए? ब्राह्मण शिक्षा लें, क्षत्रिय शस्त्र धारण करें। वैश्य व्यापार करें और शूद्र इन सबकी चाकरी करें। समाज की इस व्यवस्था को कौन बदलेगा? ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य वर्ग के लोगों का कुछ तो फायदा है। शूद्रों का क्या? तीन वर्णों को छोड़ दें तो बाकी लोगों में उत्साह कैसे पैदा हो? चातुर्वर्ण्य की व्यवस्था ऐसे ही लागू नहीं हुई है, वह रूढ़ि नहीं, वह धर्म है।

हिंदू धर्म में समता नहीं है। एक बार मैं गांधी से मिलने गया था तब उन्होंने कहा, मैं चातुर्वर्ण्य को मानता हूं। मैंने उनसे कहा, आप जैसे महात्मा चातुर्वर्ण्य मानते हैं! लेकिन यह चातुर्वर्ण्य कौन से और कैसे? (हाथ के पंजे की उंगलियां एक के ऊपर एक आएंगी इस प्रकार पकड़ कर) ये चातुर्वर्ण्य उलटे हैं या कि सीधे? चातुर्वर्ण्य की शुरुआत किस तरफ से और अंत किस ओर? गांधी ने इस सवाल का जवाब नहीं दिया और देते भी क्या? जिन लोगों ने हमारा नाश किया उनका भी इसी धर्म के कारण सफाया होगा। हिंदू धर्म पर मेरा यह यूं ही लगाया गया आरोप नहीं है। हिंदू धर्म के कारण किसी का भी उद्धार नहीं होने वाला है। वह धर्म ही बरबाद (तबाह) धर्म है।

हमारा देश बार-बार विदेशियों के कब्जे में क्यों गया? 1945 तक यूरोप में लडाइयां जारी थीं। जितने सैनिक मरते थे उतने ही भरती से फिर आगे आते। उस वक्त कोई भी यह नहीं कह सका कि हमने लड़ाई जीती। हमारे देश की हर बात ही निराली! क्षत्रिय मरें तो हम खत्म। हमें अगर हथियार धारण करने की अनुमति होती तो यह देश परतंत्र होता। कोई भी इस देश को जीत नहीं पाता।

हिंदू धर्म में रह कर किसी का उद्धार नहीं होगा। हिंदू धर्म की रचना के अनुसार इसमें उच्च वर्णों को फायदे हैं यह बात सही है, लेकिन औरों का क्या? ब्राह्मण महिला की जच्चगी होती है तो उसकी नजर हाइकोर्ट में कहां जज की जगह खाली है यह ढूंढती है। हमारी जाडूवाली बाई जच्चगी हो तो उसकी नजर झाड़ूवाले की जगह खाली है उसी तरफ जाती है। ऐसी विचित्र व्यवस्था हिंदू धर्म की वर्णव्यवस्था ने की है। इसमें सुधार तो क्या होंगे? उत्कर्ष केवल बौद्ध धर्म में ही हो सकता है।

बौद्ध धर्म में 75 प्रतिशत ब्राह्मण भिक्षु थे और 25 प्रतिशत शूद्रादि। लेकिन भगवान बुद्ध ने बताया, ''हे भिक्षुओं, आप अलग-अलग देशों से और जातियों से आए हैं। अपने प्रदेश से नदियां बहती हैं तो वे पृथक-पृथक होती हैं लेकिन सागर में मिलने के बाद वे अलग-अलग नहीं रहतीं। वे एक हो जाती हैं और समान हो जाती हैं। बौद्ध धर्म संघ सागर की तरह है। इस संघ में सब समान हैं।'' सागर में जाने के बाद यह गंगा का पानी, यह महानदी का पानी इस प्रकार अलग-अलग पहचान संभव नहीं है। उसी प्रकार बौद्ध संघ में आने के बाद जाति समाप्त हो जाती है। सभी लोग समान बन जाते हैं। इस प्रकार समता बताने वाला एक ही महापुरुष है और वह है भगवान बुद्ध। (तालियों की गूंज)

कुछ लोग पूछते कि आपने धर्मांतर करने में इतनी देर क्यों की? इतने दिनों तक आप क्या कर रहे थे? यह महत्वपूर्ण सवाल है। धर्म समझाना आसान काम नहीं। एक आदमी का यह काम नहीं। धर्म के बारे में काम करने वाले किसी भी आदमी की समझ में यह बात आ जाएगी। मुझ पर जितनी जिम्मेदारी है उतनी दुनिया के किसी भी व्यक्ति पर नहीं है। अगर अधिक उम्र मिले तो जितना सोचा है उतना सारा काम मैं करूंगा। (बाबासाहेब चिरायू हों के नारे)

कुछ लोग कहेंगे कि महार बौद्ध होंगे तो क्या होगा? मैं उनसे कहूंगा कि ऐसा ना कहें। ऐसा कहना उनके लिए जोखिम भरा साबित होगा। उच्च और संपन्न वर्ग को धर्म की आवश्यकता महसूस नहीं होगी। उनमें से अधिकारी लोगों के पास रहने के लिए बंगला है। उनकी सेवा के लिए नौकर-चाकर हैं। उनके पास धन-संपत्ति है, उन्हें सम्मान मिलता है। ऐसे लोगों के लिए धर्म के बारे में सोचना या चिंता की जरूरत नहीं है।

धर्म की जरूरत गरीबों को है। पीड़ित लोगों को धर्म की आवश्यकता है। गरीब मनुष्य आशा के सहारे जीता है। Hope! जीवन की जड़ आशा में ही है। आशा ही खत्म हो तो जीवन कैसे रहे? धर्म आशावान बनाता है। पीड़ितों को, गरीबों को संदेश देता है - डरना मत! सब ठीक होगा। जीवन आशावान बनेगा। इसलिए गरीब और पीड़ित लोग धर्म से चिपके रहते हैं।

यूरोप में जब ईसाई धर्म ने प्रवेश किया तब रोम तथा आसपास के देशों की हालत बहुत खस्ता थी। लोगों को पेट भर खाना भी नसीब नहीं होता था। उस समय गरीब

लोगों को खिचड़ी परोसी जाती थी। उस वक्त ईसामसीह के कौन अनुयायी बने? गरीब, पीड़ित लोग ही उनके अनुयायी बने। यूरोप की सभी गरीब और निम्न जाति की जनता ईसाई बनी। गिबन ने कहा भी था, ईसाई धर्म भीख मांगने वालों का है। यही ईसाई धर्म आज यूरोप में सभी का धर्म कैसे बना इसका जवाब देने के लिए आज गिबन जीवित नहीं हैं वरना इसका जवाब भी उन्हें देना पड़ता। कुछ लोग कहेंगे बौद्ध धर्म महार-मांगों का धर्म है। ब्राह्मण लोग भगवान बुद्ध को 'भो गौतम' यानी 'अरे गौतम' कहा करते थे। ब्राह्मण बुद्ध को इस प्रकार निम्न कोटि का कहते, उन्हें चिढ़ाते। लेकिन राम, कृष्ण, शंकर की मूर्तियां अगर बेचने के लिए विदेशों में रखी जाएं तो कितनी बिकेंगी यह देखिए। बुद्ध की मूर्ति रखें तो एक भी बाकी नहीं बचेगी। (तालियों की गड़गड़ाहट) अब घर में (भारत में) यह बहुत हुआ। बाहर भी कुछ करिश्मा दिखाइए। दुनिया में नाम है तो केवल बुद्ध का। सो, इस धर्म का प्रसार तो जरूर ही होगा।

हम अपनी राह जाएंगे आप अपनी राह जाएं। हमें नई राह मिल गई है। यह दिन उम्मीदों का है। यह अभ्युदय का उत्कर्ष का मार्ग है। यह कोई नई राह नहीं है। न इसे कहीं से ले आया गया है। यह राह यहीं की है। भारत की ही है। 200 सालों तक इस देश में बौद्ध धर्म था। असल में हमें इस बात का खेद है कि हम इससे पूर्व ही बौद्ध धर्म में क्यों नहीं शामिल हुए? भगवान बुद्ध के बताए सिद्धान्त अजर-अमर हैं। हालांकि बुद्ध ने ऐसा कोई दावा नहीं किया था। उसमें कालानुरूप बदलाव लाने की सुविधा है। इतनी उदारता किसी भी धर्म में नहीं है।

बौद्ध धम्म के समाप्त होने के प्रमुख कारण है मुसलमानों के आक्रमण। मुसलमानों ने आक्रमणों के दौरान मूर्तियां तोड़ीं। बौद्ध धम्म पर पहले आक्रमण उनके कारण हुए। उनके आक्रमणों से डर कर बौद्ध भिक्षु गायब हुए। कोई तिब्बत गया, कोई चीन, और कोई कहीं यहां-वहां गए। धर्म की रक्षा करने के लिए उपासकों की जरूरत होती है। पश्चिमोत्तर सरहद प्रांत में एक ग्रीक राजा था। उसका नाम मिलिंद। यह राजा हमेशा तर्क-वितर्क (चर्चा) में उलझा रहता था। उसे चर्चा का बड़ा शौक था। वह हिंदुओं से कहता जो वाकपट हैं वह आकर चर्चा करें। कइयों को उसने निरुत्तर कर दिया था।

एक बार उसे लगा कि उसे बौद्ध लोगों के साथ चर्चा करनी चाहिए। उसने कहा कि कोई चर्चा में बौद्ध हो तो उसे ले आएं। तब बौद्ध लोगों ने नागसेन से विनती की कि आप चर्चा में में बौद्ध लोगों का पक्ष सामने रखें। नागसेन विद्वान था। वह पहले ब्राह्मण था। नागसेन और मिलिंद के बीच जो चर्चा हुई उसे दुनिया जानती है। उस किताब का नाम है 'मिलिंद पन्ह'। मिलिंद ने सवाल पूछा कि धर्म को ग्लानि क्यों आती है? नागसेन ने जवाब देते हुए इसके तीन कारण बताए।

पहला कारण यह कि, कोई धर्म कच्चा होता है। उस धर्म के मूल दर्शन में गंभीरता नहीं होती। वह कालिक धर्म बनता है। कुछ काल के लिए वह टिका रहता है।

दूसरा कारण यह है कि, अगर धर्म का प्रसार करने वाले विद्वान न हों तो धर्म को ग्लानि आती है । ज्ञानी व्यक्तियों द्वारा धर्म का ज्ञान दिया जाना चाहिए। विरोधियों से तर्क-वितर्क करने में धर्म के प्रचारक सिद्ध न हों तो धर्म को ग्लानि आती है।

तीसरी और महत्वपूर्ण बात यह कि धर्म और धर्म का दर्शन विद्वानों के लिए होते हैं। प्राकृत और सामान्य लोगों के लिए मंदिर होते हैं। वे वहां जाकर अपनी श्रेष्ठ विभूतियों की पूजा करते हैं।

बौद्ध धर्म स्वीकार करते समय हमें इन बातों का ध्यान रखना होगा। बौद्ध धर्म के सिद्धान्त कालिक यानी केवल कुछ काल के लिए हैं ऐसा कोई नहीं कह सकता। आज दो हजार पांच सौ सालों के बाद भी बुद्ध के सभी सिद्धान्तों को सारी दुनिया मानती है। अमेरिका में दो हजार बौद्ध संस्थाएं हैं। इंग्लैंड में तीन लाख रुपयों की लागत से बौद्ध विहार बना है। जर्मनी में भी तीन-चार हजार बौद्ध संस्थाएं हैं। बुद्‌ध के सिद्धान्तो अजर-अमर हैं। हालांकि, यह ईश्वर का धर्म है ऐसा बुद्ध ने कोई दावा नहीं किया है। बुद्‌ध ने बताया मेरे पिता प्राकृत थे, मेरी माता प्राकृत स्त्री थी। अगर आपको लगे तभी इस धर्म को स्वीकार करें। आपकी बुद्धि को अगर ठीक लगे तभी इस धर्म को आप स्वीकार करें। ऐसी उदारता अन्य किसी धर्म में बरती नहीं गई है।

बौद्ध धर्म की नींव क्या है? अन्य धर्मों में और बौद्ध धर्म में बहुत फर्क है। अन्य धर्मों में बदलाव नहीं आने वाला है। क्योंकि वे धर्म मानव और ईश्वर के बीच का संबंध बताते हैं। अन्य धर्मों का कहना यह है कि ईश्वर ने सृष्टि का निर्माण किया। ईश्वर ने आकाश, वायु, चंद्रमा, तारे, सूरज सभी का निर्माण किया। ईश्वर ने हमारे लिए कुछ निर्माण करना बाकी नहीं रखा। इसीलिए ईश्वर की पूजा करें। ईसाई धर्म बताता है कि मृत्यु के बाद एक दिन - Day Of Judgement - होता है और उस दिन निर्णय के अनुसार सब कुछ घटित होता है। भगवान और आत्मा को बौद्ध धर्म में कोई जगह नहीं। भगवान बुद्‌ध ने बताया - दुनिया में सब जगह दुख है। 90 प्रतिशत लोग दुख से पीड़ित हैं। उन दुख से पीड़ित, गरीब लोगों को दुख से मुक्त करना बौद्ध धर्म का प्रमुख कार्य है। कार्ल मार्क्स ने बुद्ध से अलग क्या बताया? भगवान ने जो कुछ बताया वह आड़े-तिरछे तरीके से नहीं बताया।

और भाइयों, मुझे जो कुछ कहना था मैंने कह दिया यह धर्म सभी तरह से परिपूर्ण है। उसमें कहीं कोई लांछन नहीं है। हिंदू धर्म का जो सिद्धांत है उससे उत्साह पैदा ही नहीं हो सकता है। हजारों सालों से कल-परसों तक हमारे समाज से एक भी व्यक्ति ग्रॅज्युएट या विद्वान नहीं बन पाया था। कहने में मुझे हर्ज नहीं होता कि हमारे स्कूल में झाडू लगाने का काम एक महिला करती थी। वह मराठा थी। वह मुझे नहीं छूती थी। मेरी मां मुझे बताती कि बड़े लोगों को मामा कहा करो। पोस्टमैन को मैं मामा कहता था। (हंसी के फव्वारें) बचपन में एक बार स्कूल में मुझे प्यास लगी थी। मैंने अध्यापक

से कहा। अध्यापक ने कहीं और से चपरासी को बुलाकर उसे मेरे साथ भेजा और कहा कि इसे नल पर ले जाओ। हम नल के पास पहुंचे। चपरासी ने नल खोला और मैंने पानी पिया। मुझे स्कूल में पीने के लिए पानी तक नहीं मिलता था। आगे मुझे डिस्ट्रिक्ट जज की नौकरी दी गई थी। लेकिन मैंने उस बला को अपने गले पड़ने नहीं दिया। मैंने नौकरी नहीं की क्योंकि मेरे सामने सवाल था कि अगर मैं नौकरी करूं तो मेरे भाइयों के लिए कौन काम करेगा। इसीलिए मैं नौकरी के बंधन में नहीं बंधा।

निजी तौर पर मेरे लिए कोई बात असंभव नहीं है। (तालियां) आपके सिर पर वैश्य, क्षत्रिय, ब्राह्मण इस प्रकार जो रचना है वह कैसे टूटेगी यह असली सवाल है। इसीलिए इस धर्म का सभी प्रकार का ज्ञान आप लोगों को करवाना मेरा कर्तव्य है। मैं किताबें लिख कर आपकी आशंकाएं दूर करूंगा। ज्ञान की पूर्णावस्था तक आप लोगों को ले जाने की पूरी कोशिश करूंगा। कम से कम आज आपको मुझ पर विश्वास रखना होगा।

हालांकि, आप लोगों पर भी बहुत बड़ी जिम्मेदारी है। आपके बारे में लोगों को आदर महसूस हो, सम्मान इस प्रकार आपके कार्य होने चाहिएं। इस धर्म के रूप में हम अपने गले में एक लाश बांध रहे हैं ऐसा ना सोचें। बौद्ध धर्म के नजरिए से फिलहाल भारत की भूमि शून्यवत् है। इसीलिए हमें श्रेष्ठ तरीके से धर्म का पालन करने का निश्चय करना होगा। महार लोगों ने इस धर्म को निंदाजनक हालत तक पहुंचाया ऐसा नहीं होना चाहिए। इसीलिए आपको निश्चय करना होगा। अगर हम यह कर सकें तो अपने साथ अपने देश का, इतना ही नहीं दुनिया का उद्धार करेंगे। क्योंकि बौद्ध धर्म के कारण ही दुनिया का उद्धार होने वाला है। दुनिया में जब तक न्याय नहीं मिलता तब तक शांति नहीं रहेगी।

यह नई राह जिम्मेदारी भरी है। हमने संकल्प लिया है। कुछ इच्छा पाली है। युवकों को यह बात ध्यान में रखनी होगी। वे केवल पेट पालने वाले न बनें। अपनी कमाई का कम से कम 20वां इस कार्य के लिए दें, ऐसा आश्वासन दें। हिस्सा मैं इस काम के लिए दूंगा ऐसा वे निश्चय करें। मैं सबको साथ लेकर चलना चाहता हूं। तथागत ने पहले कुछ व्यक्तियों को दीक्षा दी। उन्हें आदेश दिया कि इस धर्म का प्रसार कीजिए। उसके अनुसार यश और उसके 40 मित्रों ने बोद्ध धर्म की दीक्षा ली। यश अमीर घराने से था। उन्हें भगवान ने धर्म कैसा है यह बताया – ''बहुजन हिताय बहुजन सुखाय, लोकानुकंपाय, धम्म आदि कल्याणं, मध्य कल्याणं, पर्यावसान कल्याणं'' उस जमाने के हालात के अनुसार तथागत ने अपने धम्म के प्रकार का मार्ग बनाया। अब हमें भी कोई आयोजन करना होगा। इसलिए समारोह के बाद हरेक को दीक्षा दे। मैं घोषित करता हूं कि प्रत्येक बौद्ध व्यक्ति को औरों को दीक्षा देने का अधिकार है।''[१६]

16. प्रबुद्ध भारत, अम्बेडकर बौद्ध दीक्षा विशेषांक, 27 अक्तूबर, 1954

343

मुझे धम्म से बहुत प्रेम है और मैं उसी के लिए अपनी ताकत लगाऊंगा

मध्य प्रदेश शे. का. फेडरेशन शाखा की ओर से 15 अक्तूबर, 1956 को शाम 5.30 बजे नागपुर के श्याम होटल में डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के सम्मान में छोटी सी चाय-पार्टी (जलपान) दी गई थी। आयुष्मति माईसाहब भी इस समारोह में उपस्थित थीं। साथ ही, शे. का. फेडरेशन के पदाधिकारी और कार्यकर्ताओं में से बॅ. राजाभाऊ खोब्रागडे, आयु. दादासाहब गायकवाड़, आयु. हरिदास आवलेबाबू, आयु. मेश्राम, आयु. कुंभारे, आयु. गोंडाणे, आयु. जी. टी. परमार (गुजरात), आयु. ए. जी. पवार, आयु. आर. डी. भंडारे और आयु. बी. सी. कांबले आदि उपस्थित थे।

पहले आयु. हरिदास आवले बाबू ने कार्यक्रम के लिए उपस्थित रह कर उपकृत करने के लिए डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के प्रति आभार व्यक्त किया और उनसे दलित फेडरेशन के कार्यकर्ताओं को उद्देश्य कर दो शब्द कहने की विनति की।

उनकी प्रार्थना का आदर करते हुए डॉ. बाबासाहब अम्बेडकर ने हिंदी में भाषण दिया सम्बोधित करने के लिए उन्होंने कहा-

यहां मुझे बोलना पड़ेगा, इसकी मुझे जानकारी नहीं थी। पता होता तो अपने विचारों को संकलित कर उन्हें आपके सामने रखने की सहूलियत होती। कुल मिला कर मुझे लगता है कि आप लोगों को राजनीति से लगाव है। अन्य किसी भी बात से बढ़ कर आपको राजनीति प्यारी है ऐसा लगता है। मेरी बात अलग है। मुझे धर्म अधिक प्यारा है। और उसी के लिए मैं अपनी शक्ति लगाने वाला हूं।

आपको कुछ खास अधिकार दिलाने के लिए मैंने आज तक बहुत प्रयास किए। मैंने उसके लिए गांधी से झगड़ा किया, कॉंग्रेस का सामना किया। उस वक्त पहली बार मुंबई एसेंब्ली में हमारे 15-16 लोग चुन कर आए। एसेंब्ली में हमने विरोधी पार्टी के रूप में काम किया। हमारा काम इतना अच्छा था कि तत्कालीन मुख्यमंत्री आयु. खेर को कहना पड़ा कि हमारा काम एसेंब्ली का आदर्श विरोध था। उसके बाद लड़ाई शुरू हुई। लड़ाई के दौरान कुछ विशेष काम नहीं कर पाए।

हमारे देश के आजाद होने के बाद देश का संविधान लिखते समय हमारे अधिकारों

प्रबुद्ध भारत - अम्बेडकर बौद्ध दीक्षा विशेषांक, 27 अक्तूबर, 1956

के आरक्षण के बारे में सोचा गया। काँग्रेस के लोगों को आरक्षित जगहों के लिए अलग चुनाव क्षेत्र रखना पसंद नहीं था। कई लोगों को लगता था कि इस पर अमल कर देखा जाना चाहिए। कहते हैं चोर की लंगोटी भी छोड़नी नहीं चाहिए। उसी प्रकार आरक्षित सीटें बिल्कुल ही छोड़ देने के बजाय उनका संयुक्त चुनाव क्षेत्र द्वारा उपयोग किया जाना चाहिए ऐसा लगा। लेकिन अब तक ऐसे अनुभव हो चुके हैं कि काँग्रेस के टिकट पर आरक्षित जगहों पर जो लोग आते हैं वे अपना मुंह बंद कर बैठते हैं। इस प्रकार अगर संयुक्त चुनाव क्षेत्रों से गधे लोग ही चुन कर आने हों तो आरक्षित सीटों का और चुनावों का मतलब ही क्या है? अनुभव हमें बताता है कि उनसे कोई फायदा नहीं मिलता है।

फेडरेशन ने प्रस्ताव रखा है कि आरक्षित सीटें नहीं चाहिएं। उनके प्रस्ताव से मैं चिपके रहना चाहता हूं। उस प्रस्ताव से मैं डिगना नहीं चाहता। आरक्षित सीटें केवल 10 सालों के लिए हैं। इस बार के चुनावों के बाद अब वे सीटें आरक्षित नहीं रहेंगी। हमारे समाज की एकता किसी भी बात से अधिक महत्वपूर्ण है। आरक्षित सीटें दोयम हैं।

आज तक की हमारे फेडरेशन वाले आंदोलन ने आत्मविश्वास जरूर पैदा किया है। फेडरेशन के लिए यह बात गौरवपूर्ण है। उसी के कारण संगठन बन पाया। हालांकि, उसके साथ ही साथ एक तरह की गुटबंदी भी बनी। संयोगवश से हमारी जनसंख्या बहुत कम है। हम केवल अल्पसंख्य ही हैं। ऐसे हालात में फेडरेशन की इस स्थिति को बनाए रखना मुश्किल है।

इसके लिए हमारे दुख को जानने वाले अन्य कौन लोग हैं यह जानना होगा। ऐसे सभी लोगों को साथ में कर, उनके साथ आगे चलने के लिए हमारा तैयार होना जरुरी है। मैं ऐसे लोगों को इकट्ठा करने की कोशिश कर रहा हूं। मेरी कोशिश अगर कामयाब हुई तो हमें नई पार्टी की स्थापना करनी पड़ेगी। उस दल में हमारे अलावा दूसरों के लिए भी दरवाजे खुले रहेंगे।

आपही में नहीं वरन् इस पूरे देश में ही एक विचित्र विकृति दिखाई देती है। लोगों को लगता है कि आज पौधा रोपते ही कल उसके फल खाने के लिए मिलने चाहिएं। राजनीति में ऐसी उम्मीद करना गलत है।

इंग्लैंड की राजनीति का उदाहरण लीजिए। वहां की ब्रिटिश लेबर पार्टी का इतिहास क्या बताता है? साल 1900 में उनके केवल दो लोगों ने पार्लियामेंट का चुनाव जीता था। 1906 में उन्हें करीब 14 सीटें मिलीं। 1924 तक उन्हें कोई खास कामयाबी नहीं मिली थी, लेकिन उसी साल उनके 125 लोग चुनाव जीते और सही मायने में विरोधी पार्टी बनी। इसप्रकार राजनीति धीरज और बल का खेल है। जिनके पास दम नहीं, जिनके पास धीरज नहीं वे राजनीति नहीं कर सकते।

अब समाज के अन्य लोगों के साथ काम करना आप लोगों को सीखना होगा। आपस

में फूट से काम करना संभव नहीं होगा। मेरे प्रभाव के कारण अब तक कुछ गलत नहीं हुआ है, लेकिन मैं आपके साथ कब तक रह पाऊंगा?

अब उम्मीदवार को चुनने का काम लोगों द्वारा ही किया जाना चाहिए। आपको लोगों के बीच रह कर काम करना होगा। उनकी मुश्किलों को अपनी सामर्थ्य के अनुसार निपटान करना होगा। उनके सुख-दुख के साथ एकरस होने की कोशिश आप लोगों को करनी होगी।

मैं भंडारा के चुनाव में हारा इसका मुझे कभी बुरा नहीं लगा। उस चुनाव में मुझे कई वोट मिले। केवल अपने लोगों ने ही नहीं वरन् अन्य लोगों ने भी मुझे वोट दिए हैं। यह बात मेरे लिए संतोषजनक है। मैं हारा या जीता इस बात पर ज्यादा सोचता नहीं। आप लोगों को भी इसी प्रकार सक्षम बनने की कोशिश करनी होगी, ताकि अन्य समाज के लोगों की भी आपको वोट देने की इच्छा हो। मुझे यकीन है कि इस बात पर सोच-विचार कर आप अपने राजनीतिक जीवन का कार्यक्रम तय करेंगे। इससे अधिक और मैं कुछ कहना नहीं चाहता।

कार्यक्रम के आखिर में आयु. हरिदास आवले ने डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के प्रति हार्दिक आभार प्रकट किया। डॉ. बाबासाहेब के उपदेश के अनुसार अनुसरण करने का आश्वासन उन्होंने प्रकट किया और अल्पाहार कार्यक्रम सम्पन्न हुआ।

344

राजनीति में भक्ति अगर विभूति पूजा की जगह लेती है तो तानाशाही निर्माण होने का खतरा पैदा हो जाता है

दिनांक 15 अक्तूबर, 1956 के दिन नागपूर कॉर्पोरेशन की ओर से डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का सम्मान किया गया। इस सम्मान समारोह में शहर के सभी नगरपालक और प्रतिष्ठित नागरिक उपस्थित थे। सम्मान के लिए खास मंच का प्रबंध किया गया था। यह समारोह शाम 6 से 8 बजे के बीच संपन्न हुआ। सभा पांडाल खचाखच भरा हुआ था। बाहर सड़क के दोनों तरफ काफी भीड़ इकट्ठा हुई थी।

पहले नागपुर कार्पोरेशन के मेयर आयु. रा. पै. समर्थ ने मुद्रित प्रशस्ति पत्र पढ़ कर सुनाया। मानपत्र इस प्रकार था–

मानपत्र

भारतीय बहुजन समाज की मूक भावनाओं की साकार मूर्ति

सम्माननीय डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर

एम. ए. पीएच डी. डी. एससी. बार एट–लॉ

आप जैसे समाजसुधारक, ज्ञानी और विधिविज्ञ पंडित का स्वागत करने का सौभाग्य नागपूर की जनता को मिला इसका हमें परमहर्ष हो रहा है।

वैसे देखा जाए तो नागपूर शहर से आपका घनिष्ठ संबंध रहा है। महान परिश्रम से विद्याध्ययन पूरा करने के बाद आपने 1930 में इसी शहर में अस्पृश्य जनता परिषद बुला कर देश की अस्पृश्य जनता का मार्गदर्शन किया था। यहीं से आपके सामाजिक और राजनीतिक जीवन की शुरुआत हुई है। इसी नगर में 1942 में अखिल भारतीय शेड्यूल्ड कास्टस् फेडरेशन का निर्माण कर अस्पृश्य समाज की राजनीतिक आकांक्षाओं का निनाद आपने पूरे भारतवर्ष में पहली बार पहुंचाया और आज इसी नगर में अपने उत्तर जीवन में बौद्ध धर्म की दीक्षा लेकर आप अपने नए जीवन की शुरुआत कर रहे हैं।

आपके बहुमुखी जीवन पर नजर डालें तो पता चलता है कि आपका पिंड प्रगाढ़ पंडित का होने के बावजूद उसे केवल तार्किक विवेचन तक सीमित न रख कर प्रत्यक्ष कार्यक्षेत्र में भी आपने स्वयं को साबित किया। कई शतकों से धार्मिक, सामाजिक और आर्थिक मामलों में पीड़ित अस्पृश्य समाज की मूक और करुण चीत्कारों से आपका हृदय पिघला और आपने अनवरत उनकी सेवा का व्रत धारण किया।

महाड का 'चवदार तालाब सत्याग्रह, नासिक का कालाराम मंदिर प्रवेश सत्याग्रह ऐसे कितने ही प्रसंगों ने आपकी अग्निपरीक्षा ली और आपके जीवन को और उज्जवल बनाया है। 'वन्ही तो चेतवावा रे, चेतविताची चेतती! केल्याने होत आहे रे आधी केलेचि पाहिजे' (अर्थ - आग जलानी पड़ती है, जलाने से ही जलती है। किए से ही सब होता है, पहले करना पड़ता है।) - इस उक्ति के अनुसार अस्पृश्य समाज की आत्मा आपके अविरत परिश्रमों से जागी और उसने अपने सामाजिक और राजनीतिक अधिकारों के लिए आपके नेतृत्व में संघर्ष की शुरुआत की। इसी के फलस्वरूप लंदन शहर में बुलाई गई गोलमेज परिषद में अस्पृश्य समाज का प्रतिनिधित्व करने के लिए केवल आपको चुना गया। गोलमेज परिषद में आपका काम अती प्रशंसनीय रहा है।

अपने इन असामान्य गुणों के कारण ही 1942 में उस वक्त के भारत सरकार ने आपकी श्रम मंत्री के तौर पर नियुक्ति की और आपने जिम्मेदारी बेहतरीन ढंग से सम्भाली। श्रमजीवि वर्ग की आपने अपरिमित सेवा की।

परतंत्रता की अंधेरी रात के बाद भारत के क्षितिज पर आजादी के सूरज का उदय हुआ। आजादी के सूरज के प्रकाश से हर भारतीय का जीवन तेजोमय हो, इसलिए भारतीय सार्वभौम गणराज्य का संविधान बनाने की बात तय हुई। संविधान समिति (समिति की जगह 'मसौदा समिति' होना चाहिए था - संपादक) में आपको चुना गया और आप इस समिति के अध्यक्ष बने। समता, आजादी और बंधुभाव इन तीनों की नींव पर बनाए गए सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक न्यायपूर्ण हकों के राष्ट्रीय संविधान का जन्म आपके नेतृत्व में हुआ। भारतीय संविधान के शिल्पकार के तौर पर आपको उपाधि भारतीयों ने बहाल की। भारतीय संविधान आपकी कीर्ति भारतवर्ष में चिरकाल तक बनाए रखेगी इसका हमें विश्वास है। साथ ही, जब आप आजाद भारत के कानून मंत्री थे तब आपने हिंदू कोड बिल के रूप में भारतीय महिलाओं के हकों का जो समर्थन किया उसका कोई सानी नहीं। युगों-युगों तक भारतीय स्त्री वर्ग आपकी सेवा के लिए आपके प्रति कृतज्ञ रहेगी।

शिक्षा के बगैर जीवन पवित्र और तेजस्वी नहीं बनता यह पहचान कर बहुजन समाज के जीवन में उसका प्रसार करने के लिए कई मुसीबतों का सामना करते हुए आपने मुंबई में पीपल्स एज्युकेशन सोसाइटी नाम की संस्था की स्थापना की। और उसके सहारे मुंबई में सिद्धार्थ महाविद्यालय और औरंगाबाद में मिलिंद महाविद्यालय की स्थापना कर बहुजन समाज के लिए उच्च शिक्षा का महाद्वार खोल दिया। बाबासाहेब आपका संपूर्ण जीवन बहुजन हिताय और बहुजन सुखाय ही खर्च हुआ है बहुजनों की उन्नति के अलावा राष्ट्र उन्नत नहीं होगा - आपकी इस सोच से कोई असहमत नहीं हो सकता।

आज के अशांत युग में शांति और अहिंसा का सिद्धान्त आशा की किरण दिखा कर

दुनिया का मार्गदर्शन करेगी ऐसी प्रत्येक की धारणा है। शांति और अहिंसा का भारत तथा भारत से बाहर प्रचार करने वाले सम्राट अशोक के अशोकचक्र को हमारे राष्ट्रीय ध्वज पर स्थान प्राप्त हुआ है। उसी महान सम्राट द्वारा स्वीकार किए गए बौद्ध धर्म की आप दीक्षा ले रहे हैं। भारत की शांति और अहिंसा नीति का प्रकाश आप समूचे विश्व में प्रसारित करेंगे इसका हमें यकीन है। परमेश्वर आपको दीर्घायु प्रदान करे!

विनीत,
महापौर और सदस्य
नागपूर महापालिका[1]
नागपूर

दिनांक 15-10-1956

प्रशस्ति पत्र पढ़ने के बाद महापौर ने बाबासाहेब को पुष्पमाला अर्पण कर उनका सम्मान किया।

प्रशस्ति पत्र पर डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने कहा-

''नागपूर कॉर्पोरेशन के मेयर, कार्पोरेटर्स और उपस्थित नागरिकों,

नागपुर शहर और इस प्रांत के साथ मेरा खास संबंध नहीं है। मेरा राजनीतिक संबंध भी नहीं है। इस प्रांत के साथ मेरा इतना ही संबंध है कि यहां मेरे कुछ लोग रहते हैं। इस प्रांत के लिए मैंने कोई खास बात नहीं की है। मैं म्युनिसिपालिटी का सदस्य नहीं था। इसलिए म्युनिसिपल कामकाज के बारे में मैं आपको उपदेश नहीं दे सकता। (हंसी) इस अवसर पर दो शब्द किस विषय पर सुनाऊं, इस बारे में मैं सोच रहा हूं। इस बारे में सोचते हुए मुझे लगता है कि म्युनिसिपालिटी के कामकाज और देश के कामकाज में बहुत अधिक समानता है; इसलिए, इस प्रसंग में मैं आपको देश के कामकाज के बारे में दो शब्द कहना चाहूंगा।

भारत में मेरे जैसे विद्वान हैं लेकिन आपने अभिनंदनपत्र भेंट कर मेरा गौरव किया यह आपकी उदारता है। भारत के संविधान को लागू होकर पांच साल बीत चुके हैं। आप सभी को इस बारे में सोचना चाहिए कि यह संविधान चलता कैसे है? बाहरी तौर पर आपको लगेगा कि, हमारी और अंग्रेजों की शासन प्रणाली कुछ हिस्सों का अपवाद छोड़ कर लगभग एक सी है। वहां वयस्क मतदान पद्धति चलती है, हमारे देश में भी यही प्रणाली लागू है। उस देश में पार्लियामेंट है, हमारे देश में भी पर्लियामेंट है। उस देश की पार्लियामेंट में बहुमत से निर्णय लिए जाते हैं, हमारे पार्लियामेंट में भी बहुमत से ही निर्णय लिए जाते हैं। इसके बावजूद उस देश के प्रशासन में एक फर्क जरूर दिखाई देता

1. प्रबुद्ध भारत : अम्बेडकर बौद्ध दीक्षा विशेषांक, : 27अक्तूबर, 1956

है। इंग्लैंड में प्रजातंत्रात्मक पद्धति है और हमारे यहां तानाशाही का उदय हुआ है ऐसा दिखाई दे रहा है। हमारे देश के कामकाज में दिखाने में और करने में अलग तरीके से कामकाज चल रहा है। हमारे देश का संविधान किस प्रकार काम करता है इस बारे में आप सोचते हैं कि नहीं, मैं नहीं जानता। लोगों को अब प्रशासन और संविधान के बारे में जागरुक रहना चाहिए। भारत के नए संविधान का मैं निर्माणकर्ता इसलिए अभिमान से कहता हूं ऐसी बात नहीं है, लेकिन निर्माणकर्ता होने के कारण हमेशा मुझे ऐसा लगता रहा है। सोचते हुए कभी यह भी लगता है कि इस देश का आखिर क्या होगा और एक भयानक तस्वीर आंखों के सामने साकार होती है।

अब मुझे चुनाव का शौक नहीं रहा। मैंने राजनीति देखी है। काँग्रेस के शासन में जाति-पांति के भेदों के कारण इस देश की राजनीति अब ऐसी बनी है कि अल्पसंख्यक जनजातियों के जीने का कोई सहारा नहीं रहा। इसके बावजूद मैं राजनीति से अलग नहीं होऊंगा। जातिवाद के कारण कई बार मुझे असफलता का ही मुंह देखना पड़ा है इसके बावजूद मैं लडूंगा। मैं अपनी राजनीति जारी रखूंगा। बल्ला छोड़ कर मैं तंबू में लौटूंगा नहीं। (हंसी और तालियां)

मैं इंग्लैंड का प्रशासन और अपने देश के प्रशासन के बारे में बता रहा था। इंग्लैंड और भारत में प्रमुख फर्क यह है कि हमारे यहां मतदाता को उम्मीदवार चुनने का अधिकार नहीं है ऐसा लगता है। वहां मतदाता ही उम्मीदवार का चुनाव करते हैं। उनके चुनाव क्षेत्र के जो मतदाता होते हैं उन्हें- कौन सा उम्मीदवार कैसा है, उसकी शिक्षा कहां तक हुई है, उसका चाल-चलन या चरित्र कैसा है, उसमें समाज सेवा भाव कितना है आदि बातों की जानकारी होती है। उसी के आधार पर वे अपना उम्मीदवार चुनते हैं। हमारे देश में इस बारे में कुछ और ही तरह का मामला है। किस चुनाव क्षेत्र से कौन से उम्मीदवार को खड़ा करना है इसकी आजादी अभी तक हमारे मतदाताओं को नहीं है। आज काँग्रेस की चुनाव संबंधी जो नीति है उससे आपको पता चलेगा कि किस चुनावक्षेत्र से किसे खड़ा किया जाए इस बात का फैसला दिल्ली हाईकमांड करती है। इस बारे में चुनाव क्षेत्र के मतदाताओं को कोई जानकारी नहीं होती। हाइकमांड द्वारा खड़ा किया गया उम्मीदवार कैसा है, उसका चरित्र कैसा है, उसने कुछ कालाबाजारी या घोटाला किया है क्या, वह भ्रष्टचारी है क्या, समाज की भलाई के लिए वह विधानसभा अथवा लोकसभा में जनहित के मामले उठायेगा या नहीं। आदि बातों से काँग्रेस हाइकमांड ने लोगों का कोई ताल्लुक बाकी नहीं रखा है। हम जिसे कहें उसे आपको वोट देना ही पड़ेगा ऐसा काँग्रेस हाइकमांड का उसूल है। काँग्रेस अगर किसी गधे को भी उम्मीदवार बनाती है तो आप उसे अपना वोट देंगे। सड़क के खंभे को वोट देने के लिए काँग्रेस कहे तो सड़क के खंभे को भी अपना वोट देंगे। क्या इसी को आप प्रजातंत्र कहते हैं? यह प्रजातंत्र पर खुला प्रहार है। ऐसी पद्धति राष्ट्र के लिए घातक है।

उम्मीदवार को चुनने का अधिकार चुनावक्षेत्र को ही होता है। अगर ऐसा नहीं है तो उसे प्रजातंत्र नहीं कहा जा सकता। इंग्लैंड में पार्टी ही नेता का और मंत्री का चुनाव करती है। हमारे यहां नेता अपने सहयोगी चुनने के अधिकार की मांग करता है और उस पर शान से अमल भी करता है। यह खुलेआम चल रही तानाशाही है; इसीलिए आज काँग्रेस सत्ता में है। जिस प्रकार यहां का कामकाज चलता है और आप खुद काँग्रेस के हाथ में सारे सूत्र सौंपते हैं उसके आधार पर आपको साफ तौर पर किसी के द्वारा बताए जाने की जरूरत है कि आप मूर्ख हैं। (तालियां) भारत कहां जा रहा है?

फिलहाल काँग्रेस की राजनीति में महिलाओं की संख्या बढ़ाई जा रही है। महिलाओं की इस काँग्रेसी राजनीति के बारे में कुछ समझ नहीं आ रहा। स्वधर्म छोड़ कर महिलाएं राजनीति करते हुए घूमें इसके जैसी शर्म की बात कोई और नहीं। महाराष्ट्र की महिलाओं द्वारा अब केवल 'कासोटा' (महाराष्ट्री ढंग से साड़ी पहनते हुए नौ गज की साड़ी का पीछे की ओर खोंसा गया सिरा। इसके खुलने से एक तरह से साड़ी खुल जाती है। व्यंजनार्थ है - लाज-शरम या मर्यादा का त्याग करना) खोलना ही बाकी रह गया है। काँग्रेस द्वारा 292 महिलाओं को लोकसभा में लेने का निर्णय लिया गया है। महिलाएं विधानसभा में जाएंगी तो पुरुष क्या करेंगे? दिन भर लोकसभा में रहने के बाद जब फाइलें बगल में दबाए महिलाएं घर लौटेंगीं तब क्या उनके पति टेबिल पर भोजन रखेंगे? ये महिलाएं दिन भर पार्लियामेंट-एसेंब्ली में जाएंगी और शाम को घर लौटने के बाद पति से पूछेंगी - अजी सुनते हो, मैं पार्लियामेंट से आ गई हूं। घर का सारा कामकाज हुआ है कि नहीं?' ये महिलाएं पार्लियामेंट में जाएंगी और उनके बच्चे कौन सम्हालेगा? एक बच्चा रो रहा है, दूसरे की नाक बह रही है, तीसरा कहीं चला गया है - कौन इन बच्चों का खयाल रखेगा? यह सब उलटा हो रहा है। यह उलटी दुनिया है। अच्छा, पार्लियामेंट में जाकर ये महिलाएं करती क्या हैं? इस बारे में कुछ कहने में मुझे शरम आती है। उनके बारे में बताने का मेरा इरादा नहीं था, लेकिन अब बता ही देता हूं। (हंसी)।

उनकी नीति पूरी तरह से खत्म हो चली है। मेरे पास कुछ खत आए हुए हैं। उन खतों का मजमून तो प्रधानमंत्री के बारे में है। खत लिखने वाली महाराष्ट्रीयन महिला है यह बड़े शर्म की बात है। उसने खत में तो नेहरू का जिक्र करते हुए हमारे ये, हमारे वो कहते हुए कहा है कि वे ये करेंगे, वो करेंगे आदि-आदि। मैं कैबिनेट में था तब मुझे बड़ौदा की एक महिला के खत आते थे। उसमें वह मुझे 'भाऊजी' (देवर या जेठ) कहती है। जवाहरलाल नेहरू को शायद वह अपना पति मानती हैं। दो-तीन खत मैंने जला दिए। एक खत रखा है। मेरे इस्तीफा देने के बाद नेहरू द्वारा मुझे जो पार्टी दी उसमें नेहरू अजीब लोगों के साथ घुल-मिल रहे थे यह देख कर मैंने उनकी कोट की बाजू को खींच कर उनका ध्यान अपनी तरफ किया और अपने पास का खत उन्हें दिखाया।

तब उन्होंने कहा, 'ऐसे बेकार के खत मेरे पास हजारों में आते हैं। उन्हें नजरंदाज कीजिए। मालवणकर से पूछिए।' यह कैसा जवाब हुआ? बड़ोदा की महिला तुम्हारा नाम बदनाम कर रही है, यही मैं उन्हें समझाना चाहता था। लेकिन उन्होंने कहा कि– इस तरह के हजारों खत आते हैं। इसे क्या अपने चरित्र के बारे में जागरुकता कहें? इन सभी बातों पर आपको अच्छी तरह सोचना होगा। पार्लियामेंट जाने वाली महिलाएं इस प्रकार बहकी हुई होंगी तो उन्हें वहां जाने देने के पीछे काँग्रेस का क्या प्रयोजन है?

काँग्रेस की राजनीति का एक और उदाहरण लीजिए। हमारे मुंबई राज्य के मोरारजी देसाई कहते हैं मुझे निर्विरोध चुनिए और किसे मंत्री लेना है मैं तय करूंगा। एक बार चुनने के बाद मेरे कामकाज में कोई दखलंदाजी नहीं करेगा। अब इसे क्या कहेंगे आप ही तय कीजिए। कल मान लीजिए कि मोरारजी को चुना गया और वे अगर अपने मंत्रिमंडल में किसी कुत्ते की नियुक्ति करें तब भी किसी को दखलंदाजी नहीं करनी चाहिए, यही उनके कहने का मतलब हुआ। इंग्लैंड की प्रशासन पद्धति हमने अपनाई है तो उसमें यह क्या चल रहा है? उस जगह सत्तापक्ष के सदस्य पार्लियामेंट में पहली पंक्ति में बैठते हैं उनकी अनुमति से ये बातें तय की जाती हैं। किसी को एक बार चुने जाने के बाद और कोई भी उसमें दखल नहीं देगा ऐसा वहां कोई किसी से नहीं कहता और ऐसा कहना माना भी नहीं जाएगा। लेकिन मोरारजीभाई जैसे लोगों का कहना है कि वे जो कहेंगे वही होगा। कल अगर मोरारजी मरे तो क्या उनकी जगह खाली रखी जाएगी? पहले विधवा का पुनर्विवाह नहीं होता था, लेकिन अब वैसा नहीं रहा। जर्मनी में हिटलर की तानाशाही थी। उसके अकेले की मर्जी के अनुसार उसे प्रशासन चलाना था। मोरारजी कहां कुछ अलग कह रहे हैं? ऐसे अजीब वाकये इसी देश में और काँग्रेस के जरिए ही हो सकते हैं। कई लोग इसके क्या भयानक परिणाम भुगतने पड़ेंगे इसके बारे में जानते तक नहीं हैं। काँग्रेस की वर्तमान सरकार की सुएज नहर के बारे में नेहरू की नीति की बात लीजिए। मिस्त्र के राष्ट्रपति नासेर ने उस नहर का राष्ट्रीयकरण किया है। उसका समर्थन कर नेहरू ने अपरिपक्वता का प्रदर्शन कर रहे हैं। इस मामले में महत्वपूर्ण मुद्दा यह है कि दुनिया का व्यापार जिस नहर के मार्ग से होने वाली यातायात पर निर्भर करता है उसे किसी एक राष्ट्र के नियंत्रण में होना चाहिए या अंतरराष्ट्रीय नियंत्रण में होना चाहिए? भारत का बहुत बड़ा व्यापार इसी नहर के रास्ते होता है। जवाहरलाल नेहरू कहते हैं इसीलिए सुएज नहर का राष्ट्रीयकरण कीजिए ऐसा सब लोग कहते हैं। लेकिन अगर नासेर ने भारत के पानी के जहाजों की नहर से आवाजाही पर रोक लगा दी तो सोचिए हमारी विकास योजनाओं का क्या होगा? आज नासेर आपका दोस्त है, कल अगर वह नहर से हमारा यातायात बंद कर दे तो हमारा क्या होगा?

इस देश में भक्तियोग बहुत जड़ें जमा चुका है। भारत का संविधान तैयार होने के बाद

इस बारे में मैंने पार्लियामेंट में आखिरी बार भाषण दिया था, जिसमें मैंने इसकी मीमांसा की थी। राजनीति में भक्ति को भक्तिपूजा का रूप प्राप्त होता है। उससे तानाशाही के निर्माण होने का डर होता है। इसीलिए उस वक्त मैंने इशारा किया था कि हमें बहुत अधिक जागरुक रहना होगा। चमत्कार भरी बातों को गैर-जरूरी महत्व दिया जाता है। गटर का पानी पीने वालों को गटर में ही ब्रह्म दिखाई देता है।

उसी को महासाधु कहा जाता है। हमारे देश में ऐसी ही पूर्व परंपरा चली आ रही है।

जमीन के टुकड़े इकठ्ठे करता है, कंकड-पत्थर इकट्ठा करता है, क्या है उसका नाम? (श्रोताओं में से आवाज आती है - विनोबा भावे), हां, वही विन्या। क्या इकट्ठा किया है उसने? एकतरफ नाक बहती है और वह भाषण देता है। देश की राजनीति से उसका क्या ताल्लुक? पार्लियामेंट किसलिए है? उसके लिए पार्लियामेंट क्यों नहीं कर देते? ये आदमी जगह- जगह घूम कर भूदान के लिए जमीनें इकट्ठी कर रहा है। अगर इतना ही इनका कौतुक हो तो लोग उन्हें ही प्रधानमंत्री क्यों नहीं बनाते? विनोबा भावे प्रधानमंत्री बनें और देश का जमीनों से संबंधित सवाल हल करें। वरना यह बेकार में लड़ाई करवाना छोड़ दें। असल में यह न काँग्रेस का, न भावे का काम है ऐसा हो गया है।

इस देश में बाबाओं के पीछे लोग पागल हैं। किसी आदमी ने कुछ विचित्र किया तो वह चमत्कारी पुरुष बन जाता है। लेकिन अगर किसी ने साफ कपड़े पहने, पीने के लिए साफ पानी चाहिए कहा तो उसे घमंडी कहा जाता है।

यह देश ऐसी अजीब सोच के बीच फंसा हुआ है, इसीलिए सबको जागरुक रह कर ऐसे मामलों को रोकना चाहिए।

हमने नया संविधान बनाया है। इस नए तरीके के बारे में हमें तर्जुबा नहीं है। बेहद सावधानीपूर्वक अगर उसे लागू नहीं किया गया तो इस देश का विनाश होगा। केवल सफेद टोपियों से काम नहीं चलेगा। पूरे राष्ट्र को बैठ कर राजनीति का अध्ययन करना होगा। ऐसा नहीं कि केवल जवाहरलाल नेहरू को ही अकल मिली है। जवाहरलाल से अधिक बुद्धिमान बहुत लोग हैं। मैं पांच सालों तक कैबिनेट में था। मुझे पांच सालों तक का अनुभव प्राप्त है। अब मेरे देखने लायक बाकी कुछ नहीं बचा है। हफ्ते में एक बार मैं काँग्रेस की बैठक में उपस्थित रहा करता था। जवाहरलाल को अच्छे जांच कर देखा है। उसका सिर बस पोले कद्दू की तरह है। मैं पूरी तरह से संतुष्ट हूं।

उसका सिर बस पोले कद्दू की तरह है। उससे अधिक कुछ भी नहीं। जवाहरलाल की नाक सीधी है, रंग सुंदर गोरा है, इसलिए उसका महत्व अधिक होता हो तो बात अलग है। लेकिन शारदा नाटक में बताये गए अनुसार ऐसा व्यक्ति 'लड़की को अच्छा वर

चाहिए' के लिए सुयोग्य हो सकता है। लेकिन नेता को बुद्धिमान होना चाहिए। मजबूत होना चाहिए। देश का कार्य करने वाला होना चाहिए। तो, ऐसे तो कई मिल जाएंगे! लेकिन आपको तो वही चाहिए ना! बात विषय से हट कर हो रही है ऐसा अगर किसी को लगे तो वे मुझे माफ करें। आप हो सकता है मुझे वोट ना दें। लेकिन मुझे उसकी परवाह नहीं है।

मैं अच्छी तरह जानता हूं कि इस देश की जातिगत राजनीति में हमारी कोई जगह नहीं है। राजनीतिक जीवन व्यतीत नहीं कर सकते ऐसा हमारा हाल है। जीवन के पांच साल मैंने केंद्रीय मंत्रिमंडल में गुजारे और दस साल केंद्रीय विधि मंत्रिमंडल में सदस्य बन कर रहा हूं। अब मेरे देखने लायक कुछ भी बाकी नहीं बचा है। मेरी संतुष्टि हो चुकी है। राष्ट्र की हानि ना हो इसलिए मैं यह सब करता हूं। आज काँग्रेस सत्ताधारी है। आगे वह उसी प्रकार सत्ता में रही तो इस देश में आग लगे बगैर नहीं रहेगी। इस देश का जलना तय है।[2]

आखिर स्थायी समिति के अध्यक्ष आयु. चौधरी ने धन्यवाद किया। आभार व्यक्त करते हुए आयु. चौधरी ने कहा, ''काँग्रेस की राजनीति में पर्दे के पीछे क्या-क्या और कैसी-कैसी बातें चलती हैं, काँग्रेस कैसे तानाशाही की ओर बढ़ रही है इसके बारे में हमें डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के भाषण से यकीन हो चला है। इसका विरोध करने के लिए हम सबको जागरुक रहना होगा। डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को देश कार्य करने के लिए दीर्घायु का लाभ हो ऐसी मैं कार्पोरेशन की ओर से प्रार्थना कर धन्यवाद अर्पित करने का यह कार्यक्रम संपन्न करता हूं।[3]

---

2. मी. पाहिलेले बोधिसत्व डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर : भिक्षु सुमेध, पृष्ठ 109-114
3. प्रबुद्ध भारत : अम्बेडकर बौद्ध दीक्षा विशेषांक : 27 अक्तूबर, 1956

345

बुद्धं शरणं गच्छामि!

दिनांक 16 अक्तूबर, 1956 को महाराष्ट्र के चंद्रपूर में डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के हाथों दीक्षा समारोह होना तय हुआ था। उस कार्यक्रम के लिए बाबासाहब, माईसाहब, नानकचंद रत्तू और बॅ. राजाभाऊ खोब्रागडे 16 अक्तूबर के दिन सुबह 5 बजे नागपूर से निकले। चंद्रपूर से देवाजी खोब्रागडे और ज. गो. सन्त गुरुजी पहले ही पहुंचे थे। उन्होंने बाबासाहेब के ठहरने की व्यवस्था स्थानीय सरकारी रेस्ट हाऊस में की थी। वहां उन्होंने थोड़ी देर आराम किया। उसके बाद दोपहर के समय गंतव्य सीधे चंद्रपूर के सर्किट हाऊस पर बाबासाहेब आए। तब दोपहर के चार बजे थे।

दीक्षा पंडाल में और बाहर लाखों लोग उपस्थित थे। शाम 7 बजे बाबासाहेब नियोजित धम्म दीक्षा स्थल पर पहुंचे। उनके दाहिने हाथ में लाठी थी। उनके मंच पर आते ही लाखों लोगों ने उठ कर उनका स्वागत किया। बाबासाहेब की जयकार से वातावरण गूंज उठा। लोगों के स्वागत का बाबासाहेब ने हाथ उठा कर स्वीकार किया। उसके बाद लाठी के सहारे वे कुर्सी में बैठे।

बुद्ध प्रतिमा के आगे मोमबत्ती और अगरबत्ती जलाई गई। बुद्ध प्रतिमा पर फूल चढ़ाए गए। उसके बाद कई संस्थाओं की ओर से बाबासाहेब को फूलमालाएं अर्पण की गईं। लाखों लोग दीक्षा ग्रहण करने के लिए सफेद वस्त्र धारण कर आए थे। उस समय बताया गया कि चंद्रपूर के बाजार से सफेद वस्त्र ही खत्म हो गए थे। सफेद वस्त्र धारण किए हुए महिलाओं और पुरुषों के चेहरे पर उत्साह और आनंद दिखाई दे रहा था।

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने उपस्थित लोगों को ''बुद्धं सरणं गच्छामि...'' यह त्रिसरण-पंचशील और 22 प्रतिज्ञाएं दीं। धम्मदीक्षा इस प्रकार दी गई। इस प्रकार चंद्रपूर में दो-तीन लाख लोगों ने बाबासाहेब के हाथों धम्म दीक्षा ली।

मैंने बोधिसत्व डॉ. आंबेडकर को देखा : भिक्षु सुमेध पृ. 114-116

346

बौद्ध धम्म का अंतिम उद्देश्य है दुख निवारण का मार्ग दिखाना

भारत के पूर्व कानून मंत्री डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर और आयुष्मती सविता अम्बेडकर आज दिनांक 13 नवंबर, 1956 को दोपहर दुनिया के बौद्धधर्मी लोगों की चौथी विश्व परिषद में भाग लेने के लिए काठमांडू में पधारे। काठमांडू हवाई अड्डे पर उनका भव्य स्वागत किया गया। नेपाल सरकार की ओर से चीफ ऑफ प्रोटोकॉल भिक्षु कौशल्यायन, विभिन्न संस्थाओं के प्रतिनिधि, स्वयंसेवक और महिला-पुरुषों के बड़े समूह उनके स्वागत के लिए उपस्थित था। डॉ. अम्बेडकर पति-पत्नी के हवाई जहाज से उतरते ही 'अम्बेडकर जिंदाबाद' के जोरदार नारे लगाते हुए जुलूस निकाल कर उन्हें नेपाल सरकार के 'सितल महाल' ले जाया गया। नेपाल सरकार के खास मेहमान बन कर वे वहां रहने वाले हैं।

डॉ. अम्बेडकर की सेहत अच्छी है और लगता है कि नेपाल का मौसम रास आया है। काठमांडू के अस्पृश्य समाज के प्रमुख कार्यकर्ताओं ने तथा महिला संगठनों के प्रमुखों ने आज रात डॉ. अम्बेडकर से मुलाकात कर नेपाल के अस्पृश्यों के बारे में उन्हें जानकारी दी।

दुनिया के बौद्ध धर्मीय लोगों की चौथी विश्व परिषद दिनांक 15 नवंबर से शुरू हो रही है। इस परिषद में हिस्सा लेने के लिए दुनिया के विभिन्न देशों से बौद्ध भिक्षु, भिक्षुणी, प्रतिनिधि, विशेष आमंत्रित प्रमुख व्यक्ति, ऑब्जर्वर्स आदि को मिला कर 625 लोगों को आमंत्रण भेजा गया है परिषद का आयोजन काठमांडू की धर्मोदय सभा की ओर से किया गया। डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर पति-पत्नी को नागपूर में बौद्ध धर्म की धर्म दीक्षा देने वाले कुशीनगर के 83 साल के महाथेरो भिक्षु चंद्रमणी आए हैं और उनकी तीसरी टुकड़ी में पांच लोग थे। उनका नेतृत्व भिक्षु चंद्रमणि ने ही किया था। भारत से आए भिक्षुओं में भिक्षु चंद्रमणी के अलावा वर्धा के (नागपूर) भिक्षु भदंत आनंद कौशल्यायन, वेणुवन विहार अगरतला (त्रिपुरा, कोलकाता) के भिक्षु आर्यमित्र भी आज हवाई जहाज से काठमांडू में दाखिल हुए हैं।[1]

पं. राहुल सांकृत्यायन परिषद के लिए आए थे। उन्होंने डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर से मुलाकात की। उस वक्त हुई बातों के बारे में वह लिखते हैं - ''नवंबर 1956 का वह दिन नहीं भूल सकता। जबकि नेपाल में डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने बड़े भावावेश में पर गंभीरता के साथ घोषित किया था - दो वर्ष और जी जाऊं तो भारत में पांच करोड़ बौद्धों को दिखा दूंगा। हजार अफसोस कि वह संकल्प पूरा नहीं हो सका।''[2]

विश्व बौद्धधर्मीय सम्मेलन के चौथे साल में दुनिया के चौंतीस राष्ट्रों ने परिषद में हिस्सा लिया है और उनमें प्रमुख हैं बर्मा, कनाडा, सिलोन, चीन, जेकोस्लोवाकिया, इस्थोनिया,

---

1. प्रबुद्ध भारत, 24 नवंबर, 1956
2. आधुनिक संसार का महान व्यक्तित्व - डॉ. अम्बेडकर : महापंडित राहुल सांकृत्यायन, पृष्ठ 8

फार्मोसा, फ्रान्स, जर्मनी, हाँगकाँग, हंगरी, भारत, इंडोनेशिया, इटली, जापान, कोरिया, लदाख, लैटिविया, लाओस, मलाया, नेपाल, पाकिस्तान, पेनांग, फिलिपीन्स, स्वीडन, सिक्कीम, सिंगापूर, थाइलैंड, तिब्बत, युनाइटेड किंगडम, यूएसए, यूएसएसआर और उन देशों के प्रतिनिधि, विशेष आमंत्रित मेहमान, बौद्ध भिक्षु, बौद्ध भिक्षुणियां, ऑब्जर्वर्स आदि को मिला कर करीब 400 आमंत्रित विदेशी प्रतिनिधि उपस्थित थे। काठमांडू के भव्य तुडखेल ग्राऊंड पर यह समारोह होना था। डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने आज भारतीय ढंग के कपडे पहने थे- वुलन की पैंट, बंद गले का कोट, और सिर पर बफ रंग की कढ़ाई वाली टोपी।

बौद्ध धर्मीय लोगों की चौथी विश्व परिषद सफल हो की कामना व्यक्त करने वाले तीस देशों ने और संस्थाओं ने अपने संदेश भेजे थे। इन संदेशों के पढ़ने के बाद डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का भाषण हुआ। उन्होंने अपने भाषण में कहा-

मैं अपने देश से या अपनी संस्था की ओर से संदेश लेकर नहीं आया हूं। इस देश में - नेपाल में, बुद्ध का जन्म हुआ। लेकिन 2500 सालों के बाद बौद्ध धर्म गायब हो गया है। बौद्ध धर्म का वृक्ष अभी है। उसके पत्ते सूख गए हैं लेकिन उसकी जड़ सूखी नहीं है। मुझे यकीन है कि उसमें पानी देने से वह बढ़ेगा। इसीलिए मैं यहां संदेश लेकर नहीं आया हूं। लेकिन मैंने बौद्ध धर्म क्यों स्वीकारा यह मैं आपको बताना चाहता हूं। क्योंकि, उसमें समता, बंधुभाव और आजादी है। अन्य धर्मों में ईश्वर और आत्मा के अलावा कुछ नहीं। मनुष्यमात्र की उन्नति के लिए कारण बनने वाले इन तीन कारणों का अन्य धर्मों में समावेश नहीं किया गया है। दुनिया में दुख भरा है इस तथ्य पर बौद्ध धर्म का आधार टिका हुआ है। ईश्वर और आत्मा पर नहीं। दुनिया में मनुष्य दुखी है इस दर्शन पर वह आधारित है। इतना ही नहीं, उस दुख का निवारण करना और उसके निवारण का मार्ग दिखाना धम्म का अंतिम लक्ष्य है ऐसा भगवान ने बताया है। जो धर्म इस कसौटी पर नहीं उतरेगा उसे धर्म नहीं कहा जा सकता ऐसा भगवान ने अपने पहले सूत्र में - धम्मचक्र प्रवर्तन में- बताया है। उनके अलावा इस प्रकार किसी धर्म के संस्थापक ने बताया नहीं है। इस कारण मैंने बौद्ध धर्म स्वीकारा है। दुख निवारण के लिए बुद्‌ध ने प्रज्ञा पारमिता बताई है।

उनके बाद नेपाल के प्रधानमंत्री आयु. टंका प्रसाद आचार्य ने समारोह में आए मेहमानों का स्वागत भाषण किया। उनके बाद गवर्नमेंट कमेटी के अध्यक्ष और नेपाल महाराज के प्रमुख निजी सचिव आयु. लोक दर्शन का स्वागत भाषण हुआ। उनके बाद नेपाल के राजा वीर विक्रम सहदेव का नाम अध्यक्ष पद के लिए और भिक्षु चंद्रमणी का नाम धर्मशासक पद के लिए घोषित किया गया। उसके बाद नेपाल के राजा का भाषण हुआ।

सभा के आखिर में महाथेरो भिक्षु चंद्रमणी का भाषण हुआ। आखिर नेपाल के राजासाहब ने सबके प्रति आभार प्रकट किया और बैंड पर नेपाल का राष्ट्रगीत बजाने के बाद उस दिन की सभा का कामकाज सम्पन्न हुआ।[3]

3. प्रबुद्ध भारत, 24 नवंबर 1956

347

बुद्ध या कार्ल मार्क्स

"काठमांडू की विश्व बौद्ध परिषद के समापन से पूर्व डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का विभिन्न देशों से आए प्रतिनिधियों को सम्बोधित करने हेतु विशेष भाषण 20 नवंबर, 1956 के दिन रखा गया था। भाषण नेपाल के वैभवशाली राजदरबार में था। भारत में लोप होने के बाद कई सालों तक बौद्ध धर्म नेपाल में अपने पूरे चरम पर था, लेकिन आज वहां मनुप्रणित विषमता पर आधारित हिंदू धर्म कानूनी तौर पर जारी रखा गया है। ऐसे देश में डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर द्वारा बौद्ध धर्म की श्रेष्ठता के बारे में भाषण देना यह एक अपूर्व क्रांतिकारी घटना थी। इस भाषण में बौद्ध धर्म की ओर देखने का अपना मौलिक दृष्टिकोण उन्होंने स्पष्ट किया।''[१]

दिनांक 20 नवंबर, 1956 के दिन विश्व बौद्ध परिषद के आखिरी दिन विश्व बौद्ध परिषद के अध्यक्ष डॉ. जी. पी. मलालशेखर (सिलोन) ने बाबासाहेब से विनती की कि वे 'बौद्ध धम्म में अहिंसा का स्थान' विषय पर भाषण दें। डॉ. बाबासाहेब ने उनकी विनती स्वीकार की लेकिन विश्व बौद्ध परिषद के बहुसंख्य प्रतिनिधियों ने आग्रह किया कि बाबासाहेब बुद्ध या कार्ल मार्क्स विषय पर भाषण दें। बाबासाहेब ने इसी विषय पर भाषण देने की बात मानी। विश्व बौद्ध परिषद के समापन समारोह का आरंभ दोपहर 3 बजे होने वाला था। तदनुसार कुछ समय पूर्व बाबासाहेब निर्धारित स्थान पर पहुंचे। बाबासाहेब के आते ही विश्व बौद्ध परिषद के पूर्व अध्यक्ष और ब्रह्मदेश सुप्रीम कोर्ट के मुख्य न्यायाधीश ऊ चॉन टून और उनकी पत्नी बाबासाहेब को आदरपूर्वक भव्य मंच की ओर ले गए। बाबासाहेब को सभी उपस्थित प्रतिनिधियों ने सम्मानपूर्वक अभिवादत किया बाबासाहेब कुर्सी पर बैठे। मंच पर नेपाल के राजा महेंद्र वीर विक्रम सहदेव एक सजाई गई कुर्सी पर विराजमान हुए। पड़ोस में पूज्य चंद्रमणि महास्थविर, जी. पी. मलालशेखर, पूज्य अमृतानंद महास्थविर और ऊ चान टून ने स्थान ग्रहण किया। पहले पूज्य चंद्रमणि ने उपस्थित महानुभावों त्रिशरण और पंचशील दिया। उसके बाद विश्व बौद्ध परिषद के अध्यक्ष डॉ. जी. पी. मलालशेखर ने कहा–

''आज की विश्व बौद्ध परिषद में भगवान बुद्ध की भारत भूमि से एक महान पुरुष आया है। उसका नाम है डॉ. बी. आर. अम्बेडकर (तालियों की बरसात) उन्होंने नागपूर में पांच लाख दलित लोगों को बौद्ध धम्म की दीक्षा देकर महान धम्मक्रांति की है। आज इस विश्व बौद्ध परिषद में संपूर्ण विश्व के बौद्ध प्रतिनिधियों की ओर से मैं उनका हार्दिक

1. प्रबुद्ध भारत : 3 अगस्त, 1956

स्वागत करता हूं।'' इसके बाद उन्होंने रंगबिरंगी फूलों की बहुत बड़ी माला बाबासाहेब के गले में पहनाई। बाद में बाबासाहेब से भाषण देने की विनती की गई।

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर खड़े हुए और एक बार फिर तालियों की गड़गड़ाहट हुई। सविताबाई बाबासाहेब के पीछे खड़ी हुईं। कैमरों ने फटाफट तस्वीरें खींचीं और फिर धीरगंभीर आवाज में बाबासाहेब ने 'बुद्ध या कार्ल मार्क्स' इस विषय पर अपना ऐतिहासिक भाषण दिया-

उन्होंने कहा-

''सम्माननीय अध्यक्ष महोदय आदरणीय भिक्षुगण और सज्जनों,

विश्व बौद्ध परिषद के बहाने नेपाल में आने के बाद भी परिषद के कामकाज में प्रतिनिधि की तरह भाग नहीं ले पाया इसके लिए मैं बहुत क्षमाप्रार्थी हूं। आज मैं यहां उपस्थित तो हूं लेकिन शारीरिक तौर पर मेरे बीमार होने के कारण परिषद के कामकाज की गतिविधियाँ और परेशानियाँ मुझसे बर्दाश्त नहीं होने वाली हैं इसका अहसास प्रतिनिधियों को होगा इसका मुझे यकीन है। परिषद का अनादर करने के लिए मैं गैरहाजिर नहीं रहा। अपने स्वास्थ्य के कारण मैं परिषद के कामकाजादि कर्तव्यों में पूरा नहीं उतर पाऊंगा इसी कारण मैं उपस्थित नहीं रह सका। शायद परिषद में गैरहाजिर रहने के कारण हुए नुकसान को भर देने के लिए ही आज भरी दुपहरी में भाषण के लिए मुझसे कहा गया है। भाषण के लिए मैंने हामी तो भरी है लेकिन यहां उपस्थित होने के बाद ही मुझ पर यह जिम्मेदारी अचानक सौंपी गई है। आप लोगों के सामने भाषण देना पड़ेगा इसका मुझे बिल्कुल पूर्वाभास नहीं था। मैं किस विषय पर बोलूंगा इस बारे में पूछे जाने पर 'बौद्ध धम्म की अहिंसा' विषय मैंने सुझाया था। लेकिन मुझसे कहा गया है कि परिषद के बहुसंख्य लोगों को लगता है कि सरसरी तौर पर मैंने जिस विषय का जिक्र किया था उसी विषय पर यानी 'बौद्ध धम्म और साम्यवाद' पर मुझे बोलना चाहिए। इसलिए भाषण का विषय बदलने की भले मैंने अनुमति दी हो लेकिन ईमानदारी के साथ मुझे यह बताना पड़ेगा कि अचानक यह विषय दिए जाने के कारण इतने महान और विस्तृत विषय पर बोलने की मेरी कोई तैयारी नहीं है। यह विषय केवल महान और विस्तृत ही नहीं है वरन् बेहद जटिल भी है। इस जटिल विषय के दबाव में आधे से अधिक दुनिया फंसी है। इतना ही नहीं वरन् बौद्ध राष्ट्रों के युवा छात्र भी इस विषय से अभिभूत हो चुके हैं। यह दूसरा मसला मुझे बेहद चिंताजनक लगता है।

साम्यवाद की जीवनप्रणाली जो बताती है उससे बौद्ध धम्म द्वारा बताई गई जीवनशैली बेहतर है ऐसी प्रशंसा जब तक बौद्ध राष्ट्र की युवा पीढ़ी नहीं करती तब तक यह नहीं कहा जा सकता कि बौद्ध धर्म का भविष्य उज्जवल है। बौद्ध धर्म की श्रद्धा दो पीढ़ियों तक भी नहीं टिक सकती। इसीलिए जिनका बौद्ध धर्म पर दृढ़ विश्वास है उन्हें युवा पीढ़ी को बौद्ध धर्म की महत्ता के बारे में यकीन दिलाना होगा। साम्यवाद का पर्याय बौद्ध धर्म

ही है, बल्कि बौद्ध धम्म ही एकमात्र सर्वोत्तम जीवनमार्ग है यह बताना बेहद आवश्यक है। इस बात का यकीन दिलाने के बाद ही बौद्ध धर्म के बने रहने की उम्मीद की जा सकती है। हमें एक और बात ध्यान में रखनी होगी कि यूरोप के बहुसंख्य लोग और एशिया के बहुसंख्य युवाओं का यह नजरिया है कि आज की दुनिया में केवल कार्ल मार्क्स ही पूजनीय महापुरुष या दूत है। साथ ही, वे ऐसा विचार भी प्रकट करते हैं कि बौद्ध भिक्खु संघ का बहुत बड़ा हिस्सा बेकार ही नहीं तो एक बहुत बड़ा गम्भीर संकट है। इस प्रकार की मानसिकता किस चीज का लक्षण है इस बात की ओर भिक्षुओं को ध्यान देना होगा। उसकी पृष्ठभूमि को उन्हें समझना होगा। कार्ल मार्क्स के साथ तुलना की जा सके इस प्रकार उन्हें अपने आप को ढाल लेने की पूरी-पूरी कोशिश करनी होगी। तभी बौद्ध धर्म की श्रेष्ठता साबित की जा सकती है।

इस भूमिका के बाद मैं आपको बौद्ध दर्शन और मार्क्सवाद या साम्यवाद के प्रमुख विशिष्ट मुद्दों के बारे में विस्तार से बताऊंगा। इसके तहत बुद्ध-दर्शन और मार्क्स दर्शन के आदर्शों में समानता और भेद के बारे में मैं आपको बताऊंगा। जीवन के उद्देश्यों की पूर्ति करने में साम्यवादी जीवनमार्ग से अधिक बौद्ध जीवनमार्ग चिरंतन हो पाएगा अथवा नहीं इसका भी मैं विस्तार से विवेचन करूंगा। जो जीवनमार्ग अल्पकालिक है, वह जंगलों में भटकाने वाला हो सकता है या अराजकता की ओर ले जाने वाला हो सकता है। ऐसे जीवनमार्ग का पीछा करना उचित नहीं होगा।

लेकिन जिस मार्ग का भरोसा करने के लिए आपसे कहा जाए वह अगर मंद गति वाला हो और बहुत अधिक अंतर वाला हो, लेकिन भरोसेलायक, सुरक्षित और मजबूत बुनियाद वाला हो; आपके आदर्श सिद्धांतों के लिए सहायक हो, आपके जीवन को स्थायीत्व देने वाला हो तो उसी मार्ग को अपनाना योग्य रहेगा।

कम दूरी वाला, 'शॉर्टकट' के तौर पर पहचाने जाने वाले कंटीले रास्ते से मंद गति वाला, लंबी दूरी तय कराने वाले मार्ग पर चलते रहना ही योग्य साबित होगा। जीवन के शॉर्टकट हमेशा जोखिम भरे और धोखा देने वाले होते हैं। केवल धोखेबाज नहीं, महा धोखेबाज होते हैं यह बात हमेशा ध्यान में रखनी होगी।

अब मैं अपने मुख्य विषय पर आता हूं। मार्क्स की साम्यवादी विचारधारा में आखिर है क्या? उसका बुनियादी दर्शन क्या है? इसलिए साम्यवादी विचारधारा का मूल आरंभ यह है कि इस दुनिया में शोषण हो रहा है। अमीरों द्वारा गरीबों का शोषण हो रहा है। क्योंकि अमीरों को संपत्ति की लालसा है। वे अधिकाधिक धन-संपत्ति चाहते हैं और इसके लिए वे जनसमुदाय को गुलाम बनाते जा रहे हैं। इस गुलामी के कारण आखिर यातना, दुख, गरीबी का निर्माण होगा। यही मार्क्सवाद के प्रारंभ की जड़ है। मार्क्स ने शोषण शब्द का प्रयोग किया है। इस शोषण को समाप्त करने के लिए मार्क्स ने क्या उपाय बताए है? जिनका

शोषण होता है उस एक वर्ग का दीनता और दुख नष्ट करने के लिए मार्क्स का कहना है कि निजी संपत्ति पर प्रतिबंध लगाया जाना चाहिए। व्यक्तिगत रूप से किसी की भी सम्पत्ति नहीं होनी चाहिए या संपत्ति इकट्ठा नहीं करनी चाहिए। कार्ल मार्क्स की तकनीकी भाषा में बताना हो तो कहा जा सकता है कि, कामगारों के या मजदूरों के परिश्रम से पैदा होने वाले अतिरिक्त धन से खुद की तिजोरी भरने वाला निजी संपत्ति का मालिक बनता है। मजदूर अपने गाढ़े परिश्रम से उत्पादन बढ़ाता है और अतिरिक्त धन प्राप्त करा देता है, लेकिन इस अतिरिक्त धन पर उन कामगारों का कोई अधिकार नहीं होता। उन्हें उसमें से कोई हिस्सा नहीं मिलता। सारा अतिरिक्त धन मालिक ही हड़प लेता है। इस बात को ध्यान में रखते हुए कार्ल मार्क्स ने पूछा कि कामगारों द्वारा अपनी श्रमशक्ति के बल पर निर्माण किए अधिक उत्पादित धन पर मालिक क्यों हक़ जताए? मार्क्स के मतानुसार उस संपत्ति पर केवल राज्य का ही अधिकार होना चाहिए और यह राज्य कामगारों का होना चाहिए। इसी कल्पना के आधार पर मजदूर अथवा कामगार वर्ग की तानाशाही का सिद्धांत मार्क्स ने स्थापित किया। मार्क्स द्वारा जो सिद्धांत स्थापित किए गए हैं, उनमें से यह तीसरा सिद्धांत है। मार्क्स के अनुसार मजदूर वर्ग की तानाशाही का मतलब है कि, प्रशासन शोषणकर्ताओं का नहीं बल्कि जिनका शोषण होता है उन मजदूरों का होना चाहिए। कार्ल मार्क्स के मूलभूत सिद्धांत ऐसे ही हैं। रूस में इन्हीं सिद्धांतों पर आधारित साम्यवाद का प्रशासन लागू किया गया है। इस सिद्धांत में बाद में और बातें भी जुड़ती रही हैं और अभी भी जोड़ी जाती रही हैं। हालांकि, बुनियादी सिद्धांत पहले जैसे बताए हैं वही हैं।

अब मैं पल भर के लिए बौद्ध दर्शन की ओर मुड़ता हूं। क्योंकि कार्ल मार्क्स द्वारा उपस्थित किए गए बुनियादी सिद्धांतों के बारे में बुद्ध का कुछ कहना है क्या यह देखना जरुरी है। मार्क्स ने गरीबी के बारे में अथवा मजदूरों के शोषण से संबंधित विषय उपस्थित करके अपने मार्क्सवाद या साम्यवाद का सिद्धांत बनाया है। बुद्ध क्या कहता है? उसने कहां से शुरुआत की है? बौद्ध दर्शन या बौद्ध धम्म की इमारत कौन-सी बुनियाद पर खड़ी है? कार्ल मार्क्स की तरह बुद्ध ने भी 2500 वर्ष पूर्व यानी कार्ल मार्क्स से कई सालों पूर्व यही बात कही है। बुद्ध ने कहा - इस दुनिया में दुख है, बुद्ध द्वारा कार्ल मार्क्स जैसा शोषण शब्द का इस्तेमाल नहीं किया गया। लेकिन शोषण के कारण जिस दुख, दीनता का निर्माण होता है उसी दुख के बारे में जानकारी देकर बुद्ध ने अपने दर्शन की, अपने धम्म की स्थापना की। दुनिया में दुख है यह पूरे विश्व द्वारा माना गया सच है यह कह कर बुद्ध ने दुख की अलग-अलग अर्थों में परिभाषा दी। बुद्ध ने दुख यानी पुनर्जन्म, दुख यानी जीवन-मृत्यु का चक्र भी कहा है। हालांकि, मैं इस अर्थ से सहमत नहीं हूं। दुख शब्द का इस्तेमाल दरिद्रता, गरीबी के अर्थ में भी किए जाने के उदाहरण बौद्ध साहित्य में मिलते हैं। इसलिए बौद्ध दर्शन की बुनियाद और कार्ल मार्क्स के दर्शन की बुनियाद में कोई फर्क दिखाई नहीं देता। इसका मतलब यह है कि कार्ल मार्क्स द्वारा स्थापित किया गया

सिद्धांत भी नया नहीं है। जब जीवन की मौलिक बुनियाद ढूंढने के लिए किसी भी बौद्ध बंधु को कार्ल मार्क्स का दरवाजा ठोंकने की जरूरत नहीं है। पहले प्रवचन के उपदेश में ही बुद्ध द्वारा यह बुनियाद पहले ही से बढ़िया ढंग से स्थापित कर रखी गई है। उनका यह प्रवचन बौद्ध साहित्य में 'धम्मचक्रप्रवर्तन सुत्त' के नाम से जाना जाता है। जिन लोगों के मन पर कार्ल मार्क्स के विचारों की पकड़ है, उनसे मैं बस यही कहना चाहता हूं कि, आप 'धम्मचक्रप्रवर्तन' सुत्त का अध्ययन कीजिए। बुद्ध ने क्या कहा है यह समझिए। मुझे यकीन है कि आपको उसमें मानवीय जीवन संग्राम के बारे में जवाब जरूर मिलेगा। बुद्ध ने अपने दर्शन या धम्म का निर्माण ईश्वर, आत्मा अथवा ऐसी ही न समझ में आने वाली मानवीय बातों पर नहीं की है। मानव के वास्तविक जीवन की ओर ही अंगुलिनिर्देश कर अपना पूरा दर्शन विषद किया है। मनुष्य यातना, दुख से परेशान होता है। मानवी जीवन की यह वास्तिकता है। केवल मार्क्स ने ही इन बातों का विवेचन किया हो ऐसी बात नहीं है। उसके जन्म से 2000 वर्ष पूर्व बुद्‌ध ने ये बातें जानीं और उन पर उपाय भी बताए। यह विशेष बात है। आपको यह सब जानना चाहिए। इसी प्रकार आप जान जाएंगे कि, गरीबी के बारे में बुद्ध के और कार्ल मार्क्स के दर्शन में कमाल की समानता है।

मार्क्स के विचारों के अनुसार मजदूरों के शोषण का विरोध करने के लिए उत्पादन से प्राप्त होने वाली संपत्ति राज्य को अपने कब्जे में लेनी चाहिए। राज्य को सभी जमीनों का मालिक होना चाहिए। सभी उद्योगों पर राज्य का ही अधिकार हो। इससे निजी मालिक हुकूमत कायम नहीं कर पाएंगे। इसी प्रकार मजदूरों की श्रमशक्ति से निर्मित उत्पादों पर मिलने वाले अतिरिक्त मुनाफे से मालिक को नहीं मिले, जिससे कि वह मजदूर को लूट न सके। मजदूरों के शोषण के संदर्भ में कार्ल मार्क्स के विचार इस प्रकार हैं।

आइए देखते हैं कि निजी मालिकाना हकों के संदर्भ में बुद्ध के क्या विचार हैं। इसके लिए हमें बौद्ध भिक्षु संघ के बारे में सोचना पड़ेगा और बुद्ध द्वारा भिक्षुओं के लिए लागू किए जीवन-नियमों के बारे में बारीकी से अध्ययन करना होगा। बुद्ध ने भिक्षुओं के लिए क्या नियम बताए हैं? बुद्ध ने बताया है कि किसी भी बौद्ध भिक्षु को निजी संपत्ति नहीं बनानी या रखनी चाहिए। असल में सभी भिक्षुओं के पास अपनी सम्पत्ति न होने के बारे में कहा है इसके बावजूद आज आपको कुछ अपवादस्वरूप उदाहरण मिलेंगे। कुछ देशों के भिक्षु वर्गों में अपनी संपत्ति होने के उदाहरण खुद मैंने देखे हैं। लेकिन बहुसंख्यक भिक्षुओं के पास अपनी कोई संपत्ति नहीं है। संपत्ति रखने के मामले में बौद्ध धम्म के नियम जितने कठोर हैं उतने कठोर रूस के साम्यवादियों द्वारा बनाए गए नियम भी नहीं होंगे। यह विषय आज तक किसी ने विचारार्थ नहीं लिया है और अगर कभी लिया भी है तो किसी निर्णय तक नहीं पहुंचा विषय है इसीलिए मैंने आज यही विषय चुना है ।

भिक्षु संघ बनाने के पीछे बुद्ध का क्या उद्देश्य रहा होगा? भिक्षुओं का संघ हो ऐसा

उसे क्यों लगा होगा? इतिहास पर नजर डालें तो हमें पता चलेगा कि बुद्ध जब अपने धम्म का प्रचार-प्रसार कर रहा था तब जैन साधु कहे जाने वाले लोग यहां-वहां घूमा करते थे। वे बुद्ध के पहले से ही यहां-वहां घूमते रहे थे। जैन साधु शब्द का अर्थ निराश्रित होता है। यानी जिनके पास घर-बार नहीं है ऐसे लोग। आर्ययुग में आर्यों की अलग-अलग टोलियां अन्य जंगली टोलियों की तरह आपस में लड़ रही थीं। जीतने वाली टोली स्थायी रूप से बस जाती। हारने वालों में से कुछ टोलियां अपना घर-बार, संपत्ति छोड़ कर केवल घुमक्कड़ी करती रहतीं। स्थायी जीवन उन्होंने कभी नहीं स्वीकारा। ऐसे ही घुमंतु लोगों को बाद में जैन साधु कहा गया। बुद्ध ने इस प्रकार घूमते रहने वाले जैन साधु लोगों को इकठ्ठा कर उनका संघ बनाने का तथा उनके घुमन्तु जीवन को स्थिर बनाने का बड़ा काम किया। जिन नियमों के आधार से ऐसे जैन साधु को बौद्ध बनाया गया उन सभी नियमों का जिक्र हमें 'विनयपिटक' में मिलता है। जैन साधु बौद्ध भिक्षु बने और विनयपिटक में बताए गए नियमों का कड़ाई से पालन करते हुए जीवन यापन करने लगे। उन नियमों के अनुसार भिक्षुओं को संपत्ति या वस्तु रखने की इजाजत नहीं थी। भिक्षुओं को केवल आगे गिनाई गई सात वस्तुएं रखने की ही इजाजत थी - एक उस्तरा, एक लोटा, एक भिक्षापात्र, तीन चीवर, और एक सुई। साम्यवाद के मूल आशय के अनुसार निजी संपत्ति नहीं होनी चाहिए यह नियम अगर था तो विनयपिटक में बौद्ध भिक्षुओं के लिए बताए गए इतने कठोर नियमों जैसे नियम क्या और कहीं होंगे? मेरी नजर में तो ऐसे कठोर नियम अन्यत्र कहीं नहीं आए। इसीलिए निजी सम्पत्ति न रखने के मामले में साम्यवादी मतप्रण ाली का आज के युवक को आकर्षण लगता हो तो उसे निश्चित तौर पर बौद्ध दर्शन का विनयपिटक पढ़ना चाहिए। उसे जिस चीज की खोज होगी वह उसमें उसे निश्चित तौर पर मिलेगी। लेकिन सवाल यह पैदा होता है कि निजी संपत्ति न रखने का नियम पूरे समाज पर कैसे लागू किया जा सकता है? स्पष्ट है कि ये सारी बातें समय, स्थितियां और मानवीय जीवन के विकास पर निर्भर करती हैं। सैद्धांतिक तौर पर विचार करें तो क्या निजी संपत्ति ले लेना गलत है? हो सकता है किसी को निजी संपत्ति रखने की इच्छा हो तो क्या बौद्ध धर्म आड़े आएगा? निश्चित तौर पर नहीं। क्योंकि बौद्ध भिक्षु संघ बनाते समय बुद्ध ने कुछ रियायतें दी हैं। जरूरतें पूरी करने वाली संपत्ति रखने के लिए बुद्ध ने मना नहीं किया है। इस बात पर खास तौर से ध्यान देना जरुरी है।

अब इसी बात के दूसरे मुद्दों की ओर हम मुड़ते हैं। साम्यवाद लाने के लिए कार्ल मार्क्स या साम्यवादी लोग किस मार्ग का अनुसरण करने के लिए कहते हैं? यह सवाल बहुत महत्वपूर्ण है। साम्यवाद (यानी दुख के अस्तित्व को मानते हुए निजी संपत्ति को नष्ट करने का तत्व) को स्थापित करने के लिए साम्यवादियों का बताया मार्ग धर्म के आचरण के विरुद्ध है। विरोधकों की हत्या करने का मार्ग है। और इसी में बुद्ध और कार्ल मार्क्स के उपायों में मौलिक फर्क नजर आता है। बौद्ध दर्शन या बौद्ध धम्म स्थापित करने के

लिए लोगों को मनाने का मार्ग ही सही होने की बात बुद्ध ने कही है। नैतिक शिक्षा और प्रेम से लोगों के मन जीतने पर बुद्ध जोर देते हैं। विरोधियों को जोर-जबरदस्ती से या सत्ता के सहारे वह नहीं जीतना चाहते बल्कि प्रेम और अपनेपन से जीतना चाहते हैं।

इस बुनियादी फर्क को अगर जान लें तो पता चलेगा कि दर्शन को प्रस्थापित करने के लिए बुद्ध को हिंसा या खूनखराबा स्वीकार नहीं। साम्यवादियों को लेकिन बलात मार्ग ही पसंद है। इस मार्ग से साम्यवादियों को तुरंत फलप्राप्ति होती है या, उनके उद्देश्यों को पाने में उन्हें तुरंत सफलता मिलती है, इसमें कोई दो राय नहीं। क्योंकि आप जब इंसान को निर्मूल करने के दर्शन के सहारे ही आगे बढ़ते हो तब तुम्हारा विरोध या प्रतिकार करने के लिए कोई बचता ही नहीं अर्थात्, ऐसी सफलता केवल दिखावे की होती है। मार्क्सवाद की तुलना में बौद्ध धर्म का मार्ग मंदगति वाला और लंबी दूरी वाला है। लोगों को यह ऊबाऊ लगने की भी संभावना है। क्योंकि इस मार्ग से सफलता बड़ी देरी से प्राप्त होती है। लेकिन यह बात भी सच है कि मार्ग सुरक्षित है। आपकी जिंदगी का भरोसा है। इसीलिए आदर्शों के मार्ग पर चलते हुए बुद्ध के बताए सुरक्षित मार्ग पर आगे बढ़ना ही हितकारी होगा।

अपने साम्यवादी मित्रों से मैं हमेशा दो-तीन सवालों के जवाब मांगता रहता हूं। लेकिन मैं ईमानदारी से बताता हूं कि मेरे सवालों के जवाब उनके पास नहीं हैं। मजदूर वर्ग की तानाशाही वे हमेशा रक्तपात से स्थापित करना चाहते हैं। राजनीतिक सत्ता का वर्चस्व वाले पक्ष को वे नेस्तनाबूत करना चाहते हैं। उनके मतानुसार लोकसभा में प्रतिनिधित्व हो नहीं सकता। मताधिकार नहीं हो सकता। वे राज्य की एकतंत्री महाप्रज्ञा बन कर रहना चाहते हैं। सत्ता या अधिकारों का बंटवारा किए बगैर राज्य करना है। इसलिए मैं उनसे यह सवाल करता हूं कि क्या तानाशाही लोगों पर शासन करने का सही तरीका है? इस पर उनका जवाब होता है कि उन्हें तानाशाही कभी भी स्वीकार नहीं थी। मैं उनसे फिर पूछता हूं कि वे मजदूरों की तानाशाही क्यों सहें? इस पर उनका जवाब होता है कि, चूंकि यह निर्णायक दौर है इसलिए मजदूरों की तानाशाही का निर्माण होना आवश्यक है।

मजदूर वर्ग की तानाशाही बने हुए बगैर स्थापित पूंजीपतियों की तथा अतिरिक्त धन हड़पने वाले मालिकों का खात्मा नहीं होगा। उनसे जब पूछा जाता है कि यह निर्णायक समय- बीस, चालीस या पचास सालों तक? कब तक चलेगा? इसका उनके पास कोई ठोस जवाब नहीं है। वे यूंही ढुलमुल-सा जवाब देते हैं कि साम्यवाद के स्थिर होने के बाद मजदूरवर्ग की तानाशाही अपने आप खत्म हो जाएगी। ठीक है, मान लेते हैं कि वह अपने आप समाप्त हो गई। तो फिर आगे क्या? उसकी जगह कौन लेगा? इस सवाल का उनके पास कोई जवाब नहीं है।

इस संदर्भ में हम जब बुद्ध की तरफ मुड़ते हैं और उसके धम्म संबंधी प्रश्न उठाते हैं तब वह क्या कहता है? बुद्ध ने दुनिया को एक बहुत महान बात बताई। बुद्ध की

शिक्षा के अनुसार मनुष्य की मनोधारणा में बदलाव आए बगैर दुनिया में सुधार या उन्नति संभव नहीं। इंसान की मनोधारणा बदले और उसके अनुसार वह साम्यवादी विचारधारा को स्वीकार कर उस पर निष्ठा के साथ प्रेम करे, उसे अमल में लाने की कोशिश करे तो निश्चित रूप से उसे स्थायी स्वरूप प्राप्त हो सकता है। ऐसी स्थितियों में इंसान को कायदे–कानून की बेड़ियों में जकड़ने के लिए सैनिक या पुलिस कार्रवाई की षरूरत ही नहीं पड़ेगी। ऐसा क्यों होगा? इसका जवाब यह है कि, बुद्ध जब नैतिक व्यवहार और सही रास्ते पर चलने के लिए आपके मन को तैयार करेंगे तो आपका मन हमेशा के लिए सतमार्ग पर चलने वाला बनेगा, तब किसी बाहरी शक्ति की आपको सही मार्ग पर ठेलते रहने की जरूरत ही नहीं पड़ेगी।

साम्यवाद के निराकरण के संदर्भ में जो विचार हैं वे जोर–जबर्दस्ती पर आधारित हैं। कल्पना कीजिए कि कल अगर रूस की साम्यवादी तानाशाही नाकाम रही या ऐसे लक्षण दिखाई देने लगे तो क्या होगा? साम्यवाद की स्थिति क्या होगी यह जानने की उत्सुकता मुझे रहेगी। मेरी कल्पना के अनुसार राज्य की मालिकाना हक वाली संपत्ति पर अधिकार करने के लिए रूसी लोगों के बीच खूनी लडाइयां होंगी। यह अपरिहार्य परिणति रहेगी। क्योंकि रूस के लोगों ने स्वेच्छा से या सहज रूप में साम्यवाद को नहीं स्वीकारा है। उन पर वह जबरदस्ती लादा गया है। साम्यवाद को स्थापित करते समय उन्हें यह कह कर डराया गया कि अगर वे साम्यवादी विचार प्रणाली नहीं मानेंगे तो उन्हें फांसी पर लटकाया जाएगा और इसीलिए वे अब तक साम्यवाद को चुपचाप झेल रहे हैं। ध्यान में रखना होगा कि डर के कारण कोई विचारधारा जड़ें नहीं पकड़ सकती। कोई विचारधारा ग्रहण की गई, लेकिन समयान्तर से उसकी धारणाशक्ति नष्ट हुई तो उस विचारधारा का आगे क्या होगा इस सवाल का जब तक कोई जवाब नहीं दिया जाएगा तब तक वह लोगों के मन में जगह नहीं पा सकती। मनोभूमिका अगर नहीं बनाई जाए तो हमेशा सत्ता की जरूरत महसूस होगी। इसी कारण हमेशा मुझे बुद्ध का आकर्षण लगता रहा है। बुद्ध की विचारधारा प्रजातंत्र की विचारधारा है।

अजातशत्रु वज्जी को जीतना चाहते थे। यह बताने के लिए अजातशत्रु का सेनापति बुद्ध के पास आया। बुद्ध ने उससे कहा कि वज्जी जब तक अपनी पुरानी पद्धति के अनुसार राज्य चला रहे हैं तब तक उन्हें परास्त करना संभव नहीं। बुद्ध ने वज्जी की पद्धति का स्पष्टीकरण क्यों नहीं किया यह पता नहीं चलता है। लेकिन जिस बारे में वह बोले वह वज्जियों की प्रजातांत्रिक और गणतंत्रप्रधान राज्यशासन के बारे में ही कहा इसमें कोई शक नहीं। इसीलिए बुद्ध ने कहा कि, वज्जी जब तक अपने पुराने तरीकों पर चलेंगे तब तक वे कभी भी परास्त नहीं होंगे। इससे पता चलता है कि बुद्ध प्रजातंत्र के बड़े समर्थक थे।

अध्यक्ष महोदय अगर इजाजत दें तो मैं आपका ध्यान इसी बात की ओर दिलाना चाहता हूं कि मैं राजनीति शास्त्र का छात्र था, मैं अर्थशास्त्र का भी छात्र था, इतना ही नहीं तो मैं अर्थशास्त्र का अध्यापक भी रहा। मेरे जीवन का बड़ा हिस्सा कार्ल मार्क्स, साम्यवाद और अन्य कई विषयों का अध्ययन करने में बीता है। साथ ही, बुद्ध के धम्म के बारे में जानने में भी मैंने अपने जीवन का बहुत सारा समय व्यतीत किया है। बौद्ध दर्शन और और मार्क्सवाद का जब मैंने तुलनात्मक अध्ययन किया तब मैं इसी निष्कर्ष तक पहुंचा कि दुनिया की एक बहुत बड़ी समस्या के बारे में - यानी दुनिया में दुख है और उसके निवारणार्थ एक निश्चित उपाय है इस बारे में - बुद्ध का मार्ग ही सर्वोत्तम मार्ग है। सुरक्षित और मजबूत भी है। इसी कारण मैं बौद्ध राष्ट्रों के युवाओं को बताना चाहता हूं कि वे बुद् धके ही यथार्थवादी दर्शन पर ज्यादा ध्यान दें। उसी का अनुसरण करें।

अगर कभी बौद्ध धम्म पर संकट का समय आए तो बौद्ध राष्ट्र के भिक्षुओं को ही जिम्मेदार ठहराना होगा क्योंकि मुझे व्यक्तिगत रूप से ऐसा लगता है कि जिन भिक्षुओं को तन-मन-धन से अपने कर्तव्यों का पालन करना चाहिए उन्होंने उसे नहीं किया, यही इसका मतलब निकलता है। आज कहां धर्मप्रसार हो रहा है? बौद्ध धम्म प्रचार की आज क्या स्थिति है? भिक्षु का असली कर्तव्य धम्मप्रसार करना होता है। तो आज भिक्षु क्या कर रहे हैं? आज का भिक्षु खा-पी कर विहार में बैठा रहता है। वह केवल एक ही बार भोजन लेता है इस बारे में कोई शक नहीं। लेकिन उसका ज्यादातर समय केवल आलस में ही बीतता है। वह थोड़ा बहुत पढ़ता है, लेकिन वह ज्यादातर सोता ही रहता है। शाम के समय संगीत से अपना मन रिझाता है। लेकिन यह कोई धम्मप्रसार का मार्ग नहीं है। मित्रों, किसी की आलोचना करने का मेरा उद्देश्य नहीं है। लेकिन अगर धम्म में समाज में नवजागृति लाने का नैतिक बल हो तो आपको धम्म की सोच हमेशा लोगों के कानों से टकराती रहनी चाहिए। बच्चे को स्कूल में कितने साल बिताने पड़ते हैं? आप केवल एक दिन के लिए बच्चे को स्कूल नहीं भेजते। उसके बाद उसे घर में बिठा कर उस बच्चे को सारा ज्ञान ग्रहण करना चाहिए, सारा ज्ञान प्राप्त कर लेना चाहिए ऐसी उम्मीद आप उससे नहीं रखते। बच्चा हर रोज स्कूल गया, वहां पांच घंटे उसने बिताए, उसने लगातार पढ़ाई की तो ही वह थोड़ा बहुत ज्ञान प्राप्त कर सकता है। जो के भिक्षु एक भी दिन लोगों को विहार में नहीं बुलाते और न ही किसी विषय पर शिक्षा देते या धर्मोपदेश देते हैं। कम से कम मेरे देखने में ऐसी कोई बात नहीं।

एक बार मैं सिलोन गया था। मैंने वहां के लोगों को बताया कि मैं देखना चाहता हूं कि भिक्षु कैसे धम्मप्रसार करते हैं। उन्होंने मुझे बताया कि उनके यहां दान की पद्धति है। बाद में मुझे पता चला कि वणाक् के अर्थ में दान का प्रयोग किया जाता है। वे मुझे 11 बजे के आसपास एक जगह ले गए। वहां टेबिल के आकार की एक चारपाई थी। मैं जमीन पर बैठा। थोड़े समय बाद एक भिक्षु आए। कई उपस्थित महिला और पुरुषों

ने पानी से उनके पैर धोए। फिर वे चौरंग पर बैठे। हवा करने के लिए उनके हाथ में एक हाथपंखा था। वे कुछ बुदबुदाए। लेकिन क्या बुदबुदाए यह केवल उनको ही पता। अर्थात् उन्होंने वह धम्मप्रसार सिंहली भाषा में किया होगा। लेकिन वह भी केवल दो मिनटों तक ही! उसके बाद उठ कर वह चले गए।

आप ईसाइयों के गिरजाघर में जाकर देखिए। वहां क्या होता है? वहां हर हफ्ते लोग इकठ्ठा होते हैं। वहां वे प्रार्थना करते हैं। उनका धर्मगुरू बाइबिल के किसी विषय पर प्रवचन करता है और बताता है कि ईसा ने क्या कहा है यह समझाता है। उस सदुपदेश का बार-बार स्मरण करने के लिए लोगों को आवाहन करता है। आपको यह सुन कर आश्चर्य लगेगा कि ईसाई धर्म का करीब 90 प्रतिशत हिस्सा तत्वत: और रचनात्मक नजरिए से देखा जाए तो बौद्ध धम्म से ही लिया गया है। आप रोम जाएंगे और वहां का प्रमुख गिरजाघर देखेंगे तो आपको बरबस यहां के विश्वकर्मा मंदिर की याद आएगी।

चीन में विशबिग्ने नाम का एक ईसाई धर्मप्रसारक था। उसने बौद्ध धर्म पर एक किताब भी लिखी है। बौद्ध धर्म और ईसाई धर्म में मौजूद कमाल की समानता के बारे में उसने आश्चर्य प्रकट किया है। ऊपरी तौर पर भले वह यह नहीं कह रहा कि बौद्धों ने ईसाइयों की नकल उतारी है कहने का साहस नहीं कर रहा हो तब भी ईसाइयों ने बौद्ध धर्म की नकल की है यह बात भी मानने के लिए वह तैयार नहीं है। इस बारे में बताने लायक बहुत कुछ है।

अब समय बहुत बदल गया है। ईसाइयों ने बौद्ध धर्म की नकल उतारी है इसमें कोई शक नहीं। लेकिन धर्म प्रसार के लिए ईसाइयों द्वारा स्वीकृत मार्ग की बौद्ध लोग अपने धम्म प्रसार के लिए नकल करें तो इसमें कोई हर्ज नहीं होना चाहिए। भले वह अपनी राह से भटक जाएं तो भी बुद्ध का धम्म उनके मार्गदर्शन के लिए किसी पुलिसवाले की तरह हमेशा खड़ा मिलेगा। यह बात जब तक लोग नहीं मानते तब तक बौद्ध धम्म का ह्रास रोका नहीं जा सकता। आज भी बौद्ध राष्ट्रों में बौदध धर्म की बहुत बुरी हालत है। इसके बावजूद लोगों के मन पर आज भी बौद्ध धर्म की पकड़ कायम है इसमें कोई शक नहीं।

चलते-चलते मैं एक मनोरंजक और महत्वपूर्ण बात बताना चाहता हूं। मैंने वह बात ब्रह्मदेश में देखी। वहां मुझे एक परिषद के लिए बुलाया गया था। तब ब्रह्मदेश में गांवों की पुनर्रचना किस प्रकार की जा रही है यह दिखाने के लिए वे मुझे एक गांव ले गए थे।

मुझे बहुत खुशी हुई। वहां की एक कमेटी द्वारा गांव की पुनर्रचना का ढांचा बनाया हुआ था। उस गांव के सारे रास्ते अन्य किसी भी गांव की तरह टेढ़े-मेढ़े और अव्यवस्थित थे। उन्हें उन रास्तों को सीधा करना था। उसके लिए उस कमेटी ने लोहे के खंभे गाड़ कर सीधे रस्सियां बांधी और रास्तों को सीधे करने का मार्ग तय किया। मैंने देखा कि

कमेटी द्वारा बनाया गया ढांचा कई लोगों की निजी जमीन से होकर जा रहा था। मैंने उनसे पूछा कि ऐसे हाल में समिति रास्ता कैसे बना सकेगी? जिनकी निजी जमीनों से सड़क जाएगी उन्हें नुकसान भरपाई के तौर पर देने के लिए क्या समिति के पास उतना पैसा है? तब उन्होंने मुझे बताया कि पैसों की मांग अब तक किसी ने नहीं की है। उल्टे, रास्ता बनाने के लिए जगह की जरूरत हो तो खुशी से ली जाए यही उनका कहना है। सुन कर मैं आश्चर्यचकित हुआ। क्योंकि मेरे देश में बिना क्षतिपूर्ति के किसी की अगर थोड़ी-सी भी जमीन ली जाए तो खूनखराबा होता है। लेकिन ब्रह्मदेश में ऐसा नहीं होता, क्यों? ब्रह्मी लोग अपनी संपत्ति को लेकर इतने उदार कैसे हैं? क्या उन्हें अपनी जमीन से क्या लोभ नहीं है? क्या उन्हें अपनी संपत्ति को लेकर चिंता नहीं है? इसकी वजह यही है कि बुद्ध के सब अनित्यम् का उपदेश उनके मन में अच्छी तरह से बसा हुआ है। दुनिया की कोई भी वस्तु नित्य नहीं, शाश्वत नहीं, वह नश्वर है तो फिर ऐसी अनित्य वस्तु के लिए झगड़े क्यों? जमीन अगर चाहिए तो बेशक लीजिए, ऐसा ही वे सोचते हैं।

भाइयों और बहनों, इसके अलावा और कुछ बताऊं ऐसा कुछ बचा नहीं है। आपको कुछ मुद्दों के बारे में पता करवाऊं इतना ही मेरा उद्देश्य था। साम्यवाद की विजयदुंदुभी से आप डर मत जाइए और न ही उनसे अभिभूत होइए। आप अगर बौद्ध सोच का और दर्शन का एक दशमांश भाग भी आत्मसात कर सकें तो साम्यवाद जो निर्माण करना चाहता है वह आप करुणा, न्याय और सद्भावना के बल पर कर पाएंगे इसमें कोई शक नहीं। धन्यवाद!''[2]

''बाबासाहेब के ये विचार परिषद के कई प्रतिनिधियों को बौद्ध धर्म का एक अभिनव दर्शन जैसा ही लगा। बुद्ध के चार आर्यसत्यों में से एक सत्य, दुख की मार्क्स के आर्थिक शोषण से जो समानता दिखाई गई और बौद्ध धर्म को जो एक प्रेरक जीवंत सामाजिक शक्ति के रूप में जो उन्होंने प्रस्तुत किया वह एक नया दृष्टिकोण है। बुद्धवचनों का उसे आधार भी है। कुछ बौद्ध भिक्षुओं ने बाबासाहेब से मिल कर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए ऐसा कहा।''[3]

2. बुद्ध, मार्क्स और धम्म का भविस्थ : रत्नमित्रा गणवीर, पृ. 29-44

3. प्रबुद्ध भारत : 3 अगस्त, 1957

348

'ब्रह्म सत्य जगन्मिथ्या' यह एक बौद्धिक चालाकी है

''23 नवंबर, 1956 को रात 9 बजे आसनसोल पैसेंजर से डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर आने वाले थे इसलिए आसनसोल स्टेशन पर उनका स्वागत करने के लिए शहर के सम्मानीय व्यक्ति, काशी विश्वविद्यालय और हिंदू विश्वविद्यालय के छात्र, महाबोधि सभा के कार्यकर्ता तथा दलित वर्ग के बहुत सारे लोग बड़े पैमाने पर वहां उपस्थित थे। स्टेशन पर आए लोगों में आयु. प्रभु नारायण सिंह, एमएससी, भिक्षु धर्मरक्षित, भिक्षु संघरत्न, मेला अधिकारी आयु. जगदीश शरण सिंह, आयु. जगन्नाथ उपाध्याय आदि उपस्थित थे।

स्टेशन पर बैंड बज रहा था और घोषणाएं की जा रही थीं। लोग बौद्ध पताका लेकर गाड़ी के आने का इंतजार कर रहे थे। गाड़ी के आते ही डॉ. बाबासाहेब की जय, अम्बेडकर जिंदाबाद के नारे लगाते हुए डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का स्वागत किया गया। भीड़ के बेकाबू होने के कारण कुछ लोग दब गए।

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर स्टेशन से 'होटेल दी पेरिस' में गए और खाना खाने के बाद वे सारनाथ के लिए रवाना हुए। वह वहां के नवनिर्मित अतिथिगृह में 23 नवंबर, 1956 से 27 नवंबर 1956 की दोपहर तक रुकने वाले थे। इसी दौरान उन्होंने वहाँ भाषण दिए।

दिनांक 24 नवंबर. 1956 के दिन 3 बजे काशी हिंदू विश्वविद्यालय संघ द्वारा आर्टस् कॉलेज के मैदान में आयोजित सभा को उन्होंने संबोधित किया।[१]

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने कहा,

मुझे किस विषय पर बोलना है यह मुझे बताया नहीं गया है। इसलिए आपके हिंदू विश्वविद्यालय के परिसर में प्रवेश करते वक्त जो विचार मेरे दिमाग में रहे हैं वही मैं आपके सामने व्यक्त करने जा रहा हूं। हिंदू समाज रचना का एक अध्ययनकर्ता इस नाते हिंदू जीवन-विषयक दर्शन का अध्ययन करते हुए मुझे विभिन्न विचार-पद्धतियां दिखाई दीं। बुद्धकाल में 92 दर्शन प्रचलित थे। उनमें से छह अध्ययन योग्य माने जाते थे। वर्तमान युग का आम हिंदू समाज ज्यादातर शंकराचार्य के दर्शन को प्रमाण मानता है। शंकराचार्य का प्रमुख सिद्धांत है 'ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या!' यानी कि ब्रह्म ही सत्य है और

1. धर्मदूत : महाबोधि सभा, सारनाथ का मासिक मुखपत्र, संपादक - त्रिपिटिकाचार्य भिक्षु धर्मरक्षित, दिसंबर, 1956, पृ. 244, 257-258

दुनिया मायामयी है। इन विचारों की पकड़ हिंदू मन पर पक्की है। आपने इससे पहले इस बात पर सोचा है अथवा नहीं यह मैं नहीं जानता। मैं आपसे यह पूछना चाहता हूं कि यह सिद्धांत कहां तक मनुष्य के लिए मार्गदर्शक सिद्ध होता है? शंकराचार्य कहते हैं, ब्रह्म सत्य है। लेकिन इस सत्य की व्याख्या क्या है? व्यावहारिक जीवन में मनुष्य के पंचेंद्रिय ही उसे सत्य-असत्य की पहचान बता देते हैं। ज्ञानेंद्रिय ही उसके ज्ञानार्जन के अंतिम साधन हैं।

फूलों की सुगंध का नाक से यानी घ्राणेंद्रिय से पता चलता है। रंग, आकार आदि का दृष्टिंद्रियों से पता चलता है। स्वाद का पता जिव्हा से चलता है। लेकिन शंकर का ब्रह्म 'नेति नेति' शब्द से ही वर्णित किया जाता है। शंकर के ब्रह्म की व्याख्या नकारात्मक है। इसके विपरीत महायान की ब्रह्म विहार की कल्पना चिंतनीय है। उनके ब्रह्मविहार में दान, उपरेखा (त्याग), करुणा और मैत्री इन चार गुणों का परमोत्कर्ष सम्मिलित है। जहां-जहां ये चार गुण वास करते हैं उन-उन जगहों पर उनकी नजर में ब्रह्म है। शंकर अपने ब्रह्म के ठौर-ठिकाने के बारे में पता नहीं लगने देता।

किसी विधान में (proposition) वास्तविक सत्य नहीं होता केवल काल्पनिक सत्य होता है तब भी व्यवहार में उसका उपयोग हो सकता है। कानून में हम सामाजिक हित के लिए कानूनन काल्पनिक सत्य (legal fiction) को मानते हैं। उदाहरण के लिए किसी व्यक्ति के पास जमीन का टुकड़ा है लेकिन वह उसने किससे खरीदा, या विरासत के अधिकार में पाया इस बारे में उसके पास कोई कागजात या अन्य सबूत नहीं हैं तो ऐसे समय में कोर्ट एक सिद्धांत बनाता है कि उसे वह जमीन राजा के द्वारा तोहफे में मिली होगी। इस प्रकार के काल्पनिक सत्य को मान कर चलने में कुछ भी गलत नहीं है। शंकर बताता है कि ब्रह्म सर्वत्र है। इस सार्वत्रिक ब्रह्म को काल्पनिक सत्य मानने में कोई हर्ज नहीं है। लेकिन फिर यह मुश्किल पैदा होती है कि ब्रह्म अगर हर जगह है तो सब समान माना जाना चाहिए। ब्राह्मणों में अगर ब्रह्म है तो फिर उसे अस्पृश्यों में भी होना चाहिए। तो फिर ब्राह्मण श्रेष्ठ और अस्पृश्य शूद्र इस प्रकार भेद क्यों किया जाता है?

अगर शंकर ब्रह्म की सार्वत्रिकता के आधार से अखिल मानवजाति एक होने की बात कह सकता है और समता मानता है तो उसके उस सिद्धांत को विचारार्ह और गंभीर माना जाता। फिर तो शंकर से बहस करने का भी कोई कारण नहीं बचता। मेरा शंकर पर यही आरोप है कि वह 'ब्रह्म सत्यं' की बात केवल बौद्धिक स्तर तक ही सीमित रखता है। उसे सामाजिक स्तर पर लाने से वह हिचकता है।

'जगन्मिथ्या' यानी दुनिया नजर का छलावा है। यह सिद्धांत तो व्यावहारिक स्तर पर कितना साधार है? हमारे ज्ञानेंद्रिय हमें दुनिया की वास्तविकता का अहसास करा रहे हैं। ऐसे में हम दुनिया का अस्तित्व कैसे नकार सकते हैं? अगर दुनिया का ही कोई

अस्तित्व नहीं तो फिर आपका और मेरा अस्तित्व कैसे हो सकता है? और फिर मेरे अहसासों के (consciousness) क्या मायने बचेंगे? एक कहानी बताई जाती है कि, एक दिन एक पगलाया हाथी शंकर पर हमला करता है और शंकर अपना 'दुनिया मिथ्या है' वाला सिद्धांत भूल कर भागने लगता है। उसे भागते हुए देख कर आसपास के लोग उससे बोले, 'अरे भाग क्यों रहे हैं? हाथी मिथ्या है।' शंकर ने भागते-भागते जवाब दिया, 'मेरा भागना भी मिथ्या है।' इस जवाब में शंकर की हाजिरजवाबी दिखाई देती होगी लेकिन उससे किसी बुद्धिवादी की संतुष्टि नहीं होती। कुल मिला कर 'ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या!' यह एक बौद्धिक झमेला, षड्यंत्र या तिकड़मबाजी ही है। जिस सिद्धांत का सैद्धांतिक परिणाम चतुरवर्ण को गाड़ने में होता उस सिद्धांत को शंकर ने बौद्धिक स्तर तक सच मान कर सामाजिक जीवन में उसके प्रवेश पर प्रतिबंध लगाया। विचार और आचार का यह फेर और बेईमानी शंकर से लेकर गांधी तक दिखाई देती है। गांधी से एक बार मैंने सवाल पूछा था कि आपके चतुरवर्ण हाथ के खड़े पंजे की उंगलियों की तरह एक के ऊपर एक हैं या कि लेटी हथेली की उंगलियों की तरह एक ही स्तर पर है? मेरे सवाल का जवाब उन्होंने नहीं दिया। लेकिन निःसंशय उनकी श्रद्धा क्रमिक विषमता (graded inequality) पर आधारित थी। उनके 'वर्णव्यवस्था' और 'गांधी शिक्षण' ग्रंथ इसके साक्ष्यस्वरूप हैं।

हिंदू लोग वेदों को मानते हैं और पुरुषसूक्त का तो वे नित्य पठन करते हैं। इस सूक्त में अगर इतना ही बताया जाता कि समाज की रचना कैसी होती है तो वह अधिक आपत्तिजनक नहीं होता। समाज में चार अलग-अलग व्यवसाय करने वाले लोग होते हैं यह वाक्य केवल ऐतिहासिक सत्य साबित हो सकता है। लेकिन इन चार तरह के व्यवसाय वाले लोगों को श्रेष्ठ-कनिष्ठता, उच्च-नीचता केवल धार्मिक नजरिए के आधार से चिपका देना विशुद्ध क्रूरता है। इसीलिए विषमता को और उच्च-नीचता को धार्मिक अधिष्ठान दिलाने वाले हिंदू समाज रचना का आद्य सिद्धांत पुरुषसूक्त सभी प्रकार से निषेध योग्य है। इस पुरषसूक्त को तथा उसका प्रतिपादन करने वाले हिंदू धर्मग्रंथों को आप मानेंगे या कि स्वतंत्रता, समता, बंधुत्व और न्याय इन चार उदात्त तत्वों पर आधारित राज्य के संविधान को आप मानेंगे? विद्यार्जन को आप केवल अपना पेट पालने का एक साधन न मान कर प्राप्त की गई विद्या से अपने मन को सुसंस्कारित करने की कोशिश अगर आप करते हों तो या तो आपको संविधान के खिलाफ विद्रोह करना होगा या फिर विषमता प्रधान वैदिक और ब्राह्मणों के धर्मग्रंथों को तिलांजली देनी होगी। और उसे हमेशा के लिए कुड़ेदान में डालना होगा।

भारत का हर नागरिक संविधान के साथ निष्ठा रखने के लिए बंधा है। आप अगर ईमानदार हैं तो आपको अपनी निष्ठा के खिलाफ जाने वाली हिंदू संस्कृति का विरोध

करना चाहिए। उस विरोध को भुला कर अगर आप ढुलमुल जीवन जिएंगे तो आपकी शिक्षा व्यर्थ है ऐसा मानना पड़ेगा। इस प्रकार अपने विचार व्यक्त कर बाबासाहेब ने अपना भाषण पूरा किया।

हिंदू संस्कृति को चिरस्थायी रूप देने के लिए पंडित मालवीय द्वारा स्थापित किए बनारस विश्वविद्यालय में दिया गया बाबासाहेब का ऊपर्युक्त भाषण सभी श्रोताओं ने बड़ी शांति से सुना। बाबासाहेब की अधिकारपूर्ण वाणी का और ठोस सवालों का श्रोताओं पर इतना प्रभाव था कि कुछ अनुचित कर सभा को तितर-बितर करने के लिए आगे बढ़े छात्र भी ऐसे स्तब्ध थे मानो उन पर किसी जादू का असर हो। भाषण के बाद आयोजित जलपान के समय एक अध्यापक ने कहा भी कि ऐसे विवादित विषय पर इतनी निर्भयता से और इतना स्पृतापूर्ण भाषण बिना किसी विरोध के पूरा हो पाया यह विश्वविद्यालय की एक नूतन (नई) बात है।''[2]

2. प्रबुद्ध भारत, 10 अगस्त, 1957

349

हर रविवार के दिन बुद्धविहार जाना हर बौद्ध धम्म अनुयायियों का पहला कर्तव्य है

दिनांक 24 नवंबर, 1954 को दोपहर 1 बजे डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर काशी से सारनाथ आए। वे वहां के भिक्षुओं से मिले। उनसे चर्चा करते समय बाबासाहेब ने मुख्यत: इस बात पर जोर दिया कि हर रविवार के दिन हर बौद्ध को नियमित रूप से बुद्ध विहार में जाकर उपदेश ग्रहण करना चाहिए। इसी प्रकार उन्होंने हर विभाग में बुद्ध विहार निर्माण कर उसमें सभा लेने के लिए काफी जगह वाला सभागृह होना जरुरी है यह बात भी जोर देकर कही। इस नजरिए से सिलोन, ब्रह्मदेश, तिब्बत, चीन आदि देशों के भिक्षुओं ने आगे बढ़ कर और पैसा इकट्ठा कर मदद करने की सलाह दी।[१]

इस अवसर पर उपस्थित लोगों और भिक्खुओं को संबोधित करते हुए डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने कहा-

''जनता को अब गंभीरता से सोचना होगा। हिंदू धर्मग्रंथों में जिस जीवन का वर्णन किया है उसका और हमारे द्वारा तैयार किए गए संविधान में क्या कोई समानता है? अगर नहीं, तो उसके क्या कारण हो सकते हैं? अपना धर्म या संविधान इन दोनों में से किसी एक बात का हमें स्वीकार करना होगा। या तो धर्म को जिंदा रखना होगा या फिर संविधान को ही जगाना होगा। दोनों बातें एक ही जगह नहीं रह सकतीं, दोनों में कोई मेल नहीं हो सकता।

हिंदू धर्म में कई मत हैं। उसमें शंकराचार्य का मत सबसे अच्छा माना जाता है। शंकराचार्य का 'ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या' का सिद्धांत सबसे अधिक महत्वपूर्ण माना जाता है। लेकिन बौद्ध धम्म के उच्च सिद्धांतों के आगे वह बेहद तुच्छ और निरर्थक है। नए-नए बने बौद्धों का आद्य कर्तव्य है कि वे हर रविवार के दिन बौद्ध विहार में जाएं। वरना नए बौद्धों का धम्म से परिचय नहीं होगा। इसके लिए जगह-जगह बुद्ध विहार का निर्माण होना चाहिए। विहार में सभा लेने के लिए जगह होनी चाहिए। लंका, बर्मा, तिब्बत, चीन आदि देशों के बौद्ध भिक्षु आगे बढ़ कर पैसा इकट्ठा करें और भारत के बौद्ध लोगों की मदद करें।

आज सुबह उत्तर प्रदेश के पूर्व सभापति आयु. द्वारकाप्रसाद मुझे मिले थे। उनका

1.धर्मदूत मासिक, दिसंबर, 1956, पृ. 244

आग्रह था कि दिसंबर में मैं जौनपुर जाऊं। मैंने उन्हें जाने का आश्वासन दिया। लेकिन तारीख अभी तय नहीं हुई है। जौनपुर में विराट सामुदायिक धर्मांतरण कार्यक्रम की तैयारी शुरू हो चुकी है। इस अवसर पर उत्तर प्रदेश के पूर्णिया जिले के लाखों पिछड़े लोग दीक्षा लेंगे। आज भी इन पिछड़ी जातियों (ओवीसी) और अल्पसंख्यक समुदाय के लोगों का सवर्ण हिंदुओं द्वारा शोषण जारी है। बौद्ध धम्म की दीक्षा लेकर वे फिर अपने पूर्वजों के मार्ग पर चले जाएंगे।

बौद्ध धम्म की शुरुआत पक्की बुनियाद पर हुई है। यह मानव-धर्म है। इस धम्म के अलावा मानव के कल्याण का कोई दूसरा उपयुक्त धर्म नहीं है।

हमें भारत का प्राचीन इतिहास जानना होगा। भारत में सबसे पहले आर्य और नाग लोगों में युद्ध छिड़ा। आर्यों के पास युद्ध में घोड़े थे। उनके बल पर उन्होंने नाग लोगों को हराया। वही नाग आज हिंदू हैं। नागों ने सबसे पहले बौद्ध धर्म का स्वीकार किया। उन्हें बौद्ध धर्म के प्रसार में सफलता मिली। लेकिन इन नागों का खात्मा करने के लिए आर्यों ने समय-समय पर कोशिशें कीं। इसके सबूत महाभारत में कई बार मिलते हैं। आगे चल कर आर्यों ने ब्राह्मण धर्म को व्यापक बनाया। उसमें कई दोष निर्माण हुए। चतुरवर्ण व्यवस्था का उदय ब्राह्मणों ने ही किया। भगवान बुद्ध ने चतुरवर्ण का घोर विरोध किया। उन्होंने चतुरवर्ण को नष्ट कर समता का प्रचार किया। इसी आधार पर बौद्ध धर्म की स्थापना की। भगवान बुद्ध ने ब्राह्मणों के यज्ञों को अमान्य कर उन्हें बंद करवाया। ब्राह्मणों ने हिंसा की प्रथा की शुरुआत की थी। उसे नष्ट कर भगवान ने अहिंसा का प्रसार किया।

भगवान ने कहा है कि बौद्ध धर्म महासागर की तरह है। इसमें किसी प्रकार का भेदभाव नहीं है। भगवान बुद्ध ने करुणा का प्रसार कर उस युग के बहुजन लोगों के मन आकर्षित किए और उन्हें सही मार्ग दिखाया।

हिंदू धर्म की जड़ों में ही रोग हुआ है। इसी कारण हमें अलग धर्म ग्रहण करना होगा। मेरी राय में बौद्ध धर्म ही योग्य धर्म है। इसमें उच्च-नीच, अमीर-गरीब, जाति-पांति आदि भेदभाव नहीं हैं।

अस्पृश्य वर्ग का कल्याण बौद्ध धर्म स्वीकारने से ही होने की संभावना है। हिंदू समाज में व्याप्त असमानता, भेदाभेद, अन्याय और कुप्रथा बौद्ध धर्म के स्वीकार से दूर हो सकते हैं।

भारत के अस्पृश्यों द्वारा बौद्ध धर्म स्वीकारे जाने पर बर्मा, चीन, जापान, लंका थाइलैंड, मलेशिया आदि सभी बौद्ध देशों को हमारी करुण स्थिति पर सहानुभूति होगी। और हम हमेशा के लिए हिंदू धर्म के अत्याचारों से मुक्त हो जाएंगे। ऊपर बताए देशों ने

हम पर होने वाले अत्याचारों के खिलाफ क्यों आवाज नहीं उठाई इसके पीछे जो वजह थी यह थी कि उन्हें लगता था कि यह हिंदुओं का घरेलू झगड़ा है। अगर बौद्ध धर्म स्वीकार करने के बाद भी हिंदू लोग हमें समता, स्वतंत्रता, बंधुत्व आदि से दूर रखेंगे तो हम ऊपरी बौद्ध राष्ट्रों के सहयोग से उसे पाए बगैर नहीं रहेंगे।

हिंदू धर्म के माथे पर अस्पृश्यता का कलंक लगा हुआ है। इसी के कारण हिंदू जाति के हृदय की दुष्टता दिखाई देती है। अस्पृश्य जाति पवित्र और शुद्ध होने के बाद भी अगर भगवान के दर्शन करने जाते हैं तब भी उनके लिए मंदिर के दरवाजे बंद किए जाते हैं। छुआछूत भेदभाव, जातिपांति आदि का जड़ से विनाश करना सवर्ण हिंदुओं का कर्तव्य है। हम अपने कंधों पर उनकी लाश क्यों ढोएं?

आज मैं अस्पृश्यों को आवाहन करता हूं कि वे ऐसे ही धर्म को स्वीकार करें कि जिस धर्म में मनुष्यमात्र के लिए भेदभाव न हो। समता है और मित्रता के नाते वे एक साथ हो सकते हैं। यही ऊंचा आदर्श बौदध धर्म में है। जिस प्रकार कई नदियां समंदर में आकर मिलती हैं और अपना अस्तित्व भूल जाती हैं उसी प्रकार बौद्ध धर्म स्वीकार करने के बाद ही सभी लोग समान होते हैं। उनमें किसी प्रकार की विषमता नहीं रहती। बौद्ध धम्म अस्पृश्यों के लिए ही नहीं तो सभी मानवों के लिए भी कल्याणकारी है। सवर्ण हिंदू इस धर्म को अवश्य स्वीकार करें।

अन्य धर्मों में सृष्टि का निर्माता ईश्वर समझा जाता है और जो दोष बाकी हैं उसके लिए ईश्वर को ही जिम्मेदार ठहराया जाता है। ऐसी विचारधारा बौद्ध धर्म में नहीं है। बौद्ध धर्म में कहा गया है कि दुनिया में दुख है। उस दुख को नष्ट किया जा सकता है यह मानकर सोचा गया है कि इस दुख को दूर करने के मार्ग क्या हैं। हिंदू धर्म की विचारधारा रूढ़ियों पर आधारित है। ये रूढियां चतुरवर्ण पद्धति से पैदा हुईं। बौद्ध धर्म में कई भिक्षु और भिक्षुणियां हुए हैं। उनके बारे में जानकारी थेर गाथा और थेरी गाथा में मिलती है।

हिंदुओं को न्याय करने का अधिकार था, लेकिन आज तक उन्होंने अस्पृश्यों के साथ केवल अन्याय ही किया है। हिंदुओं से हमें अलग होकर भगवान बुद्ध के चरणों में विनम्र होना होगा।

मुझे काठमांडू के पशुपतिनाथ मंदिर में जाने नहीं दिया गया ऐसी झूठी खबर अखबारों में प्रकाशित होने की बात मैंने सुनी। मैं किसी भी हिंदू मंदिर में नहीं जाता। मेरी सौ बार प्रार्थना की जाए तब भी मेरा उस मंदिर में जाना संभव नहीं था। मेरे निजी सचिव को नेपाल के महाराजा ने पहले दिन बुला कर सूचना की थी कि डॉक्टरसाहब को मंदिर में जाने न दें। उन्होंने कहा था कि बौद्धों को हिंदू मंदिरों में जाने देने जितने आज के हालात

नहीं हैं। नेपाल, लंका और भारत के भिक्षु मंदिर में जा रहे थे उन्हें मनाही की गई। जो व्यक्ति ईश्वर में विश्वास नहीं करना उसका ऐसा करना यानी खुद के मन को धोखा देना था। हिंदुओं के ईश्वर का अपमान करना है। बौद्ध कभी भी हिंदुओं के मंदिर में न जाएं। बौद्ध विहारों में सभी समान हैं। वहां किसी का भी निषेध नहीं किया जाना चाहिए।

जो अस्पृश्य हिंदू धर्म में रहते हुए मंदिर में प्रवेश करना चाहते हैं यह उनका केवल दुराग्रह है। वे अगर अन्याय, अपमान और अशुद्धता सहनी हो तो फिर उनकी मर्जी है। लेकिन मुझे लगता है कि बौद्ध इस झमेले में पड़ने से बचें। हमारी हर रोज की प्रार्थना में हम कहते हैं 'नत्थी मे सरणं अञ्ञँ, बुद्धों में सरणं वरं' – मैं बुद्ध के अलावा अन्य किसी की शरण नहीं जाऊंगा कहने वाले हिंदुओं के मंदिर में जाने का हठ क्यों करें?

काशी का मंदिर प्रवेश राजनीतिक स्टंट है। उससे दलितों का किसी भी तरह का फायदा नहीं होने वाला। इसीलिए बौद्ध धर्म को स्वीकार करके ही बंधुत्व का और समता का दर्जा प्राप्त करना इतना ही हमारा मुख्य कर्तव्य है।[2]

भाषण के बाद विभिन्न देशों से आए करीब 150 भिक्खुओं ने डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के भाषण का समर्थन कर सभी तरह से मदद देने का आश्वासन दिया।

शाम 5 बजे डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने सारनाथ के भग्न अवशेषों का निरीक्षण किया। धम्म के स्तुप के पास करीब-करीब एक घंटा रुक कर तिब्बती लामा की पूजा का अवलोकन किया। उसके बाद उन्होंने कुछ जानकारियाँ दीं जिनका सभी ने स्वागत किया।

रात 7 बजे डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने मूलगंध कुटी में विधिवत् लंबे समय तक बुद्ध पूजा की। उसके बाद उन्होंने भिक्षुओं के सूत्रपाठ सुने। साथ ही उन्होंने आधे घंटे तक तिब्बती उपदेश विधि का अवलोकन किया।[3]

---

2. प्रबुद्ध भारत, 23 फरवरी, 1957
3. धर्मदूत मासिक, सारनाथ, दिसंबर, 1956 पृ. 244

350

बौद्ध धर्म हिंदु धर्म की शाखा है यह भ्रामक प्रचार है कहना एक शरारत और छलकपट है

दिनांक 25 नवंबर, 1956 के दिन सुबह 10 बजे डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने काशी विश्वविद्यालय की विद्यार्थी परिषद का उद्घाटन किया।[१]

डॉ. बाबासाहब अम्बेडकर ने कहा–

आज हिंदू माने जाने वाले कई लोग नागवंशीय हैं। जो नाग लोग आर्यों से पहले भारत में रहते थे वे आर्यों से अधिक सुसंस्कृत थे। उन पर आर्यों ने विजय पाई। लेकिन इससे आर्यों की संस्कृति नागों की संस्कृति से श्रेष्ठ साबित नहीं होती। आर्यों की जीत का कारण था उनका वाहन। आर्य घोड़ों पर सवार होकर लड़ते थे और नाग पैदल लड़ते थे। आर्य–नागों के बीच की लड़ाई जान की बाजी लगा कर लड़ी गई। महाभारत का खांडववन और सर्पसत्र की कहानियों से कल्पना का आवरण अगर दूर किया जाए तो आर्य–नाग युद्ध का भयानक स्वरूप नजर आता है। आर्यों ने खांडव वन दहन की तरह यानी scorched earth policy का इस्तेमाल कर नागों की बुरी हालत कर दी। इस विध्वंस से अगस्ती ने एक नाग की रक्षा की ऐसी कहानी बताई जाती है। कहानी में भले अत्युक्ति हो लेकिन नागों की बस्तियां पूरी तरह नष्ट करने के लिए आर्य किस प्रकार लड़ाई कर रहे थे इसकी जानकारी यहां मिलती है। पराजय के कारण नागों के मन में आर्यों के बारे में द्वेष था। परीक्षित की जान लेने वाला तक्षक कोई सर्प नहीं बल्कि एक नागवंशीय नेता था। आर्यों के मन में नागों के बारे में जो द्वेष भावना थी उसका उदाहरण देते हुए कर्ण और अनंत के कर्णार्जुन युद्ध से पूर्व हुए संभाषण का जिक्र किया जा सकता है। कर्ण–अर्जुन युद्ध से पहले अनंत नाम का नागवंशीय योद्धा कर्ण से मिला और उसने कहा कि मैं अर्जुन के खिलाफ सहायता करने का आश्वासन देता हूं। कर्ण ने उसकी सहायता लेने से इनकार किया। क्योंकि, कर्ण आर्य था और अनंत नाग था। आपसी लड़ाई में आर्यों द्वारा नागों की मदद लेना निषिद्ध था। ब्राह्मण और क्षत्रियों के बीच का संघर्ष बौद्धपूर्व समय का दूसरा संघर्ष था। इस लड़ाई के वर्णन आगे पुराणों में आए हैं। उसी प्रकार मनु द्वारा स्मृतियों में क्षत्रियों द्वारा ब्राह्मणों को आदरयुक्त बर्ताव क्यों करना चाहिए इस विषय पर कारण देते हुए पूर्वकालीन ब्राह्मण–क्षत्रियों की लड़ाई का उदाहरण दिया है।

1. धर्मदूत : मासिक, दिसंबर, 1956, पृ. 245

आर्य और नाग, ब्राह्मण और क्षत्रिय, इनमें संघर्ष जब जारी था तब ब्राह्मणों ने ऋग्वेद में पुरुषसूक्त का अंतर्भाव किया होगा। पुरुषसूक्त से पूर्व चतुरवर्ण के चारों वर्ण समान स्तर पर थे। पुरुष सूक्त उच्च-निम्नता का तत्व समाज में ले आया। इसी समय भगवान बुद्ध ने भारतीय जीवन में प्रवेश किया। जिस शाक्य कुल में गौतम का जन्म हुआ उन शाक्यों का गणराज्य प्रजातंत्र प्रधान था। प्रजातंत्र की इस परंपरा में बढ़े गौतम को चतुरवर्ण व्यवस्था मान्य नहीं थी। आज बौद्ध धर्म कई सिद्धांतों का महासागर बना है। लेकिन बौद्ध धर्म का केंद्रीय सिद्धांत अथवा बुद्धमत समता पर ही आधारित है। बौद्ध धर्म का स्वीकार करने वाले लोग ज्यादातर नागवंशी और चतुरवर्ण में हीन माने जाने वाले वर्णों में से थे। नागों को युद्ध करना प्रिय था इसके बारे में मुचलिंद नाग की कहानी से पता चलता है। मुचलिंद की अग्निहोत्री काश्यपों से दुश्मनी थी। लेकिन काश्यपों के पास आतिथ्य के लिए आए बुद्ध का वह सेवक बना। बौद्ध धर्म की अभिवृद्धि का कारण शूद्रादिशूद्रों द्वारा बहुसंख्या से उसका किया स्वीकार ही है। बौद्ध साहित्य, खासकर थेर और थेरीगाथा के आधार से यह साबित किया जा सकता है।

बौद्ध धर्म हिंदू धर्म की ही एक शाखा है इस मत का प्रसार आजकल काफी बढ़ा है। वस्तुतः बुद्धप्रणीत धर्म समकालीन था। वह वैदिक अथवा ब्राह्मण धर्म से बहुत अलग था। वैदिक वेदग्रंथों को प्रमाण मानते थे और बुद्ध वेदग्रंथों का विरोध करते थे। कलामसूक्तों में बुद्ध ने प्रतिपादन किया है कि मनुष्य को सोचने की आजादी होनी चाहिए और वेदों ने मनुष्यों के लिए हमेशा के लिए टिकाऊ सोच नहीं दी है। बुद्ध द्वारा वेदप्रामाण्य पर किए गए आघातों का आगे के समय में हिंदुओं के भगवतगीता जैसे ग्रंथ पर भी असर हुआ है। गीता में एक जगह वेदपाठकों की आलोचना करते हुए उन्हें मेंढक कहा है। बुद्ध ने वेदों को मरुस्थल कहा है। वेदों में इंद्रादि देवताओं को उम्दे घोड़े, तेजस्वी अस्त्र-शस्त्र, शत्रू पर विजय आदि ऐहिक सुखों के लिए की गई प्रार्थनाएं ही मुख्यरूप से हैं। उसमें उदात्त नीतितत्वों की सीख नहीं है। इसीलिए बुद्ध ने उसका धिक्कार किया।

यज्ञसंस्थाओं पर बुद्ध द्वारा किया गया आघात उनका समकालीन धर्म पर दूसरा आघात था। याज्ञिकों से उनका सवाल हुआ करता था कि गाय-बैलों को बलि चढ़ा कर आपको कौन-सा उच्च श्रेय मिलने वाला है? यज्ञसंस्था पर बुद्ध द्वारा की गई आलोचना के कारण हिंदुओं को इंद्र-वरुणादि आदि देवताओं का त्याग करना पड़ा। थोडा विषय से हट कर मैं आपसे पूछता हूं, हिंदू धर्म में जो ईश्वर की कल्पना है क्या वह सच है? काशी के आपके पूजनीय महादेव को अगर भगवान मानें तो भी उसका ब्याह भी होता है और वह अपनी ब्याहता के साथ नाचता भी है। ब्रह्मा-विष्णू का भी वही हाल है। इन्हें कैसे भगवान कहा जा सकता है? आज सामान्य मनुष्य को भी शरम आए ऐसे बुरे कृत्य उनके हाथों हुए हैं ऐसा आपके पुराण ही बताते हैं। ऐसा एक तो भगवान बताइए

जिसका निष्कलंक चरित्र आज के आदमी को आदर्श और अनुकरणीय लगे। हिंदुओं के भगवान यानी राजाओं के कुल देवता। उनके पराक्रम यानी राजा का पौरोहित्य पाने के लिए ब्राह्मणों द्वारा रची गई उनके भगवानों की खुशामद के पुराण। इंद्र, कृष्ण कैसे भगवान हैं? ऋग्वेद के आखिरी हिस्से में इंद्र की पत्नी द्वारा इंद्र को दी गई गालियां गिन कर देखिए! दुर्योधन संपूर्ण वज्रदेही ना बने और गदायुद्ध में भीम की ही विजय हो इसलिए कृष्ण का रचा कपट नाट्य देखिए! आपका पड़ोसी अगर इस तरह का बर्ताव करने लगे तो आप उसे क्या कहेंगे? खैर। बुद्ध ने पशुहत्या की निंदा की और यज्ञों की विफलता लोगों को समझा दी। इसीलिए ब्राह्मणों को अपने प्राचीन याज्ञिक आचार छोड़ने पड़े।

आश्रम व्यवस्था के बारे में भी बुद्ध का मत प्रचलित वैदिक धर्म से अलग था। ब्राह्मणों के मतानुसार ब्रह्मचर्याश्रम के बाद गृहस्थाश्रम स्वीकारना आवश्यक था। बुद्ध के मतानुसार ब्रह्मचर्य के बाद पारिव्रज्य स्वीकारा जाना चाहिए था। ब्रह्मचर्य का मूल अर्थ है ज्ञानार्जन की स्थिति।

अविवाहितावस्था यह अर्थ उसमें बाद में जोड़ा गया है। ब्राह्मणों ने गृहस्थाश्रम का समय बढ़ाने के लिए उसमें वानप्रस्थाश्रम जोड़ा। ब्रह्मचर्य के बाद संन्यास (परिव्रज्या) स्वीकारने पर ब्राह्मणों को आपत्ति थी। ग्यारह सौ सालों के बाद कुमारिल भट्ट ने बुद्ध पर लगाए आरोप में बुद्ध के परिव्रज्या की आजादी पर ही जोर दिया है।

बुद्ध का वैदिक धर्म से चौथा विरोध चतुरवर्ण के लिए था। उसके शिष्य उच्च-कनिष्ट मानी गई सभी जातियों में से थे। अपने शिष्यों के बीच उच्च-निम्नता की भावना को जगह न रहे इसलिए वह बहुत दक्ष रहा करते थे। अपने चचेरे भाइयों को अपने क्षत्रियत्व का अभिमान न महसूस हो इसलिए उसने उनके साथ आई उपाली को प्रथम दीक्षा दी। जिसकी दीक्षा पहले होती है उसे बाद में दीक्षा लेने वाला वंदनीय माना करता था। इसीलिए उनके क्षत्रिय शाक्यों को उनकी पुरानी नापित सेवक को अभिवादन करना पड़ता था। अपने जीवन के आखिरी दिनों में चुंद नामक हीन जाति के माने जाने वाले लुहार के घर का खाना अपनी सेहत के लिए नुकसानदेह है यह जानते हुए भी उसने ग्रहण किया और सामाजिक समता के लिए अपने प्राणों से मोल चुकाया। इस प्रकार के कई चतुरवर्ण विरोधी प्रसंग बुद्ध के जीवन में दिखाए जा सकते हैं। वह अपने संघ को सागर की उपमा दिया करते थे। जिस प्रकार सागर से मिलने के बाद नदी का अलग अस्तित्व नहीं बचता और सारा जल एकरूप हो जाता है उसी प्रकार संघ में आने वाले भिन्न वर्णीय भिक्षुओं का वर्णवैशिष्ट्य खत्म हो जाता है। जैन मत में भी चतुरवर्ण निषिद्ध था। लेकिन इस मुद्दे पर वे झगड़ने के लिए तैयार नहीं थे। बुद्ध मात्र अपने मुद्दों के बारे में ढुलमुल मौन व्रत नहीं रखता था। अपने धर्म के हम वीर हैं और उसकी स्थापना के लिए हमें अज्ञान के साथ लड़ना तो पड़ेगा ही ऐसा उनका मानना था। बुद्ध की यह चतुरवर्ण

विरोध की भावना ब्राह्मणों के मन में हमेशा चुभती रही। इसीलिए चतुरवर्ण के बारे में मूक रहने वाले निराशावादी सांख्याचार्य कपिलमुनी को उन्होंने अपना कहा लेकिन बुद्ध को हमेशा दुश्मन ही माना।

बुद्ध का वैदिक धर्म के लिए पांचवा विरोध देवता और आत्मा के अस्तित्व के बारे में था। बुद्ध की राय में सर्वशक्तिमान, सर्वज्ञ, सर्वव्यापी, न्यायी और प्रेममय भगवान का अस्तित्व ज्ञान के साधन पंचेंद्रिय और तर्क की सहायता से साबित नहीं किया जा सकता। इसके अलावा धम्म का उद्देश्य दुख निवारण का है। भगवान को मानने से दुख कम नहीं होता। एक मनुष्य को दूसरे मनुष्य के साथ कैसे व्यवहार करना चाहिए जिससे कि सभी लोग सुखी होंगे यह सिखाना धर्म का प्रमुख काम है। इसीलिए धम्म का भगवान या ईश्वर से संबंध नहीं आता। भगवान का या ईश्वर अस्तित्व केवल खोखले तर्क पर (speculation) आधारित है और अस्तित्व की श्रद्धा के कारण पूजा, प्रार्थना, पुरोहित आदि अष्टांग मार्ग की समदृष्टि के लिए घातक मूर्ख मान्यताओं का (superstition) भंडार खुलता है। मनुष्य के परस्पर संबंध प्रज्ञा, शील, करुणा, मैत्री से नियंत्रित होने की जगह पवित्रता, उच्च-नीचता जैसी भ्रामक मान्यताओं से नियंत्रित होते हैं। भगवान के अस्तित्व के बारे में बुद्ध की आपत्तियां केवल व्यावहारिक ही थीं ऐसा नहीं है। 'प्रतिच्च समुत्पाद' के उनके सिद्धांत में भगवान के अस्तित्व पर आम तार्किक आपत्तियां उन्होंने उठाई हैं। इस सिद्धांत के अनुसार भगवान है या नहीं यह मुख्य सवाल नहीं है। मुख्य सवाल यह भी नहीं है कि भगवान ने दुनिया का निर्माण किया या नहीं। मुख्य सवाल यह है कि भगवान ने दुनिया का निर्माण कैसे किया? भगवान के अस्तित्व का खंडन अथवा मंडन इस सवाल के जवाब से होगा। इस हिसाब से महत्वपूर्ण सवाल यह है - ''भगवान ने इस दुनिया का निर्माण अभाव में से किया या पहले से अस्तित्व में होने वाली किसी चीज से किया?'' कुछ भी नहीं था उसमें से कुछ निर्माण किया इस बात पर मनुष्य की बुद्धि विश्वास नहीं कर सकती। अगर इस तथाकथित भगवान ने यह दुनिया पहले जो कुछ था उसमें से निर्माण किया तो हमारी उत्पत्ति से भी पहले से वह अस्तित्व में थी यह मानना पड़ेगा। तो फिर जो पहले से था उसके निर्माण का कर्ता भगवान को नहीं माना जा सकता। कुल मिला कर अस्तित्व से संबंधित सोच तर्काधारित होने के कारण भगवान के प्रति श्रद्धा बुद्ध के समदृष्टि प्रधान धम्म को मान्य नहीं।

वेदांत का मोक्ष सिद्धांत यानि आत्मा का ब्रह्म में विलीन होना भी तर्कसंगत करार देकर और मानवी जीवन सुखी करने के दृष्टिकोण से निरुपयोगी मान कर बुद्ध ने उसका विरोध किया है। ब्रह्म के बारे में बुद्ध के विचार वशिष्ट और भारद्वाज इन दो मुनियों के साथ उसके हुए संवाद से व्यक्त होते हैं। आत्मा के अस्तित्व के बारे में बुद्ध की व्यावहारिक आपत्तियां उसकी भगवान की कल्पना के बारे में जो आपत्तियां हैं उसी प्रकार

की हैं। साथ ही आत्मा के नाम पर दिखाए गए कार्य व्यापार को वह नामरूप सिद्धांत के सहारे स्पष्ट कर दिखाता है। काया की उत्पत्ति के साथ ही अहसास (consciousness) की भी शुरुआत होती है। इच्छात्मक, भावात्मक और विचारात्मक कार्य अहसास के ही हैं। इसलिए आत्मा के अलग अस्तित्व को मानने की जरूरत ही नहीं है।

इस प्रकार वैदिक धर्म के विरोधी बौद्ध धम्म को नेस्तनाबूत करने के लिए ब्राह्मणों ने भले–बुरे सभी प्रकार के साधनों का प्रयोग किया। बौद्ध धम्म जिन बातों के कारण लोकप्रिय हुआ वे बातें अपने पुराने जमाने से चले आ रहे धर्म को मान्य न होने के बावजूद उन्होंने उनका उपयोग किया। इस प्रचार पद्धति को अपनाकर ही वेरुल की बौद्ध गुफाओं के पास उन्होंने अपने ब्राह्मण धर्म की गुफाएं उकेरीं। असल में ब्राह्मण गृहस्थाश्रमी। अग्निहोत्र उसका नित्यव्रत। उसे परिमार्जित भिक्षुओं की तरह गुफाओं आदि में रहने की कोई वजह दिखाई नहीं दी। बरसात के तीन महीनों तक किसी सुरक्षित जगह वास करने का बुद्ध का आदेश था। सो उन्हें गुफाओं की आवश्यकता थी। गृहस्थाश्रम में रहने वाले ब्राह्मण को वह नहीं थी। लेकिन बौद्धों की गुफाओं की ओर उपासकों का बड़ा समूह आकृष्ट होता है केवल इसीलिए उनकी गुफाओं के पास ही उन्होंने अपनी गुफाएं उकेर कर अपने धर्म की ओर उपासकों को खींचने की कोशिश की। हिंदू पंडितों के अनुसार बौद्ध धर्म के लोप होने का मुख्य कारण यह नहीं था कि कुमारिल, शंकराचार्य आदि द्वारा बौद्धमत का वाग्युद्ध में पराभव किया गया था। क्योंकि दोनों ने बुद्ध की सीख का केंद्रीय सिद्धांत – यानी सामाजिक समता, दुनिया के दुख के परिहार के लिए हर व्यक्ति का मन परिवर्तन, नीति तत्वों की सामाजिक जीवन में स्थापना, बुद्धिवाद आदि पर इन पंडितों ने कोई आघात नहीं किया है। इन दोनों पंडितों के बाद बौद्ध धर्म भारत में कई सालों तक समृद्धावस्था में था। बौद्ध धर्म के ह्रास का मुख्य कारण था जिन विभिन्न संस्कृतियों के और विभिन्न सांस्कृतिक स्तर के लोगों में उसका प्रसार हुआ, उनके आचार और मान्यताओं की बौद्ध धर्म पर हुई अनुचित प्रतिक्रिया। भारत के बौद्ध धर्म पर हुआ सबसे बड़ा आघात था इस्लामी आक्रमण। भारत की ओर आते हुए इस्लामी आक्रामकों को जो परधर्मी लोग मिले वे ज्यादातर बौद्धधर्मीय ही थे। उनकी भाषा में मूर्ति को बुत कहा जाता था। बुतशिकन यानी मूर्तिभंजक। यह उनके हिसाब से गाझीपन का लक्षण था। हिंदुओं से अधिक बौद्धों पर उनके हमले अधिक हिंसक और विध्वंसक थे। उनके द्वारा किए गए बौद्ध भिक्षुओं के कत्लों के कारण 11 से लेकर 13 वीं सदी के इतिहास के पन्ने रक्तरंजित हैं। नालंदा जैसे विश्वविख्यात बौद्ध विश्वविद्यालय का उन्होंने सर्वनाश किया। हिंदुओं की तरह ही बौद्धों में भी धर्मप्रसार का काम पीढ़ी–दर–पीढ़ी करने वाला ब्राह्मणों जैसा वर्ग नहीं होने के कारण भिक्षुओं के कत्ल के बाद बौद्ध धर्म का बड़ी तेजी से लोप होने लगा। सत्य की भी कभी–कभी पराजय होती है इसका यह एक उदाहरण है। लेकिन आज उसके 600 सालों के बाद भारत को बुद्ध की याद आ रही है और आज

अगर उसने बुद्ध की सीख स्वीकार नहीं की तो उसका भविष्य उज्जवल नहीं होगा।

भाषण के बाद छात्र और अध्यापक वर्ग द्वारा पूछे गए सभी सवालों के डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने जवाब दिए। वे सवाल-जवाब एक अलग रिपोर्ट का विषय बन सकते हैं। विषय ऐतिहासिक होने के बावजूद भाषण के नए नजरिए के कारण प्रतिगामी माने गए काशी विश्वविद्यालय के छात्र और आचार्य-गणों को जगाने वाला था।[२]

---

2. प्रबुद्ध भारत : 24 अगस्त, 1957

351

मनुष्यों के बीच प्रेम, करुणा के आधार पर संबंध जोड़ने वाले बौद्ध धर्म का केंद्रीय सिद्धांत है समता

दिनांक 25 नवंबर, 1956 के दिन शाम को सारनाथ के मूलगंध कुटी विहार के मैदान में महाबोधि सभा द्वारा डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के स्वागत में एक कार्यक्रम का आयोजन किया गया था।

शुरु में मंगलाचरण के बाद लद्दाख के लामा लोबजङ् ने डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को 'खदा' यानी वस्त्र भेंट किए। उसके बाद वाराणसी की 18 संस्थाओं ने उन्हें फूलमालाएं प्रदान कीं। सेवासंगम ट्रस्ट की ओर से डॉ. एन. एन. शर्मा ने डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को दो सुंदर स्वर्ण स्मृतिचिन्ह भेंट किए। डॉ. बाबासाहेब का भाषण सुनने के लिए सारनाथ के आसपास के जिलों से बड़े पैमाने पर जनसमुदाय उपस्थित था।[१]

इस कार्यक्रम की खासियत यह थी कि यह सभा महाबोधि के बुद्ध विहार के प्रांगण में धम्मेक स्तूप की छाया में थी। बुद्ध ने जहां पंच वग्गीय भिक्षुओं को अपना पहला उपदेश कर धम्मचक्र प्रवर्तन किया उस जगह सम्राट अशोक ने एक स्तूप खड़ा किया था। उस स्तूप का नाम धम्मेक स्तूप है। वहीं डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का बहुजन जनता को सम्बोधित कर आखिरी भाषण हो यह अभिभूत कर देने वाला और क्रांतिकारी संयोग है।

बाबासाहेब के बारे में बताते हुए भिक्षु धर्मरक्षित ने कहा, बौद्ध देशों में एक श्रद्धामयी धारणा प्रचलित है कि बुद्‌ध के महापरिनिर्वाण के बाद ढाई हजार सालों के बाद भारत में बौद्ध धर्म का पुनरुत्थान होने वाला है। मेरी श्रद्धा है कि जो बोधिसत्व यह काम पूरा करेगा वह आज हमारे बीच डॉ. बाबासाहेब के रूप में हमारे बीच उपस्थित है। इसी सारनाथ में पच्चीस शतक पूर्व पांच भिक्षुओं के सामने आज जैसे ही एक रविवार के दिन इस सामने वाले धम्मेक स्तूप की जगह भगवान ने धर्मचक्र का परिवर्तन किया। उसी धम्मचक्र को नागपूर में गति देकर पांच लाख लोगों के हृदय में धम्म का पवित्र संदेश पहुंचाने वाले महापुरुष का आज हम स्वागत कर रहे हैं।

प्रशांत और पवित्र स्मृति से भरा वातावरण, चारों ओर भक्तिभाव से ओतप्रोत बैठी बहुजन जनता और लंका, तिब्बत, ब्रह्मदेश, जापान आदि देशों के कुछ लामा, भिक्षु और

---

1. धर्मदूत : सारनाथ, दिसंबर 1956, पृ. 246-247

उपासक लोगों की उपस्थिति के कारण शायद डॉ. बाबासाहेब का मन भर आया। कंठ रुंध गया।

सजल आंखों और रुंधे गले से दिया गया वह एक करुणामय भाषण था। बाबा का वह अंतिम संदेश साबित हुआ।

अपने स्वागत का जवाब देते हुए डॉ. बाबासाहेब ने कहा-

लंबी यात्रा के कारण मुझे थोड़ी थकान हो रही है। मैं यहां केवल आपसे स्वागत में मिलने वाली फूलमाला पाने के लिए आया था। लेकिन मुझसे मिलने की आपने जो उत्सुकता और आस्था प्रकट की है उसके बदले में आपसे चार शब्द कहना मैं अपना कर्तव्य समझता हूं। आपमें से कई लोगों को अस्पृश्य माना जाता है। भगवान बुद्ध के समय में अस्पृश्यता नहीं थी। सांस्कृति के स्तर पर कमतर जमातें उस जमाने में भी थीं लेकिन उन्हें अस्पृश्य नहीं माना जाता था। अस्पृश्यता का शाप पिछले डेढ़ हजार सालों का है और उसके लिए जिम्मेदार है हिंदू धर्म। अस्पृश्यता हमारा कलंक नहीं है, वह उच्च हिंदू जाति के मस्तक का कलंक है। आज इतने साल हुए लेकिन ये कलंक धोकर हटाने की इच्छा हिंदुओं के मन में ईमानदारी से कभी पैदा नहीं हुई। हमारे रहन-सहन या हमारे काम के कारण वे हमें अस्पृश्य नहीं मानते। हमने सफाई रखी, साफ कपड़े पहने, उच्च व्यवसाय किए, मन को निश्छल और पवित्र रखा, निर्भयता से व्यवहार करने लगे तब भी ये हिंदू हमें अस्पृश्य मानते हैं। इसलिए यह हिंदू धर्म हमें छोड़ना ही होगा। भारत में जो बौद्ध धम्म पैदा हुआ और जिस धम्म ने मनुष्यों के बीच भेदभाव करने से इनकार किया, जिस धम्म का केंद्रीय सिद्धांत समता पर आधारित है उसे अब हमें स्वीकारना होगा। भगवान ने अपने धम्म की स्थापना दुनिया के दुखों का नाश करने के लिए की। अन्य धर्म भगवान और इंसान के बीच संबंध जोड़ने वाले हैं। मनुष्यों के आपसी संबंध प्रेम और करुणा के सिद्धांतों के सहारे जोड़ने वाला एक ही धम्म है - बौद्ध धम्म। बुद्ध ने अपने धर्माचरण का आदर्श संघ के रूप में दुनिया के सामने रखा। उस समाज में कोई जाति-पांति का भेदभाव नहीं। समंदर में मिलने वाली नदी जिस प्रकार समंदर के साथ एकसार हो जाती है उसी प्रकार बुद्ध के समाज में जातियां समाप्त होकर एकरूप हो जाती हैं।

आज डेढ़ हजार सालों से हिंदू समाज में सुधार आएगा, उसमें समता आएगी, थोड़ी अकल आएगी, इसका हम गांव की सीमा से बाहर बैठे इंतजार कर रहे हैं। लेकिन किसी के दिमाग में सुधार का खयाल नहीं आया। किसी ने हमें गांव के अंदर नहीं बुलाया. उल्टे धर्म के नाम पर हमारे साथ ज्यादा से ज्यादा अन्याय-अत्याचार होने लगे। कोई कहते हैं कि समता भारत के लिए अज्ञात थी। पिछली शताब्दी में ही यहां समता के बारे में कानाफूसी शुरू हुई है। हो सकता है धीरे-धीरे हिंदू धर्म में भी सुधार आएगा

और वह समता का स्वीकार करेगा। हिंदू धर्म में सुधार आएगा यह एक भ्रम है। इतिहास गवाह है कि ढ़ाई हजार वर्ष पूर्व बुद्ध ने समता का उपदेश भारत को दिया था। लेकिन इस देश ने उस उपदेश को ही दबा देने की नीचता भरा काम जानबूझ कर किया और उसके ठीक विरुद्ध विषमता आधारित और कुछ खास वर्गों के हित के लिए ही हिंदू धर्म प्रभावशाली बनाया गया। जब तक हिंदू धर्म का पालन किया जाता है तब तक इस देश से सामाजिक विषमता हटेगी नहीं। हिंदू धर्म द्वारा बौद्धिक स्तर पर भले जितने भी उदात्त सिद्धान्तों की घोषणा की जाए उनका आचार वर्ण, जात-पांत, स्पृश्यास्पृश्यता जैसी विषमता भरा ही होता है। चतुरवर्ण उसकी रीढ़ है। इसलिए हिंदू धर्म का त्याग करने के अलावा आपके सामने और कोई रास्ता नहीं है। आप बौद्ध होंगे तो बंधु मानने वाले कुछ लोग इस दुनिया में आपको मिलेंगे। आज हमारे देश में जो अन्याय हो रहा है उसके कारण हम बिलबिला रहे हैं। लेकिन हमें कहीं से सहानुभूति भरा साथ नहीं मिल रहा। क्योंकि, अन्याय करने वाले सभी हिंदू हैं और उन्हीं के कहे अनुसार यहां का राजतंत्र काम करता है। आप बौद्ध बनेंगे तो विदेशी बौद्ध आपको अपना बंधु मानेंगे। आपकी आवाज का वे जवाब दिए बगैर रहेंगे नहीं।[२]

2. प्रबुद्ध भारत : 31 अगस्त, 1957

352

मेरे जीवन का सैद्धान्तिक अथवा दार्शनिक आधार

पांच मिनटों में मैं अपने जीवन का दर्शन बताना चाहता हूं। दर्शन का संदर्भ मैं सामाजिक दर्शन के रूप में ही लेता हूं। हर मनुष्य का जीवन के बारे में अपना कोई दर्शन होना जरुरी होता है। अपने सही व्यवहार के लिए मनुष्य के पास कोई कसौटी होना जरुरी है और वह कसौटी है उसका जीवन दर्शन। मैं हमेशा कहता हूं कि हर मनुष्य के पास अपना जीवन-दर्शन होना जरुरी है, क्योंकि इसी दर्शन के सहारे वह समझ सकता है कि वह सही कर रहा है या ग़लत। वह जब जानेगा कि वह खुद गलत है तभी उसे अपने दर्शन के सहारे अपनी उन्नति पाने की जिम्मेदारी का बोध होगा। मैंने अपने जीवन का दर्शन तय किया है। उस दर्शन के नास्तिक और आस्तिक दोनों पक्षों को आज मैं स्पष्ट करने जा रहा हूं। सांख्य दर्शन के त्रिगुणों पर आधारित और भगवद्गीता में विषद किया हुआ हिंदुओं का नास्तिक पक्ष दर्शन मुझे नापसंद है। मेरी राय में ऋषि कपिल के दर्शन का वह घोर विकृत स्वरूप है। उसी के कारण जातिव्यवस्था और श्रेणीगत विषमता की व्यवस्था हिंदुओं के सामाजिक जीवन का एक मूलभूत नियम बन गया है। आस्तिक पक्ष मेरा जीवन-दर्शन केवल तीन शब्दों में ही व्यक्त हुआ है। *स्वतंत्रता,समता* और *भाईचारा*। कोई यह न समझें कि फ्रांसीसी क्रांति से मैंने अपना जीवन-दर्शन उधार लिया है। मैं एक बार फिर यह बात साफ-साफ कह देता हूं। मेरे दर्शन की जड़ राजनीति में नहीं, धर्म में है। मेरे गुरु भगवान बुद्ध की शिक्षा से ही मैंने यह दर्शन स्वीकारा है।

मैं आपको विनम्रता से बता दूं कि, मेरे जीवन संबंधी दर्शन में आजादी को विशेष स्थान है। लेकिन साथ ही प्रतिबंध आजादी समता के लिए मारक साबित होती है। मेरे दर्शन में समता का स्थान स्वतंत्रता से ऊंचा है। इसके बावजूद उसमें संपूर्ण समता के लिए बिल्कुल भी जगह नहीं। क्योंकि असीमित समता आजादी के अस्तित्व के लिए संकट पैदा करती है और आजादी के लिए जगह हो यह आवश्यक तो है ही।

स्वतंत्रता और समता के अतिक्रमण से सुरक्षा पाने भर के लिए मेरे दर्शन में कायदा और कानून का स्थान तय है। हालांकि कानून का स्थान मेरे हिसाब से बहुत ही नगण्य है। क्योंकि स्वतंत्रता और समता के भंग होने की स्थिति में कानून यकीनन समर्थ भूमिका निभा सकता है इसका मुझे भरोसा नहीं है। मैं भाइचारे को सर्वोच्च स्थान देना चाहता हूं

---

3 अक्तूबर, 1954 को दिल्ली आकाशवाणी से दिए भाषण का अनुवाद : मुक्तछंद 1976.
पुनः मुद्रित - गांजरे, खंड 7, पृ. 149-50

क्योंकि स्वतंत्रता और समता से अगर इनकार किया जाए तो भाइचारा ही रक्षक बनता है। सहभाव बंधुभाव का ही दूसरा नाम है। और बंधुभाव अथवा मानवता ही धर्म का दूसरा नाम है। कानून अथवा सहभाव का मूल्यांकन करते हुए इस फर्क का पता चलता है क्योंकि कानून धर्मातीत होने के कारण उसे कोई भी भंग कर सकता है। इसके विरुद्ध, सहभाव अथवा धर्म पवित्र होने के कारण उसका सम्मान करना हरेक का कर्तव्य माना जाता है।

यह बिल्कुल न मानें कि मेरा दर्शन किसी आरामतलब व्यक्ति का ध्येय है। सामाजिक जीवन के त्रिगुण सिद्धान्तों को समाप्त कर हिंदु समाज में क्रांति ला सके ऐसा मेरा दर्शन क्रांतिकारी है। इसी कारण मैं इतना आक्रामक हूं और मेरे कई दुश्मन हैं। लेकिन मुझे ऐसे दुश्मन पसंद हैं। क्योंकि, मुझे पता है कि वे मेरी बातें ध्यान से सुनते हैं।

मेरा दर्शन केवल मेरे लिए नहीं है, वह सबके लिए है। अलग शब्दों में कहूं तो मेरे दर्शन का खास उद्देश्य है। मैं लोगों की राय बदलना चाहता हूं। त्रिगुण तत्वों के अनुचरों से उसका त्याग करवाकर मेरे दर्शन को स्वीकृत करवाना चाहता हूं। यह बहुत बड़ा, महती कार्य है और हो सकता है इसमें बहुत अधिक समय लगे।

आज भारतीय लोगों को दो विभिन्न वाद नियंत्रित करते हैं। राज्य संविधान के उद्देश्यपत्र में सूचित किया गया उद्देश्यवाद और धर्म में अंतर्भूत सामाजिक उद्देश्यवाद। समझदार व्यक्ति जान जाएगा कि इन उद्देश्यों में परस्पर विसंगति हैं। राजनीतिक ध्येयवादिता के कारण आजादी, समता और बंधुभाव इन तीन जीवनमूल्यों को मान्यता मिली हुई है। लेकिन प्रचलित सनातनी मानसिकता वाले सामाजिक उद्देश्यवाद के कारण ये तीन तत्व व्यावहारिक जीवन में नकारे गए हैं। इस प्रकार का विसंगतिपूर्ण जीवन कब तक चलेगा? कभी न कभी एक–दूसरे की शरण जाने के अलावा कोई दूसरा मार्ग ही नहीं है। मेरे जीवन–दर्शन में मेरा पूरा भरोसा है और इसीलिए आज अधिकतर भारतीयों का वह राजनीतिक उद्देश्य बना है। कभी वह सबका सामाजिक उद्धेश्यवाद बनेगा ऐसी मैं उम्मीद करता हूं।

353

मुझे बौद्ध धम्म क्यों प्रिय है?

मुझे जो अल्प समय दिया गया है उसमें मुझे दो सवालों के बारे में विचार करना है – पहला, मुझे बौद्ध धम्म क्यों प्रिय है? और दूसरा, वर्तमान स्थितियों में वह दुनिया के लिए कैसे उपयोगी साबित हो सकता है?

अन्य सभी धर्म ईश्वर, आत्मा, मृत्यु के बाद की स्थिति आदि बातों की खोज करते हैं जबकि बौद्ध धम्म में इन तीनों तत्वों पर एक साथ विचार किया गया है। अन्य धर्मों में इस प्रकार की बात दिखाई नहीं देती। यह धम्म प्रज्ञा (अंधविश्वास और अलौकिक घटनाओं के विरुद्ध आकलन शक्ति), करुणा (प्रेम) और समता की सीख देता है। मनुष्य को इस धरती पर सुखमय जीवन व्यतीत करने के लिए इसके अलावा और क्या चाहिए? इसीलिए ये तीन सिद्धान्त वाला बौद्ध धम्म मुझे आकर्षित करता है। दुनिया को उबारने का सामर्थ्य न ईश्वर में है और न आत्मा में – ये तीन सिद्धान्त ही दुनिया के उद्धार का सामर्थ्य रखते हैं।

एक और बात यह है कि, दुनिया के – खास कर दक्षिण-पूर्व एशियाई देशों के संदर्भ में विशेष रूप में आकृष्ट करने वाली साबित हो सकती है। फिलहाल दुनिया कार्ल मार्क्स और उसके पैदा किए साम्यवाद के तूफान में फंसी है। यह बेहद गंभीर चुनौति है। सभी देशों की धार्मिक व्यवस्था की बुनियाद इसके कारण हिली हुई हैं। इसकी वजह यह है कि, मार्क्सवाद और साम्यवाद नास्तिक बातों से जुड़ा है। आज की धार्मिक व्यवस्था को इसने जो ठेस पहुंचाई है उसे समझना बहुत मुश्किल नहीं है। आज की धर्मव्यवस्था नास्तिक रचना से अलग नहीं है फिर भी इसी प्रणाली के सहारे हर नास्तिक बात टिकी हुई है। परोक्ष रूप से ही सही जब तक धर्म की मान्यता न हो तब तक निधर्मी रचना का लंबे समय तक टिका रहना संभव नहीं।

दक्षिणपूर्व एशिया के बौद्ध राष्ट्रों की मानसिकता का साम्यवाद की तरफ झुकाव हुआ है। इस बात का मुझे बड़ा आश्चर्य होता है। मैं मानता हूं कि उन्हें बौद्ध धम्म का

---

12 मई, 1956 के दिन ब्रिटिश ब्रॉडकास्टिंग कार्पोरशन के आकाशवाणी केंद्र से दिए गए भाषण का अनुवाद। मराठी से हिंदी में अनुवाद – संध्या पेडणेकर।

ठीक से आकलन नहीं हुआ है। मार्क्स और उसके साम्यवाद के लिए परिपूर्ण जवाब बौद्ध धम्म में है यह मेरा पक्का विश्वास है। रशियन तरीके के साम्यवाद ने लहू के रंग में सनी क्रांति को समर्थनीय साधन मान ही लिया है। साम्यवादी प्रणाली को लागू करने के लिए आतुर लोगों को शायद यह पता ही नहीं है कि बौद्ध धम्म का 'संघ' एक साम्यवादी संगठन ही है। इसमें निजी सम्पत्ति का कोई स्थान नहीं और खास बात यह कि यह परिवर्तन हिंसा की उपज नहीं है। मानसिक भी नहीं है। मानसिक परिवर्तन से आया यह बदलाव पिछले 2500 सालों से टिका हुआ है। इस दीर्घ कालावधि में कुछ बदलाव हुए हों शायद लेकिन उसमें स्थित आदर्श आज भी अनिवार्यतः दिखाई देते हैं। रशियन साम्यवाद को इन सवालों के जवाब देने होंगे।

उन्हें और दो सवालों के जवाब देने होंगे। पहला सवाल, क्या साम्यवादी रचना हमेशा रहना जरूरी है? रशियनों के लिए जो काम करना वैसे संभव नहीं था वे काम साम्यवाद के कारण पूरे हुए यह बात मैं मानता हूं, लेकिन उन कामों के पूरे होने के बाद वहां के लोगों को बुद्ध द्वारा उपदेशित प्रेम के साथ आजादी क्यों नहीं मिलनी चाहिए? वह नहीं मिल रही यह देख कर दक्षिण-पूर्वी एशियाई लोगों को सावधान होना चाहिए। रशियन साम्यवाद के जाल में फंसे नहीं। अन्यथा वे कभी भी उस जाल से निकल नहीं पाएंगे। बुद्ध की शिक्षा को वे अपनाएं और उसे राजनीतिक रचना में सम्मिलित करें। दरिद्रता पहले भी थी और आगे भी रहेगी। इसलिए दरिद्रता की वजह को आगे कर मानव की आजादी की बलि चढ़ाना सही नहीं होगा।

दुर्भाग्य की बात यह है कि बुद्ध की शिक्षा का सही अर्थ लगाना या उसके आकलन होने की बात अब तक ठीक तरह से हुई ही नहीं है। उनके सिद्धांत और सामाजिक पुनर्रचना के बारे में गलतफहमियां फैली हैं। बौद्ध धम्म एक सामाजिक सिद्धांत प्रणाली है इसका पता सबको चलने के बाद ही उसका पुनरुत्थान शाश्वत साबित होगा क्योंकि, सबको आकर्षित करने वाली या प्रभावित करने वाली कोई महानता इस धम्म में है यह बात तब पूरी दुनिया को पता रहेगी।

(हस्ताक्षर)
(बी. आर. आंबेडकर)
26, अलीपुर रोड,
नई दिल्ली

दिनांक 12 मई, 1956

354

भारतीय प्रजातंत्र का भविष्य क्या है?

मुझे विषय दिया गया है – भारतीय प्रजातंत्र का भविष्य क्या है? कई लोग अभिमानपूर्वक इस विषय पर बोलते हैं मानों प्रजातंत्र ही शुरू से भारत देश की व्यवस्था रही हो। विदेशी लोग भी बातचीत के दौरान सम्मान प्रदान करते हुए – भारत का महान प्रजातंत्र और भारत के महान प्रधानमंत्री कह देते हैं।

किसी तरह की जानकारी के मान लिया जाता है कि जहां गणराज्य होगा वहां प्रजातंत्र होगा ही। यह भी माना जाता है कि वयस्क मतदान पद्धति के सिद्धांतों के अनुसार संसद का गठन होकर कानून बनाने का काम विशिष्ट कालावधि तक लोगों द्वार चुने गए प्रतिनिधि करते हैं वहाँ प्रजातंत्र होगा ही। दूसरे शब्दों में कहें तो प्रजातंत्र को एक राजनीतिक साधन माना जाता है और जहां यह राजनीतिक साधन प्रचलन में हो वहां प्रजातंत्र का होना भी गृहित माना जाता है।

भारत में प्रजातंत्र है या नहीं है? सच क्या है? गणराज्य और जनतंत्र की तरह ही जनतंत्र और संसदीय शासन को समान माने जाने के कारण जो गड़बड़ पैदा होती है उसे दूर किए बगैर इन सवालों का सही जवाब सामने नहीं आ सकता है।

गणराज्य या संसदीय शासन पद्धति से प्रजातंत्र पूरी तरह भिन्न है। प्रजातंत्र की जड़ें, प्रशासन का प्रकार संसदीय हो या अन्य इसमें दिखाई नहीं देता है। प्रजातंत्र सहजीवन का एक तरीका है। लोगों के द्वारा निर्मित समाज में सामाजिक संबंध और लोगों के परस्पर के बीच के सहजीवन में प्रजातंत्र की जड़ें खोजनी पड़ती हैं।

'समाज' शब्द क्या ध्वनित करता है? संक्षेप में बताना हो तो जब हम समाज के बारे में बोलते हैं तब उसके बारे में हमारे मन में एकात्मकता की धारणा होती है। सामुदायिक प्रेरणा और व्यापक कल्याण की सार्वजनिक लक्ष्यों के प्रति निष्ठा, एक–दूसरे के प्रति चिंता और सहयोग ही समाज यह एकक के गुण होते हैं।

भारतीय समाज में क्या ये आदर्श दिखाई देते हैं? इस समाज में व्यक्ति का अस्तित्व नहीं होता यह कई जातियों का समूह है। एक–दूसरे से विभक्त इन जाति समूहों में समान अनुभूति नहीं और परस्पर अनुकंपा भी नहीं। हालांकि, भारतीय समाज में उपर्युक्त आदर्श हैं अथवा नहीं हैं यह सवाल ही अप्रस्तुत साबित होता है। जातिव्यवस्था के अस्तित्व के कारण इन आदर्शों को, पर्याय से प्रजातंत्र को इस समाज से हमेशा के लिए निकाल बाहर किया है।

भारतीय समाज जाति व्यवस्था के कीचड़ में इस कदर फंसा है कि यहां हर बात जाति के आधार से ही की जाती है। भारतीय समाज में प्रवेश के साथ ही आपको जातिव्यवस्था का ऊग्र स्वरूप दिखाई दे सकता है। भारतीय मनुष्य किसी भी अन्य व्यक्ति के सात अन्न ग्रहण नहीं कर सकता अथवा विवाह नहीं कर सकता। इसका एक मात्र कारण होता है कि वह व्यक्ति उसकी जाति का नहीं है। एक भारतीय दूसरे भारतीय को स्पर्श भी नहीं कर सकता क्योंकि वह उसकी जाति से संबंधित नहीं होता । राजनीति में भी जाति व्यवस्था का प्रतिबिंब आपको दिखाई देगा। भारतीय मनुष्य चुनावों में किस आधार से मतदान करता है? वह किसी और को अपना मत नहीं देता, केवल अपनी जाति के उम्मीदवार को ही अपना मत देता है। अन्य सभी पार्टियों की तरह काँग्रेस भी चुनाव जीतने के लिए जातिव्यवस्था का दुरुपयोग करती है। सामाजिक रचना की पृष्ठभूमि पर चुनाव क्षेत्रों के उम्मीदवारों की फेहरिस्त जांचिए। आपको दिखाई देगा कि विशिष्ट चुनाव क्षेत्र में बहुमत वाले जाति के व्यक्ति को ही उम्मीदवारी दी जाती है। जातिव्यवस्था की खुले आम पक्षधर काँग्रेस पार्टी भी इसी व्यवस्था को बढ़ावा देती है।

औद्योगिक क्षेत्र में क्या दिखाई देता है? जो विशिष्ट व्यक्ति किसी उद्योग का मालिक होता है उसी की जाति के लोगों की उस उद्योग के उच्च वेतन लेने वाले अधिकारियों के पदों पर नियुक्ति होती है। अन्य लोग कम वेतन के निम्न पदों पर जिंदगी भर झूलते रहते हैं। व्यापार के क्षेत्र में भी यही तस्वीर दिखाई देगी। पूरे व्यापारसमूह पर एक ही जाति का नियंत्रण होता है और उसके दरवाजे पर पट्टी लटकी होती है कि किसी भी अन्य जाति के लोगों को प्रवेश नहीं है।

दान–धर्म के क्षेत्र पर एक नजर डालें। एकाध कोई अपवाद अगर छोड़ दें तो भारत में दान–धर्म भी जाति के आधार से ही किया जाता है। पारसी व्यक्ति अपनी मृत्यु के बाद अपनी सारी संपत्ति पारसी लोगों के नाम ही करेगा। जैन व्यक्ति की मृत्यु होती है तो वह अपनी सारी संपत्ति जैनियों के लिए ही आरक्षित रखेगा। मृत्यु के बाद मारवाड़ी अपनी संपत्ति मारवाड़ी समाज के लिए ही आरक्षित कर रखता है। ब्राह्मण की मृत्यु के बाद वह अपनी सारी संपत्ति ब्राह्मण के नाम ही रखता है। इस प्रकार राजनीति, उद्योग, वाणिज्य और शिक्षा किसी भी क्षेत्र में पिछड़ी जाति के लिए प्रवेश नहीं है।

जाति व्यवस्था की कुछ और भी खासियतें हैं। उनका बुरा असर होता है और प्रजातंत्र के लिए वह प्रतिकूल साबित होते हैं। जाति व्यवस्था की एक खासियत है श्रेणीबद्ध विषमता। जातियों का दर्जा समान नहीं होता है। वे एक–दूसरे के ऊपर खड़ी होती हैं। एक–दूसरे से उन्हें द्वेष होता है। नीचे से ऊपर की तरफ उनमें द्वेष होता है और ऊपर से नीचे की तरफ उनमें तिरस्कार और तुच्छता की भावना होती है। जातिव्यवस्था की इस खासियत के कारण होने वाले सबसे घातक परिणामों में हम परस्पर सहयोग की भावना और इच्छा को ही नेस्तनाबूत करना जोड़ सकते हैं।

वास्तव में जाति और वर्ग में भिन्नता यह है कि जातिव्यवस्था की तरह वर्गव्यवस्था में पूर्ण बहिष्कार नहीं होता। जातिव्यवस्था का दूसरा बददिमाग परिणाम है विषमता। वास्तव में दिखाई देता है कि दो जातियों के बीच की आक्रोश और प्रतिक्रियाएं एकांगी होती हैं। उच्च जाति के लोग विशिष्ट तरीके से पेश आएं और निम्न जाति के लोग तय ढंग से ही प्रतिक्रिया दें। मतलब कि, विभिन्न जातियों को प्रोत्साहन की और उसके अनुरूप प्रतिक्रिया व्यक्त करने के समान मौके उपलब्ध न होने के कारण परिणामस्वरूप उनमें से कुछ को मालिक बनने की शिक्षा मिलती है और कुछ को गुलाम। जीवन के विभिन्न अनुभवों के मुक्त आदान-प्रदान को प्रतिबंधित किए जाने के कारण हर घटक अपने प्राकृतिक अधिकारों से वंचित रह जाता है। सो विशेषाधिकार वाले और प्राकृतिक अधिकार छीन गए लोगों के दो वर्ग समाज में पैदा होते हैं। इस प्रकार का विभाजन सामाजिक आदान-प्रदान (Social Endosmosis) को प्रतिबंधित करता है।

जातिव्यवस्था की तीसरी खासियत के साथ जुड़ी बुरी बात यह है कि वह प्रजातंत्र की जड़ें ही खोद देती है। हर जाति एक विशिष्ट व्यवसाय से बंधी होती है। हर व्यक्ति अगर औरों के लिए उपयोगी साबित होने वाली और अपने पसंद के व्यवसाय का अगर चुनाव करता हो तो निश्चित रूप से समाज संगठित रूप से स्थिर रहेगा। इस प्रकार पसंद-नापसंद का पता लगाना और समाजोन्नति के लिए उन्हें तैयार करना समाज का कर्तव्य है। लेकिन हर व्यक्ति में क्षमता और क्रियाशीलता की असीमित विभिन्नता होती हैं जो व्यक्ति को बनाती हैं। प्रजातांत्रिक समाज में व्यक्ति की सभी क्षमताओं के लिए खुली राह उपलब्ध करानी चाहिए। वर्गीकरण व्यक्ति के विकास की राह रोकता है और उद्देश्यपूर्ण तरीके से व्यक्ति के विकास की राह में रुकावटें पैदा करना प्रजातंत्र को जानबूझ कर नकाराराना है।

जातिव्यवस्था कैसे खत्म की जा सकती है? इस मार्ग की पहली रुकावट है - जो जातिव्यवस्था का प्राण है - श्रेणीबद्ध विषमता। लोग जब उच्च और निम्न इन दो वर्गों में ही बंटे होते हैं तब उच्च वर्ग के साथ संघर्ष करने के लिए निम्न वर्ग का संगठित होना आसान होता है। लेकिन यहां निम्न जाति का एक ही वर्ग नहीं है यहां निम्न और अति निम्नों का वर्ग है। निम्न कभी अति निम्नों के साथ संगठित नहीं हो सकते। निम्नों को डर होता है कि अगर अति निम्नों का वर्ग स्तर ऊंचा करने में अगर सफल हुआ तो उसे और उसकी जाति को समाज में अपना स्थान गंवाना पड़ेगा।

इस मार्ग में दूसरी रुकावट यह है कि अपना सामाजिक हित किस बात में है इसे न पहचानने के कारण एक साथ कृति करते समय भारतीय समाज पंगु हो जाता है। प्लेटो के कहे अनुसार आखिर सामाजिक संगठन अंतिमतः जीवित साध्य के अहसासों पर निर्भर करता है। अगर हम अपने साध्य के बारे में नहीं जानते, अपना हित किसमें है इसके बारे में अगर हमें पता नहीं है तो सभी बातों के लिए आकस्मिकता और मन

पर हमें निर्भर रहना पड़ेगा। जब तक हमारे पास अच्छे परिणामों के बारे में बुद्धिवादी निर्णय की कसौटियां नहीं होंगी तब तक किन निर्णयों को लागू करना चाहिए हम यह तय नहीं कर पाएंगे। सवाल यह है कि, न्यायपूर्ण और संगठित समाज बनाने के उद्देश्य की प्राप्ति की राह में जातिप्रथा समाज व्यवस्था का अनुल्लंघनीय रोड़ा दूर किए बगैर क्या भारतीय समाज इस उद्देश्य को प्राप्त कर सकेगा? जाति में विभाजित समाज रचना के अस्तित्व में होते हुए एक जैसा समाज निर्माण होना क्या संभव है या निर्माण किया जा सकता है? गलत मूल्यांकन और गलत वास्तव दर्शन के कारण सभी भारतियों के मन अनिश्चित हुए हैं। उन्हें गलत राह पर डाल दिया गया है। असंगठित और खंडित समाज विविध ढंग के प्रारूप और परिमाण निश्चित करता रहता है। ऐसे हालात में जाति के सवाल के कारण हर भारतीय के लिए मन में सिलसिला रखना असंभव–सा हो गया है।

शिक्षा से क्या जातियों का विनाश हो सकता है? इसका जवाब हां भी होगा और नहीं भी। आज जो शिक्षा दी जा रही है उसका जातियों पर कोई असर नहीं होने वाला। वह जिस हालत में हो उसी हालत में बनी रहेगी। ब्राह्मण जाति इसका ज्वलंत उदाहरण है। उसमें सत–प्रतिशत लोग पढ़े–लिखे हैं। नहीं, उसमें से बहुसंख्य लोग उच्चशिक्षा प्राप्त हैं। इसके बावजूद कोई ब्राह्मण अपनी जाति के खिलाफ नहीं दिखाई देता। वास्तविकता यह है कि उच्च जाति के शिक्षा प्राप्त व्यक्ति के लिए शिक्षा प्राप्त करने से पहले की तुलना में जातिव्यवस्था बनी रहनी चाहिए ऐसा अधिक तीव्रता से लगने लगाता है। क्योंकि शिक्षा ही उसे बड़े पद प्राप्त करने का अधिक मौका देती है इसलिए जातिव्यवस्था बनाए रखने की दिशा में वह काम करने लगता है। इस प्रकार देखें तो जाति व्यवस्था को नष्ट करने में शिक्षा उपयुक्त साधन साबित नहीं होती। यह शिक्षा का नकारात्मक पहलु हुआ। भारतीय समाज के निचले स्तर के लोगों को शिक्षा दी जाए तो यही शिक्षा जातिव्यवस्था को पिघला देगी। शिक्षा से उनमें विद्रोह की भावना जागेगी। वर्तमान स्थितियों में उनके अज्ञान के कारण वे जातिव्यवस्था के समर्थक बने हुए हैं। एक बार उनकी आंखें खुल जाएं तो वे जातिव्यवस्था को नष्ट करने के लिए कटिबद्ध होंगे।

वर्तमान नीति का प्रमुख दोष यह है कि बड़े पैमाने पर शिक्षा दी जाने के बावजूद भारतीय समाज में जिन्हें उसकी असली जरूरत है उन्हें शिक्षा नहीं मिल पाना। भारतीय समाज के जिन लोगों का स्वार्थ जाति व्यवस्था के कारण साध्य होता है उसी स्तर के लोगों को अगर आप शिक्षा मुहैय्या कराते रहेंगे तो जातिव्यवस्था और मजबूत होती रहेगी। ऐसा न करते हुए भारतीय समाज के निम्न स्तर के जो लोग जातिव्यवस्था को उखाड़ फेंकना चाहते हैं उन्हें अगर शिक्षा दी गई तो निश्चित तौर पर जातिव्यवस्था ध्वस्त होगी। हर बार किसी भी प्रकार से तारतम्य का पालन न करते हुए भारत सरकार और अमेरिकन फाउंडेशन की शिक्षा की मदद करने की नीति जातिव्यवस्था को और मजबूत कर रही

है। अमीर को और अमीर और गरीब को और गरीब बनाना दरिद्रता को समाप्त करने का मार्ग नहीं है। जातिव्यवस्था को समाप्त करने के लिए शिक्षा का एक साधन के तौर पर इस्तेमाल करने की नीति पर यह बात लागू होती है। जातिव्यवस्था को कायम रखना चाहने वालों को शिक्षा देने के कारण भारतीय प्रजातंत्र का भविष्य उज्जवल तो नहीं ही होगा, उल्टे यह नीति भारतीय प्रजातंत्र को संकट में डाल सकती है।

हस्ताक्षर/–
(बी. आर. आंबेडकर)
26, अलीपुर रोड़,
नई दिल्ली

दिनांक 20 मई, 1956

20 मई, 1956 को 'वॉयस ऑफ अमेरिका' इस आकाशवाणी केंद्र से दिए भाषण का संपादक मंडल द्वारा मराठी में अनुवाद। हिंदी अनुवाद संध्या पेडणेकर द्वारा।

संदर्भ साहित्य सूची

(१) ग्रंथ

कांबळे बी. सी. - *समग्र अम्बेडकर चरित्र*

कीर धनंजय - *डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर*

कोसारे एच. एल. - *विदर्भ के दलित आंदोलन का इतिहास*

खैरमोडे चांगदेव भवानराव - *डॉ. भीमराव रामजी अम्बेडकर चरित्र*

गणवीर रत्नाकर - आंबेडकर-गांधी : *तीन साक्षात्कार*

गणवीर रत्नमित्रा (अनुवादिका) - *बुद्ध, मार्क्स और धम्म का भविष्य*

गांजरे मा. फ. (संपादक) -*डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांची भाषणे*

गोडबोले वामनराव - *बोधिसत्व डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांच्या धम्मदीक्षेचा अविस्मरणीय इतिहास*

तासगावकर सचित (अनुवादक) - *यशस्वी संसदीय लोकशाहीच्या प्राथमिक शर्ती*

महाराष्ट्र राज्य साहित्य आणि संस्कृति मंडळ, मुंबई - *डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर गौरव ग्रंथ*

मून वसंत - *फुले- अम्बेडकर संशोधनातील प्रदूषणे*

सांकृत्यायन महापंडित राहुल - *आधुनिक संसार का महान व्यक्तित्व : डॉ. आंबेडकर*

सुमेध भिक्षु - *मी पाहिलेले बोधिसत्व डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर*

हातोले शंकरराव (संपादक) - *डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर यांना समर्पित मानपत्र*

Keer Dhananjay & *Dr. B.R. Ambedkar : Life and Mission*

Surwade V. G. (Editor) *Dr Ambedkar Through Correspondence Vol. 1*

(२) अखबार और पत्रिकाएं

अरुण– नागपूर, संपादक – ना खं तिरपुडे

अस्मितादर्श – औरंगाबाद, संपादक – डॉ. गंगाधर पानतावणे

गरुड़ – कोल्हापुर, संपादक – दा. म. शिर्के

चित्रा – ---, ---

जनता – मुंबई, संस्थापक – डॉ. भीमराव रामजी अम्बेडकर

तरुण भारत – नागपूर, संपादक – ग. त्र्यं. माडखोलकर

दलित बंधु – पुणे, संपादक पां ना राजभोज

धर्मदूत – सारनाथ, संपादक – त्रिपिटकाचार्य भिक्षु धर्मरक्षित

नवयुग – मुंबई, संपादक – आचार्य अत्रे

नवा काळ – मुंबई, ---

निर्भिड – --- ---

प्रबुद्ध भारत – मुंबई, संस्थापक – डॉ. भीमराव रामजी आंबेडकर

बहिष्कृत भारत – मुंबई, संपादक – डॉ. भीमराव रामजी आंबेडकर

मूकनायक – मुंबई, संस्थापक – डॉ. भीमराव रामजी आंबेडकर

लोकयुद्ध – --- ---

विविध वृत्त – मुंबई, ---

समता – मुंबई, संपादक – दे. वि. नाईक

ज्ञानप्रकाश –

--समाप्त--

डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान
DR. AMBEDKAR FOUNDATION
सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय
MINISTRY OF SOCIAL JUSTICE AND EMPOWERMENT
भारत सरकार
GOVERNMENT OF INDIA

☎ 23320571
23320589
23320576
FAX : 23320582

निदेशक
DIRECTOR

15, जनपथ,
15, JANPATH
नई दिल्ली - 110001
NEW DELHI-110001

दिनांक – 31.10.2019

रियायत नीति (Discount Policy)

सक्षम प्राधिकारी द्वारा यह निर्णय लिया गया है कि पहले के नियमों के अनुसार CWBA वॉल्यूम के संबंध में रियायत नीति (Discount Policy) जारी रखें। तदनुसार, CWBA इंग्लिश वॉल्यूम (डिलक्स संस्करण–हार्ड बाउंड) के एक पूर्ण सेट की कीमत और CWBA हिंदी वॉल्यूम (लोकप्रिय संस्करण–पेपर बाउंड) के एक पूरे सेट की कीमत निम्नानुसार होगी :

क्र.सं.	सीडब्ल्यूबीए सेट	रियायती मूल्य प्रति सेट
	अंग्रेजी सेट (डिलक्स संस्करण) (वॉल्यूम 1 से वॉल्यूम 17)– 20 पुस्तकें।	रू 2,250/–
	हिंदी सेट (लोकप्रिय संस्करण) (खंड 1 से खंड 40 तक)– 40 पुस्तकें।	रू 1073/–

2. एक से अधिक सेट के खरीदारों को सेट की मूल लागत (Original Rates) यानी रू 3,000/–(अंग्रेजी के लिए) और रू 1,430/–(हिंदी के लिए) पर छूट मिलेगी जो कि निम्नानुसार है।

क्र.सं.	विशेष	मूल लागत पर छूट का प्रतिशत
	रू 1000/– रुपये तक की पुस्तकों की खरीद पर	10%
	रू 1001–10,000/– रुपये तक की पुस्तकों की खरीद पर	25%
	रू 10,001–50,000/– रुपये तक की पुस्तकों की खरीद पर	33.3%
	रू 50,001–2,00,000/– रुपये तक की पुस्तकों की खरीद पर	40%
	रू 2,00,000/– से ऊपर की पुस्तकों की खरीद पर	45%

3. इच्छुक खरीदार प्रतिष्ठान की वेबसाइट : www.ambedkarfoundation.nic.in पर विवरण के लिए जा सकते हैं। संबंधित CWBA अधिकारी / पीआरओ को स्पष्टीकरण के लिए दूरभाष नंबर 011–23320588, पर कार्य दिवसों में पूर्वाह्न 11:30 बजे से शाम 5:30 बजे तक संपर्क किया जा सकता है।

(देबेन्द्र प्रसाद माझी)
निदेशक, डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान

बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर सम्पूर्ण वाङ्मय (भाग-II)

ISBN (सेट) : 978-93-5109-129-5

रियायत नीति के अनुसार
सामान्य (पेपरबैक) खंड 01-40
के 1 सेट का मूल्य : ₹ 1073/-

ISBN 978-93-5109-148-6
9 789351 091486

प्रकाशक :

डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान

सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय
भारत सरकार
15, जनपथ, नई दिल्ली – 110 001
फोन : 011–23320571
जनसंपर्क अधिकारी फोन : 011–23320588
वेबसाइट : http://drambedkarwritings.gov.in
ईमेल : cwbadaf17@gmail.com